जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-
विरचितया सुधाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतं
हिन्दी-गुर्जर-भाषाऽनुवादसहितम्-

॥ श्री-स्थानाङ्गसूत्रम् ॥

STHANANG SUTRAM

(तृतीयो भागः)

नियोजक
संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि-
पण्डितमुनि-श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

प्रकाशकः
मद्रासनिवासी-श्रीमान् सेठ श्री-खीवराजजी सा. चोरडिया
तत्प्रदत्त - द्रव्यसाहाय्येन
अ० भा० श्वे० स्था० जैनशास्त्रोद्धारसमितिप्रमुखः
श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः
मु० राजकोट

प्रथमा-आवृत्ति	वीर-संवत्	विक्रम-संवत्	ईसवीसन्
प्रति १२००	२४९१	२०२१	१९६५

मूल्यम्-रू० २५-०-०

મળવાનું ઠેકાણું :
શ્રી અ. ભા. શ્વે. સ્થાનકવાસી
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,
ઠે. ગરેડિયાકૂવા રોડ,
રાજકોટ, (સૌરાષ્ટ્ર).

Published by :
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

मूल्यः रु. २५=००

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૨૦૦
વીર સંવત્ : ૨૪૯૧
વિક્રમ સંવત્ ૨૦૨૨
ઇસવીસન ૧૯૬૫

: મુદ્રક :
મણિલાલ છગનલાલ શાહ
નવપ્રભાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ,
ઘીકાંટા રોડ, અમદાવાદ.

आद्यमुरब्बीश्री



श्रीमान् सेठश्री खीमराजजी सा. चोरडिया

श्रीमान् सेठ श्री खीमराजजी सा. चोरडियाका संक्षिप्त जीवन चरित्र

संसारके विशाल प्रांगनमें कार्यरूपी क्रीडा करते हुए विरलेही पुरुष असीम सफलताके भागी बनते हैं। दानवीर महोदय श्रीमान खीमराजजी साहब चोरडिया उन उन्नायकोंमें से है, जिन्होंने अपनी सुकार्यदक्षता एवं सुव्यवस्थासे अच्छी उन्नति की.

आपका जन्म सं. १९७१ मिति आसोज सुदि ९ को हुआ। आपका निवास नागोरके समीप चन्दावतोंका नोखा है। इस नोखा गावके नवनिर्माणमें चोरडिया परिवारका महत्वपूर्ण योग रहा है। आपके पिता स्व० श्रीमान् सीरेमलजी साहब चोरडियाका आप पर धार्मिकताका अच्छा असर पडा। बचपनसे ही आप प्रतिभाशाली छात्रोंमेंसे थे। अतः स्वल्प समयमेंही शिक्षा समाप्त कर व्यापारक्षेत्रमें उतर पडे जिसमें से आपने अच्छी सफलता प्राप्त की। पिताके स्वर्गवासके पश्चात् आप मद्रास चले गये। आपकी वैज्ञानिक बुद्धिके कारण थोडेही दिनोंमें इस कार्यमें कुशलता प्राप्त कि "खिमराज मोटर्स–जिसमें बेडफोर्ड ट्रक, एम्बेसडरकार टेम्पो, ओटोरिक्शा और वेल्पा स्कुटरकी एजेन्सियां हैं। आपने अपने जीवनमें व्यवसायिक कार्योंमें अतिशय उन्नति की। आप मद्रासके एक प्रभुत्व श्रीमन्त व्यवसायी हैं।

आप स्थानकवासी जैन धर्मानुयायी एवं उदार धर्मप्रेमी सज्जन हैं। सार्वजनिक जनहितके कार्योंमें पूरी दिलचस्पी रखते हैं। उदारचेता है. साहित्यरसिक होनेके साथ साथ धार्मिक नित्यनियम व व्रत, उपवास आदि तपश्चर्यामें भी अच्छी रुचि रखते है।

जैन हाइस्कूलमें २१००)की लागतका एक हॉल बनवाकर अपने अपनी शिक्षाप्रेमका अच्छा परिचय दिया। आपकी ओरसे मद्रासमें 'खीवराज डीस्पें-

न्सरी चलती है। नोखामें दूसरे सज्जनोंकी मददके साथ ' सिरेमल जोरावर-मल ' ' हेल्थसेन्टर ' चल रहा है। दानकी ओर आपका झुकाव इतना अधिक है कि कोई भी व्यक्ति किसी प्रकारकी सहायताके लिये आपके पास पहुंचता है तो वह निराश नहीं लौटता है। आप जहां कहीं भी जाते हैं वहांकी संस्था-ओंको कुछ न कुछ सहायता जरूर करते हैं। विद्यादानमें आपकी ओरसे हजारों रुपये लगते हैं। कइ छात्रालयोंको आपकी ओर आर्थिक सहायता मिलती है।

जैन साहित्य प्रकाशन कार्यमें आपकी बडी दिलचस्पी है। कई ग्रन्थोंके प्रका-शनमें आपका आर्थिक सहयोग रहा है। आगम प्रकाशनकी जब आपसे चर्चा की गई तो आपने स्वयमेव पांच हजार रुपयेकी महान सहायता प्रदान करनेकी उदा-रता प्रगट की।

आप स्वयं धर्म प्रवृत्त हैं और धार्मिक कार्योंमें तन मन व धनसे सदा आगेवान रहते हैं। यही कारण है कि स्थानकवासी समाजमें और ओसवाल समाजमें आपका नाम सर्वोपरि आगेवान पुरुषोंमें बडे सन्मानके साथ आता है। समाजसुधार तथा जन जागृतिके कामोंमें आपकी अच्छी रुचि है।

आपने अ० भा० श्वे० स्था० शास्त्रोद्धार समितिको आगम प्रकाशनके हेतु ५०००) रुपया प्रदान कर स्थाईसदस्यता स्वीकार की है, अतः समिति आपका हार्दिक आभार मानती है।

આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



શેઠશ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ
અમદાવાદ



(સ્વ) શેઠશ્રી શામજીભાઈ વેલજીભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ



શેઠશ્રી રામજીભાઈ શામજીભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ.



(સ્વ) શેઠશ્રી હરખચંદ કાલીદાસ વારિઆ
ભાણવડ.



(સ્વ) શેઠશ્રી ધારશીભાઇ જીવણલાલ
બારસી.



કોઠારી હરગોવિંદ જેચંદભાઈ
રાજકોટ.

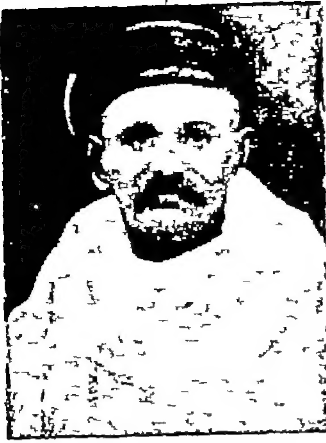


(સ્વ) શેઠશ્રી દિનેશભાઈ કાંતિલાલ શાહ
અમદાવાદ.



સ્વ. શેઠશ્રી આત્મારામ માણેકલાલ
અમદાવાદ.

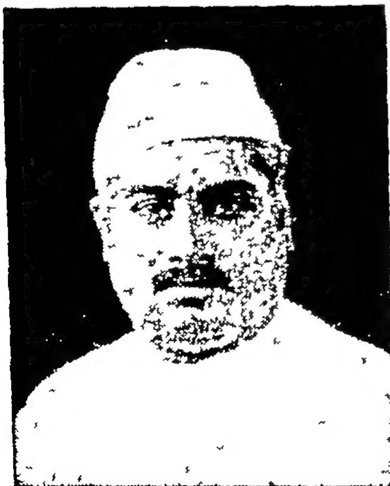
આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



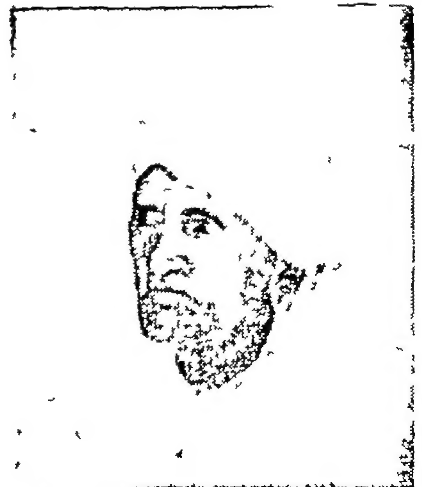
(સ્વ) શેઠશ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર
અમદાવાદ



(સ્વ.) શેઠ રંગજીભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ



શેઠશ્રી જેસિંગભાઈ પોચાલાલભાઈ
અમદાવાદ.



સ્વ. શ્રીમાન્ શેઠશ્રી મુકનચંદજી સા.
બાલિયા પાલીમારવાડ.

આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



૧ વચ્ચે બેઠેલા મોટાભાઇ શ્રીમાન્ મૂલચંદજી
જવાહીરલાલજી બરડિયા
૨ બાજુમા બેઠેલા ભાઈ મિશ્રીલાલજી બરડિયા
૩ ઉભેલા સૌથી નાનાભાઈ પૂનમચંદ બરડિયા

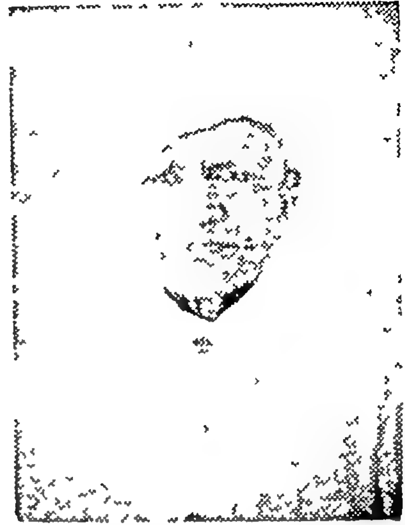


શેઠશ્રી મિશ્રીલાલજી લાલચંદજી સા. લુણિયા
તથા શેઠશ્રી જેવંતરાજજી લાલચંદજી સા

આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



શ્રી વિનોદકુમાર વીરાણી



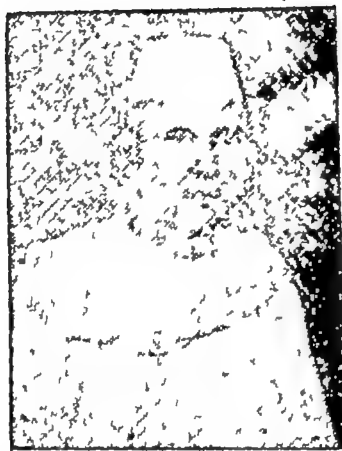
શ્રી વૃજલાલ દુર્લભજી પારેખ
રાજકોટ.



સ્વ. શેઠશ્રી હરિલાલ અનોપચંદ શાહ
ખંભાત.



વચ્ચે બેઠેલા
લાલાજી કિશનચંદજી સા જૌહરી
ઉભેલા સુપુત્ર ચિ મહેતાબચન્દજી સા. જૈન
નાના – અનિલકુમાર જૈન (દોયત્તા)



स्व. शेठ ताराचंदजी साहेब गेलडा
मद्रास.

श्री स्थानाङ्गसूत्र भा. तीसरे की

विषयानुक्रमणिका

चौथे स्थानका चौथा उद्देशः—

॥ समाप्त ॥

शुद्धि पत्र

सुज्ञ पाठकगण

सविनय निवेदन है कि शास्त्रोंमें प्रुफ और प्रिंटिंग सम्बन्धी कंई गलती होना संभवित हैं, जो सुज्ञ वाचकवृन्द नीरक्षीर न्याय से समझ कर पढलेंगे, पर जो शास्त्रीय गलती रह गई है जो देखनेमें अगर सुज्ञ वाचकजन द्वारा दृष्टिगोचर हुई हैं, इनका शुद्धिपत्र देनेमें आता है।

सूत्रका नाम	पृ.	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
समवायङ्ग सूत्र	१६४	५	राः खलु बलदेवो द्वादश वर्ष सहस्राणि सर्वायुषं	रामः खलु बलदेवो द्वादश वर्षशतानि सर्वायुषं
”	”	१६	बारह हजार वर्ष-	बारहसौ वर्ष
”	”	૨૮	બાર હજાર વર્ષ—	બારસો વર્ષ
ज्ञातधर्मकथाङ्ग सूत्र भा. २	२६१	१	पहली पंक्ति पूरी होने पर	त्रैमासिकीं पद छूट गया है सो त्रैमासिकीं यह पद बढाकेपढें
ज्ञातधर्मकथाङ्ग सूत्र	२६१	११		आठवीं भिक्षुप्रतिमाके अनन्तर प्रथम सातदिकरात प्रमाणवाली नववीं भिक्षुप्रतिमा यह पाठ छूटा है सो 'नववीं भिक्षु पडिमा' वहां इतना जोडके पढें
ज्ञातधर्म कथाङ्गसूत्र भा. ३	३९७	१७	प्रवचनसिद्ध	प्रवचनविरुद्ध
”	”	૨૧	પ્રવચનસિદ્ધ	પ્રવચનવિરુદ્ધ

ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्र भा. २	१४७	१७	मद्यपानमें आसक्त–निद्राजनक	द्रव्यमें आसक्त
,, ,,	१४७	२९	મદ્યપાનમાં – નિદ્રાજનક આસક્ત	દ્રવ્ય માં આસક્ત
ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्र भा. ३	२३४	३	भगवताऽऽवश्यके–	भगवताऽनुयोगद्वारे
ज्ञातधर्मकथाङ्ग भा. ३	२३४	१७	आवश्यकसूत्रमें	अनुयोगद्वारसूत्रमें
,, ,,		१९	આવશ્યકસૂત્રમાં	અનુયોગદ્વાર સૂત્રમાં
अन्तकृद्दशाङ्गसूत्र	२९५	१०	दसदस	दसअट्ठ
अन्तकृद्दशांगसूत्र	२९५	११		सत्तमवग्गे तेरस उद्देसगा, इतना पाठ छूट गयाहै सो वहां समझ लेवें
आचारांगसूत्र भा. २	१२२	८	नेत्त परिण्णाणा अपरिहीणा फरस- परिण्णाणा अपरि हीणा	नेत्तपरिण्णाणा अपरिहीणा जीह परिण्णाणा अप- रिहीणा फरिस- परिण्णाणा अपरिहीणा
आचारांग सूत्र भा. २	२८१	१४	निन्यानवे	अट्ठानवे
,,	,	२६	નવ્વાણુ	અઠ્ઠાણું
दशाश्रुतस्कंध	४३०	२०	कालकरके ग्रैवेयक आदि	कालकरके देवलोकमें से
दशाश्रुतस्कंध	४३०	२९	કાલ કરીને ગ્રૈવેયકઆદિ	કાળ કરીને દેવલોકમાંના
ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्र भा. २	७३०	२१	ગુણશિલક ચૈત્ય (જૈન દેરાસર) –	ગુણશિલક ચૈત્ય ઉદ્યાન બગીચો

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितया
सुधाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्

श्री-स्थानाङ्गसूत्रम्

(तृतीयो भागः)

गतो द्वितीयोद्देशः, तत्र जीवक्षेत्रपर्याया उक्ताः, प्रारभ्यमाणे तृतीयोद्देशके तु जीवपर्याया उच्यन्ते, इत्येवं सम्बन्धेनायातस्यास्येदमाद्यं सूत्रम्—

मूलम्—चत्तारि उदगा पण्णत्ता, तं जहा–कद्दमोदए १, खंजणोदए २, वालुओदए ३, सेलोदए ४। एवामेव चउविहे भावे पण्णत्ते, तं जहा–कद्दमोदगसमाणे १, खंजणोदगसमाणे २, वालुओदगसमाणे ३, सेलोदगसमाणे ४,

कद्दमोदगसमाणं भावमणुप्पविट्ठे जीवे कालं करेइ णेरएसु उववज्जइ, एवं जाव सेलोदगसमाणं भावमणुप्पविट्ठे जीवे कालं करेइ देवेसु उववज्जइ। सू० १ ॥

चौथे स्थानके तीसरा उद्देशा प्रारम्भ—

"दूसरा उद्देशा समाप्त हो चुका इस में जीव–और क्षेत्र की पर्याय कही गई है, अब–प्रारभ्यमाण तृतीय उद्देशे में केवल जीव की ही पर्याय कही जायेंगी. इसी सम्बन्ध को लेकर आगत इस उद्देशे का आद्य सूत्र है—" चत्तारि उदगा पण्णत्ता "–इत्यादि—१

ચોથા સ્થાનના ત્રીજા ઉદ્દેશાનો પ્રારંભ

બીજો ઉદ્દેશક પૂરો થયો તેમાં જીવ અને ક્ષેત્રની પર્યાય કહેવામાં આવી. હવે શરૂ થતા આ ત્રીજા ઉદ્દેશામાં માત્ર જીવની પર્યાયનુંજ કથન કરવામાં આવશે. આગલા ઉદ્દેશા સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ ધરાવતા આ ઉદ્દેશાનું પ્રથમ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે—" चत्तारि उदगा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

छाया—चत्वारि उदकानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-कर्दमोदकं १, खञ्जनोदकं २, वालुकोदकं ३, शैलोदकम् ४. एवमेव चतुर्विधो भावः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-कर्दमोदकसमानः १, खञ्जनोदकसमानः २, वालुकोदकसमानः ३, शैलोदकसमानः ४।

कर्दमोदकसमान भावमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति नैरयिकेषूपपद्यते, एवं यावत् शैलोदकसमानं भावमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति देवेषूपपद्यते ॥सू० १॥

टीका—" चत्तारि उदगा " इत्यादि अत्रैतस्मादुदकसूत्रात् पूर्वं यदेकं राजिसूत्र तद्द्वितीयोद्देशे गतम् उदकानि – जलानि, चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-कर्दमोदकं १, खञ्जनोदकं २, वालुकोदकं ३, शैलोदकं ४ चेति। तत्र कर्दमोदकं-कर्दमप्रधानमुदकं, यत्र प्रविष्टं पादाद्यङ्गं कर्दमबाहुल्येन सहसाऽऽक्रष्टुं न शक्यते, तत् १। तथा-खञ्जनोदकं-खञ्जनं-दीपादीनां कज्जलं. तच्च पादादि-लेपकारककर्दमविशेषरूपमेव, तत्प्रधानमुदकं खञ्जनोदकम्, तच्च लग्नं सत् चर-

सूत्रार्थ-जल चार प्रकार के कहे गये हैं, कर्दमोदक-१ खञ्जनोदक-२ वालुकोदक-३ शैलोदक-४। भाव चार प्रकारका कहा गया है, जैसे-कर्दमोदक समान-१ खञ्जनोदक समान-२ वालुकोदक समान-३ और शैलोदक समान-४। कर्दमोदक समान भाव में अनुप्रविष्ट हुवा जीव यदि कालवश होता है, तो-वह नरक में उत्पन्न होता है, इस तरह से यावत्-शैलोदक समान भाव में अनुप्रविष्ट हुवा जीव यदि कालवश होता है तो-वह देवों में उत्पन्न होता है।

टीकार्थ — कर्दम प्रधान जो उदक होता है वह-कर्दमोदक है. ऐसे कर्दमोदक में फसा हुवा पैर आदि शारीरिक अङ्ग सहसा उस से खींचा नहीं जा सकता है। दीपादिकों के कज्जल-स्याही का नाम खञ्जन है, यह-पादादि कों में लिप्त करने पर

સૂત્રાર્થ-ઉદક (જળ) ચાર પ્રકારનું કહ્યુ છે—(૧) કર્દમોદક, (૨) ખંજનોદક, (૩) વાલુકોદક અને (૪) શૈલોદક, જળની જેમ ભાવ પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—કર્દમોદક સમાન, (૨) ખંજનોદક સમાન, (૩) વાલુકોદક સમાન અને શૈલોદક સમાન કર્દમોદક સમાન ભાવમાં પ્રવેશેલો જીવ જો મરણ પામે છે, તો નારકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, પરન્તુ શૈલોદક સમાન ભાવમાં પ્રવેશેલો જીવ જો મરણ પામે છે, તો દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે

ટીકાર્થ-કર્દમયુક્ત પાણીને કર્દમોદક કહે છે. એવાં કર્દમોદકમાં (કાદવમાં) જો પગ આદિ કોઇ અંગ ફસાયું હોય તો તેને સરળતાથી ખેંચી લઇ શકાતું નથી તેમાં ફસાયેલ પ્રાણી બહાર નીકળવાનો પ્રયત્ન જેમ વધુ કરે તેમ તેમાં વધારે ને વધારે ખૂપતું જાય છે. દિપાદિકોના કાજળને ખંજન કહે છે. આ

णादिकं मलिनीकरोति पुनर्जलादिना विशोध्यते २। तथा–वालुकोदकं–वालुका–प्रसिद्धा, तत्प्रधानमुदकं वालुकोदकम्, तच्च पादाद्यङ्गे लग्नं शुष्कं च ततोऽङ्गप्रक्षालनमात्रेण वालुका दूरीभवति ३। तथा–शैलोदकं–शिलाः–पाषाणाः, तासां विकाराः शैलाः–शर्कराः 'कंकर' इति भाषाप्रसिद्धाः, तत्प्रधानमुदकं शैलोदकं, शैलास्तु चिक्कणाः, ते पादादि स्पृष्टाः किञ्चिद्दुःखं कुर्वन्तोऽपि कर्दमादिवन्न लेपं कुर्वन्ति ४। इत्युदकदृष्टान्तसूत्रम्।

अथ दार्ष्टान्तिकभावसूत्रमाह—"एवामेवे–त्यादि – एवमेव–कर्दमाद्युदकवदेव, भावः–जीवस्य रागादि परिणामः. स चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–कर्दमोदक-

---

कर्दम विशेष का जैसा होना है अर्थात्—कज्जल को मथकर इस से पैर आदिकों में यदि लेप किया जाता है, तो वह भी कर्दम जैसा ही चिपक जाता है–और उस स्थान को काला कर देता है इसकी प्रधानता वाला जो उदक है वह–खञ्जनोदक है। यह खञ्जनोदक भी यदि कहीं पर लग जाता है, तो वह भी उस स्थान को मलिन कर देता है, फिर पानीसे उसे साफ करने पर शुद्ध हो जाता है। वालुकाप्रधान जो उदक है वह–वालुकोदक है, यह–वालुकोदक भी यदि कहीं अङ्ग में लग जाय. और-शुष्क हो जाय, तो वह वालुका अङ्ग सञ्चालनमात्र से ही दूर हो जाती है। तथा-जिस जल में शैल-पत्थर के कंकड प्रधान होते हैं वे–शैलोदक हैं. कङ्कड चिकने होते हैं वे–चरण- पग आदि से स्पृष्ट होने पर कुछ दुःख तो देते हैं तो भी कर्दम आदि के जैसे चिपकते नहीं हैं।

કાજળને પાણીની સાથે ઘુટીને જે લેપ તૈયાર થાય તેને હાથ, પગ આદિ પર લગાવવાથી કાદવની જેમ જ તે અંગોને કાળા કરી નાખે છે આ પ્રકારના ખંજનની પ્રધાનતાવાળા પાણીને ખંજનોદક કહે છે આ ખંજનોદકનો જે જગ્યાએ સ્પર્શ થાય છે તે જગ્યા પણ મલિન થઈ જાય છે, પરન્તુ તે ડાઘને પાણીની મદદથી સાફ કરી શકાય છે વાલુકાપ્રધાન જે પાણી છે તેને વાલુકોદક કહે છે. આ પ્રકારનું રેતિમિશ્રિત પાણી શરીરના કોઈ પણ ભાગને કે કોઈ પણ વસ્તુને લાગવાથી શરીરના તે ભાગ અથવા તે વસ્તુ સાથે રેતી ચોંટી જાય છે, પરન્તુ જેવું પાણી સૂકાઈ જાય છે કે તુરતજ શરીરના સંચાલન માત્રથી જ અને વસ્તુને ખંખેરવાથી જ તે રેતી ખરી જાય છે જે પાણીમાં કાંકરા હોય છે તે પાણીને શૈલોદક કહે છે. તે કાંકરા પર પગ પડવાથી સહેજ પીડા તો થાય છે, પણ તે કાંકરા કાદવ આદિની જેમ શરીરે ચોંટી જતાં નથી. "एवामेव" ઈત્યાદિ–જેમ પાણીના ચાર પ્રકાર છે, તેમ

समानः १, खञ्जनोदकसमानः २, वालुकोदकसमानः ३, शैलोदकसमान ४ श्चेति । भावे कर्दमोदकादि समानत्व च लेपवत्त्वेन, तत्र कर्दमोदकसमानो भावः-यथा कर्दमोऽङ्गे लग्नो महता प्रयासेन विमोच्यते तथा भावोऽपि १, तथा-खञ्जनसमानो भाव-यथा खञ्जनं (कज्जलं) लग्नं-लिप्तं कर्दमापेक्षया किञ्चिदायासेनापनीयते तथा भावोऽपि तथा-वालुकोदकसमानो भावः-यथा वालुकाऽङ्गे लग्नाऽल्पेन प्रयासेनापनीयते, तथा भावोऽपि ३, तथा-शैलोदकसमानोभावः-

"एवामेव"-इत्यादि, जल की चतुर्विधता जैसे जीव के राग परिणाम भी चार प्रकार के होते हैं। जैसे—कोई एक रागादि परिणाम कर्दमोदक समान है, कोई एक खञ्जनोदक समान, तो कोई एक रागादि परिणाम वालुकोदक समान, और-कोई एक रागादि परिणाम शैलोदक के समान होता है।

भाव में यह कर्दमोदक आदि से समानता प्रकट की गई है, वह-लेपकारक होने के कारण चिकनाहट-चिकनापन से प्रगट की गई है। इन में कर्दमोदक समान जो भाव होता है, वह-कर्दम जैसे अङ्ग में लग जाता हैं और-अति प्रयास से छुडाया जाता है, उसी तरह दूर किया जाता है। जो-खञ्जनोदक समान भाव होता है, वह-जैसे खञ्जन लग जाने पर किञ्चित् प्रयास से ही कर्दम को अपेक्षा दूर कर दिया जाता है, उसी तरह दूर किया जाता है। तथा-वालुकोदक समान जो भाव होता है वह जैसे वालुका अङ्ग में लग जाने पर अल्प ही प्रयास

રાગપરિણામના પણ ચાર પ્રકાર છે. કોઈ એક રાગાદિ પરિણામ કર્દમોદક સમાન હોય છે, કોઈ એક ખંજનોદક સમાન, તો કોઈ એક વાલુકોદક સમાન તો કોઈ એક રાગાદિ પરિણામ શૈલોદક સમાન હોય છે.

ભાવમાં કર્દમોદક આદિની સાથે જે સમાનતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે તેનું કારણ એ છે કે કર્દમ આદિની જેમ તેમાં ચિકાશ હોવાને કારણે તેને કારણે આત્મા કર્મોનો બન્ધ કરે છે જેમ શરીર પર લાગેલા કાદવને અતિ પ્રયાસથી દૂર કરી શકાય છે, તેમ કર્દમોદક સમાન ભાવને પણ અતિ પ્રયાસથી દૂર કરી શકાય છે જેમ કાદવ કરતાં ખંજન (કાજળ) ના ડાઘને વધારે સહેલાઈથી દૂર કરી શકાય છે, તેમ ખંજનોદક સમાન ભાવને પણ કર્દમોદક સમાન ભાવ કરતાં વધારે સરળતાથી દૂર કરી શકાય છે. જેમ શરીરે ચોંટેલી રેતી અલ્પ પ્રયાસથી જ દૂર કરી શકાય છે, તેમ વાલુકોદક સમાન ભાવને થોડા પ્રયાસથી જ દૂર કરી છે. જેમ પથ્થર, કાંકરા આદિનો પાદા-

यथा शैलाः=पाषाणशर्कराः पादादौ स्पृष्टाः किञ्चिद्दुःखं जनयन्ति न तु लिप्यन्ते, तथा भावोऽपि ४।

एतद्भावचतुष्टयानुप्रविष्टजीवस्य फलमाह-"कद्दमोदगसमाणं" इत्यादि, क्रमेण चतुर्णां फलं-नैरयिक-तिर्यङ्-मनुष्य-देवगतिप्राप्तिरूपं बोध्यम्। सू० १।

अनन्तरं भाव उक्तः, साम्प्रत भाववत्पुरुषजातं दृष्टान्तप्रदर्शनपुरस्सर निरूपयति—

मूलम्-चत्तारि पक्खी पण्णत्ता, तं जहा-रूयसंपन्ने णाममेगे णो रूवसंपन्ने १, रूवसंपन्ने णाममेगे णो रूयसंपन्ने २, एगे रूवसंपन्नोऽवि रूयसंपन्नेऽवि ३, एगे नो रूयसंपन्ने नो रूवससंपन्ने ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-रूयसंपन्ने णाममेगे णो रूवसंपन्ने १-४, । १ ।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-पत्तियं करेमीतेगे पत्तियं करेइ १, पत्तियं करेमीतेगे अपत्तियं करेइ २, अप्पत्तियं

से दूर कर दी जाती है, उसी तरह दूर कर दिया जाता है, और-जो भाव शैलोदक समान होता है वह जैसे-पाषाण शर्करा पादादिकों में स्पृष्ट होने पर कुछ दुःख देती है किन्तु-चिपकती नहीं है, उसी तरह चिपकता नहीं है। इन चार प्रकार के भावों में प्रविष्ट जीव क्रम गतिसे नैरयिक-तिर्यञ्च मनुष्य और देवोंमें जाता है। अर्थात् कर्दमोदक जैसे मलीन भाववाला नरकमें, और खञ्जनोदक समान भाववाला तिर्यंचमें और बालुकासमान भाववाला मनुष्य में एवं शैलोदक समान भाववाला देवताओं में जाता है ॥ सू० १ ॥

દિકોને સ્પર્શ થતાં સહેજ પીડા થાય છે પણ તે કાંકરા આદિ પગની સાથે ચોંટી જતાં નથી, એ જ પ્રમાણે શૈલોદક સમાન ભાવ આત્મામા ચોંટી જતા નથી-સ્થિર થતાં નથી. આ ચાર પ્રકારના ભાવોમાં પ્રવિષ્ટ જીવ ક્રમશઃ નૈરયિક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. અર્થાત્ કર્દમોદક જેવા મલીન ભાવવાળો નરકમાં, તેમ જ કાજળ જેવા ભાવવાળો તિર્યંચમાં અને વાલુકા રેતી સમાન ભાવવાળો મનુષ્યમાં અને શૈલોદક સમાન ભાવવાળો દેવોમાં ઉત્પન્ને થાય છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

करेमीतेगे पत्तियं करेइ ३, अपत्तियं करेमीतेगे अपत्तियं करेइ ४।२।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—अप्पणो णाममेगे पत्तियं करेइ णो परस्स १, परस्स णाममेगे पत्तियं करेइ णो अप्पणो० ४,।३।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—पत्तियं पवेसामीतेगे पत्तियं पवेसेइ १, पत्तियं पवेसामीतेगे अपत्तियं पवेसेइ० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—अप्पणो णाममेगे पत्तियं पवेसेइ णो परस्स, १, परस्स णाममेगे पत्तियं पवेसेइ णो अप्पणो २-४ ॥ सू० २ ॥

छाया—चत्वारः पक्षिणः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—रुतसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १, रूपसम्पन्नो नामैको नो रुतसम्पन्नः २, एको रूपसम्पन्नोऽपि रुतस

अब सूत्रकार दार्ष्टान्तिक भावसे पुरुषजात का निरूपण करते हैं—

चत्तारि पक्खी पण्णत्ता—इत्यादि—२

सूत्रार्थ—पक्षी चार प्रकार के कहे गयेहैं, जैसे—कोई एक पक्षी ऐसा होता है, जिस का शब्द तो आनन्द दायक होता है पर—वह स्वयं सुन्दर आकार वाला नहीं होता है-१। कोई एक पक्षी ऐसा होता है जो रूप में तो सुन्दर है पर—उसका शब्द आनन्द दायक नहीं होता है—२। कोई एक पक्षी ऐसा होता है जो रूप में भी सुन्दर होता है और—

હવે સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત અને દાર્ષ્ટાન્તિક સૂત્રો દ્વારા પુરુષોના પ્રકારો પ્રકટ કરે છે. " चत्तारि पक्खी पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—પક્ષીના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઈ એક પક્ષી એવું હોય છે કે જેનો અવાજ આનંદદાયક હોય છે, પણ તે સુંદર હોતું નથી. (૨) કોઈ એક પક્ષી એવું હોય છે કે જે સુંદર હોય છે પણ તેનો અવાજ આનંદદાયક હોતો નથી. (૩) કોઈ એક પક્ષી એવું હોય છે કે જે દેખાવમાં

म्पन्नोऽपि ३, एको नो रुतसम्पन्नो नो रूपसम्पन्न. ४। एवमेव चत्वारि पुरुष जातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–रुतसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः ४। १॥

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–प्रीतिकं करोमीत्येकः प्रीतिकं करोति १, प्रीतिकं करोमीत्येकोऽप्रीतिकं करोति २, अप्रीतिकं करोमीत्येकः प्रीतिकं करोति ३, अप्रीतिकं करोमीत्येकोऽप्रीतिकं करोति ४। ।२।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–आत्मनो नामैकोऽप्रीतिकं करोति नो परस्य १, परस्य नामैकः प्रीतिकं करोति नो आत्मनः ४, । ३ ।

शब्द भी उसका आनन्द दायक होता है–३ और–कोई एक पक्षी ऐसा होता है. जो–नतो बोलने में और–न देखने में सुन्दर होता है–४

इसी प्रकार पुरुष जात चार हैं कोई एक ऐसा होता है जिसका शब्द आनन्द दायक होता है किन्तु–आकार सुन्दर नहीं होता है–१ कोई पुरुष ऐसा होता है जो रूप में तो सुन्दर, पर–बोलने में नहीं–२ कोई एक ऐसा होता है जो बोलने में भी और–आकार में भी सुन्दर होता है–३ कोई एक न तो बोलने में–न देखने में सुन्दर होता है–४ फिर भी—चार प्रकार के पुरुष होता हैं, जैसे–कोई एक ऐसा होता है जो–"मैं प्रीति करूं"–ऐसा निश्चय करके प्रीति करता है–१ कोई एक मैं प्रीति करूं ऐसा निश्चय करके भी प्रीति नहीं करताहै-२ कोई एक पुरुष "मैं अप्रीति करूं" ऐसा निश्चय करके भी अप्रीति नहीं करता है–३

પણ સુંદર હોય છે અને તેનો અવાજ પણ આનંદદાયક હોય છે. (૪) કોઈ એક પક્ષી એવું હોય છે કે જેનો અવાજ પણ મધુર હોતો નથી અને દેખાવ પણ સુંદર હોતો નથી.

એ જ પ્રમાણે પુરુષ પણ ચાર પ્રકારના હોય છે. (૧) કોઈ એક પુરુષની વાણી આનંદદાયક હોય છે, પણ દેખાવ સુંદર હોતો નથી (૨) કોઇનો દેખાવ સુંદર હોય છે પણ વાણી મધુર હોતી નથી. (૩) કોઇની વાણી પણ મધુર હોય છે અને દેખાવ પણ સુંદર હોય છે. (૪) કોઈની વાણી પણ મીઠી હોતી નથી અને દેખાવ પણ સુંદર હોતો નથી પુરુષના આ પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર પડે છે––(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પ્રીતિ કરવાનો નિશ્ચય કરીને પ્રીતિ કરી શકે છે. (૨) કોઈ પ્રીતિ કરવાનો નિશ્ચય કરવા છતાં પ્રીતિ કરતો નથી. (૪) કોઈ પુરુષ અપ્રીતિ કરવાનો નિશ્ચય કરીને અપ્રીતિ જ કરે છે.

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-प्रीतिकं प्रवेशयामीत्येकः प्रीतिकं प्रवेशयांते प्रीतिकं प्रवेशयामीत्येकोऽप्रीतिकं प्रवेशयति० ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-आत्मनो नामैकः प्रीतिकं प्रवेशयति नो परस्य १, परस्य नामैकः प्रीतिकं प्रवेशयति नो स्वस्य २-४ ॥ सू० २ ॥

कोई एक मैं अप्रीति करूं ऐसा निश्चय कर के अप्रीति ही करता है-४

फिरभी-पुरुष जात चार हैं, जैसे-कोई एक ऐसा होता है जो-अपने प्रति प्रीति करता है, परके प्रति नहीं-१ कोई एक परके प्रति प्रीति करता है, अपने प्रति नहीं-२ कोई एक अपने, और-परके प्रति भी प्रीति करता है-३ एक कोई नतो अपने प्रति न परके प्रति ही प्रीति करता है-४-३। फिरभी-पुरुष चार हैं, कोई एक अपने स्नेह को परचित्तमें प्रविष्ट कराऊं ऐसा निश्चय करके परचित्तमें अपने स्नेहको स्थापित करता है-१ कोई एक अपने स्नेहको परचित्त में प्रविष्ट कराऊं निश्चय करके भी परचित्त में अपनी प्रीति प्रविष्ट नहीं करता है-२ एक ऐसा होता है जो परचित्त में अप्रीति प्रविष्ट कराऊं निश्चय करके भी प्रीति को प्रविष्ट करता है-३ कोई एक परचित्त में अप्रीति प्रविष्ट कराऊं निश्चय न करके उसके चित्त में अपनी अप्रीति ही प्रविष्ट करता है-४-४

પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પોતાના પ્રત્યે પ્રીતિ રાખે છે, અન્ય તરફ પ્રીતિ રાખતો નથી. (૨) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરપ્રત્યે પ્રીતિ રાખે છે પણ પોતાના પ્રત્યે રાખતો નથી (૩) કોઇ સ્વ અને પર બન્ને પ્રત્યે પ્રીતિ રાખે છે. (૪) કોઈ સ્વ કે પર કોઇ પ્રત્યે પ્રીતિ રાખતો નથી.

પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ પોતાના સ્નેહને પરચિત્તમાં પ્રવિષ્ટ કરાવવાનો નિશ્ચય કરીને પરચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે સ્નેહ ઉત્પન્ન કરાવી શકે છે (૨) કોઇ પોતાને માટે પરચિત્તમાં પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવવાનો નિશ્ચય કરવા છતાં પરચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવી શકતો નથી (૩) કોઇ પુરુષ પરચિત્તમાં અપ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવવાનો નિશ્ચય કરવા છતા પણ પોતાના પ્રત્યે પ્રીતિ જ ઉત્પન્ન કરાવે છે. (૪) કોઇ એક પુરુષ પરચિત્તમાં અપ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવવાનો નિશ્ચય કરીને અપ્રીતિ જ ઉત્પન્ન કરે છે.

टीका—" चत्तारि पक्खी "—त्यादि–स्पष्टम्, नवरं–रुतं–शब्दः, रूपं च सर्वेषां पक्षिणां भवत्येव, अत एतद्द्वयं विशिष्टमेव गृह्यते, एवं च रुतं–श्रवणाऽऽह्लादको मनोज्ञशब्दस्तेन सम्पन्नो–युक्तः एकः पक्षी भवति, परन्तु नो रूपसम्पन्नः–सुन्दराऽऽकारो न भवति, कोकिलवत्, इति प्रथमो भङ्गः १।

तथा—पुरुषजात चार हैं, कोई एक तो ऐसा होता है जो, अपने चित्त में प्रीति को प्रविष्ट करता है, पर–परके चित्त में प्रीति को प्रविष्ट नहीं करता है–१ कोई एक ऐसा होता है जो परचित्त में प्रीति को स्थापित करता है, अपने चित्त में नहीं–२ कोई एक ऐसा होता है जो अपने चित्त में प्रीति को स्थापित करता है, और–परचित्त में भी–३ और–कोई एक अपने चित्त में भी और–परचित्त में–भी स्थापित नहीं करता है–४–४

टीकार्थ—इस सूत्र में पक्षी का दृष्टान्त देकर पुरुष चार प्रकार प्रकट किये गये हैं. उस सम्बन्ध में ऐसा कथन जानना चाहिये कि—रुत, शब्द, आवाज, बोली पक्षियों का होता है, और रूप भी पक्षियों का होता है, परन्तु–यहां जो ये दो बातें प्रगट की गई हैं, इस से ये दोनों विशिष्ट रूप से गृहीत हुवे हैं। तथा च–जो मनुष्यों के श्रोत्रेन्द्रियो का आनन्ददायक होताहै ऐसा मनोज्ञ शब्द और जो रूप रुचिर–सुन्दर आकार वाला होता है उसे ऐसा मनोज्ञ रुत और–रूप से समझना चाहिये। इस प्रकार समझ कर फिर इस दृष्टान्त सूत्र का इस

પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પોતાના ચિત્તમાં તો પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરી શકે છે પણ પરના ચિત્તમાં પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવી શકતો નથી (૨) કોઇ પુરુષ પરમાં પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવી શકે છે પણ પોતાના ચિત્તમા પ્રીતિને સ્થાપિત કરી શકતો નથી. (૩) કોઇ એક પુરુષ પોતાના અને પરના, બન્નેના ચિત્તમાં પ્રીતિ સ્થાપિત કરી શકે છે (૪) કોઈ પુરુષ પોતાના ચિત્તમાં પણ પ્રીતિને સ્થાપિત કરી શકતો નથી અને પરના ચિત્તમાં પણ પ્રીતિને સ્થાપિત કરી શકતો નથી.

ટીકાર્થ—પહેલા સૂત્રમાં પક્ષીનુ દૃષ્ટાન્ત આપીને ચાર પ્રકારના પુરુષો પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે. પક્ષીઓમાં અવાજ (બોલી, શબ્દ) અને રૂપ બન્નેનો સદ્‌ભાવ હોય છે. પરન્તુ અહીં તે બન્ને બાબતોને વિશિષ્ટ રૂપે ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે અહીં ‘ રૂપ ’ પદથી એવુ સમજવું જોઇએ કે મનુષ્યોની દૃષ્ટિને ગમે તેવું મનોજ્ઞ (રુચિર) રૂપ અને ‘ શબ્દ ’ પદથી મનુષ્યોની કર્ણેન્દ્રિયને મનોજ્ઞ લાગે એવો મધુર અવાજ ગ્રહણ થવો જોઇએ.

एकः-कश्चित् पक्षी रूपसम्पन्नः-सुन्दराऽऽकारो भवति, किन्तु नो रुतसम्पन्नः साधारणशुकवत्, इति द्वितीयो भङ्गः २। एको रुतरूपोभयसम्पन्नो भवति मयूरवत्; इति तृतीयो भङ्गः ३। एको नो रुतसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नश्च भवति काकवत्, इति चतुर्थो भङ्गः ४।

"एवामेव" इत्यादि-एवमेव=पक्षिवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-रुतसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्न इत्यादि। अत्रेदं बोध्यम्-पुरुषो हि लौकिकलोकोत्तरभेदेन द्विधा। तत्र लौकिकपुरुषपक्षे चत्वारो भङ्गा एवं बोध्याः, तथाहि-एकः पुरुषः प्रियवादित्वेन रुतसम्पन्नः-मनोज्ञशब्दयुक्तो भवति, किन्तु

प्रकार से अर्थ करना चाहिये। कोई एक पक्षी ऐसा है कि-उसकी आवाज सुरीली-मीठी, आकर्षक, आनन्ददायक, कर्णप्रिय होतीहै.परन्तु-वह रूप सम्पन्न नहीं होता, जैसे-कोकिल-कोयल १ कोई एक देखने में इतना सुन्दर कि दर्शकोंका मन खींचले, किन्तु-उसका शब्द आकारका अनुरूप नहीं, जैसे-साधारण शुक, (तोता) २ कोई एक उभय था, (दोनों तरहसे) सुन्दर होता, जिसका शब्द भी कर्ण सुखावह और-रुचिररूप भी, जैसे-मोर-३ कोई एक दोनों प्रकारसे ठीक नहीं होताहै शब्दसे भी -रूप से भी, जैसे-कौवा-४ इस दृष्टान्त का समन्वय पुरुषों के साथ करते हुवे सूत्रकारने पुरुषमें चार प्रकारका भेद कहा है। पुरुष लौकिक-अलौकिक भी होते हैं, सो इन लौकिक पुरुषोंमें पक्षी सम्बन्धी चार भङ्ग होंगे। जैसे-कोई एक प्रिय रुत (शब्द) सम्पन्न होता है किन्तु-रूप से सम्पन्न नहीं-१ कोई एक सुन्दर रूप वाला है. तो-सुन्दर बोलचाल

આ દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો પક્ષીઓના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઈ પક્ષીનો અવાજ મધુર, કર્ણપ્રિય હોય છે, પણ તે દેખાવમાં સુંદર હોતું નથી. દા. ત. કોયલ. (૨) કોઈ એક પક્ષીનો દેખાવ મનોહર હોય છે પણ તેનો અવાજ મીઠો હોતો નથી દા. ત. સામાન્ય પોપટ. (૩) કોઈ એક પક્ષીનો અવાજ પણ કર્ણપ્રિય હોય છે અને દેખાવ પણ મનોહર હોય છે. દા. ત. મોર. (૪) કોઈ એક પક્ષીનો અવાજ પણ કર્કશ હોય છે અને દેખાવ પણ ખરાબ હોય છે. દા. ત. કાગડો.

પક્ષીની જેમ પુરુષના પણ ચાર પ્રકારો પડે છે—પુરુષ લૌકિક પણ હોય છે અને અલૌકિક પણ હોય છે. લૌકિક પુરુષોના પણ પક્ષી જેવા ચાર પ્રકાર સમજવા—(૧) કોઈ એક પુરુષનો અવાજ કર્ણપ્રિય હોય છે પણ તે સુંદર હોતો નથી (૨) કોઈ એક પુરુષ રૂપની અપેક્ષાએ સુંદર હોય છે પણ તેની

यथोक्तरूप रहितत्वेन नो रूपसम्पन्नः—सुन्दराऽऽकारवान् न भवति, इति प्रथमो भङ्गः ।१। तथा—एकः पुरुषो रूपसम्पन्नो भवति न तु रुतसम्पन्नः, इति द्वितीयः २।

एको रुतसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि भवति। इति तृतीयः ३। एको न रुतसम्पन्नो नापि रूपसम्पन्न इति चतुर्थः ४। लोकोत्तरपुरुषपक्षेत्वेवं, तथाहि—एकः साधुपुरुषो रुतसम्पन्नः – रुतेन – जिनप्ररूपितशुद्धधर्मदेशनादिप्रबन्धरूपशब्देन सम्पन्नो—युक्तो भवति, किन्तु रूपसम्पन्नः – रूपेण – लोचाल्पकेशशिरस्कत्व—तपः कृशीकृतशरीरत्व—मलमलिनकायत्वाऽल्पोपकरणत्वप्रभृतिसाधूचितरूपेण सम्पन्नो न भवति, इति प्रथमो भङ्गः १। एवमेवावशिष्टं भङ्गत्रयमपि यथायोग्यं बोध्यम् ।१।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं--प्रीतिकं- प्रीतिरेव प्रीतिकं- प्रेम करोमीति निश्चित्य एकः प्रीतिकं करोति १, एकः—अन्यस्तु प्रीतिकं करो-

---

वाला नहीं–२ कोई एक देखने में भी सुहावना और बोल से भी–३ कोई एक गधा–गदहा, और–ऊंट जैसा न तो शब्द से–न तो रूप से सुन्दर होता है-४ । अब लोकोत्तर में घटाते हैं-कोई एक साधु (शब्द) से (जिनप्रणीत धर्मदेशना से) सम्पन्न होता है, किन्तु–रूप से–लोच करना, अल्प केशोंसे युक्त शिरवाला होना, तप से कृश शरीर वाला होना, शरीर संस्कार वर्जित होना, अल्पोपकरण रखना, आदि साधूचित सम्पन्न नहीं होता है–१ इसी प्रकार शेष भङ्ग त्रय को–यथायोग्य समझना चाहिये ४। "चत्तारि पुरिसजाया"–इत्यादि सूत्र स्पष्ट है। यहां–प्रीतिक शब्द का अर्थ प्रेम है. प्रीति शब्द से स्वार्थ में ही कन्

વાણી આનંદદાયક હોતી નથી. (૩) કોઈ એક પુરુષ દેખાવમાં પણ સુંદર હોય છે અને તેની વાણી પણ મીઠી હોય છે (૪) કોઈ એક પુરુષની વાણી પણ મધુર હોતી નથી અને દેખાવ પણ સુંદર હોતો નથી. હવે લોકોત્તર પુરુષોના ચાર પ્રકાર પ્રકટ કરવામા આવે છે—(૧) કોઈ એક સાધુ રુતથી (જિન પ્રણીત ધર્મદેશનાથી) સંપન્ન હોય છે, પરન્તુ રૂપ સંપન્ન હોતો નથી એટલે કે લોચ કરવો, અલ્પ કેશોથી યુક્ત શિરવાળો હોવું, તપથી કૃશ શરીર વાળા હોવું, શરીર સસ્કારવિહીન હોવું, અલ્પોપકરણ રાખવા, આદિ સાધૂચિત રૂપથી સંપન્ન હોતો નથી. એ જ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ પ્રકારો પણ સમજી લેવા.

"चत्तारि पुरिसजाया" ઈત્યાદિ સૂત્રનો અર્થ સ્પષ્ટ છે. અહીં પ્રતિક શબ્દ પ્રેમના અર્થમાં વપરાયો છે. 'प्रीति' પદને સ્વાર્થ 'कन्' પ્રત્યય લગા

मीति निश्चित्यापि अप्रीतिकं करोति २, एकः पुरुषः अप्रीतिकं करोमीति निश्चित्य प्रीतिकं करोति येन केनापि कारणेन पूर्वभावपरिवर्तनात् ३, एकः पुरुषः अप्रीतिकं करोमिति निश्चित्य अप्रीतिकं करोति ४।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-स्पष्टम्, नवरम्-एकः पुरुषः आत्मनः-स्वस्य प्रीतिकम्-आनन्दं भोजनवस्त्रादिभिः करोति-सम्पादयति स्वार्थपरायणत्वात्, किन्तु परस्य-अन्यस्य प्रीतिकं भोजनवस्त्रादिभिर्नो करोति, इति प्रथमो भङ्गः १। एकः पुरुष परस्य प्रीतिकं भोजनवस्त्रादिभिः करोति परमार्थपरायणत्वात् मोहवत्त्वाद्वा, किन्तु आत्मनः-स्वस्य नो करोति, इति द्वितीयः २। एकः

प्रत्यय होने से बना है, "मैं प्रेम करूं" मन में निश्चय करके कोई एक पुरुष प्रीति करता है-१ कोई पुरुष तो प्रीति करूं ऐसा निश्चय करके भी अप्रीति करताहै-२ अप्रीति करूं ऐसा निश्चय करके भी कोई एक प्रीति करता है, क्योंकि—उसमें किसी कारण से तब तक परिवर्तन होता है-३ कोई एक अप्रीति करूं निश्चय करके अप्रीति करता है-४। "चत्तारि पुरिसजाया"-इत्यादि स्पष्ट है, इस में ऐसा प्रगट किया गया है कि-कोई एक पुरुष स्वार्थ परायणतासे अपने आपको ही भोजन-वस्त्र आदि से सुसज्जित करनेमें आनन्द मानताहै, औरोंको भी तथा सुसज्जित करने में नहीं-१ कोई एक पर को ही भोजन वस्त्रादिकों से परपरायणता के कारण आनन्दित होता है, क्योंकि-हो सकता है-उसके प्रति वह मोहवाला हो, परन्तु-अपने प्रति इस प्रकार के ख्याल से रहित होता है-२

ઙવાથી 'પ્રીતિક' શબ્દ બન્યો છે. "હું પ્રેમ કરુ" આવો નિશ્ચય કરીને કોઈ વ્યક્તિ પ્રીતિ કરે છે (૨) "હું પ્રેમ કરુ" આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને પણ કોઈ પુરુષ અપ્રીતિ કરે છે (૩) "અપ્રીતિ કરૂં" આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને કોઈ પુરુષ પ્રીતિ કરે છે કારણ કે કોઇ કારણથી તેનામાં પરિવર્તન થઇ જાય છે (૪) "અપ્રીતિ કરૂં" આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને કોઈ પુરુષ અપ્રીતિ કરે છે.

"चत्तारि पुरिसजाया" ઈત્યાદિ આ સૂત્રમાં નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સ્વાર્થી સ્વભાવને કારણે પોતે જ સુંદર સુંદર ભોજનો વડે પોતાને જ તૃપ્ત કરતો હોય છે અને સુંદર વસ્ત્રાદિથી પોતાના શરીરને વિભૂષિત કરતો હોય છે અને તેમાં જ આનંદ માનતો હોય છે, પણ પરને તે વસ્તુઓ આપીને આનંદ માનતો નથી. (૨) કોઇ એક પુરુષ પરને વસ્ત્રાદિ આપીને આનંદ પામતો હોય છે. મોહાદિકને કારણે એવું સંભવી શકે છે. પણ પોતાને માટે એવા ખ્યાલથી રહિત હોય છે. (૩) કોઈ એક પુરુષ સ્વાર્થ અને પરમાર્થ પરાય

पुरुष आत्मनः परस्य च प्रीतिकं भोजनाऽऽच्छादनादिभिः करोति स्वार्थपरमार्थपरायणत्वात्, इति तृतीयः ३। तथा-एकः पुरुषो न स्वस्य प्रीतिकं करोति न च परस्य, स्वार्थपरमार्थरहितत्वादिति चतुर्थः ४।

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-स्पष्टम्, नवरम्-एकः पुरुषः प्रीतिकं-स्वसम्बन्धि प्रेम परकीयचित्ते प्रवेशयामीत्येवं निश्चित्य प्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयति-स्थापयति १, एकः पुरुषः प्रीतिकं प्रवेशयामीत्येव निश्चित्यापि केनापि कारणेन पूर्वभावपरिवर्तनादप्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयति १, एकः पुरुषोऽप्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयामीत्येवं निश्चित्यापि प्रीतिकं प्रवेशयति ३। एकः पुरुषस्तु अप्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयामीत्येवमप्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयति द्वेषयतीतिभावः ४।

कोई एक उभय था. स्वार्थ-और परमार्थ परायणतासे अपने और पर दोनों को भोजन वस्त्रादि से आनन्द सम्पन्न बनाये रखता है-३ कोई एक स्वार्थ और-परमार्थ वञ्चित होने के कारण भोजन वस्त्रादि द्वारा अपने आपको-और-औरों को भी आनन्द युक्त करने कराने से वञ्चित रखता है-४ " चत्तारि पुरिसजाया "-इत्यादि स्पष्ट है, इस में-यह समझाया गया है कि-कोई एक स्वसम्बन्धित स्नेह को परकीयचित्त में प्रवेश कराऊं " निश्चित करके परचित्त में स्थापित करता है-१ कोई एक पुरुष अपना स्नेह " परचित्त में स्थापित करूं " निश्चय करके भी किसी कारण से पूर्व भाव परिवर्तन हो जाने पर परचित्तमें अप्रीति को ही स्थापित करता है-२ कोई एक " अप्रीति को ही स्थापित करूं " निश्चय करके फिर भी वह प्रीति को ही परचित्त में स्थापित करता है-३

હુતાને કારણે પોતે પણ સુંદર ભોજન, વસ્ત્રાદિથી આનંદ માને છે અને બીજાને પણ ભોજન, વસ્ત્રાદિ આપીને આનંદ કરાવે છે. (૪) કોઇ એક પુરુષ સ્વાર્થ અને પરમાર્થથી રહિત હોવાને કારણે પોતાને પણ ભોજન વસ્ત્રાદિ દ્વારા આનંદ કરાવનો નથી અને અન્યને પણ એ રીતે આનંદિત કરતો નથી

" चत्तारि पुरिसजाया " ઇત્યાદિ આ સૂત્રમાં ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે. (૧) કોઇ એક પુરુષ " અન્યના ચિત્તમા મારા પ્રત્યે સ્નેહ સ્થાપિત કરાવું " આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને અન્યના ચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે સ્નેહ સ્થાપિત કરી દે છે. (૨) કોઈ એક પુરુષ પરચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે સ્નેહ સ્થાપિત કરવાનો નિશ્ચય કરવા છતાં પણ કોઇ કારણે પૂર્વ ભાવમાં પરિવર્તન થઇ જવાથી પરચિત્તમાં અપ્રીતિ જ સ્થાપિત કરે છે. (૩) કોઇ એક પુરુષ

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-स्पष्टम्, नवरम्-एकः पुरुषः आत्मनः-स्वस्य चित्ते प्रीतिकं प्रवेशयति, किन्तु परस्य चित्ते प्रीतिकं नो प्रवेशयति, इति प्रथमो भङ्गः १। शेषभङ्गत्रयं पूर्ववद्बोध्यम् । सू० २ ।

पुनः सदृष्टान्तं पुरुषजातं निरूपयति—

मूलम्—चत्तारि रुक्खा पण्णत्ता, तं जहा--पत्तोवए १, पुप्फोवए २, फलोवए ३, छायोवए ४ । एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा -पत्तोवगरुक्खसमाणे १, पुप्फोवगरुक्खसमाणे २, फलोवगरुक्खसमाणे ३, छायोवगरुक्खसमाणे ४।सू०३।

छाया—चत्वारो वृक्षाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पत्रोपगः १, पुष्पोपगः २, फलोपगः ३, छायोपगः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पत्रोपग-

---

कोई एक परचित्त में अप्रीति स्थापित करू निश्चय करके पूर्व विचार के अनुसार अप्रीति को ही परकीय चित्त में स्थापित करता है—४

"चत्तारि पुरिसजाया"—इत्यादि स्पष्ट हैं, इस में कहा गया है कि—कोई एक अपने ही चित्त को प्रसन्न रखता है परचित्त को नहीं—१ शेष भङ्ग त्रय पूर्व की तरह जानना चाहिये—॥ सू० २ ॥

"पुनः सूत्रकार सदृष्टान्त पुरुपजातकी प्ररूपणा करते हैं—

"चत्तारि रुक्खा पणत्ता"—३

सूत्रार्थ—चार प्रकारके वृक्ष कहे गयेहैं, जैसे-कोई एक वृक्ष पत्रोपग होता है, १ कोई एक पुष्पोपग होता है, २ कोई एक फलोपग होता है, ३

પરચિત્તમાં અપ્રીતિ સ્થાપિત કરવાનો નિશ્ચય કરવા છતાં પણ પ્રીતિ જ સ્થાપિત કરે છે (૪) કોઇ એક પુરુષ પરચિત્તમાં અપ્રીતિ સ્થાપિત કરવાનો વિચાર કરીને પૂર્વ ભાવ અનુસાર અપ્રીતિ જ સ્થાપિત કરે છે.

"चत्तारि पुरिसजाया" ઇત્યાદિ. આ પ્રકારે પણ પુરુષોના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. (૧) કોઈ એક પુરુષ પોતાના ચિત્તને જ પ્રસન્ન રાખે છે. અન્યના ચિત્તને પ્રસન્ન રાખતો નથી બાકીના ત્રણ પ્રકારો આગલા સૂત્રમાં કહ્યા પ્રમાણે જ સમજી લેવા ॥ સૂ ૨ ॥

વૃક્ષના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સૂત્રકાર પુરુષના પ્રકારોની પ્રરૂપણા કરે છે—

"चत्तारि रुक्खा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—(સૂ. ૩)

સૂત્રાર્થ—વૃક્ષના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે(૧) કોઇ વૃક્ષ પત્રોપગ (પત્રયુક્ત) હોય છે, (૨) કોઇ વૃક્ષ પુષ્પોપગ હોય છે. (૩) કોઈ વૃક્ષ ફલોપગ હોય છે,

वृक्षसमानः १, पुष्पोपगवृक्षसमानः २, फलोपगवृक्षसमानः ३, छायोपगवृक्षसमानः ४। ।सू० ३।

टीका—" चत्तारि रुक्खा " इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-पत्रोपगः-पत्राण्युपगच्छति-प्राप्नोतीति पत्रोपगः-पत्रयुक्तः, एवं पुष्पोपगादयस्त्रयः ४। " एवामेव " इत्यादि-एवमेव-पत्रोपगादि वृक्षवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-पत्रोपगवृक्षसमानः १, पुष्पोपगवृक्षसमानः २, फलोपगवृक्षसमानः ३, छायोपगवृक्षसमानः ४। पत्रोपगादिवृक्षसमानत्वं लौकिकानां लोकोत्तराणां च पुरुषाणां संभवति। तत्र लौकिकपक्षे-यथा पत्रोपगवृक्षः पत्रमात्रेण जनमुपकरोति तथैव तत्समानः पुरुषो वचनमात्रेण जनमुपकरोतीति प्रथमः १। पुष्पोपगवृक्षो यथा पुष्पेण

और-कोई एक छायोपग होता है, ४। इसी प्रकार से पुरुषजात चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक पुरुष पत्रोपग वृक्ष समान होता है, १ कोई एक पुष्पोपग वृक्ष समान होता है, २ कोई एक फलोपग वृक्ष समान होता है, ३ और कोई एक पुरुष छायोपग वृक्ष समान होता है, ४।

इस सूत्रका तात्पर्य ऐसा है कि-कोई एक वृक्ष ऐसा है जो पत्रोपग पत्रों से युक्त होता है, १ कोई एक वृक्ष पुष्पोपग-पुष्पोंसे संयुक्त होता है, २ कोई एक वृक्ष ऐसा होता है जो फलोपग, फलों से युक्त होता है, ३ और-कोई एक वृक्ष ऐसा होता है जो छायोपग-छाया से युक्त होताहै, ४ इनके समान चार पुरुष होतेहैं इसका तात्पर्य है कि-कोई एक लौकिक पुरुष ऐसा होता है जो, पत्रोपग वृक्ष समान होता है, अर्थात्-जैसे पत्रोपग वृक्ष केवल अपने पत्रों से ही जन-उपकार करता है उसी प्रकार पुरुष भी केवल वचन से ही जनों का उपकार करता है, १ पुष्पों-

---

અને (૪) કોઈ વૃક્ષ છાયોપગ હોય છે એ જ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે. (૧) કોઈ પુરુષ પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન હોય છે, (૨) કોઇ પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન હોય છે, (૩) કોઇ ફલોપગ વૃક્ષ સમાન હોય છે અને (૪) કોઇ છાયોપગ વૃક્ષસમાન હોય છે.

આ સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે. (૧) કોઈ એક વૃક્ષ પાનથી યુક્ત હોય છે. (૨) કોઇ વૃક્ષ પુષ્પોથી યુક્ત હોય છે, (૩) કોઇ વૃક્ષ ફલોથી યુક્ત હોય છે અને (૪) કોઇ વૃક્ષ છાયાથી યુક્ત હોય છે. વૃક્ષની જેમ પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે. (૧) પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ-જેમ પત્રોપગ વૃક્ષ પોતાના પાન વડે જ લોકો પર ઉપકાર કરે છે, એ જ પ્રમાણે કોઈ એક લૌકિક પુરુષ પોતાની વાણી દ્વારા જ લોકોનું ભલું કરે છે.

जनमुपकरोति तथैव तत्समानः पुरुषः कष्टनिवारणोपायप्रदानेनोपकारी भवति, इति द्वितीयः २। फलोपगवृक्षः फलप्रदानेन यथा विशिष्टोपकारको भवति, तथैव तत्समानः पुरुष आपद्गतान् जनानर्थादि प्रदानेनोपकरोतीति तृतीयः ३। तथा–छायोपगवृक्षो यथा छायया जनानां सन्तापं हरति, तथैव तत्समानः पुरुष आश्रयप्रदानादिनाऽऽपद्गतान् जनानुपकरोति, इति चतुर्थः ४।

लोकोत्तरपक्षेतु यः सूत्रदानेन जनमुपकरोति स पत्रोपगवृक्षसमानः।१। यः पुनरर्थप्रदानेनोपकरोति स पुष्पोपगवृक्षसमानः।२। यस्तु सूत्रार्थोभयप्रदानेनोपकरोति स फलोपगवृक्षसमानः।३। यः पुनर्जन्मजरामरणारूपाऽपायाद् रक्षति स छायोपगवृक्षसमान इति। सू० ३॥

पग पुरुष कष्ट निवारण उपाय प्रदान करता है जैसे–पुष्पोपग वृक्ष अपने पुष्पों से जनका उपकार करता है, २ तथा–फलोपग वृक्ष समान वह पुरुष है जो आपद्गनों को अर्थादि प्रदान से उसका उपकारक होता है जैसे–फलोपग वृक्ष अपने फलों से चलते जनों का उपकार करता है, ३ छायोपग वृक्ष का जैसा वह पुरुष होता है जो–आश्रय प्रदान द्वारा उपकार करता है, जैसे–छायोपग वृक्ष छायासे जनों का सन्ताप करता है, ४ लोकोत्तर पुरुष इन वृक्षों के समान होते हैं–जो लोकोत्तर पुरुष सूत्र दान से जन उपकारक होता है वह पत्रोपग वृक्ष समान है, १ जो अर्थ प्रदान से उपकारक होता है वह पुष्पोपग वृक्ष समान है, २ जो सूत्र

---

(२) પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ—જેમ પુષ્પોપગ વૃક્ષ પોતાના પુષ્પોથી જ લોકો પર ઉપકાર કરે છે, તેમ કોઈ પુરુષ કષ્ટ નિવારણના ઉપાય બતાવીને લોકોનું ભલું કરે છે. (૩) ફલોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ–જેવી રીતે ફલોપગ વૃક્ષ પોતાના ફલો આપીને જતાં આવતાં લોકોનો ઉપકાર કરે છે, તેમ કોઈ પુરુષ અર્થાદિનું પ્રદાન કરીને લોકોનો ઉપકાર કરે છે.

(૩) છાયોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ—જેમ કોઈ વૃક્ષ પોતાના છાયડામાં લોકોને આશ્રય આપે છે તેમ કોઈ પુરુષ આશ્રય પ્રદાન કરીને પણ લોકોનો ઉપકાર કરે છે. અથવા સંતાપ દૂર કરે છે

લોકોત્તર પુરુષોને વૃક્ષોની સાથે આ પ્રમાણે સરખાવી શકાય—

(૧) જે લોકોત્તર પુરુષ સૂત્રદાન દ્વારા જન ઉપકારક હોય છે, તેને પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય (૨) જે અર્થપ્રદાન દ્વારા ઉપકારક થાય છે, તેને પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય (૩) સૂત્ર અને અર્થ બન્ને દ્વારા ઉપકાર કરનાર લોકોત્તર પુરુષને ફલોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય (૪) જે

अथ श्रमणोपासकस्याऽऽश्वासं सदृष्टान्तमाह—

मूलम्–भारं णं वहमाणस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता, तं जहा–जत्थ णं अंसाओ अंसं साहरइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते १, जत्थवि य णं उच्चारं वा पासवणं वा परिट्ठावेइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते २, जत्थवि य णं णागकुमारावासंसि वा सुवण्णकुमारावासंसि वा वासं उवेइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते ३, जत्थवि य णं आवकहाए चिट्ठइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते ४। एवामेव समणोवासगस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता, तं जहा–जत्थ णं सीलव्वयगुणव्वय-वेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासाइं पडिवज्जेइ तत्थवि अ से एगे आसासे पण्णत्ते १, जत्थवि य णं सामाइयं देसावगासियं सम्ममणुपालेइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते २, जत्थवि य णं चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेइ, तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते ३, जत्थवि य णं अपच्छिममारणंतिअसंलेहणाजोसणाजूसिए भत्तपाणपडियाइ-क्खिए पाओवगए कालमणवकंखमाणे विहरइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते ४ ॥ सू० ४ ॥

अर्थ दोनों से जन कल्याण करता है वह फलोपग वृक्ष समान है, ३ और जो जन्म जरा मरण रूप अपायों से बचाता है, संरक्षण करता है वह लोकोत्तर पुरुष छायोपग समान है, ४ ॥ सू० ३ ॥

જન્મ, જરા અને મરણ રૂપ અપાયોથી બચાવે છે, તે લોકોત્તર પુરુષને છાયોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય છે. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

छाया—भारं खलु वहमानस्य चत्वार आश्वासाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-यत्र खलु अंसादंसं संहरति तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः १, यत्रापि च खलु उच्चारं वा प्रस्रवणं वा परिष्ठापयति तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः २, यत्रापि च खलु नागकुमारावासे वा सुपर्णकुमारावासे वा वासमुपैति तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः ३, यत्रापि च खलु - यावत्कथया - तिष्ठति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः ४। एवमेव श्रमणोपासकस्य चत्वार आश्वासाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-यत्र खलु शीलव्रतगुणव्रत - विरमणप्रत्याख्यानपोषधोपवासान् प्रतिपद्यते तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः १, यत्रापि च खलु सामायिकं

" अब सूत्रकार सदृष्टान्त श्रमणोपासकको आश्वासन देते हैं—

सूत्रार्थ-"भारं णं वहमाणस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता"-इत्यादि-४ एक स्थान से दूसरे स्थान तक भार पहुंचाने वाले पुरुषो के लिये चार विश्राम कहे गये हैं जैसे-वह अपने भार को जहां पर एक कन्धे से दूसरे कन्धे पर रखता है, एक विश्राम, १ वह जहां-टट्टी, या, पेशाब की बाधा दूर करता है, दूसरा विश्राम, २ तीसरा विश्राम वहां कहा गया है, जहां कि नागकुमाराऽऽवास में, या-सुवर्णकुमारावासमें वह ठहर जाता है, ३ चौथा विश्राम वहां कहा गया है जहां उसे भार पहुंचाने के लिये कहा गया है पहूंच कर भारको उतारेगा, ४। इसी तरह से चार (आवास०) विश्राम श्रमणोपासक के भी है-एक आवास वह जबकि-शीलव्रत, गुणव्रत, विरमण, अनर्थदण्डविरमण, प्रत्याख्यान, और-पोषधोपवास को स्वीकार करना है, १ दूसरा विश्राम वह कहा

હવે સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત દ્વારા શ્રમણોપાસકને આશ્વાસન દે છે—

"भारं णं वहमाणस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-એક સ્થાનેથી બીજે સ્થાને ભાર વહન કરીને લઈ જનાર પુરુષ માટે ચાર વિશ્રામસ્થાન કહ્યા છે. પહેલો વિશ્રામ તે છે કે જ્યાં તે પોતાના ભાર (બોજા) ને એક ખભા પરથી બીજા ખભા પર મૂકે છે બીજો વિશ્રામ તે છે કે જ્યાં તે ઝાડા, પેશાબ રૂપ કુદરતી હાજત દૂર કરી શકે છે. ત્રીજો વિશ્રામ એ છે કે જ્યાં નાગકુમારાવાસ અથવા સુપર્ણકુમારાવાસ રૂપ કોઇ સ્થાનમાં તે થોડો સમય થોભી જાય છે. ચોથો વિસામો એ છે કે જ્યાં તે બોજો પહોંચાડવાનો હોય ત્યા પહોંચીને બોજાને કાયમને માટે ખભા પરથી ઉતારી નાખે છે.

એ જ પ્રમાણે શ્રમણોપાસકોને માટે પણ ચાર વિશ્રામસ્થાન (આવાસ) કહ્યાં છે—(૧) શીલવ્રત, ગુણવ્રત, અનર્થદંડ વિરમણ, પ્રત્યાખ્યાન અને પોષધોપવાસ ગ્રહણ કરવા રૂપ પહેલું વિશ્રામસ્થાન સમજવું. (૨) સામાયિક, દેશા-

देशावकाशिकं सम्यगनुपालयति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः २, यत्रापि च खलु चतुर्दश्यष्टम्युदिष्टपौर्णमासीषु प्रतिपूर्णं पोषधं सम्यगनुपालयति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः ३, यत्रापि च खलु अपश्चिममरणान्तिकसंलेखनाजोषणाजुष्टो भक्तपानप्रत्याख्यातः पादपोपगतः कालमनवकाङ्क्षन् विहरति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः । सू० ४ ।

टीका—" भारं णं " इत्यादि–भारं धान्यादीनां वहमानस्य–एकस्मात् स्थानादपरस्थानं प्रापयतः पुरुषस्य आश्वासा'–विश्रामाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तत्तथा–यत्र–यस्मिन्नवसरे, ' खलुः ' वाक्यालङ्कारे सर्वत्र अंसात्–अंसं एकस्मात् स्कन्धात् अपरंस्कन्धं संहरति–भार प्रापयति, तत्रापिच–स्कन्धात्, स्कन्धान्तरे भारस्य नयनावसरेऽपि च तस्य–भारवाहकस्य एकः–प्रथमः, आश्वासः प्रज्ञप्तः

गया है जबकि सामायिक देशावकाशिक का सम्यक् रीतिसे वह–पालन करने लगता है, २ तीसरा विश्राम उसका वह कहा गया है जब वह चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या, और–पूर्णिमा तिथियों में पौषध का पूर्ण रूप से पालन करता है, ३ तथा चौथा आवास वह कहा गया है जब वह मरणकाल सम्बन्धिनी अपश्चिम संलेखना को धारण कर लेता है भक्तपान का प्रत्याख्यान कर देता है. और–अपने काल की आकाङ्क्षा रहित हुवा पादपोपगमन " संथारा "–वाला होता है, ४

टीकार्थ–दृष्टान्तमें आये भारवाहकके विश्राम जैसा श्रमणोपासकके चार आवासका तात्पर्य है कि–जो व्यक्ति साधुजनों की सुश्रूषा करता है वह सेवक श्रमणोपासक कहलाता है, जिस प्रकार भारवाहक भारसे अक्रान्त रहता है उसी प्रकार श्रमणोपासक भी सावद्यव्यापार रूप से आक्रान्त होता है। भारवाहक भार को निश्चित स्थानपर पहुंचाने

वकाशिकનું સમ્યક્ રીતે પાલન કરવું તે બીજો વિશ્રામ છે (૩) આઠમ, ચૌદશ, પૂર્ણિમા અને અમાવાસ્યાની તિથિઓમાં પૌષધવ્રતનું સારી રીતે પાલન કરવું તે ત્રીજો વિશ્રામ છે. (૪) મરણકાળ નજીક આવતા અપશ્ચિમ સંલેખના ધારણ કરવી, આહાર પાણીના પ્રત્યાખ્યાન કરવા, અને મૃત્યુની આકાંક્ષા રાખ્યા વિના પાદપોપગમન સંથારો કરવા રૂપ ચોથો વિશ્રામ સમજવો.

ટીકાર્થ–દૃષ્ટાન્ત સૂત્રમા દર્શાવવામાં આવેલા ભારવાહકના ચાર વિસામા જેવા શ્રમણોપાસકના પણ ચાર વિસામા કહ્યાં છે. જે વ્યક્તિ શ્રમણોની સુશ્રૂષા કરે છે તેને શ્રમણોપાસક કહે છે જેમ ભારવાહક ભારથી આક્રાંત રહે છે એ જ પ્રમાણે શ્રમણોપાસક પણ સાવદ્ય વ્યાપાર રૂપ ભારથી આક્રાંત હોય છે. જેમ

।१। यत्रापि च उच्चारं वा प्रस्रवणं वा परिष्ठापयति-निवारयति, तत्रापि च तस्य एकः-अपरो द्वितीय इत्यर्थः, आश्वासः प्रज्ञप्तः २। यत्रापि य 'नागकुमारावासे वा सुवर्णकुमाराऽऽवासे वा' अत्र नागकुमाराऽऽवास-सुवर्णकुमाराऽऽवासयोरुपलक्षणतयाऽन्येऽपि देवावासा गृह्यन्ते, तेन - नागसुवर्णकुमारादिदेवविशेषस्य आवास-स्थाने इत्यर्थः, वासम् उपैति=प्राप्नोति, तत्रापि च तस्यैकः-अन्यस्तृतीय इत्यर्थः, आश्वासः प्रज्ञप्तः ३, यत्रापि च स्थाने खलु आपकथया-आपनम् आपः-प्रापणं तस्य कथा, तया भारस्वामिना भारप्रापणविषये यस्य स्थानस्य निर्देशः कृतस्तदनुसारेण भारवाहको भारमवतार्य तिष्ठति-स्थितोभवति तत्रापि च तस्य एकः-अपरश्चतुर्थ इत्यर्थः आश्वासः प्रज्ञप्तः। यद्वा-'यावत्कथया' इतिच्छाया, यावतः-यत्परिमाणस्य स्थानस्य कथा कृता-कथनं कृतं भारस्वामिना, तदनुसारेण च यत्र भारं स्थापयतीत्यादि पूर्ववद्बोध्यम् ४। इति।

इति दृष्टान्तसूत्रम्।

अथ दार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

"एवामेवे"—त्यादि - एवमेव=भारवाहकस्याऽऽश्वासवदेव, श्रमणोपासकस्य-श्रमणानां-साधूनाम् उपासकः-सेवकः श्रमणोपासकः=श्रावकः, तस्य सावद्यव्यापारभाराऽऽक्रान्तस्य आश्वासाः-तद्विमोचनेन विश्रामाः-चित्तसमाधिरूपाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः। अयं भावः-श्रमणोपासको जिनाऽऽगमसम्बन्धविमलीकृतबुद्धितया 'नरकनिगोदादि विविधदुःखपरम्पराजनकावारम्भपरिग्रहौ हेयाविति

तक के सिलसिले में बीच बीचमें विश्रान्ति लेना चलता है, उसी प्रकार श्रमणोपासक भी सावद्य व्यापार को छोडने के लिये उसका परित्याग करने के लिये अपने त्याग को उत्तरोत्तर बढाता है बस यही इसका विश्राम है। विश्राम चित्त समाधि रूप होता है, यद्यपि-श्रमणोपासक जिनागम के सम्बन्ध से, गुर्वादिकों के सदुपदेशोंसे निर्मल बुद्धि होकर 'आरम्भ'-और परिग्रह नरक निगोद आदि विविध दुःख परम्परा का जनक है, देख भी रहा हूं-आरम्भ, परिग्रहों से अभी तक अकल्याण

ભારવાહક ભારને નિશ્ચિત સ્થાને પહોંચાડતા સુધીમાં વચ્ચે વચ્ચે વિસામા લેતો રહે છે, એ જ પ્રમાણે શ્રમણોપાસક પણ સાવદ્યવ્યાપારોને છોડવાને માટે-તેમનો પરિત્યાગ કરવાને માટે ધીરે ધીરે ત્યાગની માત્રા વધારતો જાય છે બસ, એજ તેનો વિશ્રામ છે. વિશ્રામ ચિત્તસમાધિ રૂપ હોય છે. જો કે શ્રમણોપાસક જિનાગમના સંબંધથી, ગુરૂ આદિના સદુપદેશોથી એટલું તો સમજી શકે છે કે "આરંભ અને પરિગ્રહ નરક નિગોદ આદિ વિવિધ દુઃખ પરંપરાના જનક છે. આરંભ પરિગ્રહ આદિને કારણે હજી સુધી મારૂં અક-

जानन्नपि दुर्दमेन्द्रियभटपटलवशीभूतस्तत्र प्रवर्तमानः सभय सन्तापकलापमुपैति, भावयति चैवम्—

" हियए जिणाणं आणा, चरियं मह एरिसं अपुन्नस्स ।
एयं आलप्पाल, अव्वो ? दूरं विसंवयइ । १ ।
इयमम्हाणं नाणं, इयमम्हाणं मणुस्समाहप्पं ।
जे किल लद्धविवेया, विचेट्ठिमो बालबालव्व । २ ।

ही होता चला आ रहाहै, कल्याणाभिलाषो मेरे लिये अवश्य हेय त्याज्य है, ऐसा जान लेना है । तथापि-दुर्दम इन्द्रिय समूह रूप नटो से वशीभूत होकर प्रवृत्त तो होना है फिर भी आसक्ति से नहीं, किन्तु-गरम लोहेका तवाको पकडनेके लिये जैसे डरता डरता अपनी प्रवृत्ति करताहै। उस प्रवृत्ति में मोद युक्त नहीं होता है । किन्तु-पश्चात्ताप ही करता है क्योंकि-उसकी विचारधारा उस समय ऐसी हो जाती है—

" हियए जिणाणं आणा "—इत्यादि.

अरे ? मैं कितना नासमझ हूं जो मेरे हृदय में जिनेन्द्रदेव की आज्ञा विराजित होने पर भी मेरा चरित्र-रहन सहन ऐसा बन रहा है. मेरा यह ज्ञान किस कामका जब कि ज्ञानके रहने पर भी मेरा मनुष्यभव मेरे हाथों नष्ट किया जा रहा है, मैं तो-सर्वथा अज्ञानी जैसा ही अपनी प्रवृत्ति करने में अभी तक लगा हुवा हूं, इस प्रकार

લ્યાણુ જ થતું રહ્યુ છે કલ્યાણુની અભિલાષા રાખનારા એવા મારે માટે તે તે અવશ્ય હેય (ત્યાજ્ય) છે" છતાં પણુ દુર્દમ ઇન્દ્રિય સમૂહ રૂપ ભટોથી પરાસ્ત થઈને તેમાં પ્રવૃત્ત તો થાય છે. પરન્તુ તેમાં આસક્ત થઈને પ્રવૃત્તિ કરતો નથી પણુ ગરમ લોઢાના તવાને પકડવાની જેમ ડરતા ડરતા પોતાની પ્રવૃત્તિ કરે છે. તે પ્રવૃત્તિથી આનંદ પામતો નથી, પણુ તેના હૃદયમાં પશ્ચાત્તાપ જ કર્યા કરે છે, કારણુ કે તે સમયે તેની વિચારધારા આ પ્રકારની હોય છે-

" हियए जिणाणं आणा " ઇત્યાદિ—

" અરે ! હું કેવો અણુસમજુ છું કે મારા હૃદયમાં જિનેન્દ્ર દેવની આજ્ઞા વિરાજિત હોવા છતાં પણુ મારું ચારિત્ર અને રહેણીકરણી આ પ્રકારના બની ગયાં છે. મારું આ જ્ઞાન શા કામનું છે ? કારણુ કે આ જ્ઞાન હોવા છતાં પણુ હું મારો મનુષ્ય ભવ મારે હાથે જ ફોગટ ગુમાવી રહ્યો છું ? હું તો બિલકુલ અજ્ઞાની હોઉં એવી રીતે મારી પ્રવૃત્તિમાં હજી સુધી લીન રહ્યા જ કરું છું." આ પ્રકારની ભાવનાથી ઓતપ્રોત થયેલા તે શ્રમ-

छाया—" हृदये जिनानामाज्ञा चरित्रं ममेदशमपुण्यस्य ।
एतदालप्यालम् अव्वो (अहो–आश्चर्य) दूरं विसंवदति । १ ।
हतमस्माकं ज्ञानं हतमस्माकं मनुष्यमाहात्म्यम् ।
यत् किल लब्धविवेका विचेष्टामहे बालबाला इव ।२। " इति,

इत्थं भावयतस्तस्य चत्वार आश्वासा भवन्तीति । तद्यथा -यत्रापि खलु-यस्मिन्नवसरे शीलव्रत-गुणव्रत-विरमण-प्रत्याख्यान-पोषधोपवासान्--तत्र शीलं-चित्तसमाधिरूपं, व्रतानि-स्थूलप्राणातिपात-विरमणादीनि पञ्च गुणव्रते-दिग्व्रतो-पभोगपरिभोगव्रतरूपे, विरमणम्-अनर्थदण्डविरमण रागादिविरमणं वा, प्रत्या-ख्यानानि-नमस्कारसहितादीनि, पोषधोपवासः-अष्टम्यादिपर्वदिवसेष्वाहारादि-त्यागः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तान् प्रतिपद्यते-स्वीकरोति, तत्रापिच-शील-व्रतादि स्वीकारेऽपि । तस्य-श्रावकस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः ।

यत्रापि च खलु सामायिकं-समः-समत्वं रागद्वेषरहितत्वेन सर्वेषु जीवेषु स्वसमानत्वं, समशब्दस्यात्र भावप्रधाननिर्दिष्टत्वात्, तस्याऽऽयः-प्राप्तिः समायः-

की भावना से ओतप्रोत बने हुवे इस श्रमणोपासक के चार आवास होते हैं । इनमें इसका सर्व प्रथम आवास उस समय होता है, जब यह चित्त समाधि रूप शीलको, स्थूल प्राणातिपात विरमण आदि पांच व्रतों को, दिग्व्रत उपभोग परिभोग रूप गुणव्रतों को, और–अनर्थदण्ड विर-मण रूप विरमण को, अथवा—रागादि विरमण को तथा–नमस्कार सहित पोषधोपवास को–अष्टमी आदि पर्व दिनों में आहारादि त्याग को स्वीकार करता है—१

द्वितीय विश्राम तब होता है, जब–यह सामायिक को, तथा–देशा-वकाशिक को धारण कर लेता है, रागद्वेष रहित होकर सब जीवों में

ણોપાસકના નીચે પ્રમાણે ચાર આવાસ (વિશ્રામ) હોય છે-શ્રમણોપાસકનો સાવદ્ય વ્યાપારના ત્યાગ રૂપ પહેલો વિશ્રામ આ પ્રકારનો હોય છે-ત્યારે તે ચિત્તસમાધિ રૂપ શીલને, સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ પાંચ વ્રતોને, દિગ્-વ્રત ઉપભોગ પરિભોગ રૂપ ગુણવ્રતોને, અને અનર્થદંડ વિરમણરૂપ વિરમણને, અથવા રાગાદિ વિરમણને તથા નમસ્કાર સહિત પોષધોપવાસને-આઠમ આદિ પર્વ દિનોમાં આહારાદિ ત્યાગનો સ્વીકાર કરે છે.

બીજો વિશ્રામ આ પ્રકારનો હોય છે-જ્યારે તે સામાયિક તથા દેશા-વકાશિકને ધારણ કરે છે, ત્યારે સાવદ્ય વ્યાપારના ત્યાગ રૂપ બીજો વિશ્રામ

प्रवर्धमानशारदचन्द्रकलावत् प्रतिक्षणविलक्षणज्ञानादिलाभः, यद्वा – सम –साम्यं समभावजनितः प्रतिक्षणमपूर्वापूर्वकर्मनिर्जराहेतुभूत आत्मपरिणामः, तस्य आयो–लाभः समाऽऽयः, स प्रयोजनमस्येति सामायिक व्रतम्, यद्वा–समस्याऽऽयो यस्मात् तत् समाय तदेव सामायिकम्, तत् यत्र स्थितः श्रावकः श्रमणभूतो भवति, तत् सावद्ययोगपरिवर्जननिरवद्ययोगप्रतिसेवनलक्षणं सामायिकमुच्यते । उक्तंच–

" सामायिकं गुणानामाधारः खमिव सर्वभावानाम् ।
न हि सामायिकहीनाश्चरणादिगुणान्विता येन । १ ।
तस्माज्जगाद भगवान् सामायिकमेव निरुपमोपायम् ।
शरीरमानसानेकदुःखनाशस्य मोक्षस्य । २ । " इति,

सामायिकविवरणं विस्तरत उपासकदशाङ्गसूत्रस्यास्मत्कृतागार–धर्मसंजीवनी टीकातोऽवसेयम् ।

अपनी समानता की भावना का नाम सम है, सम शब्द भावप्रधान है, सम प्राप्ति समाय है। यह–समाय प्रवर्धमान शरच्चन्द्र चान्दनी जैसा प्रतिक्षण बिलक्षण ज्ञानादि का लाभ रूप होता है।

अथवा—समनाम, साम्य का है, यह–साम्य समभाव जनित–आत्मपरिणाम है, और–यह प्रतिपल अनिर्वचनीय कर्मनिर्जराका हेतु होता है, इस समका जो आय–लाभ है वह समाय है यह समाय जिसका प्रयोजन है वह सामायिक है। अथवा–समका लाभ जिससे होता है वह–समाय है, यह–समाय ही सामायिक है। इस सामायिक में स्थित श्रावक श्रमण समान होता है, क्योंकि- सामायिक व्रत सावद्य योगका परिवर्जन–और निरवद्य योगका प्रति सेवन रूप होता है। कहा भी है—' सामायिकं गुणानामाधार "–इत्यादि, इस सामायिक का

પ્રાપ્ત થાય છે. રાગદ્વેષથી રહિત થઈને સમસ્ત જીવો પ્રત્યે સમાનતાની ભાવના રાખવી તેનું નામ ' સમ ' છે ' સમ ' શબ્દ ભાવપ્રધાન છે સમ પ્રાપ્તિનુ નામ ' સમાય ' છે તે સમાય પ્રવર્ધમાન શરદ્ ચન્દ્રની ચાન્દની સમાન પ્રતિક્ષણ વિલક્ષણ જ્ઞાનાદિના લાભરૂપ હોય છે અથવા ' સમ ' એટલે ' સામ્ય ' તે સામ્ય સમભાવ જનિત આત્મપરિણામ છે, અને તે પ્રતિપળ અનિર્વચનીય કર્મનિર્જરાના કારણ રૂપ બને છે. આ સમનો જે આય (લાભ) છે તેનું નામ સમ ય છે આ સમાય જેનું પ્રયોજન છે, તે સામાયિક છે અથવા સમનો લાભ જેનાથી થાય છે તે સમાય છે, અને તે સમાય જ સામાયિક છે આ સામાયિકની આરાધના કરનો શ્રાવક શ્રમણ સમાન હોય છે, કારણ કે સામાયિક વ્રત સાવદ્યયોગના પરિવર્જન રૂપ અને નિરવ [illegible] તિસેવન રૂપ હોય છે. કહ્યુ પણ છે કે–" સામાયિક [illegible] આ સામાયિકનું વિશેષ વિવરણ

तथा-देशावकाशिकं-देशे दिग्व्रतगृहीतस्य दिक्परिमाणस्य विभागे अवकाशो-ऽवस्थानं विषयो यस्य तद्देशावकाशं, तदेव देशावकाशिकं, तत् दिग्व्रतगृहीतस्य दिक्परिमाणस्य प्रतिदिनं संक्षेपकरणलक्षणं सर्वव्रत-संक्षेपकरणलक्षणं वा सम्यक्= सावधानतया अनुपालयति, तत्रापि च=सामायिकदेशावकाशिकानुपालनेऽपि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः २।

यत्रापि च चतुर्दश्यष्टम्युद्दिष्टपौर्णमासीषु-चतुर्दशी, अष्टमी, उद्दिष्टा=अमावास्या, पौर्णमासी-पूर्णिमा, एतासु तिथिषु प्रतिपूर्ण-सम्पूर्णमहोरात्रं पोषधं सम्यगनुपालयति, तत्रापि-चतुर्दश्यादितिथिषु प्रतिपूर्णपोषधानुपालनेऽपि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः ३।

यत्रापि च खलु श्रमणोपासकः अपश्चिममरणान्तिकसंलेखना-जोषणाजुष्टः-पश्चाद्-अन्ते भवा पश्चिमा, न विद्यते पश्चिमा-अन्तिमा यस्या सा अपश्चिमा= सा चासौ मरणान्तिकसंलेखना-मरणसमीपवर्तितपोविशेषः, तस्या जोषणा-सेवनं तया जुष्ट-सेवितः-युक्तो वा, जुष्टा अपश्चिममरणान्तिकसंलेखनाजोषणा येन स तथा, क्तान्तस्यात्र परनिपातः। तथा-भक्तपानप्रत्याख्यातः-प्रत्याख्याते-

विशेष विवरण मैंने उपासक दशाङ्ग सूत्रकी अगार संजीवनी टीका में लिखा है वहां देखें। दिग्व्रत में की गई दिशाओं में आने जाने की मर्यादा को प्रतिदिन संक्षिप्त करना, अथवा-सर्व व्रतोंको संक्षिप्त करना इसका नाम-देशावकाशिक व्रत है, इस सामायिक एवं-देशावकाशिक व्रत को सम्यक् रूप से पालना द्वितीय आवास विश्राम स्थान कहा गया है, २। जहां-चतुर्दशी, अष्टमी, आदि पर्वतिथियों में सम्पूर्ण अहोरात्र का जो पोषध व्रत पालन किया जाता है वह-उपासक का तीसरा आवास-विश्रामस्थान है, ३ जहां श्रमणोपासक अपश्चिम-सर्वान्तिम-मारणान्तिक संलेखना रूप तप विशेष का प्रीतिपूर्वक सेवन करता है,

ઉપાસકદશાંગ સૂત્રની અગારસંજીવની ટીકામાં મેં લખેલું છે, તો ત્યાંથી વાંચી લેવું. અમુક નિયત દિશામાં અવર જવરની મર્યાદાને પ્રતિદિન સંક્ષિપ્ત કરવી અથવા સર્વ વ્રતોને સંક્ષિપ્ત કરવા તેનું નામ દેશાવકાશિક વ્રત છે આ સામાયિક અને દેશાવકાશિક વ્રતનું સમ્યક્ રીતે પાલન કરવું, એને જ બીજું વિશ્રામસ્થાન કહ્યુ છે. શ્રમણોપાસકનું વિશ્રામસ્થાન-આઠમ, ચૌદશ આદિ પર્વ તિથિઓમાં સંપૂર્ણ અહોરાત્ર (દિનરાત) નું જે પોષધવ્રત કરવામાં આવે છે, તે તેનું ત્રીજું વિશ્રામસ્થાન છે (૪) અપશ્ચિમ (અન્તિમ)-મારણાન્તિક સંલે-ખના રૂપ તપવિશેષનું પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરવુ, ચારે પ્રકારના આહારના પરિ-

त्यक्ते भक्तपाने येन स तथा=त्यक्तभक्तपान इत्यर्थः, अत्रापि क्तान्तस्य परप्रयोगः। तथा-पादपोपगतः-पादपो-वृक्षः स इव निर्व्यापारतया उपगतः-पादपोपगमन-नामकानशनविशेषं प्रतिपन्नः, तथा कालं-मरणकालम्-अनवकाङ्क्षन्-अनभिलषन्, विहरति-सर्वतो निवृत्तस्तिष्ठतीति भावः, तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः ४। (सू० ४)।

पुनः पुरुषविशेषं निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—उदिओदिए णाममेगे १, उदियत्थमिए णाममेगे २, अत्थमिओदिए णाममेगे ३, अत्थमियत्थमिए णाममेगे ४। भरहे राया चाउरंतचक्कवट्टी णं उदिओदिए १, बंभदत्ते णं राया चाउरंतचक्कवट्टी उदिअत्थमिए २, हरिएसबले णाममणगारेणं अत्थमिओदिए ३, काले णं सोयरिये अत्थमिअत्थमिए ४। । सू० ५ ।

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-उदितोदितो नामैकः १, उदितास्तमितो नामैकः २, अस्तमितोदितो नामैकः ३, अस्तमितास्तमितो नामैकः ४; भरतो राजा चातुरन्तचक्रवर्ती खलु उदितोदितः १, ब्रह्मदत्तः खलु

तथा-भक्त पानका प्रत्याख्यान करता है, एवं-मरणाशंसा रहित होकर पादपोपगमन नामक अनशन विशेष को सर्वतोभाव से धारता है वह--श्रमणोपासकका चौथा आवास -विश्राम स्थान है ॥ सू०४॥

"पुनः पुरुष विशेषका निरूपण—

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—५

सूत्रार्थ—चार पुरुषजात कहे गयेहैं, जैसे-प्रथम उदितोदित १ उदितास्तमित--२ अस्तमितोदित--३ और--अस्तमितास्तमित-४।

ત્યાગ પૂર્વક મરણની આકાંક્ષાથી રહિત બનીને પાદપોપગમન નામના સંથારાનું સર્વતો ભાવ પૂર્વક આરાધન કરવું, તે શ્રમણોપાસકનું ચોથું વિશ્રામસ્થાન છે ।।સૂ ૪।।

પુરુષ વિશેષનું સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—

'ચત્તારિ પુરિસજાયા" ઇત્યાદિ—(સૂ. ૫)

સૂત્રાર્થ—ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) ઉદિતોદિત, (૨) ઉદિતાસ્તમિત, (૩) અસ્તમિતોદિત અને (૪) અસ્તમિતાસ્તમિત

राजा चातुरन्तचक्रवत उदितास्तमितः २, हरिकेशबलो नामानगारः खलु अस्तमितोदितः ३, कालः ख सौकरिकः अस्तमितास्तमितः। (सू० ५)।

टीका—"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–स्पष्टम्–नवरम्–एकः पुरुषः उदितोदितः–पूर्वमुदितः – उत्तमकुलबलसमृद्धिपुण्यकर्मादिभिरभ्युदयं प्राप्तः पश्चादपि उदितः–अमन्दानन्द सन्दोहरूपमोक्षोदयं प्राप्त उदितोदितः, एतादृशं पुरुषमुदाहरति–' भरहे राये "–त्यादि–यथा–चातुरन्त–चक्रवर्ती–चत्वारः–दिक्त्रये समुद्राः एकस्यां हिमवांश्च अन्ताः–अवधयो यस्याः सा चातुरन्ता पृथिवी,

---

चातुरन्त चक्रवर्त्ती भरत नरेश उदितोदित थे, १ चातुरन्त चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त उदितास्तमित थे, २ हरिकेश नामके अनगार अस्तमितोदित थे, ३ एवं -सूकरका शिकार करनेवाला कालसौकरिक अस्तमितास्तमित था, ४।

टीकार्थ–इस सूत्रद्वारा जो चार प्रकारके पुरुष कहे गये हैं, उनके सम्बन्ध में स्पष्टीकरणयों है- कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो–उत्तम कुल में जन्म लेना, बल समृद्धि से सम्पन्न होना, तथा -पुण्यकर्मादिका अनुभव करना आदि अभ्युदय को पहले से जन्म से ही प्राप्त करता है, और बाद में भी वह अत्यन्त आनन्द समूह -अव्याबाध -मोक्षोदय को प्राप्त कर लेताहै, इस प्रथम भङ्गमें चातुरन्त चक्रवर्ती ऋषभनन्दन भरतराजा हुवेहैं। तीन दिशाओंमें समुद्र और एक दिशामें हिमवान् ये चार जिसके अन्त हैं अवधियां हैं, ऐसी चतुरन्ता पृथिवी का जो स्वामी हो वे चातुरन्त हैं, तथा-चक्रसे छ्खंडमें वर्तन करना (राजकरना)

ચાતુરન્ત ચક્રવતી ભરતરાજા ઉદિતોદિત હતા ચાતુરન્ત ચક્રવતી બ્રહ્મદત્ત ઉદિતાસ્તમિત હતા હરિકેશ નામના અણુગાર અસ્તમિતોદિત હતા, અને સૂવરનો શિકાર કરનાર કાલસૌકરિક અસ્તમિતાસ્તમિત હતો,

આ ચાર પ્રકારના પુરુષોનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે સમજવું—

(૧) ઉદિતોદિત—કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ઉત્તમ કુળમાં જન્મ લે છે, બળ સમૃદ્ધિ આદિથી સંપન્નતા, પુણ્યકર્મનો અનુભવ આદિ અભ્યુદય જન્મથી જ પ્રાપ્ત કરે છે, અને આ મનુષ્યભવનું આયુષ્ય પૂરૂં કરીને અત્યન્ત આનંદદાયક, અવ્યાબાધ મોક્ષોદયને પણ પ્રાપ્ત કરે છે. ચાતુરન્ત ચક્રવર્તી ઋષભનન્દન ભરત રાજાને આ પ્રકારના પુરુષ કહી શકાય ત્રણ દિશાઓમાં સમુદ્ર અને એક દિશામાં હિમવાન્ પર્વત, આ ચાર જેનાં અન્ત (અવધિ–હદ) હોય છે એવી ચાતુરન્તા પૃથ્વીનો જે સ્વામી હોય તેને

अयं (स्वामी) चातुरन्तः, स चासौ चक्रवर्ती—चक्रेण सह वर्तत इत्येवंशिलश्चक्रवर्ती च चातुरन्तचक्रवर्तीभरतः—ऋषभनन्दनःप्रसिद्धो राजा खलु उदितोदितोबोध्यः१।

तथा—एकः पुरुषः उदितास्तमितः—उदितश्चासावस्तमितश्च तथा=पूर्वं सूर्य इवोदितः पश्चात् सकलसमृद्धिभ्रष्टत्वाद् दुर्गतिप्राप्तत्वाच्च अस्तमितो भवति। यथा-ब्रह्मदत्तश्चातुरन्त द्वादश चक्रवर्ती राजा, स हि पूर्वं सुकुलोत्पन्नत्वादिना निज-बाहुबलोपार्जितमहासाम्राज्यत्वेन चाभ्युदितः पश्चाच्चानुचितकारणज्जातकोप ब्राह्मणप्रयुक्तपशुपाल प्रक्षिप्तधनुर्गोलिकाघातभग्ननेत्रगोरुकत्वेन कालधर्मप्राप्त्य-नन्तरं सप्तमनरके प्रतिष्ठानाख्यनरकावासस्य महातीव्रवेदनानुभवेन चास्त-मित इति २।

जिसका स्वभाव हो वे चक्रवर्ती हैं, ऐसे चातुरन्त चक्रवर्ती ऋषभदेव तीर्थं करके पुत्र राजा भरत उदितोदित कहे गये हैं। तथा—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो उदितास्तमित होता है पहले वह सूर्य जैसा उदित होता है—पश्चात्—सकल समृद्धि से भ्रष्ट होजाने से और दुर्गतिमें पतित होने से अस्तमित हो जाता है—२ ऐसा चातुरन्त चक्रवर्ती ब्रह्म-दत्त हुवा है, यह पहले अच्छे कुलमें उत्पन्न हुवा, वहांपर उसने अपने बाहुबल प्रतापसे षट् खण्डका महान् साम्राज्य स्थापित कर लिया, चक्रवर्ती बन गया, पश्चात् किसी अनुचित निमित्तवश उत्पन्न कोपसे युक्त हो गया, इत्यादि और सब कथन इसकी कथामें निबद्ध हैं। बादमें यह मर कर सप्तम नरकमें अप्रतिष्ठान नामक नरकावासकी महा तीव्र वेदनाको अनुभव करता करता अस्तमित हो गया। इस

ચાતુરન્ત કહે છે ચક્રથી વર્તન કરવાનો જેનો સ્વભાવ હોય તેને ચક્રવતી કહે છે. એવા ચાતુરન્ત ચક્રવતી ઋષભદેવ તીર્થંકરના પુત્ર રાજા ભરતને ઉદિ-તોદિત કહેવામાં આવેલ છે

(૨) ઉદિતાસ્તમિત પુરુષ—કોઈ પુરુષ પહેલાં સૂર્ય જેવો ઉદિત અથવા અભ્યુદય સંપન્ન હોય છે, પણ પાછળથી સકળ સમૃદ્ધિ ગુમાવી બેસવાથી અને દુર્ગતિમાં જવાથી અસ્તમિત (અભ્યુદયવિહીન) થઇ જાય છે. ચાતુરન્ત ચક્રવતી બ્રહ્મદત્ત રાજાને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય. પહેલાં તો તે સારા કુળમાં ઉત્પન્ન થયો હતો. તેણે પોતાના બાહુબળના પ્રતાપથી છ ખંડનુ મહાન સામ્રાજ્ય સ્થાપ્યું—ચક્રવતી થઈ ગયો. ત્યાર બાદ કોઇ અનુચિત્ત નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થયેલા ક્રોધને અધીન થયો, ઇત્યાદિ કથન તેની કથામાંથી જાણી લેવું. ત્યાર બાદ તે મરીને સાતમી નરકના અપ્રતિષ્ઠાન નામના નરકાવાસમાં ઉત્પન્ન થઇને મહા તીવ્ર વેદનાનો અનુભવ કરવા લાગ્યો આ રીતે તે અસ્તમિત થઇ

तथा-एकः पुरुषः अस्तमितोदितः-अस्तमितश्चासावुदितश्च तथा=पूर्वं हीन-कुलोत्पन्नत्व - दुर्भगत्वादिनाऽस्तमितः-अवनतः, पश्चात् समृद्धिसुकीर्तिसुगति-लाभादिनोदितो भवति, यथा-हरिकेशवलः-तदाख्यः अनगारः-साधुरभूत्, स हि जन्मान्तरोपार्जितनीचगोत्रकर्मप्राप्तचाण्डालकुलत्वेन दौर्भाग्यदारिद्र्या-कुलत्वेन चास्तमितोऽपि पश्चात् प्रव्रजितो निश्चलचरणगुणवशीकृतदेवत्वेन प्रसिद्धि सुगतिलाभेन नोदितोऽभूत् ।३।

तरह उदित होकर अस्तमित होनेवाला प्राणी इस द्वितीय भङ्गमें परि-गणित होता है। इस कथाको विस्तृत रूपमें मैंने उत्तराध्ययनकी प्रिय-दर्शिनी टीकाके १३वें अध्यन ७२५ पृष्ठमें लिखाहै वहां देखलें। कोईएक पुरुष ऐसा होता है जो पहले हीन कुलमें उत्पन्न हुवा दुर्भगत्व-दुर्ग-त्यादिमें अस्तमित रहा बाद में समृद्धि-सुगति-सुकीर्ति लाभसे उदित हो जाता है, जैसे-हरिकेशवल अनगार। इसने जन्मान्तरमें उपा-र्जित कर्मोदयसे चाण्डाल कुलमें जन्म लिया और दौर्भाग्य दारिद्र्यादिसे आकुल रहा बादमें प्रव्रजित होकर चारित्र आराधनाकी जिससे मरणका-लमें कालकर देवपर्याय से उत्पन्न हुवा। यह चारित्र उ. के बारहवे अध्ययन में कथित हैं ऐसा व्यक्ति अस्तमितोदित कहा गया है ३।

ગયો. આ રીતે ઉદિત થઈને અસ્તમિત થતા જીવનું આ બીજા ભાગમાં પ્રતિ-પાદન કરવામાં આવ્યુ છે પહેલાં અભ્યુદય અને પછી પતન પામતાં પુરુષના આ ભાંગામાં સમાવેશ થાય છે. બ્રહ્મદત્તની કથા ઉત્તરાધ્યયનની પ્રિયદર્શિની ટીકાના ૧૩ માં અધ્યયનના ૭૨૫ માં પાના પર આપી છે, તો ત્યાંથી તે વાંચી લેવી.

(૩) અસ્તમિતોદિત પુરુષ—કોઈ એક પુરુષ પહેલાં દુર્ગતિમાં હોય અને ત્યાંથી હીનકુલમાં ઉત્પન્ન થાય, અને ત્યારબાદ સમૃદ્ધિ, સુકીર્તિ, અને સુગતિ પામે તો એવા પુરુષને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે એવો પુરુષ પતનના પંથ તરફથી ઉત્થાનને પથે વળે છે હરિકેશબલ અણગાર આ પ્રકા-રના પુરુષ થઈ ગયા. તેમણે જન્માન્તરમાં ઉપાર્જિત પાપકર્મોના ઉદયથી ચાંડાલ કુળમાં જન્મ લીધો હતો, તેઓ અતિશય દારિદ્ર્યથી પીડાતા હતા, પણ ત્યારબાદ પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરીને ચારિત્રારાધના કરીને મનુષ્યભવનું આયુ પૂરૂ કરીને દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઇ ગયા તેમની કથા પણ અન્ય ગ્રન્થોમાંથી વાંચી લેવી એવા પુરુષને ‘અસ્તમિતોદિત’ કહે છે.

तथा—एकः पुरुषः अस्तमितास्तमितः—अस्तमितश्चासावस्तमितस्तथा= पूर्वमधार्मिकाधर्मानुरागाधर्मसेव्यधर्मिष्ठाधर्माख्याय्यधर्मराग्यधर्मप्रलोक्यधर्मजीवि दुष्कुलोत्पन्नत्व सावद्य व्यापारत्वादिना कीर्तिसमृद्धिरूपतेजोरहितत्वात् सायंकालसूर्यइवास्तमितः पश्चादपि दुर्गतिगमनादस्तमितो भवति, यथा— निश्शीलो निर्मर्यादो निष्ठुरो निष्करुण कालः—तदाख्या सौकरिकोऽस्तमिता-स्तमितोऽभूत्, स हि सूकरैश्चरतीति सौकरिकः—सूकरमृगयाकारीति यथार्थो प्रति दिने पञ्चशतमहिषघातको दुष्कुलोत्पन्नत्वात् सकललोकनिन्दितत्वात् अकृत्य-कारित्वाच्च पूर्वमस्तमितः पश्चादपि मृत्वा सप्तमपृथिवी गत इति अस्तमित इति । ४ । (सू० ५) ।

तथा कोई एक पुरुष अस्तमित होकर अस्तमितही बना रहता है, ऐसा पुरुष अधार्मिक अधर्मरागी—अधर्माख्यायी—अधर्माऽनुष्ठाता—अधर्म जीवी होता है और सर्वदा सावद्यव्यापारसे कीर्ति—समृद्धि-रुप—तेजोरहित बनकर सायं सूर्य के समान अस्तमित बन जाता है। और फिर बादमेंभी दुर्गति गमनसे अस्तमित बन जाताहै। इसमें दृष्टा-न्तभूत कालसौकरिकहै, यह निश्शील—मर्यादारहीत था दयाहीन था सूकरकी शिकारका प्रेमी था, जोकि—प्रतिदिन पांचसौ भैसा का घात करता था, दुष्कुलोत्पन्न होनेके नति सकलजनों द्वारा निन्दित था, और अकृत्यकारी था इस कारण यह पहलेही से अस्तमित हुवा और बादमें भी मरकर सप्तम पृथिवीमें गया-अस्तमित बना रहा ॥सू.५

(૪) અસ્તમિતાસ્તમિત પુરુષ—કોઈ એક પુરુષ પહેલાં પણ અસ્તમિત (અભ્યુદયવિહીન) હોય છે અને પછી પણ અસ્તમિત જ રહે છે. એવો પુરુષ અધાર્મિક, અધર્મરાગી, અધર્માખ્યાયી, અધર્માનુષ્ઠાતા અને અધર્મજીવી હોય છે; અને સર્વદા સાવદ્ય વ્યાપારમાં પ્રવૃત્ત રહેવાને કારણે કીર્તિ, સમૃદ્ધિ, રૂપ અને તેજ રહિત જ રહેવાને કારણે સાયંકાલિન સૂર્યસમાન અસ્તમિત જ બની જાય છે. વળી મરીને દુર્ગતિમાં જવાને લીધે અસ્તમિત જ ચાલુ રહે છે. કાલસૌકરિકને આ પ્રકારમા ગણાવી શકાય. તે નિ.શીલ—મર્યાદાવિહીન હતો. દયાહીન હતો, સૂવરના શિકારનો શોખીન હતો, તે દરરોજ ૫૦૦ પાડાનો ઘાત કરતો હતો, હીન કુળમાં જન્મેલો હોવાથી સકળ જનો તેની નિંદા કરતા હતા અને અકૃત્યકારી હતો. આ રીતે પહેલાં પણ તે અસ્તમિત હતો અને આખી જિંદગી પણ એવો જ રહ્યો. તે મરીને સાતમી નરકમાં ઉત્પન્ન થયો, આ રીતે તેણે દુર્ગતિ રૂપ અસ્તમિતા પ્રાપ્ત કરી. । સૂ. ૫ ।

ये एवं विचित्रभावैश्चिन्त्यन्ते ते सर्व एव जीवाश्चतुर्षु राशिष्ववतरन्तीति प्रदर्शयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता तं जहा-कडजुम्मे १ तेओए २, दावरजुम्मे ३, कलिओए ४। सू० ६।

छाया—चत्वारो युग्माः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कृतयुग्मः १, त्र्योजः २, द्वापर युग्मः ३, काल्योजः ४। (सू० ६)।

टीका—"चत्तारि जुम्मा" इत्यादि=युग्माः-राशिविशेषाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-कृतयुग्मः-चतुष्कापहारेण अपह्रियमाणश्चतुःपर्यवसितो राशिः १। तथा-त्र्योजः-त्रिपर्यवसितो राशिः २, द्वापरयुग्मः-द्विपर्यवसितो राशिः ३, कल्योजः-

---

इस प्रकारके विचित्र भावोंसे जीव विचारे जाते हैं, वे ही सब जीव चार राशियोंमें अवतरित होतेहैं, यही बात अब सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—"चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता—" इत्यादि—

सूत्रार्थ-युग्म चार कहे गये हैं, एक-कृत युग्म १ दूसरा-ओज-२ तीसरा द्वापर युग्म-३ और चौथा-कल्यौज-४

टीकार्थ-युग्म शब्दसे यहां राशि विशेष गृहीतहैं, ये युग्म चार प्रकारके जो कहे गये हैं उसका तात्पर्य ऐसा है—जिस राशिमें चारको घटाने पर अन्तमें चार ही बचते हों वह कृतयुग्म रूप राशि है, जिस राशिमें तीनको घटाने पर तीनही बचते हों वह राशि त्र्योज है, जिस राशिमें से दो को घटाने पर दोही बचें वह राशि द्वापर युग्म है, और जिस राशिमेंसे एकको घटाने पर अन्तमें एक ही बचता है वह-राशि कल्योज है। यहां गणितकी परिभाषामें युग्म शब्द से सम राशि और-ओज

વિવિધ ભાવોની અપેક્ષાએ જીવોની પ્રરૂપણા કરીને હવે સૂત્રકાર સઘળા જીવોને ચાર રાશિઓમાં વિભક્ત કરી નાખે છે—"चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ-

સૂત્રાર્થ-યુગ્મ ચાર કહ્યા છે-(૧) કૃત યુગ્મ, (૨) ત્ર્યોજ, (૩) દ્વાપર યુગ્મ, અને (૪) કલ્યોજ

'યુગ્મ' પદ અહીં રાશિવિશેષનું વાચક છે તેના ચાર પ્રકારોનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે-જે રાશિમાં ચારને ઘટાવવાથી અન્તે ચાર જ વધે છે તેને કૃતયુગ્મ રૂપ રાશિ કહે છે. જે રાશિમાં ત્રણને ઘટાવવાથી અન્તે ત્રણ જ વધે છે તે રાશિને ત્ર્યોજ કહે છે જે રાશિમાં બેને ઘટાવવાથી બે જ વધે છે તે રાશિને દ્વાપર યુગ્મ કહે છે જે રાશિમાં એકને ઘટાવવાથી અન્તે એક જ બચે છે તે રાશિને કલ્યોજ કહે છે અહીં ગણિતની પરિભાષામાં યુગ્મ શબ્દથી સમરાશિ અને ઓજ શબ્દથી વિષમરાશિ

एकपर्यवसिती राशिः । ४ । इह गणितपरिभाषायां युग्मशब्देन समराशिरुच्यते, ओजशब्देन-तु विषमराशिः । इति सिद्धान्तः । सू० ६ ॥

उक्तराशीन् नारकादिषु निरूपयितुमाह—

मूलम्—नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता, तं जहा- कडजुम्मे १, तेओए २, दावरजुम्मे ३, कलिओए ४, एवं असुरकुमाराणं जाव थणियकुमाराणं, एवं पुढविकाइयाणं आउकाइयाणं तेउकाइयाणं वाउकाइयाणं सव्वेसिं जहा णेरइयाणं । सू० ७ ।

छाया—नैरयिकाणां चत्वारो युग्माः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—कृतयुग्मः १, त्र्योजः २, द्वापरयुग्मः ३, कल्योजः ४ । एवमसुरकुमाराणां यावत् स्तनितकुमाराणाम्, एवं पृथिवीकायिकानामप्कायिकानां तेजस्कायिकानां वायुकायिकानां सर्वेषां यथा नैरयिकाणाम् । (सू० ७)

टीका—" नेरइयाणं चत्तारि " इत्यादि—स्पष्टम् । नवरं—नैरयिकादारभ्य वैमानिक पर्यन्ताश्चतुर्विंशति दण्डकस्थाः सर्वेऽपि जीवाः कृतयुग्मादि श्चतुर्विधा एव भवन्ति जन्म-मरणाभ्यां न्यूनाधिकत्वसम्भवात् । (सू० ७)

शब्दसे विषम राशि कही जाती है, तथा—लोकमें कृतयुग्मादि शब्दसे तो सत्ययुग आदि युग चतुष्टय कहा जाता है । सू० ६ ॥—

अब सूत्रकार उक्त राशियोंका निरूपण नरकादिकोंमें करते हैं—

" नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता " इत्यादि ७ ॥

नैरयिकों के चार युग्म होते हैं, कृतयुग्म—१ त्र्योज—२ द्वापर युग्म ३ और कल्योज—४ इसी तरह—असुर कुमारोंसे लेकर यावत् स्तनितकुमार तक पृथिवीकायिक—अप्कायिक—तेजस्कायिक—वायुकायिकों में

કહેવામાં આવે છે; તથા લોકમાં કૃતયુગ્મ આદિ શબ્દ દ્વારા સત્યુગ આદિ ચાર યુગ જ ગ્રહણ થાય છે ॥ સૂ. ૬ ॥

હવે સૂત્રકાર ઉપર્યુક્ત રાશિઓનું નારકાદિકોમાં નિરૂપણ કરે છે—

" नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

નારકોના ચાર યુગ્મ હોય છે-(૧) કૃતયુગ્મ, (૨) ત્ર્યોજ, (૩) દ્વાપર યુગ્મ અને (૪) કલ્યોજ. એ જ પ્રમાણે અસુરકુમારોથી લઇને સ્તનિતકુમારો સુધીના, પૃથ્વીકાયિક, અપ્કાયિક, તૈજસ્કાયિક અને વાયુકાયિકોમાં પણ ચાર યુગ્મ કહ્યા છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે નારક આદિ ચાર પ્રકારના

पुनर्जीवानेव भावैर्निरूपयति—

मूलम्- चत्तारि सूरा पण्णत्ता, तं जहा--खंतिसूरे १, तवसूरे २, दाणसूरे ३, जुद्धसूरे ४। खंतिसूरा--अरहंता १, तवसूरा--अणगारा २, दाणसूरे--वेसमणे ३, जुद्धसूरा-वासुदेवा ४। सू० ८।

छाया—चत्वारः शूराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-क्षन्तिशूरः १, तपःशूरः २, दानशूरः ३, युद्धशूरः ४। क्षन्तिशूराः-अर्हन्तः १, तपःशूराः-अनगाराः २, दान शूरः-वैश्रवणः ३। युद्धशूराः-वासुदेवाः ४। (सू० ८)।

टीका—" चत्तारि सूरा " इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-शूराः-वीराः, क्षान्तिः-क्षमा-तत्र शूरः, एवं तपः शूरादयो बोध्याः १ क्रमेण तानुदाहरति-' खंतिसूरा ' इत्यादि-क्षान्तिशूराः-अर्हन्तः श्रीमहावीरस्वामिवत् १, तपःशूराः-अनगाराः-

---

चार युग्म कहे गये हैं। तात्पर्य ऐसा है कि-नैरयिक आदि चार प्रकारके युग्म वाले हो करभी जन्म-मरण लेकर न्यूनाधिक होते रहते हैं। सू.७॥

अब सूत्रकार भावोंको लेकर जीवोंकी प्ररूपणा करते हैं—

" चत्तारि सूरा पण्णत्ता " इत्यादि ८

सूत्रार्थ-शूर चार प्रकारके होते हैं, क्षान्तिशूर-१ तपःशूर-२ दानशूर-३ और युद्धशूर-४ इनमें-क्षान्तिशूर अर्हन्त हैं-१ तपःशूर-अनगार हैं-२ दानशूर-वैश्रवण हैं-३ युद्धशूर-वासुदेव हैं ४

टीकार्थ-क्षान्तिमें अग्रेसरको क्षान्तिशूर, तपस्यामें प्रधानको तपःशूर, दान देनेमें जो हिचकिचाहट नहीं करे वे दानशूर, युद्धमें नाम कमानेवालेको युद्धशूर कहते हैं। इसी बातको सूत्रकारने दृष्टान्त देकर समझाया है,

---

યુગ્મ (રાશિ) વાળા હોવા છતાં પણ જન્મ-મરણની અપેક્ષાએ ન્યૂનાધિક થતાં રહે છે. । સૂ. ૭ ।

હવે સૂત્રકાર ભાવોની અપેક્ષાએ જીવોની પ્રરૂપણા કરે છે—

" चत्तारि सूरा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-શૂર ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) ક્ષાન્તિશૂર, (૨) તપઃશૂર, (૩ દાનશૂર અને (૪) યુદ્ધશૂર ક્ષાન્તિશૂર અર્હન્ત હોય છે, તપ શૂર અણગાર હોય છે, દાનશૂર વૈશ્રવણ છે અને યુદ્ધશૂર વાસુદેવ છે

ટીકાર્થ—ક્ષાન્તિ પ્રધાન પુરુષને ક્ષાન્તિશૂર, ઉગ્ર તપસ્યા કરનારને તપઃશૂર, દાન આપવામાં જે પાછો પડતો નથી તે દાનશૂર અને યુદ્ધમાં વીરતા બતાવનારને યુદ્ધશૂર કહે છે. અર્હંત મહાવીર પ્રભુ ક્ષાન્તિ (ક્ષમા) માં શૂર ગણાયા,

साधवः धन्यनामानगारवत् २, दानशूरः-वैश्रवणः-कुवेराख्य उत्तरदिग्लोकपालः, तस्य तीर्थङ्करादिजन्मपारणक=प्रभृतिकल्याणकेषु रत्नवृष्टिकारित्वात्, प्रभुसेवक-दैन्यदूरीकरत्वाच्च। उक्तं च-" वेसमणवयणसंपेरिया उ ते तिरियजंभगा देवा।

कोडिग्गसो हिरण्णा, रयणाणि य तत्थ उवणेंति ।१।"

छाया —" वैश्रवणवचनसंप्रेरितास्तु ते तिर्यग्जृम्भका देवाः।

कोटयग्रशो हिरण्यानि रत्नानि च तत्रोपनयन्ति। १। " इति,

युद्धशूरा वासुदेवाः श्रीकृष्णवत्, तस्य षष्टयधिकशतत्रयसंख्य-युद्धेषु विजयित्वात्। (सू० ८)।

पुनर्जीवानेव भावैर्निरूपयति-

मूलम्--चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--उच्चे णाममेगे उच्चच्छंदे १, उच्चे णाममेगे णीअच्छंदे २, णीए णाममेगे उच्चछंदे ३, णीए णाममेगे णीयच्छंदे ४। ॥ सू० ९ ॥

छाया —चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा -उच्चो नामैक उच्चच्छन्दः

अर्हन्त महावीर स्वामी क्षान्ति क्षमामें शूर कहे गये हैं १ धन्य नामक अनगारकी तरह साधुजन तपःशूर होते हैं-२ उत्तरदिक्पाल कुवेर दानशूर हैं-३ यह कुवेर आदिके जन्म कल्याणके अवसर पर और पारणक आदि समयमें रत्नोंकी वर्षा करता है, इसलिये-इसे दानशूर कहा गया है उस समय यह प्रभु सेवकके भेदभावको दूर कर देता है। कहाभी हैं—वेसमाणवयणसपेरिया—इत्यादि कृष्णकी तरह वासुदेव युद्धशूर होते है श्री कृष्ण तीनसौ साठ युद्धमें विजयी हुवे हैं॥ सू० ८॥

पुनः भावोंको लेकर सूत्रकार जीवोंको ही निरूपण करते हैं—

" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता "—इत्यादि ९

पुरुष जात चार कहे गये हैं, उच्च उच्चच्छन्दवाला-१ उच्च नीच

ધન્ય નામના અણગાર જેવા સાધુઓ તપઃશૂર ગણાય છે ઉત્તર દિશાનો દિક્પાલ દાનશૂર ગણાય છે આ કુબેર તીર્થંકરના જન્મ કલ્યાણક, પારણા આદિ અવસરે રત્નોની વૃષ્ટિ કરે છે તેથી તેને દાનશૂર કહ્યો છે તે સમયે તે સ્વામી અને સેવકના ભેદભાવને દૂર કરી નાખે છે, કહ્યુ પણ છે કે-"વેસમણ વયણ સંપરિયા" ઇત્યાદિ કૃષ્ણની જેમ વાસુદેવ યુદ્ધશૂર હોય છે શ્રી કૃષ્ણે ૩૬૦ યુદ્ધોમાં વિજય પ્રાપ્ત કર્યો હતો. । સૂ ૮ ।

ભાવોની અપેક્ષાએ સૂત્રકાર જીવોનુ વિશેષ નિરૂપણ કરે છે—

" ચત્તારિ પુરિસજાયા પણ્ણત્તા " ઇત્યાદિ—

ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) ઉચ્ચ ઉચ્ચ છન્દવાળો, (૨) ઉચ્ચ

१, उच्चो नामैको नीचच्छन्दः २, नीचो नामैक उच्चच्छन्दः ३, नीचो नामैको नीचच्छन्दः ४। (सू० ९)।

टीका—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि–स्पष्टम्। नवरम्–एकः कश्चित् पुरुषः उच्चः–शरीरकुलसमृद्ध्यादिभिर्महान्, उच्चच्छन्दः–उच्चच्छन्दोऽभिप्रायो यस्य स तथा=उत्कृष्टाभिप्रायवान् भवति, औदार्यादिसम्पन्नत्वात् १, तथा–एकः–अन्यः पुरुषः उच्चोऽपिसन् नीचच्छन्दः–अपकृष्टाभिप्रायवान् भवति मलिनविचारत्वात् २, तथा–एकः–अपरः पुरुषः नीचः–शरीरकुलविभवादिभिर्हीनोऽपि उच्चच्छन्दो भवति ३, तथा–एकः–इतरः पुरुषस्तु नीचो नीचच्छन्दो भवति ४। सू.९।

अनन्तरं नीचाभिप्राय उक्तः स च लेश्याविशेषाद्भवतीति लेश्यां निरूपयति–

मूलम्--असुरकुमाराणं चत्तारि लेसाओ पण्णत्ताओ, तं जहा-कण्हलेसा १, णीललेसा २, काउलेसा ३, तेउलेसा ४।

च्छन्दवाला–२ नीच उच्च च्छन्दवाला–३ एवं नीच नीचच्छन्दवाला–४ तात्पर्य यह है कि जो पुरुष शरीर–कुल–समृद्धि आदि से महान् महान् होता हुवा भी उदारता आदि गुणों से युक्त होने के कारण अभिप्राय से महान् होता है वह–प्रथम भङ्गमें परिणत हुवा है।, तथा–जो शरीर–कुलादिसे महान् होता हुवा भी मलिन विचार वाला होने के कारण अवकृष्ट अभिप्रायवाला होता है, वह–द्वितीय भङ्ग में गिना गया है। तथा–जो शरीर–कुल–विभव आदि से हीन होता हुवा भी उन्नत विचार वाला होता है वह–तृतीय भङ्ग में गिना गया है। और–जो शरीर–कुल–आदि से हीन होता है–और अभिप्राय से भी हीन होता है–वह चतुर्थ भङ्ग में–लिया गया है ॥ सू०९ ॥

નીચ–છંદવાળો, (૩) નીચ ઉચ્ચ છન્દવાળો અને (૪) નીચ નીચ છન્દવાળો.

હવે આ ચારે પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે–(૧) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે શરીર, કુલ અને સમૃદ્ધિની અપેક્ષાએ પણ મહાન હોય છે અને ઉદારતા આદિ ગુણોથી યુક્ત હોવાને કારણે વિચારોની અપેક્ષાએ પણ મહાન હોય છે (૨) કોઈ પુરુષ શરીર, કુલ આદિની અપેક્ષાએ મહાન હોવા છતાં મલિન વિચાર, લોભ આદિને કારણે અધમ હોય છે. (૩) કોઈ રૂષ એવો હોય છે કે જે શરીર, કુલ, સમૃદ્ધિ આદિની અપેક્ષાએ હીન હોવા છતાં પણ ઉન્નત વિચારોવાળો હોય છે. (૪) કોઈ પુરુષ શરીર, કુલ, વૈભવ આદિની અપેક્ષાએ પણ હીન હોય છે અને ઔદાર્ય આદિ ગુણો અને વિચારોની અપેક્ષાએ પણ હીન જ હોય છે. । સૂ. ૯ ।

एवं जाव थणियकुमाराणं, एवं पुढविकाइयाणं आउवणस्सइकाइयाणं वाणमन्तराणं सव्वेसिं जहा असुरकुमाराणं ॥सू०१०॥

छाया—असुरकुमाराणां चतस्रो लेश्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—कृष्णलेश्या १, नीललेश्या २, कापोतलेश्या ३, तेजोलेश्या ४। एवं यावत् स्तनितकुमाराणाम्। एवं पृथिवीकायिकानामब्वनस्पतिकायिकानां व्यन्तराणां यथा असुरकुमाराणाम्। ॥ सू० १० ॥

टीका—"असुरकुमाराणं" इत्यादि—असुरकुमाराणां लेश्याः—लिश्यते—श्लिष्यते कर्मणा संबध्यते जीवो याभिस्ता लेश्याः—कर्मणा सह सम्बन्धे हेतुभूता आत्मपरिणामविशेषाः, चतस्रः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—कृष्णलेश्या—कृष्णा चासौ लेश्या कृष्णलेश्या १, एव नीललेश्या २, कापोतलेश्या ३, तेजोलेश्या ४। एवम्—अनेन प्रकारेण स्तनितकुमारान्तानां देवानां चतस्रो लेश्या बोध्याः। एताश्चतस्रो लेश्या असुरकुमारादिस्तनितकुमारान्तानां द्रव्यतो भवन्ति। भावतस्तु सर्वेषां देवानां पञ्च-

---

नीच अभिप्रायवाला होना—यह लेश्या विशेष से होता है, अतः—अब सूत्रकार लेश्या की प्ररूपणा करते हैं—

"असुरकुमाराणं चत्तारि लेसाओ"—इत्यादि–१०

टीकार्थ-असुरकुमारों को चार लेश्याएं कही गई हैं। जिसके द्वारा जीव कर्मों से बद्ध होता है वह लेश्या है. यह लेश्या कर्म के साथ सम्बन्ध होने में हेतु है-आत्मा का परिणाम विशेष है। कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, ये लेश्याएं असुरकुमारों को जैसे होती हैं. वैसे-स्तनितकुमार तक के देवों को भी होती हैं। इन में ये लेश्याएं द्रव्य की अपेक्षा से कही गई हैं, क्योंकि—भाव की अपेक्षा तो छे के-

---

વિચારો અથવા ભાવોમાં નીચતા લેશ્યાવિશેષોને કારણે ઉત્પન્ન થાય છે. તેથી સૂત્રકાર લેશ્યાઓની પ્રરૂપણા કરે છે.

"असुरकुमाराणं चत्तारि लेस्साओ" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—અસુરકુમારોમાં ચાર લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે. જેના દ્વારા આત્મા કર્મો વડે બદ્ધ થાય છે, તેનું નામ લેશ્યા છે કર્મની સાથે આત્માનો સંબંધ કરવામાં આ લેશ્યા કારણભૂત બને છે. એટલે કે તે આત્માના પરિણામ વિશેષ રૂપ હોય છે. અસુરકુમારોમાં કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત અને તેજોલેશ્યાનો સદ્ભાવ હોય છે સ્તનિતકુમાર પર્યન્તના ભવનપતિઓમાં પણ આ ચાર લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તેમનામાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ આ ચાર લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ સમજવો. ભાવની અપેક્ષાએ તો છએ છ લેશ્યાઓનો—કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત,

लेश्या शुक्ललेश्या सहिताः पूर्वोक्ताश्चतस्र इति षड् लेश्या भवन्ति । तथा असुरकुमाराणाम्–एवमेव पृथिवीकायिकानाम् अप्कायिकानां वनस्पतिकायिकानां सर्वेषां व्यन्तराणां च चतस्रश्चतस्रो लेश्या बोध्याः । पृथिव्यब्वनस्पतिषु देवानामुत्पत्तिसंभवात्तेषां तेजोलेश्याऽपि भवतीति चतस्रो लेश्याः प्रोक्ता इतिः ।सू० १०।

अनन्तरोक्तलेश्या विशेषेण मनुष्या विचित्रपरिणामा भवन्तीति यानादिदृष्टान्तचतुर्भङ्गिकाभिः पुरुषान् दर्शयितुमाह—

मूलम्–चत्तारि जाणा पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्ते १, जुत्ते णाममेगे अजुत्ते २, अजुत्ते णाममेगे जुत्ते ३, अजुत्ते णाममेगे अजुत्ते ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्ते ! जुत्ते णाममेगे अजुत्ते ४ । १।

चत्तारि जाणा पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्तपरिणए, जुत्ते णाममेगे अजुत्तपरिणए० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्तपरिणए० ४ । २।

चत्तारि जाणा पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्तरूवे १, जुत्ते णाममेगे अजुत्तरूवे २, अजुत्ते णाममेगे जुत्तरूवे ३, अजुत्ते णाममेगे अजुत्तरूवे ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--जुत्ते णाममेगे जुत्तरूवे० ४ । ३।

छवों कृष्ण, नील, कापोत, पीत, तेज, पद्म, शुक्ल लेश्याएं लेश्याएं होती हैं। असुरकुमारों के जैसे ही पृथिवीकायिक–अप्कायिक, वनस्पतिकायिक, और–व्यन्तरों को भी चार लेश्याएं होती हैं। पृथिवी–अप्, तेजस्कायिकोंमें देवोंकी उत्पत्ति सम्भावनासे तेजोलेश्या होतीहैं।।सू. १०।।

तेजो, पद्म અને શુક્લ લેશ્યાઓનો સદ્‌ભાવ હોય છે પૃથ્વીકાયિકો, અપ્કાયિકો, વનસ્પતિકાયિકો અને વાનવ્યન્તરોમાં પણ અસુરકુમારો જેવી ચાર લેશ્યાઓનો જ સદ્‌ભાવ હોય છે પૃથ્વીકાયિકો, અપ્કાયિકો અને તેજસ્કાયિકોમાં દેવોની ઉત્પત્તિની સંભાવનાની અપેક્ષાએ તેજોલેશ્યાનો સદ્‌ભાવ કહ્યો છે. । સૂ. ૧૦।

चत्तारि जाणा पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्तसोहे० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्तसोहे० ४॥ सू० ११ ॥

छाया—चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तं नामैकं युक्तं १, युक्तं नामैकमयुक्तम् २, अयुक्तं नामैकं युक्तम् ३, अयुक्तं नामैकमयुक्तम् ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तो नामैको युक्तः, युक्तो नामैकोऽयुक्तः ४।

चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तं नामैकं युक्तपरिणतं, युक्तं नामैकमयुक्तपरिणतम्० ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तो नामैको युक्तपरिणतः ४,

चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तं नामैकं युक्तरूपं १, युक्तं नामैक-

---

अनन्तरोक्त लेश्या विशेष से मनुष्य विचित्र परिणामवाले होते हैं, अतः–अब सूत्रकार यानादि दृष्टान्त की चतुर्भङ्गी द्वारा पुरुषों की प्ररूपणा करते हैं—" चत्तारि जाणा पण्णत्ता "–इत्यादि–११

इस सूत्र के अन्तर्गत चार सूत्र हैं। यान चार कहे गये हैं–युक्त युक्त–१ युक्ताऽयुक्त–२ अयुक्तयुक्त–३ अयुक्ताऽयुक्त–४, ऐसे ही युक्तयुक्त आदि के भेद से पुरुष भी चार प्रकार के हैं।

फिरभी—यान चार प्रकारके हैं–युक्तयुक्त–परिणत–१ युक्ताऽयुक्त–परिणन–२ अयुक्तयुक्त–परिणत–३ और – अयुक्ताऽयुक्त – परिणत–४ इसी प्रकारसे युक्तयुक्त परिणत आदि भेदवाले पुरुष भी चार होतेहैं ४,

(२) फिरभी—यान चार हैं, युक्त युक्त–रूप, १ युक्तायुक्त–रूप, २

લેશ્યાવિશેષના સદ્ભાવે કરીને મનુષ્ય વિચિત્ર પરિણામવાળો થાય છે તેથી હવે સૂત્રકાર યાત્રાદિના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા ચાર પ્રકારના પુરુષોની પ્રરૂપણા કરે છે—" चत्तारि जाणा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

આ સૂત્રમા ચાર સૂત્રોને સમાવી લીધા છે. યાનના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) युक्तयुक्त, (२) युक्ताऽयुक्त, (૩) अयक्तयुक्त, (૪) अयुक्ताऽयुक्त એ જ પ્રમાણે યુક્તયુક્ત આદિના ભેદથી ચાર પ્રકારના પુરુષો પણ હોય છે. (૧) યાનના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે. (૧) યુક્ત યુક્તપરિણત, (૨) યુક્તાયુક્ત પરિણત, (૩) અયુક્તયુક્ત પરિણત અને (૪) અયુક્તાયુક્ત પરિણત એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ યુક્તાયુક્ત પરિણત આદિ ચાર ભેદ છે ।૨।

યાનના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે–(૧) યુક્તયુક્ત રૂપ, (૨)

मयुक्तरूपम् २, अयुक्तं नामैकं युक्तरूपम् ३, अयुक्तं नामैकमयुक्तरूपम् ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तो नामैको.युक्तरूपः० ४,

चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तं नामैकं युक्तशोभम्० ४, एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तो नामैको युक्तशोभः ४। सू० ११॥

टीका—" चत्तारि जाणा " इत्यादि–यानानि–शकटादीनि, चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकं यानं युक्त–बलीवर्दादिभिः सयुक्त तत् पुनर्युक्तं–सकलसामग्रीसहितं, यद्वा–पूर्वकालेऽपरकाले च बलीवर्दादिभिर्युक्तं भवति, इति प्रथमो भङ्गः १। एकं बलीवर्दादिभिर्युक्तं सदपि ,अयुक्तं-सामग्रीरहितम् अपरकाले बलीवर्दादियोगरहितं वा भवति। इति द्वितीयो भङ्गः । २ । तथा–एकं वर्तमानकाले

अयुक्तयुक्त–रूप, ३ अयुक्ताऽयुक्त–रूप, ४, इसी प्रकार से पुरुष भी युक्तयुक्त–रूप आदि चार प्रकार के होते हैं–४,। ३ ।

फिरभी—यान चार प्रकारके हैं, युक्त युक्त–शोभावाले–१ युक्ताऽयुक्त–शोभावाले–२ अयुक्तयुक्त–शोभावाले–३ अयुक्तायुक्त शोभावाले ४, इसी प्रकार से पुरुष भी चार प्रकार के हैं, जैसे–युक्तयुक्त शोभावाला–१ आदि–(४)

टीकार्थ—कोई एक यान (प्रवहण) ऐसा होता है जो–बलीवर्द आदि से भी युक्त होता है और–सकल सामग्री से भी युक्त होता है। अथवा—पूर्वकाल में भी, और–अपरकाल में भी बलीवर्दादिकों से युक्त होता है, या–किया जाता है–१ कोई एक यान बलीवर्दादिकों से युक्त होता तो है. पर–यान सामग्री से रहित होता है–२ अथवा—पूर्व

युक्त अयुक्त रूप, (૩) અયુક્ત યુક્ત રૂપ અને (૩) અયુક્ત અયુક્ત રૂપ એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ યુક્ત યુક્ત રૂપ આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા ।૩।

યાનના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે–(૧) યુક્તયુક્ત શોભાવાળું, (૨) યુક્ત અયુક્ત શોભાવાળું (૩) અયુક્ત યુક્ત શોભાવાળું અને (૪) અયુક્ત અયુકત શોભાવળું એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ ' યુક્ત યુક્ત શોભાવાળો " આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા. ।૪।

હવે પહેલા સૂત્રના ચાર ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે (૧) કોઈ એક યાન (રથ, ગાડું આદિ વાહન) બળદ આદિથી પણ યુક્ત હોય છે અને સકળ સામગ્રીથી પણ યુક્ત હોય છે અથવા પહેલાં બળદાદિથી યુક્ત રહે છે અને પછી પણ યુક્ત જ રહે છે. (૨) કોઈ એક યાન બળદોથી યુક્ત હોય છે પણ અન્ય સામગ્રીથી રહિત હોય છે અથવા પહેલાં બળદ આદિથી યુક્ત હોય છે પણ પછી તેમનાથી રહિત બની જાય છે (૩) કોઇ એક યાન વર્તમાન કાળે તો બળદ આદિથી

अयुक्तं-सामग्रीरहितं बलीवर्दादियोगरहितं वा सदपि अपरकाले युक्तं भवतीति तृतीयो भङ्गः । ३ । तथा-एकं वर्तमानकाले अयुक्तं. भविष्यत्कालेऽप्ययुक्तं भवतीति चतुर्थो भङ्गः । ४ ।

" एवामेवे "-त्यादि-एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः युक्तः-समृद्ध्यादिभिः सम्पन्नः, पुनरपि युक्तः-सदाचारादिभिः सम्पन्नो भवति, यद्वा-पूर्वं युक्तः-धनादिभिः सम्पन्नः, स एव पश्चादपि युक्तः-धनादिभिः सम्पन्नो भवति, इति साधारणपुरुषमाश्रित्य प्रथमभङ्ग व्याख्या १, एवं शेषास्त्रयोऽपि भङ्गा बोध्याः ४। साधुपुरुषमाश्रित्य तु-पूर्वं युक्तः-द्रव्यलिङ्गेन भावलिङ्गेन च सहितः, स एव पश्चादपि युक्तः-तथाभूतः, इति प्रथमो भङ्गः १। तथा-एको

काल में बलीवर्दादि से युक्त होता है और-अपरकाल में नहीं-२ तथा-कोई एक यान वर्तमान काल में तो सामग्री से-अथवा बलीवर्दादिकों के योगसे रहित होता है, बाद में-युक्त हो जाता है-३, कोई एक रथादियान वर्तमान-और भविष्यत् काल में भी बलीवर्दादिकों के, या-सामग्रियों के योग से रहित ही बना रहता है-४, इसी प्रकार से पुरुष जात भी चार होते हैं, जैसे—कोई एक जन्मकाल से ही समृद्धि सम्पन्न होता है. और-सदाचार आदि से भी-१ अथवा-जो पहले से भी सम्पन्न होता है. और-बाद में भी अपने अन्तिम काल तक भी धनादि सम्पन्न बना रहता है, यह प्रथम भङ्ग साधारण पुरुष को लेकर बनाया गया है। इसी प्रकार शेष भङ्ग त्रय भी साधारण पुरुष को लेकर कथित कर लेना चाहिये। साधु पुरुषों को आश्रित करके इन भङ्गों का व्याख्यान इस प्रकार है—कोई एक पुरुष साधु बनते समय में द्रव्यलिङ्ग,

---

રહિત હોય છે પણ ભવિષ્યમાં તેમનાથી યુક્ત બની જાય છે. (૪) કોઈ એક રથાદિ યાન વર્તમાન કાળે પણ બળદ આદિથી રહિત હોય છે અને ભવિષ્યમાં પણ બળદાદિથી રહિત જ રહે છે.

એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે-(૧) કોઇ પુરુષ જન્મકાળથી જ સમૃદ્ધિ સંપન્ન પણ હોય છે અને સદાચાર સંપન્ન પણ હોય છે અથવા જે પહેલા પણ સમૃદ્ધિ, સદાચાર આદિથી યુક્ત હોય છે અને પોતાના મરણકાળ પર્યન્ત પણ તેનાથી યુક્ત જ રહે છે આ પહેલો ભાગો સામાન્ય પુરુષની અપેક્ષાએ સમજવો, એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી શકાય એવાં છે સાધુ પુરુષોને આ ચાર ભાગા આ પ્રમાણે

युक्तः-पूर्वं द्रव्यलिङ्गेन भावलिङ्गेन च सम्पन्नो भवति, स पश्चाद् अयुक्तः-भाव लिङ्गेन रहितो भवति, यथा जमाल्यादिर्निह्नवः, उभाभ्यां वा रहितो भवति, यथा संयमपतितः कण्डरीकादिः। इति द्वितीयो भङ्गः २। तथा-एकः पुरुषः अयुक्तः-द्रव्यलिङ्गेन रहितोऽपि युक्तो-भावलिङ्गेन युक्तो भवति, यथा प्रत्येकबुद्धादिः। इति तृतीयो भङ्गः ३। तथा-एकः पुरुषः पूर्वमयुक्तः-द्रव्यभावलिङ्गरहितः, पश्चादपि अयुक्तस्तथैव भवति, यथा गृहस्थादिः। इति चतुर्थोभङ्गः ४।

"चत्तारि जाणा" इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-युक्तं बलीवर्दादिभिः, युक्तपरिणतम्-सत्सामग्र्या युक्तभावप्राप्तम् इति प्रथमो भङ्गः १। तथा युक्तं बलीवर्दा-

---

या-भावलिङ्ग से युक्त होता है, वही यदि उसी लिङ्ग से अपने जीवन-काल तक भी युक्त बना रहता है तो-ऐसा वह प्रथम भङ्गवाला है-१ तथा-कोई एक साधु पुरुष प्रव्रज्या लेते समय तो द्रव्यलिङ्ग से या-भावलिङ्ग से युक्त हो जाता है, पर-आगे चलकर यदि वह उस लिङ्ग से-भाव लिङ्ग से-रहित हो जाता है जमालिनिह्नव की तरह अथवा-कण्डरीक की तरह दोनों लिङ्गों से रहित हो जाता है, तो ऐसा वह साधु पुरुष द्वितीय भङ्ग में गिना गया है-२ तथा-जो प्रत्येक बुद्ध आदि की तरह द्रव्यलिङ्ग से रहित हुवा भी भावलिङ्ग से सहित होता है उसकी अपेक्षा तृतीय भङ्ग है-३ तथा-गृहस्थादि की तरह जो पहले भी द्रव्यलिङ्ग, या-भावलिङ्ग से रहित हो, और-बाद में भी वह वैसा ही बना रहे तो-इसकी अपेक्षा चतुर्थ भङ्ग है. ४। द्वितीय सूत्रगत चार भङ्ग इस प्रकार से व्याख्यान करना चाहिये-जैसे-कोई एक रथादियान

લાગુ પડે છે-(૧) કોઇ એક પુરુષ સાધુ બનતી વખતે દ્રવ્યલિંગ કે ભાવ લિંગથી યુક્ત હોય છે અને પોતાના જીવન કાળ પર્યન્ત એજ લિંગથી યુક્ત રહે છે (૨) કોઈ એક પુરુષ દીક્ષા અંગીકાર કરતી વખતે દ્રવ્યલિંગથી કે ભાવલિંગથી યુક્ત હોય છે, પરન્તુ આગળ જતા તે લિંગથી-ભાવલિંગથી રહિત થઈ જાય છે તેવા પુરુષને બીજા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે જેમકે—જમાલિ નિહ્નવ અથવા કંડરિકની જેમ બન્ને લિંગથી રહિત થઈ જનારને પણ બીજા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે. પ્રત્યેક બુદ્ધ આદિની જેમ દ્રવ્યલિંગથી રહિત હોવા છતાં ભાવલિંગથી યુક્ત હોય એવા સાધુને ત્રીજા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે. (૪) તથા ગૃહસ્થાદિની જેમ જે પહેલા પણ દ્રવ્યલિંગ અથવા ભાવલિંગથી રહિત હોય છે પછી પણ એવો જ ચાલુ રહે છે તેને ચોથા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે.

दिभिः, अयुक्तपरिणतं—सत्सामग्रीवर्जितम् २, इति द्वितीयो भङ्गः २। एवं शेषभङ्गद्वयमपि बोध्यम् ४।

"एवामेव" इत्यादि–एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकः पुरुषः युक्तो=द्रव्यभावलिङ्गसम्पन्नः पश्चादपि युक्तपरिणतः–युक्तभावापन्नो भवति, इति प्रथमो भङ्गः। १। एकः पुरुषः पूर्वं युक्तः पश्चाद् अयुक्तपरिणतः=भावलिङ्गरहितो भवति, यथा जमाल्यादि निह्नवः। उभाभ्यां वा रहितो भवति यथा कण्डरीकः। इति द्वितीयो भङ्गः। २। तथा–एकः पुरुषः अयुक्तः–पूर्वं द्रव्यलिङ्गरहितः

ऐसा होता है जो–बलीवर्द आदिकों से युक्त होना है. और–प्रशस्त-अच्छी सामग्री से भी युक्त रहता है, तथा–कोई एक रथादियान बलीवर्दादिकों से युक्त होता हुवा भी सत्सामग्री से रहित होता है, २ इसी तरह से शेष दो भङ्गों को भी समझ लेना चाहिये–४। इसी तरह चार पुरुष जात कहे गये हैं–कोइ एक पुरुष ऐसा होता है जो द्रव्य-भाव लिङ्ग से सम्पन्न होने से युक्त होता है, और पश्चात्–भी वह युक्त भाव से युक्त होता है, ऐसा यह–प्रथम भङ्ग है, १ द्वितीय भङ्ग इस प्रकार से है, जैसे कोई एक पुरुष पहले युक्त होता है, द्रव्य भाव लिङ्ग से सहित होता है, पश्चात्–वह अयुक्त परिणत हो जाता है, भावलिङ्ग से रहित हो जाता है, यथा–जमालि-आदि निह्नव, या–दोनों लिङ्गों से रहित हो जाता है जैसे–कण्डरीक ऐसा वह द्वितीय भङ्ग है, २ तृतीय भङ्ग इस प्रकार है, जैसे कोई एक पुरुष अयुक्त-पहले द्रव्यलिङ्ग से रहित

બીજા સૂત્રના ચાર ભાંગાનુ સ્પષ્ટીકરણ–(૧) કોઇ એક રથાદિ યાન એવુ હોય છે કે જે બળદ આદિથી પણ યુક્ત હોય છે અને પ્રશસ્ત સામગ્રીથી પણ યુક્ત રહે છે (૨) કોઈ એક રથાદિ યાન બળદાદિથી યુક્ત હોવા છતાં પણ પ્રશસ્ત સામગ્રીથી રહિત હોય છે ત્રીજા અને ચોથા નંબરના ભાગા પણ એજ પ્રમાણે સમજી લેવા. એજ પ્રમાણે પુરુષોના ચાર પ્રકાર પડે છે–(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દ્રવ્ય–ભાવ લિંગથી સંપન્ન હોવાને કારણે યુક્ત હોય છે અને પછી પણ તે પુરુષ તે ભાવથી સંપન્ન જ રહે છે (૨) કોઈ એક પુરુષ પહેલાં યુક્ત હોય છે–દ્રવ્યભાવ લિંગથી સંપન્ન હોય છે પણ પાછળથી તે અયુક્ત પરિણત થઈ જાય છે–એટલે ભાવલિંગથી રહિત થઇ જાય છે જેમ કે જમાલિ આદિ નિહ્નવ. અથવા બન્ને લિંગથી પણ રહિત થઇ જાય છે જેમ કે કંડરીક આ પ્રકારનો બીજો ભાગો સમજવો.

सू०–६

पश्चाद् युक्तपरिणतो-द्रव्यमात्रलिङ्ग सम्पन्नो भवति, यथा-प्रत्येकबुद्धादिः । इति तृतीयो भङ्गः । ३ । तथा-एकः पूर्वमयुक्तः सन् पश्चादप्ययुक्तपरिणतो भवति, यथा-गृहस्थः, इति चतुर्थो भङ्ग ४। एषा चतुर्भङ्गी विशिष्टपुरुषमाश्रित्य। सामान्य पुरुषमाश्रित्य तु-एकः पुरुषः पूर्वं युक्तः=धनधान्यादि सम्पन्नः, पश्चादपि युक्तपरिणतो भवतीति प्रथमो भङ्गः । १ । एकः पुरुषः पूर्वं युक्तः पश्चाद् अयुक्तपरिणतो-धनधान्यादिरहितो भवतीति द्वितीयो भङ्गः ।२। एवं शेषभङ्गद्वयमपि बोध्यम् ४।

होता है पश्चात्-वह युक्त परिणत-द्रव्यलिङ्ग से सम्पन्न हो जाता है जैसे-प्रत्येक बुद्ध आदि ऐसा यह तृतीय भङ्ग है, ३। चतुर्थभङ्ग इस प्रकार है, जैसे-कोई एक पहले से भी अयुक्त होता है और पश्चात् भी अयुक्तपरिणत बना रहता है जैसे-गृहस्थ ऐसा यह चतुर्थ भङ्ग है, ४। यह-इस प्रकारकी चतुर्भङ्गी, विशिष्ट पुरुषको आश्रित करके कही गईहै।

अब सामान्य पुरुष को आश्रित करके यही चतुर्भङ्गी इस प्रकार से है-जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहले भी धनधान्यादि से सम्पन्न होता है, और बाद में भी वैसा ही सम्पन्न बना रह जाता है, यह प्रथम भङ्ग है, १ द्वितीय भङ्ग इस प्रकार है-कोई एक पुरुष पहले तो धनधान्यादि सम्पन्न होता है बाद में उससे रहित हो जाता है, २ तृतीय भङ्ग इस प्रकार है-जैसे-कोई एक पुरुष पहले तो धनधान्यादि रहित होता है और-बाद में सम्पन्न हो जाता है, ३ तथा-चतुर्थ भङ्ग

ત્રીજો ભાંગો—કોઈ એક પુરુષ પહેલાં અયુક્ત (દ્રવ્યલિંગથી રહિત) હોય છે, પરન્તુ પાછળથી યુક્ત પરિણત-દ્રવ્યલિંગથી સંપન્ન થઈ જાય છે જેમ કે પ્રત્યેક બુદ્ધ વગેરે.

ચોથો ભાંગો—કોઇ એક પુરુષ પહેલા પણ અયુક્ત (દ્રવ્યલિંગથી રહિત) હોય છે અને પાછળથી પણ અયુક્ત પરિણત જ ચાલુ રહે છે. જેમ કે ગૃહસ્થ આ પ્રકારની ચતુર્ભંગી વિશિષ્ટ પુરુષોને આધારે કહેવામાં આવી છે સામાન્ય પુરુષોની અપેક્ષાએ એજ ચતુર્ભંગીને આ પ્રમાણે ઘટાવી શકાય

(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ ધનધાન્ય આદિથી સંપન્ન હોય છે અને ત્યારબાદ પણ જીવનપર્યન્ત તેનાથી યુક્ત જ ચાલુ રહે છે. (૨) કોઈ પુરુષ પહેલાં ધનધાન્યાદિથી યુક્ત હોય છે પણ પાછળથી તેનાથી રહિત બની જાય છે. (૩) કોઇ એક પુરુષ પહેલાં ધનધાન્યાદિથી રહિત હોય છે પણ પાછળથી ધનધાન્યથી સંપન્ન બની જાય છે

" चत्तारि जाणा " इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं-युक्तं बलीवर्दादिभिः युक्तरूपं-सुरचिताऽऽकारं भवति १, युक्तं सदपि अयुक्तरूप सुन्दरसंस्थानवर्जितम्, एवं शेष-भङ्गद्वयं बोध्यम् ४। एवमेव पुरुषो युक्तो-धनादिभिः ज्ञानादिगुणैर्वा सम्पन्नः सन् युक्तरूपः-उचितवेषः, यद्वा-सुरचितवेषो भवति। इति प्रथमो भङ्गः । १ । शेष-भङ्गत्रयमेवमेव बोध्यम् ४। एवमेव पुरुषो युक्तः-गुणैर्युक्तः युक्तशोभः-युक्ता-उचिता शोभा यस्य स तथा भवति १। एवं शेषभङ्गत्रयमपि ४। ॥ सू० ११ ॥

इस प्रकार है-कोइ एक पुरुष ऐसा होता है जो-पहले भी धनधान्य रहित-होता है, और बाद में भी धनधान्य रहित बना रहता है-४।

" चत्तारि जाणा "—इत्यादि, सूत्रार्थ स्पष्ट है, तात्पर्य इसका यह है कि—कोई एक रथादियान ऐसा होता है जो बलीवर्द आदि से युक्त होता है, और-युक्त रूपवाला सुरचित रुचिर आकारवाला भी होता है ? द्वितीय भङ्ग में-जैसे कोई एक रथ ऐसा है जो, बलीवर्द आदि वाहन से युक्त होता हुवा भी अयुक्त रूपवाला (सुन्दर-सुरुचिर आकारवाला नहीं) होता है, २ इसी तरह शेष ३--४ -भङ्गों को भी समझना । इसी प्रकार पुरुष भी चार होते हैं, जैसे--कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो धनादि युक्त हुवा भी ज्ञानादि गुणवाला होता है, और-उचित वेषवाला होता है, अथवा--सुरचित वेषवाला होता है । द्वितीय भङ्ग में-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो धनादि सम्पन्न तो होता है

---

(४) કોઇ એક પુરુષ પહેલા પણ ધનધાન્યાદિથી રહિત હોય છે અને પાછળથી પણ તેનાથી રહિત જ રહે છે. " चत्तारि जाणा " ઈત્યાદિ સૂત્રાર્થ સ્પષ્ટ છે દૃષ્ટાન્ત સૂત્રનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-(૧) કોઇ એક રથાદિ યાન બળદ આદિથી પણ યુકત હોય છે અને યુકતરૂપ સ પન્ન-સુરચિત રુચિર આકાર-વાળું પણ હોય છે. (૨) કોઈ એક રથાદિ યાન બળદ આદિથી યુક્ત હોવા છતાં અયુક્તરૂપવાળું હોય છે એટલે કે સુંદર અને સુરુચિકર આકારવાળું હોતું નથી એજ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગાનો ભાવાર્થ પણ સમજી શકાય એવો છે

એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે—

(૧) કોઇ એક પુરુષ ધનાદિથી પણ યુક્ત હોય છે, જ્ઞાનાદિથી પણ સંપન્ન હોય છે અને ઉચિત વેષવાળો-સુરચિત વેષવાળો પણ હોય છે.

(૨) કોઈ એક પુરુષ ધનાદિથી સંપન્ન હોવા છતાં અયુક્ત રૂપવાળો હોય છે એટલે કે જ્ઞાનાદિ ગુણોથી રહિત, ઉચિત વેષથી રહિત અથવા

इति यानदृष्टान्त पुरुषदार्ष्टान्तिकसूत्राणि ॥

मूलम्—चत्तारि जुग्गा पण्णत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-जुत्तेणाममेगे जुत्ते ४, । ५। एवं जहा जाणेण चत्तारि आलावगा तहा जुग्गेणवि, पडिवक्खो तहेव पुरिसजाया जाव सोहेत्ति ॥सू०१२।

छाया—चत्वारो युग्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा-युक्तं नामैकं युक्तम् ४, एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा--युक्तो नामैको युक्तः ४, एवं यथा यानेन

पर-अयुक्तरूपवाला होता है--ज्ञानादि गुणवाला, या-उचित वेषवाला, या-सुरचित वेषवाला नहीं होता है। अवशिष्ट दो भंग भी इसी तरह से समझ लेना चाहिये। इसी प्रकार से कोई एक पुरुष ऐसा होता है, जो ज्ञानादि गुणों से युक्त होता है और--उचित शोभावाला भी होता है यह प्रथम भङ्ग है, १ अवशिष्ट तीन भङ्ग भी इसी प्रकार से जान लेना चाहिये ॥ सू०११ ॥

अथ पुनः सूत्रकार दृष्टान्त और--पुरुषदार्ष्टान्तिक सूत्रों को कहते हैं-
" चत्तारि जुग्गा-पण्णत्ता "—इत्यादि-१२

सूत्रार्थ—युग्य चार कहे गये हैं, युक्तयुक्त, १ युक्ताऽयुक्त, २ अयुक्तयुक्त, ३ और -- अयुक्ताऽयुक्त, ४। ऐसे पुरुष भी चार कहे गये हैं- जैसे - युक्तयुक्त, १ इत्यादि। यान के जैसे युग्य के साथ भी युक्तयुक्त परिणत, युक्तरूप, युक्तशोभा, आदि पदों को जोडकर चार आलापक बन जाते हैं ऐसा समझ लेना चाहिये।

સુરચિત વેષથી રહિત હોય છે બાકીના બે ભાંગા પણ એજ પ્રમાણે સમજી શકાય એવાં છે

યાનના "યુક્તયુક્ત શોભાવાળું" આદિ ચાર ભાંગા સરળ છે

પુરુષના પણ એવાં જ ચાર ભાંગા સમજવા જેમ કે (૧) કોઈ એક પુરુષ જ્ઞાનાદિ ગુણોથી યુક્ત હોય છે અને ઉચિત શોભાવાળો પણ હોય છે. બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ આ પહેલા ભાગાને આધારે સમજી લેવા. ।સૂ. ૧૧।

હવે સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત અને દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના સૂત્રોનુ નિરૂપણ કરે છે— "चत्तारि जुग्गा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

યુગ્ય (વાહનને ખેંચનાર કે ઉપાડનાર બળદ અથવા પુરુષ) ચાર પ્રકારના હોય છે-(૧) યુક્તયુક્ત, (૨) યુક્તાયુક્ત, (૩) અયુક્તયુક્ત અને (૪) અયુક્તાયુક્ત એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે.

चत्वार आलापकास्तथा युग्येनापि । प्रतिपक्षस्तथैव पुरुषजातानि यावत् शोभेति ।
॥ सू० १२ ॥

टीका—" चत्तारि जुग्गा " इत्यादि—युग्या--युगं--रथं वहन्तीति युग्या= वृषभाश्वादयः, यद्वा--युग्मानि--द्विहस्तप्रमाणानि चतुरस्राणि सवेदिकानि सालङ्काराणि गोल्लदेशप्रसिद्धानि जम्पानानि तानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा- एकं युक्तं--

इसी तरह से पुरुष भी चार प्रकार के होते हैं ऐसा प्रारम्भ करके युक्त-शोभा तकके समस्त भङ्गों को पुरुष सम्बन्धी चतुर्भङ्गी में कह देना चाहिये। युक्तयुक्त, १ युक्ताऽयुक्त, २ अयुक्तयुक्त, ३ अयुक्तायुक्त, ४ युक्तयुक्त- परिणत, १ युक्तायुक्त -परिणत, २ अयुक्तयुक्त परिणत, ३ अयुक्ताऽयुक्त-परिणत, ४ युक्तयुक्त- रूप, १ युक्तायुक्त-रूप- २ अयुक्त युक्त-रूप, ३ अयुक्ताऽयुक्त-रूप, ४ युक्तयुक्त-शोभासम्पन्न, १ युक्ताऽयुक्त शोभासम्पन्न, २ अयुक्तयुक्त शोभासम्पन्न, ३ और -अयुक्ताऽयुक्त शोभासम्पन्न, ४, इस प्रकार से सब १६ भङ्गों को युग्य दृष्टान्त में और--पुरुष दार्ष्टान्तिक में प्रतिपादक ये सूत्र हैं ।

इस सूत्र में --" युगं- रथाङ्गं (प्रवहणाङ्गं) शिविकाङ्गं वा वहन्ति--इति युग्याः, " इस व्युत्पत्ति के अनुसार युग्य शब्द से वृषभादि, या -- मनुष्य गृहीत होते हैं । क्योंकि-

(૧) યુક્તયુક્ત બાકીના ત્રણ પ્રકાર ઉપર મુજબ સમજવા.

યાનની જેમ યુગ્યની સાથે પણ યુક્ત, યુક્તપરિણત, યુક્તરૂપ અને યુક્તશોભા આદિ પદોને જોડીને ચાર આલાપક બની જાય છે એજ પ્રમાણે પુરુષ વિષયક પણ ચાર આલાપક બને છે એમ સમજવું. આરીતે પુરુષ વિષયક ચાર ચતુર્ભંગી બને છે

યુગ્ય વિષયક પહેલી ચતુર્ભંગી તો ઉપર આપવામાં આવી છે. હવે બીજી ચતુર્ભંગી પ્રકટ કરવામા આવે છે-(૧) યુક્તયુક્ત પરિણત, (૨) યુક્તાયુક્ત પરિણત, (૩) અયુક્તયુક્ત પરિણત અને (૪) અયુક્તાયુક્ત પરિણત.

ત્રીજી ચતુર્ભંગી-(૧) યુક્તયુક્ત રૂપ, (૨) યુક્તાયુક્ત રૂપ, (૩) અયુક્ત-યુક્ત રૂપ અને (૪) અયુક્તાયુક્ત રૂપ.

ચોથી ચતુર્ભંગી—(૧) યુક્તયુક્ત શોભાસંપન્ન, (૨) યુક્તાયુક્ત શોભા-સંપન્ન (૩) અયુક્તયુક્ત શોભાસંપન્ન, અને (૪) અયુક્તાયુક્ત શોભાસંપન્ન.

આ પ્રકારની ચાર ચતુર્ભંગીઓ પુરુષના વિષયમાં પણ સમજવી. આ સૂત્રમાં " યુગ રથાङ्ग (પ્રવહણાङ्गं) શિવિકાङ्गं વા વહન્તિ ઇતિ યુગ્યા." આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર યુગ્ય શબ્દથી બળદ આદિ પ્રાણી અથવા પાલખી આદિ

वाहनोऽऽरोहणसामग्र्या सहितं सत् पुनर्युक्तं वेगादिसम्पन्नमिति प्रथमो भङ्गः । १। शेषभङ्गत्रयं स्वयमूह्यम् ४। एवमेव लौकिके लोकोत्तरे च पुरुषे चत्वारो भङ्गा बोध्याः ४। एवम्=अमुना प्रकारेण यानेन यथा=यानवद् युग्येनाऽपि युक्त–युक्त-परिणत–युक्तरूप-युक्तशोभादिघटिताश्चत्वार आलापका बोध्याः । प्रतिपक्षः–दार्ष्टान्तिकस्तथैव=पूर्ववदेव, तत्र 'पुरुषजातानि चत्वारि' इत्युपक्रम्य 'युक्त-शोभ'–पर्यन्ताः सर्वेऽपि भङ्गा वक्तव्या इति । तथाहि—युक्तं युक्तं १ युक्तमयुक्तम् २ अयुक्तं युक्तम् ३ अयुक्तमयुक्तम् ४। युक्तं युक्तपरिणतं १, युक्तमयुक्त-परिणतम् २, अयुक्तं युक्तपरिणतम् ३, अयुक्तमयुक्तपरिणतम् ४। युक्तं युक्त-रूपं, १ युक्तमयुक्तरूपम् २, अयुक्तं युक्तरूपम् ३, अयुक्तमयुक्तरूपम् ४। युक्तं युक्तशोभं १, युक्तमयुक्तशोभम् २, अयुक्तं युक्तशोभम् ३, अयुक्तमयुक्तशोभम् ४। इति युग्यदृष्टान्ते पुरुषदार्ष्टान्तिकेऽपि च सूत्रणीयमिति पर्यवसितम् ।सू०१२।

मूलम्–चत्तारि सारही पण्णत्ता, तं जहा--जोयावइत्ता णाम-मेगे णो विजोयावइत्ता १, विजोयावइत्ता णाममेगे णो जोया-

---

द्विहस्तप्रमाणोपेत चौकोर वेदिका सहित अलङ्कारयुक्त "जम्पान" "पालखी' विशेष, जोकि गोल्ल देशमें प्रसिद्ध है वे भी "युग्य" हैं । इसमें प्रथम भङ्ग इस प्रकार घटित करना चाहिये-जैसे कोई एक युग्य ऐसा होता हैं, जो युक्त वाहन पर आरोहण करनेकी साधन-सामग्री सहित होता है. और वेग आदि से भी सम्पन्न होता है यह युक्त युक्त इस प्रथम भङ्गवाला युग्य है–१ अवशिष्ट भङ्गोंकी घटना स्वयं कर लेना चाहिये–४ इसी तरह लौकिक एक [अलौकिक] लोको-त्तर पुरुषों मे चार भङ्ग जानना चाहिये ।।सू०१२।।

ઉપાડનાર મનુષ્ય ગૃહીત થાય છે જો કે બે હાથના પ્રમાણુવાળી ગાલ્લ દેશમાં ચોખૂણુ વેદિકા સહિતની અલંકારયુક્ત "જમ્પાન" (પાલખી વિશેષ)ને પણુ યુગ્ય કહે છે. પણુ અહીં તે ગ્રહણુ કરવાની નથી.

યુગ્યના પહેલા ભાંગાનો ભાવાર્થ—કોઈ એક યુગ્ય (બળદ આદિ) હોય છે કે જે યુક્ત–વાહન પર આરોહણુ કરવાની સાધન સામગ્રીથી યુક્ત હોય છે અને વેગ આદિથી પણુ યુક્ત હોય છે આ "યુક્તયુક્ત" નામનો પહેલો ભાંગો થયો. બાકીના ભાંગાઓનો ભાવાર્થ પણુ જાતે જ સમજી લેવો. એજ પ્રમાણે લૌકિક પુરુષો અને લોકોત્તર પુરુષોને અનુલક્ષીને પણુ ચાર ચતુર્ભંગી સમજી લેવી. ।। સૂ. ૧૨ ।।

वइत्ता २, एगे जोयावइत्तावि विजोयावइत्तावि ३, एगे जोयावइत्ता णो विजोयावइत्ता ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–जोयावइत्ता णाममेगे णो विजोयावइत्ता० ४। एवामेव चत्तारि हया पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते, णाममेगे जुत्ते, जुत्ते, णाममेगे अजुत्ते० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्ते १, एवं जुत्तपरिणए, जुत्तरूवे, जुत्तसोहे, सव्वेसिं पडिवक्खो पुरिसजाया। सू० १३ ॥

छाया—चत्वारः सारथयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–योजयिता नामैको नो वियोजयिता १, वियोजयिता नामैको नो योजयिता २, एको योजयिताऽपि वियोजयिताऽपि ३, एको नो योजयिता नो वियोजयिता ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–योजयिता नामैको नो वियोजयिता० ४, एवमेव

"चत्तारि सारही पण्णत्ता" इत्यादि–१३

सारथी चार प्रकारके होते हैं, जैसे कोई एक सारथि योजयिता होता है वियोजयिना नहीं होता है–१ कोई एक वियोजयिता होता है योजयिता नहीं–२ कोई एक योजयिता–वियोजयिता भी–३ और कोई एक न तो योजयिता, न वियोजयिता होता है–४ ऐसे ही पुरुष भी चार कहे गये हैं जैसे कोई एक पुरुष योजयिता होता है वियोजयिता नहीं–१ इत्यादि–४

"चत्तारिसारही पण्णत्ता" ઈત્યાદિ— ।સૂ. ૧૩।

સારથિના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર છે–(૧) કોઇ એક સારથિ યોજયિતા હોય છે, વિયોજયિતા હોતો નથી. (૨) કોઈ એક સારથિ વિયોજયિતા હોય છે પણ યોજયિતા હોતો નથી, (૩) કોઈ એક સારથિ યોજયિતા પણ હોય છે અને વિયોજયિતા પણ હોય છે. કોઇ એક સારથિ યોજયિતા પણ હોય છે, અને વિયોજયિતા પણ હોય છે. (૪) કોઇ એક સારથિ યોજયિતા પણ હોતો નથી અને વિયોજયિતા પણ હોતો નથી. એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે–(૧) કોઇ એક પુરુષ યોજયિતા હોય છે, પણ વિયોજયિતા હોતો નથી, ઈત્યાદિ ચાર પ્રકાર સમજવા

चत्वारो हयाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तः, युक्तो नामैकोऽयुक्तः ४, एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तः, एवं युक्तपरिणतः, युक्तरूपः, युक्तशोभः, सर्वेषां प्रतिपक्षः पुरुषजातानि । सू० १३ ।

टीका—"चत्तारि सारही" इत्यादि — सारथयः—रथवाहकाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एको योजयिता—रथेऽश्वादीनां संलग्नीकर्ता भवति किन्तु नो वियोजयिता—रथादश्वादीनां पृथक्कर्ता न भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा—एको वियोजयिता भवति नो योजयिता, इति द्वितीयः ।२। एको योजयिता भवति वियोजयिताऽपि, इति तृतीयो भङ्गः ।३। एको नो योजयिता भवति नो वियोज-

इसी प्रकारसे चार प्रकारके 'हय' कहे गये हैं, जैसे कोई एक हय (घोडा) युक्त युक्त होता है-१ इत्यादि-४। इसी प्रकार ४ चार पुरुष जात कहे गये हैं, जैसे युक्त युक्त इत्यादि-४। इसी प्रकार युक्त परिणत-युक्तरूप और युक्त शोभा सम्पन्न ये सब पद जोडकर यहां भङ्ग रचना कर लेनी चाहिये

तात्पर्य इस सूत्रका ऐसा है-रथवाहक नाम सारथिका है ये चार प्रकार के कहे गये हैं सो उनमें कोई एक सारथि ऐसा होता है जो रथ में अश्व आदिकों को संलग्न ही करता है किन्तु-रथसे उन अश्वादिकों को अलग नहीं करता है इस प्रकार का यह प्रथम भङ्ग है। तथा-कोई एक सारथि ऐसा होता है जो केवल रथादिकोंसे अश्वादिकोंको अलग ही करता है उन्हें उसमें संलग्न-जोडना नहीं करता है ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है-२ तथा-कोई एक सारथि ऐसा होता है जो रथादमें अश्वादिकों को योजित और वियोजित भी करता है ऐसा यह तृतीय भङ्ग है-३ तथा-कोई एक सारथि

એજ પ્રમાણે ઘોડાના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક ઘોડા યુક્તયુક્ત હોય છે, ઈત્યાદિ ચાર પ્રકાર સમજવા પુરુષના પણ યુક્તયુક્ત આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા એજ પ્રમાણે યુક્તપરિણત, યુક્તરૂપ અને યુક્તશોભા સંપન્ન, આ પદોને જોડીને પણ બીજી ત્રણ ચતુર્ભંગી દૃષ્ટાન્તસૂત્ર અને દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષસૂત્ર વિષે સમજી લેવી.

આ સૂત્રનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે—રથ ચલાવનારને સારથિ કહે છે. તેના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક સારથિ એવો હોય છે કે જે રથ સાથે અશ્વાદિને જોડે છે ખરો પણ તેમને રથથી છૂટા કરતો નથી (૨) કોઈ એક સારથિ અશ્વાદિકોને રથથી અલગ કરે છે પણ તેમને રથ સાથે જોડતો નથી. (૩) કોઈ એક સારથિ અશ્વાદિકોને રથ સાથે જોડે છે પણ ખરો અને તેમને વિયોજિત (અલગ) પણ કરે છે (૪) કોઈ

यिता, इति चतुर्थोभङ्गः४॥ चतुर्थभङ्गनिर्दिष्टः सारथिस्तु अश्वादीन् चालयत्येवेति ।

"एवमेवे"—त्यादि–एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एको योजयिता–संयमयोगेषु साधूनां प्रवर्तयिता भवति किन्तु नो वियोजयिता–अनुचितकार्यप्रवृत्तानां निवर्तयिता न भवति, इति प्रथमः १। तथा–एको वियोजयिता–अनुचितकार्यप्रवृत्तानां निवर्तयिता भवति किन्तु नो योजयिता–संयमयोगेषु प्रवर्तयिता न भवतीति द्वितीयः । २ । तथा–एको योजयिताऽपि–संयमयोगेषु प्रवर्तयिताऽपि वियोजयिताऽपि–अनुचितकार्यप्रवृत्तानां निवर्तयिताऽपि भवति,

---

ऐसा होता है जो–अश्वादिकों को रथमें न तो संलग्न करता है और न उससे उन्हें दूर–पृथक् ही करता है यह चतुर्थ भङ्ग है–४ यह चतुर्थ भङ्गवाला सारथि केवल अश्वादिकों को चलाता है ।

इसी तरहसे पुरुषजात जो चार कहे गये हैं उनका तात्पर्य ऐसा है–कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो संयमयोगोंमें साधुजनोंको प्रवृत्त ही करता है किन्तु—अनुचित कार्यमे प्रवृत्त को वहांसे हटानेवाला नहीं होताहै, ऐसा यह प्रथम भङ्ग है–१ तथा कोई एक साधु पुरुष ऐसा ही होताहै जो–अनुचित कार्यमें प्रवृत्त हुवे जनों को वहांसे हटानेवाला ही होता है किन्तु—संयमयोगोंमें प्रवृत्ति करानेवाला नहीं होता होता है ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है–२ तथा–कोई एक साधुपुरुष ऐसा है जो संयमयोगोंमें प्रवृत्ति भी कराता है और अनुचित कार्योंमें प्रवृत्तों को वहांसे हटाता भी है यह—ऐसा तृतीय भङ्ग है–३

એક સારથી અશ્વાદિકોને રથ સાથે યોજિત પણ કરતો નથી અને તેમને રથથી વિયોજિત (અલગ) પણ કરતો નથી. આ ચોથા પ્રકારનો સારથિ માત્ર અશ્વાદિકોને અથવા રથને ચલાવવાનું કામ જ કરે છે.

એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે, તેમનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઈ એક સાધુપુરુષ એવો હોય છે કે જે સાધુઓને સંયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત જ કરાવે છે, પણ અનુચિત્ત કાર્યમાં પ્રવૃત્ત થયેલા સાધુને તેમ કરતા અટકાવતો નથી. (૨) કોઇ એક સાધુપુરુષ એવો હોય છે કે જે અનુચિત કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થયેલા માણસોને તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરતા અટકાવે છે, પણ તેમને સંયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત કરનારો હોતો નથી. (૩) કોઇ એક સાધુપુરુષ એવો હોય છે કે જે માણસોને સંયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત પણ કરે છે અને અનુચિત કાર્યમાં પ્રવૃત્ત થનારને તે કાર્ય કરતાં અટકાવે છે પણ ખરો. (૪) કોઇ એક સાધુ પુરુષ એવો હોય છે કે જે

इति तृतीयः । ३ । तथा-एको नो योजयिता नो वियोजयिता भवति, स च साधारणशक्तिसम्पन्नो मुनिः ४। इति चतुर्थः ४। इति लोकोत्तरपुरुषमपेक्ष्य व्याख्यानम् । साधारणपुरुषविवक्षायां तु-एको योजयिता-क्वचित् कार्ये प्रवर्तयिता भवति, किन्तु नो वियोजयिता-ततो निवर्तयिता न भवतीति प्रथमः ।१। एवं शेषभङ्गत्रयमपि बोध्यम् ४।

"एवमेव हया" इत्यादि—एवमेव=यानवदेव हयाः - अश्वाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-"युक्तो नामैक" इत्यादि । एतत्सूत्रं यानसूत्रवद् व्याख्येयम् ।

तथा-कोई एक साधु पुरुष ऐसा भी होता है जो न संयमयोगोंमें प्रवृत्ति कराता है और न अनुचित कार्योंमें फसेको वहांसे हटाता ही है ऐसा चतुर्थ भङ्गवाला कोई एक साधारण शक्तिशाली मुनिजन होता है-४ इस प्रकारका यह व्याख्यान इन चार भङ्गोंका लोकोत्तर पुरुष की अपेक्षा लेकर किया गया है। साधारण पुरुषकी अपेक्षासे इनका व्याख्यान ऐसा है—जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो किसी कार्यमें किसीको प्रवृत्त करानेवाला ही होता है उससे उसे निवृत्त करानेवाला नहीं-१ अवशिष्ट तीन भंग इसी तरहसे समझ लेना चाहिये-४ एवामेव—इत्यादि यानके समान हय अश्वके भी चार प्रकार होते हैं जैसे कोई एक तो ऐसा अश्व होता है जो पहले भी रथादिमें जोता जाता है और बादमे भी-१ कोई एक पहलेही जोता

લેકોને સયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત પણ કરતો નથી અને અનુચિત કાર્ય કરનારને તેમ કરતા અટકાવતો પણ નથી કોઈ સાધારણ શકિતશાળી મુનિને આ ચોથા પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે. આ ચાર ભાંગાનું કથન લોકોત્તર પુરુષની અપેક્ષાએ કરવામાં આવ્યુ છે. હવે સામાન્ય પુરુષની અપેક્ષાએ ચારે ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે.

(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે કોઇ કાર્યમાં કોઇ વ્યક્તિને પ્રવૃત્ત કરાવનાર જ હોય છે, પણ તેમાંથી તેને નિવૃત્ત કરાવનાર હોતો નથી, બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ એજ પ્રમાણે સમજી લેવા.

"एवामेव" ઇત્યાદિ—યાનની જેમ અશ્વના પણ ચાર પ્રકાર હોય છે—(૧) કોઇ એક અશ્વ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ રથાદિની સાથે જોડી શકાય છે અને પછી પણ જોડી શકાય છે. (૨) કોઇ એક અશ્વ પહેલાં જોડી શકાય છે પણ પછી જોડી શકાતો નથી. (૩) કોઇ એક અશ્વ એવો

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-एवमेव=हयवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-युक्तो नामैक इत्यादि लौकिकलोकोत्तरपक्षमनुसृत्य व्याख्येयम्।

"एवं जुत्तपरिणए" इत्यादि। एवं-यानवद् "युक्तपरिणतो युक्तरूपो युक्तशोभः" इत्येतैः पदैः सार्कं हयसूत्रचतुर्भङ्गी बोध्या ४। "सव्वेसिं"-सर्वेषां प्रत्येकं भङ्गांश्चतुरश्चतुरः कृत्वाः एकैकभङ्गचतुष्टयस्य 'पडियक्खो' प्रतिपक्षो-दार्ष्टान्तिको भणनीयः। तत्र को दार्ष्टान्तिकः? इत्यपेक्षायामाह-'पुरिसजाया' इति। पुरुषजातानि-पुरुषजातरूपो दार्ष्टान्तिकः सर्वेषां भणनीय इति। सू० १३।

मूलम्—चत्तारि गया पण्णता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते ४, एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते ४, एवंजहा हयाणं तहा गयाणं भाणियव्वं, पडिवक्खो तहेव पुरिसजाया। सू० १४।

जाता बादमें नहीं-२ कोई एक पहले भी, बादमे भी, और भी समयमें जोता जाता है-३ तथा—कोई एक ऐसा होना है जो नतो पहले, न बादमें ही जोता जाता है-४। अथवा—इन युक्तयुक्त आदि भङ्गोंकी व्याख्या यान जैसी जाननी चाहिये और-यानके समान ही 'युक्त परिणत' 'युक्तरूप' और 'युक्त शोभा सम्पन्न' इन पदोंको घटित करके हय चतुर्भङ्गा जाननी चाहिये। और प्रत्येक चतुर्भङ्गी के समान प्रतिपक्ष दार्ष्टान्तिक जो पुरुषजात हैं वे भी चार प्रकारके हैं ऐमा जानना चाहिये॥ सू०१३॥

હોય છે કે જે પહેલાં જોડી શકાતો નથી પણ પછી જોડી શકાય છે. (૪) કોઈ એક અશ્વ એવો હોય છે કે જેને પહેલાં પણ જોડી શકાતો નથી અને પછી પણ જોડી શકાતો નથી. અથવા આ યુક્તાયુક્ત આદિ ભાંગાઓની વ્યાખ્યા યાનના સૂત્રમાં કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવી. અને યાનની જેમ જ યુક્તપરિણુત, યુક્તરૂપ અને યુક્તશોભા સંપન્ન આ પદોને યોજવાથી અશ્વ વિષયક બીજી ત્રણ ચતુર્ભંગી પણ બનાવી શકાય છે, અશ્વવિષયક જેવી ચાર ચતુર્ભંગી કહી છે એવી જ ચાર ચતુર્ભંગી દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષ વિષે પણ સમજી લેવી જોઈએ. ॥ સૂ ૧૩॥

छाया—चत्वारो गजाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-युक्तो नामैको युक्तः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-युक्तो नामैको युक्तः ४ एवं यथा हयानां तथा गजानामपि भणितव्यं, प्रतिपक्षस्तथैव पुरुषजातानि । सू० १४ ।

टीका—"चत्तारि गया" इत्यादि—सुगमम् ।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्याद्यपि स्पष्टमेव ।

"एवं जहा-हयाणं" इत्यादि—एवम्=इत्थं-प्रदर्शितक्रमेणेत्यर्थः, यथा हयानां युक्तादिपदयोजनया प्रत्येकं चत्वारश्चत्वारो भङ्गा भणिताः, तथा=तेन क्रमेण गजानामपि युक्तादि शोभान्तपदचतुष्टययोजनापुरस्सरं प्रत्येकं भङ्गचतुष्टयं भणितव्यम् ।

"पडिवक्खो तहेव पुरिसजाया" पुरुषजातरूपदार्ष्टान्तिकोऽपि तथैव भणितव्यः । सू० १४ ।

मूलम्—चत्तारि जुग्गायरिया पण्णत्ता, तं जहा-पंथजाई णाममेगे णो उप्पहजाई १, उप्पहजाई णाममेगे णो पंथजाई २, एगे पंथजाई वि उप्पहजाईवि ३, एगे णो पंथजाई णो उप्पहजाई ४, एवामेव चत्तारि पुरिसजाया । सू० १५ ।

"चत्तारि गया पण्णत्ता"—इत्यादि १४

सूत्रार्थ-गज-हाथी चार प्रकारकेहैं, युक्तयुक्त-१ युक्ताऽयुक्त-२ अयुक्तयुक्त-३ और अयुक्तायुक्त-४ । ऐसे ही पुरुष जात भी युक्तयुक्त आदिके भेदसे चार कहे गये हैं ४।

टीकार्थ - हयोंकी युक्तादि पद योजनासे बनाई गई चतुर्भङ्गी के जैसे युक्तादि पदसे लेकर युक्त शोभासम्पन्न तक के पदोंकी योजना से गजोंकी चतुर्भङ्गी बना लेनी चाहिये। और साथ साथ पुरुष जात भी चार हैं इन सब सूत्रोंका व्याख्यान हयसूत्र जैसा कर लेना चाहिये ॥सू०१४॥

સૂત્રાર્થ—"चत्तारि गया पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

ગજ (હાથી) ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) યુકતયુકત, (૨) યુક્તાયુકત, (૩) અયુકતયુકત અને (૪) અયુકતાયુકત એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ યુકતયુકત આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા.

ટીકાર્થ — અશ્વની જેમ જ યુકતપરિણત, યુક્તરૂપ અને યુક્ત શોભાસંપન્ન, આ પદોને યોજવાથી ગજવિષયક બીજી ત્રણ ચતુર્ભંગી પણ બને છે એજ પ્રકારની બીજી ત્રણ ચતુર્ભંગી દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષ વિષે પણ સમજવી. હયસૂત્ર (સૂ ૧૩)ના જેવો જ આ સૂત્રનો ભાવાર્થ સમજવો. સૂ. ૧૪

छाया—चतस्रो युग्याऽऽचर्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–पथियायि नामैकं नो उत्पथयायि १, उत्पथयायि नामैकं नो पथियायि २, एकं, पथियाय्यपि उत्पथयाय्यपि ३, एकं नो पथियायि नो उत्पथयायि ४, एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि । सू० १५ ॥

टीका—" चत्तारि जुग्गायरिया " इत्यादि — युग्याऽऽचर्याः – युगं–रथं वहतीति युग्यमश्वादि वाहनं तस्याऽऽचरणान्याचर्याः–वहनक्रियाः गमनक्रिया वा चतस्रः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–" पंथजाई " इत्यादि–एकं युग्यम्–अश्वादिवाहन पथियायि–पन्थानं–मार्गंयति=गच्छतीत्येवं शीलं तथा भवति, किन्तु नो उत्पथयायि–उत्सृष्टः–त्यक्तः पन्थाः उत्पथः=कुमार्गः, तं गच्छतीत्येवंशील मुत्पथयायि न भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १ ।

तथा–एकम् उत्पथयायि भवति, किन्तु नो पथियायि, इति द्वितीयः २।

" चत्तारि जुग्गायरिया पण्णत्ता "—इत्यादि १५

सूत्रार्थ–युग्याचर्या चार कही गई हैं, पथियायी नो उत्पथयायी–१ उत्पथयायी नो पथियायी–२ पथियायी भी–उत्पथयायीभी–३ और नो पथियायी नो उत्पथयायी–४ । इसी प्रकारसे पुरुप जात भी चार कहे गयेहैं

भावार्थ–युग्यपदसे रथ वहन करनेवाले अश्वादि वाहन यहां गृहीत हुवे हैं, इनकी जो वहनक्रिया या गमनक्रिया है वह आचर्या पदसे गृहीत है । इसे चार प्रकार होनेका तात्पर्य ऐसा है–कोई अश्वादि वाहन ऐसा होता है जिसका स्वभाव मार्गसे चलनेका कुमार्गसे नहीं होता है – १ यह पथियायी मार्ग में चलनेवाला का प्रथम भङ्ग है कोई एक ऐसा होता है जो कुमार्ग से चलने का स्वभाववाला होता है मार्ग से नहीं, २ यह द्वितीय भङ्ग है।

" चत्तारि जुग्गायरिया पण्णत्ता " ઈત્યાદિ—

યુગ્યાચર્યા (અશ્વાદિની ગમન ક્રિયા) ચાર પ્રકારની કહી છે—(૧) પથિયાયી નો ઉત્પથયાયી, (૨) ઉત્પથયાયી નો પથિયાયી, (૩) પથિયાયી અને ઉત્પથયાયી (૪) નો પથિયાયી નો ઉત્પથયાયી એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે.

ભાવાર્થ—યુગ્ય એટલે રથાદિને ખેંચનાર અશ્વાદિ તે અશ્વાદિની જે વહન ક્રિયા અથવા ગમનક્રિયાને 'આચર્યા' કહે છે તેના ચાર પ્રકાર હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઇ અશ્વાદિ યુગ્ય હોય છે જે માર્ગે ચાલવાના સ્વભાવવાળું હોય છે–કુમાર્ગે ચાલતું નથી. (૨) કોઇ એક અશ્વાદિ વાહન કુમાર્ગે જ ચાલવાના સ્વભાવવાળું હોય છે. માર્ગે તો ચાલતું જ નથી, (૩)

तथा—एकं पथियाय्यपि भवति, उत्पथयाय्यपि, इति तृतीयः ।३।

तथा-एकं नो पथियायि भवति नो उत्पथयायि, इति चतुर्थः । ४ ।

यद्यपि सामान्यसूत्रे युग्यस्याचर्याश्चतुर्विभजनीयत्वेनोक्तास्तथापि आश्रयाऽऽश्रययोरभेदविवक्षया चर्याऽऽश्रयो युग्यमेव चतुर्विधत्वेनोक्तमिति । इति द्रव्ययुग्यपक्षे । भावयुग्यपक्षेतु-युग्यशब्दस्योपचारिकत्वेन युग्यसदृशा इत्यर्थः, तत्सादृश्यं च संयमयोगभारवोढृतया साधुषु ग्राह्यं, तेषामाचर्या युग्याचर्याश्चतस्रः प्रज्ञप्ता इत्यर्थो बोध्यः, अत्रापि युग्यपदलक्षितस्य साधोराचर्याद्वारेण चातुर्विध्यं, तत्र प्रथमः पथियायी अप्रमत्तः, सदनुष्ठायित्वात् १, उत्पथयायी लिङ्गी

तथा-कोई अश्वादि वाहन ऐसा होता है जो मार्गसे जानेका स्वभाववाला होता है और कुमार्गसेभी-३ ऐसा यह तृतीय भङ्ग है । कोई एक अश्वादि न मार्गसे-न कुमार्गसे जानेका स्वभाववाला होता है-४ यद्यपि इस सामान्य सूत्रमें युग्यकी आचर्या चार प्रकार से कही गई है फिर भी आश्रय और आश्रेय में अभेद विवक्षासे आचर्याके आश्रयभूत युग्यही चार प्रकारके कहे गये हैं ऐसा समझना चाहिये । यह कथन द्रव्य युग्यके पक्षमें किया है, भावयुग्यके पक्षमें इन भङ्गोंका यों कथन करना चाहिये । युग्य शब्दको औपचारिक मानके युग्य जैसा जो हों वे युग्य हैं, ऐसे युग्य साधु होते हैं, क्योंकि-ये संयम भारको वहन करते हैं अतः इनमें-युग्य सादृश्य है इनकी चर्या युग्याचर्या है । यहां चर्या द्वारा युग्य पदोपलक्षित साधुमें चतुर्विधता इस

કોઈ અશ્વાદિ વાહન માર્ગ પર થઈને ચાલવાના સ્વભાવવાળું પણ હોય છે અને કુમાર્ગે ચલવાના સ્વભાવવાળું પણ હોય છે (૪) કોઈ એક અશ્વાદિ (યુગ્ય) માર્ગે થઈને જવાના સ્વભાવવાળું પણ હોતું નથી અને કુમાર્ગે ચાલવાના સ્વભાવવાળું પણ હોતું નથી, જો કે આ સામાન્ય સૂત્રમાં યુગ્યની આચર્યા (અશ્વાદિની ગમનક્રિયા) ચાર પ્રકારની કહી છે, છતાં પણ આશ્રય અને આશ્રેયમાં અભેદોપચારની અપેક્ષાએ આચર્યાના આશ્રયભૂત યુગ્ય (અશ્વાદિનાં) જ અહીં ચાર પ્રકાર સમજવા જોઈએ. આ કથન દ્રવ્યયુગ્યને અનુલક્ષીને કરવામાં આવ્યુ છે, ભાવયુગ્યની અપેક્ષાએ આ ભાંગાઓનું કથન આ પ્રમાણે થવું જોઇએ યુગ્ય શબ્દને ઔપચારિક ગણીને યુગ્ય જેવા જે હોય તેને પણ યુગ્ય કહી શકાય. સંયમભારનું વહન કરનાર સાધુને જ એવાં યુગ્યસમાન ગણી શકાય. એવાં સાધુની આચર્યાને યુગ્યાચર્યા કહી શકાય અહીં આચર્યા દ્વારા યુગ્ય પદોપલક્ષિત સાધુમાં ચતુર્વિધતાનું આ પ્રમાણે

असदनुष्ठायित्वात् २, उभययायी प्रमत्तः, उभयानुष्ठायित्वात् ३, अनुभययायी सिद्धः, अनुभयानुष्ठायित्वादिति ४।

"एवामेवे"—त्यादि–एवमेव–युग्यवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकः–कश्चित् पुरुषः पथियायी–सुशास्त्रज्ञानसम्पन्न–सुगुरूपदिष्टसुदेवाऽऽराधनादिमार्गगामी भवति, किन्तु नो उत्पथयायी=कुशास्त्रज्ञानोपहतकुगुरूपदिष्ट कुदेवाऽऽराधनादिकुपथगामी नो भवति १ एवं शेषभङ्गत्रयं बोध्यम् । ४।

प्रकार है—कोई एक साधु ऐसा होता है जो पथियायी सदनुष्ठान करनेवाला अप्रमत्त होता है–१ कोई एक असदनुष्ठान करनेवाला उत्पथयायी प्रमत्त होता है–१ केवल साधुलिङ्गधारी होता है–२ कोई एक सद्–असद् अनुष्ठान करनेवाला उभययायी प्रमत्त और अप्रमत्त भी होता है–३ कोई एक अनुभययायी होता है क्योंकि—वह उभय प्रकारके अनुष्ठानमें एक का भी अनुष्ठान करनेवाला नहीं होता है ऐसा वह सिद्ध होता है–४ । युग्य के सम्बन्ध से सम्बद्ध पुरुष जातभी चार होते हैं, जैसे—कोई एक पुरुष पथियायी होता है सुशास्त्र ज्ञान सम्पन्न गुर्वादि उपदेशसे सुदेवकी आराधना आदिके मार्गमें गमन स्वभाववाला होता है, परन्तु उत्पथयायी नहीं होता है कुशास्त्रज्ञानसे उपहत कुगुरु द्वारा प्रतिपादित कुदेवाराधन आदि कुमार्गमें जानेवाला नहीं होता है–१ इसी प्रकारसे शेष तीन भङ्ग भी समझना चाहिये । यद्वा

પ્રતિપાદન કરી શકાય—(૧) કોઈ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે પથિયયી હોય છે એટલે કે સદનુષ્ઠાન કરનારો અપ્રમત્ત સંયત હોય છે (૨) કોઈ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે અસદનુષ્ઠાન કરનાર ઉત્પથયાયી પ્રમત્ત હોય છે એટલે કે કેવળ વેષધારી સાધુ જ હોય છે. (૩) કોઈ એક સાધુ સદનુષ્ઠાન અને અસદનુષ્ઠામ કરનારો ઉભયયાયી પ્રમત્ત અને અપ્રમત્ત હોય છે (૪) કોઈ એક સાધુ અનુભયયાયી હોય છે, કારણ કે તે સદઅનુષ્ઠાન પણ કરતો નથી અને અસદનુષ્ઠાન પણ કરતો નથી. એવો તે સિદ્ધ હોય છે

યુગ્યના દૃષ્ટાન્તને અનુરૂપ ચાર પ્રકારના પુરુષો હોય છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ પથિયાયી હોય છે એટલે કે સુશાસ્ત્રજ્ઞાનસંપન્ન, ગુરુ આદિના ઉપદેશ રૂપ માર્ગે અને સુદેવની આરાધનાને માર્ગે ગમન કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે, પરન્તુ ઉત્પથયાયી હોતો નથી, એટલે કે કુશાસ્ત્રજ્ઞાનને કુમાર્ગે, કુગુરુ પ્રતિપાદિત કુદેવારાધના આદિ કુમાર્ગે ગમન કરનારો હોતો નથી. એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા.

यद्वा-पथ्युत्पथशब्दौ स्वसिद्धान्त-परसिद्धान्तपरौ, गत्यर्थस्य 'या' धातोः 'ये गत्यर्थास्ते ज्ञानार्थाः' इति बोधार्थकत्वमपि, ततश्चायमर्थः-पथियायी-स्वसिद्धान्तज्ञायी, उत्पथयायी-परसिद्धान्तज्ञायीति, शेषं प्राग्वदूहनीयम् । सू० १५ ।

मूलम्-चत्तारि पुप्फा पण्णत्ता, तं जहा-रूवसंपन्ने णाममेगे णो गंधसंपन्ने १, गंधसंपन्ने णाममेगे णो रूवसंपन्ने २, एगे रूवसंपन्नेवि गंधसंपन्नेवि ३, एगे णो रूवसंपन्ने णो गंधसंपन्ने ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता तं जहा-रूवसंपन्ने णाममेगे णो सीलसंपन्ने ४। सू० १६ ।

छाया—चत्वारि पुष्पाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा रूपसम्पन्नं नामैकं नो गन्धसम्पन्नं १, गन्धसम्पन्नं नामैकं नो रूपसम्पन्नम् २, एकं रूपसम्पन्नमपि गन्धस-

---

पथी और उत्पथ ये दो शब्द स्वसिद्धान्त परसिद्धान्त परक हैं, क्योंकि गत्यर्थक धातु ज्ञानार्थक भी होता है, यहां-"या" धातु गत्यर्थक है अतः-यह बोधार्थक भी हो सकता है, इसलिये-"पथियायी" इस भङ्गका अर्थ स्वसिद्धान्ताऽनुयायी, तथा-"उत्पथयायी" इसका परसिद्धान्तयायी ऐसा भी अर्थ होता है । इस प्रकारका अर्थ करके शेष भङ्ग भी समझ लेना चाहिये ॥सू०१५॥

"चत्तारि पुप्फा पण्णत्ता इत्यादि"—१६

सूत्रार्थ-चार प्रकारके पुष्प कहे गयेहैं, जैसे कोई एक पुष्प ऐसा होता है जो केवल रूप सम्पन्न ही होता है-गन्ध सम्पन्न नहीं-१ कोई एक पुष्प केवल गन्धसम्पन्नही होता है रूप सम्पन्न नहीं-२ तथा-कोई

અથવા—'પથી' પદ સ્વસિદ્ધાન્તવાચક અને 'ઉત્પથ' પદ પરસિદ્ધાંતવાચક છે, કારણ કે ગત્યર્થક ધાતુ જ્ઞાનાર્થક પણ હોય છે અહીં 'યા" ધાતુ ગત્યર્થક હોવાથી બોધાર્થક પણ સંભવી શકે છે. તેથી "પથિયાયી" એટલે સ્વસિદ્ધાન્તનો અનુયાયી અને "ઉત્પથયાયી" એટલે પરસિદ્ધાન્તનો અનુયાયી, આ પ્રકારનો અર્થ પણ થાય છે આ પ્રકારના અર્થને અનુલક્ષીને બાકીના ભાંગા સમજી લેવા જોઇએ. । સૂ ૧૫ ।

"चत्तारि पुप्फा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

ચાર પ્રકારના ફૂલો કહ્યાં છે—(૧) કોઇ એક ફૂલ રૂપ સંપન્ન હોય છે, પણ ગધસંપન્ન હોતું નથી. (૨) કોઇ ફૂલ માત્ર ગંધસંપન્ન જ હોય છે, પણ રૂપસંપન્ન હોતું નથી. (૩) કેઇ એક ફૂલ રૂપસંપન્ન પણ હોય

सम्पन्नमपि ३, एकं नो रूपसम्पन्नं नो गन्धसम्पन्नम् ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–रूपसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः ४, । सू०१६।

टीका—" चत्तारि पुप्फा " इत्यादि—पुष्पाणि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकं पुष्पं रूपसम्पन्नं–दर्शने सुन्दरं भवति, किन्तु नो गन्धसम्पन्नं=सुगन्धि न भवति १, एवं शेषभङ्गत्रयं स्वयं विवरणीयम् । ४। क्रमेण पलाश–बकुल–जाती–बदरीपुष्पाणि तदुदाहरणानि ।

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—एवमेव=पुष्पवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकः पुरुषो रूपसम्पन्नः=सुन्दरसंस्थानवान् भवति, किन्तु नो शीलसम्पन्नः–सद्वृत्तवान् न भवति १, एवं शेषभङ्गत्रिकं स्वयमूहनीयम् ४। । सू० १६ ।

एक पुष्प रूपसम्पन्न भी और गन्ध सम्पन्नभी होता है–३ और कोई एक नतो रूपसम्पन्न न गन्ध सम्पन्न ही होताहै–४ इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक पुरुष रूपसम्पन्न होता है पर–शील सम्पन्न नहीं–१ इत्यादि–४

सूत्रमें पुष्प सम्बन्धी चतुर्भङ्गीका तात्पर्य है कि कोई एक पुष्प रूप सम्पन्न तो होता है अर्थात्–देखनेमें सुहावना होता है किन्तु–सुगन्धवाला नहीं, जैसे पलाश पुष्प १ इसी प्रकारसे शेष भङ्गत्रय बनाते समय दृष्टान्त के स्थान पर बकुल जाती–बदरिका पुष्पोंको रख लेना चाहिये–४ इसी तरहसे पुरूषजातमें कोई एक पुरुष देखनेमें अति

છે અને ગંધસંપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઈ એક ફૂલ રૂપસંપન્ન પણ હોતું નથી અને ગંધસંપન્ન પણ હોતું નથી.

એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ શીલસંપન્ન હોતો નથી એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા.

પુષ્પ વિષયક ચતુર્ભંગીનું સ્પષ્ટીકરણ—(૧) કોઈ એક પુષ્પ દેખાવમાં સુંદર હોય છે. પણ સુગંધવાળું હોતું નથી. જેમકે પલાશ પુષ્પ.

એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા. ગંધસંપન્ન ન રૂપસંપન્ન પુષ્પ તરીકે બકુલ પુષ્પ ગણાવી શકાય. ગંધ અને રૂપસંપન્ન પુષ્પમાં ગુલાબ પુષ્પ ગણાવી શકાય. ન ગંધ સંપન્ન અને ન રૂપસંપન્ન ફૂલમાં બદરિકા પુષ્પ ગણાવી શકાય. એજ પ્રમાણે પુરુષોના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે સમજવા—

मूलम्—चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—जाइसंपन्ने णाममेगे णो कुलसंपन्ने० ४। ॥१॥

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, जाइसंपण्णे णाममेगे णो बलसंपन्ने, बलसंपन्ने णाममेगे णो जाइसंपन्ने० ४, (२)। एवं जाईए रूवेण ४ चत्तारि, आलावगा (३), एवं जाईए सुएण ४ (४), एवं जाईए सीलेण ४ (५), एवं जाईए चरित्तेण ४ (६), एवं कुलेण बलेण ४ (७), एवं कुलेण रूवेण ४ (८), एवं कुलेण सुएण ४ (९), कुलेण सीलेण ४ (१०), कुलेण चरित्तेण ४ (११)॥

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—बलसंपण्णे णाममेगे णो रूवसंपण्णे ४ (१२) एवं बलेण सुएण ४ (१३) एवं बलेण सीलेण (१४) एवं बलेण चरित्तेण ४ (१५)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—रूवसंपन्ने णाममेगे णो सुयसंपण्णे ४ (१६) एवं रूवेण सीलेण ४ (१७) रूवेण चरित्तेण ४ (१८)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—सुयसंपन्ने णाममेगे णो सीलसंपण्णे ४ (१९) एवं सुएण चरित्तेण य ४ (२०)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—सीलसंपन्ने णाममेगे णो चरित्तसंपन्ने ४ (२१) एया एक्कवीसं चउभंगीओ भाणियव्वा ॥ सू० १७ ॥

सुन्दर परन्तु सद्वृत्तवाला नहीं होता है १ बाकीके तीन भङ्ग स्वयं समझना चाहिये ॥१६॥

---

(૧) કોઈ એક પુરુષ દેખાવમાં અતિ સુંદર હોય છે, પણ સદ્‌વૃત્તિવાળો હોતો નથી, એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ પ્રકારો પણ સમજી લેવા. ॥સૂ. ૧૬॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः ४ (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्न, बलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः ४ (२) एवं जात्या रूपेण चत्वार आलापकाः (३) एवं जात्या श्रुतेन ४ (४) एवं जात्या शीलेन ४ (५) एवं जात्या चारित्रेण ४ (६) एवं कुलेन बलेन ४ (७) एवं कुलेन रूपेण ४ (८) एवं कुलेन श्रुतेन ४ (९) कुलेन शीलेन ४ (१०) कुलेन चारित्रेण ४ (११)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-बलसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः ४ (१२) एवं बलेक श्रुतेन ४ (१३) एवं बलेन शीलेन ४ (१४) एवं बलेन चारित्रेण ४ (१५)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-रूपसम्पन्नो नामैको नो श्रुतसम्पन्नः ४ (१६) एवं रूपेण शीलेन ४ (१७) रूपेण चारित्रेग ४ (१८)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-श्रुतसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः ४ (१९) एवं श्रुतेन चारित्रेण च ४ (२०)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-शीलसम्पन्नो नामैको नो चारित्रसम्पन्नः ४ (२१) एत एकविंशतिश्चतुर्भङ्गा भणितव्याः। सू० १७ ॥

टीका—अथ पुष्पस्यैव दार्ष्टान्तिकरूपाणि पुरुषसूत्राणि प्राह—

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—स्पष्टम्। एकः पुरुषो जातिसम्पन्नः-उत्तमजातिको भवति, परन्तु नो कुलसम्पन्नः-उत्तमकुलसम्पन्नो न भवति १, एकः कुलसम्पन्नो भवति न जातिसम्पन्नः २, एक उभयसम्पन्नः ३, एक उभयवर्जितो भवति ४। इति प्रथमा चतुर्भङ्गी ।१॥

" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता " इत्यादि—१७

पुरुष जात चार है जातिसम्पन्न नो कुल सम्पन्न-१ अर्थात् कोई एक उत्तम जातिवाला होता है पर उत्तम कुलका नहीं-१ दूसरा कोई एक उत्तम कुलका होता है पर उत्तम जातिका नहीं-२ कोई एक पुरुष उत्तम कुलका भी और उत्तम जातिका भी होता है-३ तथा-कोई एक पुरुष उभय वर्जित होता है न उत्तम कुलका न उत्तम जातिका ४

" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता " ईत्यादि--

ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઇ પુરુષ ઉત્તમ જાતિવાળો હોય છે, પણ ઉત્તમ કુળવાળો હોતો નથી. (૨) કોઇ ઉત્તમ કુળવાળો હોય છે પણ ઉત્તમ જાતિવાળો હોતો નથી (૩) કોઈ એક પુરુષ ઉત્તમ કુળવાળો પણ હોય છે અને ઉત્તમ જાતિવાળો પણ હોય છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ ઉત્તમકુળ રહિત અને ઉત્તમ જાતિ રહિત હોય છે. ।૧।

पुनः "चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—स्पष्टम्, एकः पुरुषो जातिसम्पन्नो भवति किन्तु नो बलसम्पन्नः—वीर्यसम्पन्नो न भवति १, एको बलसम्पन्नो भवति नो जातिसम्पन्नः २, एक उभयसम्पन्नः ३, एक उभयवर्जितो भवति, इति द्वितीया चतुर्भङ्गी । २ ।

"एवं जाईए रूवेण" इति—एवम्=अमुना प्रकारेण जात्या सह रूपेण युक्ताश्चत्वार आलापका बोध्याः ? तथाहि—जातिसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १, रूपसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः ४। इति तृतीया चतुर्भङ्गी ३।

"एवं जाईए सुएण' इति—एवम्=अनन्तरोक्तप्रकारेण जात्या सह श्रुतेन युक्ताश्चत्वार आलापकाः, तथाहि—जातिसम्पन्नो नामैको नो श्रुतसम्पन्नः १,

---

फिर भी—पुरुषजाति चार कहे गये हैं जैसे—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो जाति सम्पन्न होता है, पर बल सम्पन्न नहीं—१ अर्थात् वीर्य सम्पन्न नहीं होता है। कोई बलसम्पन्न है पर—जाति सम्पन्न नहीं—२ कोई एक उभय सम्पन्न होता है—३ और कोई एक उभयवर्जित होता है—४ एवं जाईए रूवेण—इत्यादि इसी प्रकार तरहसे जातिके साथ रूपसे युक्त चार आलापक जानना चाहिये, जैसे कोई एक पुरुष जातिसे सम्पन्न होता है पर रूपसे सम्पन्न नहीं—१ कोई एक रूपसे सम्पन्न होता है पर जाति सम्पन्न नहीं—२ कोई एक जाति और रूपसे भी सम्पन्न होता है—३ कोई एक न तो जाति सम्पन्न ही न रूप सम्पन्न हीहोता है- ४ "एवं जाईए सुएण" इसी तरहसे जातिसे श्रुतसे युक्त चार आलापक होते हैं, जैसे कोई एक पुरुष

નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ ઉત્તમ જાતિસંપન્ન હોય છે પણ બળસંપન્ન (વીર્યસંપન્ન) હોતો નથી. (૨) કોઇ બળસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ બળસંપન્ન અને જાતિસંપન્ન હોય છે. (૪) કોઇ બળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી. । ૨ ।

"एव जाईए रूवेण" એજ પ્રમાણે જાતિની સાથે રૂપના યોગથી ચાર વિકલ્પો બને છે, જેમકે (૧) કોઈ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે, પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઇ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને રૂપસંપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઇ જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી. ।૩।

"एवं जाईए सुएण" એજ પ્રમાણે જાતિ અને શ્રુતના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે,

श्रुतसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि श्रुतसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो श्रुतसम्पन्नः ४। इति चतुर्थीचतुर्भङ्गी ।४।

"एवं जाईए सीलेण" इति–एवं–पूर्वोक्तरीत्या जात्या सह शीलेन युक्ताश्चत्वार आलापका बोध्याः, तथाहि–जातिसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः १, शीलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि शीलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो शीलसम्पन्नः ४। इति पञ्चमी चतुर्भङ्गी ५।

"एवं जाईए चरित्तेण" इति–एवं पूर्वोक्तप्रकारेण जात्या सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वार आलापका बोध्याः, तथाहि–जातिसम्पन्नो नामैको नो चारित्रसम्पन्नः १, चारित्रसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि चारित्रसम्पन्नोऽपि३, एको नो जातिसम्पन्नो नो चारित्रसम्पन्नः४।इति षष्ठी चतुर्भङ्गी६।

जातियुक्त होता है पर श्रुतसे सम्पन्न नहीं–१ कोई एक श्रुतसम्पन्न होता है तो जातिसम्पन्न नहीं-२ कोई एक जातिसे भी और श्रुतसे भी सम्पन्न होता है–३ और कोई एक न तो जातिसम्पन्न न श्रुतसम्पन्न होता है–४।

"एवं जाईए सीलेण"—इत्यादि इसी प्रकार शीलयुक्त जातिके चार आलापक होते हैं, कोई एक पुरुष जाति सम्पन्न होता है पर–शील सम्पन्न नहीं–१ कोई एक पुरुष शील सम्पन्न होता है तो जाति सम्पन्न नहीं–२ कोई एक जाति और शील सम्पन्न भी होता है–३ कोई एक नतो जाति सम्पन्न ही होता है न शील सम्पन्न ही–४। "एवं जाइए चरित्तेणं"—इसी प्रकार जातिके साथ चरित्रसे युक्त चार भङ्ग होते हैं, जैसे कोई एक पुरुष जाति सम्पन्न होता है तो चारित्र

પણ શ્રુતસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ શ્રુતસંપન્ન હોય છે, પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઇ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને શ્રુતસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઇ જાતિસંપન્ન પણ નથી હોતો, અને શ્રુતસંપન્ન પણ હોતો નથી ।૪।

"एव जाईए सीलेण" એજ પ્રમાણે જાતિ અને શીલના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે, પણ શીલસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઇ શીલસંપન્ન હોય છે, પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને શીલસંપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઈ જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને શીલસંપન્ન પણ હોતો નથી. ।૫।

"एवं जाईए चरित्तेणं" એજ પ્રમાણે જાતિ અને ચારિત્રના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઇ પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે પણ ચારિત્રસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ ચારિત્રસંપન્ન હોય છે પણ જાતિ-

"एवं कुलेण वलेण" इति–एवं कुलेन सह बलेन युक्ताअपि चत्वारो भङ्गा बोध्याः, तथाहि-कुलसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्न १, बलसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः २, एकः कुलसम्पन्नोऽपि बलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो कुलसम्पन्नो नो बलसम्पन्नः ४। इति सप्तमी चतुर्भङ्गी। ७।

"एवं कुलेण रूवेण" इति–एवं कुलेन सह रूपेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः, इत्यष्टमी चतुर्भङ्गी। ८।

एवं कुलेन सह श्रुतेन युक्ताश्चत्वारो भङ्गाः। इति नवमी। ९।

सम्पन्न नही–३ कोई एक चारित्र सम्पन्न होता है तो जाति सम्पन्न नहीं–२ कोई एक जाति सम्पन्न होता है और चारित्र से भी–३ कोई एक जाति–चारित्र उभयसे विकल होता है–४। "एवं कुलेण वलेण"—इसी प्रकार कुल और बलके योगसे चार भङ्ग होते हैं, कोई एक पुरुप कुल सम्पन्न होता है तो बल सम्पन्न नहीं–१ कोई एक बल सम्पन्न होता है तो कुल सम्पन्न नहीं–२ कोई एक कुल सम्पन्न होता है और बल सम्पन्न भी–३ कोई एक न तो बल सम्पन्न न कुल सम्पन्न ही होता है–४ "एवं कुलेण रूवेण"—इसी प्रकार कुल और रूपसे चार भङ्ग होते हैं। कोई एक पुरुप कुल सम्पन्न होता तो रूपसम्पन्न नही–१ कोई एक रूप सम्पन्न होता है तो कुलसम्पन्न नहीं–२ कोई एक उभय सम्पन्न होता है–३ कोई एक उभय विहीन होता है–४।

સંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ જાતિ અને ચારિત્ર બન્નેથી સંપન્ન હોય છે (૪) કોઈ જાતિ અને ચારિત્ર બન્નેથી વિહીન હોય છે. ।૬।

"एव कुलेण वलेण" એજ પ્રમાણે કુળ અને બળના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઇ પુરુષ કુળસંપન્ન હોય છે, પણ બળસંપન્ન હોતો નથી, (૨) કોઇ બળસંપન્ન હોય છે પણ કુળસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઇ બળ અને કુળ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે. (૪) કોઈ બળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને કુળસંપન્ન પણ હોતો નથી. ।૭।

"एवं कुलेण रूवेण" એજ પ્રમાણે કુળ અને રૂપના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઇ કુળસંપન્ન તો હોય છે પણ રૂપ-સંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઇ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ કુળસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઇ કુળસંપન્ન પણ હોય છે અને રૂપસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઇ કુળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી. ।૮। એજ પ્રમાણે કુળ અને શ્રુતના યોગથી પણ ચાર ભાંગા બને છે. ।૯।

कुलेन सह शीलेन युक्ताश्चत्वारो भङ्गा इति दशमी । १० ।

कुलेन सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा इत्येकादशी । ११ ।

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-बलसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १. रूपसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्नः २, एको बलसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३, एको नो बलसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः ४। इति द्वादशी । १२ ।

" एव बलेण सुएण " इति—एव बलेन सह श्रुतेन युक्ता अपि चत्वारो भङ्गा बोध्याः इति त्रयोदशी । १३ ।

" एवं बलेण सीलेण " इति-एवं बलेन सह शीलेन युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः । इति चतुर्दशी । १४ ।

इसी प्रकार कुल और श्रुतके योगमें चार भङ्ग होते है-४ इसी प्रकार कुल शील से भी चार भंग होते हैं-४ इसी प्रकार कुल चारित्र युक्त चार भङ्ग होते हैं-४ इस प्रकारसे यहां तक ग्यारह चतुर्भङ्गी है। ११

पुनश्च—" चत्तारि पुरिसजाया "—पुरुष जात चार हैं, जैसे कोई एक पुरुष बल सम्पन्न है तो रूप सम्पन्न नहीं-१ कोई एक रूप सम्पन्न होता है तो बल सम्पन्न नहीं-२ कोई एक बल सम्पन्न और रूप सम्पन्न भी होताहै-३ कोई एक न तो बल सम्पन्न न रूप सम्पन्न होता है-४, १२

" एवं बलेण सुएण "—इसी प्रकार बल श्रुतके योगमें चार भङ्ग होते हैं-४, १३

" एवं बलेण सीलेण "—ऐसे बल और शील संयोगसे चार भङ्ग होते हैं-४, १४

એજ પ્રમાણે કુળ અને શીલના યોગથી પણ ચાર ભાગા બને છે. ।૧૦।

એજ પ્રમાણે કુળ અને ચારિત્રના યોગથી પણ ચાર ભાંગા બને છે ।૧૧। આ રીતે અહીં સુધીમાં ૧૧ ચતુર્ભંગી પ્રકટ કરવામાં આવી છે.

" चत्तारि पुरिसजाया " ચાર પ્રકારના પુરુષો હોય છે— ૧) કોઇ પુરુષ બળસંપન્ન હોય છે પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ બળસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ બળ અને રૂપ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે. (૪) કોઇ બળસપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી ।૧૨।

" एवं बलेण सुएण " એજ પ્રમાણે બળ અને શ્રુતના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે. ।૧૩।

,' एव बलेण सीलेण " એજ પ્રમાણે બળ અને શીલના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે. ।૧૪।

"एवं बलेण चरित्तेण" इति-एवं बलेन सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः। इति पञ्चदशी। १५।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-रूपसम्पन्नो नामैको नो श्रुतसम्पन्नः १, श्रुतसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः २, एको रूपसम्पन्नोऽपि, श्रुतसम्पन्नोऽपि ३, एको नो रूपसम्पन्नो नो श्रुतसम्पन्नः ४। इति षोडशी। १६।

"एवं रूवेण सीलेण" इति-एवं रूपेण सह शीलेन युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः। इति सप्तदशी। १७।

"रूवेण चरित्तेण" इति-रूपेण सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः इत्यष्टादशी। १८।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-श्रुतसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः १, शीलसम्पन्नो नामैको नो श्रुत-

---

"एवं बलेण चरित्तेण"—इसी प्रकार बल चारित्रसे चार भङ्ग होते हैं-४, १५

'चत्तारि पुरिष जाया'—पुरुष जात चार कहे गयेहैं, जैसे कोई एक पुरुष रूप सम्पन्न होता है श्रुत सम्पन्न नहीं-१ कोई एक श्रुत सम्पन्न होता है रूप सम्पन्न नहीं-२ कोई एक रूप और श्रुत सम्पन्न भी-३ और कोई एक दोनोंसे रहित होता है-४, १६ "एवं रूवेण सीलेण" इसी प्रकार रूप शील से युक्त ४ भङ्ग होते हैं, १७ "रूवेण चरित्तेण" इसी तरह रूप चारित्र युक्त ४ भङ्ग होते हैं—१८

"एवं बलेण चरित्तेण" એજ પ્રમાણે બળ અને ચારિત્રના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે. ।૧૫।

"चत्तारि पुरिस जाया" પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ રૂપસંપન્ન હોય છે, પણ શ્રુતસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઇ શ્રુતસંપન્ન પણ હોય છે પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઇ શ્રુતસંપન્ન પણ હોય છે અને રૂપસંપન્ન પણ હોય છે, (૪) કોઇ રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી અને શ્રુતસંપન્ન પણ હોતો નથી ।૧૬।

"एवं रूवेण सीलेण" એજ પ્રમાણે રૂપ અને શીલના યોગવાળા ચાર ભાંગા બને છે. ।૧૭। "एवं रूवेण चरित्तेण" એજ પ્રમાણે રૂપ અને ચારિત્રના યોગથી પણ ચાર ભાંગા બને છે. ॥ ૧૮॥

सम्पन्नः २, एकः श्रुतसम्पन्नोऽपि शीलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो श्रुतसम्पन्नो नो शीलसम्पन्नः ४। इत्येकोनविंशा चतुर्भङ्गी । १९।

" एवं सुएण चरित्तेण य " इति-एवं श्रुतेन सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः । इति विंशतितमा चतुर्भङ्गी । २० ।

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-शीलसम्पन्नो नामैको नो चारित्रसम्पन्नः १, चारित्रसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्न २, एकः शीलसम्पन्नोऽपि चारित्रसम्पन्नोऽपि ३, एको नो शीलसम्पन्नो नो चारित्रसम्पन्नः ४। इत्येकत्रिंशतितमा चतुर्भङ्गी। २१। इत्थं जाति १

पुनश्च—" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता " पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे कोई एक पुरुष श्रुत सम्पन्न होता है शील सम्पन्न नहीं-१ कोई एक शील सम्पन्न होता है तो श्रुतसम्पन्न नहीं-२ कोई एक श्रुत सम्पन्न भी शील सम्पन्न भी होता है-३ कोई एक न तो श्रुत सम्पन्न न शील सम्पन्न होता है-४ १९

" एवं सुएण चरित्तेणय "—इसी प्रकार श्रुत चारित्र युक्त ४ भङ्ग होते हैं -२०

पुनश्च—" चत्तारि पुरिसजाया "—इत्यादि पुरुष जात चार हैं, जैसे कोई एक मनुष्य शील सम्पन्न होता है चारित्र सम्पन्न नहीं-१ कोई एक चारित्र सम्पन्न होता है शील सम्पन्न नहीं-२ कोई एक शील से चारित्र से भी सम्पन्न होता है-३ कोई एक न तो शीलसे न चारित्रसे ही सम्पन्न होता है-४ यह एकीसवीं चतुर्भङ्गी है । इस प्रकार

" चत्तारि पुरिसजाया पण्णसा " પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ શ્રુતસંપન્ન હોય છે પણ શીલસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઇ શીલસંપન્ન હોય છે પણ શ્રુતસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઇ શ્રુત અને શીલ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે (૪) કોઈ શ્રુત અને શીલ બન્નેથી વિહીન હોય છે. ।૧૯।

" एवं सुएण चरित्तेणय " એજ પ્રમાણે શ્રુત અને ચારિત્રના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે ।૨૦।

" चत्तारि पुरिसजाया " પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઈ પુરુષ શીલસંપન્ન હોય છે પણ ચારિત્રસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ ચારિત્રસંપન્ન હોય છે, પણ શીલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ શીલ અને ચારિત્ર બન્નેથી સંપન્ન હોય છે. (૪) કોઈ શીલ અને ચારિત્ર બન્નેથી વિહીન હોય છે. આ ૨૧ મી ચતુર્ભંગી છે. ।૨૧।

कुल २ बल ३ रूप ४ श्रुत ५ शील ६ चारित्रे ७ तिपदसप्तके परम्परं द्विकसंयोगेनैक विंशतिश्चतुर्भङ्गिकाः २१ भणितव्याः । एषां व्याख्या सुगमा । सू० १७ ।

मूलम्—चत्तारि फला पण्णत्ता, तं जहा—आमलगमहुरे १, मुद्दिआमहुरे २, खीरमहुरे ३, खंडमहुरे ४। एवामेव चत्तारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा—आमलगमहुर फलसमाणे जाव खंडमहुरफलसमाणे ॥ सू० १८ ॥

छाया--चत्वारि फलानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—आमलकमधुरं १, मृद्वीकामधुरं २, क्षीरमधुरं ३, खण्डमधुरम् ४। एवं चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आमलकमधुरफलसमानः यावत् खण्डमधुरफलसमानः । सू० १८ ॥

टीका--" चत्तारि फला " इत्यादि—फलानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—आमलकमधुरम्—आमलकी—धात्रीतरुविशेषः, तस्या इदम् (फलं) आमलकं, तदिव

जाति-१ कुल-२ बल-३ रूप-४ श्रुत-५ शील-६ और चारित्र इन सात पदोंमें परस्पर द्विक संयोगसे ये २१ चतुर्भङ्गी होती हैं सुगम हैं । १७

" चत्तारि फला पण्णत्ता "—इत्यादि

फल चार प्रकारके हैं—आमलक मधुर-१ मृद्वीक मधुर-२ क्षीर मधुर-३ खण्ड मधुर-४ इसी प्रकार आचार्य भी चार प्रकारकेहैं, आमलक मधुर फल समान-१ यावत् कोई एक खण्ड मधुर फल समान-४ । इस सूत्र द्वारा प्रतिपादित आमलक मधुरका तात्पर्य ऐसा है—आमलकी नामका एक वृक्ष विशेष होता है, इसका दूसरा नाम धात्रीतरु है इस का जो फल है वह आमलक है । जो फल इसका जैसा मधुर

આ રીતે (૧) જાતિ, (૨) કુળ, (૩) બળ, (૪) રૂપ, (૫) શ્રુત, (૬) શીલ અને (૭) ચારિત્ર આ સાત પદોનો અનુક્રમે પછીના પદો સાથે દ્વિક સંયોગ કરવાથી કુલ ૨૧ ચતુર્ભંગી બને છે. ભાવાર્થ સુગમ છે ાસૂ ૧૭ા

" ચત્તારિ ફલા પણ્ણત્તા " ઇત્યાદિ (સૂ. ૧૮)

ફલના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) આમલક મધુર, (૨) મૃદ્વીક મધુર (૩) ક્ષીરમધુર અને (૪) ખંડમધુર એજ પ્રમાણે આચાર્યના પણ " આમલક મધુર ફલ સમાન "થી લઈને 'ખંડમધુરફલસમાન' પર્યન્તના ચાર પ્રકાર સમજવા. આમલક મધુરનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે--આમલકી (આંબળાનું ઝાડ) નામનું એક વૃક્ષ થાય છે. તેનું બીજું નામ

तदेव, वा, मधुरमामलकमधुरम् १, तथा-मृद्वीकामधुरं-मृद्वीका=द्राक्षा सेव सैव वा मधुरं तथा २, तथा-क्षीरमधुरं क्षीरं-दुग्धं तदिव मधुरं क्षीरमधुरम् ३, तथा-खण्डमधुरं-खण्डं=शर्करा तदिव मधुरं खण्डमधुरम् ४, क्रमेणेमानि चत्वारि अल्प-बहु-बहुतर-बहुतममधुराणि भवन्ति।

"एवामेव चत्तारि आयरिया" इत्यादि-एवमेव-उक्तफलवदेव आचार्याश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-आमलकमधुरफलसमानः, यावत्पदेन 'मृद्वीकामधुरफलसमानः, क्षीरमधुरफलसमानः' इति पदद्वयग्रहणम्, तथा-खण्डमधुरफलसमान इति। तत्राऽऽमलकमधुरफलसमानः-आमलकवन्मधुर यत्फलं तत्तुल्यः, यथाऽऽम-

है वह आमलक मधुर है या स्वयं वही एक फल मधुर है-१ इस लिये वह आमलक मधुर (फल) है। कोई एक फल मृद्वीका मधुर होता है, मृद्वीका दाखका नाम है, द्राक्ष जैसा जो मधुर हो वह मृद्वीका मधुर है-२ या यों कहिये कि मृद्वीका स्वयं ही एक मधुर फलहै। कोई एक क्षीर मधुर होता है, क्षीर-दूधका नाम है दूध जसा मीठा जो हो वह क्षीर मधुर फल है-३ कोई एक खण्ड मधुर होता है, शक्कर जैसा मधुर होनेसे खण्ड मधुर फल होता है-४ ये सब क्रमशः अल्प बहु बहुतर, और बहुतम मधुरवाले होते हैं। इसी प्रकारसे आचार्यभी चार प्रकारके होते हैं, इनमें कोई एक आचार्य आमलक मधुर फल समान होता है, आमलकके जैसे मधुर फल समान होता है, जैसे आमलक तुल्य मधुर फलमें अल्प माधुर्य होता है वैसे ही उसमें भी उपशमादि गुण अल्प मात्रामें होता है अतः-ऐसे आचार्यको आमलक मधुर

'धात्रीतरु" છે. તેના ફળને આમલક (આંમળુ) કહે છે. તેના જેવાં મધુર સ્વાદને આમલક મધુર કહે છે તે પોતે જ એક મધુર ફળ છે

મૃદ્વીકામધુરનો ભાવાર્થ—મૃદ્વીકા એટલે દ્રાક્ષ દ્રાક્ષ જેવાં મધુર રસને મૃદ્વીકા કહે છે અથવા એમ કહી શકાય કે દ્રાક્ષ પોતે જ એક મધુર ફળ છે.

દૂધ જેવાં મીઠા ફળને ક્ષીર મધુર ફલ કહે છે. સાકર જેવાં મધુર ફળને ખંડમધુર ફળ કહે છે આ ચારે અનુક્રમે અલ્પ, બહુ, બહુતર અને બહુતમ મધુરતાવાળા હોય છે.

એજ પ્રમાણે આચાર્ય પણ ચાર પ્રકારના હોય છે—(૧) કોઈ એક આચાર્ય આમલક મધુર ફલ સમાન હોય છે જેમ આમલક સમાન ફળમાં અલ્પ માધુર્ય હોય છે, એજ પ્રમાણે કોઇ આચાર્યમાં ઉપશમ આદિ ગુણો અલ્પ માત્રામાં હોય છે તે કારણે એવા આચાર્યને આમલક મધુર ફળસમાન કહ્યા છે. એજ પ્રમાણે જે આચાર્યજન બહુ માત્રામાં, બહુતર માત્રામાં અને

लकमधुरफलेऽल्पं माधुर्यं तथाऽऽचार्येऽपि अल्प एवोपशमादिगुण इति तत्समान आचार्यो व्यवह्रियते, एवं बहुबहुतर बहुतमोपशमादिगुणसम्पन्नेष्वाचार्येषु मृद्वी कामधुरफलादि समानत्वं बोध्यम् ४। ॥ सू० १८ ॥

मूलम्—चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—करेइ णाममेगे वेयावच्चं णो पडिच्छइ १, पडिच्छइ णाममेगे वेयावच्चं णो करेइ २, एगे पडिच्छइवि करेइवि ३, एगे नो पडिच्छइ नो करेइ ४।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—अट्ठकरे णाममेगे णो माणकरे १, माणकरे णाममेगे णो अट्ठकरे २, अट्ठकरेऽवि माणकरेऽवि ३, एगे णो अट्ठकरे णो माणकरे ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--गणट्ठकरे णाममेगे णो माणकरे० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा- गणसंगहकरे णाममेगे णो माणकरे० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--गणसोहाकरे णाममेगे णो माणकरे० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--गणसोहिकरे णाममेगे णो माणकरे० ४।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--रूवं णाममेगे जहइ

फलसे उपमित किया गया है। इसी प्रकारसे जो आचार्यजन बहुमात्रा में, बहुतर मात्रामें, बहुतम मात्रामें उपशमादि गुणोंसे युक्त होते हैं उनमें क्रमशः मृद्वीका मधुर फलादि समानता जाननी चाहिये ॥सू०१८॥

બહુતમ માત્રામા ઉપશમાદિ ગુણોથી સંપન્ન હોય છે, તેમને અનુક્રમે મૃદ્વીકા (દ્રાક્ષ) મધુર, ક્ષીરમધુર અને ખંડ (સાકર) મધુર ફળ સમાન સમજવા. ।સૂ. ૧૮।

णो धम्मं १, धम्मं णाममेगे जहइ णो रूवं २, एगे रूवंपि जहइ धम्मंपि जहइ ३, एगे णो रूवं जहइ णो धम्मं ४।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--धम्मं णाममेगे जहइ णो गणसंठिइं० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–पियधम्मे णाममेगे णो दढधम्मे १, दढधम्मे णाममेगे णो पियधम्मे २, एगे पियधम्मेवि दढधम्मेवि ३, एगे णो पियधम्मे णो दढधम्मे ४। सू०१९॥

छाया---चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–आत्मवैयावृत्त्यकरो नामैको नो परवैयावृत्त्यकरः ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–अर्थकरो नामैको नो मानकरः १, मानकरो नामैको नो अर्थकरः २, एकोऽर्थकरोऽपि मानकरोऽपि ३, एको नो अर्थकरो नो मानकरः ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–गणार्थकरो नामैको नो मानकरः० ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा गणसङ्ग्रहकरो नामैको नो मानकरः४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा गणशोभाकरो नामैको नो मानकरः ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा गणशोधिकरो नामैको नो मानकरः४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–रूपं नामैको जहाति नो धर्मं १, धर्मं नामैको जहाति नो रूपम् २, एको रूपमपि जहाति धर्ममपि जहाति ३, एको नो रूपं जहाति नो धर्मम् ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–प्रियधर्मा नामैको नो दृढधर्मा १, दृढधर्मा नामैको नो प्रियधर्मा २, एकः प्रियधर्माऽपि दृढधर्माऽपि ३, एको नो प्रियधर्मा नो दृढधर्मा ४। सू० १९ ॥

टीका--" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि–पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि तद्यथा–एकः–कश्चित् पुरुषः आत्मवैयावृत्त्यकरः–आत्मनः–स्वस्य वैयावृत्त्यं–भक्त-

---

पुनश्च—" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता " १९

टीकार्थ–पुरुष चार प्रकारके कहे गयेहैं, जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो आत्म वैयावृत्त्यकर होता है, भक्तपानसे स्वयंकीही सहायता

" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ–પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે–(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આત્મવૈયાવૃત્યકર હોય છે. એટલે કે ભક્તપાન આદિ

पानादिभिः साहाय्यं करोतीत्येवंशील आत्मवैयावृत्त्यकरो भवति किन्तु नो परवैयावृत्त्यकरो भवति, स चाऽलसो विसम्भोगिको वा १, इति प्रथमो भङ्ग १, तथा–परवैयावृत्त्यकरो नामैको नो आत्मवैयावृत्त्यकरः, स च स्वार्थनिरपेक्षः २, तथा–एक आत्मवैयावृत्त्यकरोऽपि परवैयावृत्त्यकरोऽपि, स च स्थविरकल्पिकः ३, तथा–एको नो आत्मवैयावृत्त्यकरो नो परवैयावृत्त्यकरः, स चानशनविशेषप्रतिपन्नादिः ४। भक्त पानादि वर्जकः इति ॥

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि- पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा -एकः पुरुषो वैयावृत्त्यं परस्य करोत्येव, किन्तु नो प्रतीच्छति--स्वस्य वैयावृत्त्यं परतो न वाञ्छति निःस्पृहत्वात् १, तथा--प्रतीच्छति नामैको वैयावृत्त्य नो

करनेका स्वभाववाला है, परकी सहायता करनेका स्वभाववाला नहीं होता है–१ ऐसा जन यातो आलसी, या विसंभोगिक होता है–१ तथा–कोई एक भोजन पान आदिसे परकी सहायता करनेवाला होता है अपनी सहायता करनेवाला नहीं होता है, ऐसा व्यक्ति स्वार्थ निरपेक्ष होता है–२ तथा–कोई एक भोजन पान आदिसे अपनी और परकी सहायता करनेका स्वभाववाला होता है, ऐसा व्यक्ति स्थविर कल्पित होता है–३ और कोई एक पुरुष न आत्मवैयावृत्त्यकर होता है न पर वैयावृत्त्यकर ही ऐसा वह अनशन विशेष को धारण किये हुवे व्यक्ति विशेष होता है–४

"चत्तारिपुरिस जाया" पुनश्च—पुरुष चार प्रकारके है, जैसे कोई एक पुरुष परका वैयावृत्त्य करता है किन्तु अपना वैयावृत्त्य दूसरोंसे

દ્વારા પોતાની જ સેવા કરનારો હોય છે, અન્યને તે બાબતમાં સહાયતા કરવાના સ્વભાવવાળો હોતો નથી એવો પુરુષ કા તેઃ આળસુ અથવા તો વિસંભોગિક હોય છે. (૨) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભોજનાદિ દ્વારા અન્યની સહાયતા કરનારો હોય છે. પોતાની જાતની જ સેવા કરનારો હોતો નથી એવી વ્યક્તિ નિ.સ્વાર્થ હોય છે (૩) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભોજનાદિથી પોતાની અને પરની સહાયતા કરનારો હોય છે એવી વ્યક્તિ સ્થવિર કલ્પિક હોય છે (૪) કોઈ વ્યકિત એવી હોય છે કે જે આત્મવૈયાવૃત્યકર પણ હોતી નથી અને પરવૈયાવૃત્યકર પણ હોતી નથી. અનશન વિશેષને ધારણ કરનાર કોઈ વિશિષ્ટ સાધુને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય.

"ચત્તારિ પુરિસજાયા" ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરનું વૈયાવૃત્ય કરે છે, પણ અન્યની પાસે

करोति, आचार्योग्लानो वा २। तथा-एको वैयावृत्त्यं करोत्यपि प्रतीच्छत्यपि, स च स्थविरविशेषः ३, तथा–एको वैयावृत्त्यं नो करोति नो प्रतीच्छति, स च जिनकल्पिकादिः ४, इति।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकः पुरुषोऽर्थकरः–अर्थान् करोतीत्येवंशीलस्तथा=राजादीनां दिग्यात्रादौ तथोपदेशतो हितप्राप्त्यहितपरिहारादिकारी भवति, किन्तु नो मानकरः-मानं-गर्वं करोतीत्येवंशीलस्तथा='कथमहमनभ्यर्थितो राजादीनेवं कथयिष्यामीत्य-भिमानी न भवति, अपितु तदहितो भवति, स च सन्मन्त्री नैमित्तिको वा १,

नहीं करवाता है, क्योंकि–वह व्यक्ति निःस्पृह होता है–१ कोई एक अपना वैयावृत्त्य करवाता है पर औरोंका वैयावृत्त्य स्वयं नहीं करता है ऐसा वह यातो आचार्य, या ग्लान होता है–२ कोई एक वैयावृत्त्य करता भी है और अपना भी वैयावृत्त्य परोंसे करवाता है, ऐसा स्थविर विशेष होता है–३ कोई एक न तो वैयावृत्त्य करता है न अपना वैयावृत्त्य करानाही चाहता है ऐसा जिनकल्पिक आदि होता है।–४

"चत्तारि पुरिसजाया"—इत्यादि पुनश्च—पुरुष चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक पुरुष अर्थकर होता है मानकर नहीं, अर्थात् राजा आदिकोंके साथ दिग्यात्रा आदिके समयमें उस प्रकारके उपदेश से उनका हित प्राप्तिकारी और अहित परिहारकारी होता है पर अहङ्कारका करनेवाला नहीं होता है, अर्थात् वह ऐसा अहङ्कार नहीं करता है कि

પોતાનું વૈયાવૃત્ય કરાવતો નથી, કારણકે તે પુરુષ નિઃસ્પૃહ હોય છે. (૨) કોઈ વ્યકિત એવી હોય છે કે જે અન્યની પાસે પોતાનુ વૈયાવૃત્ય કરાવે છે, પણ પોતે અન્યનું વૈયાવૃત્ય કરતી નથી આચાર્ય અથવા ગ્લાન (માંદા સાધુને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય. (૩) કોઇ પુરુષ પરનું વૈયાવૃત્ય પણ કરે છે અને અન્ય દ્વારા પોતાનું વૈયાવૃત્ય પણ કરાવે છે. સ્થવિર વિશેષનો આ ભાંગામાં સમાવેશ કરી શકાય છે. (૪) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરનું વૈયાવૃત્ય પણ કરતો નથી અને પોતાનું વૈયાવૃત્ય કરાવતો પણ નથી. જિન કલ્પિત આદિને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે

"चत्तारि पुरिसजाया" પુરુષના નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર પડે છે— કોઈ એક પુરુષ અર્થકર હોય છે પણ માનકર હોતો નથી. એટલે કે દિગ્વિજય આદિ સમયે રાજા આદિને યોગ્ય સલાહ આપીને તેમનું હિત કરનાર અને અહિતપરિહારી હોય છે, પણ અહંકાર કરનાર હોતો નથી આ કથનનો

तथा–मानकरो नामैको नो अर्थकरः=अभिमानकरो भवति किन्तु नो अर्थकरः–परहितादिरूपमर्थं न करोति, स च विद्यादिगुणाभिमानी २, तथा–एकः अर्थकरोऽपि, मानकरोऽपि, स चाभिमानी मन्त्री, अभिमानि मित्रं वा ३, तथा–एको नो अर्थकरो नो मानकरः, स च गुणवर्जितो जनः ४।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकः पुरुषो गणार्थकरः–गणस्य–साधुसमुदायस्यार्थं–भक्तपानादि प्रयोजनं करोतीत्येवंशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरः–'कथमहमप्रार्थितो गणस्यार्थं करिष्यामी'त्येवमभिमानकारी न भवति प्रार्थनामन्तरेणैव तस्य गणोपका-

---

"मैं विना पूछे राजादिकोंसे ऐसा कैसे कहूं" ऐसा अभिमानी नहीं होता है किन्तु अभिमान रहित होताहै. ऐसा वह पुरुष या तो सन्मन्त्री या नैमित्तिक (ज्योतिषी) होता है–१ कोई एक मानकर होता है अर्थकर नहीं–२ ऐसा व्यक्ति विद्यादिगुणाऽभिमानी होता है, क्योंकि–वह परहितादि रूप अर्थ को नहीं करता है। कोई एक अर्थकर और माणकरभी होता है. ऐसा अभिमानी वह मन्त्री, या मित्र होता है–३ कोई एक अर्थकरभी नहीं मानकरभी नहीं, ऐसा वह गुणवर्जित जन होता है–४ "चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि पुनश्च–पुरुष चार है, जैसे कोई एक पुरुष गणार्थकर होता है मानकर नहीं, साधु समुदायका नाम गण है इस गणके भक्तपान आदि प्रयोजनों साधनेका स्वभाव-

---

ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે—તે એવો અહંકાર કરતો નથી કે "વિના પૂછયે મારે રાજાદિકને શા માટે સલાહ આપવી જોઈએ" તે એવો નિરાભિમાની હોય છે કે રાજા ન પૂછે તો પણ તેનું હિત થાય એવી સલાહ આપતો જ રહે છે. કોઈ સન્મંત્રી અથવા નૈમિત્તિકને (જ્યોતિષી) આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય. (૨) કોઈ પુરુષ માનકર હોય છે પણ અર્થકર હોતો નથી વિદ્યાદિગુણનુ અભિમાન કરનાર પુરુષ આ પ્રકારનો હોય છે, કારણ કે તે પરહિતાદિ રૂપ અર્થ (કાર્ય) કરતો નથી પણ અહંકાર જ કરતો હોય છે. (૩) કોઈ અર્થકર પણ હોય છે અને માનકર પણ હોય છે. અભિમાની મંત્રી અથવા અભિમાની મિત્રને આ ભાંગામાં મૂકી શકાય (૪) કોઈ અર્થકર પણ હોતો નથી અને માનકર પણ હોતો નથી ગુણહીન જનને આ પ્રકારમાં મૂકી શકાય.

"ચત્તારિ પુરિસજાયા" ઇત્યાદિ પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ ગણાર્થકર હોય છે પણ માનકર હોતો નથી. સાધુ સમુદાયને ગણ કહે છે તે ગણના આહાર પાણી આદિ પ્રયોજનોને

रित्वात् १, तथा-मानकरो नामैको नो गणार्थकरः २, तथा-एको गणार्थकरोऽपि मानकरोऽपि ३, तथा-एको नो गणार्थकरो नो मानकरः ४ एते सुगमाः। उक्तंच-

अनन्तरं गणस्यार्थ उक्तः, स च सङ्ग्रहरूप इति गणसङ्ग्रहकरसूत्रमाह- " चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एको गणसङ्ग्रहकर-गणस्य-गच्छस्य द्रव्यत आहारादिना भावतो ज्ञानादिना सङ्ग्रहं करोतीत्येवशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरो भवति १, तथा-मानकरो नामैको नो गणसङ्ग्रहकरः २, तथा-एको गणसङ्ग्रहकरोऽपि मानकरोऽपि ३, एको नो गणसङ्ग्रहकरो नो मानकरः ४।

वाला होता है " विना कहे सुने गणका प्रयोजन कैसे साधू " ऐसा अभिमानकारी नहीं क्योंकि—वह तो प्रार्थना के विना ही गणहित साधन का स्वभाववाला हैं, १ कोई एक मानकर होता है पर-गणार्थ कर नहीं, २ कोई एक गणार्थकर भी मानकर भी होता है, ३ तथा-कोई एक नतोगणार्थकर न मानकर ही होताहै, ४ ए सब सुगमहैं। गण संग्रह रूप होताहै अब सूत्रकार गण संग्रह सूत्रका कथन करतेहैं-"चत्तारि पुरिसजाया "-पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक पुरुष गण-गच्छ का संग्रह कर होता है, द्रव्य की अपेक्षा आहारादि द्वारा और, भाव की अपेक्षा ज्ञानादि द्वारा संग्रह करने का स्वभाव वाला होता है, किन्तु, मानकर नहीं होता है, १ कोई एक मानकर होता है गण-संग्रहकर नहीं, २ कोई एक गणसंग्रह कर भी मानकर भी होता है, ३ कोई एक नतो-गणसंग्रहकर न मानकर ही होता है, ४।

સાધવાના સ્વભાવવાળો હોય છે. કોઇ કહે તો જ ગણુહિત સાધવાને બદલે કોઈના કહેવાની અપેક્ષા રાખ્યા વિના તે ગણુહિત સાધવાને તત્પર રહે છે. (૨) કોઈ એક સાધુ માનકર હોય છે પણ ગણાર્થકર હોતો નથી (૩) કોઈ એક સાધુ ગણાર્થકર પણ હોય છે અને માનકર પણ હોય છે. (૪) કોઈ સાધુ ગણાર્થકર પણ હોતો નથી અને માનકર પણ હોતો નથી અર્થ સુગમ છે.

ગણુ સંગ્રહરૂપ હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર ગણુસંગ્રહ સૂત્રનુ કથન કરે છે—" चत्तारि पुरिसजाया " ઇત્યાદિ—પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ પુરુષ ગણુસંગ્રહકર (ગચ્છ સંગ્રહકર) હોય છે એટલે કે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ આહારાદિ દ્વારા અને ભાવની અપેક્ષાએ જ્ઞાનાદિ દ્વારા સંગ્રહ કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે, પણ માનકર હોતો નથી. (૨) કોઈ એક પુરુષ માનકર હોય છે પણ ગણુસંગ્રહકર હોતો નથી. (૩) કોઇ ગણુસંગ્રહકર પણ હોય છે અને માનકર પણ હોય છે. (૪) કોઇ ગણુસંગ્રહકર પણ હોતો નથી અને માનકર પણ હોતો નથી.

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एको गणशोभाकरः-गणस्य=साधुसमुदायस्य-अनवद्यसाधुसामाचारी-प्रवर्तनया वादित्व-धर्मोपदेशित्व-नैमित्तिकत्व-विद्यासिद्धत्वादिना वा शोभां करोतीत्येवंशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरः-तदभिमानकारी न भवति विनैवा-भ्यर्थनया गणशोभाकरणपरायणत्वाद् निरहङ्कारत्वाद्वा १, तथा-मानकरो नामैको नो गणशोभाकरः २, एको गणशोभाकरोऽपि मानकरोऽपि ३, एको नो गणशो-भाकरो नो मानकरः ४। इति।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एको गणशोधिकरः-गणस्य शोधि-समुचितप्रायश्चित्तदानादिना शोधनं

पुनश्च - "चत्तारि पुरिसजाया" - इत्यादि, पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे - कोई एक पुरुष गण साधुसमुदाय की अनवद्य - निर्दोष साधु समाचारी की प्रवर्तना से, वादित्व गुण से, धर्मोपदेश करने से, नैमित्तिकत्व से, या-विद्यासिद्धित्व आदि से शोभा करने का स्वभाव वाला होता है, किन्तु—"नो मानकर" मानकर नहीं होता है इस बात का अभिमान करने का स्वभाव वाला नहीं होता है, क्योंकि-वह विना कहे सुने ही गण की शोभा करने में तल्लीन रहता है, अथवा अहङ्कार विना का होता है ऐसा यह प्रथम भंग है, १ कोई पुरुष मानकर होता है गण शोभाकर नहीं, २ कोई एक गण की शोभाकर भी होता है और-मानकर भी, ३ कोई एक न गणकी शोभाकर होता है और-न मानकर ही होता है, ४ "चत्तारि पुरिसजाया"-पुनश्च-पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक गण

"चत्तारि पुरिसजाया" આ પ્રકારે પુરુષોના ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ અનવદ્ય (નિર્દોષ) સાધુ સમાચારીની પ્રવર્તના દ્વારા, વાદિત્વ ગુણ દ્વારા, ધર્મોપદેશ દ્વારા, નૈમિકત્વ વડે, અથવા વિદ્યાસિદ્ધિત્વ આદિ વડે ગણની (સાધુસમુદાયની) શોભા વધારનાર હોય છે પરન્તુ "नो मानकरः" (એ વાતનુ અભિમાન કરનાર) હોતો નથી કારણ કે તે કોઈની વિનંતિની અપેક્ષા રાખ્યા વિના ગણની શોભા વધારવાને તત્પર રહે છે અને તેનામાં અહંકાર હોતો નથી. (૨) કોઈ પુરુષ માનકર હોય છે. પણ ગણશોભાકર હોતો નથી. (૩) કોઈ પુરુષ ગણશોભાકર પણ હોય છે અને માનકર પણ હોય છે. (૪) કોઇ પુરુષ ગણશોભાકર પણ હોતો નથી અને માનકર પણ હોતો નથી.

"चत्तारि पुरिसजाया" પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—કોઈ એક પુરુષ ગણશોધિકર હોય છે-એટલે કે સમુચિત પ્રાયશ્ચિત્ત

करोतीत्येवंशीलस्तथा भवति, यद्वा--अकल्पनीयत्वसंशयाधिष्ठिते भक्तपानादौ अनभ्यर्थित एव गृहस्थगृहं गत्वा पृच्छादिना गणस्य भक्तादिपदार्थस्य शुद्धिं करोतीत्येवंशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरो भवति १, तथा-मानकरो नामैको नो गणशोधिकरः २, तथा-एको गणशोधिकरोऽपि मानकरोऽपि ३, तथा-एको नो गणशोधिकरो नो मानकरः ४।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एको रूपं-साधूनां वेषं जहाति-राजादिकारणेन त्यजति, किन्तु नो धर्म-

---

शोधि कर होता है, समुचित्त प्रायश्चित्त दान आदि द्वारा गण की शुद्धि करने का स्वभाव वाला होता है, यद्वा आहारादि में, अकल्पनीयता की संशीति (संदेह) हो जाने पर विना कहे सुने ही जो गृहस्थके घर पर जा कर उसका निर्णय कर के उस गण सम्बन्धी आनीत भक्तादि पदार्थ की शुद्धि करने का स्वभाव वाला होता है, किन्तु-"नो मानकरः" मानकर नहीं होता है, १ मान करने का स्वभाव वाला नहीं होता है, १ कोई एक पुरुष मानकर होता है पर-गणशोधि कर नहीं होता है, २ कोई एक ऐसा होता है जो गण शोधिकर भी होता है और-मानकर भी होताहै, ३ और-कोई एक न तो गणशोधिकर होताहै, न मानकर ही होता है, ४। पुनश्च-"चत्तारि पुरिसजाया"-इत्यादि. पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक पुरुष राजादि विशेष कारण

આદિ દ્વારા ગણુની શુદ્ધિ કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે, અથવા આહારાદિમાં અકલ્પનીયતાનો સંદેહ ઉત્પન્ન થતાં જ કોઇના કહેવાની રાહ જોયા વિના, ગૃહસ્થને ઘેર જઇને તેનો નિર્ણય કરીને, તે ગણુને માટે વહોરી લાવવામાં આવેલ આહારપાણીની શુદ્ધિ કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે. પણુ "नो मानकरः" પણુ માનકર હોતો નથી-અહંકાર કરવાના સ્વભાવવાળો હોતો નથી. (૨) કોઇ પુરુષ માનકર હોય છે પણુ ગણુશોધિકર હોતો નથી. (૩) કોઈ ગણુશોધિકર પણુ હોય છે અને માનકર પણુ હોય છે (૪) કોઈ ગણુશોધિકર પણુ હોતો નથી અને માનકર પણુ હોતો નથી.

"चत्तारि पुरिसजाया" પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઇ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે રાજાદિના ભયના કારણે વેષનો ત્યાગ કરે છે, પણુ ચારિત્ર ધર્મનો ત્યાગ કરતો નથી. (૨) કોઈ એક સાધુ

चारित्रलक्षणं त्यजति बोटिकमध्यस्थित बोटिकवेषधारि (बौद्धसाधु)मुनिवत् १, एको धर्मं त्यजति नो रूपं, निह्नववत् २, एको रूपधर्मावुभयं त्यजति उत्प्रव्रजितवत्-भूतपूर्व गृहीतसंयमगृहस्थवत् ३, एको नो रूपं जहाति नो धर्मं जहाति सुसाधुवत् ४।

से वेष को छोडता है चरित्र धर्म नहीं, १ बोटिक (बौद्ध) वेषधारी बोटिक मध्य में स्थित मुनि जैसे। कोई एक धर्म छोडता है वेष नहीं, २ निह्नव जैसे। कोई एक दोनों को छोड देता है, ३ गृहस्थ के जैसे। कोई एक धर्म, और वेष में एक को भी नहीं छोडता है, ४ सच्चे साधु जैसे। पुनश्च-" चत्तारि पुरिसजाया "-पुरुषजात चार होते हैं, जैसे-" जिनाज्ञा धर्म का परित्याग कर देता है पर--गच्छ मर्यादा नहीं " तात्पर्य है कि--" योग्य साधु समुदाय को श्रुत देना चाहिये " तीर्थंकर की आज्ञा है, इस आज्ञा की उपेक्षा कर के बृहत्कल्पादि विशिष्ट श्रुत अन्य गच्छवाले साधु को नही देता है. प्रवर्तक द्वारा प्रवर्तित अपनी ऐसी गच्छ मर्यादा का अनुसरण करता है वह जिनाज्ञा विराधक होकर धर्मका परित्याग करता है पर- गणस्थिति का परित्याग नहीं करता है ऐसा वह प्रथम अङ्ग है, १। कोई एक गणस्थिति का परित्याग करता है, धर्म का नहीं, २ वह--योग्य साधुओं को श्रुत देनेवाला होता है। कोई एक धर्म--और

એવો હોય છે કે જે ધર્મ છોડે છે, પણ વેષ છોડતો નથી, જેમકે નિહ્નવ (૩) કોઈ એક સાધુ વેષ પણ છોડે છે અને ધર્મ પણ છોડે છે (૪) કોઈ એક સાધુ વેષ પણ છોડતો નથી અને ધર્મ પણ છોડતો નથી જેમકે સત્ય સાધુ

"चत्तारि पुरिसजाया" પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ધર્મનો પરિત્યાગ કરે છે પણ ગણસ્થિતિનો પરિત્યાગ કરતો નથી—" જિનાજ્ઞાધર્મનો પરિત્યાગ કરી નાખે છે પણ ગચ્છમર્યાદાનો પરિત્યાગ કરતો નથી. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-તીર્થંકરની એવી આજ્ઞા છે કે યોગ્ય સાધુ સમુદાયને શ્રુતદાન દેવું જોઇએ. આ આજ્ઞાની ઉપેક્ષા કરીને બૃહત્કલ્પાદિ વિશિષ્ટ શ્રુતનું અન્ય ગચ્છવાળા સાધુને તે દાન દેતો નથી, પણ પ્રવર્તક દ્વારા પ્રવર્તિત એવી પોતાની ગચ્છમર્યાદાનું તો અનુસરણ કરે છે આ પ્રકારનો સાધુ જિનાજ્ઞાનો વિરાધક હોવાને કારણે ધર્મનો પરિત્યાગ કરનારો ગણાય છે પણ ગણની મર્યાદાનું પાલન કરનારો હોવાને કારણે ગણસ્થિતિનો પરિત્યાગકર્તા ગણાતો નથી. (૨) કોઈ એક સાધુ ગણસ્થિતિનો પરિત્યાગ કરે છે પણ ધર્મનો પરિત્યાગ કરતો નથી તે યોગ્ય સાધુઓને શ્રુતદાન દેતો હોય છે. (૩) કોઈ ધર્મ અને ગણ-

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एको धर्म-जिनाज्ञारूपं जहाति-त्यजति, किन्तु नो गणसंस्थितिं गणस्य-स्वगच्छस्य संस्थितिं=स्वगच्छप्रवर्तकप्रवर्तितमर्यादां न जहाति । इहायं विवेकः-तीर्थङ्करा एवमुपदिशन्ति-"सर्वेभ्यो योग्यसाधुभ्यः श्रुतं दातव्यमिति तदाज्ञामुपेक्ष्य बृहत्कल्पादि विशिष्टश्रुतमन्यगच्छीयाय न देयमिति स्वगच्छप्रवर्तकप्रवर्तितमर्यादामनुसरन् योऽन्यगच्छीयाय श्रुतं न ददाति स धर्मं त्यजति, जिनाऽऽज्ञाविराधकत्वात्, नो गणसंस्थितिम्, इति प्रथमो भङ्ग ।१। एकः पुरुषो गणसंस्थितिं जहाति नो धर्मं, स च योग्येभ्यः श्रुतदायकः, इति द्वितीयः २। एको धर्मगणसंस्थित्युभयं जहाति, स चायोग्येभ्यः श्रुतदायकः इति तृतीयः । ३। एको नो धर्मं जहाति नो गणसंस्थितिं, स च श्रुताव्यवच्छेदार्थपरगच्छस्थं साधुं स्वगणमर्यादायां संस्थाप्य श्रुतदायी । इति चतुर्थः । ४ ।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः प्रियधर्मा-प्रियो धर्मो यस्य स तथा=प्रीतिभावेन सुखेन च धर्मस्वीकारको भवति, किन्तु नो दृढधर्मा-दृढत्वाभावाद् विपदि धर्मात् प्रचलितो भवति,—

गण स्थिति दोनों का परित्याग करता है, ३ ऐसा वह-अयोग्यों को श्रुत देने वाला होता है, ३। कोई एक पुरुष न तो-धर्म का, न गण स्थिति का परित्याग करता है, ४। पुनश्च--"चत्तारि पुरिसजाया"--इत्यादि, पुरुष जात चार कहे गयेहैं, जैसे-कोई एक पुरुष धर्मप्रिय होताहै-प्रीति भावसे सानन्द धर्मको स्वीकार कर लेताहै, किन्तु-'नो दृढ धर्मा,' विपत्तिमें धर्मसे विचलित हो जाताहै, अतः-दृढ धर्मा नहीं होता है,१। कोई एक पुरुष आपत् काल में भी अङ्गीकृत धर्म का परित्याग नहीं

સ્થિતિ બન્નેનો પરિત્યાગ કરે છે અયોગ્ય વ્યક્તિઓને શ્રુતદાન દેનારને આ પ્રકારમા મૂકી શકાય. (૪) કોઇ એક સાધુ ધર્મનો પણ પરિત્યાગ કરતો નથી અને ગણુસ્થિતિનો પણ પરિત્યાગ કરતો નથી

"ચત્તારિ પુરિસજાયા' પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ ધર્મપ્રિય હોય છે-પ્રીતિભાવથી આનંદપૂર્વક ધર્મને સ્વીકારી લે છે, પરન્તુ "નો દૃઢધર્માઃ" દૃઢધર્મા હોતો નથી—એટલે કે વિપત્તિમાં ધર્મથી વિચલિત થઇ જનારો હોય છે.

तथा—एको दृढधर्मा-आपद्यपि स्वीकृतधर्मा परित्यागेन स्थिरधर्मा भवति, किन्तु नो प्रियधर्मा-सुखेन धर्मस्वीकारी न भवति, यतः स कष्टेन धर्मं गृह्णाति, २। एकः प्रियधर्माऽपि दृढधर्माऽपि ३, एको नो प्रियधर्मा नो दृढधर्मा ४।

अस्यायमर्थः—द्वितीयो दुःखेन धर्ममुद्ग्राह्यते=धर्मग्रहणं कार्यते, तु=पुनरसौ गृहीतं धर्मं तीरं=पारं नयति=यावज्जीवनं सविधि तमनुतिष्ठतीतितृतीयः उभयान्तः=प्रियधर्मत्व-दृढधर्मत्वोभयस्वभावः कल्याणः=शोभनो भवति ३। चरमः अन्तिमश्चतुर्थस्तु प्रतिक्रुष्टः=निषिद्धो निवारित इत्यर्थः। सू० १९।

मूलम्—चत्तारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा-पव्वावणायरिए णाममेगे णो उवट्ठावणायरिए १, उवट्ठावणायरिए णाममेगे णो

करता है (स्थिर धर्मधारी होता है,) पर-सहसा सुख से धर्म का स्वीकार नहीं करता है, क्योंकि ऐसा व्यक्ति बहुत कुछ सोच समझ कर धर्म ग्रहण करता है, २ कोई एक प्रियधर्मा और दृढधर्मा भी होता है, ३ कोई एक पुरुष न तो प्रियधर्मा ही न दृढधर्मा ही होता है, ४ इसका तात्पर्य है--कि यहां जो द्वितीय पुरुष है वह-सरलतासे धर्मको नहीं ग्रहण करता है, बहुत ही सोच समझ कर उसे स्वीकार करता है, और--जब स्वीकार कर लेता है तो फिर यावज्जीवन उसका वह सविधि पालन करता। अन्य पदों का भाव सुगम है, ॥ सू० १९ ॥

---

(૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ગમે તેવી આફત આવે તો પણ ધર્મનો પરિત્યાગ કરતો નથી (સ્થિર ધર્મધારી હોય છે), પણ પૂર્ણ વિચાર કર્યા વિના ધર્મને અંગીકાર કરતો નથી (૩) કોઈ પુરુષ પ્રિય ધર્મા પણ હોય છે અને દઢ ધર્મા પણ હોય છે. (૪) કોઈ પુરુષ પ્રિયધર્મા પણ હોતો નથી અને દઢધર્મા પણ હોતો નથી કહ્યુ પણ છે કે—

અહીં જે બીજા પ્રકારનો પુરુષ કહ્યો છે તે સરળતાથી ધર્મને ગ્રહણ કરતો નથી-ઘણો જ વિચાર કરીને ધર્મને સ્વીકારે છે. આ રીતે ધર્મને સ્વીકાર્યા બાદ તે ગમે તેવી પરિસ્થિતિમાં પણ વિધિપૂર્વક, આજીવન તેનું પાલન કરે છે. બાકીના પદોનો ભાવ સુગમ છે ॥ સૂ. ૧૯ ॥

पव्वायणायरिए २, एगे पव्वायणायरिएवि उवट्ठावणायरिएवि ३, एगे णो पव्वायणायरिए णो उवट्ठावणायरिए धम्मायरिए ४।

चत्तारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा--उद्देसणायरिए णाममेगे णो वायणायरिए, धम्मायरिए० ४,

चत्तारि अंतेवासी पण्णत्ता, तं जहा--पव्वायणंतेवासी णाममेगे णो उवट्ठावणंतेवासी १, धम्मंतेवासी ४,

चत्तारि अंतेवासी पण्णत्ता, तं जहा--उद्देसणंतेवासी णाममेगे णो वायणंतेवासी १, धम्मंतेवासी० ४, । सू० २० ॥

छाया–चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-प्रव्राजनाऽऽचार्यो नामैको नो उपस्थापनाऽऽचार्यः १, उपस्थापनाऽऽचार्यो नामैको नो प्रव्राजनाऽऽचार्यः २, एकः प्रव्राजनाऽऽचार्योऽपि उपस्थापनाऽऽचार्योऽपि ३, एको नो प्रव्राजनाऽऽचार्यो नो उपस्थापनाऽऽचार्यः धर्माऽऽचार्यः ४।

चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–उद्देशनाऽऽचार्यो नामैको नो वाचनाऽऽचार्यः धर्माऽऽचार्यः ४।

चत्वारोऽन्तेवासिनः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–प्रव्राजनाऽन्तेवासी नामैको नो उपस्थापनाऽन्तेवासी १, धर्मान्तेवासी ४।

चत्वारोऽन्तेवासिनः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–उद्देशाऽन्तेवासी नामैको नो वाचनाऽन्तेवासी १, धर्मान्तेवासी० ४। ॥सू० २० ॥

टीका—"चत्तारि आयरिया" इत्यादि — आचार्याश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–एकः प्रव्राजनाऽऽचार्यः–प्रव्राजना–प्रव्रज्यादानं तया आचार्यो भवति, किन्तु नो उपस्थापनाऽऽचार्यः–उपस्थापना–शिष्ये महाव्रताऽऽरोपणं तथा आचार्य

"चत्तारि आयरिया पण्णत्ता"--इत्यादि, २० ॥

आचार्य चार कहे गये हैं, जैसे — कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो – प्रव्राजनाचार्य होता है – उपस्थापनाचार्य नहीं, १ दीक्षा देने द्वारा जो आचार्य होता है वह – प्रव्राजनाचार्य है, तथा-शिष्य में महाव्रतोंका आरोपक जो हो वह-उपस्था-

---

"चत्तारि आयरिया पण्णत्ता" ઇત્યાદિ (૨૦)

આચાર્યના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક આચાર્ય એવાં હોય છે કે જે પ્રવ્રજનાચાર્ય હોય છે, પણ ઉપસ્થાપનાચાર્ય હોતા

उपस्थापनाऽऽचार्यः=शिष्ये महाव्रताऽऽरोपको न भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १ । एक उपस्थापनाऽऽचार्यो भवति न तु प्रव्राजनाऽऽचार्यः । इति द्वितीयः । २ । एक उभयाऽऽचार्यो भवति । इति तृतीयः । ३ । एको नोभयाचार्यः, स हि धर्माऽऽचार्यो भवति । इति चतुर्थः ४।

"चत्तारि आयरिया" इत्यादि—पुनराचार्याश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एक उद्देशनाऽऽचार्यः-उद्देशनम्-अङ्गादिपठनाधिकारित्वकरणम्, तेन तत्र वाऽऽ-

पनाचार्य है, अर्थात् छेदोपस्थापनीय चारित्र देनेवाला उपस्थापनाचार्य है। कोई एक आचार्य शिष्य में महाव्रतों का आरोपण करने से उपस्थापनाचार्य होता है, प्रव्राजनाचार्य नहीं, २ ऐसा द्वितीय भङ्ग है। तथा-कोई एक प्रव्रजना से, और शिष्य में महाव्रतों की आरोपणासे दोनों तरहोंसे आचार्य होता है, ३ ऐसा तृतीय भङ्ग है। तथा-कोई एक आचार्य न तो प्रव्राजना से, न उपस्थापनासे आचार्य होता है, ४ यह चतुर्थ भङ्ग है। कहा भी है-"धम्मो जेणुवइट्ठो-" इत्यादि. पुनश्च-"चत्तारि आयरिया,-इत्यादि आचार्य चार प्रकार के होते हैं, जैसे-कोई एक आचार्य, ऐसा होता है जो, उद्देशनाचार्य होता है, आचाराङ्गादि ग्यारह अङ्गादिकों को पढने का अधिकारी करना, इसका नाम उद्देशन है, इस उद्देशन से अथवा-इस उद्देशन में जो-आचार्य होता है वह-उद्देशनाचार्यहै, किन्तु-वह वाचनाचार्य नहीं होताहै १ ऐसा यह

નથી દીક્ષા અંગીકાર કરાવવાને લીધે આચાર્ય થનારને પ્રવ્રજનાચાર્ય કહે છે, તથા શિષ્યોમાં મહાવ્રતોનું આરોહણ કરનારને ઉપસ્થાનાચાર્ય કહે છે. એટલે કે છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર દેનારને ઉપસ્થાપનાચાર્ય કહે છે. (૨) કોઇ એક આચાર્ય શિષ્યોમાં મહાવ્રતોનું આરોપણ કરવાને કારણે ઉપસ્થાપનાચાર્ય હોય છે પણ પ્રવ્રજનાચાર્ય હોતા નથી. (૩) કોઇ એક શિષ્યોને પ્રવ્રજિત કરવાને કારણે પ્રવ્રજનાચાર્ય પણ હોય છે અને મહાવ્રતોનું આરોપણ કરવાને કારણે ઉપસ્થાપનાચાર્ય પણ હોય છે (૪) કોઈ એક આચાર્ય પ્રવ્રાજનાની અપેક્ષાએ પણ આચાર્ય હોતા નથી અને ઉપસ્થાપનાની અપેક્ષાએ પણ આચાર્ય હોતા નથી

"चत्तारि आयरिया" ઇત્યાદિ—આચાર્યના નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઇ એક આચાર્ય એવાં હોય છે કે જે ઉદ્દેશનાચાર્ય હોય છે, પણ વાચનાચાર્ય હોતા નથી. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—આચારાંગાદિ અગિયાર અંગોનુ અધ્યયન કરવાને અધિકારી કરવો તેનું

चार्य उद्देशनाऽऽचार्यो भवति, किन्तु वाचनाऽऽचार्यो न भवति १, शेषास्त्रयो भङ्गाः सुगमाः ४। तत्रोभयरहितो धर्माऽऽचार्यो ज्ञेय इति।

"चत्तारि अंतेवासी" इत्यादि अन्तेवासिनः—अन्ते=गुरोः सन्निधौ (गुरोराज्ञायां) वसन्तीत्येवंशीला अन्तेवासिनः=शिष्याः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः प्रव्राजनया—दीक्षयाऽन्तेवासी तथा=दीक्षितो भवति, किन्तु नो उपस्थापनाऽन्तेवासी—उपस्थापना—पञ्चमहाव्रतसमारोपणा तत्र तया वाऽन्तेवासी तथा=महाव्रताऽऽरोपणाशिष्यो न भवति १, एक उपस्थापनाऽन्तेवासी भवति परन्तु प्रव्राजनाऽन्तेवासी न

प्रथम भङ्ग है। इस सम्बन्ध के बाकी के तीन भङ्ग सुगम हैं। जैसे—कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो वाचनाचार्य होता है उद्देशनाचार्य नहीं, २ कोई एक उद्देशनाचार्य और वाचनाचार्य भी होता है, ३ कोई एक न तो उद्देशनाचार्य न वाचनाचार्य ही होता है, ४ यह चतुर्थ भङ्ग है। "चत्तारि अंतेवासी"—अन्तेवासी चार होते हैं, गुरु की सेवा में रहने वाला शिष्य अन्तेवासी कहा जाताहै, कोई एक प्रव्राजनान्तेवासी होताहै पर-उपस्थापनान्तेवासी नहीं होताहै, जो दीक्षासे अन्तेवासी होता है वह-प्रव्राजनान्तेवासी कहा गया है, और-जो पञ्चमहाव्रतों की आरोपणा में, या-आरोपणा से अन्तेवासी होता है वह-उपस्थापना अन्तेवासी कहा गया है, इस प्रकार का यह प्रथम भङ्ग है, १ कोई एक

નામ ઉદ્દેશન છે આ ઉદ્દેશનની અપેક્ષાએ અથવા આ ઉદ્દેશનમાં જે આચાર્ય હોય છે તેને ઉદ્દેશનાચાર્ય કહે છે અને સૂત્રાદિનું પઠન (અધ્યયન) કરાવનારને વાચનાચાર્ય કહે છે.

કોઈ એક આચાર્ય એવાં હોય છે કે જે વાચનાચાર્ય હોય છે, પણ ઉદ્દેશનાચાર્ય હોતા નથી (૩) કોઇ એક આચાર્ય એવાં હોય છે કે જે ઉદ્દેશનાચાર્ય પણ હોય છે અને વાચનાચાર્ય પણ હોય છે. (૪) કોઇ એક આચાર્ય ઉદ્દેશાચાર્ય પણ હોતા નથી અને વાચનાચાર્ય પણ હોતા નથી.

"चत्तारि अंतेवासी" ગુરુની સમીપે રહેનાર શિષ્યને અન્તેવાસી કહે છે. તે અન્તેવાસીના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે.

(૧) કોઈ એક પ્રવ્રાજનાન્તેવાસી હોય છે પણ ઉપસ્થાપનાન્તેવાસી હોતો નથી જે શિષ્ય દીક્ષાને કારણે અન્તેવાસી ગણાય છે, તેને પ્રવ્રજનાન્તેવાસી કહે છે. જે શિષ્ય પાંચ મહાવ્રતોની આરોપણાને કારણે અન્તેવાસી ગણાય છે તેને ઉપસ્થાપનાન્તેવાસી કહે છે આ પહેલો ભાગો છે.

भवति २, एकः प्रव्राजनान्तेवास्यपि उपस्थापनान्तेवास्यपि भवति ३, एको नो प्रव्राजनाऽन्तेवासी भवति नापि चोपस्थापनाऽन्तेवासी भवति, चतुर्थभङ्गस्थः शिष्यो धर्मान्तेवासी धर्ममात्रस्वीकारे शिष्यो भवति, यद्वा धर्माभिलापितयोपागतश्चतुर्थो बोध्यः ४। इति ॥

"चत्तारि अंतेवासी" इत्यादि—पुनरन्तेवासिनश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एक उद्देशनान्तेवासी-उद्देशनेन=अङ्गादिपठनाधिकारित्वकरणेन शिष्यो भवति, किन्तु नो वाचनाऽन्तेवासी-वाचना-गुरुभ्यः श्रवणमधिगमो वा, तया तत्र वाऽन्तेवासी तथा न भवति १, एको वाचनाऽन्तेवासी भवति, नो उद्देशनाऽन्तेवासी

अन्तेवासीहै जो कि-उपस्थापनासे अन्तेवासी होताहै, प्रव्राजनासे नहीं, यह द्वितीय भङ्गहै, २ कोई एक अन्तेवासी ऐसा होताहै जो प्रव्राजनासे भी और-उपस्थापनासे भी, यह तृतीय भङ्ग है, ३ कोई एक प्रव्राजना से भी-उपस्थापना से भी उभय था अन्तेवासी नहीं होता है, ऐसा वह शिष्य धर्मान्तेवासी होता है धर्म मात्र के स्वीकार से शिष्य होता है, ऐसा यह चौथा भङ्ग है, ४ जो धर्माभिलापा से युक्त हो कर गुरु के पास में शिष्यत्व अङ्गीकार करता है, वह भी इस चतुर्थ भङ्ग वाला होता है, । पुनश्च-"चत्तारि अंतेवासी-" अन्तेवासी चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक अन्तेवासी उद्देशनसे-अङ्गादि पढनाऽधिकारित्व करने से अन्तेवासी-शिष्य होता है, पर-वाचना से गुरु के पास श्रवण से या-अधिगमसे अन्तेवासी नहीं होताहै, ऐसा यह-उद्देशनान्ते वासी नो वाचनान्ते वासी नामका प्रथम भङ्ग है, १ तथा-कोई एक अन्तेवासी

---

(૨) કોઈ એક ઉપસ્થાપનાન્તેવાસી હોય છે, પણ પ્રવ્રજનાન્તેવાસી હોતો નથી. (૩) કોઇ એક પ્રવ્રજનાન્તેવાસી પણ હોય છે અને ઉપસ્થાપનાન્તેવાસી પણ હોય છે (૪) કોઈ એક પ્રવ્રાજનાની અપેક્ષાએ પણ અન્તેવાસી હોતો નથી અને ઉપસ્થાપનાની અપેક્ષાએ પણ અન્તેવાસી હોતો નથી એવા શિષ્યને ધર્માન્તેવાસી કહે છે, કારણ કે માત્ર ધર્મના સ્વીકારની અપેક્ષાએ જ તે અન્તેવાસી ગણાય છે.

"ચત્તારિ અન્તેવાસી" અન્તેવાસીના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) કોઈ એક અન્તેવાસી ઉદ્દેશનાન્તેવાસી હોય છે પણ વાચનાન્તેવાસી હોતો નથી. એટલે કે અંગાદિનું પઠન કરવાને અધિકારી હોય છે, પરન્તુ વાચનાની અપેક્ષાએ-ગુરુની સમીપે શ્રવણની અપેક્ષાએ અથવા અધિગમની અપેક્ષાએ અન્તેવાસી હોતો નથી. એવો આ "ઉદ્દેશનાન્તેવાસી નો વચનાન્તેવાસી" આ પહેલો ભાંગો છે.

२, एक उद्देशनाऽन्तेवास्यपि भवति वाचनाऽन्तेवास्यपि ३, एको नो उद्देशनाऽन्तेवासी नापिच वाचनाऽन्तेवासी भवति ४। तत्र चतुर्थभङ्गस्थोऽन्तेवासी को भवतीत्याह–" धम्मंतेवासी "–ति, धर्मान्तेवासी–धर्मशिष्यः, धर्ममात्राभिलाषितयोपपन्नो वा । ४ । इति ॥ सू० २० ॥

मूलम्--चत्तारि णिग्गंथा पण्णत्ता, तं जहा--राइणिये समणे णिग्गंथे महाकम्मे महाकिरिए अणायावी असमिए धम्मस्स अणाराहए भवइ १, राइणिए समणे णिग्गंथे अप्पकम्मे अप्पकिरिये आयावी समिए धम्मस्स आराहए भवइ २, ओमराइणिए समणे णिग्गंथे महाकम्मे महाकिरिए अणायावी असमिए धम्मस्स अणाराहए भवइ ३, ओमराइणिए समणे णिग्गंथे अप्पकम्मे अप्पकिरिए आयावी समिए धम्मस्स आराहए भवइ४।

चत्तारि णिग्गंथीओ पण्णत्ताओ, तं जहा--राइणिया समणी णिग्गंथी एवं चेव ४,

---

वाचनान्तेवासी होता है-उद्देशनान्तेवासी नहीं, ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है, तथा–कोई एक अन्तेवासी उद्देशनसे भी–वाचनासे भी अन्तेवासी होता है, ३ यह तृतीय भङ्ग है। एवं-कोई एक अन्तेवासी न तो उद्देशना से, और–न वाचना से ही अन्तेवासी होता है, ऐसा अन्तेवासी धर्मशिष्य होता है, धर्ममात्र की अभिलाषा से युक्त हो कर वह शिष्य बनता है, ऐसा यह चतुर्थ भङ्ग है, ४॥ सू०२०॥

---

(२) કોઈ એક અન્તેવાસી વચનાન્તેવાસી હોય છે, પણ ઉદ્દેશનાન્તેવાસી હોતો નથી. (૩) કોઈ એક અન્તેવાસી ઉદ્દેશનાન્તેવાસી પણ હોય છે અને વાચનાન્તેવાસી પણ હોય છે. (૪) કોઈ એક શિષ્ય ઉદ્દેશનાન્તેવાસી પણ હોતો નથી અને વાચનાન્તેવાસી પણ હોતો નથી. એવો અન્તેવાસી ધર્મશિષ્ય હોય છે. માત્ર ધર્મની અભિલાષાથી યુક્ત થવાને કારણે જ તે શિષ્ય બન્યો હોય છે. ॥ સૂ. ૨૦ ॥

चत्तारि समणोवासगा पण्णता, तं जहा-राइणिए समणोवासए महाकम्मे तहेव ४,

चत्तारि समणोवासियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा--राइणिया समणोवासिआ महाकम्मा तहेव चत्तारि गमा। सू० २१ ॥

छाया—चत्वारो निर्ग्रन्थाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—रात्निकः श्रमणो निग्रन्थो महाकर्मा महाक्रियः अनातापी असमितो धर्मस्यानाराधको भवति १, रात्निकः श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्माऽल्पक्रियः आतापी समितो धर्मस्याऽऽराधको भवति २, अवमरात्निकः श्रमणो निर्ग्रन्थो महाकर्मा महाक्रियोऽनातापी असमितो धर्मस्याऽऽराधको भवति ३, अवमरात्निकः श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्माऽल्पक्रिय आतापी समितो धर्मस्याऽऽराधको भवति ४।

चतस्रो निग्रन्थ्यः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—रात्निकी श्रमणा निग्रन्थी एवमेव ४,

चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—रात्निकः श्रमणोपासको महाकर्मा तथैव ४।

चतस्रः श्रमणोपासिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—रात्निकी श्रमणोपासिका महाकर्मा तथैव चत्वारो गमाः। सू० २१ ॥

टीका—" चत्तारि णिग्गंथा " इत्यादि–निर्ग्रन्थाः–बाह्याभ्यन्तरग्रन्थरहिताः साधवश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–रात्निकः–रत्नैः–भावतो ज्ञानादिलक्षणै र्व्यवहरतीति रात्निकः–ज्ञानादिरत्नव्यवहारसम्पन्नो बृहत्पर्यायः पर्यायज्येष्ठ इत्यर्थः,

टीकार्थ–" चत्तारि णिग्गंथा पण्णत्ता "–इत्यादि--। २१ ॥

निर्ग्रन्थ चार प्रकार के कहे गये हैं, जैसे – कोई एक निर्ग्रन्थ श्रमणरात्निक पर्याय ज्येष्ठ होता है, दीक्षापर्याय की अपेक्षा ज्येष्ठ होता है, तपश्चरणशील होता है निर्ग्रन्थ·

" चत्तारि णिग्गंथा पण्णत्ता " ઈત્યાદિ—(૨૧)

શ્રમણ નિર્ગ્રંથના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—

(૧) કોઈ એક શ્રમણ નિર્ગ્રંથ રાત્નિક હોય છે એટલે કે દીક્ષાપર્યાયની અપેક્ષાએ જ્યેષ્ઠ હોય છે, તપશ્ચરણશીલ હોય છે, બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહોથી રહિત હોય છે, પરન્તુ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોની સ્થિતિની

श्रमणः-तपश्चरणशीलः, निर्ग्रन्थः, महाकर्मा-महान्ति-गुरूणि स्थित्यादिभिस्ता-दृशप्रमादलक्षितानि कर्माणि=ज्ञानाऽऽवरणीयादीनि यस्य स तथा, महाक्रियः= महती-बृहती क्रिया-कर्मबन्धहेतुभूता कायिक्यादिका यस्य स तथा, अनातापी-आसमन्तात् तापयति-शीतोष्णादिसहनलक्षणामातापनां करोतीत्येवंशील आतापी, न आतापीत्यनातापी=शीतोष्णादिपरीषहसहनकरणवर्जितः मन्दश्रद्धत्वात्, अत एव असमितः-समितिभिः ऐर्यापथिक्यादिभीरहितः साधुः धर्मस्य-दुर्गतिपतज्जन्तुसमुद्धरणपरायणस्य चारित्रलक्षणस्य अनाराधकः-आराधयतीत्याराधकः स न भवतीति तथा भवति, इति प्रथमो निर्ग्रन्थो ज्ञेयः । १ ।

तथा-रात्निकः-पर्यायज्येष्ठः श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्मा-लघुकर्मा, अल्प-क्रियः-अल्पा क्रिया कायिक्यादिका यस्य स तथा, आतापी-परीषहसहनधीरः,

---

बाह्य-आभ्यन्तर परिग्रहसे रहित होता है, परन्तु फिरभी वह ज्ञाना-वरणीयादि कर्मोंकी स्थितिकी अपेक्षासे महा कर्मा होताहै कर्मबन्ध हेतुभूत प्राणातिपात आदि कायिकी क्रियाएँ जिसकी महती होती है. मन्द श्रद्धावाला होनेसे शीत उष्ण आदि परीषहोंको जीतनेसे रहित होता है असमित होता है-ईर्यापथिकी आदि समितियोंके पालनेसे विहीन होता है और इसीसे दुर्गतिमें पडते हुवे जीवोंके उद्धरण करनेमें तत्पर ऐसे चारित्ररूप धर्मका वह आराधक नहीं होता है ऐसा वह प्रथम प्रकारका निर्ग्रन्थ है-१ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ रात्निक दीक्षापर्यायकी अपेक्षा ज्येष्ठ होताहै श्रमण-तपश्चरणशील होताहै निर्ग्रन्थ बाह्य आभ्य-न्तर परिग्रहका त्यागी होता है, पर लघुकर्मा होता है, कायिकी आदि अल्प क्रियावाला होता है, आतापी होता है, परीषहोंको सहनेमें धीर

અપેક્ષાએ તે મહાકર્મા હોય છે. તે કારણે કર્મબન્ધના કારણુ રૂપ પ્રાણુાતિપાત આદિ કાયિકી ક્રિયાઓથી અધિક પ્રમાણુમાં તે યુકત હોય છે, મન્દ શ્રદ્ધા-વાળો હોવાને કારણે શીત, ઉષ્ણુ આદિ પરીષહોને જીતવાને અસમર્થ હોય છે, અસમિત હોય છે-ઈર્યાપથિકી આદિ સમિતિઓના પાલનથી વિહીન હોય છે અને તે કારણે દુર્ગતિમાં પડતા જીવોના ઉદ્ધાર કરવાને સમર્થ એવા ચારિત્રરૂપ ધર્મનો તે આરાધક હોતો નથી આ પહેલા પ્રકારનો નિર્ગ્રંથ સમજવો.

(૨) કોઈ એક શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ રાત્નિક હોય છે-દીક્ષાપર્યાયની અપેક્ષાએ જ્યેષ્ઠ હોય છે, તપશ્ચરણુ શીલ હોય છે અને બાહ્ય-આભ્યન્તર પરિગ્રહનો ત્યાગી હોય છે, પરન્તુ તે લઘુકર્મા હોય છે કાયિકી આદિ અલ્પ ક્રિયાવાળો હોય છે, આતાપી હોય છે-પરીષહોને સહન કરવામાં ધીરવીર હોય છે, અને

अत एव समितः-समितिगुणसम्पन्नश्च भवत्यतो धर्मस्याऽऽराधको भवति २। इति द्वितीयो निर्ग्रन्थः २। तथा-अवमरात्निकः-अवमो-लघुः पर्यायेण स चासौ रात्निकोऽवमरात्निकः-लघुपर्यायः, श्रमणो निग्रन्थो महाकर्मा महाक्रियोऽनातापी अत एवासमितो भवत्यत एव च धर्मस्याऽनाराधको भवति। इति तृतीयो निर्ग्रन्थः ३। तथा-अवमरात्निकः-लघुरात्निकः श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्माऽल्पक्रिय आतापी अत एव समितोऽत एव धर्मस्याऽऽराधको भवति। इति चतुर्थो निर्ग्रन्थः। ४।

वीर होता है, समित होता है-समिति गुण सम्पन्न होता है अतः वह धर्माराधक होता है, यह द्वितीय प्रकारका श्रमणनिर्ग्रन्थ है-२ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघुपर्यायवाला होता है तपश्चरणशील होता है वाह्य-आभ्यन्तर परिग्रहसे रहित होता है, फिरभी महाकर्मा होता है, महा क्रियावाला होता है, अनातापी होता है, अतएव—असमित होता है और इसी कारण वह धर्मका आराधक नहीं होता है—ऐसा यह तृतीय प्रकारका श्रमण निर्ग्रन्थ है-३ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ अवमरात्निक होता है-दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघु पर्यायवाला होता है तपश्चरणशील होता है वाह्याऽभ्यन्तर परिग्रहका त्यागी होता है, पर वह अल्प कर्मा होता है, अल्प क्रियावाला होता है आतापी होता है, समित होता है, इसलिये वह धर्मका आराधक होता है-४।

સમિત હોય છે-ઇર્યાપથિકી આદિ સમિતિઓનું પાલન કરનાર હોય છે, તે કારણે તે નિર્ગ્રંથ ધર્મારાધક હોય છે બીજા પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના આ લક્ષણો સમજવા.

હવે ત્રીજા પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રંથના લક્ષણો બતાવવામાં આવે છે-કોઈ એક શ્રમણ નિર્ગ્રંથ દીક્ષાપર્યાયની અપેક્ષાએ લઘુપર્યાયવાળો હોય છે, તપશ્ચરણશીલ હોય છે અને બાહ્ય-આભ્યન્તર પરિગ્રહોથી રહિત હોય છે, પરન્તુ તે મહાકર્મા હોય છે, મહાક્રિયાવાળો હોય છે, અનાતાપી હોય છે, પરીષહોને સહન કરવાને અસમર્થ હોય છે, તે કારણે તે અસમિત હોય છે અને એજ કારણે તે ધર્મનો આરાધક હોતો નથી.

ચોથા પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રંથના લક્ષણો હવે પ્રકટ કરવામાં આવે છે—કોઈ એક શ્રમણ નિર્ગ્રંથ 'અવમરાત્નિક' હોય છે. એટલે કે લઘુ દીક્ષાપર્યાયવાળો હોય છે, તપશ્ચરણશીલ હોય છે, અને બાહ્ય-આભ્યન્તર પરીગ્રહનો ત્યાગી હોય છે, પરન્તુ તે લઘુકર્મા હોય છે, અલ્પક્રિયાવાળો હોય છે, પરીષહોને સહન કરનારો હોય છે અને સમિત હોય છે તે કારણે તે ધર્મનો આરાધક હોય છે.

"चत्तारि णिग्गंथीओ" इत्यादि—एतद्विवरणं निर्ग्रन्थसूत्रवद्बोध्यम्, इत्यतआह–"एवं चेव"–एवमेव–निर्ग्रन्थवदेव भङ्गचतुष्टयं भणनीयम्।

"चत्तारि समणोवासगा" इत्यादि—एतदपि श्रमणोपासकसूत्रं निर्ग्रन्थसूत्रवद् बोध्यम्, इत्यत आह–"तहेवे"–ति–तथैव–यथा निर्ग्रन्था उक्तास्तथैव श्रमणोपासका अपि चतुर्भङ्गीयुक्ता बोध्या इति।

संक्षेपसे श्रमण निर्ग्रन्थोंके चार भेद इस प्रकारसे हैं—कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा ज्येष्ठ होता हुवाभी अनाराधक होता है–१ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा ज्येष्ठ हुवाभी आराधक होता है–२।

कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघु हुवाभी अनाराधक होता है–३ और एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघु हुवाभी आराधक होता है–४ "चत्तारि णिग्गंथीओ' इत्यादि.

इस सूत्रका विवरण निर्ग्रन्थ सूत्र जैसा जानना चाहिये अतः पूर्वोक्त रूपसेही यहां भङ्ग चतुष्टय कर लेना चाहिये। "चत्तारि समणोवासगे" इत्यादि इस श्रमणोपासक सूत्रकी व्याख्या भी पूर्वोक्त निर्ग्रन्थ सूत्रकी तरह करलेनी चाहिये इसीलिये तहेव ऐसा कहते हुवे सूत्रकार प्रकट करते हैं कि श्रमणोपासकभी निर्ग्रन्थोंके समानही चतु-

---

હવે શ્રમણુ નિર્ગ્રંથોના ચાર ભેદ સંક્ષિપ્તમાં પ્રકટ કરવામાં આવે છે.

(૧) દીર્ઘ દીક્ષા પર્યાયવાળો પણુ અનારાધક હોય એવો શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ.

(૨) દીર્ઘ દીક્ષાપર્યાયવાળો પણુ આરાધક હોય એવો શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ.

(૩) લઘુ દીક્ષાપર્યાયવાળો પણુ અનારાધક હોય એવો શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ.

(૪) લઘુ દીક્ષાપર્યાયવાળો પણુ આરાધક હોય એવો શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ.

"चत्तारि णिग्गंथीओ" ઇત્યાદિ—

ચાર પ્રકારની શ્રમણુ નિર્ગ્રંથિણીઓ (સાધ્વીઓ) હોય છે. આ સૂત્રનું વિવરણુ નિર્ગ્રંથ સૂત્ર અનુસાર કરવું જોઈએ. એટલે કે આ સૂત્રમાં નિર્ગ્રંથના જે ચાર પ્રકારો કહ્યા છે, એવા જ પ્રકારો શ્રમણુ નિર્ગ્રંથિણીના પણુ સમજી લેવા.

"चत्तारि समणोपासगे" ઇત્યાદિ—

શ્રમણોપાસકોના પણુ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. શ્રમણુ નિર્ગ્રંથના જે પ્રકાર આગળ કહેવામાં આવ્યા છે, એવા જ ચાર પ્રકાર શ્રમણોપાસકોના પણુ સમજવા. "तहेव" આ પદ દ્વારા એ વાત જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે શ્રમણોપાસકો પણુ શ્રમણુનિર્ગ્રંથોની જેમ ચાર પ્રકારના હોય છે.

"चत्तारि समणोवासिया" इत्यादि—एतदपि निर्ग्रन्थसूत्रवद् बोध्यम्, अत आह–"तहेव चत्तारि गमा"–तथैव–निर्ग्रन्थसूत्रे यथा चत्वारो गमाः= आलापका–भङ्गा उक्तास्तथा श्रमणोपासिकासूत्रेऽपि चत्वार आलापका भणनीयाः ॥ सू० २१ ॥

मूलम्—चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता, तं जहा--अम्मा-पिउसमाणे १, भाईसमाणे २, मित्तसमाणे ३ सवत्तिसमाणे ४,।१।

चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता, तं जहा—अद्दागसमाणे १, पडागसमाणे २, खाणुसमाणे ३, खरकंटकसमाणे ४ ।२। ॥ सू० २२ ॥

छाया—चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–मातापितृसमानः १ भ्रातृ समानः २, मित्रसमानः ३, सपत्नीसमानः ४।

भङ्गी युक्त होते है । "चत्तारि समणोवासिया" इत्यादि इस सूत्रका कथन भी निर्ग्रंथ सूत्र जैसा करलेना चाहिये निर्ग्रन्थ सूत्रमें जिस प्रकारसे चार आलापक कहे गये हैं उसी प्रकारसे श्रमणोपासिका सूत्रमेंभी चार आलापक कहलेना चाहिये ॥सू०२१॥

"चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता" इत्यादि–२२

सूत्रार्थ–श्रमणोपासक चार प्रकारके कहे गयेहैं, जैसे कोई एक श्रमणो पासक माता–पिताके जैसा होता है–१ कोई एक श्रमणोपासक अपने भाईके समान होता है–२ कोई एक श्रमणोपासक मित्रके समान होता है–३ और कोई एक श्रमणोपासक सपत्नीके समान होता

"चत्तारि समणोवासिया" ઇત્યાદિ—શ્રમણોપાસિકા (શ્રાવિકા)ના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે શ્રમણ નિર્ગ્રંથના જેવા ચાર પ્રકાર કહ્યા છે, એવા જ ચાર પ્રકાર શ્રમણોપાસિકાના પણ સમજવા. નિર્ગ્રંથ સૂત્ર જેવું જ કથન શ્રમણોપાસિકા સૂત્રમાં પણ ગ્રહણ થવું જોઈએ. ॥ સૂ. ૨૧ ॥

"चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ–શ્રમણોપાસકોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે–(૧) કોઇ શ્રમણો-પાસક માતાપિતા સમાન હોય છે. (૨) કોઇ શ્રમણોપાસક ભાઇ જેવો હોય છે (૩) કોઈ શ્રમણોપાસક મિત્ર જેવો હોય છે (૪) કોઈ શ્રમણોપાસક સપત્નીના જેવો હોય છે–એટલે કે શોકયસમાન હોય છે.

चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-आदर्शसमानः १, पताकासमानः २, स्थाणुसमानः ३, खरकण्टकसमानः ४।

टीका—" चत्तारि समणोवासगा " इत्यादि—श्रमणोपासकाः-श्रमणानुपासत इति श्रमणोपासकाः=साधुसेवाकारकाः श्रावका इत्यर्थः, चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मातापितृसमानः-माता च पिता चेति मातापितरौ तयोस्ताभ्यां वा समान स्तथा=मातापितरौ यथा स्वपुत्रे निर्हेतुकमत्यन्तं वात्सल्यं कुरुतस्तथा यः श्रावकः साधुषु कारणं विनैवैकान्तेन वात्सल्यं करोति स मातापितृतुल्यो भवति, अपूर्वधर्मानुरागरञ्जितहृदयत्वात् १. तथा-भ्रातृसमानः भ्राता यथा प्रत्येक-

है-४ पुनश्च—श्रमणोपासक चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक श्रमणोपासक आदर्शके समान होता है-१ कोई एक श्रमणोपासक पताका के समान होता है २, कोई एक श्रमणोपासक स्थाणु के समान होता है-३ कोई एक श्रमणोपासक खरकण्टकके समान होता है-४।

टीकार्थ-श्रमणोंकी जो उपासना करते हैं वे श्रमणोपासक हैं, अर्थात्-साधुजनोंकी सेवा करनेवाला श्रावक श्रमणोपासक हैं। इनमें जो चतुर्विधता है उसका तात्पर्य है कि जैसे मातापिता अपने पुत्रों पर अत्यन्त वात्सल्य रखते हैं उसी प्रकार जो श्रावक साधुओं पर बिना कारणही एकान्त रूपसे वात्सल्य रखते हैं, वे श्रावक मातापिताके समान कहे गये हैं। क्योंकि इनका हृदय अपूर्व धर्मानुरागसे रञ्जित

શ્રમણોપાસકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ શ્રમણોપાસક આદર્શ (દર્પણ) સમાન હોય છે. (૨) કોઈ શ્રમણોપાસક પતાકા સમાન હોય છે. (૩) કોઈ એક શ્રમણોપાસક સ્થાણુ (વૃક્ષનું ઠુંઠું-થડ) સમાન હોય છે (૪) કોઇ એક શ્રમણોપાસક ખરકંટક (બાવળના કાંટા) સમાન હોય છે.

ટીકાર્થ—હવે આ સૂત્રનો સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—શ્રમણોની ઉપાસના કરનારને શ્રમણોપાસક (શ્રાવક) કહે છે એટલે કે સાધુજનોની સેવા કરનાર શ્રાવકને શ્રમણોપાસક કહે છે હવે તેના ચાર પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે જેમ માતાપિતા પોતાના સંતાનો પ્રત્યે અસીમ વાત્સલ્ય રાખે છે, એજ પ્રમાણે સાધુઓ પ્રત્યે કોઈ પણ પ્રકારની સ્પૃહા વિના અપાર વાત્સલ્ય રાખનાર શ્રાવકને માતાપિતા સમાન કહ્યો છે, કારણ કે તેનું હૃદય અપૂર્વ ધર્માનુરાગથી રંજિત હોય છે. (૨) જેમ ભાઇ પ્રત્યેક કાર્યમાં સહાયક થાય

कार्ये सहायको भवति तथा साधूनां प्रत्येकधर्मकार्ये यः श्रावकः सहायको भवति स भ्रातृसमानः-बन्धुसदृश इत्यर्थः, भ्रातृभिश्च धर्मकार्यविषये स्मरणादिकं कर्तव्यम् उक्तं च—

" भवगिहमज्झम्मि पमायजलणजलिअम्मि ।
उट्ठवइ जो सुअंतं सो तस्स जणे परमबंधू ॥१॥

छाया—" भवगृहमध्ये प्रमादज्वलनज्वलिते ।
उत्थापयति यः स्वपन्तं स तस्य जनः परमबन्धुः ।१। " इति ।२।

तथा-मित्रसमानः-मित्रतुल्यः-मित्रं यथा-सदा हितचिन्तकं भवति तथा यः श्रावकः साधूनां सदा हितचिन्तको भवति स मित्रसमानः ३।

उक्तंञ्च—" केन रत्नमिदं सृष्टं, मित्रमित्यक्षरद्वयम् ।
आपदां च परित्राणं, संसारमलनाशनम् ।१॥ " इति ।

तथा—सपत्नीसमानः-सपत्नी-एकस्वामिका स्त्री तत्समानः, सपत्नी यथा सपत्न्या दूषणं गवेषयति अपकरोति च, तथा यः श्रावकः साधुषु दोषमन्वेषयति अपकरोति च स सपत्नीसमानो भवति ।४। ॥१॥

होता है-१ तथा जिस प्रकारसे भ्राता प्रत्येक कार्यमें सहायक होता है उसी प्रकारसे जो साधुजनोंके प्रत्येक धर्मकार्यमें सहायक होते हैं, वे श्रावक भ्राताके समान कहे गये हैं-२ परम बन्धुके विषयमें ऐसा कहा गया है " भवगिह मज्झम्मि "—इत्यादि

तथा जिस प्रकारसे हितचिन्तक मित्र होता है उसी प्रकारसे जो सदा साधुजनोंका हितचिन्तक होता है वे श्रावक मित्रके समान कहे गये हैं। कहाभी है—" केन रत्नमिदं सृष्टं " इत्यादि। तथा जिस प्रकारसे सपत्नी (सौत) सपत्नीके दूषणोंकी ओर निगाह रखतीहै उनकी खोजमें रहती है उसका अपकार करती है, उसी प्रकारसे जो श्रावक

છે, એજ પ્રમાણે પ્રત્યેક ધર્મકાર્યમાં સાધુજનોને સહાયભૂત થનાર શ્રાવકને ભ્રાતા સમાન કહ્યો છે. ઉત્તમ ભ્રાતા વિષે આ પ્રમાણે કહ્યું છે—

" भवगिहमज्झम्मि " ઇત્યાદિ—

જેમ મિત્ર પોતાના મિત્રનો હિતચિન્તક હોય છે, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવક સાધુજનોનો હિતચિન્તક હોય છે, તેને મિત્ર સમાન શ્રમણોપાસક કહ્યો છે કહ્યું પણ છે કે-" केन रत्नमिदं सृष्टं " ઇત્યાદિ.

જેમ સપત્ની બીજી સપત્નીનાં (શોકયના) દૂષણો જ શોધ્યા કરે છે, અને તેનો અપકાર જ કરે છે, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવક સાધુજનોના દોષો જ

पुनः " चत्तारि समणोवासगा " इत्यादि—चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-आदर्शसमानः-आदर्शो-दर्पणः, तेन समानस्तथा=यथा-दर्पणः स्वसन्निहितानर्थान् प्रतिबिम्बितान् यथावत् प्रतिपद्यते, तथा यः श्रावकः साधुभिरुपदिश्यमानान् उत्सर्गापवादादीन् भावान् प्रतिपद्यते-स्वीकरोति स आदर्शसमानः १।

तथा-पताकासमानः-पताका यथा विचित्रपवनेन सर्वतश्चाल्यते तथा यस्य श्रावकस्यानवस्थितबोधो विचित्रदेशनया चाल्यते स पताकासमानः २। तथा-स्थाणुसमानः-तिष्ठतीति स्थाणुः-शङ्कुः, तत्समानः-स्थाणुर्यथा न नम्रीक्रियते नापि चाल्यते तथा यः श्रावकः सुगुरुदेशनया कुतश्चिदपि कदाग्रहान्न नम्री क्रियते

साधुजनोंके दोषोंकाही अन्वेषण किया करते हैं उनकी बुराई-या अपकार करते हैं वे श्रावक सपत्नी समान कहे गये हैं। पुनश्च—आदर्श नाम दर्पण (ऐनक) जैसे अपने समीपवर्ती पदार्थोंके प्रतिबिम्बको धारण करता है उसी प्रकार साधुजन द्वारा उपदिष्ट या उपदिश्यमान उत्सर्ग और अपवादरूप भावोंको जो श्रावक यथावत् स्वीकार करता है वह आदर्शका समान कहा गया है-१ तथा पताका जिस प्रकार विचित्र पवन द्वारा सब ओर से चञ्चल करदी जाती है वैसे जिन श्रावकका अनवस्थित बोध विलक्षण देशनासे नयमिश्रित कथनसे चलायमान किया जा सके वह श्रावक पताका के समान कहा गया है-२ जैसे स्थाणु न कभी चलायमान किया जाता है और न कभी नमाया जा सकता है वैसे तो श्रावक सुगुरुकी देशनासे भी

શોધ્યા કરે છે, તેમનુ અહિત જ કરે છે અથવા તેમનો ઉપકાર કરે છે, એવા શ્રાવકને સપત્ની સમાન કહ્યો છે.

શ્રમણોપાસકોના આદર્શ સમાન આદિ ચાર પ્રકારોનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—(૧) આદર્શ એટલે દર્પણ જેમ દર્પણ પોતાની સામેની વસ્તુઓના યથાર્થ પ્રતિબિંબને ધારણ કરે છે, એજ પ્રમાણે સાધુજનો દ્વારા ઉપદિષ્ટ અથવા ઉપદિશ્ય માન, ઉત્સર્ગ અને અપવાદ રૂપ ભાવોનો જે શ્રાવક યથાર્થ રૂપે સ્વીકાર કરે છે તે શ્રાવકને આદર્શ સમાન કહે છે. (૨) જેમ પતાકા પવન દ્વારા ચલાયમાન્ થાય છે-સ્થિરતા છોડીને ચંચલતા સંપન્ન બને છે, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવકના અનવસ્થિત બોધને વિલક્ષણ દેશના દ્વારા નયમિશ્રિત કથન દ્વારા ચલાયમાન કરી શકાય છે તે શ્રાવકને પતાકા સમાન કહ્યો છે. (૩) જેમ સ્થાણુને (વૃક્ષના ઠૂંઠાને) કદી ચલાયમાન કરી શકાતું નથી કે નમાવી શકાતું નથી, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવક સુગુરુની દેશના સાંભળવા

नापि च चाल्यते दुर्बोधत्वात् स स्थाणुसमानः ३। तथा-खरकण्टकसमानः-खराः-तीक्ष्णाः कण्टका यस्मिन् तत् खरकण्टकं वर्बुरवृक्षशाखादि तस्य क्वचिदङ्गे वस्त्रे वा लग्नं सन्न केवलमङ्गं वा पटं सहसा मुञ्चति, अपि तु तन्मोचकपुरुषादिकं करादिषु कण्टकैर्विध्यति, यद्वा खरकण्टयति-लेपवन्तं करोतीति खरकण्टं तदेव खरकण्टकम्-अशुच्यादिवस्तु. तेन समानः खरकण्टकसमानः, यथा खरकण्टकं संसर्गमात्रादेवापनयनकारकं दोषयुक्तं करोति, तथा यः श्रावकः संसर्गमात्रात् साधुं 'कुबोधकुशीलतादिजनकत्वेनोत्सूत्रप्ररूपकोऽय' मित्याद्यसद्दोषप्रकटनया दोषवन्तं करोति स खरकण्टकसमानः ।४। सू० २२ ।

अपने कदाग्रह अनुचित हठसे पीछे नही हटता-टलता है नम्रीभूत नही होता है ऐसा वह दुर्बोध्य श्रावक स्थाणु-ठूठा वृक्षके समान है-३ जैसे तीक्ष्ण कांटोंसे भरपूर वबूल आदिका डाल यदि किसी अङ्गमें या कपडोंमें उलझ जाय तो वह सहसा अलग नहीं होती किन्तु उसे छुडानी पडती है ऐसी स्थितिमें वह छुडानेवालोंके हाथको भी वेधती है ऐसे पदार्थोंका नाम खरकण्टक है, जो श्रावक इसके समानताको धारण करे वह खरकण्टक समान है, जैसे खरकण्टक वस्तु संसर्ग मात्रसे दोषयुक्त बना देती है वैसे जो श्रावक अपने संसर्ग मात्रासेही उस साधुके असद्दोषोंकी उद्भावना करता हुवा "यह

છતાં પણ પોતાનો કદાગ્રહ છોડતો નથી-પોતાની અનુચિત વાતને જ પકડી રાખે છે-સહેજ પણ નમ્રો (નમ્રીભૂત) થતો નથી એવા શ્રાવકને સ્થાણુ સમાન કહે છે. (૪) ખરકંટક સમાન શ્રમણોપાસકનો ભાવાર્થ--તીક્ષ્ણ કાંટાઓથી ભરપૂર બાવળ આદિની ડાળી કોઈ અંગમાં કે કપડામાં ભરાઇ જાય તો તે સરળતાથી અલગ થતી નથી, પણ પ્રયત્નપૂર્વક તેને અલગ કરવી પડે છે અને એ વખતે અલગ કરવાનો પ્રયત્ન કરનારના હાથમાં પણ તે તીક્ષ્ણ કાંટા વાગી જાય છે, આ પ્રકારના પદાર્થોને ખરકંટક કહે છે જે શ્રાવકનો સ્વભાવ આ ખરકંટકના જેવો હોય છે તેને ખર સમાન કહે છે જેમ ખરકંટકનો સ્પર્શ માત્ર જ દોષયુક્ત અથવા વ્યથાજનક થઇ પડે છે એજ પ્રમાણે ખરકંટક સમાન શ્રાવક પોતાના સંસર્ગ માત્રથી સાધુમાં અસદ્દોષોની (જે દોષનું અસ્તિત્વ જ ન હોય એવા દોષોની) ઉદ્ભાવના કરે છે. "આ સાધુ કુબોધ, કુશીલતા આદિનો જનક હોવાથી ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપક છે" ઇત્યાદિ રૂપે સાધુમાં ખોટા દોષોનું આરોપણ કરનાર હોય છે અને કંટકની જેમ

श्रमणोपासकप्रसङ्गाच्छ्रीमहावीरस्वामिनः श्रमणोपासकानामरुणाभविमानस्थितिं निरूपयितुमाह—

मूलम्—समणस्स णं भगवओ महावीरस्स समणोवासगाणं सोहम्मकप्पे अरुणाभे विमाणे चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ सू० २३ ॥

छाया—श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य श्रमणोपासकानां सौधर्मकल्पे अरुणाभे विमाने चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सू० २३ ॥

टीका—" समणस्स णं "इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-श्रमणोपासकानां दशानाम् आनन्द १ कामदेव २ गाथापतिचुलनीपितृ ३ सुरादेव ४ क्षुद्रशतक ५ गाथापति-कुण्डकौलिक ६ सद्दालपुत्र ७ महाशतक ८ नन्दिनीपितृ ९ शालेयिकापितॄणा· १० मुपासकदशाङ्गोक्तानामिति ॥ सू० २३ ॥

कुबोध-कुशीलता आदिका जनकहोनेसे उत्सूत्र प्ररूपक है " इत्यादि रूपसे साधुको दोषवाला कर देता है वह खरकण्टक समानहै ॥सू०२२॥

अब सूत्रकार श्रमणोपासकके प्रसङ्गसेही श्री महावीरस्वामीके श्रमणोपासकोंकी विमानमें वर्तमानस्थितिका कथन करते हैं—

" समणस्स भगवओ " इत्यादि २३

श्रमण भगवान् महावीरके श्रमणोपासकोंको सौधर्म कल्पमें अरुणाभ विमानमें चार पल्योपमकी स्थिति कही गई है। भगवान् महावीरके १० श्रमणोपासक थे. आनन्द-१ कामदेव-२ गाथापति चुलनी पिता-३ सुरादेव-४ क्षुद्रशतक-५ गाथापति कुण्डकौलिक-६ सद्दालपुत्र-७ महाशतक-८ नन्दिनी पिता-९ और शालेयिका पिता-१० ये इनके नाम उपासकदशाङ्गमें कहे गये है ॥सू०२३॥

તેમના હૃદયમાં વ્યથા ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે તે કારણે એવા શ્રાવકને ખર કંટક સમાન કહ્યો છે ॥ સૂ. ૨૨ ॥

શ્રમણોપાસકોના કથનને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર વૈમાનિક દેવપર્યાયને પામેલા મહાવીર પ્રભુના શ્રમણોપાસકોની ત્યાંની આયુસ્થિતિની પ્રરૂપણા કરે છે-

" સમણસ્સ ણં ભગવઓ ઇત્યાદિ સૂ. ૨૩

શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના જે શ્રમણોપાસકો સૌધર્મ કલ્પના અરુણાભ વિમાનમાં દેવપર્યાયે ઉત્પન્ન થયા છે તેમની ત્યાંની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની કહી છે આ પ્રકારના મહાવીર પ્રભુના ૧૦ શ્રમણોપાસકોના નામ આ પ્રમાણે હતાં—(૧) આનંદ, (૨) કામદેવ (૩) ગાથાપતિ ચુલની પિતા, (૪) સુરાદેવ, (૫) ક્ષુદ્રશતક, (૬) ગાથાપતિ કુંડકૌલિક, (૭) સદ્દાલ પુત્ર, (૮) મહાશતક, (૯) નન્દિની પિતા (૧૦) શાલેયિકા પિતા. આ નામો ઉપાસકદશાંગમાં આપ્યા છે. ॥ સૂ ૨૩ ॥

देवस्य मनुष्यलोकानागमनकारणम्—

चउहिं ठाणेहिं अहुणोववन्ने देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए, णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए, तं जहा-अहुणोववन्ने देवे देवलोएसु दिव्वेसु कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे से णं माणुस्सए कामभोगे णो आढाइ णो परियाणाइ णो अट्ठं बंधइ णो णियाणं पगरेइ णो ठिइपकप्पं पगरेइ १, अहुणोववन्ने देवे देवलोएसु दिव्वेसु कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे तस्स णं माणुस्सए पेमे वोच्छिन्ने दिव्वे पेमे संकंते भवइ २।

अहुणोववन्ने देवे देवलोएसु दिव्वेसु कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे, तस्स णं एवं भवइ-इण्हिं गच्छं मुहुत्तं गच्छं, तेणं कालेणमप्पाउया माणुस्सा कालधम्मुणा संजुत्ता भवंति ३,

अहुणोववन्ने देवे देवलोएसु दिव्वेसु कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववन्ने, तस्स णं माणुस्सए गंधे पडिकूले पडिलोमे यावि भवइ, उड्ढं पि य णं माणुस्सए गंधे जाव चत्तारि पंच जोयणसयाइं हव्वमागच्छइ ४, इच्चेएहिं चउहिं ठाणेहिं अहुणोववन्ने देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए ॥

देवागमनकारणम्

चउहिं ठाणेहिं अहुणोववन्ने देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए संचाएइ हव्वमागच्छित्तए, तं जहा-अहुणोववन्ने देवे देवलोएसु दिव्वेसु कामभोगेसु अमुच्छिए,

जाव अणज्झोववन्ने तस्स णं एवं भवइ--अत्थि खलु मम माणुस्सए भवे आयरिएइ वा उवज्झाएइ वा पवत्तीइ वा थेरेइ वा गणीइ वा गणधरेइ वा गणावच्छेएइ वा, जेसिं पभावेणं मए इमा एयारूवा दिव्वा देविड्ढी दिव्वा देवजुई लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया, तं गच्छामि णं ते भगवंते वंदामि जाव पज्जुवासामि १।

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु जाव अणज्झोववण्णे, तस्स णमेवं भवइ--एस णं माणुस्सए भवे णाणीति वा तवस्सीति वा अइदुक्करदुक्करकारए, तं गच्छामि णं ते भगवंते वंदामि जाव पज्जुवासामि २,

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु जाव अणज्झोववण्णे, तस्स णमेवं भवइ--अत्थि णं मम माणुस्सए भवे मायाइ वा जाव सुण्हाइ वा तं गच्छामि णं तेसिमंतिअं पाउब्भवामि, पासंतु ता मे इममेयारूवं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुइं लद्धं पत्तं अभिसमन्नागयं ३,

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु जाव अणज्झोववण्णे, तस्स णमेवं भवइ--अत्थि णं मम माणुस्सए भवे मित्तेइ वा सहीइ वा सुहीइ वा सहाएइ वा संगइएइ वा, तेसिं च णं अम्हे अन्नमन्नस्स संगारे पडिसुए भवइ, जो मे पुव्विं चयइ से संबोहेयव्वे, इच्चेएहिं जाव संचाएइ हव्वमागच्छित्तए ४। ॥ सू० २४ ॥

छाया—चतुर्भिः स्थानैः अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु इच्छेत् मानुषं लोकं हव्यमागन्तुं नो चैव खलु शक्नोति हव्यमागन्तुम्, तद्यथा–अधुनोपपन्नो देवो

देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, स खलु मानुष्यकं कामभोगं नो आद्रियते नो परिजानाति नो अर्थं बध्नाति नो निदान प्रकरोति नो स्थितिप्रकल्पं प्रकरोति १।

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, तस्य खलु मानुष्यकं प्रेम व्युच्छिन्नं दिव्यं प्रेम संक्रान्तं भवति । २।

देवोंके अनागमनका कारण—

" चउहिं ठाणेहिं अहुणोववन्ने देवे " इत्यादि २४

सूत्रार्थ–किसी एक देवलोकमें उत्पन्न हुवा देव मनुष्यलोकमें शीघ्र आनेकी इच्छा तो करता है पर इन चार कारणोंसे शीघ्र यहां आ नहीं सकता है। देवलोकमें उत्पन्न होते ही वहांके कामभोगोंमें मूर्च्छित–गृद्ध–ग्रथित–अध्युपपन्न हो जाता है, अतः–मनुष्य सम्बन्धी कामभोगोंको वह आदर दृष्टिसे नहीं देखता है, ये मेरे कामके हैं ऐसा उन्हें नहीं मानता है इनसे मेरा प्रयोजन सिद्ध होगा ऐसी बुद्धि उनसे नहीं करता है, ये पुनः मुझे मिलें ऐसी भावना नहीं करता है और उनमें स्थितिका विकल्पही करता है। यह प्रथम कारण है–१

दूसरा कारण—देवलोकमें उत्पन्न नया देव दिव्य कामभोगोंमें मूर्च्छित–गृद्ध–अध्युपपन्न होकर ऐसा हो जाता है कि उसको भीतरसे मनुष्य सम्बन्धी प्रेम व्युच्छिन्न हो जाता है और दिव्य प्रेम उसमें संक्रान्त हो जाता है–२

–દેવોના અનાગમનનાં કારણો—

चउहिं ठाणेहिं अहुणोववन्ने देवे " ઈત્યાદિ—(સૂ. ૨૪)

સૂત્રાર્થ–કોઈ એક દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો દેવ તુરત જ મનુષ્યલોકમાં આવવાની ઇચ્છા તો કરે છે, પણ આ ચાર કારણોને લીધે તુરત જ અહીં આવી શકતો નથી–(૧) દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થતાંની સાથે જ તે ત્યાંના કામભોગોમાં મૂર્ચ્છિત, ગૃદ્ધ, ગ્રથિત અને અધ્યુપપન્ન થઈ જાય છે તે કારણે મનુષ્યભવના કામભોગોને તે આદરની દૃષ્ટિએ જોતો નથી, તે મારે કામના છે એવું માનતો નથી, તે કામભોગો દ્વારા પોતાનું પ્રયોજન સિદ્ધ થશે એવું તે માનતો નથી, તે ફરી પોતાને પ્રાપ્ત થાય એવી ભાવના સેવતો નથી અને હું તે કામભોગોનો ઉપભોક્તા જ બની રહું, એવો સ્થિતિ વિકલ્પ પણ તે ઇચ્છતો નથી. આ પહેલું કારણ છે

બીજું કારણ—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો નવો દેવ દિવ્ય કામભોગોમાં એવો તો મનુષ્યભવ પ્રત્યેનો પ્રેમ વ્યુચ્છિન્ન (નષ્ટ) થઇ જાય છે, અને દેવલોક પ્રત્યેનો પ્રેમ સંક્રાન્ત થઇ જાય છે.

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, तस्य खलु एवं भवति-इदानीं गमिष्यामि मुहूर्तेन गमिष्यामि, तेन कालेन अल्पायुषो मनुष्याः कालधर्मेण संयुक्ता भवन्ति ३,

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, तस्य खलु मानुष्यको गन्धः प्रतिकूलः प्रतिलोमश्चापि भवति, ऊर्ध्वमपि च खलु मानुष्यको गन्धो यावत् चत्वारि पञ्चयोजनशतानि हव्यमागच्छति ४। इत्येतैश्चतुर्भिः स्थानैः अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु इच्छेद् मानुषं लोकं हव्यमागन्तुं नो चैव खलु शक्नोति हव्यमागन्तुम् ।

तृतीय कारण-ऐसा है कि देवलोकमें नया-१ उत्पन्नदेव कामभोगोंमें मूर्च्छित-गृद्ध-ग्रथित अध्युपपन्न "अब जाता हूं थोडी देर बाद जाऊंगा" आदि विचारता जब तक आना चाहता है उसके अन्दर-२ यहां जो उनके माता-पिता आदि परिवार होते हैं वे तब तक कालधर्म संयुक्त हो जाते हैं अतः फिर वह नहीं आता है-३

चौथा कारण—कि वह देवलोकमें अधुनोपपन्नदेव वहां के दिव्य काम भोगोंमें जब तल्लीन हो जाता है तब उसे मनुष्यगन्ध प्रतिकूल बिलकुल अमनोज्ञ जान पडती है वह गन्ध मनुष्य लोकसे ऊपर ४-५ सौ युगलियों की अपेक्षा ४०० चारसौ कर्मभूमि की अपेक्षा पांचसौ योजन तक ऊंची पहुंचती है जो उन्हें रुचती नहीं इससे देव यहां आते नहीं-४

त्रीजुं कारण—देवलोकमां उत्पन्न थयेलो नवो देव कामभोगोमां एवो तो आसक्त, गृद्ध, ग्रथित अने अध्युपपन्न थई जाय छे के "हमणां ज मनुष्यलोकमां जउं छुं-थोडी वार आ कामभोगो भोगवीने मनुष्यलोकमां जईश" आ प्रकारनो विचार करतां करतां एटलो लांबो समय पसार थई जाय छे के त्यां सुधीमां तेना माता, पिता आदि सगांसंबंधीओ काळधर्म पामी जाय छे अने तेमने काळधर्म पामेला जाणीने ते देव मनुष्यलोकमां आववानो विचार ज मांडी वाळे छे

चोथुं कारण—देवलोकमां उत्पन्न थयेलो नवो देव ज्यारे त्यांना कामभोगोमां लीन थई जाय छे, त्यारे तेने मनुष्यगंध प्रतिकूळ-अमनोज्ञ लागे छे. ते गंध मनुष्यलोकनी उपर ४००-५०० योजन सुधी फेलायेली होय छे ते गंध नही रुचवाने कारणे ते अहीं आवतो नथी.

चतुर्भिः स्थानैरधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु इच्छेन् मानुषं लोकं हव्यमागन्तुं शक्नोति हव्यमागन्तुम् , तद्यथा—अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु अमूर्च्छितो यावत् अनध्युपपन्नः, तस्य खलु एवं भवति—अस्ति खलु मम मानुष्यके भवे आचार्य इति वा उपाध्याय इति वा प्रवर्ती इति वा स्थविर इति वा गणी इति वा गणधर इति वा गणावच्छेदक इति वा, येषां प्रभावेण मया इमा एतद्रूपा दिव्या देवर्द्धिः दिव्या देवद्युतिः लब्धा प्राप्ता अभिसमन्वागता, तत् गच्छामि खलु तान् भगवतः वन्दे यावत् पर्युपासे १।

अधुनोपपन्नो देवो देवो देवलोकेषु यावत् अध्युपपन्नः, तस्य खलु एवं भवति-एष खलु मानुष्यके भवे ज्ञानीति वा तपस्वीति वा अतिदुष्करदुष्करकारकः तद्गच्छामि खलु तान् भगवतो वन्दे यावत् पर्युपासे २।

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु यावत् अनध्युपपन्नः, तस्य खल्वेवं भवति—अस्ति खलु मम मानुष्यके भवे मातेति वा यावत् स्नुषेति वा, तद्गच्छामि खलु तेषामन्तिकं प्रादुर्भवामि पश्यन्तु तावत् मे इमामेतद्रूपां दिव्यां देवर्द्धिं दिव्यां देवद्युतिं लब्धां प्राप्तामभिसमन्वागताम् ।३

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु यावत् अनध्युपपन्नः तस्य खलु एवं भवति—अस्ति खलु मम मानुष्यके भवे मित्रमिति वा सखेति वा सुहृदिति वा सहाय इति वा साङ्गतिक इति वा, तेषां च खलु अस्माभिः अन्योन्यं सङ्केतः प्रतिश्रुतो भवति—योऽस्माकं पूर्वं च्यवते स सम्बोधयितव्यः । इत्येतैः यावत् शक्नोति हव्य मागन्तुम् ॥ सू० २४ ॥

टीका—' चउहिं ठाणेहिं ' इत्यादि—

चतुर्भिः वक्ष्यमाणैः स्थानैः=कारणैः अधुनोपपन्नः—अचिरोत्पन्नः—तत्कालोत्पन्न इत्यर्थः, देवो देवलोकेषु मानुषं=मनुष्यसम्बन्धिनं लोकं—मर्त्यलोकं 'हव्व' मिति देशिकशब्दोऽयं शीघ्रार्थकः, तेन शीघ्रमित्यर्थ, आगन्तुम् , इच्छेत् , नो=नैव च=पुनः नैव स हव्यं=शीघ्रमागन्तुं शक्नोति, कुतो नाऽऽगन्तुं शक्नोतीत्याह—" तद्यथा "—अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु—मनोज्ञेषु कामभोगेषु—काम्यन्त इति कामाः—कमनीयास्ते च भोगाः—भुज्यन्ते—इन्द्रियैः सेव्यन्त इति भोगाः=

इस सूत्रमें आये हुवे अधुनोपपन्नक आदि पदोंका स्पष्टीकरण तत्काल उत्पन्न को अधुनोपपन्न कहा गया है हव्व शब्द शीघ्रार्थक है चाहनाका विषयभूत जो हो वह काम है कामही भोग है । क्योंकि

ભાવાર્થ—તત્કાલ ઉત્પન્ન થયેલા દેવને અધુનોપપન્નક દેવ કહે છે. " हव्व " આ પદ શીઘ્રાર્થક છે. ચાહનાને વિષયભૂત વસ્તુને કામ કહે છે અને એ કામ જ ભોગરૂપ છે કારણ કે તેમને ઇન્દ્રિયો દ્વારા ભોગવાય છે

शब्दादयश्चेति कामभोगाः, यद्वा-काम्येते इति कामौ=शब्दरूपलक्षणौ च भोगाः-गन्धरसस्पर्शाश्चेति कामभोगाः, यद्वा-कामानां-कमनीयानां शब्दादीनां भोगाः=सेवनानि, तेषु मूर्च्छितः-कामभोगानां विनश्वरत्वादि ज्ञातुमशक्यतया मोहं गतः, गृद्धः=कामभोगेच्छासमन्वितो घृतसिक्तवह्निरिवाऽतृप्तः, ग्रथितः=कामभोगानुरागरज्जुबद्धः, अभ्युपपन्नः-अत्यन्तं विषयपरिभोगाधीनो भवति अत एव स-देवः खलु मानुष्यकान्-मनुष्यलोकभवान् कामभोगान् नो आद्रियते=आदरं न करोति,

यह इन्द्रियों द्वारा भोगा जाता है अथवा—जिनमें चाहना जाती है ऐसे शब्दरूप काम हैं तथा गन्ध रस और स्पर्श ये भोग है। अथवा कामका अर्थ कमनीय है, ऐसे कमनीय शब्दादिकोंका जो भोग है वह सेवन करना है वह कामभोग है। देव कामभोगोंकी विनश्वरता जाननेमें असमर्थ होता है, अतः-वे उनका कामभोगोंमें मूर्च्छित-मोहंगत हो जाते हैं। कामभोगकी इच्छासे समन्वित हुवा देव घृत-सिक्त अग्नि जैसे गृद्ध-अतृप्त बन जाता है। ग्रथित कामभोगानुराग रूपी रस्सीसे वह जकड जाता है, और इस तरह वह अन्तमें अध्यु-पपन्नक अत्यन्त विषयभोगका सर्वथा अधीन बन जाता है। तात्पर्यकि देवलोकोंमेंसे किसी एक देवलोकमें अधुनोपपन्नक देव वहांके काम-भोगोंको इतना अधिक आनन्ददायक मानने लगता है जिससे फिर वह मनुष्यलोक सम्बन्धी कामभोगोंको बिलकुल असार मानने लगता है और इस तरहसे वह उनको आदर दृष्टिसे नहीं देखता है कारणकि

અથવા જેની ચાહના થાય છે એવા શબ્દ રૂપ કામ હોય છે અને ગંધ, રસ અને સ્પર્શ, એ ભોગરૂપ છે અથવા કામનો અર્થ કમનીય પણ થાય છે એવાં કમનીય શબ્દાદિકોનો જે ભોગ છે તેને કામભોગ કહે છે દેવો કામભોગોની વિનશ્વરતા (અનિત્યતા) જાણવાને અસમર્થ હોય છે, તેથી તેઓ તે કામભોગોમાં મૂર્ચ્છિત (આસકત) થઇ જાય છે કામભોગની ઇચ્છાથી યુકત થયેલો દેવ ધૃતાસિકત અગ્નિ સમાન ગૃદ્ધ (અતૃપ્ત, લોલુપ) બની જાય છે. કામભોગરૂપી દોરડા વડે જકડાવાને કારણે તે તેમાં ગ્રથિત થઇ જાય છે અને 'અધ્યુપપન્ન' વિષય ભોગને સર્વથા આધીન બની જાય છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે કોઈ એક દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો નવો દેવ (અધુનો-પપન્નક દેવ) ત્યાંના કામભોગોને એટલાં બધાં આનંદદાયક માનવા લાગે છે કે મનુષ્યલોક સબંધી કામભોગો તો તેને બિલકુલ અસાર લાગે છે, અને આ રીતે તે તેમને આદર દૃષ્ટિથી જોતો નથી કારણ કે તે એવું માનતો નથી

नो परिजातानि—एते मनुष्यसम्बन्धिकामभोगा अपि मगोपभोग्यपदार्थाः सन्तीति न मन्यते, दिव्यकामभोगापेक्षया तेषां तुच्छत्वात्, तथा—मानुष्यककामभोगेषु नो अर्थं बध्नाति=' अमीभिरेतत्प्रयोजन ' मित्याकारकनिश्चयं न करोति, तथा—तेषु नो निदानम्—' एते मे भवन्त्वि ' त्येवमभिलाषं नो प्रकरोति, तथा—नो स्थितिप्रकल्पम्—एषूपभोक्तृत्वेनाहं—तिष्ठामि, यद्वा—' ममैते तिष्ठन्त्वि ' त्येवंरूपमवस्थानविकल्पं न प्रकरोति=न प्रारभते ' प्र ' शब्दस्य प्रारम्भद्योतकत्वात् प्रारम्भं न करोतीत्यर्थः १। इति प्रथमकारणम् । १ ।

" अहुणोववन्ने "—त्यादि—अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नो भवत्यत एव तस्य देवस्य हृदि खलु

" ये मनुष्य सम्बन्धी कामभोग भी उपभोग्य पदार्थ हैं " फिर ऐसा वह उन्हें नही समझता है। क्योंकि--वह उन्हें दिव्यकामभोगोंकी अपेक्षा तुच्छ—असार मानने लगताहै " इन मनुष्य सम्बन्धी कामभोगों से मेरा यह प्रयोजन सधेगा इस प्रकार का निश्चय विश्वास फिर वह उनमें नहीं बाँधता है।, तथा--" मुझे ये पुनः प्राप्त हों " ऐसी उनमें अभिलाषभी नहीं करता है " मैं इसका उपभोक्ता बना रहूं " ऐसा वह स्थितिका विकल्प भी नहीं करता है। अथवा-" ये मेरे पास बने रहें " ऐसा अवस्थान रहनेका विकल्प तकभी उसे नहीं उठता है, यहाँ "प्र" शब्द आरम्भका द्योतक है। इस प्रकारका यह प्रथम कारण है मर्त्यलोकमें स्वर्गसे नही आनेका—१ द्वितीय कारणभी ऐसाही है परन्तु—वह देव जब पूर्वोक्त इन विशेषणोंवाला हो जाता है तब

કે " મનુષ્ય સંબંધી કામભોગો પણ ઉપભોગ્ય પદાર્થો છે, " કારણ કે દિવ્ય કામભોગોની અપેક્ષાએ તો તે કામભોગો તેને બિલકુલ તુચ્છ-અસાર લાગે છે, વળી તેને એવું પણ લાગતું નથી કે " મનુષ્યભવ સબંધી કામભોગોથી મારું પ્રયોજન સિદ્ધ થશે " વળી "એ કામભોગોની મને ફરી પ્રાપ્તિ થાય", એવી અભિલાષા પણ તે રાખતો નથી. " હું તે કામભોગોનો ઉપભોકતા જ બની રહું " એવો તે સ્થિતિનો વિકલ્પ પણ કરતો નથી. અથવા " તે મારી પાસે જ કાયમ રહે " આ પ્રકારનો અવસ્થાન (સ્થિતિ) રહેવાનો વિકલ્પ પણ તેના મનમાં ઉદ્ભવતો નથી. અહીં "પ્ર" શબ્દ આરંભનો દ્યોતક છે. આ કારણે તે અધુનોપપન્ન દેવ દેવલોકમાંથી મર્ત્યલોકમાં આવતો નથી. અહીં પહેલા કારણનું સ્પષ્ટીકરણ પુરું થાય છે.

બીજા કરણનું સ્પષ્ટીકરણ—તે અધુનોપપન્ન દેવ જ્યારે મૂર્ચ્છિત આદિ પૂર્વોકત વિશેષણોથી યુકત બને છે, ત્યારે મનુષ્યભવ સંબંધી કામભોગ

मानुष्यकं प्रेम-मनुष्यभवसम्बन्धिकामभोगानुरागः, व्युच्छिन्नं-विनष्ट, दिव्यं-देवलोकसम्बन्धि प्रेम संक्रान्तं-प्रविष्टं भवति। इति द्वितीयम् । २ ॥

" अहुणोववन्ने " इत्यादि-प्राग्वत् नवरं-तस्यैवं भवति-' इण्हि ' इदानीं गमिष्यामि-अधुना मर्त्यलोकं यास्यामि, कियता समयेनेत्याह-' मुहूर्तेन ' गमिष्यामि, तेन-समयेन मनुष्या अल्पायुषः सन्तः कालधर्मेण-मृत्युना संयुक्ताः-संयुताः मृता भवन्ति, अतो न मानुष्यलोकं समागच्छति। इति तृतीयम् ।३।

" अहुणोववन्ने " इत्यादि-प्राग्वत् , नवरं-मानुष्यकः-मनुष्यसम्बन्धी गन्धः-

---

उसके हृदयमें मनुष्यभव सम्बन्धी कामभोगानुराग नष्ट हो जाता है और देवलोक सम्बन्धी प्रेम प्रविष्ट हो जाता है। अतः-वह चाहता चाहताभी नहीं आपाता है

तृतीय कारणभी ऐसाही है परन्तु जब वह देव विशेषणसे युक्त हो जाता है तब वह सोचता है कि चलू जहां मेरे पूर्वभव सम्बन्धी माता-पिता आदि परिजन हैं उनसे मिल आऊं फिर सोचता है अभी चला जाऊंगा तथा ऐसी जल्दी क्या पडीहै ऐसे सोचते-२ समय निकल जाता है और अन्तमें यहां उनके पूर्वभव सम्बन्धी अल्पायुवाले परिचित मनुष्य मनुष्यलोकसे काल कर जाते हैं, अतः वह फिर मनुष्य लोकमें नहीं आता है-३

चतुर्थ कारणभी ऐसाही है परन्तु इसमें पूर्वोक्त विशेषण विशिष्ट

પ્રત્યેનો તેનો અનુરાગ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે તે કારણે તે મનુષ્યલોકમાં આવવાની ઇચ્છા થવા છતાં પણ આવી શકતો નથી.

ત્રીજા કારણનું સ્પષ્ટીકરણ—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલા નવા દેવના મનમાં એવી ઇચ્છા થાય છે કે " મારા પૂર્વભવના માતા, પિતા આદિને મળવા માટે જવું જોઈએ " પરન્તુ તેને એમ થાય છે કે થોડી જ વારમાં અહીંથી ત્યાં જવા ઉપડીશ, થોડી વાર અહીંના કામભોગોને ભોગવી લઉં, પછી મનુષ્યલોકમાં જવા માટે ઉપડીશ. ઉતાવળ કરવાની શી જરૂર છે " આ પ્રમાણે વિચાર કરતાં કરતાં એટલો બધો કાળ વ્યતીત થઈ જાય છે કે મનુષ્યલોકમાં રહેલા તેના પૂર્વભવના માતા, પિતા આદિ પરિચિત વ્યક્તિઓ તો અલ્પાયુષી હોવાને કારણે મનુષ્યભવ સંબંધી આયુષ્ય પૂરૂં થઈ જવાથી કોઈ અન્ય ગતિમાં ઉત્પન્ન થઈ ગયેલ હોય છે. આ વાત જાણીને તે મનુષ્યલોકમાં આવવાનો વિચાર માંડી વાળે છે.

ચોથા કારણનું સ્પષ્ટીકરણ—પૂર્વોક્ત મૂર્ચ્છિત આદિ વિશેષણોવાળો તે

प्रसिद्धः ' प्रतिकूलः प्रतिलोमः ' इत्युभौ समानार्थौ, तदर्थश्च—इन्द्रियमनसोरनाह्लादकत्वाद् दिव्यगन्धमपेक्ष्य विपरीतवृत्तिः, समानार्थयोर्द्वयोरुपादानं मानुष्यकगन्धेऽतिशयितनिकृष्टता सूचनार्थम्, तेन मानुष्यकगन्धो दिव्यगन्धापेक्षयाऽत्यन्तामनोज्ञः, अत एव प्रतिकूलः ' च अपि ' इति समुच्चये, भवति, स च "उड्ढं पि य " इत्यादि—ऊर्ध्वमपि ऊर्ध्वदेशमपि मानुष्यको गन्धः चत्वारीति – कदाचिद् भरतादिष्वेकान्तसुषमादौ चत्वारि योजनशतानि, पञ्चेति—एकान्तसुषमादिरिक्ते तु पञ्चयोजनशतानि यावत् – अभिव्याप्य हव्यमागच्छति=मनुष्यक्षेत्रमागन्तुमिच्छुं देवं प्रति समुपैति, यतो मनुष्यपञ्चेन्द्रियतिरश्चां प्रचुरत्वेनौदारिकशरीराणां तदङ्गतन्मलानां च पुष्कलत्वेन दुर्गन्धोऽपि बहुर्भवतीति चतुर्थकारणम् । ४ । ' उच्चेएहिं ' इत्यादि स्पष्टम् ।

वह देव मनुष्य सम्बन्धी गन्धको प्रतिकूल और प्रतिलोम मानने लगता है क्योंकि—दिव्य गन्धकी अपेक्षा मनुष्यगन्ध इन्द्रिय और मनको आह्लादकारक नहीं होती है, मनुष्यगन्ध दिव्य गन्धकी अपेक्षा अत्यन्त अमनोज्ञ होती है यही बात प्रगट करनेके लिये सूत्रकारने प्रतिकूल-प्रतिलोम समानार्थक इन दोनों शब्दोंका प्रयोग किया है । मनुष्य गन्ध ऊपरमें भी कदाचित् चार-पांचसौ योजन तक मनुष्यक्षेत्रमें आनेके लिये पर्युत्सुक देवोंकी ओर जाती है, भरतादि क्षेत्रोंमें जब एकान्त सुषम आदि काल होता है उसमें तो चारसौ योजन तक और जब एकान्त सुषमासे अतिरिक्त काल होता है, उस समय पांचसौ योजन तक यह गन्ध जाती है । क्योंकि—मनुष्य क्षेत्रमें मनुष्य और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंकी प्रचुरता होती है, अतः-उनके औदारिक शरीरोंकी और

અધુનોપપન્નક દેવ મનુષ્ય સંબંધી ગન્ધને પ્રતિકૂળ અને અમનોજ્ઞ માનવા લાગે છે, કારણ કે દિવ્યગન્ધ મનને આહ્લાદકારક લાગે છે, જ્યારે મનુષ્ય ગન્ધ મનને અતિશય અમનોજ્ઞ લાગે છે એજ વાતને પ્રકટ કરવા માટે સૂત્રકારે પ્રતિકૂળ-પ્રતિલોમ, આ બે સમાનાર્થક શબ્દોનો પ્રયોગ કર્યો છે મનુષ્ય ગન્ધ ઉપરની બાજુ ૪૦૦ થી ૫૦૦ યોજન સુધી જાય છે મનુષ્યલોકમાં આવવાને ઉત્સુક દેવને તે ગન્ધ અમનોજ્ઞ લાગવાથી તે અહીં આવવાનો વિચાર માંડી વાળે છે. ભરતાદિ ક્ષેત્રોમાં જ્યારે એકાન્ત સુષમ આદિ કાળ હોય છે ત્યારે તે ગન્ધ ૪૦૦ યોજન ઊંચે જાય છે. પણ તે સિવાયના કાળોમાં તો તે ગન્ધ ૫૦૦ યોજન ઊંચે જાય મનુષ્યક્ષેત્રમાં મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય જીવો ઘણાં હોય છે. તેમના ઔદારિક શરીરો અને તેમના મળની દુર્ગન્ધ ઉપર

अथाऽऽगमनकारणानि—

" चउहिं " इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्–' एवम् '–एतादृशं वक्ष्यमाण प्रकारक देवस्य मनो भवति, किं प्रकारकं तदाह–" अत्थिणं " इत्यादि–अस्ति–विद्यते मम–मे मानुष्यके भवे आचार्यः–प्रतिबोधकप्रव्रज्यादायकोपस्थापकादिः

उनके मलोंकी दुर्गन्ध भी पुष्कल रूपसे बहुत होती है। इस प्रकारके ये चार ऐसे कारण हैं जो देवोंको इस मनुष्य लोकमें आनेमें बाधक होते हैं।

अब सूत्रकार देवोंके आगमनका कारण कथन करते हैं–" चउहिं " इत्यादि इन कारणोंमें एक कारण ऐसा है कि देवलोकमें अधुनोपपन्न देव दिव्य कामभोगोंमें अमूर्च्छित यावत् अनध्युपपन्न होता हुवा ऐसा विचार करता है मनुष्य भवमें जब मैं था तबके मेरे यहां आचार्य हैं उपाध्याय हैं प्रवर्ती हैं, स्थविर हैं–गणी हैं–गणधर हैं गणावच्छेदक हैं, मैंने जो ऐसी अनुपम देवर्द्धि देवद्युति लब्ध की है–प्राप्त की है अभिसमन्वागत (उपभोग रूप (सर्वथा) आधीन) की हैं सो यह उन्हीं का सब प्रभाव है। अतः–उचित है कि मैं चलूं और उनको वन्दना करूं यावत् उनकी पर्युपासना करूं इस प्रकारके विचार से प्रेरित वह देव इस मनुष्य लोकमें शीघ्रही आ सकता है। इस सूत्रमें कथित आचार्यादि पदोंका भाव ऐसा है जो प्रतिबोध देता है प्रव्रज्यादायक होता है उपस्थापक आदि होता है, पांच आचारोंका स्वयं पालन

૪૦૦–૫૦૦ યોજન સુધી ફેલાય છે. આ પ્રકારના ચાર કારણો અધુનોપપન્ન દેવને મનુષ્યલોકમાં આવવામાં બાધક થઈ પડે છે.

મનુષ્યલોકમાં દેવોના આગમનનાં કારણોનું નિરૂપણ—

" ચઉહિં " ઈત્યાદિ. પહેલું કારણ—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો નવો દેવ દિવ્ય કામભોગો પ્રત્યે અમૂર્ચ્છા ભાવ આદિથી યુકત થઈને એવો વિચાર કરે છે કે–" મનુષ્યલોકમાં મારા પૂર્વભવના (મનુષ્ય ભવના) આચાર્ય છે, ઉપાધ્યાય છે, પ્રવર્તી છે, સ્થવિર છે, ગણી છે, ગણધર છે, અને ગણાવચ્છેદક છે તેમના પ્રભાવથી જ મેં આ અનુપમ દેવર્દ્ધિ, દેવદ્યુતિ આદિ લબ્ધિ પ્રાપ્ત કરેલ છે અને અભિસમન્વાગત (મારે આધીન) કરેલ છે તો એજ વાત ઉચિત ગણાય કે મારે અહીંથી મનુષ્યલોકમાં જઈને તેમને વંદણા નમસ્કાર કરવા જોઈએ અને તેમની પર્યુપાસના કરવી જોઈએ " આ પ્રકારના વિચારથી પ્રેરાઈને તે દેવ તુરત જ આ મનુષ્યલોકમાં આવી શકે છે.

આચાર્ય કોને કહેવાય? જેઓ પ્રતિબોધ દે છે, પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરાવે છે, ઉપસ્થાપક આદિ હોય છે, જેઓ પોતે પાંચ આચારોનું પાલન

उपाध्यायः-अध्यापकः-सूत्रादिदाता, प्रवर्ती-प्रवर्तयति आचार्योपदिष्टेषु तपो वैयावृत्त्यादिकार्येषु साधूनिति प्रवर्ती=प्रवर्तकः, ।

उक्तं च—

" तवनियमविणयगुणनिहि पवत्तया नाणदंसणचरित्ते ।
संगहुवग्गहकुसला पवत्ति एयारिसा हुंति ॥ १ ॥ "

छाया—' तपो नियमविनयगुणनिधयः प्रवर्तका ज्ञानदर्शनचारित्रेषु ।
सङ्ग्रहोपग्रहकुशलाः प्रवर्तिन एतादृशा भवन्ति ॥१॥ इति ।

स्थविरः-प्रवर्तिप्रवर्तितान् संयमयोगेषु सीदतः साधून् ज्ञानादिष्वैहिकाऽऽमुष्मिकापायदर्शनतः स्थिरीकरोतीति तथा, गणी-गणः-कतिपयसाधुसमुदायः सोऽस्त्यस्येति गणी, गणधरः-य आचार्यसदृशो गुर्वादेशात्साधुगणं गृहीत्वा पृथग् विहरति सः, तथा गणावच्छेदकः-गणस्य अवच्छेदो विभागोऽशोऽस्यास्तीति

करता है और दूसरे साधुओंसे इनका पालन कराता है वह-आचार्य है। शिष्योंको जो सूत्रादिका अध्ययन कराता है वह उपाध्याय है, तथा-जो आचार्योपदिष्ट तप-वैयावृत्य-आदि कार्योंमें साधुओंको प्रवृत्ति कराताहै वह प्रवर्त्ती-प्रवर्तकहै। कहाभीहै-" तव नियम विणय गुणनिहि" इत्यादि प्रवर्ती द्वारा प्रवर्तित हुवे साधु जनोंको जो कि संयम योगोंमें ज्ञानादिकोंमें शिथिल हो रहे हों उन्हें इहलोक-परलोकके अपायोंका दिग्दर्शन कराकर स्थिर करताहै वह स्थविरहै। कितनेक साधु समुदायका नाम गण है, यह गण जिसको है वह गणी है, जो आचार्यका जैसा हो एवं गुरुके आदेश से साधुगणको लेकर पृथक् विहार करता है वह-गणधर है। जिसके गणका विभाग-अंश होता है वह गणा-

કરે છે અને બીજા સાધુઓ પાસે તેનું પાલન પણ કરાવે છે તેમને આચાર્ય કહે છે.

શિષ્યોને સૂત્રાદિનું અધ્યયન કરાવનારને ઉપાધ્યાય કહે છે.

આચાર્યોપદિષ્ટ તપ, વૈયાવૃત્ય, આદિ કાર્યોમાં સાધુઓને પ્રવૃત્ત કરાવનારને પ્રવર્તી અથવા પ્રવર્તક કહે છે કહ્યું પણ છે કે-" तवनियमविणयगुणनिहि " ઈત્યાદિ. પ્રવર્તક દ્વારા તપ આદિમાં પ્રવર્તિત કરાયેલા જે સાધુઓ સંયમ-યોગોમાં અને જ્ઞાનાદિકોમાં શિથિલ થઈ રહ્યા હોય તેમને આલોક-પરલોકના અપાયોનું દિગ્દર્શન કરાવીને તપાદિમાં સ્થિર કરનારને સ્થવિર કહે છે કેટલાક સાધુઓના સમુદાયનું નામ ગણ છે તે ગણનો જે અધિપતિ હોય તેને ગણી કહે છે. જે આચાર્યના જેવો જ હોય અને ગુરુના આદેશથી સાધુ

गणावच्छेदः, स एव गणावच्छेदकः-जिनशासनप्रभावने गणकार्यमाश्रित्योद्धावने क्वचिद्गमने क्षेत्रोपधिगवेषणासु चाविषादी सूत्रार्थज्ञायकश्च । उक्तं च—

" प्रभावनोद्धावनयोः क्षेत्रोपध्येषणासु च ।
अविषादी गणावच्छेदकः सूत्रार्थविन्मतः ॥१॥ " इति ॥

येषाम्-आचार्यादीनां प्रभावेण-अनुभावेन मया-देवेन इयं-साक्षादनुभूयमाना एतद्रूपा-एतद् रूपं यस्याः सा तथा=एतादृशी दिव्या देवर्द्धिः विमानरत्नादिरूपा सुरसम्पत्तिः तथा-दिव्या देवद्युतिः-देवशरीरकान्तिः लब्धा=समुपार्जिता, प्राप्ता-अधीना जाता, अभिसमन्वागता-भोग्यावस्थां प्राप्ताऽस्ति, तत्-तस्मात् कारणाद् अहं गच्छामि, गत्वा च तान् भगवतो वन्दे-स्तौमि, 'यावत्'-

वच्छेदक है यह गणावच्छेदक जिनशासनकी प्रभावनामें गणकार्यको लेकर कहीं पर जानेमें और क्षेत्र-उपधि इनकी गवेषणा करनेमे अविषादी-दुःख माननेवाला नहीं होता है, और सूत्रार्थवेत्ता होता है। कहाभी है—" प्रभावनोद्धारवनयोः" इत्यादि.

विमानरत्न आदि रूप सुरसंपत्ति देवर्द्धि एवं देवशरीर सम्बन्धी कान्ति देवद्युति है इनका अच्छी तरहसे उपार्जन करना सो लब्ध है, उसे अपने आधीन करना सो प्राप्त है। तथा=उसे अपने भोग्यमें लगाना इसका नाम-अभिसमन्वागत है, " वंदे यावत् पर्युपासे " में आगत यावत् शब्दसे नमस्यामि-सत्करोमि-सम्मानयामि-कल्याणं मङ्गलं-दैवतं-चैत्यं, इन पदोंका ग्रहण हुवा है, स्तुति करना इसका

ગણુને સાથે લઇને વિહાર કરતો હોય તેને ગણુધર કહે છે. ગણુના વિભાગને ગણુાવચ્છેદક કહે છે.

એવા ગણુાવચ્છેદના અગ્રેસરને ગણુાવચ્છેદક કહે છે, તે ગણુાવચ્છેદક જિનશાસનની પ્રભાવનામાં, ગણુકાર્ય નિમિત્તે કોઇ પણુ સ્થળે જવામાં, અને ક્ષેત્ર, ઉપધિ આદિની ગવેષણા કરવામાં અવિષાદી હોય છે—એટલે કે આ કાર્યો કરવામાં દુઃખ માનનાર હોતો નથી અને સૂત્રાર્થનો જ્ઞાતા પણુ હોય છે. કહ્યું પણુ છે કે–" प्रभावनोद्धावनयोः " ઇત્યાદિ

વિમાન, રત્ન આદિ રૂપ સુરસંપત્તિને દેવર્દ્ધિ કહે છે. દેવશરીર સંબંધી કાન્તિને દેવદ્યુતિ કહે છે. તેને સારી રીતે ઉપાર્જિત કરવી તેનું નામ 'લબ્ધ' છે તેને પોતાને આધીન કરવી તેનું નામ પ્રાપ્ત છે, અને તેને પોતાના ભોગોપભોગમાં લેવી તેનું નામ 'અભિસમન્વાગત' છે.

" वंदे यावत् पर्युपासे " આ સૂત્રપાઠમાં વપરાયેલા 'યાવત્' પદથી

यावच्छब्देन—नमस्यामि—पश्चाद्गनमनपूर्वकं नमस्करोमि, सत्करोमि—आदरेण सम्मानयामि—अभ्युत्थानादिलक्षणया उचितप्रतिपत्त्या, कल्याणं—कल्याणस्वरूपान् मङ्गलं मङ्गलस्वरूपान्, दैवतं धर्मदेवस्वरूपान्, चैत्यं ज्ञानस्वरूपान् पर्युपासे—सेवे इति प्रथममागमनकारणम् १।

" अहुणोववण्णे " इत्यादि—पूर्ववत्, नवरम्—एषः=दृश्यमानः खलु मानुष्यके भवे, ज्ञानी-श्रुतज्ञानादिना सम्पन्नः, तपस्वी=तपश्चरणशीलः, अतिदुष्कर-दुष्करकारकः – कठिनातिकठिनसाभिग्रहतपश्चर्यादि कारकोऽस्ति, तद्गच्छामि यावत् पर्युपासे । इति द्वितीयमागमनकारणम् २।

" अहुणोववण्णे " इत्यादि—प्राग्वत्, नवरं-मम मानुष्यके भवे माता 'यावत्' पदेन 'भायाइ वा भज्जाइ वा भइणीइ वा पुत्ताइ वा धूयाइ वा' इति पदानि ग्राह्याणि, तच्छाया-भ्रातेति वा भार्येति भगिनीति वा पुत्र इति वा दुहितेति वा, स्नुषा-पुत्रभार्या चास्ति, तत्-तस्मात् तेषां=मात्रादिपरिवारगणाम्

नाम वन्दना है, पश्चाद् नमनपूर्वक नमस्कार करना इसका नाम नमस्कार है। आदर देना इसका नाम सत्कार है, अभ्युत्थानादि रूप उचित प्रतिपत्ति(सेवा) करना इसका नाम सम्मान है, कल्याणस्वरूप होनेसे आचार्य आदिकोंको कल्याण, मङ्गलस्वरूप होनेसे मङ्गल धर्मदेव स्वरूप होनेसे दैवत और ज्ञानस्वरूप होनेसे चैत्यरूप कहा गया है, सेवा करनेका नाम पर्युपासना है। ऐसा यह प्रथम कारण है-१ द्वितीयकारण भी ऐसाही है, पर इसमें ऐसा विचार करता है कि मनुष्यभवमें श्रुतज्ञानादिकसे सम्पन्न ज्ञानीजन हैं तपश्चरणशील तपस्वी जन हैं, और अति दुष्कर दुष्करकारक-कठिनातिकठिन साभिग्रह तपश्चर्यादिकारक साधुजन हैं, इसलिये चलूं और यावत उनकी पर्युपासना करूं ऐसा

નીચેનો સૂત્રપાઠ ગૃહીત થયો છે–" नमस्यामि, सत्करोमि, सम्मानयामि, कल्याणं, मंगलं, दैवत, चैत्यं "

સ્તુતિ કરવી તેનું નામ વંદણા છે, પાંચે અંગોને નમાવીને નમવું તેનું નામ નમસ્કાર છે. આદર દેવો તેનું નામ સત્કાર છે, અભ્યુત્થાન આદિ ઉચિત વિધિ કરવી તેનું નામ સમ્માન છે. આચાર્ય આદિ કલ્યાણ સ્વરૂપ હોવાથી, મંગળ સ્વરૂપ હોવાથી, ધર્મદેવ સ્વરૂપ હોવાથી અને જ્ઞાનસ્વરૂપ હોવાથી તેમને અનુક્રમે કલ્યાણરૂપ, મંગળરૂપ, દેવરૂપ અને ચૈત્યરૂપ કહેવામાં આવેલ છે. સેવા કરવી તેનુ નામ પર્યુપાસના છે.

આ રીતે પહેલા કારણનું સ્પષ્ટીકરણ કરીને હવે સૂત્રકાર બીજા કારણને પ્રકટ કરે છે—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો તે નવો દેવ એવો વિચાર કરે છે કે મનુષ્યલોકમાં શ્રુતજ્ઞાનાદિથી સંપન્ન જ્ઞાનીજનો છે, તપશ્ચરણશીલ તપસ્વીઓ છે, દુષ્કરમાં દુષ્કર (કઠિનમાં કઠિન) અભિગ્રહ પૂર્વક તપશ્ચર્યાદિ કરનારા સાધુઓ છે તો મારે ત્યાં જઇને તેમને વંદણા, નમસ્કાર આદિ કરવા જોઇએ

अन्तिकं-समीपं गच्छामि, गत्वा च प्रादुर्भवामि=प्रकटो भवामि 'ताः=मात्रादयो मे=मम इमां-प्रत्यक्षामेतद्रूपाम्-एतादृशीं दिव्यां देवर्द्धिं दिव्यां देवद्युतिं लब्धां प्राप्तामभिसमन्वागतां पश्यन्तु । इति तृतीयमागमनकारणम् ।३।

"अहुणोववण्णे" इत्यादि—प्राग्वत् नवरं-मम मानुष्यके भवे मित्रं पश्चात्स्नेही, सखा-बालवयस्यः, सुहृत्-हितैषी सज्जनः सहायः-सह अयते इति सहायः-सहचरः एककार्यप्रवृत्त', साङ्गतिकः=सङ्गतिकः=सङ्गतं-परिचयोऽस्त्यस्येति साङ्गतिकः-परिचितोवाऽस्ति, तेषां=मित्रादीनां च खलु अस्माभिः अन्योऽन्यं=परस्परं सङ्केतः प्रतिश्रुतः-प्रतिज्ञात' स्वीकृतो भवतिस्म=आसीत् कीदृशः सङ्केत ? इत्याह-"जो मे" इत्यादि—यः-जनः मे-अस्माकं मध्ये पूर्वं-प्राक्च्यवते-देवलोकात् च्युतो भवेत् स जनः सम्बोधयितव्यः-प्रतिबोधनीय' इति तस्मादहं

यह द्वितीय कारण है-२ तृतीय कारण भी ऐसाही है, पर इसमें वह ऐसा विचार करता है कि मेरे मनुष्यभवके सम्बन्धी माता यावत् भ्राता-भगिनी-पुत्र-पुत्री-पुत्रवधू ये सब है, इसलिये मैं उनके पास जाऊं, वे मेरी ऐसी इस प्रत्यक्षभूत दिव्य देवर्द्धिको एवं दिव्य देवद्युतिको कि जिसे मैंने लब्ध की है प्राप्तकी है अभिसमन्वागत की है देखें, ऐसा यह तृतीय कारण है-३ चतुर्थ कारण भी ऐसा ही हैं, पर इसमें वह ऐसा विचारता है कि मेरे मनुष्यभवके मित्र हैं, सुहृद्जन हैं, सहायक हैं, साङ्गतिक हैं, उन्होंने हमारे साथ ऐसा सङ्केत किया था ऐसी बात स्वीकार कीथी कि जो कोई भी हमलोगों के बीचमेंसे देवलोकसे पहले चवे वह जन संबोधयितव्य है-

અહીં પર્યુપાસના પર્યન્તના ઉપર્યુક્ત પદો પણ ગ્રહણ કરવા જોઇએ. આ કારણે પણ તે અધુનોપપન્ન દેવ મનુષ્યલોકમાં આવે છે.

ત્રીજું કારણ પણ લગભગ એવું જ છે તેને એવો વિચાર આવે છે કે મારા પૂર્વભવના (મનુષ્ય ભવના) માતા, પિતા, ભાઈ, બેન, પુત્ર, પુત્રી, પત્ની વગેરેને મળવા માટે મારે મર્ત્યલોકમાં જવું જોઇએ તેઓ મારી આ દિવ્ય દેવર્દ્ધિ, દેવદ્યુતિ આદિના ભલે દર્શન કરે આ રીતે પોતે લબ્ધ, પ્રાપ્ત અને અભિસમન્વાગત કરેલી દેવર્દ્ધિ, દેવદ્યુતિ આદિ તેમને બતાવવાના હેતુથી તે અધુનોપપન્ન દેવ આ મર્ત્યલોકમાં આવવાની ઈચ્છા કરે છે.

ચોથું કારણ—તે અધુનોપપન્ન દેવને એવો વિચાર થાય છે કે મનુષ્યલોકમાં પૂર્વભવના મારા મિત્રો છે, સુહૃદ્જનો છે, સહાયક છે અને સાંગતિક છે તેમણે અને મેં અરસપરસમાં એવો સંકેત કર્યો હતો-એવું વચન આપ્યું હતું કે આપણામાંનું જે કોઈ દેવલોકમાંથી પહેલાં ચવે (ત્યાંનું

पूर्वं च्युतान् संबोधयितुं मनुष्यलोकं गच्छामि, सूत्रे 'मे' इत्यार्षत्वादेकवचनम्। इति चतुर्थमागमनकारणम् ।४। ॥ सू० २४ ॥

अनन्तरं देवाऽऽगमनमुक्तं, तत्र तत्कृतोद्द्योतो भवतीति तद्विपरीतं लोकान्धकारं प्राह—

मूलम्—चउहिं ठाणेहि लोगंधयारे सिया, तं जहा—अरहंतेहिं वोच्छिज्जमाणेहिं १, अरहंतपन्नत्ते धम्मे वोच्छिज्जमाणे २, पुव्वगए वोच्छिज्जमाणे ३, जायतेए वोच्छिज्जमाणे ४।

चउहिं ठाणेहिं लोउज्जोए सिया, तं जहा—अरहंतेहिं जायमाणेहिं १, अरहंतेहिं पव्वयमाणेहिं २, अरहंताणं णाणुप्पायमहिमासु ३, अरहंताणं परिणिव्वाणमहिमासु ४। एवं देवंधगारे देवुज्जोए देवसंनिवाए देवुक्कलिया देवकहकहे।

चउहिं ठाणेहिं देविंदा माणुसं लोगं हव्वमागच्छंति,

प्रतिबोधनीय है, इसलिये मैं पूर्वमें चवे हुवोंको संबोधन करनेके लिये मनुष्य लोकमें जाऊं।

पश्चात्-स्नेहीका नाम मित्र है, बाल वयस्यका नाम सखा है, हितैषी सज्जनका नाम सुहृत् है एक किसी भी कार्यमें साथ रहनेवालेका नाम सहचर है जिससे जान पहिचान हो उसका नाम साङ्गतिक है, ऐसा यह चौथा कारण है ॥ सू०२४॥

આયુષ્ય પૂરૂં કરીને ફરી મનુષ્યલોકમાં ઉત્પન્ન થઈ જાય), તે માણુસ સંબોધયિતવ્ય-પ્રતિબોધનીય (બોધ પ્રાપ્ત કરવાને પાત્ર) ગણુવો જોઇએ.

આ પ્રકારના વિચારથી પ્રેરિત થઈને પોતાના પહેલાં દેવલોકમાંથી જેઓ ચવેલા છે તેમને સંબોધન કરવાને માટે તે અધુનોપપન્ન દેવ આ મનુષ્યલોકમાં આવવા ચાહે છે.

ઘણા લાંબા સમયથી જેની સાથે સ્નેહ હોય તેને મિત્ર કહે છે. બાલ્યકાળથી જેની સાથે મૈત્રી હોય તેને સખા કહે છે. હિતૈષી સજ્જનને સુહૃદ્ કહે છે. કોઈ એક કાર્યમાં સાથે રહેનારને સહચર કહે છે, જેની સાથે ઓળખાણુ પીછાણુ હોય તેને સાંગતિક કહે છે. ॥ સૂ. ૨૪ ॥

एवं जहा–तिट्ठाणे जाव लोगंतिया देवा माणुस्सं लोगं हव्व-मागच्छेज्जा, तं जहा–अरिहंतेहिं जायमाणेहिं जाव अरिहंताणं परिनिव्वाणमहिमासु ॥ सू० २५ ॥

छाया—चतुर्भिः स्थानैः लोकान्धकारः स्यात्, तद्यथा–अर्हत्सु व्यवच्छिद्यमानेषु १, अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्यवच्छिद्यमाने २, पूर्वगते व्यवच्छिद्यमाने ३, जाततेजसि व्यवच्छिद्यमाने ४,

चतुर्भिः स्थानैः लोकोद्योतः स्यात्, तद्यथा–अर्हत्सु जायमानेषु १, अर्हत्सु प्रव्रजत्सु २, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमसु ३, अर्हतां परिनिर्वाणमहिमसु ४, एवं देवान्धकारः, देवोद्योतः, देवसन्निपातः देवोत्कलिकाः, देवकलकलः ।

चतुर्भिः स्थानैः देवेन्द्राः मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति, एवं यथा त्रिस्थाने यावत् लोकान्तिका देवा मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति, तद्यथा–अर्हत्सु जायमानेषु यावत् अर्हतां परिनिर्वाणमहिमसु ॥ सू० २५ ॥

टीका—"चउहिं ठाणेहिं" इत्यादि–चतुर्भिः स्थानैः लोकान्धकारः–लोकेऽन्धकारः–द्रव्यतो भावतश्च स्यात्–भवेत्, कैश्चतुर्भिः स्थानैरित्याह–"तं जहा" इत्यादि–तद्यथा–अर्हत्सु–जिनेषु व्यवच्छिद्यमानेषु–निर्वाणं गच्छत्सु द्रव्यतोऽन्धकारः स्यात्, तस्योत्पातरूपत्वात्, छत्रभङ्गादौ रजउद्धतवत्, इति प्रथमं लोकाऽन्धकारस्य कारणम् ।१।

तथा–अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्यवच्छिद्यमाने, इति द्वितीयम् ।२।

देवकृत उद्योत के अभावमें लोकमें किन–किन कारणोंसे अन्धकार हो जाता है अब सूत्रकार इस बातका कथन करते हैं—

"चउहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया" इत्यादि २४

टीकार्थ–इन चार कारणोके हो जाने पर लोकमें द्रव्यसे और भावसे अन्धकार हो जाता हैं वे चार कारण ये हैं—एक कारण है जिनेन्द्र देवका निर्वाण प्राप्त कर लेना–१ द्वितीय कारण है–अर्हत् प्रज्ञप्त धर्मका

દેવકૃત ઉદ્યોતના અભાવે કયાં કયાં કારણોથી લોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે, તેનું હવે સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—

"चउहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया" ઇત્યાદિ—(૨૫)

ટીકાર્થ–નીચેના ચાર કારણોને લીધે લોકમાં દ્રવ્યાંધકાર અને ભાવાંધકાર વ્યાપી જાય છે—(૧) જિનેન્દ્ર દેવના નિર્વાણ કાળે, (૨) અર્હંત પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ વ્યુચ્છિન્ન

तथा-पूर्वगते-पूर्वाणि-दृष्टिवादाङ्गभागभूतानि, तेषु गतं प्रविष्टं-तदभ्यन्तरीभूतं तत्स्वरूपं यच्छ्रुतं तत्पूर्वगतं, तस्मिन् व्यवच्छिद्यमाने सति लोकेऽन्धकारो द्रव्यतः स्यात्, तस्योत्पातरूपत्वात्, भावतोऽप्यन्धकारः स्यात्, एकान्तसुषमादावागमादेरभावात् इति तृतीयम् ३। तथा-जाततेजसि वह्नौ दीपादौ वा व्यवच्छिद्यमाने विध्यायति सति लोके द्रव्यत एवान्धकारः स्यात्। इति चतुर्थम् ।४॥

व्युच्छिन्न विच्छेद हो जाना-२ तीसरा कारणहै पूर्वगतज्ञानका व्युच्छिन्न होना-३ और चौथा कारणहै-अग्निका बुझ जाना तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि जब जिनेन्द्रदेव निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं तब लोकमें द्रव्यकी अपेक्षासे अन्धकार हो जाता है। यह उत्पातरूप होता है जैसे छत्र भङ्ग होजाने पर रजका (धूलि) उद्‌घात होता है, दृष्टिवादके अङ्गभाग भूत पूर्व हैं, इनमें प्रविष्ट जो श्रुत है वह पूर्वगत श्रुत है.

इस पूर्वगतको व्यवच्छिद्यमान होने पर लोकमें अन्धकार द्रव्यकी अपेक्षासे हो जाता है क्योंकि यह उत्पातरूप होता है, भावकी अपेक्षा भी अन्धकार हो जाता है क्योंकि-एकान्त सुषमादि कालमें आगमादिकका अभाव हो जाता है। तथा--जब वह्निका, या दीपादिकका विच्छेद हो जाता है, ये बुझ जाते हैं तब इनके बुझतेही लोकमें द्रव्यकी ही अपेक्षा अन्धकार हो जाता है।

(વિનષ્ટ) થઈ જવાથી, (૩) પૂર્વગતનો વિચ્છેદ થઇ જવાથી (૪) અગ્નિ બુઝાઇ જવાથી

આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જ્યારે જિનેન્દ્ર દેવ નિર્વાણ પામે છે, ત્યારે લોકમાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અંધકાર થઇ જાય છે તે ઉત્પાત રૂપ હોય છે જેમકે છત્રભંગ થઇ જાય ત્યારે રજનો ઉદ્‌ઘાત થાય છે, એ જ પ્રમાણે છત્રસમાન જિનેન્દ્ર દેવનું અવસાન થવાથી લોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે.

દૃષ્ટિવાદના અંગભાગભૂત પૂર્વ છે તે પૂર્વમાં પ્રવિષ્ટ જે શ્રુત છે તેને પૂર્વગત શ્રુત કહે છે. આ પૂર્વગતનો વિચ્છેદ થવાથી લોકમા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અંધકાર વ્યાપી જાય છે, કારણ કે તે ઉત્પાત રૂપ હોય છે. અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ અંધકાર વ્યાપી જાય છે. કારણ કે એકાન્ત-સુષમાદિ કાળમાં આગમાદિકનો અભાવ હોય છે તથા જ્યારે અગ્નિનો અથવા દીપાદિકોનો વિચ્છેદ થઈ જાય છે, તેઓ બુઝાઈ જાય છે ત્યારે તેઓ બુઝાતાની સાથે જ લોકમાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જ અંધકાર વ્યાપી જાય છે.

अन्धकारमुक्त्वोद्द्योतमाह-"चउहिं ठाणेहिं लोउज्जोए" इत्यादि-चतुर्भिः स्थानैः लोकोद्द्योतः-लोके उद्द्योतः-प्रकाशः स्यात् . तानि स्थानान्याह-"तद्यथे"-त्यादि-अर्हत्सु-जिनेषु जायमानेषु-उत्पद्यमानेषु देवानामागमनात्स्वरूपेण च लोके प्रकाशो भवति, इति प्रथमं प्रकाशकारणम् १॥

तथा-अर्हत्सु प्रव्रजत्सु-प्रव्रज्यां गृह्णत्सु वेति द्वितीयम् । २ ।

तथा-अर्हतां-तीर्थङ्कराणां ज्ञानोत्पादमहिमसु-ज्ञानं-केवलज्ञानं तस्योत्पादः-उत्पत्तिः, तस्य महिमानः-माहात्म्यानि तेषु, इति तृतीयम् ३।

तथा-अर्हतां परिनिर्वाणमहिमसु देवाऽऽगमनादेव लोके प्रकाशः स्यात् । इति चतुर्थं कारणम् । ४ ।

अन्धकारका कथन कर अब सूत्रकार उद्द्योतका कथन करते हैं "लोउज्जोए"--इत्यादि चार कारणोंको लेकर लोकमें उद्द्योत--प्रकाश होता है, उनमें एक कारण है जिनेन्द्र देवका जन्म होना। दूसरा कारण है अर्हत प्रभुका प्रव्रज्या ग्रहण करना। तीसरा कारण है तीर्थङ्करोंको केवलज्ञानका होना । और चौथा कारण है अर्हन्त प्रभुका निर्वाण प्राप्त करना । जिनेन्द्र देव जब उत्पन्न होते हैं तब देवलोकसे देवोंका आगमन होता है तब स्वरूपसे ही लोकमें आलोक--प्रकाश हो जाता है । इसी प्रकारसे जब तीर्थङ्कर प्रभु दीक्षा ग्रहण करते हैं तब भी लोकमें प्रकाश होता है, क्योंकि उस समय भी देवोंका आगमन हुवा करता है । तीर्थङ्कर प्रभुको जब केवलज्ञान उत्पन्न होता है तब उस केवलज्ञानके उत्पत्ति महिमासे समाकृष्ट देवोंका आगमन हो जाता है तब भी लोकमें उद्द्योत होता है । इसी तरहसे जब अर्हन्त प्रभु

અંધકારનુ કથન કરીને હવે સૂત્રકાર ઉદ્યોતનુ કથન કરે છે—

"લોઉજ્જોએ" ઇત્યાદિ—નીચેના ચાર કારણોને લીધે લોકમાં ઉદ્યોત (પ્રકાશ) થાઇ છે-(૧) જિનેન્દ્ર દેવના જન્મ સમયે, (૨) અહ઼ંત પ્રભુ પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરે ત્યારે, (૩) તીર્થંકરોને કેવળજ્ઞાન થાય ત્યારે, (૪) અહ઼ંત પ્રભુ નિર્વાણ પામે ત્યારે આ ચાર પ્રસંગે લોકમાં પ્રકાશ થાય છે

જ્યારે જિનેન્દ્ર દેવનો જન્મ થાય છે ત્યારે દેવલોકમાંથી દેવોનું આગમન થાય છે ત્યારે તેમની દેવદ્યુતિને કારણે જ લોકમાં ઉદ્યોત (પ્રકાશ) થાય છે એજ પ્રમાણે જ્યારે તીર્થંકર પ્રભુ દીક્ષા ગ્રહણ કરે છે, ત્યારે પણ લોકમાં પ્રકાશ થાય છે, કારણ કે તે પ્રસંગે પણ દેવોનુ આગમન થતું હોય છે. તીર્થંકર પ્રભુને જ્યારે કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે પણ લોકમાં પ્રકાશ

"एवं देवंधगारे" इत्यादि—एवं=लोकान्धकारवद् देवान्धकारोऽपि भवति-अर्हदादिषु व्युच्छिद्यमानेषु देवलोकेऽप्यन्तर्मुहूर्तमन्धकारस्य संभवादिति। तथा-अर्हतां जन्मादिषु लोकोद्द्योतवद् देवोद्द्योतोऽपि बोध्यः। एवमर्हज्जन्मादिषु-देवसन्निपातः-देवानां समूहरूपेण एकत्रीभवनम्। देवोत्कलिका = देवानामेकस्य पश्चाद् अपरस्य नैरन्तर्येणाऽऽगमनम्। देवकलकलः=देवानां प्रमोदादिजनितः कलकलः=कोलाहलश्चापि बोध्यः।

"चउहिं ठाणेहिं देविंदा" इत्यादि—देवेन्द्राः चतुर्भिः-अर्हज्जन्मादिभिः स्थानैः-कारणैः मनुष्यलोकं ह्व्यमागच्छन्ति। एवम्=अनेन प्रकारेण 'यथा

निर्वाणको प्राप्त करते हैं, तब भी निर्वाण महिमा प्रगट करनेके लिये देवोंका आगमन होता है अतः लोकमें प्रकाश हो जाता है।

"एवं देवंधगारे" इत्यादि देवान्धकार भी लोकान्धकारकी तरह हुवा करता है अर्हदादि जब व्युच्छिद्यमान हो जाते-निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं तब देवलोकमें भी एक अन्तर्मुहूर्त तक अन्धकार छा जाता है तथा--अर्हन्तोंके जन्मादि होने पर लोकोद्द्योत जैसे देवोद्द्योत भी होताहै। देवसमूहका एकत्रित होना होताहै-देवोत्कलिका भी होतीहै-इसी तरह से अर्हन्त के जन्मादि होने के समय देव सन्निपात होता है देवोंका एकके बाद एकका आना निरन्तर होना है। इसी प्रकारसे देव कलकल भी होता है-देवोंको प्रमोदजनित कोलाहल भी होता है। "चउहिं ठाणेहिं देविंदा" इत्यादि देव अर्हज्जन्म आदि

થાય છે, કારણ કે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિના મહિમાથી સમાકૃષ્ટ દેવોનું ત્યાં આગમન થાય છે એજ પ્રમાણે જ્યારે અહંત પ્રભુ નિર્વાણ પામે છે ત્યારે પણ નિર્વાણમહિમા પ્રકટ કરવાને લીધે દેવોનું આ લોકમાં આગમન થાય છે અને તે કારણે લોકમાં પ્રકાશ થય છે.

"एवं देवंधगारे" ઇત્યાદિ--દેવાન્ધકારના કારણો પણ લોકાન્ધકારના કારણો જેવાં જ સમજવા. અહંતાદિ જ્યારે નિર્વાણ પામે છે, ત્યારે દેવલોકમાં પણ એક અન્તર્મુહૂર્ત સુધી અંધકાર વ્યાપી જાય છે તથા અહંતના જન્માદિ કાળે લોકોદ્યોતની જેમ દેવોદ્યોત પણ થાય છે એજ પ્રમાણે અહંતના જન્માદિ કાળે દેવસન્નિપાત (દેવોનું એક સ્થળે એકત્રિત થવાનું) અને એજ ચાર કારણોને લીધે દેવોત્કાલિકા પણ થાય છે (દેવોનું એક પછી એક એ પ્રકારે નિરન્તર આગમનને દેવોત્કલિકા કહે છે) એજ ચાર કારણોને લીધે દેવોનો પ્રમોદજનિત કોલાહલ પણ થાય છે. "चउहिं ठाणेहिं देविंदा" ઇત્યાદિ—

त्रिस्थाने यावत् लोकान्तिका देवाः '=यथा-येन प्रकारेण त्रिस्थाने=त्रिस्थानके अस्यैव स्थानाङ्गस्य तृतीयस्थाने प्रथमोद्देशके अर्हज्जन्मादिकारणत्रयेण देवेन्द्रादि लोकान्तिकपर्यन्तानां देवानां मनुष्यलोके शीघ्राऽऽगमनमुक्तं, तथाऽत्रापि देवेन्द्रादिलोकान्तिकपर्यन्तानां देवानां तीर्थङ्करजन्मादिकारणचतुष्टयेन मनुष्यलोके शीघ्राऽऽगमनं वाच्यम्। तत्र त्रीणि कारणानि त्रिस्थानकानुरोधेनोक्तानि, इह चतुःस्थानकानुरोधेन परिनिर्वाणमहिमरूपं चतुर्थं कारणमिति विशेषः ।४। इममेव विशेषं दर्शयितुमाह-तं जहा-अरिहंतेहिं जायमाणेहिं" इत्यादि-॥सू०२५॥

अनन्तरमर्हतां जन्मादिप्रसङ्गेन देवाऽऽगमनमुक्तं, सम्प्रति अर्हतामेव प्रवचने दुःस्थितस्य साधोः दुःखशय्यां सुस्थितस्य सुखशय्यां च निरूपयितुं सूत्रद्वयमाह-

मूलम्-चत्तारि दुहसेज्जाओ पण्णत्ताओ, तत्थ खलु इमा पढमा दुहसेज्जा, तं जहा-से णं मुंडे भवित्ता अगाराओ अण·

रूप चार कारणोंसे बहुतही शीघ्र मनुष्य लोकमें आते हैं। इस तरह जैसा पहले इस स्थानाङ्गके स्थानकके प्रथम उद्देशेमें अर्हज्जन्मादि कारणत्रय लेकर देवेन्द्रादि लोकान्तिक तकके देवोंका मनुष्य लोकमें शीघ्रागमन कहा गया है। उसी प्रकारसे यहां परभी देवेन्द्रसे लेकर लोकान्तिक तकके देवोंका तीर्थङ्करके जन्मादिरूप चार कारणोंको लेकर मनुष्यलोकमें शीघ्रागमन कह लेना चाहिये। वहां तीन कारण त्रिस्थानकके अनुरोधसे कहे गये हैं, यहां चतुःस्थानकके अनुरोधसे उन तीन कारणोंके साथ चौथा कारण परिनिर्वाण महिमा रूप है। यही बात- "तंजहा जायमाणेहिं" इत्यादि सूत्र द्वारा प्रगट की गई है ॥ सू०२५॥

એજ ચાર કારણોને લીધે દેવેન્દ્રોનું મનુષ્યલોકમાં ઘણી જ ત્વરાપૂર્વક આગમન થાય છે.

આ સ્થાનાંગસૂત્રના ત્રિસ્થાનકના પહેલા ઉદ્દેશામાં અર્હંતજન્માદિ ત્રણ કારણોને લીધે દેવેન્દ્રાદિ લોકાન્તિક પર્યન્તના દેવોના મનુષ્યલોકમાં શીઘ્ર આગમનનું જેવું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન અહીં પણ દેવેન્દ્રથી લઈને લોકાન્તિક પર્યન્તના દેવોના તીર્થંકરજન્માદિ રૂપ ચાર કારણોને લીધે મનુષ્યલોકમાં શીઘ્ર આગમન વિષે પણ થવું જોઈએ. ત્યાં ત્રણ કારણો પ્રકટ કરવામાં આવ્યા હતાં, કારણ કે ત્યાં ત્રિસ્થાનકની પ્રરૂપણા કરવાની હતી; પરન્તુ અહીં ચતુઃસ્થાનકનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી તે ત્રણ કારણોની સાથે નિર્વાણમહિમા રૂપ ચોથું કારણ પણ અહીં પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે એજ વાત "'जहा जायमाणेहिं" ઇત્યાદિ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. સૂ. ૨૫

गारियं पव्वइए णिग्गंथे पावयणे संकिए कंखिए वितिगिच्छिए भेयसमावण्णे कलुससमावण्णे णिग्गंथं पावयणं णो सद्दहइ णो पत्तियइ णो रोएइ, णिग्गंथं पावयणं असद्दहमाणे अपत्तियमाणे अरोएमाणे मणं उच्चावयं णियच्छइ विणिघायमावज्जइ, पढमा दुहसेज्जा १।

अहावरा दोच्चा दुहसेज्जा, तं जहा—से णं मुंडे भवित्ता अगाराओ जाव पव्वइए सएणं लाभेणं णो तुस्सइ परस्स लाभमासाएइ पीहेइ पत्थेइ अभिलसइ, परस्स लाभमासाएमाणे जाव अभिलसमाणे मणं उच्चावयं णियच्छइ विणिघायमावज्जइ, दोच्चा दुहसेज्जा २।

अहावरा तच्चा दुहसेज्जा, तं जहा—से णं मुंडे भवित्ता जाव पव्वइए दिव्वे माणुस्सए कामभोगे आसाएइ जाव अभिलसइ दिव्वे माणुस्सए कामभोगे आसाएमाणे जाव अभिलसमाणे मणं उच्चावयं णियच्छइ विणिघायमावज्जइ, तच्चा दुहसेज्जा । ३ ।

अहावरा चउत्था दुहसेज्जा, तं जहा—से णं मुंडे जाव पव्वइए तस्स णमेवं भवइ—जया णं अहमगारवासमावसामि तया णमहं संवाहणपरिमद्दणगात्तभंगगाउच्छोलणाइं लभामि जप्पभिइं च णं अहं मुंडे जाव पव्वइए तप्पभिइं च णं अहं संवाहण जाव गाउच्छोलणाइं णो लभामि, से णं संवाहण जाव गाउच्छोलणाइं आसाएइ जाव अभिलसइ, से णं संवा-

हण जाव गाउच्छोलणाइं आसाएमाणे जाव मणं उच्चावयं णियच्छइ विणिघायमावज्जइ, चउत्था दुहसेज्जा ॥ ४ ॥ सू०२६॥

चत्तारि सुहसेज्जाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—तत्थ खलु इमा पढमा सुहसेज्जा, तं जहा—से णं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइए णिग्गंथे पावयणे णिस्संकिए णिक्कंखिए णिव्वितिगिच्छिए णो भेयसमावण्णे णो कलुससमावण्णे णिग्गंथं पावयणं सद्दहइ पत्तियइ रोएइ णिग्गंथं पावयणं सद्दहमाणे पत्तियमाणे रोएमाणे णो मणं उच्चावयं णियच्छइ णो विणिघायमावज्जइ, पढमा सुहसेज्जा । १ ॥

अहावरा दोच्चा सुहसेज्जा, तं जहा-से णं मुंडे जाव पव्वइए सएणं लाभेणं तुस्सइ परस्स लाभं णो आसाएइ णो पीहेइ णो पत्थेइ णो अभिलसइ परस्स लाभमणासाएमाणे जाव अणभिलसमाणे णो मणं उच्चावयं णियच्छइ णो विणिघायमावज्जइ, दोच्चा सुहसेज्जा । २ ।

अहावरा तच्चा सुहसेज्जा, तं जहा—से णं मुंडे जाव पव्वइए दिव्वमाणुस्सए कामभोगे णो आसाएइ जाव णो अभिलसइ दिव्वे माणुस्सए कामभोगे अणासाएमाणे जाव अणभिलसमाणे णो मणं उच्चावयं णियच्छइ णो विणिघायमावज्जइ, तच्चा सुहसेज्जा । ३ ।

अहावरा चउत्था सुहसेज्जा, तं जहा-से णं मुंडे जाव पव्वइए तस्स णं एवं भवइ-जइ ताव अरहंता भगवंतो हट्ठा

आरोग्गा बलिया कल्लसरीरा अन्नयराइं ओरालाइं कल्लाणाइं विउलाइं पययाइं पग्गहियाइं महाणुभागाइं कम्मक्खयकारणाइं तवोकम्माइं पडिवज्जंति, किमंग पुण अहं अब्भोवगमियं ओवक्कमियं वेयणं णो सम्मं सहामि खमामि तितिक्खामि अहियासामि ममं च णं अब्भोवगमियं ओवक्कमियं वेयणं सम्मंअसहमाणस्स अक्खममाणस्स अतितिक्खमाणस्स अणहियासमाणस्स किं मन्ने कज्जइ १, एगंतसो मे पावे कम्मे कज्जइ, ममं च णं अब्भोवगमियं ओवक्कमियं वेयणं सम्मं सहमाणस्स जाव अहियासमाणस्स किं मन्ने कज्जइ ? एगंतसो मे णिज्जरा कज्जइ, चउत्था सुहसेज्जा ४ सू० २७ ॥

छाया—चतस्रो दुःखशय्याः प्रज्ञप्ताः, तत्र खलु इयं प्रथमा दुःख शय्या, तद्यथा—स खलु मुण्डो भूत्वा आगारादनगारितां प्रव्रजितो नैर्ग्रन्थे प्रवचने शङ्कितः काङ्क्षितो विचिकित्सितो भेदसमापन्नः कलुषसमापन्नो नैर्ग्रन्थं प्रव-

अर्हन्तोंके जन्मादि प्रसङ्गको लेकर देवोंका आगमन कहा, अब सूत्रकार अर्हतोंकेही प्रवचनमें दुःस्थित साधुकी दुःखशय्याका और सुस्थित साधुकी सुखशय्याका निरूपण दो सूत्रोंसे करते हैं।

सूत्रार्थ—" चत्तारि दुहसेज्जाओ पण्णत्ता " इत्यादि २६

चार दुःखशय्याएँ कही गई है, उनमें यह पहली दुःखशय्या है, जैसे कोई एक मनुष्य मुण्डित होकर अगारावस्थासे अनगारावस्थाको धारण कर लेता है, अब वह नैर्ग्रन्थप्रवचनमें शङ्कायुक्त होता है, विचि-

અર્હંતોના જન્માદિ પ્રસંગે દેવોના આગમનનું કથન કરવામાં આવ્યું. હવે એજ અર્હંતોના પ્રવચનમાં દુસ્થિત સાધુની દુઃખશય્યાનું અને સુસ્થિત સાધુની સુખશય્યાનું સૂત્રકાર બે સૂત્રો દ્વારા નિરૂપણ કરે છે—

" चत्तारि दुहसेज्जाओ पण्णत्ताओ " ઇત્યાદિ—(૨૬)

સૂત્રાર્થ—ચાર દુઃખશય્યાઓ કહી છે. પહેલી દુઃખશય્યાનું સ્વરૂપ કોઈ એક મનુષ્ય મુંડિત થઈને ગૃહસ્થાવસ્થાના પરિત્યાગપૂર્વક અણગારાવસ્થા અંગીકાર કરી લે છે ત્યાર બાદ તે નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પ્રત્યે શંકા, વિચિકિત્સા, ભેદસમા-

चनं नो श्रद्दधाति नो प्रत्येति नो रोचयति, नैर्ग्रन्थं प्रवचनमश्रद्दधानोऽप्रतियन् अरोचयमानो मन उच्चावचं निर्गच्छति विनिघातमापद्यते, प्रथमा दुःखशय्या ।१।

अथाऽपरा द्वितीया दुःखशय्या, तद्यथा-स खलु मुण्डोभूत्वा अगाराद् यावत् प्रव्रजितः स्वकेन लाभेन नो तुष्यति परस्य लाभमाशयति (आशां करोति) स्पृहयति प्रार्थयति अभिलषति परस्य लाभमाशयन् यावत् अभिलषन् मन उच्चावचं निर्गच्छति विनिघातमापद्यते, द्वितीया दुःखशय्या । २ ।

कित्सित होता है, भेद समापन्न होता है, कलुषसमापन्न होता है, नैर्ग्रन्थ प्रवचनको श्रद्धासे नहीं देखना है, उस पर प्रतीति नहीं करता है, उसे अपने रुचिका विषय नहीं बनाता है । इस तरह नैर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा नहीं रखता हुवा उसे प्रतीतिमें नही लेता हुवा, उस पर रुचि नहीं रखता हुवा वह अपने मनको विविध विषयोंमें ले जाता है, तो ऐसी स्थितिमें धर्मभ्रष्ट होकर वह संसारमेंही परिभ्रमण करनेवाला होता है यह प्रथम दुःखशय्या है-१ द्वितीय दुःखशय्या इस प्रकार है, जैसे कोई एक मनुष्य मुण्डित होकर अगारावस्थासे अनगारावस्थाको धारण कर लेता है पर वह स्वकीय लाभसे सन्तुष्ट नहीं होता परके लाभकी आशा करता है-उसकी स्पृहा करता है, प्रार्थना करता है, अभिलाषा रखता है, इस तरह परके लाभकी अभिलाषावाला हुवा वह अपने मनको इधर-उधर अनेक विषयोंमें ले जाता है, तो ऐसी स्थितिमें धर्मभ्रष्ट वह संसारमेंही परिभ्रमण करनेवाला बनता

પન્નતા અને કલુષભાવ સંપન્નતાથી યુક્ત થઇ જાય છે. તે કારણે તે નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પ્રત્યે શ્રદ્ધા રાખતો નથી, તેને પોતાની પ્રતીતિનો વિષય બનાવતો નથી, અને તેને પોતાની રુચિનો વિષય પણ બનાવતો નથી આ રીતે નિર્ગ્રંથ-પ્રવચન પર શ્રદ્ધા નહીં રાખતો એવો, તેની પ્રતીતિ નહીં કરતો એવો, અને તેના પ્રત્યે રુચિ નહીં રાખતો એવો તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પોતાના મનને વિવિધ વિષયોમાં પ્રવૃત્ત થવા દે છે. આ પ્રકારની પરિસ્થિતિમાં તે ધર્મભ્રષ્ટ થઇને સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરનારો થાય છે. આ પહેલી દુઃખશય્યા સમજવી.

બીજી દુઃખશય્યા આ પ્રકારની છે. કોઇ એક મનુષ્ય મુંડિત થઇને અગારાવસ્થાના પરિત્યાગપૂર્વક અણગારાવસ્થા ધારણ કરે છે; પરન્તુ તે સ્વકીય લાભથી સંતુષ્ટ થતો નથી, પરકીય લાભની આશા કરે છે, તેને માટે સ્પૃહા કરે છે, પ્રાર્થના કરે છે અને અભિલાષા સેવે છે. આ પ્રમાણે પરના લાભની અભિલાષાથી યુક્ત થયેલો તે પોતાના મનને અહીં તહીં અનેક વિષયોમાં

अथापरा तृतीया दुःखशय्या, तद्यथा–स खलु मुण्डो भूत्वा यावत् प्रव्रजितो दिव्यान् मानुष्यकान् कामभोगान् आशयति यावत् अभिलपति दिव्यान् मानुष्यकान् कामभोगान् आशयन् यावत् अभिलषन् मन उच्चावचं निर्गच्छति विनिघातमापद्यते, तृतीया दुःखशय्या । ३ ।

अथाऽपरा चतुर्थी दुःखशय्या, तद्यथा–स खलु मुण्डो यावत् प्रव्रजितः तस्य खलु एवं भवति–यदा खलु अहम् अगारवासम् आवसामि तदा खलु अहं संबाहनपरिमर्दनगात्राभ्यङ्गगात्रोत्क्षालनानि लभे यत्प्रभृति च अहं खलु मुण्डः यावत्

है, यह द्वितीय दुःखशय्या है–२ तृतीय दुःखशय्या इस प्रकार है जैसे कोई एक पुरुष मुण्डित होकर अगारावस्थासे अनगारावस्था सम्पन्न हो जाता है अब यदि वह उस अवस्थामें भी दिव्य मनुष्य सम्बन्धी कामभोगोंकी आशा करताहै–यावत् अभिलाषा रखताहै तो इस तरहसे दिव्य मनुष्य सम्बन्धी कामभोगोंकी आशा करता हुवा यावत् उनकी अभिलाषा करता हुवा है वह मनको इधर उधरके अनेक विषयोंमें ले जाता है तो ऐसी दशामें धर्मभ्रष्ट होकर वह संसारमेंही परिभ्रमण करनेवाला बनता है–३ चतुर्थ दुःखशय्या इस प्रकार है, जैसे कोई एक मनुष्य मुण्डित होकर अगारावस्थासे अनगाराऽवस्था सम्पन्न हो जाता है, अब यदि वह इस अवस्थामें भी ऐसा विचार करता है कि–जिस समय मैं गृहस्थावस्थामें था उस समय शरीरको दबवाता था, उसे मलवाता था उस पर तैल आदिकी मालिश करवाता

ભમવા દે છે. તો એવી પરિસ્થિતિમાં ધર્મભ્રષ્ઠ થયેલો તે નિર્ગ્રંથ સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરનારો થાય છે.

ત્રીજી દુઃખશય્યા આ પ્રકારની છે--કોઇ એક મનુષ્ય મુંડિત થઈને અગારાવસ્થાના પરિત્યાગપૂર્વક અણુગારાવસ્થા ધારણ કરે છે અણુગારાવસ્થા ધારણ કરવા છતાં પણ જો તે મનુષ્ય સંબંધી કામભોગોની આશા કરે છે, સ્પૃહા કરે છે, પ્રાર્થના કરે છે અને અભિલાષા સેવે છે, તો એ પ્રકારે દિવ્ય મનુષ્ય સંબધીં કામભોગોની આશા, સ્પૃહા, પ્રાર્થના અને અભિલાષા કરતો એવો તે મનને આમ તેમ અનેક વિષયોમાં ભમવા દે છે. તો એવી પરિસ્થિતિમાં ધર્મભ્રષ્ટ થઈને તે સંસારમાં પરિભ્રમણ કરનારો જ બને છે.

ચોથી દુઃખશય્યાનું સ્વરૂપ--કોઈ એક મનુષ્ય મુંડિત થઇને ગૃહસ્થાવસ્થાના ત્યાગપૂર્વક અણુગારાવસ્થા અંગીકાર કરે છે ત્યાર બાદ એવો વિચાર કરે છે કે જ્યારે હું ગૃહસ્થાવસ્થામાં હતો ત્યારે સેવકાદિ પાસે મારા શરીરને દબાવરાવતો હતો, ચોળાવતો હતો, તેના પર તેલ આદિનું માલિશ કરાવતો

प्रव्रजितः तत्प्रभृति च खलु अहं संवाहन यावत् गात्रोत्क्षालनानि नो लभे स खलु संवाहन यावत् गात्रोत्क्षालनानि आशयति यावत् अभिलषति स खलु संवाहन यावत् गात्रोत्क्षालनानि आशयन् यावत् मन उच्चावचं निर्गच्छति विनिघातमापद्यते, चतुर्थी दुःखशय्या ४। सू० २६।

२७ छाया—चतस्रः सुखशय्याः प्रज्ञप्ताः, तत्र खलु इयं प्रथमा सुखशय्या, तद्यथा-स खलु मुण्डो भूत्वा आगारादनगारितां प्रव्रजितो निर्ग्रन्थे प्रवचने निःशङ्कितः निष्काङ्क्षितः निर्विचिकित्सितः नो भेदसमापन्नो नो कलुषसमापन्नो

था, पानीसे उसे खूब अच्छी तरह नहलाता था-स्नान कराता था. अब मैं जबसे मुण्डित यावत् प्रव्रजित हो गया हूं तबसे मुझे न तो उसे दबवानेका मोका मिलता है न यावत् उसे नहलानेका मोका मिलताहै, इस तरहसे संवाह आदिकी वह आशा करता है तो ऐसी स्थितिमें उसकी आशा करने आदिरूप भावोंवाला वह अपने मनको अनेक विषयोंमें ले जाता-अतः धर्मभ्रष्ट होकर संसारको ही बढाता है यह चौथी दुःखशय्या है-४।

सुखशय्याएं भी चार कही गई हैं, उनमें यह प्रथम सुखशय्या है जैसे कोई पुरुष मुण्डित होकर अगारावस्थासे अनगारावस्थामें प्रव्रजित हो जाताहै और वह नैर्ग्रन्थ प्रवचनमें शङ्कासे रहित निश्शङ्कित काङ्क्षासे रहित निष्काङ्क्षित विचिकित्सासे रहित निर्विचिकित्सित भेद समापन्नसे रहित-नो भेदसमापन्न, कलुषसमापन्नसे रहित-

---

હતો, અને પાણી આદિ વડે મારા શરીરે ખૂબ જ સારી રીતે સ્નાન કરાવતો હતો, પણ જ્યારથી હું પ્રવ્રજિત થઇ ગયો છું ત્યારથી મને શરીર દબાવશવવાનો મોકો પણ મળતો નથી, શરીરને ચોળાવવાનો, માલિશ કરાવવાનો અને સ્નાન કરવાનો પણ મોકો મળતો નથી. આ રીતે સંવાહન આદિની તે આશા કરે છે. તો આ પ્રકારની પરિસ્થિતિમાં તે પોતાના મનની સ્થિરતા ગુમાવી બેસે છે અને મનને અનેક વિષયોમાં ભમવા દે છે તો એવો નિર્ગ્રંથ ધર્મભ્રષ્ટ થઇને પોતાના સંસારને વધારે છે. આ ચોથી દુઃખશય્યા સમજવી.

સુખશય્યાઓ પણ ચાર કહી છે પ્રથમ સુખશય્યાનુ આ પ્રકારનું સ્વરૂપ કહ્યું છે—કોઇ એક મનુષ્ય મુંડિત થઈને અગારાવસ્થાના પરિત્યાગ પૂર્વક અણગારાવસ્થાનો સ્વીકાર કરે છે તે નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પ્રત્યે શંકા રાખતો નથી, કાંક્ષા રાખતો નથી, વિચિકિત્સા રાખતો નથી, કલુષ સમાપન્ન થતો નથી અને ભેદસમાપન્ન પણ થતો નથી. આ રીતે નૈર્ગ્રંથ પ્રવચન પ્રત્યે નિઃ-

नैर्ग्रन्थं प्रवचनं श्रद्दधाति प्रत्येति रोचयति नैग्रन्थं प्रवचनं श्रद्दधानः प्रतियन् रोचयन् नो मन उच्चावचं निर्गच्छति नो विनिघातमापद्यते, प्रथमा सुखशय्या ।१।

अथाऽपरा द्वितीया सुखशय्या, तद्यथा-स खलु मुण्डो यावत् प्रव्रजितः स्वकेन लाभेन तुष्यति परस्य लाभं नो आशयति नो स्पृहयति नो प्रार्थयति नो अभिलपति, परस्य लाभमनाशयन् यावद् अनभिलपन् नो मन उच्चावचं निर्गच्छति नो विनिघातमापद्यते, द्वितीया सुखशय्या । २।

नो कलुषसमापन्न बना हुवा नैर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता है, उस पर प्रीति करता है, उसे अपने रुचिका विषय बनाता है, तो ऐसी स्थितिमें वह नैर्ग्रन्थ प्रवचनकी श्रद्धावाला बना हुवा उसकी प्रीतिवाला बना हुवा उसकी रुचिवाला बना हुवा, वह अपने मनको इधर-उधरके विषयोंमें नहीं ले जाता है, इसलिये वह श्रुतचारित्ररूप धर्मका आराधक बना हुवा संसारमें परिभ्रमण करनेवाला नहीं बनता है यह प्रथम सुखशय्या है-१ द्वितीय सुखशय्या इस प्रकारसे है जैसे कोई पुरुष मुण्डित होकर यावत् प्रव्रजित हो जाता है, और अपनेही लाभसे सन्तुष्ट रहता है, परके लाभकी आशा नहीं करता है, उसकी स्पृहा-वाञ्छा नहीं करता है, उसकी प्रार्थना नहीं करता है, उसकी अभिलाषा नहीं करता है इस तरह परके लाभकी आशासे रहित बना हुवा

શંકિત, નિઃકાંક્ષિત, નિર્વિચિકિત્સિત, ભેદસમાપન્ન રહિત અને કલુષસમાપન્નથી રહિત હોવાને કારણે તે નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પર શ્રદ્ધા રાખે છે, તેની પ્રતીતિ કરે છે, તેના પ્રત્યે રુચિ રાખે છે. આ રીતે નૈર્ગ્રંથ પ્રવચન પ્રત્યે જેને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ છે, તેને પોતાની પ્રતીતિનો જેણે વિષય બનાવ્યો છે, અને તેને પોતાની રુચિનો વિષય જેણે બનાવ્યો છે, એવો તે નિર્ગ્રંથ પોતાના મનને સ્થિર રાખી શકે છે, તેને ગમે તે વિષયોમાં ભમવા દેતો નથી. આ પ્રકારે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરનારો તે નિર્ગ્રંથ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરનારો એટલે કે પોતાનો સંસાર વધારનાર હોતો નથી.

બીજી સુખશય્યાનું સ્વરૂપ—કોઈ એક પુરુષ મુંડિત થઈને પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરે છે. ત્યાર બાદ તે સ્વકીય લાભથી જ સંતુષ્ટ રહે છે-પરકીય લાભની આશા કરતો નથી, સ્પૃહા (વાંછા, કામના) રાખતો નથી, તેને માટે પ્રાર્થના કરતો નથી અને તેની અભિલાષા પણ રાખતો નથી આ રીતે પરકીય લાભની આશા, સ્પૃહા આદિથી રહિત બનેલો એવો તે નિર્ગ્રંથ પોતાના

अथाऽपरा तृतीया सुखशय्या, तद्यथा-स खलु मुण्डो यावत् प्रव्रजितो दिव्यान् मानुष्यकान् कामभोगान् नो आशयति यावत् नो अभिलषति दिव्यान् मानुष्यकान् कामभोगान् अनाशयन् यावद् अनभिलषन् नो मन उच्चावचं निर्गच्छति नो विनिघातमापद्यते, तृतीया सुखशय्या । ३ ।

अथाऽपरा चतुर्थी सुखशय्या, तद्यथा-स खलु मुण्डो यावत् प्रव्रजितः तस्य खलु एवं भवति-यदि तावत् अर्हन्तो भगवन्तो हृष्टा आरोग्यावलिकाः कल्यश-

---

यावत् उसकी अभिलाषासे रहित बना हुवा वह अपने मनको व्यर्थके इधर उधर विषयोंमें नहीं ले जाता है वह श्रुतचारित्ररूप धर्मका आराधक बना हुवा संसारमें परिभ्रमण करनेवाला नहीं बनता है, यह द्वितीय सुखशय्या है-२ तृतीय सुखशय्या इसप्रकार है जैसे कोई पुरुष मुण्डित होकर यावत् प्रव्रजित हो जाता है और वह दिव्य मनुष्य कामभोगोंकी आशा नहीं करता है यावत् उनकी अभिलाषा नहीं करता हुवा वह अपने मनको इधर उधरके व्यर्थ विषयोंमें नहीं ले जाता है, इस तरह वह श्रुतचारित्ररूप धर्मका आराधक बना हुवा संसारपरिभ्रमण करनेवाला नही बनता है यह तृतीय सुखशय्या है-३ चतुर्थ सुखशय्या इस प्रकार है-जैसे कोई पुरुष मुण्डित होकर यावत् प्रव्रजित हो जाता है, उसके मनमें ऐसा विचार आता है कि जब हृष्ट-आरोग्य-बलिक और कल्प शरीरवाले ऐसे अर्हत भगवन्त

મનને નકામા અને અનુચિત વિષયોમાં ભમવા દેતો નથી. તે કારણે શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં લીન થયેલો તે નિર્ગ્રંથ સંસારનું પરિભ્રમણ કરનાર થતો નથી પણ અલ્પ સંસારવાળો બને છે ત્રીજી સુખશય્યા આ પ્રકારની કહી છે—કોઇ એક પુરુષ મુંડિત થઈને પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરે છે. ત્યાર બાદ તે કદી પણ દિવ્ય મનુષ્ય સંબંધી કામભોગોની આશા, સ્પૃહા, અભિલાષા આદિ કરતો નથી આ રીતે દિવ્ય કામભોગોની આશા ન કરનારો, સ્પૃહા ન કરનારો અને અભિલાષા ન કરનારો તે નિર્ગ્રંથ પોતાના મનને નકામા વિષયોમાં આમતેમ ભમવા દેતો નથી. આ પ્રકારે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું આરાધન કરનારો તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પોતાના સંસારને વધારતો નથી. તેને દીર્ઘ અથવા અનંતકાળ પર્યન્ત આ સંસારનું પરિભ્રમણ કરવું પડતું નથી.

ચોથી સુખશય્યા આ પ્રકારની કહી છે—કોઇ એક પુરુષ મુંડિત થઇને પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરે છે તેના મનમાં એવો વિચાર આવે છે કે-જો હૃષ્ટ-નીરોગી, બલિષ્ટ અને કલ્ય શરીરવાળા અર્હંત ભગવાન અન્યતર, ઉદાર,

रीरा अन्यतराणि उदाराणि कल्याणानि विपुलानि प्रयतानि प्रगृहीतानि महानुभागानि कर्मक्षयकारणानि तपः कर्माणि प्रतिपद्यन्ते किमङ्ग ! पुनरहमभ्युपगमिकीमौपक्रमिकीं वेदनां नो सम्यक् सहे क्षमे तितिक्षे अध्यासयामि, मम च खलु आभ्युपगमिकीमौपक्रमिकीं वेदनां सम्यगसहमानस्य अक्षममाणस्य अतितिक्षणमाणस्यानध्यासयतः किं मन्ये क्रियते ? एकान्तशः (एकान्तेन) मया पापं कर्म क्रियते, मम च खलु आभ्युपगमिकीमौपक्रमिकीं यावत् सम्यक् सहमानस्य यावत् अध्यासयतः किं मन्ये क्रियते !,एकान्तशः मया निर्जरा क्रियते, चतुर्थी सुखशय्या ।४। सू० २७ ॥

अन्यतर-उदार-कल्याणकारक-विपुल प्रयत प्रगृहीत महानुभाग और कर्मक्षयकर ऐसे तपोंको तपते हैं तो क्या मैं शिरोलुंचनादिजन्य आभ्युपगमिकी वेदनाको एवं औपक्रमिकी वेदनाको अच्छी तरहसे क्यों नहीं सहन करूं, और क्यों मैं इससे विचलित परिणतिवाला बनूं। यदि मैं इस आभ्युदयिकी और औपक्रमिकी वेदनाको अच्छी तरहसे सहन नहीं करूंगा, इस पर कुपित होऊंगा दीन भाववाला बन जाऊंगा, इससे विचलित परिणतिवाला हो जाऊंगा, तो फिर मैं क्या करूंगा, मैं तो एकान्ततः पापी हो जाऊंगा और जो उस वेदनाको अच्छी तरहसे सहन करलूंगा, कुपित न होऊंगा दीन भाववाला नहीं बनूंगा एवं अपने कर्तव्यपथसे विचलित नहीं होऊंगा तो एकान्त रूपसे मेरे

કલ્યાણકારક, વિપુલ, પ્રયત, પ્રગૃહીત, મહાનુભાગ અને કર્મક્ષપકર એવી તપસ્યાઓ કરે છે, તો મારાથી શિરોલુચનાદિ જન્ય આભ્યુપગામિકી અને ઔપક્રમિકી વેદનાનુ સારી રીતે વેદન શા માટે ન થઇ શકે? તેના પ્રત્યે કુપિત થવાની શી જરૂર છે? અદીન ભાવયુક્ત થઈને શા માટે હું તેને સ્વીકારી ન લઉં? તેનાથી મારે શા માટે વિચલિત પરિણતિવાળા બનવું જોઇએ? જો હું આ આભ્યુપગામિકી અને ઔપક્રમિકી વેદનાને સારી રીતે સહન નહી કરૂં, તેના પ્રત્યે કુપિતભાવયુક્ત બનીશ, દીનભાવયુક્ત બનીશ, અને વિચલિત પરિણતિવાળો બનીશ, તો મારૂં શું થશે? આમ કરવાથી તો હું એકાન્તતઃ (સંપૂર્ણ રૂપે) પાપી બની જઇશ. પરન્તુ જો હું તેના પ્રત્યે કુપિત નહી બનું, દીનભાવયુક્ત નહી બનું, અને મારા કર્તવ્ય માર્ગમાંથી વિચલિત થયા વિના તે વેદનાને સમતા ભાવપૂર્વક સહન કરી લઇશ તો એકાન્તરૂપે મારાં કર્મોની નિર્જરા થશે આ પ્રકારના વિચારથી પ્રેરાઈને આભ્યુદયિકી અને ઔપક્રમિકી વેદનાને સહન કરનાર નિર્ગ્રંથ શ્રુતચારિત્રરૂપ

टीका—" चत्तारि दुहसेज्जाओ " इत्यादि-दुःखशय्याः-दुःखदाः शय्याः दुःखशय्याः, मध्यमपदलोपिसमासोऽत्रबोध्यः, दुःखोत्पादिकाः शय्या इत्यर्थः, ताश्च द्रव्यतोऽसमीचीन खट्वादिलक्षणाः, भावतस्तु दुःस्थचित्ततया दुःश्रमणतास्वभावाः-प्रवचनाऽश्रद्धा १ परलाभप्रार्थना २ कामाऽऽशंसना ३-संवाहनादि प्रार्थना ४ स्वरूपाः, चतस्रः-चतुः संख्याः प्रज्ञप्ताः, ताः क्रमेण प्रदर्शयितुमाह- " तत्थ " इत्यादि-तत्र-चतसृषु दुःखशय्यासु मध्ये खलु इयम्-अनुपदं वक्ष्यमाणा प्रथमा दुःखशय्या, तद्यथा-सः-कश्चित् गुरुकर्मा जीवः ' णं ' वाक्यालङ्कारे एवमग्रेऽपि, मुण्डः-लुञ्चितशिरः केशः, भूत्वा अगारात्-गृहात् अनगारिताम्-आगारी-गृही तद्विपरीतोऽनगारी-संयतः, तस्य भावोऽनगारिता, तां तथा=संय-

---

कर्मोंकी निर्जरा होगी इस प्रकारके विचारसे जो आभ्युदयिकी एवं औपक्रमिकी वेदनाको सहता है उसकी यह चतुर्थी सुखशय्या है-४

टीकार्थ-यहां दुःखशय्या पदमें दुःखोत्पादिकी शय्या ऐसा मध्यमपदलोपी समास है। यह दुःखशय्या द्रव्यभाव भेदसे दो प्रकारकी है.

असमीचीन-टूटी फूटी जो खटिया आदि है वे द्रव्यरूप दुःखशय्या हैं, तथा दुःस्थचित्त होनेसे दुःश्रमणता रूप-प्रवचनकी-अश्रद्धारूप-१ परलाभ प्रार्थना रूप-१ कामशंसना रूप एवं संवाहनादिकी चाहना रूप जो भाव हैं वे भावरूप दुःखशय्या हैं ये दुःखशय्याएँ चार प्रकारकी हैं, प्रथम प्रकारकी वह है।

कि जो कोई गुरुकर्मा जीव केशोंका लुञ्चन करके गृहस्थावस्थासे अनगारावस्थावाला हो जाताहै गृहस्थावस्थाका त्याग कर मुनि बन जाता

धर्मनो आराधक होवाने कारणे संसारमां परिभ्रमण करतो नथी. चोथी सुखशय्यानुं आ प्रकारनुं स्वरूप छे.

टीकार्थ—अहीं 'दुःखशय्या' आ पदमां 'दुःखोत्पादिकी शय्या' एवो मध्यम पदलोपी समास छे ते दुःखशय्या द्रव्य अने भावना भेदथी बे प्रकारनी छे. भांग्या तूटया खाटला वगेरेने द्रव्यरूप दुःखशय्या कही शकाय. तथा मनना दुःपरिणामोने कारणे दुःश्रमणतारूप जे भावो उत्पन्न थाय छे तेमने भाव-रूप दुःखशय्या कही शकाय छे एवी भावरूप दुःखशय्या चार कही छे—(१) प्रवचन प्रत्ये अश्रद्धारूप दुःखशय्या, (२) परलाभ प्रार्थनारूप दुःखशय्या (३) कामाशंसतारूप दुःखशय्या अने (४) संवाहनादिनी चाहनारूप दुःखशय्या.

पहेला प्रकारनी दुःखशय्यानुं स्पष्टीकरण—कोई गुरुकर्मा जीव केशोनुं लुंचन करीने गृहस्थावस्थाना परित्यागपूर्वक निर्ग्रंथ पर्यायनो स्वीकार करी

ततां प्रव्रजितः-अधिगतः प्राप्त इत्यर्थः, नैर्ग्रन्थे-निर्ग्रन्थाः-बाह्याभ्यन्तरग्रन्थि-रहिता अर्हन्तः, तेषामिदं नैर्ग्रन्थं, तस्मिन् प्रवचने=शङ्कितः-शङ्कावान् 'आर्हत-शासने यदुक्तं जीवादिकं तत् सत्यं वा मिथ्या वे'ति देशसर्वशङ्कावान्, तथा काङ्क्षितः-आर्हतमतातिरिक्तमते इच्छावान्-'मतान्तरमपि समीचीनमिति मति-मान्, विचिकित्सितः-फले संशययुक्तः, तथा-भेदसमापन्नः-'जिनोक्तं सर्वम् इत्थमेव अन्यथा वे'ति बुद्धिभेदवान्, कलुषसमापन्नः-'नैतदेव' मिति विप-रीतज्ञानवान् नैर्ग्रन्थं-प्रवचनं नो श्रद्दधाति तत्र श्रद्धां न करोतीत्यर्थः, नो प्रत्येति-प्रतीतिं न प्रतिपद्यते, नो रोचयति-न रुचिविषयीकरोति, इत्थं नैर्ग्रन्थं

है और फिर भी वह बाह्याभ्यन्तर परिग्रह विहीन निर्ग्रन्थ अर्हन्त भगवन्त द्वारा प्रतिपादित प्रवचनमें ऐसी शङ्कावाला बनता है कि आर्हत शासनमें जो जीवादिक तत्त्व कहे गये हैं वे सत्य हैं या मिथ्या हैं, इस प्रकारसे देशरूपसे या सर्व रूपसे वह शङ्कावाला बनता है, तथा-ऐसी शङ्कावाला बनता है कि मतान्तर भी समीचीन हैं, तथा-विचिकित्सित फलमें संशययुक्त बनता है भेदसमापन्न बनता है, "जिनोक्त तत्त्व आर्हत मतसे अतिरिक्त सबके सब प्रकारसे हैं या-अन्यथा हैं" इस प्रकारसे बुद्धि भेदवाला बनता है तथा कलुष समा-पन्न होता है यह इस तरहसे नहीं है, इस प्रकारसे विपरीत ज्ञानवाला बनता है, इस प्रकारके भावोंसे युक्त होकर वह नैर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा नहीं करता है, उस पर प्रतीति नही लाता है, उसे अपनी

લે છે નિર્ગ્રંથ બનવા છતાં બાહ્યાભ્યન્તર પરિગ્રહથી વિહીન એવો તે અર્હંત ભગવન્ત દ્વારા પ્રતિપાદિત પ્રવચનમાં અશ્રદ્ધા રાખે છે, તેને એવો વિચાર આવે છે કે અર્હંત શાસનમાં જે જીવાદિક તત્ત્વ પ્રરૂપ્યાં છે તે શું સત્ય છે કે મિથ્યા છે? આ પ્રકારે તે દેશરૂપે (અંશતઃ) અથવા સર્વરૂપે (સંપૂર્ણ રૂપે) શંકાવાળો બને છે, તથા તેને એવો સંભ્રમ થાય છે કે અન્ય મત-વાદીઓની માન્યતા પણ સાચી હોઈ શકે છે. વળી તે વિચિકિત્સિત બની જાય છે એટલે કે ફલની બાબતમાં પણ સંશયયુકત બની જાય છે તથા તે ભેદસમાપન્ન પણ બની જાય છે, એટલે કે જિનોક્ત તત્વ જિનપ્રરૂપિત સ્વશાસન અને પરશાસન (અન્ય સિદ્ધાંતો) એક જ પ્રકારની માન્યતા ધરાવે છે કે વિરુદ્ધ માન્યતા ધરાવે છે, આ પ્રકારની મુંજવણને કારણે બુદ્ધિભેદવાળો બની જાય છે, તથા તે કલુષસમાપન્ન બની જાય છે-એટલે કે અર્હંત પ્રવચન મિથ્યા છે, એવી વિપરીત માન્યતાવાળો બની જાય છે. આ પ્રકારના ભાવોથી

प्रवचनम् अश्रद्दधानः अप्रतियन् अरोचयन् स संयतो मनउच्चावचम्=अनेकप्रकारकं त्रिपयम् विविधविषयेषु निर्गच्छति=गमेरत्रान्तर्भावितण्यर्थतया निर्गमयति-नयति, तेन हेतुना स विनिघातं-धर्मभ्रंशं संसारं वा आपद्यते=प्राप्नोतीति प्रथमा दुःखशय्या १।

"अहावरा दोच्चे"—त्यादि - अथ = प्रथमदुःखशय्यानिरूपणानन्तरम् अपरा-द्वितीया दुःखशय्या निरूप्यते, तथाहि-"से णं" इत्यादि प्राग्वत्, नवरं-स्वकेन-स्व एव स्वकः-स्वकीयस्तेन लाभेन-भक्तपानादि प्राप्तिरूपेण, नो तुष्यति-सन्तुष्टो न भवति, किन्तु परस्य-स्वातिरिक्तस्य संयतस्य सकाशात् लाभं-भक्तपानादि प्राप्तिरूपम् आशयति=तस्य आशां करोति 'स मह्यं दास्यतीति संभावयति, स्पृहयति-वाञ्छति, प्रार्थयति=याचते, अभिलषति लब्धेऽप्यन्नादौ पुनर्वाञ्छति, शेषं च प्रथमदुःखशय्यासूत्रवद् बोध्यम् । इति द्वितीया दुःखशय्या २।

रुचिका विषय नहीं बनाता है तो ऐसी परिणतिमें वह नैर्ग्रन्थ प्रवचनकी श्रद्धादिसे विहीन बना हुवा संयत विविध विषयोंमें अपने मनको ले जाता है, इस कारण वह "विनिघात" को धर्मभ्रष्टताको, या संसारको प्राप्त करताहै इस प्रकारकी यह प्रथम दुःखशय्याहै-१। द्वितीय दुःख शय्यामें भी ऐसाही कथन जानना चाहिये, परन्तु इसमें वह संयत अपने प्राप्त भक्तपानादिमें संतुष्ट नहीं होता है, किन्तु अपनेसे अतिरिक्त संयतके भक्तपानादिककी आशा करता है कि वह मुझे अपने भक्तपानादिकमें से दे दे बाकीका कथन मूलार्थ जैसा है-२ तृतीय

युक्त थवाने कारणे ते नैर्ग्रंथ प्रवचन प्रत्ये श्रद्धा राखतो नथी, तेने पोतानी प्रतीतिनो विषय बनावतो नथी अने तेमां रुचि पण राखतो नथी. आ प्रकारनी परिणतिथी युक्त थयेलो अने नैर्ग्रंथ प्रत्येनी श्रद्धा आदिथी विहीन बनेलो ते श्रमण निर्ग्रंथ विविध विषयोमां पोताना मनने भमवा दे छे. ते कारणे ते धर्मभ्रष्ट अथवा धर्मनो विराधक थई जवाने कारणे संसारमां परिभ्रमण कर्या करे छे. आ प्रकारनी पहेली भावरूप दुःखशय्या छे.

बीजी दुःखशय्यानुं स्वरूप—अहीं पण पहेली दुःखशय्या जेवुं कथन समजवुं. आ दुःखशय्याना वर्णनमां एटली ज विशेषता छे के ते संयत पोताने प्राप्त थयेला आहारपाणी आदिथी संतोष मानतो नथी पण अन्य संयतने प्राप्त थयेला आहारादिनी आशा करे छे. एटले के ते एवी अभिलाषा राखे छे के अन्य संयत मने ते आहारादि आपी दे. बाकीनुं कथन मूळार्थमां कह्या अनुसार समजवुं.

"अहावरा तच्च"—इत्यादि—अथ तृतीया दुःखशय्या निरूप्यते, तथाहि—"से णं" इत्यादि—पूर्ववत्, नवरं दिव्यान्—देवलोके भवान् मनोज्ञान् वा मानुष्यकान्—मनुष्यलोकभवान् कामभोगान्—शब्दादीन् विषयान् आशयति—इत्यारभ्य अभिलषति 'यावत्' अभिलषतिपदपर्यन्तं बोध्यम्, शेषं सर्वं स्पष्टम्। इति तृतीया दुःखशय्या। ३।

"अहावरा चउत्था" इत्यादि — अथ—चतुर्थी दुःखशय्या निरूप्यते—तथाहि—"से णं" इत्यादि—प्राग्वत्, नवरं—यदाऽहम् अगारवासम्-वसत्यत्रेति वासः, अगारं—गृहमेव वासोऽगारवासस्तम् आवसामि=अधितिष्ठामि—तत्राऽऽवसामीत्यर्थः, तदा खलु अहं संवाहनपरिमर्दन—गात्राभ्यङ्गगात्रोत्क्षालनानि,—तत्र-संवाहनं—शरीरस्य सुखोत्पादको मर्दनविशेषः, परिमर्दनं—पिष्टादिना शरीरोद्वर्तनम् 'पीठीकरना' इति भाषाप्रसिद्धम्, गात्राभ्यङ्ग-—तैलादिनाऽङ्गम्रक्षणं शरीरे तैलाभ्यङ्ग इत्यर्थः, गात्रोत्क्षालनं—शरीरस्य जलेन शोधनम्, एतानि लभे=अवाप्तवानित्यर्थः, च=पुनः यत्प्रभृति=यस्मात्कालादारभ्य 'णं' इति वाक्याल-

दुःख शय्यामें वह संयत देवलोक सम्बन्धी, या मनुष्यलोक सम्बन्धी कामभोगोंकी, शब्दादिक विषयोंकी आशा करता है यहां "अभिलाषा" आदि पदोंका सबका सम्बन्ध कथन कर लेना चाहिये-३।

चतुर्थ प्रकारकी दुःखशय्या इस प्रकारसे है कि वह संयत गृहस्थाऽवस्थामें भोगे गये चरणदबवाना आदि संवाहको परिमर्दन-मालीश आदि सुखोंको याद करता है और अब संयतावस्थामें उन बातोंका लाभ नहीं होता है ऐसा विचारता है-शरीरको सुख उपजे, ऐसे मर्दनका नाम संवाहन है, पीठी करना इसका नाम-शरीरोद्वर्त्तन है, शरीरमें तेलकी मर्दन करना-इसका नाम गात्राभ्यङ्ग है, शरीरका

ત્રીજી દુઃખશય્યા—આ દુ:ખશય્યાનું કથન મૂળાર્થ પ્રમાણે જ સમજવું અહીં દેવલોક અથવા મનુષ્યલોક સંબંધી કામભોગોની—શબ્દાદિક વિષયોની આશા રાખનાર સંયત પોતાનો સંસાર વધારે છે, એવું સમજવું

ચોથા પ્રકારની દુ:ખશય્યા—અહીં એવા સંયતની વાત કરી છે કે જે પોતાની ગૃહસ્થાવસ્થામાં ભોગવેલા ચરણ દબાવરાવવા આદિ રૂપ સંવાહનોને, પરિમર્દન (માલિશ) આદિ સુખોને યાદ કરે છે અને સંયતાવસ્થામાં એ લાભો ન મળવાને કારણે મનમાં દુઃખ અનુભવે છે (શરીરને સુખ ઉપજે એવી રીતે તેને દબાવરાવવું તેનું નામ સંવાહન છે શરીરે પીઠી, સુખડ આદિ ચોળાવવી તેનું નામ શરીરોદ્વર્ત્તન છે, શરીરે તેલનું માલિશ કરવું તેનું નામ

ङ्कारे, 'अहं मुण्डः' इत्यारभ्य प्रव्रजित इत्यन्तं प्राग्वद् बोध्यम्, तावत्प्रभृति=तस्मात्कालादारभ्य अहं संवाहनादिकं न लभे, शेषं व्याख्यातपूर्वम्। इति चतुर्थी दुःखशय्या।४। सू० २६॥

अथ सुखशय्यानिरूप्यते—

टीका—"चत्तारि सुहसेज्जाओ" इत्यादि—सुखशय्याः-सुखदाः शय्याः सुखशय्याः, ता द्रव्यभावभेदेन द्विविधाः, तत्र द्रव्यतस्तथाविधसुखदपर्यङ्कादिरूपाः, भावतः स्वस्थचित्तत्वेन सुश्रमणत्वस्वभावाः, ताः प्रवचनश्रद्धा १-परलाभानिच्छा २-कामानाशंसना ३-वेदनासम्यक्सहनरूपाश्चतस्रः प्रज्ञप्ताः, तत्र प्रथमा सुखशय्या-स खलु मुण्डो भूत्वा अगाराद् अनगारितां प्रव्रजितो नैर्ग्रन्थे प्रवचने निश्शङ्कितो निष्काङ्क्षितो यावत् नो विनिघातमापद्यत इति।१। द्वितीया

शोधन जलसे करना, न्हाना स्नान करना इसका नाम गात्रोत्क्षालन है। बाकी का सब कथन मूल जैसा है॥ २६॥

अब सुख शय्याके विषयमें सूत्रकार कहते हैं, कि सुखशय्या भी चार प्रकारकी है। यह-सुखशय्या द्रव्य-भावके भेदसे दो प्रकार है, तथाविध सुखकारक पल्यङ्क-पर्यङ्क आदिरूप द्रव्यसुखशय्या है, और स्वस्थ चित्तसे सुश्रमण स्वभावरूप भावसुखशय्या है। यह भावरूप सुखशय्या-प्रवचन श्रद्धारूपसे, परलाभकी इच्छा न करने रूपसे, और वेदना सम्यक् सहनरूपसे चार प्रकारकी है-इनमें प्रवचन श्रद्धारूप जो सुखशय्या है वह इस प्रकारसे है, जब मुण्डित होकर कोई पुरुष गृहस्थावस्थासे अनगारावस्थाको प्राप्त होता है तब वह नैर्ग्रन्थ प्रवचनमें निश्शङ्कित होता है, निष्काङ्क्षित आदि विशेषणोंवाला है, अतः वह धर्मभ्रष्ट नहीं होता है या संसारमें परिभ्रमण नहीं करता है-१

ગાત્રાભ્યંગ છે, જળથી શરીરની શુદ્ધિ કરવા રૂપ સ્નાનને ગાત્રોત્ક્ષાલન કહે છે) બાકીનું કથન મૂલાર્થ અનુસાર સમજવું.

હવે સૂત્રકાર સુખશય્યાનું નિરૂપણ કરે છે—તેના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. દ્રવ્ય અને ભાવની અપેક્ષાએ તેના બે પ્રકાર પડે છે સુખકારક પલંગ આદિને દ્રવ્યરૂપ સુખશય્યા કહી શકાય, અને સ્વસ્થચિત્તની અપેક્ષાએ સુશ્રમણ સ્વભાવરૂપ ભાવ સુખશય્યા સમજવી તેના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—
(૧) પ્રવચન શ્રદ્ધારૂપ (૨) પરલાભની અનિચ્છા રૂપ, (૩) કામભોગો પ્રત્યે અનાસક્તિ રૂપ અને (૪) સમતા ભાવે વેદના સહન કરવા રૂપ

પ્રવચન શ્રદ્ધારૂપ સુખશય્યા—કોઈ પુરુષ મુંડિત થઈને ગૃહસ્થાવસ્થાના ત્યાગપૂર્વક અણગારાવસ્થા સ્વીકારે છે. તે સંયત નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પ્રત્યે નિઃશંકિત, નિષ્કાંક્ષિત આદિ પૂર્વોક્ત ભાવોથી યુક્ત મનઃપરિણામવાળો રહે છે

तु स खलु मुण्डो यावत् स्वकेन लाभेन तुष्यति परस्य लाभं नो आशयति यावत् नो विनिघातमापद्यते इति ।२। तृतीया तु-स खलु मुण्डो यावत् प्रव्रजितो दिव्यान् मानुष्यकान् कामभोगान् नो आशयति यावत् नो विनिघातमापद्यत इति । एतास्तिस्रोऽपि व्याख्यातप्रायाः ।३।

तथा चतुर्थी सुखशय्या एवं बोध्या, तथाहि—स खलु कश्चित् मुण्डो भूत्वा अगाराद् अनगारितां प्रव्रजितः, तस्य प्रव्रजितस्य मनसि खलु एवं भवति-एवं विचारो जायते-यदि तावत् अर्हन्तो भगवन्तो हृष्टाः-हृष्टा इव हृष्टाः-विगतशोक तया आनन्दिताः, तथा-आरोग्याः=ज्वरादिरोगवर्जिताः, तथा-बलिकाः-बलं

द्वितीया सुखशय्यामें मुण्डित आदि होकर अपने लाभसेही सन्तुष्ट रहता है परके लाभकी कामना आदि नहीं करता है, अतः वह विनिघातको प्राप्त नहीं होता है-२ तृतीया सुखशय्यामें रहा हुवा वह संयत दिव्य मनुष्य सम्बन्धी कामभोगोंकी चाहना नहीं करता है, उनकी आशा आदिसे बिलकुल रहित हो जाता है अतः वहभी विनिघातको प्राप्त नहीं होता है-३, चौथी सुखशय्यामें वर्तमान संयत मनमें हृष्टादि विशेषणोंवाले अर्हंत भगवन्तोंके अन्यतरादि विशेषणों-वाले तपःकर्मोका चिन्तवन करता हुवा अपनेमें औपक्रमिकी एवं आभ्युपगमिकी वेदनाको सहन आदि करनेकी क्षमताको जागृत करताहै।

તેથી તે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની સમ્યક્ રીતે આરાધના કરીને પોતાના સંસારને અલ્પ કરી નાખે છે.

પરકીય લાભની અનિચ્છારૂપ બીજી સુખશય્યા—અહીં એવા સંયતની વાત કરી છે કે પોતાને પ્રાપ્ત થયેલા આહારાદિથી જ સંતુષ્ટ રહે છે. અન્ય સંયતને પ્રાપ્ત થયેલા આહારાદિની કામના આદિ રાખતો નથી. તે કારણે તે પણ ધર્મનો વિરાધક બનતો નથી-આરાધક જ બને છે અને અલ્પ સંસારવાળો બને છે.

ત્રીજી સુખશય્યા—અહીં એવા સંયતની વાત કરી છે કે જે દેવસંબંધી કે મનુષ્ય સંબંધી કામભોગોની બિલકુલ ચાહના કરતો નથી એવો સંયત પણ ધર્મભ્રષ્ટ થતો નથી, પણ ધર્મનો આરાધક બનીને પોતાનો સંસાર ઘટાડે છે. ચોથી સુખશય્યાસંપન્ન સંયત હૃષ્ટાદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા અર્હંત ભગવંતોની અન્યતર આદિ પૂર્વોકત વિશેષણોવાળા તપકર્મોનું ચિન્તવન કરતો થકો આભ્યુપગમિકી અને ઔપક્રમિકી વેદનાને સહન કરવાની ક્ષમતા પોતાના મનમાં જાગૃત કરે છે

-सामर्थ्यं तच्च चतुस्त्रिंशदतिशयरूपम्, तदेषामस्तीति बलिकाः-चतुस्त्रिंशद्विधातिशयसामर्थ्यवन्तः, तथा-कल्यशरीराः-कल्यो-मोक्षः, तत्प्रापकं शरीरं येषां ते तथा-तद्भवमोक्षगामिन इत्यर्थः, तपःकर्माणि प्रतिपद्यन्ते, कीदृशानि तानी?-त्याह - "अन्नयराइं" इत्यादि - अन्यतराणि - अन्यतमानि, अनशनप्रभृतिद्वादशविधतपःकर्मणां मध्ये एकतमानि, तथा - उदाराणि-अप्राप्तवस्तुप्राप्त्यभिलाषरूपाऽऽशंसा-दोषवर्जितत्वेन प्रधानानि, तथा-कल्याणानि-शिवसुखजनकानि विपुलानि - बहुदिवसेभ्योऽनुष्ठिततया बहूनि-

हृष्टादि विशेषणोंका स्पष्टीकरण इस प्रकारसे है, अर्हन्त भगवन्त इन वेदनाओंके आने परभी हृष्ट हुवे की तरह हर्षसे युक्त रहे क्लान्त नहीं बने, अतः उन्हे हृष्ट विशेषणसे विशेषित किया गया है, शोकसे रहित होनेके कारण उन्हें आनन्दित कहा गया है ज्वरादि रोगसे वर्जित होनेके कारण उन्हें आरोग्य रूपसे प्रकट किया गया है, तथा-३४ अतिशय रूप सामर्थ्यवाले होनेसे उन्हें बलिक किया गया है, और तद्भव मोक्षगामी होनेसे उन्हे कल्य शरीरवाला कहा गया है.

तपःकर्म उनके कैसे थे यह बात "अन्यतराणि" पदोंसे प्रकट की गई है उनके तप.कर्म अनशन आदि १२ प्रकारके तपःकर्मोंमेंसे एकतम थे, ऐसा इस पदसे प्रकट किया गया है।

"उदार" पदसे प्रकट किया गया है कि अप्राप्त वस्तुकी प्राप्तिकी अभिलाषा रूप आशंसा दोषसे वर्जित होनेके कारण प्रधान थे।

હવે આ સૂત્રમાં આવતા હૃષ્ટાદિ વિશેષણોનો અર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—

આ વેદનાઓ આવી પડી ત્યારે અહંત ભગવાન હર્ષથી યુક્ત રહ્યા હતા, તેથી તેમને 'હૃષ્ટ' વિશેષણ લગાડયું છે, શોકથી રહિત હોવાને કારણે તેમને આનંદિત કહ્યા છે, જ્વરાદિ રોગોથી રહિત હોવાને કારણે તેમને આરોગ્યરૂપ (નીરોગી) કહ્યા છે અને ચોત્રીશ અતિશય રૂપ સામર્થ્ય વાળા હોવાને લીધે તેમને બલિક કહ્યા છે આ એક જ ભવ પૂરો કરીને મોક્ષગામી થનારા હોવાથી તેમને કલ્ય શરીરવાળા કહ્યા છે.

તેમનાં તપઃકર્મ કેવાં હતાં તે "अन्यतराणि" આદિ વિશેષણોથી પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે આ પદનો ભાવાર્થ એવો છે કે તેમનાં તપ.કર્મો ૧૨ પ્રકારના તપઃકર્મો વડે એકતમ રૂપ બની ગયાં હતા. "ઉદાર" વિશેષણ એ પ્રકટ કરે છે કે તેમનાં તપ કર્મો અપ્રાપ્ત વસ્તુની પ્રાપ્તિની અભિલાષારૂપ આશંસા દોષથી રહિત હોવાને કારણે ઉત્તમ હતાં. "કલ્યાણ" પદ દ્વારા

पाण्मासिकादीनि, प्रयतानि-प्रकृष्टं-प्रमादातिचारादिरहिततया उत्कृष्टं यातं-यत्नो येषु तानि, तथा=प्रमादादिरहिततत्त्वेनोत्कृष्टयत्नसम्पन्नानि, तथा प्रगृहीतानि-प्रकृष्टेनादरभावेन स्वीकृतानि, महानुभागानि-महान् अनुभागः-अचिन्त्यातिशयो येषु तानि=महाप्रभावयुक्तानि-कर्मक्षयकारणानि-मोक्षसाधकत्वेन कर्मोन्मूलनहेतु-भूतानि, यदि एतादृशानि तपःकर्माणि-घोरतपांसि, अर्हन्तो भगवन्तः प्रतिपद्यन्ते-आचरणीयत्वेनाङ्गीकुर्वन्ति, तर्हि किमङ्ग ! पुनरहम् आभ्युपगमिकीम्-अभ्युप-गमः-शिरोलोचब्रह्मचर्यादीनां स्वीकारः, तत्र भवा आभ्युपगमिकी, तेन निर्वृत्ता-वाऽऽभ्युपगमिकी-ब्रह्मचर्यभूमिशयनकेशोल्लुञ्चनातापनादिरूपा, ताम्, तथा-औपक्रमिकीम्, उपक्रम्यते=क्षीयते आयुरनेनेत्युपक्रमः=ज्वरातिसारप्रभृतिरोगः,

---

"कल्याण" पदसे यह प्रकट किया गया है कि-वे शिवसुख के जनक थे, "विपुल" पदसे यह प्रगट किया गया है जो वे बहुत दिनोंसे अनुष्ठित होनेसे पाण्मासिक आदि रूपसे अनेक थे, "प्रयत" पदसे यह प्रकट किया है, ये प्रमादादि रहित होनेसे उत्कृष्टयान सम्पन्न थे, "प्रगृहीत" से जाना जाय कि-ये अत्यधिक आदरभावसे स्वीकृत हुवे थे, "महानुभाग" से इनमें अचिन्त्य अतिशय था ऐसा जाना जाताहै अर्थात् महाप्रभावयुक्त थे, तथा-मोक्ष साधनभूत होनेके कारण ये कर्मक्षयके कारणभूत थे, अतः-यह संयत विचारताहै कि जब ऐसे २-तपःकर्मोंको भगवन्तोंने आचरणीय कोटिमें अङ्गीकार कर लिया है तो क्यों मैं आभ्युपगमिकी, ब्रह्मचर्य, भूमिशयन, केशलुञ्चन, आतापना आदि रूपक वेदनाको, एवं-औपक्रमिकी-ज्वर अतिसार आदि रोगजन्य

એ વાત પ્રકટ થઈ છે કે તે તપઃકર્મો શિવ સુખના જનક હતા. "विपुल" પદથી એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે તે ઘણા જ દિવસોથી અનુષ્ઠિત હોવાથી છ માસિક આદિ અનેક લાંબા કાળવાળા હતાં "प्रयत" પદ એ પ્રકટ કરે છે કે તે પ્રમાદાદિથી રહિત હોવાને કારણે ઉત્કૃષ્ટ યાન સદૃશ હતાં "પ્રગૃહીત" પદ એ પ્રકટ કરે છે કે તે તપઃકર્મનો આદર ભાવપૂર્વક સ્વીકાર કરવામાં આવ્યો હતો. "મહાનુભાગ"થી તેમાં અચિન્ત્ય અતિશયતા પ્રકટ થાય છે એટલે કે તે તપઃકર્મો મહાપ્રભાવ યુક્ત હતાં અને મોક્ષ સાધનભૂત હોવાને કારણે તેઓ કર્મક્ષયના કારણભૂત હતાં.

તે સંયત એવો વિચાર કરે છે કે આવા આવા તપઃકર્મોને અર્હંત ભગવન્તોએ આચરણીય ગણીને જો અંગીકાર કરી લીધાં હતાં તો આભ્યુપ-ગમિકી વેદનાને (બ્રહ્મચર્ય, ભૂમિશયન, કેશલુંચન, આતાપના આદિ જન્ય વેદનાને) અને ઔપક્રમિકી વેદનાને (જ્વર, અતિસાર આદિ રોગજન્ય વેદ-

तत्र मत्रा=औपक्रमिकी तां वेदनां सम्यग् नो सहे सुखाद्यविकारकरणेन कथं नो सहनं करोमि ?, सम्यग् नो क्षमे कोपाभावेन, तथा–सम्यङ्नो तितिक्षे अदीनभावेन, तथा–सम्यङ् नो अध्यासयामि–अध्यासोऽवस्थानं तं न करोमीत्यध्यासयामि, तस्यामेव वेदनायां निश्चलतया कथं न तिष्ठामि ? च=पुनः मम खलु आम्युप गामिकीम् औपक्रमिकीं च वेदनाम्, असहमानस्य–अक्षममाणस्य, अतितिक्षमाणस्य अनध्यासयतश्च किं 'मन्ने' इति मन्ये, अयं वितर्कार्थो निपातः क्रियते ?= किं भवति ? इति वितर्के प्राह–"एगंतसो" इत्यादि, मे मम एकान्तशः–एकान्तेन–सर्वथा पापं कर्म क्रियते भवति । तथा च तामेव वेदनां सम्यक् सहमानस्य क्षममाणस्य तितिक्षमाणस्य अध्यासयतश्च मम खलु किं क्रियते ?–किं भवति ', एकान्तशो मम निर्जरा क्रियते भवति । इति चतुर्थी सुखशय्या । सू० २७ ॥

वेदनाको जोकि–आयुःक्षयका साधनहै "नो सहे" भली भांति सुखादिके ऊपर उदासीनता लाये विना ही मध्यस्थ भावसे नहीं सहूं, "नो क्षमे" क्रोधादिका अभाव करके अभिवादनपूर्वक सम्यक् प्रकारसे क्यों न सहूं "नो तितिक्षे" अच्छी तरह विना दीनता दरसाये क्यों न मध्यस्थ भावसे सहूं, "नो अध्यासयामि" क्यों न उसे सहन करनेके लिये मैं डटा रहूं–अडोल रहूं, यदि मैं ऐसा नहीं करूंगा तो मुझे सर्वथा ज्ञानावरणीयादि कर्मसे दुःखरूपी कैदखानेमें रहना पडेगा मैं कर्मोंसेही लिप्त बना रहूंगा और जो उस वेदना आदिको सह लेता हूं तो एकान्ततः मेरे कर्मोंकी निर्जरा हो जाती है इस प्रकारकी विचारधारा रूप यह चतुर्थी सुखशय्या है ॥ सू० २७ ॥

નાને) શા માટે હું સમતાભાવે સહન ન કરૂં ? તેને એવો વિચાર આવે છે કે આ વેદનાઓ તો કર્મનિર્જરા કરીને આયુષ્ય કર્મનો ક્ષય કરનારી છે. "नो सहे' । તો તે વેદનાને શા માટે સમતા ભાવપૂર્વક–મુખાદિ પર ઉદાસીનતાનો ભાવ લાવ્યા વિના હું સહન ન કરું ? "नो क्षमे" ક્રોધાદિના ત્યાગપૂર્વક અભિવાદનપૂર્વક તેને કેમ સહન ન કરૂં ! "नो तितिक्षे" અદીન ભાવે–મધ્યસ્થ ભાવે તેને શા માટે સહન ન કરૂં ! "नो अध्यासयामि" તેને સહન કરવાને શા માટે દૃઢતાપૂર્વક તત્પર ન બનું ! જો હું એવું નહીં કરૂં તો મારે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મરૂપી કારાગૃહમાં દુ:ખ જ સહન કરવું પડશે–હું કર્મોનું આવરણ હઠાવવાને સમર્થ થઈ શકીશ નહી. જો હુ તે વેદના આદિને સમતા ભાવે સહન કરી લઇશ તો મારા કર્મોની એકાન્ત રૂપે નિર્જરા થઈ જશે. આ પ્રકારની વિચાર ધારાથી પ્રેરાઈને તે ધર્મભ્રષ્ટ થતો નથી, પણ ધર્મનો આરાધક બનીને પોતાનો સંસાર ઘટાડે છે. । સૂ. ૨૭ ।

पूर्वं दुःखशय्याः सुखशय्याश्चोक्ताः तद्वन्तो गुणरहिता गुणसम्पन्नाश्च भवन्ति, तदर्थं किं करणीयम् ? इति दर्शयितुं सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—चत्तारि अवायणिज्जा पण्णत्ता, तं जहा—अविणीए १, विगइपडिबद्धे २, अविओसवियपाहुडे ३, माई ४।

चत्तारि वायणिज्जा पण्णत्ता, तं जहा—विणीए १, अविगइ—पडिबद्धे २, विओसवियपाहुडे ३, अमाई ४। सू० २८ ॥

छाया—चत्वारोऽवाचनीयाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा, अविनीतः १, विकृतिप्रतिबद्धः २, अव्यवशमितप्राभृतः ३, मायी ४।

चत्वारो वाचनीयाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—विनीतः १, अविकृतिप्रतिबद्धः २, व्यवशमितप्राभृतः ३, अमायी ४। । सू० २८ ॥

टीका—" चत्तारि अवायणिज्जा " इत्यादि—स्पष्टम् , नवरम्—अवाचनीयाः—वाचनाया अयोग्याः अविनीतः—विनयरहितः १, विकृतिप्रतिबद्धः—विकृतिः—

ये कही गई दुःखशय्याओंवाले गुणरहित और गुणसम्पन्न जीव होते हैं इसकेलिये क्या करणीय है इस बातको दिखानेके लिये सूत्रकार कहते हैं " चत्तारि अवायणिज्जा पण्णत्ता " इत्यादि २८

चार अवाचनीय कहे गये हैं जैसे अविनीत—१, विकृति प्रतिबद्ध २ अव्यवशमित प्राभृत—३ और मायी—४, जो वाचनाके अयोग्य होते हैं वे अवाचनीय हैं। जो विनय रहित होते हैं—वे अविनीत हैं—२ घृतादि रूप विकृति विषयमें जो प्रतिबद्ध होते हैं, आसक्त होते हैं वे विकृतिप्रतिबद्ध हैं और जिनका आया हुवा तीव्र क्रोध उपशान्त

ઉપર્યુક્ત દુઃખશય્યાઓવાળા ગુણરહિત અને ગુણસંપન્ન જીવ હોય છે તેમને માટે શું કરવું જોઈએ તે વાતને પ્રકટ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે–" चत्तारि अवायणिज्जा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ (૨૮)

ચાર અવાચનીય કહ્યા છે—જેમકે (૧) અવિનીત, (૨) વિકૃતિ પ્રતિબદ્ધ (૩) અવ્યવશમિત પ્રાભૃત અને (૪) માયી. જે જીવો વાચનાને પાત્ર હોતા નથી તેમને અવાચનીય કહે છે. જેઓ વિનયરહિત હોય છે તેમને અવિનીત કહે છે. ઘી આદિ રૂપ વિકૃતિમાં જેઓ પ્રતિબદ્ધ (આસક્ત) હોય છે તેમને વિકૃતિપ્રતિબદ્ધ કહે છે. જેનો ક્રોધ અતિ તીવ્ર હોય છે જેનો ક્રોધ કોઈ પણ પ્રકારે ઉપશાન્ત થતો નથી તેને અનુપશાન્ત ક્રોધ સમાપન્ન અથવા તીવ્ર

घृतादिरूपा, तत्र प्रतिबद्धः-आसक्तः २, अव्यवशमितप्राभृतः-अव्यवशमितम्-अनुपशान्तं प्राभृतं-प्राभृतमिव प्राभृतम्-उपायनवदागतं तीव्रक्रोधरूप वस्तु यस्य स तथा=अनुपशान्तकोपसम्पन्नः ३, मायी-माया-कपटमस्यास्तीति मायी-छलयुक्तः ४। इति।

तथा चत्वारो विनीतादयो वाचनाया योग्या भवन्ति, इति प्रदर्शयति-चत्तारि वायणिज्जा " इत्यादिना, स्पष्टमेतत्, नवरं-विनीतः-विनयसम्पन्नः १, अविकृतिप्रतिबद्धः-घृतादिविकृत्यनासक्तः, व्यवशमितप्राभृतः-कोपवर्जितः ३, अमायी-मायारहितः ४। इति। सू० २८।

पूर्वं वाचनीया अवाचनीयाश्च पुरुषा अभिहिताः, सम्प्रति पुरुषाधिकारात् पुरुषविशेषान् प्रतिपादयितुं चतुर्दश चतुर्भङ्गीप्रतिबद्धं सूत्रप्रबन्धमाह—

मूलम्-चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-आयंभरे णाममेगे णो परंभरे १, परंभरे णाममेगे णो आयंभरे २, एगे आयंभरेऽवि परंभरेऽवि ३, एगे णो आयंभरे णो परंभरे ४ (१)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-दुग्गए णाममेगे दुग्गए १, दुग्गए णाममेगे सुग्गए २, सुग्गए णाममेगे दुग्गए ३, सुग्गए णाममेगे सुग्गए ४ (२)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-दुग्गए णाममेगे दुव्वए १, दुग्गए णाममेगे सुव्वए २, सुग्गए णाममेगे दुव्वए ३, सुग्गए णाममेगे सुव्वए ४। (३)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-दुग्गए णाममेगे दुप्पडियाणंदे १, दुग्गए णाममेगे सुप्पडियाणंदे० ४, (४)

नहीं होना है वे अनुपशान्त कोप समापन्न हैं, अर्थात् तीव्र क्रोधी हैं। छल-कपटवाले जो होते हैं वे मायी हैं। इनसे विपरीत जो हों, अर्थात् विनीत आदि होते हैं वे वाचनाके योग्य हैं॥ सू०२८॥

क्रोधी कहे छे जेओ छळकपटवाळा होय छे तेमने मायी कहे छे अविनीत आदिथी विपरीत एटले के विनीत आदि जीवो वाचनाने योग्य गणाय छे. ।सू.२८।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-दुग्गए णाममेगे दुग्गइगामी १, दुग्गए णाममेगे सुग्गइगामी० ४, (५)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--दुग्गए णाममगे दुग्गइं गए १, दुग्गए णाममेगे सुगइं गए २, (६)

चत्तारि पुरिसजाया पणात्ता, तं जहा--तमे णाममेगे तमे १, तमे णाममेगे जोई २, जोई णाममेगे तमे ३, जोई णाममेगे जोई ४। (७)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--तमे णाममेगे तमबले १, तमे णाममेगे जोइबले २, जोई णाममेगे तमबले ३, जोई णाममेगे जोइबले ४ (८)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--तमे णाममेगे तमबलपलज्जणे १, तमे णाममेगे जोइबलपलज्जणे० ४। (९)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--परिण्णायकम्मे णाममेगे णो परिण्णायसन्ने १, परिण्णायसन्ने नाममेगे नो परिण्णायकम्मे, २, एगे परिण्णायकम्मेऽवि परिण्णायसन्नेऽवि ३। एगे नो परिण्णायकम्मे नो परिण्णायसन्ने ४। (१०)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--परिण्णायकम्मे णाममेगे णो परिण्णायगिहावासे, परिण्णायगिहावासे णाममेगे णो परिण्णायकम्मे० ४। (११)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--परिन्नायसन्ने नाममेगे नो परिन्नायगिहावासे, परिन्नायगिहावासे णाममेगे नो परिन्नायसन्ने० ४। (१२)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा- इहत्थे णाममेगे णो परत्थे १, परत्थे णाममेगे णो इहत्थे० ४। (१३)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--एगेणं णाममेगे वड्ढइ एगेणं हायइ १, एगेणं णाममेगे वड्ढइ दोहिं हायइ २, दोहिं णाममेगे वड्ढइ एगेणं हायइ ३, दोहिं णाममेगे वड्ढइ दोहिं हायइ (१४) ॥ सू० २९ ॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—आत्मम्भरिर्नामैको नो परभरः १, परभरो नामैको नो आत्मम्भरिः २, एक आत्मम्भरिरपि परभरोऽपि ३ एको नो आत्मम्भरिर्नो परभरः ४। (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा दुर्गतो नामैको दुर्गतः१, दुर्गतो नामैकः सुगतः २, सुगतो नामैको दुर्गतः ३, सुगतो नामैकः सुगतः ४। (२)

पुरुष विशेषोंका प्रतिपादन करनेके लिये अब सूत्रकार चतुर्दशभङ्गी प्रतिबद्ध सूत्र प्रबन्धका कथन करतेहैं "चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता" इत्यादि

सूत्रार्थ—पुरुष जात चार कहे गयेहैं जैसे आत्मम्भरि नो परभर १ परभर नो आत्मम्भरि-२ आत्मभर भी परभरभी-३ नो आत्मम्भरि नो परभर-४ ॥ १ ॥

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुर्गत नामवाला १ दुर्गत सुगत नामवाला २ सुगत दुर्गत नामवाला ३ और सुगत सुगत नामवाला ४ (२)

પુરુષ વિશેષોનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે હવે સૂત્રકાર ૧૪ ભાંગાઓથી પ્રતિબદ્ધ સૂત્રોનું કથન કરે છે—' चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता " ઈત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) આત્મંભરી નો પરભર (સ્વાર્થ સાધકને આત્મભરી અને પરાર્થસાધકને પરભર કહે છે) (૨) પરભર નો આત્મંભરિ, (૩) આત્મભર અને પરભર અને (૪) નો આત્મંભરિ નો પરભર (૧)

આ પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) દુર્ગત દુર્ગત નામવાળો, (૨) દુર્ગત સુગત નામવાળો, (૩) સુગત-દુર્ગત નામવાળો અને (૪) સુગત સુગત નામવાળો (૨)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-दुर्गतो नामैको दुर्व्रतः १, दुर्गतो नामैकः सुव्रतः २, सुगतो नामैको दुर्व्रतः ३, सुगतो नामैकः सुव्रतः ४, (३)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-दुर्गतो नामैको दुष्प्रत्यानन्दः १, दुर्गतो नामैकः सुप्रत्यानन्दः ४। (४)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-दुर्गतो नामैको दुर्गतिगामी १, दुर्गतो नामैकः सुगतिगामी० ४। (५)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा,-दुर्गतो नामैको दुर्गतिं गतः १, दुर्गतो नामैकः सुगतिं गत० ४। (६)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-तमो नामैकस्तमः १, तमो नामैको ज्योतिः २, ज्योतिर्नामैकस्तम ३, ज्योतिर्नामैको ज्योतिः ४। (७)

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुर्व्रत १ दुर्गत सुव्रत२ सुगत दुर्व्रत ३ और सुगत-सुव्रत ४ (३)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुष्प्रत्यानन्द-१ दुर्गत सुप्रत्यानन्द० (४)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुर्गतगामी -१ दुर्गत सुगतिगामी० ४ (५)

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुर्गतिङ्गत-१ दुर्गत सुगतिङ्गत० ४ (६)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, तमस्तम स्वरूप १ तमो ज्योतिः स्वरूप २ ज्योतिस्तमः स्वरूप ३ ज्योतिज्योतिः स्वरूप ४ (७)

વળી પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) દુર્ગત-દુર્વ્રત, (૨) દુર્ગત-સુવ્રત, (૩) સુગત-દુર્વ્રત અને (૪) સુગત-સુવ્રત (૩)

આ પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) દુર્ગત-દુષ્પ્રત્યાનન્દ, (૨) દુર્ગત સુપ્રત્યાનન્દ ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર. (૪)

આ પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) દુર્ગત-દુર્ગતગામી, (૨) દુર્ગત-સુગતગામી ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર (૫)

આ પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) દુર્ગત-દુર્ગતિંગત, (૨) દુર્ગત-સુગતિંગત ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર (૬)

આ પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો પણ કહ્યા છે—(૧) તમસ્તમ સ્વરૂપ (૨) તમો જ્યોતિસ્વરૂપ, (૩) જ્યોતિસ્તમ સ્વરૂપ અને (૪) જ્યોતિ જ્યોતિ સ્વરૂપ (૭)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-तमो नामैकस्तमोबलः १, तमो नामैको ज्योतिर्बलः २, ज्योतिर्नामैकस्तमोबलः ३, ज्योतिर्नामैको ज्योतिर्बलः ४(८)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-तमो नामैकस्तमोबलः प्रज्वलनः १, तमो नामैको ज्योतिर्बलः प्रज्वलनः ४। (९)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-परिज्ञातकर्मा नामैको नो परिज्ञातसंज्ञः १, परिज्ञातसंज्ञो नामैको नो परिज्ञातकर्मा २, एकः परिज्ञातकर्माऽपि परिज्ञातसंज्ञोऽपि ३, एको नो परिज्ञातकर्मा नो परिज्ञातसंज्ञः ४। (१०)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-परिज्ञातकर्मा नामैको नो परिज्ञातगृहाऽऽवासः १, परिज्ञातगृहाऽऽवासो नामैको नो परिज्ञातकर्मा० ४। (११)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-परिज्ञातसंज्ञो नामैको नो परिज्ञातगृहाऽऽवासः १, परिज्ञातगृहाऽऽवासो नामैको नो परिज्ञातसंज्ञः० ४। (१२)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे तमस्तमोबल १ तमो ज्योति बल२ ज्योति तमो बल ३ और ज्योति ज्योतिबल ४ (८)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे तमोबल प्रज्वलन १ तमो ज्योतिबल प्रज्वलन० ४ (९)

पुनश्च पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे परिज्ञात कर्मा नो परिज्ञात संज्ञ १ परिज्ञात संज्ञ नो परिज्ञात कर्मा २ परिज्ञात कर्मा भी परिज्ञात संज्ञ भी ३ और नो परिज्ञात कर्मा नो परिज्ञात संज्ञ० ४ (१०)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे परिज्ञात कर्मा नो परिज्ञात गृहावास १ परिज्ञात गृहावास नो परिज्ञात कर्मा० ४ (११)

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे परिज्ञात संज्ञ नो परिज्ञात गृहावास १ परिज्ञात गृहावास नो परिज्ञात संज्ञ० ४ (१२)

પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) તમસ્તમો બલ, (૨) તમો જ્યોતિબલ, (૩) જ્યોતિ તમોબલ અને (૪) જ્યોતિ જ્યોતિબલ (૮)

પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) તમોબલ પ્રજ્વલન, (૨) તમો જ્યોતિબલ પ્રજ્વલન ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર (૯)

નીચે પ્રમાણે ચાર પુરુષ પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) પરિજ્ઞાતકર્મા નો પરિજ્ઞાત સંજ્ઞ (૨) પરિજ્ઞાત સંજ્ઞ નો પરિજ્ઞાત કર્મા, (૩) પરિજ્ઞાતકર્મા અને પરિજ્ઞાત સંજ્ઞ (૪) નો પરિજ્ઞાતકર્મા નો પરિજ્ઞાત સંજ્ઞ (૧૦)

પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) પરિજ્ઞાતકર્મા નો પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ, (૨) પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ નો પરિજ્ઞાત કર્મા ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર. (૧૧)

પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) પરિજ્ઞાત સંજ્ઞ

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-इहार्थो नामैको नो परार्थः १, परार्थो नामैको नो इहार्थः० ४। (१३)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकेन नामैको वर्धते एकेन हीयते १, एकेन नामैको वर्धते द्वाभ्यां हीयते० ४। (१४) सू० २९)।

टीका—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः-कश्चित् पुरुषः आत्मम्भरिः-आत्मानं बिभर्ति-पुष्णातीति आत्मम्भरिः-स्वार्थकारको भवति, किन्तु नो परभरः-परार्थसाधको न भवति, स च जिनकल्पिकः। इति प्रथमो भङ्गः। १। तथा-एकः परभरो भवति न तु आत्मम्भरिः, स च परार्थसाधको भगवानर्हन्, तस्य सकलस्वार्थसमाप्त्या परेषां पर-

---

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे-ईहार्थ नो परार्थ१ परार्थ नो इहार्थ० ४ (१३)

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे एकसे वर्द्धमान, एकसे हीयमान १ एकसे वर्द्धमान दोसे हीयमान० ४ (१४)

इस २९ सूत्रका सारांश ऐसा है प्रथम इसके सूत्रमें जो पुरुष जात चार प्रकार के प्रकट किये गये हैं, उनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो केवल आत्मंभरि होता है-अपनाही पोषण करनेवाला होता-स्वार्थ साधक होता है परार्थ साधक नहीं होता है अर्थात् स्वार्थी १ इस भंग में जिनकल्पिक साधु आते हैं।

द्वितीय भंग में परार्थ साधक भगवान् अर्हन्त आते हैं क्योंकि ये आत्मंभरि नहीं होते हैं परार्थ साधक होते है। इनमें सकल स्वार्थ

ના પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ, (૨) પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ ના પરિજ્ઞાત સંજ્ઞ ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર (૧૨)

નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો પણ કહ્યા છે—ઇહાર્થ ના પરાર્થ, (૨) પરાર્થ ના ઈહાર્થ ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર (૧૩)

પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) એકમાં વર્દ્ધમાન એકમાં હીયમાન, (૨) એકમાં વર્દ્ધમાન અને બેમાં હીયમાન ઇત્યાદિ તે ચાર પ્રકારો. (૧૪)

પહેલા સૂત્રના ભાવાર્થ—પહેલા ભાંગાના ભાવાર્થ નિચે પ્રમાણે છે-કોઇ એક પુરુષ એવા હોય છે કે જે કેવળ આત્મંભરિ (પોતાનું જ પોષણ કરનારા અથવા સ્વાર્થ સાધક) હોય છે, પણ પરાર્થસાધક હોતા નથી. જિન કલ્પિક સાધુને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય.

બીજા ભાંગાના ભાવાર્થ—કોઈ એક પુરુષ એવા હોય છે કે જે પરાર્થ સાધક હોય છે પણ સ્વાર્થસાધક હોતા નથી. આ પ્રકારમાં અહ``ત ભગવાન

मानन्दसन्दोहमापकत्वात् । इति द्वितीयो भङ्गः । २ । तथा-एकः पुरुषः आत्मम्भरिः परम्भरश्च भवति, स च स्वपरार्थकारी स्थविरकल्पिकः, तस्य विहितानुष्ठानेन स्वार्थकारित्वाद् विधिवत् सिद्धान्तदेशनया च परार्थकारित्वात् । इति तृतीयः । ३ । तथा-एको नाऽऽत्मम्भरिर्न च परम्भरः, सचोभयानुपकारी मुग्धबुद्धिः कोऽपि पुरुषः । यद्वा-यथाच्छन्दः । इति चतुर्थ ४। इदं भङ्गचतुष्टयं लोकोत्तरपुरुषमपेक्ष्य । लौकिकपुरुषापेक्षयाऽपि यथायोग्यं भङ्गचतुष्टयं योजयितव्यम् । । ४ । (१)

समाप्त हो जाते हैं और ये दूसरों को परमानन्द संदोह के प्राप्त करनेवाले होते हैं। तृतीय भंग में स्वपरार्थकारी स्थविरकल्पिक आता है क्योंकि धार्मिक अनुष्ठानों से यह अपना भी भला करता है और विधिवत् सिद्धान्तकी देशना द्वारा अन्य जीवोंका भी भला करता है। चतुर्थ भंगमें स्वपर अनुपकारी कोई भी मुग्ध बुद्धिवाला (विवेक रहित) पुरुष आता है क्योंकि ऐसा पुरुष न आत्मंभरि होता है और न परका हित साधक होता है अथवा जो स्वेच्छाचारी होता है वह भी इस भंगके अन्तर्गत होता है ये इस प्रकार के चार भंग लोकोत्तर पुरुषकी अपेक्षा से व्याख्यात किये हैं। पर जो लौकिक पुरुष हैं उनकी अपेक्षा से भी इनका यथायोग्य व्याख्यान करना चाहिये (१)

આવી જાય છે કારણ કે તેઓ સ્વાર્થસાધક હોતા નથી પણ પરાર્થસાધક હોય છે પરમાનન્દ સંદોહ (સમૂહ) પ્રાપ્તિ કરાવનારા હોય છે.

ત્રીજા ભાંગામાં સ્વાર્થસાધક અને પરાર્થસાધક સ્થવિર કલ્પિકને ગણાવી શકાય છે, કારણ કે ધાર્મિક અનુષ્ઠાનોથી તેઓ પોતાનું પણ ભલું કરે છે અને સિદ્ધાન્તની દેશના દ્વારા અન્ય જીવોનું પણ ભલું કરે છે.

સ્વપર અનુપકારી કોઈ પણ મુગ્ધ બુદ્ધિવાળા (વિવેક રહિત) પુરુષનો ચોથા ભાંગામાં સમાવેશ થાય છે કારણ કે તેવો પુરુષ આત્મંભરિ (સ્વાર્થ સાધક-પોતાનું હિત સાધનારો) પણ હોતો નથી અને અન્યનું હિત સાધનારો પણ હોતો નથી. અથવા જે સ્વેચ્છાચારી (સ્વછંદી) હોય છે તેનો પણ આ ભાંગામાં સમાવેશ થાય છે. લોકોત્તર પુરુષોની અપેક્ષાએ આ ચાર ભાંગાનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. લૌકિક પુરુષોની અપેક્ષાએ પણ આ ચાર ભાંગાનું યથાયોગ્ય કથન થવું જોઈએ.

अनन्तरं चतुर्थभङ्गे उभयानुपकारी प्रोक्तः, स च दुर्गत एव भवितुमर्हतीति दुर्गतं निरूपयितुमाह—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-स्पष्टम् , नवरम्-एकः पुरुषो दुर्गतः-पूर्वं धनहीनत्वात् ज्ञानादिरत्नहीनत्वाद्वा दरिद्रः, स एव पश्चादपि दुर्गतः, अथवा-पूर्वं द्रव्यतो दुर्गतः, पश्चाद् भावतो दुर्गतो भवतीति प्रथमो भङ्गः । १ । एवं शेषभङ्गत्रयं बोध्यम् । तत्र केवलं सुगतः-द्रव्यतो धनसम्पन्नः, भावतस्तु ज्ञानादिरत्नसम्पन्नः सुगतपदेन बोध्यः ।४। (२)

पूर्वं दुर्गत उक्तः, स च कश्चिद् व्रती भवितुमर्हतीति दुर्गतसूत्रं निरूपयितुमाह-" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-स्पष्टम् , नवरम्-एकः पुरुषः दुर्गतः-

---

यहां चतुर्थ अङ्ग में जो दोनोंके अनुपकारी कहा गया है वह दुर्गत (दरिद्र)ही हो सकताहै अतःअब सूत्रकार उस दुर्गतकी निरूपणा करते हुए कहते हैं कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले से ही धन हीन होता है अथवा ज्ञानादि रूप रत्नसे रहित होता है दरिद्र होना है और आगे चलकर भी ऐसा ही बना रहता है अथवा पहिले जो दुर्गत द्रव्य की अपेक्षा दरिद्र होता है बाद में भावकी अपेक्षा भी वह दुर्गत बन जाता है ऐसा वह पुरुष द्वितीय सूत्रगत प्रथम भंग में गिना गया है इसी प्रकार से शेष भंगत्रय भी कथित कर लेना चाहिये सुगत सुगत नामका जो यहां भंग है उसका तात्पर्य ऐसा है कि कोई एक ऐसा होता है जो द्रव्यसे सुगत संपन्न होता है और ज्ञानादि रत्नरूप भावसे भी संपन्न होता है (२)

અહીં ચોથા ભાંગામાં જે બન્નેના અનુપકારી પુરુષ કહ્યો છે તે દુર્ગતા જ હોઇ શકે છે. તેથી હવે સૂત્રકાર તે દુર્ગતની પ્રરૂપણા કરે છે—

કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલેથી જ ધનહીન હોય છે અથવા જ્ઞાનાદિ રૂપ રત્નોથી રહિત હોય છે-દરિદ્ર હોય છે-અને ભવિષ્યમાં પણ એવો જ ચાલુ રહે છે અથવા પહેલા જે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ દુર્ગત હોય છે તે પાછળથી ભાવની અપેક્ષાએ પણ દુર્ગત બની જાય છે. એવા પુરુષનો બીજા સૂત્રના પ્રથમ ભાગામાં સમાવેશ થાય છે. એજ પ્રમાણે બાકીનાં ત્રણ ભાગાનો ભાવાર્થ પણ સમજી લેવો.

અહીં " સુગત-સુગત " નામનો જે ભાંગો છે તેનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ સુગત સંપન્ન હોય છે અને જ્ઞાનાદિ રત્નરૂપ ભાવથી પણ સંપન્ન હોય છે.

दरिद्रः सन् दुर्व्रतः-असम्यग्व्रतो भवति, यद्वा-'दुव्वए' इत्यस्य दुर्व्यय इत्यर्थः, स चाऽऽयनिरपेक्षव्ययः, यद्वा-कुस्थानव्यय इति प्रथमो भङ्गः ।१। तथा एकः पुरुषो दुर्गतः सन सुव्रतः-निरतिचारनियमो भवति, यद्वा-सुव्ययः-सुस्थाने समुचितव्ययकारको भवति । इति द्वितीयः । २ । तथा-एकः सुव्रतः सन् दुर्व्रतो दुर्व्ययो वा भवति, इति तृतीयः । ३ । तथा-एकः सुव्रतः सुव्ययो वा सन् पश्चादपि सुव्रत एव सुव्यय एव वा भवति । इति चतुर्थः । ४ । (३)

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एको दुर्गतः सन दुष्प्रत्यानन्दः-दुःखेन प्रत्यानन्द्यते-आनन्दं प्राप्यत

तृतीय सूत्रगत जो चार भंग हैं दुर्गत दुर्व्रत आदि रूपसे कहे गये हैं उनका तात्पर्य ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो दरिद्र होता है और सम्यग् व्रतसे रहित भी होता है अथवा—"दुव्वए" की संस्कृतच्छाया "दुर्व्यय" ऐसी भी होती है ऐसा व्यक्ति आय निरपेक्ष व्यय करता है अथवा-कुस्थान में व्यय करता है। कोई एक व्यक्ति ऐसा भी होता है जो दुर्गत होता हुआ भी निरतिचार नियमवाला होता है अथवा-सुस्थानमें समुचित व्यय करनेवाला होता है अथवा अपनी आमदनीके अनुसार व्यय करताहै तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो सुव्रत संपन्न होकर भी दुर्व्ययकारक सावद्य व्यापार में द्रव्यादि लगानेवाला होता है और कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुव्रत संपन्न ही होता है और सुव्ययकारक भी होता है (३)

ત્રીજા સૂત્રના ચાર ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ-(૧) દુર્ગત-દુર્વ્રતનો ભાવાર્થ કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દરિદ્ર પણ હોય છે અને સમ્યગ્વ્રતથી રહિત પણ હોય છે અથવા "दुव्वए" આ પદની સંસ્કૃત છાયા "दुर्व्यय" દુર્વ્યય થાય છે આ સંસ્કૃત છાયા પ્રમાણે આ ભાંગાનો નીચે પ્રમાણે ભાવાર્થ થાય છે-કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે પોતાના ધનનો દુર્વ્યય કરે છે અથવા આવકનો વિચાર કર્યા વિના ખર્ચ કરે છે, અને સમ્યગ્વ્રતથી પણ રહિત હોય છે. (૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દુર્ગત હોવા છતાં પણ નિરતિચાર નિયમવાળો હોય છે, અથવા સુસ્થાનમાં સમુચિત વ્યય કરનારો હોય છે અથવા પોતાની આમદાની પ્રમાણે વ્યય કરનારો હોય છે કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સુવ્રત સંપન્ન હોવા છતાં પણ દુર્વ્યય-કારક સાવદ્ય વ્યાપારોમાં દ્રવ્યાદિનો વ્યય કરનારો હોય છે (૪) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સુવ્રત સંપન્ન પણ હોય છે અને સુવ્યયકારક પણ હોય છે.

इति दुष्प्रत्यानन्दः—उपकारिणा कृतमुपकारं नाभिमन्यते तथाविधो भवति १, तथा—एकः पुरुषो दुर्गतः=दरिद्रः सन्नपि सुप्रत्यानन्दः—उपकृतजनकृतोपकारमन्ता भवति २। एकः सुगतो दुष्प्रत्यानन्दो भवति ३। एकः सुगतः सुप्रत्यानन्दो भवति। ४। (४)

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—दुर्गतो नामैकः पुरुषो दुर्गतिगामी—दुर्गतिं—नरकादिगतिं गमिष्यतीति दुर्गतिगामी=नरकतिर्यगादिकुगतिगमनशीलो भवति १। तथा—एको दुर्गतः सुग-

---

चतुर्थ सूत्रगत जो चार भंग प्रकट किये गये हैं—उनका तात्पर्य ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो दुर्गत होता है और बडी कठिनता से आनन्द को प्राप्त कराया जाता है ऐसा मनुष्य उपकारियोंके उपकार को नहीं मानता है तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो दुर्गत तो होता है पर उपकार करनेवाले के उपकारको मानता है २ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुगत धनादि संपन्न होता है पर वह दुष्प्रत्यानन्द (आनन्दित) नहीं होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुगत भी होता है सुप्रत्यानन्द भी होता हैं उपकार करनेवाले के उपकारको माननेवाला भी होता है (४)

पांचवें सूत्रमें जो चार प्रकारके पुरुष कहे गये हैं—उनका सारांश ऐसा है कि एक पुरुष ऐसा भी होता है जो दुर्गत दरिद्र होता है और दुर्गतिगामि नरकादि गतिमें जावेगा ऐसा होता है १ नरक—तिर्यग्

ચોથા સૂત્રના ચાર ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દુર્ગત હોય છે અને ઘણી મુશ્કેલીથી આનંદિત કરી શકાય એવો હોય છે એવો પુરુષ ઉપકારીઓના ઉપકારને જ માનતો નથી (૨) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે દુર્ગત તો હોય છે પણ ઉપકારીજનોનો ઉપકાર માનનારો હોય છે. (૩) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સુગત (ધનાદિથી સંપન્ન) હોય છે, પણ ઘણી મુશ્કેલીથી ખુશ કરી શકાય એવો અથવા ઉપકારીનો ઉપકાર ન માનનારો હોય છે. (૪) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સુગત પણ હોય છે અને સરળતાથી ખુશ કરી શકાય એવો અથવા ઉપકારીનો ઉપકાર માનનારો પણ હોય છે.

પાંચમાં સૂત્રના ચાર ભાંગાનો ભાવાર્થ—(૧) કોઇ પુરુષ દુર્ગત (દરિદ્ર) પણ હોય છે અને દુર્ગતિગામી (નરકાદિ ગતિમાં જનારો) પણ હોય છે. (નરક આદિ દુર્ગતિમાં જવાના સ્વભાવવાળા પુરુષને દુર્ગતિગામી કહે

तिगामी–देवादिसुगतिगमनशीलो भवति । २ । तथा–एकः सुगतो दुर्गतिगामी भवति ३। तथा–एकः सुगतः सुगतिगामी भवति । ४ । (५)

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकः पुरुषः पूर्वं दुर्गतः पश्चादपि दुर्गतिं–दुष्टगतिं गतः–प्राप्तो भवति, मृगापुत्रवत् १। एतद्वर्णनं दुःखविपाकस्य प्रथमाध्ययनतोऽवसेयम् । १ । एकः पूर्वं दुर्गतः पश्चात् सुगतिं–शोभनगतिं गतो भवति दृढप्रहारिचौरवत् । २ । तथा–एकः सुगतो दुर्गतिं गतो भवति सुभूमनामकाष्टमचक्रवर्तिवत् ३। तथा–एकः पूर्वं सुगतः पश्चादपि सुगतिं गतो भवति भरतचक्रवर्तिवत् । ४ । (६)

आदि दुर्गतियोंमें जिसके जानेका स्वभाव होता है ऐसा होता है। तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो दुर्गत–दरिद्र तो होता है पर वह सुगतिगामी होता है–देवादि गतियों में जानेके स्वभाववाला होता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुगत धनादि संपन्न होता है और दुर्गतिगामी भी होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुगत भी होता है और सुगतिगामी भी होता है ४ (५)

छट्ठे सूत्र में जो पुरुषजात कहे गये हैं उनका सारांश ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो मृगापुत्रकी तरह पहिले से भी दुर्गत होता है और पश्चादपि वह दुर्गतिको ही प्राप्त होता है इसके दुःखविपाकका वर्णन विपाक सूत्रके प्रथम अध्ययन से जान लेना चाहिये १, दृढ प्रहारि चौर की तरह कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो दुर्गत होता है और बादमें वह शोभनगतिको प्राप्त होता है २ सुभूमनामक अष्टमचक्रवर्ती की तरह कोई एक पुरुष ऐसा होता

છે (૨) કોઈ એક પુરુષ દુર્ગત (દરિદ્ર) તો હોય છે પણ સુગતિગામી (દેવાદિ ગતિઓમાં ગમન કરવાના સ્વભાવવાળો) હોય છે. (૩) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સુગત (ધનાદિથી સંપન્ન) તો હોય છે પણ દુર્ગતિગામી હોય છે (૪) કોઈ એક પુરુષ સુગત પણ હોય છે અને સુગતિગામી પણ હોય છે.

છઠ્ઠા સૂત્રના ચાર ભાંગાઓનું સ્પષ્ટીકરણ—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે મૃગાપુત્રની જેમ પહેલાં પણ દુર્ગત હોય છે અને પાછળથી પણ દુર્ગતિને પ્રાપ્ત કરનારો હોય છે. તેના દુઃખ વિપાકનું વર્ણન વિપાક સૂત્રના પ્રથમ અધ્યયનમાથી વાંચી લેવું. (૨) દૃઢપ્રહારી ચોરની જેમ કોઈ એક પુરુષ પહેલાં તો દુર્ગત હોય છે પણ પાછળથી સુગતિને પ્રાપ્ત કરનારો હોય છે (૩) સુભૂમ નામના આઠમાં ચક્રવર્તીની જેમ કોઈ પુરુષ પહેલાં

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः तमः–तम इव तमः–पूर्वमन्धकारतुल्यो भवति, ज्ञानरहितत्वात् प्रकाशरहितत्वाद्वा, स पश्चादपि तमः–तमःसदृश एव भवतीति प्रथमो भङ्गः ।१। तथा-एकः तमः पूर्वं ज्ञानरहितत्वेन प्रसिद्धिरहितत्वेन वा तमस्तुल्यो भवति, स एव पश्चाद् ज्योतिः–ज्योतिरिव ज्योतिः=ज्योतिःसदृशो भवति, उपार्जितज्ञानत्वात् लोके औदार्यादिगुणैः प्रसिद्धिमाप्तत्वाद्वा इति द्वितीयः ।२।
तथा–एको ज्योतिः–पूर्वं ज्ञानसम्पन्नत्वेन ज्योतिस्तुल्यो भवति, स एव पश्चात् तमः–ज्ञानरहितत्वेन तमस्तुल्यो भवति। इति तृतीयः ३। तथा–एकः पूर्वं ज्योतिः

है जो पहिले तो सुगत होता है बादमें दुर्गतिको प्राप्त हो जाता है ३ तथा भरतचक्रवर्तीकी तरह कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले भी सुगत होता है और बाद में भी सुगतिगत होता है ४ (६)

सातवें सूत्रमें जो पुरुष चार प्रकारके कहे गये हैं–उनका सारांश ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले भी ज्ञान रहित होनेसे अन्धकार के तुल्य होता है और पीछे भी वह अज्ञानी बना रहनेके कारण अन्धकार के जैसा ही बना रहता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो ज्ञानरहित होने से या प्रसिद्धि रहित होने से तमस्तुल्य होता है पर बाद में वही जब ज्ञानका उपार्जन कर लेता है या अपने औदार्य आदि गुणोंसे प्रसिद्धि प्राप्त कर लेता है तब वह ज्योति के जैसा हो जाता है २, तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो ज्ञान संपन्न होने से ज्योति के जैसा होता है और

સુગત હોય છે પણ પાછળથી દુર્ગતિને પ્રાપ્ત કરનારો હોય છે (૪) ભરત ચક્રવર્તીની જેમ કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ સુગત હોય છે અને પાછળથી પણ સુગતિગત પણ હોય છે

સાતમાં સૂત્રમાં પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર બતાવ્યા છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ જ્ઞાનરહિત હોવાને લીધે અંધકાર સમાન હોય છે અને પછી પણ તે જ્ઞાનરહિત જ ચાલુ રહેવાને કારણે અંધકાર સમાન જ રહે છે (૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં જ્ઞાનરહિત અથવા પ્રસિદ્ધિરહિત હોવાને કારણે અંધકાર સમાન હોય છે પણ ત્યારબાદ જ્યારે તે જ્ઞાનનું ઉપાર્જન કરી લે છે અથવા પોતાના ઔદાર્ય આદિ ગુણોથી પ્રસિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરી લે છે ત્યારે જ્યોતિસમાન બની જાય છે. (૩) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં જ્ઞાનાદિથી સંપન્ન હોવાને કારણે જ્યોતિસમાન હોય છે, પણ ત્યાર બાદ કોઇ નિમિત્તને લઇને

पश्चादपि ज्योतिरेव भवति, सर्वदा ज्ञानप्रकाशसम्पन्नत्वात्। इति चतुर्थः।४ (७)

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः पूर्वं तमः-कुकर्मकारितया मलिनस्वभावो भवति स एव पश्चात् तमोबलः-तमः-प्रच्छन्नमज्ञातं बलं सामर्थ्यं यस्य स तमोबलः, यद्वा-तमः-अन्धकार एव बल तत्र वा बलं यस्य स तमोबलो भवति, स चासदाचारवानज्ञानी रात्रिचरो वा चौरादिः, इति प्रथमो भङ्गः।१। तथा-एकः पूर्वं तमः-कुकर्मकारितया मलिनस्वभावो भवति, स एव पश्चात् ज्योतिर्बलः-ज्योति-र्ज्ञानं बल यस्य स तथा=ज्ञानबलसम्पन्नः, यद्वा-ज्योतिः-सूर्यादिप्रकाशः, तदेव तत्र

बाद में किसी निमित्त वश ज्ञान रहित हो जानेसे अन्धकार तुल्य हो जाता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले ज्ञानवाला होनेसे ज्योति के जैसा होता है और बाद में भी वह ज्ञानके प्रकाश से प्रकाशवाला बना रहनेके कारण ज्योति जैसा ही बना रहता है (७)

आठवें सूत्रमें जो पुरुष चार प्रकारके कहे गये हैं—उनका सारांश ऐसा है—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले भी दुराचारी होनेसे अन्धकार तुल्य मलिन स्वभाववाला होता है और बाद में भी वह मलिन स्वभाववाला होता है ऐसा वह पुरुष असदाचारवाला होता है अथवा अज्ञानी होता है या रातमें फिरनेवाला चोर आदिजन होता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो तमः-कुकर्मकारी होने से मलिन स्वभाववाला होता है और वही आगे चलकर ज्योतिर्बल-ज्ञान ही है बल जिसका ऐसा होता है अर्थात् ज्ञानबल सम्पन्न हो जाता

જ્ઞાન અથવા પ્રસિદ્ધિથી રહિત થઇ જવાને કારણે અંધકારસમાન બની જાય છે. (૫) કોઈ એક પુરુષ પહેલાં પણ જ્ઞાનથી યુક્ત હોવાને કારણે જ્યોતિ-સમાન હોય છે અને પછી પણ જ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી પ્રકાશિત રહેવાને કારણે જ્યોતિસમાન જ ચાલુ રહે છે

આઠમાં સૂત્રમાં પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ દુરાચારી હોવાથી અંધકાર સમાન મલિન સ્વભાવવાળો હોય છે અને આગળ જતાં પણ દુરાચારી જ રહેવાને કારણે અંધકારતુલ્ય મલિન સ્વભાવવાળો જ ચાલુ રહે છે. એવો તે પુરુષ અસદાચારવાળો અથવા અજ્ઞાની અથવા નિશાચર (ચોર આદિ) હોય છે

(૨) કોઈ એક પુરુષ પહેલાં તો દુરાચારી (કુકર્મકારી) હોવાથી મલિન સ્વભાવવાળો હોય છે, પણ આગળ જતાં જ્યોતિર્બલા જ્ઞાન જ જેનું બલ છે

घा बलं यस्य स तथा भवति, सच पूर्वं सदाचारसम्पन्नः पश्चाद् ज्ञानी, यद्वा–लुण्टको दिवसचारी, इति द्वितीयः ।२। तथा–एकः पूर्वं ज्योति –सत्कर्मकारितया उज्ज्वल स्वभावसम्पन्नो भवति, स एव पश्चात् तमोबलः–मलिनस्वभावतया अज्ञानबलोऽन्धकारबलो वा भवति, अयं च सदाचारवान् अज्ञानी कारणान्तराद्वा रात्रिचरः। इति तृतीयः ।३। तथा–एकः पूर्वं ज्योतिः पश्चादपि ज्योतिर्बलो भवति, अयं च सदाचारी ज्ञानी दिवसचारी वा । इति चतुर्थः ।४। (८)

है अथवा-ज्योति-सूर्यादिका प्रकाशही है बल जिसका ऐसा होता है, ऐसा वह पुरुष पहले असदाचार संपन्न फिर ज्ञानी होताहै या-लुटेरा हो कर दिवसचारी होताहै २,तथा कोई एक पुरुष ऐसा होताहै जो पहिले तो ज्योतिः–सत्कर्मकारी होने से उज्वल स्वभाव संपन्न होता है और बाद में वह तमोबल–मलिन स्वभाववाला बन जाता है अज्ञान रूप बलवाला हो जाता है अथवा अन्धकार में अपना बल प्रकट करनेवाला बन जाता है ऐसा पुरुष सदाचारी अज्ञानी जीव होता है, या कारणान्तरको पाकर जो मनुष्य चोर बन जाता है वह होता है–तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले भी ज्योतिः–सत्कर्मकारी होने से उज्ज्वल स्वभाव सम्पन्न होता है और बाद में भी वह ज्योतिर्बल – ज्ञानही है बल जिसका ऐसा बना रहता है ज्ञानबल सम्पन्न बना रहता है अथवा–

તેને અથવા જ્ઞાનસંપન્ન પુરુષને જ્યોતિર્બલ કહે છે) થઇ જાય છે. અથવા સૂર્યાદિકોનો પ્રકાશ જ છે બળ જેનું એવો થઇ જાય છે અથવા સૂર્યાદિના પ્રકાશમાં જ છે બળ જેનું એવો થઇ જાય છે એવો તે પુરુષ પહેલાં અસદાચાર સંપન્ન પછી જ્ઞાની હોય છે અથવા દિનચારી હોય છે.

(૩) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં જ્યોતિસંપન્ન (સત્કર્મકારી) હોવાથી ઉજ્જવળ સ્વભાવસંપન્ન હોય છે, પણ આગળ જતાં તે તમોબલ સંપન્ન–મલિન સ્વભાવવાળો બની જાય છે–અજ્ઞાનરૂપ બળવાળો બની જાય છે અથવા અંધકારમાં પોતાનું બળ પ્રકટ કરનારો બની જાય છે એવો પુરુષ સદાચારી અજ્ઞાની જીવ હોય છે અથવા કોઈ કારણુને લીધે ચોરી કરવાના કાર્યમાં પડી ગયેલો જીવ હોય છે (૪) કોઈ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ સત્કર્મકારી હોવાથી જ્યોતિસંપન્ન હોય છે અને પાછળથી પણ જ્યોતિર્બલ (જ્ઞાન જ છે બળ જેનું એવો અથવા સત્કર્મકારી હોવાથી ઉજ્જવલ સ્વભાવવાળો જ) ચાલુ રહે છે જ્યોતિર્બલ સંપન્નનો આ પ્રકારનો અર્થ પણ થઈ શકે છે–સૂર્યાદિનો પ્રકાશ જ જેનું બળ હોય એવા પુરુષને જ્યોતિર્બલ સંપન્ન કહે છે. અથવા સૂર્યાદિનો

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा एकः पुरुषः पूर्वं तमः—दुराचारितया मलिनस्वभावो भवति, स पश्चात् तमोबल प्ररञ्जनः—तमोऽन्धकार एव बलं तमोबलं, यद्वा—तमो मिथ्याज्ञानमेव बलं तमोबलं, तत्र प्ररज्यते=अनुरक्तो भवतीति तथा=मिथ्याज्ञानरतिकरः, रात्रिचरश्चौरो वा, यद्वा—तमएव बलं यस्मिन् यस्य वा स तमोबलः=असदाचारी मिथ्याज्ञानी रात्रिचरश्चौरो वा, तत्र प्ररज्यत इति तमोबलप्ररञ्जनः—मिथ्याज्ञानिषु-चौरेषु वाऽनुरागवान् । इति प्रथमः । १ ।

सूर्यादिका प्रकाश ही है बल जिसका ऐसा होता है अथवा—सूर्यादि के प्रकाश होने पर है बल जिसका ऐसा होता है ऐसा वह पुरुष सदाचारी ज्ञानी या दिवसचारी होता है (८)

आठवें सूत्रमें जो पुरुष चार प्रकार के कहे गये हैं—उनका सारांश ऐसा है—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले से तमः—दुराचारी होने से मलिन स्वभाववाला होता है और पीछे भी तमोबल प्ररञ्जन अन्धकार रूप बल में या मिथ्याज्ञान रूप बलमें ही बना रहता है या मिथ्याज्ञानमें रति करनेवाला बना रहता है ऐसा वह जीव या तो मिथ्यादृष्टि होता हैं या रात्रिचर—चौर होता है अथवा—तम ही है बल जिसमें—या तमही है बल जिसका ऐसा वह मनुष्य तमोबल है ऐसा वह तमोबल मनुष्य असदाचारी मिथ्याज्ञानी या रात्रिचर—चौर होता है इस तमोबल में जिसका अनुराग होता है वह तमोबल प्ररञ्जन है ऐसा तमोबल प्ररञ्जन मिथ्याज्ञानियोंमें तथा चोरोंमें अनुराग रखने-

---

પ્રકાશ થતાં જ જેને બળ પ્રાપ્ત થાય છે એવા પુરુષને જ્યોતિર્બલ સંપન્ન કહે છે. એવો તે પુરુષ સદાચારી જ્ઞાની અથવા દિવસચારી હોય છે.

આઠમાં સૂત્રમા નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલેથી જ તમઃસંપન્ન (દુરાચારી) હોવાથી મલિન સ્વભાવવાળો હોય છે અને પાછળથી પણ તમોબલ પ્રરંજન (તમોબલ પ્રજ્વલન) એટલે કે અંધકારરૂપ બલથી અથવા મિથ્યાજ્ઞાન રૂપ બલથી સંપન્ન રહે છે એટલે કે મિથ્યાજ્ઞાનમાં જ રત રહ્યા કરે છે એવો જીવ કાં તો મિથ્યાદૃષ્ટિ હોય છે, અથવા રાત્રિચર ચોર હોય છે. અથવા તમોબલનો અર્થ આ પ્રમાણે પણ છે-તમ (અંધકાર)જ છે બળરૂપ જેમાં અથવા તમ જ છે બળ જેનું એવા મનુષ્યને તમોબલ સંપન્ન કહે છે. એવો તે તમોબલ સંપન્ન મનુષ્ય અસદાચારી, મિથ્યાજ્ઞાની અથવા નિશાચર (ચોર) હોય છે. આ તમોબલમાં જેને અનુરાગ હોય છે તે પુરુષને તમોબલ પ્રરંજન કહે

तथा-एकस्तमः-पूर्वं दुराचारितया मलिनस्वभावः सन्नपि पश्चात् ज्योतिर्वलमरञ्जनः-ज्योति-र्ज्ञानं-सूर्यादिप्रकाशो वा, तदेव वलं ज्योतिर्वलं, तत्र मरज्यत इति तथा=असदाचारी ज्ञानानुरागी दिवाचौरो वा, यद्वा-ज्योतिरेव बलं यस्य स ज्योति र्वलो ज्ञानी दिवाचोरो वा, तत्र मरज्यत इति तथा=ज्ञानिषु दिवाचौरेषु वा अनुरागवान्। इति द्वितीयः। २।

तथा—एको ज्योतिः-सदाचारितया सुस्वभावः सत्यपि तमोवलमरञ्जनो मिथ्याज्ञानादिरतिकरो भवति, सदाचारवान् अज्ञानी रात्रिचरोवेति। तृतीयः। ३।

तथा—एको ज्योतिः-पूर्वं सदाचारितया सुस्वभावो भवति, पश्चात्तु ज्योतिर्वलमरञ्जनो भवति, अयं सदाचारवान् ज्ञानी दिवाचरो वा। इति चतुर्थः। ४।

वाला मनुष्य होता है १ तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो पहिले तो तमः-दुराचारी होनेसे मलिन स्वभाववाला होता है और पीछे से ज्योतिर्वल परञ्जन-सूर्यादिके प्रकाशरूप वलमें अनुरक्त होता है-ऐसा वह मनुष्य असदाचारी ज्ञानानुरागी अथवा दिवाचोर (दिन में चोरी करने वाला) होता है अथवा - ज्योति ही है वल जिसका वह ज्योतिर्वल है ऐसा ज्योतिर्वल ज्ञानी अथवा दिवाचोर होता है इसमें जो अनुराग रखता है वह ज्योतिर्वल पुरञ्जन है। २। तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो ज्योतिः-सदाचारी होनेसे सुस्वभाववाला होता है फिर भी तमोवल प्रस्ञ्जन-मिथ्या ज्ञानादि में रति करनेवाला होता है ऐसा वह मनुष्य सदाचारःशाली अज्ञानी होता है या रात्रिचर मनुष्य होता है। ३। तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है-जो पहिले भी सदाचारी होनेसे सुस्वभाव-

---

છે. એવો તમોબલપુરંજન મિથ્યાજ્ઞાનીઓમાં અથવા ચોરોમાં અનુરાગ રાખનારો પુરુષ પણ હોઈ શકે છે. (૨) કોઇ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે પહેલાં તો તમ.સંપન્ન (દુરાચારી) હોવાથી મલિન સ્વભાવવાળો હોય છે, પણ પાછળથી જ્યોતિર્બલપ્રરંજન-સૂર્યાદિના પ્રકાશરૂપ બળમાં અનુરક્ત થઇ જાય છે એવો તે મનુષ્ય અસદાચારી જ્ઞાનાનુરાગી અથવા દિવાચર-સાધુ પુરુષ હોય છે. અથવા જ્યોતિ જ જેનુ બળ છે તેને જ્યોતિર્બલ કહે છે. એવો જ્યોતિર્બલ કાંતો જ્ઞાની હોય છે અથવા તો દિનચર હોય છે. તેમના પ્રત્યે અનુરાગ રાખનાર મનુષ્યને જ્યોતિર્બલપ્રરંજન કહે છે.

(૩) કોઈ એક પુરુષ જયોતિસંપન્ન (સદાચારી) હોવાથી સુસ્વભાવવાળો હોય છે, છતાં પણ તમોબલપ્રરંજન-મિથ્યાજ્ઞાન આદિ પ્રત્યે અનુરાગ રાખનારો હોય છે. એવો તે મનુષ્ય સદાચારશાળી અજ્ઞાની હોય છે અથવા નિશાચર હોય છે. (૪) કોઈ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ

यद्वा—" पलज्जणे " इति पाठस्य " प्रलज्जनः " इतिच्छाया, तत्र-एकः कश्चित् तमः—अप्रसिद्धः तमोबलेन—अन्धकारबलेन संचरन् प्रलज्जते लज्जितो भवतीति तमोबलप्रलज्जनः, अत्र—प्रथमभङ्गे प्रकाशचारी, द्वितीयभङ्गे अन्धकारचारी, तृतीयभङ्गे प्रकाशचारी, चतुर्थभङ्गे तु कुतोऽपि कारणादन्धकारचार्येवेति । ४ । यद्वा—' पज्जलणे '—त्ति पाठे ' प्रज्वलनः ' इतिच्छाया, तत्र—अज्ञानबलेन—अन्धकारबलेन वा, ज्ञानबलेन प्रकाशबलेन वा प्रज्वलति—दर्पितो भवति यः स तथा । अत्रापि भङ्गचतुष्टयं संयोज्यम् । (९)

वाला होता है और पीछे ज्योतिर्बल पुरञ्जन होता है ऐसा वह मनुष्य सदाचारवाला ज्ञानी मनुष्य होताहै अथवा दिवाचर—साधु मनुष्य होता है ४ अथवा " पलज्जणे " इसकी संस्कृतच्छाया—" प्रलज्जनः " ऐसी भी होती है इस पक्षमें ऐसा अर्थ होता है कि कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो तमःअप्रसिद्ध होता है और अन्धकार बलसे चलता हुआ लज्जित होता है इस प्रथम भङ्ग में अप्रसिद्धिवाला प्रकाशचारी साधु मनुष्य लिया गया है तथा द्वितीय भङ्गमें अन्धकारचारी चौरादि मनुष्य लिया गया है.

तृतीय भङ्ग में भी प्रकाशचारी साधुजन लिया गया है और चतुर्थभङ्ग में भी किसी कारणवश अन्धकारमें ही चलनेवाला मनुष्य लिया है यद्वा—"पज्जलणे ' इस पाठकी संस्कृत छाया प्रज्वलनः "ऐसी भी होती है इस पक्षमें जो अज्ञानके बलसे या अन्धकारके बलसे ज्ञानके बलसे

સદાચારી હોવાથી સુસ્વભાવવાળો હોય છે અને પછી પણ જ્યોતિર્બલપુરંજન જ રહે છે એવો તે મનુષ્ય સદાચારશીલ જ્ઞાની હોય છે અથવા દિવાચર—સાધુ મનુષ્ય હોય છે. અથવા " પલજણે " આ પદની સંસ્કૃત છાયા " પ્રલજ્જન. " થાય છે આ સંસ્કૃત છાયા લેવામાં આવે તો ચાર ભાંગા આ પ્રમાણે બને છે—(૧) કોઇ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે તમઃ (અપ્રસિદ્ધ) હોય છે અને અંધકારરૂપ બળથી ચાલતાં લજ્જા અનુભવે છે આ પ્રથમ પ્રકારમાં અપ્રસિદ્ધિવાળો પ્રકાશચારી સાધુપુરુષ ગૃહીત થયો છે

બીજા પ્રકારમાં અંધકારચારી (નિશાચર) ચોર આદિ ગૃહીત થયા છે. ત્રીજા ભાગામાં પ્રકાશચારી સાધુજન ગૃહીત થયા છે. અને ચોથા ભાંગામાં કોઇ કારણને આધીન થઇને અધકારમાં જ ચાલનારો મનુષ્ય ગૃહીત થયો છે. અથવા " પજ્જલણે "નીસંસ્કૃત છાયા ' પ્રજ્વલન ' પણ થાય છે. આ સંસ્કૃત છાયાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો જે અજ્ઞાનના બળથી અથવા અંધકારના બળથી, જ્ઞાનના બળથી અથવા પ્રકાશના બળથી પ્રજ્વલિત થાય

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः परिज्ञातकर्मा-ज्ञपरिज्ञया स्वरूपतः परिज्ञातानि-अवगतानि प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परिहृतानि कर्माणि=सावद्यरूपाणि येन स तथाभूतो भवति, किन्तु परिज्ञातसंज्ञः-परिज्ञाताः संज्ञाः-आहारादि संज्ञा येन स तथाभूतो न भवति, स च रसगृद्धः संयतः श्रावको वा। इति प्रथमो भङ्गः।१॥

तथा—एकः परिज्ञातसंज्ञो भवति, सद्भावनाभावितत्वात्, किन्तु नो परिज्ञातकर्मा भवति सावद्यव्यापारानिवृत्तेः, स च श्रावकः। इति द्वितीयः।२। तथा—एकः परिज्ञातकर्माऽपि परिज्ञातसंज्ञोऽपि भवति, स च प्रकृष्टक्रियावान्

या प्रकाशके बलसे प्रज्वलित होता है-दर्प युक्त होता है ऐसा मनुष्य लिया गया है यहां पर भी भंग चतुष्टय लगा लेना चाहिये (९)

दशवें सूत्रमें जो पुरुषजात चार कहे गये हैं—इनका सारांश ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो परिज्ञातकर्मा होता है-ज्ञपरिज्ञासे सावद्यरूप कर्मों का स्वरूप जान लेता है-और जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से उनका परित्याग कर देता है परन्तु फिर भी वह आहारादि संज्ञाओं को जिसने जाना है ऐसा नहीं होता है ऐसा मनुष्य रसगृद्ध संयत होता है या श्रावक होता है १ तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो सद्भावना से भावित होनेके कारण परिज्ञान संज्ञावाला तो होता है पर वह सावद्यव्यापारसे अनिवृत्त होनेसे परिज्ञातकर्मा नहीं होता है २ ऐसा वह मनुष्य श्रावक होता है तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो सावद्य आदिके स्वरूप को

છે-દર્પયુક્ત થાય છે, એવો મનુષ્ય ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે, એમ સમજવું. આ દૃષ્ટિએ પણ અહીં ચાર ભાંગાઓ સમજી લેવા જોઈએ.

દસમાં સૂત્રમાં પુરુષોના જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરિજ્ઞાતકર્મા હોય છે-એટલે કે સાવદ્ય રૂપ કર્મોના સ્વરૂપનો જ્ઞાતા હોય છે, અને તેના સ્વરૂપને જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેમનો પરિત્યાગ કરી નાખનારો હોય છે, છતાં પણ તે આહારાદિ સંજ્ઞાઓનો જાણકાર હોતો નથી. એવો જીવ રસગૃદ્ધ (રસલોલુપ) સંયત હોય છે અથવા શ્રાવક હોય છે (૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સદ્ભાવનાથી ભાવિત (યુક્ત) હોવાને કારણે પરિજ્ઞાન સંજ્ઞાવાળો તો હોય છે. પણ તે સાવદ્ય વ્યાપારોમાં પ્રવૃત્ત હોવાથી પરિજ્ઞાત કર્મા હોતો નથી. એવો તે મનુષ્ય શ્રાવક હોય છે. (૩) કોઈ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે સાવદ્ય આદિના સ્વરૂપનો પણ જાણકાર હોય છે અને

मुनिः प्रतिमाप्रतिपन्नः श्रमणोपासको वा । इति तृतीयः । ३ । तथा-एको नो परिज्ञातकर्मा भवति नापि च परिज्ञातसंज्ञः, सचासंयतः । इति चतुर्थः ।४। (१०)

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः परिज्ञातकर्मा-सावद्यव्यापारकरणकारणानुमतिनिवृत्तो भवति, किन्तु परिज्ञातगृहाऽऽवासः=प्रव्रजितो नो भवति, स चाप्रव्रजितो गृहस्थः । इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा-एकः परिज्ञातगृहाऽऽवासो भवति किन्तु नो परिज्ञातकर्मा भवति, स च दुष्प्रव्रजितः । इति द्वितीयः । २ । तथा-एकः परिज्ञात-

---

जाननेवाला भी होता है और परिज्ञान संज्ञावाला भी होता है ऐसा वह प्रकृष्ट क्रियावाला मुनि होता है या प्रतिमा प्रतिपन्न श्रमणोपासक होताहै ३ तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होताहै न परिज्ञात कर्मा होताहै और न परिज्ञात संज्ञावाला ही होताहै ऐसा वह मनुष्य असंयत होताहै। (१०)

ग्यारहवें सूत्रमें जो चार प्रकारके पुरुष कहे गये हैं उनका सारांश ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सावद्यव्यापारको स्वयं नहीं करता है दूसरों से भी नहीं कराता है और करनेवालोंकी अनुमोदना भी नहीं करता है किन्तु प्रव्रजित नहीं होता है ऐसा वह अप्रव्रजित गृहस्थ होता है १ तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो अप्रव्रजित गृहस्थ तो होता है पर वह परिज्ञात कर्मा नहीं होता है सावद्यव्यापार को स्वयं करता है दूसरों से कराता हैं और करनेवालोंकी अनुमोदना करता है ऐसा मनुष्य दुष्प्रव्रजित होता है २ तथा

પરિજ્ઞાન સંજ્ઞાવાળો પણ હોય છે. એવો જીવ પ્રકૃષ્ટ ક્રિયાવાળો મુનિ હોય છે અથવા પ્રતિમાપ્રતિપન્ન શ્રમણોપાસક હોય છે. (૪) કોઈ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે પરિજ્ઞાત કર્મા પણ હોતો નથી અને પરિજ્ઞાત સંજ્ઞાવાળો પણ હોતો નથી. એવો તે મનુષ્ય અસંયત હોય છે.

૧૧ માં સૂત્રમાં જે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે, તે ચારે પ્રકારોનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પોતે સાવદ્ય વ્યાપારોમાં પ્રવૃત્ત થતો નથી, અન્યની પાસે સાવદ્ય વ્યાપારો કરાવતો પણ નથી અને સાવદ્યવ્યાપાર કરવાની અનુમોદના પણ કરતો નથી. છતાં પોતે પ્રવ્રજિત થતો નથી આવો પુરુષ અપ્રવ્રજિત ગૃહસ્થ હોય છે. (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પ્રવ્રજિત તો હોય છે પણ તે પરિજ્ઞાતકર્મા હોતો નથી તેથી તે પોતે સાવદ્ય વ્યાપારો કરે છે, અન્યની પાસે સાવદ્ય વ્યાપારો કરાવે છે અને સાવદ્યવ્યાપારો કરનારની અનુમોદના પણ કરે છે. એવો મનુષ્ય દુષ્પ્રવ્રજિત હોય છે.

कर्माऽपि परिज्ञातगृहाऽऽवासोऽपि भवति, स च साधुः । इति तृतीयः । ३ । तथा-एको नोपरिज्ञातकर्मा नोपरिज्ञातगृहाऽऽवासश्च भवति, स चासंयतः । इति चतुर्थः । ४ । (११)

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्त्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः परिज्ञातसंज्ञो भवति विशिष्टगुणस्थानकत्वात्, किन्तु नो परिज्ञातगृहाऽऽवासः-त्यक्तगृहाऽऽवासो न भवति, गृहस्थत्वात्, स च प्रतिमाधारी श्रावक । इति प्रथमो भङ्गः । १ ।

तथा—एकः परिज्ञातगृहाऽऽवासः-त्यक्तगृहाऽऽवासो भवति संयतत्वात्, किन्तु नो परिज्ञातसंज्ञः-त्यक्ताऽऽरम्भो न भवति अभावितत्वात्, स च दुष्प्रव-

---

कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो परिज्ञात कर्मा भी होता है सावद्य व्यापारको स्वयं नहीं करता है दूसरोंसे भी नहीं कराता है तथा करनेवालोंकी अनुमोदना भी नहीं करता है-और परिज्ञात गृहावास भी होता है प्रव्रजित नहीं होता है ऐसा वह साधु होता है तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो न परिज्ञात कर्मा भी होता है और न परिज्ञातगृहावास भी होता है ऐसा वह असंयत होता है । (११)

बारहवें सूत्रमें जो चार प्रकारके पुरुष कहे गयेहैं उनमें कोई एक पुरुष ऐसा होताहै जो विशिष्ट गुणोंका स्थानक होनेसे परिज्ञात संज्ञावाला होता है किन्तु गृहस्थ होनेसे वह तो परिज्ञात गृहावास-त्यक्त गृहावासवाला नहीं होता है ऐसा वह प्रतिमाधारी श्रावक होता है १ तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो परिज्ञातगृहावास होता

---

(૩) કોઈ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે પરિજ્ઞાત કર્મા પણ હોય છે એટલે કે પોતે સાવદ્ય વ્યાપારો કરતો નથી, કરાવતો નથી અને કરનારને અનુમોદતો પણ નથી પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ પણ હોય છે-પ્રવ્રજિત હોય છે એવો તે સાધુ હોય છે

(૪) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરિજ્ઞાતકર્મા પણ હોતો નથી અને પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ પણ હોતો નથી એવો તે અસંયત હોય છે. (૧૧)

બારમાં સૂત્રમાં જે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે તેનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે--

(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે વિશિષ્ટ ગુણોનું સ્થાનક હોવાને લીધે પરિજ્ઞાત સંજ્ઞાવાળો હોય છે, પણ ગૃહસ્થ હોવાને કારણે તે પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ (ત્યક્ત ગૃહાવાસવાળો) હોતો નથી પ્રતિમાધારી શ્રાવકને આ પ્રકારમા ગણાવી શકાય છે. (૨) કોઇ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે

जितः। इति द्वितीयः। २। तथा—एकः परिज्ञातसंज्ञोऽपि परिज्ञातगृहाऽऽवासोऽपि च भवति, स च साधुः। इति तृतीयः। ३। तथा—एको नो परिज्ञातसंज्ञो नापि च परिज्ञातगृहाऽऽवासो भवति, स च सामान्यगृहस्थः। इति चतुर्थः। ४। (१२)

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—इहार्थो नामैको नो परार्थः, तत्र—एकः पुरुषः इहार्थः—इहैव—अस्मिन्नेव जन्मनि अर्थः—भोगसुखादि प्रयोजनं यस्य स इहार्थः=ऐहिकभोगसुखार्थी, यद्वा—

है—त्यक्त गृहावासवाला होता है क्योंकि—ऐसा वह संयत होता है परन्तु वह त्यक्त आरम्भवाला नहीं होता है क्योंकि वह अभावित होता है ऐसा वह कुप्रव्रजित होता है २ तथा कोई एक ऐसा मनुष्य होता है जो परिज्ञात संज्ञावाला भी होता है ३ ऐसा वह मनुष्य साधु होता है तथा कोई एक ऐसा भी मनुष्य होता है जो न परिज्ञात संज्ञावाला होता है और न परिज्ञात गृहावासवाला भी होता है ४ ऐसा वह सामान्य गृहस्थजन होता है। (१२)

"चत्तारि पुरिसजाया" इस १३ वें सूत्र द्वारा जो पुरुष जात चार कहे गये हैं उनका सारांश ऐसा है—इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जिसका प्रयोजन इसी जन्ममें भोग सुखादिरूप होता है ऐसा वह पुरुष इहार्थ कहा गया है अर्थात् यह इहार्थ पुरुष ऐहिक

જે પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ (ત્યક્ત ગૃહાવાસવાળો) હોય છે, પણ તે ત્યક્ત આરંભવાળો હોતો નથી. એટલે કે સાધુ હોવા છતાં પણ આરંભનો પરિત્યાગ ન કરી શકનાર દુષ્પ્રવ્રજિત જીવને આ પ્રકારનો પુરુષ કહી શકાય છે. (૩) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરિજ્ઞાત સંજ્ઞાવાળો પણ હોય છે અને પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસવાળો પણ હોય છે એવો જીવ સંયત (સાધુ) હોય છે (૪) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરિજ્ઞાત સંજ્ઞાવાળો પણ હોતો નથી અને પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસવાળો પણ હોતો નથી સામાન્ય ગૃહસ્થજનને આ પ્રકારનો પુરુષ કહી શકાય છે. (પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ—ગૃહાવાસના સ્વરૂપને જાણીને તેના પરિત્યાગપૂર્વક પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરનાર)

"चत्तारि पुरिसजाया" ઇત્યાદિ. ૧૩ માં સૂત્રમાં જે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આ જન્મના ભોગોપભોગ રૂપ સુખની ઇચ્છાવાળો હોય છે એટલે કે ઐહિક ભોગસુખાર્થી હોય છે પણ પરભવના દેવલોક આદિના સુખની ઇચ્છાવાળો

'इहत्थे' इत्यस्य 'इहाऽऽस्थः' इतिच्छाया, तत्पक्षे - इहास्थ इत्यस्य इहैव जन्मनि आस्था-विश्वासो यस्य स तथा=इहलोकप्रतिबद्धो भवति किन्तु न परार्थः-परत्र जन्मनि अर्थः-स्वर्गादिसुखप्रयोजनं यस्य स तथा न भवति, यद्वा-'परत्थे' इत्यस्य 'पराऽऽस्थ' इतिच्छाया, इति पक्षे परत्र आस्था-विश्वासो यस्य स तथा न भवति, स च नास्तिकः। इति प्रथमो भङ्गः। १। शेषभङ्गत्रयमेवं संयोजनी-

भोग सुखार्थी होता है यद्वा-" इहत्थे " शब्दकी छाया " इहस्थः " ऐसी भी होती है इस पक्षमें ऐसा अर्थ होता है-कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है कि जिसकी आस्था इसी जन्म पर होती है ऐसा वह ईहार्थ पुरुष " नो परत्थे " परजन्ममें स्वर्गादि सुखका प्रयोजनवाला नहीं होता है अथवा-" परत्थे " की संस्कृत छाया-"परास्थ" ऐसी होगी तब इसका ऐसा अर्थ होगा-कि वह इहास्थ पुरुष परलोकमें विश्वास रखनेवाला नहीं होता है ऐसा वह नास्तिक पुरुष होता है १ शेष ३ भङ्ग इस प्रकारसे बना लेना चाहिये-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो " परत्थे नो इहत्थे २ " परार्थ या परास्थ होता है इहार्थ या इहास्थ नहीं होता है २ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो " इहत्थे परत्थे वि " इहार्थ या इहास्थ भी होता है और परार्थ या परास्थ भी होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा भी होता है जो " नो इहत्थे नो परत्थे " न इहार्थ या इहास्थ होता है और न परार्थ या परास्थ

હોતો નથી એવા પુરુષને "ઇહાર્થી-નો પરાર્થી" રૂપ પહેલા પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે અથવા-"इहत्थे" આ પદની સંસ્કૃત છાયા "इहस्थः" પણ થાય છે. આ સંસ્કૃત છાયાની અપેક્ષાએ પહેલો ભાંગો આ પ્રકારનો બને છે—કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આ જન્મ પરઆસ્થા રાખનારો હોય છે પણ પરભવના સુખાદિમાં આસ્થાવાળો હોતો નથી. એવો પુરુષ નાસ્તિક હોય છે. બાકીના ત્રણ ભાંગાઓ આ પ્રમાણે સમજવા—(૨) કોઈ એક પુરુષ "परत्थे नो इहत्थे" એવો હોય છે કે જે પરલોકના સુખની અભિલાષા અથવા આસ્થાવાળો હોય છે પણ આ લોકના સુખની અભિલાષા અથવા આસ્થાવાળો હોતો નથી. (૩) "इहत्थे परत्थे वि" કોઈ એક પુરુષ આ લોકના સુખની ઇચ્છા તથા આસ્થાવાળો પણ હોય છે અને પરલોકના સુખની પણ ઇચ્છા અને આસ્થાવાળો હોય છે. (૪) "नो इहत्थे-नो परत्थे" કોઇ એક પુરુષ આલોકના સુખની ઇચ્છા કે આસ્થાવાળો હોતો નથી અને પરલોકના સુખની ઇચ્છા કે આસ્થાવાળો પણ હોતો નથી.

यम्। तत्र द्वितीयभङ्गस्थो बालतपस्वी, तथाविधश्रद्धावान् साधुर्वा २। तृतीयभङ्गस्थः सुश्रावकः ३। चतुर्थभङ्गस्थस्तु कालसौकरिकादिर्मूढोवेति ।४। (१३)

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः एकेन-श्रुतेन वर्धते, एकेन-सम्यग्दर्शनेन हीयते-हीनो भवति, यथोक्तं च—

"जह जह बहुस्सुओ संमओ य सीसगणसंपरिवुडो य ।
अविणिच्छिओ य समए तह तह सिद्धंतपडिणीओ ।१।

छाया—"यथा यथा बहुश्रुतः संमतश्च शिष्यगणसंपरिवृतश्च ।
अविनिश्चितश्च समये तथा तथा सिद्धान्तप्रत्यनीकः ।१।" इति,

अयमर्थः—पुरुषो यथा यथा बहुश्रुतः-बहुशास्त्रज्ञो भवति, संमतः-जनैराहतः शिष्यगणसंपरिवृतः - शिष्यगणपरिवेष्टितश्च भवति, स च यदि समये-

होता है द्वीतीय भङ्ग में बाल तपस्वीको तथाविध श्रद्धाशाली पुरुष को तृतीय भङ्ग में सुश्रावकको और चतुर्थ भङ्ग में कालसौकरिक आदि अथवा मूढको दृष्टान्तमें रखना चाहिये (१३)

चौदहवें सूत्रमें जो चार प्रकारके पुरुष कहे गये हैं-सो उनका सारांश ऐसा है कि इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो एकसे-श्रुतसे तो बढता है अर्थात् स्वाध्याय करते २ या अध्ययन करते २ अपने श्रुतज्ञानको तो बढा लेता है-बहुश्रुत हो जाता है पर वह एकसे-सम्यग्दर्शन से रहित होता है कहा भी है--

"जह जह बहुस्सुओ" इत्यादि ॥१॥ इस गाथा का तात्पर्यार्थ ऐसा है-पुरुष जैसे २ बहुश्रुत बहु शास्त्रज्ञ होता है संमतजनों द्वारा

બીજા ભાંગામાં બાલતપસ્વીને, તે પ્રકારની શ્રદ્ધાવાળા પુરુષને અથવા સાધુને મૂકી શકાય છે ત્રીજા ભાંગામાં સુશ્રાવકને અને ચોથા ભાંગામાં મૂઢ અથવા કાલસૌકરિક જેવા પુરુષોને મૂકી શકાય છે.

ચૌદમાં સૂત્રમાં જે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે એક બાબતમાં-જેમકે શ્રુતમાં તો આગળ વધતો જાય છે એટલે કે સ્વાધ્યાય કરતો કરતો શ્રુતજ્ઞાનમાં તો આગળ વધતો જાય છે પરન્તુ બીજી બાબતમાં હીયમાણ થતો રહે છે જેમકે સમ્યગ્ દર્શનથી રહિત થતો જાય છે. કહ્યું પણ છે કે-"जह जह बहुस्सुआ" ઇત્યાદિ.

આ ગાથાનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—પુરુષ જેમ જેમ બહુશ્રુત-બહુ શાસ્ત્રજ્ઞ થતો જાય છે, સંમત (લોકો દ્વારા તેના અભિપ્રાયને સ્વીકારવામાં

सिद्धान्ते अविनिश्चितः-संशययुक्तो भवति तदा स तथा तथा सिद्धान्तप्रत्यनीकः-सिद्धान्तप्रतिकूलो भवति ।१। इति प्रथमः ।१। तथा—एकः पुरुष एकेन-श्रुतेनैव वर्धते द्वाभ्यां-सम्यग्दर्शन-विनयाभ्यां हीयत इति द्वितीयः ।२। तथा-एको द्वाभ्यां-श्रुतानुष्ठानाभ्यां वर्धते, एकेन-सम्यग्दर्शनेन हीयते । इति तृतीयः ।३। तथा-एको द्वाभ्यां-श्रुतानुष्ठानाभ्यां वर्धते, द्वाभ्यां-सम्यग्दर्शन-विनयाभ्यां हीयत इति चतुर्थः ।४। (१)

यद्वा-एक एकेन-ज्ञानेन वर्धते, एकेन-रागेण हीयते, इति प्रथमः ।१। तथा-एक एकेन-ज्ञानेन वर्धते द्वाभ्यां राग-द्वेषाभ्यां हीयते. इति द्वितीयः ।२।

आहत होता है और शिष्य गणोंसे परिवेष्टित होता है वह यदि सिद्धान्तमें अविनिश्चित संशययुक्त हो जाता है तो वह वैसे २ सिद्धान्त प्रत्यनीक-सिद्धान्त प्रतिकूल हो जाता है १

तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो केवल एक श्रुतसेही तो बढता है पर सम्यग्दर्शन और विनय इन दोसे रहित होता है २ अर्थात् श्रुतज्ञानकी तो वृद्धि कर लेता है पर सम्यग्दर्शन और विनय इनकी वृद्धि नहीं करता है इनसे हीन होता है २ तथा कोई पुरुष ऐसा होता है जो श्रुत और अनुष्ठान इन दो से बढता है पर एक सम्यग्दर्शन से हीन होता है ३ तथा कोई एक ऐसा होता है श्रुत और अनुष्ठान इन दोसे बढता है और सम्यग्दर्शन एवं विनय इन दोसे हीन होता है ४-१

अथवा--कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो ज्ञानसे बढता है-बढा होता है और एक रागसे हीन होता है १ कोई एक पुरुष ऐसा होता

આવે એવો) થતો જાય છે, અને શિષ્યોના સમૂહથી યુક્ત થતો જાય છે, તેમ તેમ જો તે સંશયયુક્ત પણ થતો જાય તો તે સિદ્ધાન્ત પ્રત્યનીક-સિદ્ધાન્ત પ્રતિકૂલ પણ થતો જાય છે.

(૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે એકલા શ્રુતમાં તો વૃદ્ધિ પામતો રહે છે, પરન્તુ સમ્યગ્ દર્શન અને વિનયથી રહિત થતો જાય છે. એટલે કે તે શ્રુતજ્ઞાન તો વધારે છે પણ સમ્યગ્દર્શન અને વિનયની વૃદ્ધિ કરતો નથી પણ તેનાથી વિહીન થતો જાય છે. (૩) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે બેમાં શ્રુત અને અનુષ્ઠાનમાં આગળ વધતો જાય છે, પણ એકથી સમ્યગ્દર્શનથી જ વિહીન થતો જાય છે (૪) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે શ્રુત અને અનુષ્ઠાનમાં તો વૃદ્ધિ કરતો રહે છે પણ સમ્યગ્-દર્શન અને વિનયથી રહિત થતો જાય છે. અથવા—(૧) કોઈ એક પુરુષ

तथा एको द्वाभ्यां- ज्ञान- संयमाभ्यां वर्धते, एकेन-रागेण हीयत इति तृतीयः । ३ । तथा--एको द्वाभ्यां- ज्ञान-सयमाभ्यां वर्धते, द्वाभ्यां-राग-द्वेषाभ्यां हीयत इति चतुर्थः । ४ । (२)

अथवा--एक एकेन- क्रोधेन वर्धते, एकेन--मायया हीयते, इति प्रथमः ।१। तथा-एक एकेन-कोपेन वर्धते, द्वाभ्यां-माया लोभाभ्यां हीयते । इति द्वितीयः । २ । द्वाभ्यां क्रोधमानाभ्यां वर्धते एकेन-मायया हीयत इति तृतीयः । ३ । तथा-एको द्वाभ्यां=क्रोध-मानाभ्यां वर्धते, द्वाभ्यां-माया--लोभाभ्यां हीयत इति चतुर्थः । ४ । (३) (१४)

हैं जो एक ज्ञानसे बढा होता है और दोसे राग एवं दोषसे हीन होता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो ज्ञान एवं संयम से बढा होता हैं और रागसे हीन होता हैं-३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो ज्ञान एवं संयम से बढा होता है और राग एवं द्वेष से हीन होता है ४-२

अथवा--कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो एकसे-क्रोध से बढा होता है बहुत क्रोधी होता है और एकसे मायासे हीन होता हैं १ तथा-कोई एक पुरुष ऐसा होताहै जो एकसे कोप से बढा होताहै-और दोसे माया और लोभसे हीन होता है २ तथा कोई एक ऐसा पुरुप होता है जो क्रोध एवं मानसे बढा होता है और एकसे मायासे हीन होता है-३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होना है जो क्रोध मान इन दोसे बढा होता है एवं माया और लोभ इनसे हीन होता है

જ્ઞાનમાં વધતો જાય છે પણ રાગથી રહિત થતો જાય છે. (૨) કોઈ એક પુરુષ એકમાં (જ્ઞાનમા) વધતો જાય છે, પણ બેમાં (રાગ અને દ્વેષથી) ઘટતો જાય છે. (૩) કોઇ પુરુષ બેમાં (જ્ઞાન અને સંયમમાં) વધતો જાય છે પણ રાગથી રહિત થતો જાય છે. (૪) કોઈ પુરુષ જ્ઞાન અને સંયમમાં વધતો જાય છે અને રાગ અને દ્વેષમાં ઘટતો જાય છે.

અથવા—(૧) કોઈ પુરુષ એક બાબતમાં-ક્રોધમાં વૃદ્ધિ કરતો રહે છે પણ માયાથી રહિત બનતો જાય છે. (૨) કોઈ પુરુષના ક્રોધની વૃદ્ધિ થતી રહે છે પણ માયા અને લોભની હાનિ થતી રહે છે.

(૩) કોઈ પુરુષના ક્રોધ અને માનની વૃદ્ધિ થતી રહે છે, પણ માયા ઘટતી જાય છે. (૪) કોઈ પુરુષના ક્રોધ અને માનની વૃદ્ધિ થતી રહે છે પણ માયા અને લોભ ઘટતા જાય છે

अत्रेदं बोध्यं--सामान्येनैकेनेति नपुंसकलिङ्गनिर्दिष्टस्य माययेति विवरणे मायारूपेण वस्तुना -- पदार्थेनेति लिङ्गसाम्येन भिन्नलिङ्गताशङ्काऽपनोदनीया (सू० २९)

अथ कन्थकदृष्टान्तसूत्रम्—

मूलम्-चत्तारि कंथगा पण्णत्ता, तं जहा—आइन्ने णाममेगे आइन्ने १, आइन्ने णाममेगे खलुंके २, खलुंके णाममेगे आइन्ने ३, खलुंके णाममेगे खलुंके ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—आइन्ने णाममेगे आइन्ने चउभंगो। (१)

चत्तारि कंथगा पण्णत्ता, तं जहा—आइन्ने णाममेगे आइन्नयाए विहरइ १, आइन्ने णाममेगे खलुंकत्ताए विहरइ ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—आइन्ने णाममेगे आइन्नयाए विहरइ, चउभंगो। (२)

यदि यहां पर ऐसी आशंका की जाय कि "एकेन" यह शब्द सामान्य रूपसे निर्दिष्ट हुआ है और जो सामान्य रूपसे निर्दिष्ट होता है वह नपुंसक लिङ्ग होता है अतः जब ऐसी बात है तो फिर आप "एकेन' से "मायया" ऐसा विवरण कैसे करते हैं तो इसका समाधान इस रूपसे कर लेना चाहिये कि "एकेन माया रूपेण वस्तुना" एक-माया रूप वस्तुसे इस प्रकारसे माया वस्तुके साथ लिङ्ग साम्यता आजाने से भिन्नलिङ्गताकी शङ्का दूर हो जाती है ॥सू. २९॥

શંકા—"एकेन" આ પદ તો નપુંસકલિંગનું પદ છે. છતાં આપ તે પદ દ્વારા "मायया" 'માયાથી 'આ પ્રકારના સ્ત્રીલિંગ વાચક શબ્દને કેવી રીતે ગૃહીત કરો છો ?

ઉત્તર—અહીં "एकेन मायारूपेण वस्तुना" 'માયાથી' આ પદ "માયારૂપ એક વસ્તુથી" આ પ્રકારના અર્થનું વાચક છે. આ રીતે માયા-રૂપ વસ્તુની સાથે લિંગની સમાનતા આવી જવાથી ભિન્ન ભિન્ન લિંગતાની શંકાનું નિવારણ થઇ જાય છે. ॥ સૂ. ૨૯ ॥

चत्तारि कंथगा पण्णत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो कुलसंपन्ने० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो कुलसंपन्ने, चउभंगो। (३)

चत्तारि कंथगा पण्णत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो बलसंपण्णे० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो बलसंपन्ने ४। (४)

चत्तारि कंथगा पण्णत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो रूवसंपन्ने ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो रूवसंपन्ने ४। (५)

चत्तारि कंथगा पण्णत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो जयसंपण्णे० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो जयसंपण्णे० ४। (६) एवं कुलसंपन्नेण य बलसंपन्नेण य ४। (७) कुलसंपन्नेण य रूवसंपन्नेण य० ४, (८) कुलसंपन्नेण य जयसंपन्नेण य ४। (९) एवं बलसंपन्नेण य रूवसंपन्नेण य० ४, (१०) बलसंपन्नेण य जयसंपन्नेण य० ४। सव्वत्थ पुरिसजाया पडिवक्खो। (११)

चत्तारि कंथगा पण्णत्ता, तं जहा-रूवसंपन्ने णाममेगे णो जयसंपन्ने ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-रूवसंपन्ने णाममेगे णो जयसंपन्ने ४। (१२)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-सीहत्ताए णाममेगे निक्खंते सीहत्ताए विहरइ १, सीहत्ताए णाममेगे निक्खंते

सियालत्ताए विहरइ २, सियालत्ताए णाममेगे निक्खंते सीहत्ताए विरहइ ३, सियालत्ताए णाममेगे निक्खंते सियालत्ताए विहरइ ४। (१३) ॥सू० ३० ॥

छाया—चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-आकीर्णो नामैक आकीर्णः १, आकीर्णो नामैकः खलुङ्कः २, खलुङ्को नामैक आकीर्णः ३, खलुङ्को नामैकः खलुङ्कः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-आकीर्णो नामैक आकीर्णः १। चतुर्भङ्गी। (१)

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-आकीर्णो नामैक आकीर्णतया विहरति, आकीर्णो नामैकः खलुङ्कतया विहरति ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-आकीर्णो नामैक आकीर्णतया विहरति चतुर्भङ्गी ४। (२)

चत्तारि कथगा पण्णत्ता इत्यादि सूत्र ३० ॥

सूत्रार्थ-कन्थक चार प्रकारके कहे गयेहैं-एक आकीर्ण आकीर्ण १ दूसरा आकीर्ण खलुङ्क २ तीसरा खलुङ्क आकीर्ण ३ और चौथा खलुङ्क खलुङ्क इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं-आकीर्ण आकीर्ण १ इत्यादि ४-(१)

पुनश्च—कन्थक चार प्रकारके कहे गये है-एक आकीर्ण आकीर्ण रूपसे विहारी १ दूसरा आकीर्ण खलुङ्क रूपसे विहारी २, तीसरा खलुङ्क आकीर्ण रूपसे विहारी ३, और चतुर्थ खलुङ्क और खलुङ्क रूपसे विहारी ४ इसी तरहसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं जैसे आकीर्ण आकीर्ण रूपसे विहारी इत्यादि ४ (२)

"चत्तारि कंथगा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ— (સૂ ૩૦)

સૂત્રાર્થ—કન્થક (અશ્વ વિશેષ)ના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) આકીર્ણ-આકીર્ણ, (૨) આકીર્ણ-ખલુંક, (૩) ખલુંક-આકીર્ણ અને (૪) ખલુંક-ખલુંક એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. જેમકે 'આકીર્ણ-આકીર્ણ' વગેરે ચાર પ્રકાર ઉપર મુજબ સમજી લેવા.

કન્થકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—

(૧) આકીર્ણ-આકીર્ણ રૂપે વિહારી, (૨) આકીર્ણ-ખલુંક રૂપે વિહારી (૩) ખલુંક-આકીર્ણ રૂપે વિહારી અને (૪) ખલુંક-ખલુંક રૂપે વિહારી. એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ "આકીર્ણ-આકીર્ણ રૂપે વિહારી" આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા. ।૨।

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैकः, चतुर्भङ्गी ४। (३)

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्नः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्नः ४। (४)

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः ४। (५)

पुनश्च—कन्थक चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे, जाति संपन्न नो कुल संपन्न १ कुल संपन्न नो जाति संपन्न २ जाति संपन्न भी और कुल संपन्न भी ३ और नो जाति संपन्न नो कुल संपन्न ४ इसी प्रकार से पुरुष जात भी चार कहे गये हैं, जैसे जातिसंपन्न नो कुल संपन्न इत्यादि ४ (३)

पुनश्च—कन्थक चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे जातिसंपन्न नो बलसंपन्न १ बलसंपन्न नो जातिसंपन्न २ जातिसंपन्न भी और बल संपन्न भी ३ और नो जातिसंपन्न नो बलसंपन्न ४ इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गयेहैं जैसे-जाति संपन्न नो बलसंपन्न इत्यादि ४-(४)

पुनश्च—कन्थक चार प्रकार के कहे गये हैं जैसे-जातिसंपन्न नो रूप संपन्न१ रूप संपन्न नो जाति संपन्न२ जातिसम्पन्न भी रूप सम्पन्नभी

કન્થક (અશ્વ)ના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) જાતિસંપન્ન નો કુલસંપન્ન, (૨) કુલસંપન્ન નો જાતિસંપન્ન, (૩) જાતિસંપન્ન અને કુલસંપન્ન અને (૪) નો જાતિસંપન્ન નો કુલસંપન્ન એજ પ્રમાણે પુરૂષોના પણ "જાતિસંપન્ન નો કુલસંપન્ન" આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા ।૩।

કન્થકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) જાતિસંપન્ન નો બલસંપન્ન, (૨) બલસંપન્ન નો જાતિસંપન્ન, (૩) જાતિસંપન્ન અને બલસંપન્ન (૪) નો જાતિસંપન્ન નો બલસંપન્ન. એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ "જાતિસંપન્ન નો બલસંપન્ન" આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા ।૪।

કન્થકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) જાતિસંપન્ન નો રૂપ સંપન્ન, (૨) રૂપસંપન્ન નો જાતિસંપન્ન, (૩) જાતિસંપન્ન અને રૂપ-

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः ४। (८) एवं कुलसम्पन्नेन च बलसम्पन्नेन च ४, (७) कुलसम्पन्नेन च रूपसम्पन्नेन च ४। (८) कुलसम्पन्नेन च जयसम्पन्नेन च ४, (९) एवं बल-सम्पन्नेन च रूपसम्पन्नेन च ४, (१०) बलसम्पन्नेन च जयसम्पन्नेन च ४, सर्वत्र पुरुषजातानि प्रतिपक्षः। (११)

---

३ नो जातिसंपन्न नो रूपसंपन्न ४ इसी तरहसे पुरुष जात भी चार प्रकार के कहे गये हैं जैसे—जातिसंपन्न नो रूप संपन्न १ इत्यादि ४ (५)

पुनश्च—कन्थक चार प्रकार के कहे गये हैं जैसे—जाति संपन्न नो जय संपन्न १ इत्यादि ४ इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं जैसे—जातिसंपन्न नो जयसंपन्न इत्यादि ४–(६) इसी प्रकार से कुल संपन्न और बल संपन्न पद से चतुर्भङ्गी बना लेना चाहिये (७) इसी तरह से कुलसंपन्न और रूपसंपन्न पदसे चतुर्भङ्गी बना लेना चाहिये (८) इसी तरहसे कुलसंपन्न और जयसंपन्न पदसे चतुर्भङ्गी बना लेना चाहिये (९) इसी तरहसे बलसम्पन्न और रूपसम्पन्न पदसे भी चतुर्भङ्गी बना लेना चाहिये (१०) इसी तरह से बल सम्पन्न और जय सम्पन्न पदसे भी चतुर्भङ्गी बना लेना चाहिये (११) यहां सब

સંપન્ન (૪) નો જાતિસંપન્ન નો રૂપસંપન્ન એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ "જાતિસંપન્ન નો રૂપસંપન્ન" આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા. (૫)

કન્થકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) જાતિસંપન્ન નો જયસંપન્ન ઈત્યાદિ ચાર પ્રકાર સમજવા. એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ "જાતિ-સંપન્ન નો જયસંપન્ન" ઈત્યાદિ ચાર પ્રકાર સમજવા. ।૬।

એજ પ્રમાણે કુલસંપન્ન અને બલસંપન્ન પદો વાપરીને પણ ચતુર્ભંગી બનાવી લેવી. ।૭।

એજ પ્રમાણે કુલસંપન્ન અને રૂપસંપન્ન આ બે પદો વાપરીને પણ ચાર ભાંગા કહેવા જોઈએ. ।૮।

એજ પ્રમાણે કુલસંપન્ન અને જયસંપન્ન, આ બે પદો વાપરીને પણ ચાર ભાંગા બનાવવા જોઇએ. ।૯।

એજ પ્રમાણે બલસંપન્ન અને રૂપસંપન્ન આ બે પદોના યોગથી દસમી ચતુર્ભંગી બનાવવી જોઈએ ।૧૦।

એજ પ્રમાણે બલસંપન્ન અને જયસંપન્નના યોગથી અગિયારમી ચતુ-ર્ભંગી બનાવવી જોઇએ. ।૧૧।

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-रूपसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-रूपसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः ४। (१२)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-सिंहतया नामैको निष्क्रान्तः सिंहतया विहरति १, सिंहतया नामैको निष्क्रान्तः शृगालतया विहरति २ शृगालतया नामैको निष्क्रान्तः सिंहतया विहरति ३, शृगालतया नामैको निष्क्रान्तः शृगालतया विहरति ४। (१३) ॥ सू०३० ॥

टीका—"चत्तारि कंथगा" इत्यादि—कन्थकजातीया अश्वविशेषाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः-कश्चिदश्वः आकीर्णः-पूर्वं वेगादिगुणैर्युक्तत्वाज्जातिमान् स

में प्रतिपक्ष दृष्टान्तके-दार्ष्टान्तरूप पुरुष जात कहना चाहिये, पुनश्च-कन्थक चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-रूपसंपन्न नो जयसंपन्न १ इत्यादि ४ भङ्ग इसी प्रकार से पुरुषजात भी चार कहे गये हैं जैसे-रूप सम्पन्न नो जय सम्पन्न इत्यादि ४ भङ्ग (१२)

पुरुषजात चार कहे गये हैं जैसे-सिंह रूपसे निकलकर सिंह रूपसे विहार करनेवाला १ सिंह रूपसे निकलकर श्रृगाल रूपसे विहार करनेवाला २ श्रृगाल रूपसे निकलकर सिंहरूप से विहार करनेवाला ३ और श्रृगाल रूपसे निकलकर श्रृगाल रूपसे ही विहार करनेवाला ४(१३)

टीकार्थ-इस ३० वे सूत्रमें ये पूर्वोक्त १३ सूत्र हैं इनमें कन्थकके प्रकारके साथ पुरुष प्रकारकी साम्यता प्रदर्शित की गई है अतः प्रथम सूत्रगत

એજ પ્રમાણે 'રૂપ સંપન્ન નો જયસંપન્ન' ઇત્યાદિ ચાર ભાંગાવાળી બારમી ચતુર્ભંગી પણ સમજી લેવી. ।૧૨।

દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષ સૂત્રમાં પણ આ પ્રકારની જ બાર ચતુર્ભંગી સમજી લેવી જોઈએ

પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—

(૧) સિંહ રૂપે (ગૃહસ્થાવાસમાંથી) નીકળીને સિંહ રૂપે વિહાર કરનાર, (૨) સિંહરૂપે નીકળીને શિયાળ રૂપે વિહાર કરનાર, (૩) શિયાળ રૂપે નીકળીને સિંહરૂપે વિહાર કરનાર અને (૪) શિયાળ રૂપે નીકળીને શિયાળ રૂપે જ વિહાર કરનાર ।૧૩।

ટીકાર્થ—આ ૩૦ માં સૂત્રમાં ચાર ભાંગાવાળા ઉપર્યુક્ત ૧૩ સૂત્રો આપવામાં આવ્યા છે તે સૂત્રો દ્વારા કન્થકના પ્રકારોની સાથે પુરુષ પ્રકારોની સામ્યતા

पश्चादपि आकीर्णो भवति। इति प्रथमः।१। तथा-एकः पूर्वमाकीर्णः पश्चात्तु खलुङ्कः-अविनीतः=विस्मृतशिक्षो भवति। इति द्वितीयः।२। तथा-एकः पूर्वं खलुङ्कः सन्नपि पश्चात् स आकीर्णः-शिक्षकशिक्षया विनयवेगादिगुणसम्पन्नो भवति। इति तृतीयः।३। तथा-एकः पूर्वमपि खलुङ्कः पश्चादपि खलुङ्क एव भवतीति चतुर्थः।४।(१)

जो चार प्रकारके कन्थक कहे गये हैं उनका स्पष्टार्थ इस प्रकार से है- कन्थक जातीय अश्व विशेष होता है इनमें कोई एक कन्थक अश्व ऐसा होता है जो पहिले भी वेगादि गुणोंसे युक्त होनेके कारण आकीर्ण जातिवाला होता है, और पीछे भी वह आकीर्ण ही बना रहता है १ तथा-कोई एक कन्थक अश्व ऐसा होता है जो पहिले तो आकीर्ण वेगादि गुणोंसे युक्त होनेके कारण जातिवाला होता है और बादमें वह खलुङ्क-अविनीत हो जाता है-विस्मृत शिक्षावाला हो जाता है २ तथा कोई एक कन्थक अश्व ऐसा होता है कि पहिले तो वह खलुङ्क-अविनीत होता है और बादमें अश्व शिक्षक की शिक्षासे विनय वेग आदि गुणोंसे सम्पन्न हो जाता है और कोई एक कन्थक अश्व ऐसा होता है जो पहिले भी खलुङ्क-अविनीत होता है और बादमें भी खलुङ्क-अविनीत ही बना रहता है ४ इस प्रकारके ये प्रथम सूत्रके चार भङ्ग हैं इसी प्रकारसे पुरुषजात भी जो चार कहे गये हैं-उनका सारांश

પ્રકટ કરવામાં આવી છે. કન્થક જાતિનો એક અશ્વવિશેષ હોય છે. તે અશ્વ સાથે પુરુષોની અહીં જુદી જુદી સરખામણી કરી છે.

પહેલા સૂત્રમાં જે ચાર પ્રકારના કન્થક કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે સમજવું—(૧) કોઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ વેગાદિ ગુણોથી યુક્ત હોવાને કારણે આકીર્ણ જાતિવાળો હોય છે અને પાછળથી પણ આકીર્ણ જ ચાલુ રહે છે.

(૨) કોઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે પહેલાં વેગાદિ ગુણોથી યુક્ત હોવાને કારણે આકીર્ણ-જાતિવાળો હોય છે, પણ પાછળથી ખલુંક (અવિ. નીત અથવા વિસ્મૃત શિક્ષાવાળો) થઈ જાય છે (૩) કોઈ એક કન્થક (અશ્વ) એવો હોય છે કે જે પહેલાં તો ખલુંક (અવિનીત) હોય છે, પણ પાછળથી અશ્વપાલની તાલીમ મળવાથી વિનય, વેગ આદિ ગુણોથી સંપન્ન થઈ જાય છે (૪) કોઈ એક કન્થક અશ્વ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ ખલુંક (અવિનીત) હોય છે અને પાછળથી પણ અવિનીત જ ચાલુ રહે છે.

अथ पुरुषदार्ष्टान्तिकमाह—

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—एवमेव—कन्थकवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः—कश्चित् पुरुष· आकीर्णः—पूर्वं विनयादिगुणैर्व्याप्तो भवति, स पश्चादपि आकीर्णः=तैः सम्पन्न एव भवति । इति प्रथमः । १ । तथा—एकः पूर्वमाकीर्णः सन्नपि पश्चात् खलुङ्कः—अविनीतो भवति, इति द्वितीयः । २ । तथा—एकः पूर्वं खलुङ्कः—अविनीतः सन्नपि पश्चाद् आकीर्णः= विनयादिगुणव्याप्तो भवति । इति तृतीयः । ३ । तथा—एकः पूर्वमपि खलुङ्कः पश्चादपि खलुङ्क एव तिष्ठतीति चतुर्थः । ४ । इत्याशयेनाऽऽह—" चउभंगो " इति—उक्तक्रमेण चतुर्भङ्गी बोध्या । १ ।

पुनः कन्थकदृष्टान्तसूत्रम्—

" चत्तारि कंथगा " इत्यादि—कन्थकाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एकः—कश्चिदश्वआकीर्णः—पूर्वं विनयवेगादिगुणसम्पन्नः पश्चादपि स आकीर्णतया—तैर्गु

भी ऐसा ही है—कि कोई पुरुष तो ऐसा होता है कि पहिले भी विनयादि गुणोंसे रहित होता है और बाद में भी वह विनयादि गुणोंसे युक्त बना रहता है १ तथा—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो—आकीर्ण होता है विनयादि गुणोंसे सहित होता है पर बादमें वह खलुङ्क—अविनीत हो जाता है २, तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो खलुङ्क अविनीत होता है पर बादमें आकीर्ण विनयादि गुणों से सहित हो जाता है ३, और कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले भी और बादमें भी खलुङ्क अविनीत का अविनीत ही बना रहता है १

द्वितीय सूत्रमें जो कन्थक चतुर्भंगी कही गई है उसका सारांश ऐसा है—कि कोई एक अश्व ऐसा होता है जो पहिले विनय वेगादि

દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષ સૂત્રમાં પણ એજ પ્રકારના ચાર ભાંગા બને છે તે ચારે ભાંગાનુ હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—

(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ વિનયાદિ ગુણોથી યુક્ત હોય છે અને પછી પણ વિનયાદિ ગુણોથી યુક્ત જ રહે છે. (૨) કોઇ એક પુરુષ પહેલા તો આકીર્ણ (વિનયાદિ ગુણોથી સંપન્ન) હોય છે પણ પાછળથી ખલુંક (વિનયાદિ ગુણોથી રહિત) થઇ જાય છે. (૩) કોઈ એક પુરુષ પહેલા ખલુંક (વિનયાદિ ગુણોથી રહિત) હોય છે, પણ પાછળથી આકીર્ણ (વિનયાદિ ગુણોથી યુક્ત) બની જાય છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ પહેલાં પણ ખલુંક (અવિનીત) હોય છે અને પછી પણ ખલુંક (અવિનીત)જ ચાલુ રહે છે.

બીજા સૂત્રના કન્થકના જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ આ

णैर्व्याप्ततया विहरति—विचरति । इति प्रथमः । १ । तथा—एकः आकीर्णः सन्नपि=वेगविनयादिगुणसम्पन्नोऽपि खलुङ्कतया—अविनीततया विहरति, इति द्वितीयः । २ । तथा—एकः खलुङ्कः—अविनीतः सन्नपि आकीर्णतया—आरोहकगुणाद् वेगादिगुणव्याप्ततया विहरति, इति तृतीयः । ३ । तथा—एकः खलुङ्कः—अविनीतः खलुङ्कतया—अविनीततया विहरति । इति चतुर्थः । ४ । (२)

अथ पुरुषजातदार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवामेव=अनन्तरोक्तकन्थकवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पूर्वं विनयशीलादिगुणैराकीर्णः=व्याप्तः सन् पश्चादपि तैर्गुणैराकीर्णतया—व्याप्ततया विहरति । इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा—एक आकीर्णः खलुङ्कतया विहरति । इति द्वितीयः । २ ।

गुणोंसे सम्पन्न होता है और इसी तरह से वह चाल भी चलता है तथा कोई एक अश्व ऐसा होताहै जो विनय वेगादि गुणोंसे युक्त होता है पर चलनेमें अविनीत जैसी चालवाला होता है २ तथा कोई एक अश्व ऐसा होता है जो अविनीत होता हुआ भी चढनेवाले पुरुष के गुणके अनुसार अच्छी चाल से चलताहै ३ तथा कोई एक अश्व ऐसा होता है जो अविनीत ही होता है और अविनीत जैसी ही चाल से चलता है ४ इसी प्रकारसे कोई एक पुरुष ऐसा होताहै जो विनयशील आदि गुणों से सहित होता है और उसी तरह भी चाल चलता है, तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो विनयशील आदि गुणोंसे युक्त हुआ भी अविनीत की जैसी चाल चलता

પ્રકારનું છે—(૧) કોઇ એક કન્થક અશ્વ એવો હોય છે કે જે વિનય, વેગ આદિ ગુણોથી યુક્ત હોય છે અને તેની ચાલ પણ વિનીત હોય છે. (૨) કોઇ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે વિનય, વેગ આદિ ગુણોથી તો યુક્ત હોય છે પણ તેની ચાલ અવિનીત જેવી હોય છે (૩) કોઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે અવિનીત હોવા છતાં પણ તેના પર સવાર થનાર પુરુષના ગુણ નુસાર સારી ચાલ ચાલનારો હોય છે. (૪) કોઇ એક કન્થક અશ્વ અવિનીત પણ હોય છે અને અવિનીત જેવી ચાલ ચાલનારો પણ હોય છે.

એજ પ્રમાણે દાર્ષ્ટન્તિક પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર સમજવા—(૧) કોઇ એક પુરુષ વિનય, શીલ આદિ ગુણોથી યુક્ત હોય છે અને તેની ચાલ પણ એજ પ્રકારની હોય છે (૨) કોઇ એક પુરુષ વિનય, શીલ આદિ ગુણોથી યુક્ત હોવા છતાં પણ અવિનીતના જેવી તેની ચાલવાની ઢબ હોય

तथा-एकः खलुङ्क आकीर्णतया विहरति, इति तृतीयः ।३। तथा-एकः खलुङ्कः खलुङ्कतया विहरति । इति चतुर्थः ।४। इत्याशयेनाऽऽह-" चउभंगो " इति-प्रदर्शितक्रमेण चतुर्भङ्गी वोध्या । (२)

पुनः कन्थकदृष्टान्तसूत्रम्—

" चत्तारि कंथगा " इत्यादि—कन्थकाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः १, कुलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि कुलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो कुलसम्पन्नः ४। एते सुगमाः । (३)

अथ पुरुषजातदार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—एवमेव-कन्थकवदेव चत्वारि

है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होताहै अविनीत आहुभी विनयशीलादि गुणोंसे चाल चलता है३ और कोई एक पुरुष ऐसा भी होता है अविनीत होता हुआ अविनीत की ही चाल चलता है ४ (२)

तृतीय सूत्र कथित जो कन्थक चतुर्भंगी है-उसका सारांश ऐसा हैं-कोई एक कन्थक अश्व ऐसा होता है जो जातिसम्पन्न हुआ भी कुल सम्पन्न नहीं होता है १, कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो कुल सम्पन्न होने पर भी जातिसम्पन्न नहीं होता है २ कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो जाति सम्पन्न भी होता है और कुल सम्पन्न भी होता है ३ कोई एक अश्व ऐसा होता है जो न जाति सम्पन्न होता है और न कुल सम्पन्न भी होता है ४ इसी प्रकारसे कोई एक

છે (૩) કોઇ એક પુરુષ વિનય, શીલ આદિ ગુણોથી રહિત હોવા છતાં પણ તેની ચાલવાની ઢબ વિનયશીલાદિ ગુણસંપન્ન હોય છે. (૪) કોઈ પુરુષ વિનય, શીલાદિ ગુણોથી યુક્ત પણ હોતો નથી અને વિનીતના જેવી ચાલથી ચાલતો પણ નથી.

ત્રીજા સૂત્રમાં કન્થકના જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે તેનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઇ એક કન્થક અશ્વ એવો હોય છે કે જે જાતિસંપન્ન હોય છે પણ કુલસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઇ એક કન્થક અશ્વ કુલસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ એક કન્થક અશ્વ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને કુલસંપન્ન પણ હોય છે અને (૪) કોઇ એક કન્થક અશ્વ જાતિસંપન્ન હોતો નથી અને કુલસંપન્ન પણ હોતો નથી. એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઇ પુરુષ

पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः १। एवं चतुर्भङ्गी बोध्या। (३)

पुनः कन्थकदृष्टान्तसूत्रम्—

" चत्तारि कन्थगा " इत्यादि—चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्नः १, बलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि बलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो बलसम्पन्नः। ४। एते सुगमाः (४)

अथ पुरुषजातदार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—एवमेव-अनन्तरोक्तकन्थकवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो बलस-

---

मनुष्य ऐसा होता है जो जाति सम्पन्न हुआ भी कुलसम्पन्न नहीं होता है १, कोई एक कुलसम्पन्न होने पर भी जाति सम्पन्न नहीं होता है २, कोई एक जाति सम्पन्न भी होता है और कुल सम्पन्न भी होता है ३ और कोई ऐसा होता है जो न जातिसम्पन्न होता है और न कुलसम्पन्न भी होता है (४)

चतुर्थ सूत्रगत जो कन्थक चार प्रकार कहे गये हैं उनका सारांश ऐसा हैं कि कोई कन्थक ऐसा होता है, जो जाति सम्पन्न होने पर भी बल सम्पन्न नहीं होता है १, कोई एक ऐसा होता है जो बलसम्पन्न होने पर भी जातिसम्पन्न नहीं होता है २, कोई एक ऐसा होता है जो जाति सम्पन्न भी होता है और बल सम्पन्न भी होता है ३, तथा कोई एक कन्थक ऐसा भी होता है जो न जातिसम्पन्न होता है और

જાતિસંપન્ન હોય છે પણ કુલસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઇ પુરુષ કુલસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ પુરુષ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને કુલસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઈ પુરુષ જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને કુલસંપન્ન પણ હોતો નથી

ચોથા સૂત્રમાં કન્થક અશ્વના જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) કોઇ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે જાતિસંપન્ન હોય છે પણ બલસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઇ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે બલસંપન્ન હોય છે, પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઇ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને બલસંપન્ન પણ હોય છે. (૪)

सम्पन्नः १, एवं-बलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २। एको जातिसम्पन्नोऽपि बलसम्पन्नोऽपि ३। एको नो जातिसम्पन्नो नो बलसम्पन्नः ।४। (४)

पुनः कन्थकदृष्टान्तसूत्रम्—

"चत्तारि कंथगा" इत्यादि—कन्थकाश्चत्वारःप्रज्ञप्ताः, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १। रूपसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २। एको जातिसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३। एको नो जातिसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः ।४। (५)

अथ पुरुषजातदार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव=अनन्तरोक्तकन्थकवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १। रूपसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २। एको जातिसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३। एको नो जातिसम्पन्नो नो-रूपसम्पन्नः ।४। (५)

न बल सम्पन्न भी होता हैं इसी प्रकार से पुरुष प्रकार भी घटित कर लेना चाहिये (४)

पंचम सूत्रगत जो कन्थक प्रकार कहे गये हैं वे इस प्रकार से हैं कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो जाति सम्पन्न हुआ भी रूप सम्पन्न नहीं होता है १, रूप सम्पन्न हुआ भी कोई एक जाति सम्पन्न नहीं होता २ कोई एक दोनों प्रकार से सम्पन्न होता है और कोई अश्व ऐसा होता है जो न जाति संपन्न होता है और न रूप सम्पन्न ही होता है ४ इसी प्रकारकी चतुर्भंगी पुरुष दार्ष्टान्तमें भी घटित कर लेनी चाहिये (५)

કોઇ એક કન્થક અશ્વ એવો હોય છે કે જે જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને બલસંપન્ન પણ હોતો નથી એજ પ્રમાણે દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના ચાર પ્રકારો પણ સમજી લેવા.

પાંચમાં સૂત્રમાં કન્થકના જે ચાર પ્રકારો કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) કોઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે જાતિસંપન્ન હોવા છતાં રૂપ સંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ એક કન્થક રૂપસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ એક કન્થક જાતિ અને રૂપ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે અને (૪) કોઈ એક કન્થક જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી એજ પ્રમાણે દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના પણ ચાર પ્રકારો સમજવા.

पुनः कन्थकदृष्टान्तसूत्रम्—

"चत्तारि कंथगा" इत्यादि—कन्थकाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः १, जयसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि जयसम्पन्नोऽपि ३। एको नो जातिसम्पन्नो नो जयसम्पन्नः ४। एते सुगमाः, नवरं—जयः—पराभिभवः। (६)

अत्र पुरुषजातदार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव—अनन्तरोक्तकन्थकवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः १। जयसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २। एको जातिसम्पन्नोऽपि जयसम्पन्नोऽपि ३। एको नो जातिसम्पन्नो नो जयसम्पन्नः ४ (६)

छठे सूत्रमें जो कन्थक चतुर्भंगी कही गई है वह इस प्रकार से है जैसे कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो जाति सम्पन्न हुआ भी जय सम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्थक जय सम्पन्न होने पर भी जाति सम्पन्न नहीं होता है २, कोई एक कन्थक उभय सम्पन्न होता है ३ और कोई कन्थक ऐसा भी होता है जो जाति सम्पन्न ही होता है ४, परका अभिभव करना इसका नाम जय है (६) इसी प्रकारसे पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं—जैसे कोई एक पुरुष जाति सम्पन्न होता हुआ भी जय सम्पन्न नहीं होता है. १ कोई एक जयसम्पन्न होता हुआ भी जाति सम्पन्न नहीं होता है २ कोई एक जाति और जय इन दोनोंसे भी सम्पन्न होताहै ३ और कोई एक पुरुष जाति और जय इन दोनों से भी सम्पन्न नहीं होता है ४ (६)

છઠ્ઠા સૂત્રમાં કન્થકના જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) કોઇ એક કન્થક જાતિસંપન્ન હોય છે પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઇ એક કન્થક જયસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ એક કન્થક જાતિ અને જય બન્નેથી સંપન્ન હોય છે અને (૪) કોઇ એક કન્થક જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને જયસંપન્ન પણ હોતો નથી એજ પ્રમાણે દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—

(૧) કોઈ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ પુરુષ જયસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઇ પુરુષ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને જયસંપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઇ પુરુષ જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને જયસંપન્ન પણ હોતો નથી.

"एवं कुलसंपण्णेण य बलसंपण्णेण य ४" इति–एवं–यथा–जातिसम्पन्नेन जयसम्पन्नेन च सह चतुर्भङ्गी प्रोक्ता तथा–कुलसम्पन्नेन च बलसम्पन्नेन च चतुर्भङ्गी भणनीया, तथाहि–चत्वारः कन्थकास्तद्वत् चत्वारि पुरुषजातानि च भवन्ति, तद्यथा–कुलसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्नः १, बलसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः २, एकः कुलसम्पन्नोऽपि बलसम्पन्नोऽपि, ३, एको नो कुलसम्पन्नो नो बलसम्पन्नः । ४ । (७)

"कुलसंपण्णेण य रूवसंपण्णेण य" इति—कुलसम्पन्नेन रूपसम्पन्नेन च सह चतुर्भङ्गी प्राग्वद्भणनीयाः, तथाहि—चत्वारः कन्थकाः–तद्वत् चत्वारि पुरु-

---

सातवें सूत्रमें जैसी जातिसम्पन्न और जयसम्पन्न पदोंको जोडकर छठे सूत्रमें चतुर्भंगी बनाई गई है वैसी है चतुर्भंगी कुलसम्पन्न और बलसम्पन्न इन दो पदोंको जोड़कर बनाई गई है, जैसे कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो कुलसम्पन्न होता हुआ भी बलसम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्थक बलसम्पन्नहुआ भी कुलसम्पन्न नहीं होता २ कोई एक कन्थक उभयसम्पन्न भी होता है ३ और कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो न कुलसम्पन्न होता है और न बलसम्पन्न होता ४ इसी प्रकारसे पुरुषों में भी कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो कुलसम्पन्न होता हुआ भी बलसम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक ऐसा होता है जो बल सम्पन्न होने पर भी कुल सम्पन्न नहीं होता २ कोई एक ऐसा होता है जो उभयसम्पन्न होता है ३ और कोई एक ऐसा भी होता है जो उभय सम्पन्न नहीं भी होता है ४ (७)

સાતમા સૂત્રમાં કન્થક–અશ્વના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક કન્થક કુલસંપન્ન હોય છે, પણ બલસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ એક કન્થક બલસંપન્ન હોય છે, પણ કુલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ એક કન્થક કુલસંપન્ન પણ હોય છે અને બલસંપન્ન પણ હોય છે અને (૪) કોઈ એક કન્થક કુલસંપન્ન પણ હોતો નથી અને બલસંપન્ન પણ હોતો નથી. એજ પ્રમાણે દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—

(૧) કોઈ પુરુષ કુલસંપન્ન હોય છે, પણ બલસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ પુરુષ બલસંપન્ન હોય છે, પણ કુલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ કુલસંપન્ન પણ હોય છે અને બલસંપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઈ કુલસંપન્ન પણ હોતો નથી અને બલસંપન્ન પણ હોતો નથી.

पजातानि भवन्ति, तद्यथा—कुलसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १, रूपसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः । २ । एकः कुलसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३। एको नो कुलसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः ४। (८)

"कुलसंपण्णेण य जयसंपण्णेण य" इति—कुलसम्पन्नेन जयसम्पन्नेन च सह भाग्यचतुर्भङ्गी वाच्या, तथाहि—चत्वारः कन्थकास्तद्वच्चत्वारि पुरुषजातानि

आठवें सूत्रमें जो कुलसम्पन्न और रूप सम्पन्न पदोंको जोड़कर चतुर्भंगी प्रकट की गई है वह इस प्रकारसे है—जैसे कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो कुल सम्पन्न होता हुआ भी रूप सम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो रूप सम्पन्न होता हुआ भी कुलसम्पन्न नहीं होता है २ कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो उभय सम्पन्न होता है ३ और कोई एक कन्थक इन दोनों से भी रहित होता है ४ इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार होते हैं जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो कुल सम्पन्न होता हुआ भी रूप सम्पन्न नहीं होता है ४ इत्यादि (८)

९ वें सूत्रमें जो कुलसम्पन्न और जय सम्पन्न पदोंको जोडकर चतुर्भंगी बनाई गई है वह इस प्रकार से है जैसे—कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो कुल सम्पन्न होता हुआ भी जय सम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्थक जय सम्पन्न होने पर भी कुलसम्पन्न नहीं होता है २

આઠમાં સૂત્રમા કુલસંપન્ન અને રૂપસંપન્નના યોગથી કન્થક વિષયક જે ચાર ભાંગા કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) કોઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે કુલસંપન્ન હોવા છતાં પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ એક કન્થક રૂપસંપન્ન હોય છે, પણ કુલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ એક કન્થક કુળ અને રૂપ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે અને (૪) કોઈ એક કન્થક કુળ અને રૂપ બન્નેથી રહિત હોય છે.

એજ પ્રમાણે દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર સમજવા—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે કુળસંપન્ન હોય છે, પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી. બાકીના ત્રણ પ્રકારો જાતે જ સમજી લેવા.

નવમાં સૂત્રમાં કુલસંપન્ન અને જયસંપન્નના યોગથી કન્થકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે કુલસંપન્ન હોય છે, પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ જયસંપન્ન હોય

च भवन्ति, तद्यथा–कुलसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः १, जयसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः । २ । एकः कुलसम्पन्नोऽपि जयसम्पन्नोऽपि ३। एको नो कुलसम्पन्नो नो जयसम्पन्नः । ४ । (९)

" एवं बलसंपन्नेण य रूवसंपन्नेण य " इति—एवं–यथा कुलसम्पन्नेन जयसम्पन्नेन च सह चतुर्भङ्गी प्रोक्ता, तथा बलसम्पन्नेन च रूपसम्पन्नेन च चतुर्भङ्गी भणितव्या, तथाहि–चत्वारः कन्थकास्तद्वत् चत्वारि पुरुषजातानि च भवन्ति, तद्यथा–बलसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १, रूपसम्पन्नो नामैको नो बल-

---

कोई एक कन्थक उभय सम्पन्न होता है ३ और कोई एक कन्थक इन दोनोंसे भी सम्पन्न नहीं होता है ४ इसी प्रकारसे इन चार भंगोंको पुरुषमें भी योजित करके कहना चाहिये (९)

१० वें सूत्रमें जो चतुर्भंगी बल और रूप इन दो पदोंकी सम्पन्नता करके बनाई गई है वह इस प्रकारसे है–जैसे कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो बल सम्पन्न होने पर भी रूप सम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्थक रूप सम्पन्न होने पर भी बल सम्पन्न नहीं होता है कोई एक उभय सम्पन्न होता है ३ और कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो न बल सम्पन्न होता है और न रूपसम्पन्न ही होता है तो जैसे ये चार प्रकारके कन्थक कहे गये हैं। इसी प्रकारसे पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं जैसे–कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो बल सम्पन्न होने पर भी रूप सम्पन्न नहीं होता है तथा कोई एक ऐसा होता है जो रूप

છે પણ કુળસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઇ કુળ અને જય બન્નેથી સંપન્ન હોય છે અને (૪) કોઈ કન્થક કુળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને જયસંપન્ન પણ હોતો નથી.

દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના પણ આ પ્રકારના જ ચાર ભાંગા (પ્રકારો) સમજી લેવા જોઈએ.

દસમાં સૂત્રમાં બલ અને રૂપ, આ બન્ને પદોના યોગથી કન્થક વિષયક જે ચતુર્ભંગી કહી છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) કોઇ એક કન્થક બલસંપન્ન હોય છે પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ એક રૂપસંપન્ન હોય છે પણ બલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઇ એક કન્થક ઉભયસંપન્ન હોય છે. (૪) કોઇ એક કન્થક બલસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી એજ પ્રમાણે પુરુષોના નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—

(૧) કોઇ એક પુરુષ બલસંપન્ન હોય છે પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી.

सम्पन्नः २, एको वलसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३, एको नो वलसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः ४। (१०)

"वलसंपन्नेण य जयसंपन्नेण य" इति-वलसंपन्नेन जयसंपन्नेन च सह पूर्ववच्चतुर्भङ्गी बोध्या, तथाहि-चत्वारः कन्यकास्तद्वच्चत्वारि पुरुपजातानि च भवन्ति, तद्यथा-वलसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः १, जयसम्पन्नो नामैको नो वलसम्पन्नः २, एको वलसम्पन्नोऽपि जयसम्पन्नोऽपि ३, एको नो वलसम्पन्नो नो जयसम्पन्नः।४। (११)

सम्पन्न होने पर भी वल सम्पन्न नहीं होता है २ शेष दो भङ्ग पूर्वोक्त रूपसे ही जान लेना चाहिये ४ (१०)

ग्यारहावे सूत्रमें जो "वल सम्पन्न और जय सम्पन्न" इन दो पदोंको जोडकर चतुर्भंगी वनाई गई है वह इस प्रकारसे है जैसे-कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो वल सम्पन्न हुआ भी जय संपन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्थक जय संपन्न हुआ भी वल संपन्न नही होता है २ तथा कोई एक कन्थक वल संपन्न भी होता है और जय संपन्न भी होता है ३ और कोई एक कन्थक न वल सम्पन्न होता है और न जय सम्पन्न होता है ४ इसी तरहसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो वलसम्पन्न होने पर भी जय सम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक ऐसा होता है जो जय सम्पन्न होने पर भी वल सम्पन्न नहीं होता है २ तथा कोई एक पुरुप ऐसा होता है जो वल सम्पन्न होता है और जय सम्पन्न भी होता है ३ और कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो न वल सम्पन्न

---

(२) કોઇ એક પુરુષ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ બલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ ઉભયસંપન્ન હોય છે અને (૪) કોઇ ઉભયથી રહિત હોય છે.

અગિયારમાં સૂત્રમાં બલસંપન્ન અને જયસંપન્નના યોગથી કન્થક વિષયક ચાર ભાંગા આ પ્રમાણે બને છે—(૧) કોઈ એક કન્થક બલસંપન્ન હોવા છતાં પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ એક કન્થક જયસંપન્ન હોય છે પણ બલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઇ એક કન્થક બળસંપન્ન પણ હોય છે અને જયસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઇ એક કન્થક બલસંપન્ન પણ નથી હોતો અને જયસંપન્ન પણ નથી હોતો.

એજ પ્રમાણે દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ બલસંપન્ન હોય છે, પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ જયસંપન્ન હોય છે પણ બલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઇ

'चत्तारि कंथगा' इत्यादि—चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-रूपसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः१, जयसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः२, एको रूपसम्पन्नोऽपि जयसम्पन्नोऽपि३, एको नो रूपसम्पन्नो नो जयसम्पन्नः ४। 'एवामेव चत्तारि पुरिसजाया' इत्यादि-एवमेव कन्थकवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-रूपसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः १, जयसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः २, एको रूपसम्पन्नोऽपि जयसम्पन्नोऽपि ३, एको नो रूपसम्पन्नो नो जयसम्पन्नः ४। (१२)

अथ प्रव्रजितमुद्दिश्य चतुर्भङ्गीमाह—"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः सिंहतया=सिंहसदृशतया-

---

होता है और न जय सम्पन्न होता है ४ इस तरहसे कन्थकोंके चतुर्भंगी की तरह पुरुष जात भी चार भङ्गोंवाले होते हैं (११)

१२ वें सूत्रमें जो कन्थक "रूप सम्पन्न नो जय सम्पन्न" आदि रूपसे चतुर्भंगी कही गई है वह इस प्रकारसे है-जैसे कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो रूप संपन्न तो होता है पर जय संपन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो जय सम्पन्न होता है पर रूप सम्पन्न नहीं होताहै २ कोई एक कन्थक ऐसा होताहै जो रूप सम्पन्न भी होता है और जय सम्पन्न भी होताहै३ तथा कोई एक कन्थक ऐसा भी होता है जो न रूप संपन्न होता है और न जय संपन्न ही होता है ४ इसी प्रकारके चार भङ्ग पुरुषोंकी चतुर्विधता होने में भी बना लेना चाहिये (१२)

अथ सूत्रकारने प्रव्रजित को लक्ष्यकर इस १३ वें सूत्रमें जो चतुर्भंगी बनाई है वह इस प्रकार से है-जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है,

---

બલસંપન્ન પણ હોય છે અને જયસપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઈ બલસંપન્ન પણ નથી હોતો અને જયસંપન્ન પણ નથી હોતો.

હવે બારમાં સૂત્રમાં "રૂપસપન્ન નો જયસંપન્ન" આદિ જે ચાર કન્થક પ્રકારો કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઇ એક અશ્વ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ જયસપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઇ એક અશ્વ જયસંપન્ન હોય છે પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ એક અશ્વ રૂપ સંપન્ન પણ હોય છે અને જયસંપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઈ એક અશ્વ રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી અને જયસંપન્ન પણ નથી હોતો.

આ કન્થકવિષયક ચાર ભાંગા જેવા જ પુરુષવિષયક ચાર ભાંગા પણ જાતે જ સમજી લેવા.

पराक्रमवृत्त्येत्यर्थः, गृहावासाद् निष्क्रान्तः प्रव्रजितः=निर्गतः सन् सिंहतया=पराक्रमवृत्त्यैव विहरति=उद्यतविहारेण विहरति। इति प्रथमः।१। तथा—एकः सिंहतया गृहावासाद् निष्क्रान्तः शृगालतया=शृगालसदृशतया शिथिलवृत्त्येत्यर्थः विहरति। इति द्वितीयः। २। तथा—एकः शृगालतया गृहावासाद् निष्क्रान्तः सन् सिंहतया विहरति। इति तृतीयः। ३। एकः शृगालतया गृहावासाद् निष्क्रान्तः शृगालतया विहरति। इति चतुर्थः।४। (१३) ॥ सू० ३० ॥

पूर्वं पुरुषाणां जात्यादि गुणैरश्वादिसाम्यमुक्तं, साम्प्रतमप्रतिष्ठानादीनामायामविष्कम्भादिप्रमाणेन साम्यमाह—

मूलम्—चत्तारि लोगे समा पण्णत्ता, तं जहा—अपइट्ठाणे नरए १, जंबुद्दीवे २, पालए जाणविमाणे ३, सव्वट्ठसिद्धे महा-

---

जो सिंहकी जैसी वृत्तिसे-पराक्रमवृत्ति से गृहावाससे निष्क्रान्त होता है और ऐसी ही वृत्तिसे वह विहार करता है १ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सिंहकी जैसी वृत्तिसे तो गृहावास से निष्क्रान्त होता पर वह शृगालकी जैसी वृत्तिसे–शिथिल वृत्तिसे–विहार करता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो शृगालकी जैसी वृत्तिसे शिथिलवृत्तिसे–गृहावास से निष्क्रान्त होता है पर वह सिंहकी जैसी वृत्तिसे विहार करता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो शृगालकी जैसी वृत्तिसे ही तो गृहावास से निष्क्रान्त (प्रव्रजित) होता है और शृगालकी जैसी वृत्तिसेही विहार करता है ४ (१३) ॥ सूत्र ३० ॥

---

૧૩ માં સૂત્રમાં સૂત્રકારે પ્રવ્રજિત પુરુષના ચાર પ્રકારોનું કથન કરતી જે ચતુર્ભંગી કહી છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—

(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સિંહના જેવી વૃત્તિથી પરાક્રમ વૃત્તિથી ગૃહાવાસમાંથી નીકળે છે–પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરે છે અને એવી જ વૃત્તિથી વિહાર કરે છે

(૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સિંહના જેવી વૃત્તિથી ગૃહાવાસમાંથી નીકળી જાય છે. પણ શિયાળના જેવી વૃત્તિથી (શિથિલ વૃત્તિથી) વિહાર કરે છે

(૩) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે શિયાળના જેવી વૃત્તિથી ગૃહાવાસમાંથી નીકળી જાય છે, પણ સિંહના જેવી વૃત્તિથી વિહાર કરે છે.

(૪) કોઈ એક પુરુષ શિયાળના જેવી વૃત્તિથી ગૃહાવાસમાંથી નીકળી જાય છે અને શિયાળના જેવી વૃત્તિથી જ વિહાર કરે છે. ॥ સૂ. ૩૦ ॥

विमाणे ४। चत्तारि लोगे समा सपक्खिं सपडिदिसिं पण्णत्ता, तं जहा–सीमंतए नरए १, समयक्खेत्ते २, उडुविमाणे ३, ईसीपब्भारा पुढवी ४ ॥ सू० ३१ ॥

छाया—चत्वारो लोके समाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अप्रतिष्ठानो नरकः १, जम्बूद्वीपो द्वीपः २, पालकं यानविमानं ३, सर्वार्थसिद्धं महाविमानम् । ४ । चत्वारो लोके समाः सपक्षं सप्रतिदिक् प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–सीमन्तको नरकः १, समयक्षेत्रम् २, उर्ध्वविमानम् ३ ईषत्प्राग्भारा पृथिवी ४ ॥ ३१ ॥

टीका—" चत्तारि लोगे " इत्यादि–लोके चत्वारः–चतुःसंख्यकाः पदार्थाः समाः–प्रमाणतः समानाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा=अप्रतिष्ठानः–तदाख्यो नरकः=नरकाऽऽवासः, स च सप्तमनरकपृथिव्यां काल–महाकाल–रौरव–महारौरवा-ऽप्रतिष्ठानानां पञ्चानां नरकाऽऽवासानां मध्यवर्ती योजनलक्षप्रमाणः १, तथा–जम्बूद्वीपो

इस प्रकारसे जात्यादि गुणोंको लेकर पुरुषोंकी समानता अश्वादिकोंके साथ कही अब सूत्रकार अप्रतिष्ठान आदिकोंकी समानता आयाम विष्कम्भ को लेकर प्रकट करते हैं—

" चत्तारि लोगे समा पण्णत्ता " इत्यादि सूत्र ३१ ॥

लोकमें ये चार पदार्थ प्रमाणकी अपेक्षा समान कहे गये हैं–उनके नाम इस प्रकारसे हैं–अप्रतिष्ठान नरक १ जम्बूद्वीप नामका द्वीप २ पालकयान विमान ३ और सर्वार्थ सिद्ध महाविमान ४

अप्रतिष्ठान नामका नरक–नरकावास–सप्तम नरक पृथिवी में जो पांच ये काल, महाकाल, रौरव, महारौरव और अप्रतिष्ठान नरकावास कहे गये हैं उनके मध्यमें है यह एक लाख योजनका प्रमाण-

---

આ પ્રકારે જાતિ આદિ ગુણોની અપેક્ષાએ અશ્વાદિકોની સાથે પુરુષની સમાનતાનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર અપ્રતિષ્ઠાન આદિકોની સમાનતા, આયામ, વિષ્કંભ આદિને અનુલક્ષીને પ્રકટ કરે છે—

" चत्तारि लोगे समा पण्णत्ता " ઈત્યાદિ—(૩૧)

લોકમાં આ ચાર સ્થાનો પ્રમાણની અપેક્ષાએ સમાન કહ્યા છે—(૧) અપ્રતિષ્ઠાન નરક, (૨) જંબૂદ્વીપ નામનો દ્વીપ, (૩) પાલકયાન વિમાન અને (૪) સર્વાર્થસિદ્ધ નામનું મહાવિમાન.

સાતમી પૃથ્વીમાં (નરકમા) નીચે પ્રમાણે પાંચ નરકાવાસો આવેલા છે. (૧) કાલ, (૨) મહાકાલ, (૩) રૌરવ, (૪) મહારૌરવ અને (૫) અપ્રતિષ્ઠાન. આ અપ્રતિષ્ઠાન નામનો નરકાવાસ ઉપરના પાંચે નરકાવાસોની મધ્યમાં આવેલો

द्वीपः २, तथा—पालकं—पालकदेवनिर्मितं सौधर्मेन्द्राधिष्ठितं यानविमानं—यात्यनेनेति यानं तच्च तद् विमानं च यानविमानं, यद्वा—यानाय=गमनाय विमानं यानविमानं, न तु शाश्वतम् ३, तथा—सर्वार्थसिद्धनामकं पञ्चानामनुत्तरविमानानां मध्यवर्ति विमानम् ४। एते चत्वारः प्रमाणतः समाः सन्ति ।

पुनः सीमन्तकनरकादयश्चत्वारः प्रमाणतः समाः सन्तीत्याह—

"चत्तारि लोगे" इत्यादि—लोके चत्वार—सीमन्तकनरकावासः सपक्षं-समानाः पक्षाः=पार्श्वाः पूर्वापरदक्षिणोत्तररूपा दिशो यस्मिन् तत् सपक्षम्= समानपार्श्वमित्यर्थः, 'सपक्खि' इत्यत्रानुस्वार इकारश्च प्राकृतत्वात्, तथा-सप्रतिदिक्—समानाः प्रतिदिशो—विदिशो यस्मिन् तत् सप्रतिदिक्=समानविदिगित्यर्थः, यद्वा—'सदृशाः पक्षैः सपक्षं, सदृशाः प्रतिदिग्भिः सप्रतिदिक्' इति विग्रहे सादृश्येऽव्ययीभावः, समासद्वयेऽपि क्रियाविशेषणत्वम्, तच्चात्यन्तसाम्यज्ञापनार्थम्। ततश्च सपक्षं सप्रतिदिक् यथा स्यात्तथा समाः=प्रमाणतस्तुल्याः

वाला है तथा—जम्बूद्वीप नामका द्वीप पालक विमान जो कि पालक देवके द्वारा निर्मित होता है और सौधर्मेन्द्र से अधिष्ठित होता है ऐसा यानविमान तथा—सर्वार्थ सिद्ध नामक विमान जो कि पांच अनुत्तर विमानोंके मध्यमें है वह—इस प्रकारसे ये प्रमाणकी अपेक्षा समान कहे गये हैं। पालक विमान शाश्वत नहीं होता है क्योंकि सौधर्मेन्द्र जब जाता है तब उसका निर्माण होता है.

पुनश्च—सीमन्तक नरक आदि चार भी प्रमाण की अपेक्षा सम कहे गये हैं उनके नाम इस प्रकारसे हैं—सीमन्तक १ समयक्षेत्र २उडु विमान ३ और ईषत्प्राग्भारापृथिवी(सिद्धशिला) ४ ये चारों सप्रतिदिक्

છે. તેનો વિસ્તાર એક લાખ યોજન પ્રમાણ કહ્યો છે. જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપનો વિસ્તાર પણ એક લાખ યોજન પ્રમાણ કહ્યો છે પાલક વિમાન પાલક દેવના દ્વારા નિર્મિત થાય છે અને સૌધર્મેન્દ્ર દ્વારા અધિષ્ઠિત હોય છે તેનો વિસ્તાર પણ એક લાખ યોજન પ્રમાણ કહ્યો છે સર્વાર્થસિદ્ધ નામનું વિમાન પાંચ અનુત્તર વિમાનોની મધ્યમાં છે તેનો વિસ્તાર પણ એક લાખ યોજન પ્રમાણ કહ્યો છે. પાલકયાન વિમાન શાશ્વત હોતું નથી, કારણ કે સૌધર્મેન્દ્ર જ્યારે જાય છે ત્યારે તેનું નિર્માણ થાય છે.

વળી સીમન્તક નરક આદિ ચાર સ્થાનો પ્રમાણની અપેક્ષાએ સરખાં કહ્યાં છે—તે ચારનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) સીમન્તક, (૨) સમય ક્ષેત્ર, (૩) ઉડુ વિમાન અને (૪) ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી, આ ચારે સપ્રતિદિક્ અને

प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-सीमन्तकः-तदाख्यो नरकः, स च प्रथमपृथिव्यां प्रथमप्रस्तटे पञ्चचत्वारिंशद्योजनशतसहस्रप्रमाणोऽस्ति १, तथा-समयक्षेत्रं-समयः-कालस्तदुपलक्षितं क्षेत्रं समयक्षेत्रं=मनुष्यक्षेत्रम् २, उर्ध्वविमानं-सौधर्मे प्रथमप्रस्तट एवेदमस्ति ३, ईषत्प्राग्भारा-ईषद्-अल्पो रत्नप्रभाद्यपेक्षया प्राग्भारः-उन्नतत्वादिरूपो यस्यां सेषत्प्राग्भारा पृथिवी । ४ । ॥ सू० ३१ ॥

अनन्तरमीषत्प्राग्भारा पृथिवी प्रोक्ता, सा चोर्ध्वलोके भवतीत्यूर्ध्वलोकप्रस्तावादिदमाह—

मूलम्—उड्ढलोगे णं चत्तारि बिसरीरा पण्णत्ता, तं जहा--पुढविकाइया, १, आउकायिका २, वणस्सइकाइया ३, उराला तसा पाणा ४ ।

अहोलोगे णं चत्तारि बिसरीरा पण्णत्ता, तं जहा--एवं चेव, एवं तिरियलोएवि । ॥ सू० ३२ ॥

और सपक्ष हैं । इनमें सीमन्तक नरकावास प्रथम पृथिवीमें प्रथम प्रस्तरमें है इसका प्रमाण ४५ लाख योजन प्रमाणवाला है यह पृथिवी रत्नप्रभा आदि पृथिवियोंकी अपेक्षा उन्नतता (ऊंचाई) आदि रूप प्राग्भारमें अल्प है इसलिये इसका " ईषत्प्राग्भारा " ऐसा नाम हुआ है ।'इन चारोंके पूर्व पश्चिम दक्षिण और उत्तर दिशारूप पक्ष समान हैं अर्थात् ये समान पार्श्ववाले हैं, इसलिये इन्हें सपक्ष ऐसा कहा गया है तथा ये समान विदिशावाले हैं इसलिये इन्हें सप्रतिदिक् कहा गया है ।सू०३१।

સપક્ષ છે. સીમન્તક નરકાવાસ પહેલી પૃથ્વી (નરક)ના પ્રથમ પ્રસ્તરમાં છે- તે ૪૫ લાખ યોજન પ્રમાણુ વિસ્તારવાળો છે.

મનુષ્યક્ષેત્રને સમયક્ષેત્ર કહે છે. કાળથી ઉપલક્ષિત હોવાને કારણે મનુષ્ય-ક્ષેત્રનું નામ સમયક્ષેત્ર પડયું છે.

આ સમયક્ષેત્રનો વિસ્તાર પણ ૪૫ લાખ યોજન પ્રમાણુ છે. ઉડુવિમાન સૌધર્મકલ્પના પહેલો પ્રસ્તરમાં રહેલું છે. તેનો વિસ્તાર પણ ૪૫ લાખ યોજન પ્રમાણુ છે. ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પણ ૪૫ લાખ યોજનના વિસ્તાર-વાળી છે આ પૃથ્વી રત્નપ્રભા આદિ પૃથ્વીઓ કરતાં ઊંચાઈ આદિ રૂપ પ્રાગ્ભારમાં અલ્પ હોવાને કારણે તેનું નામ " ઈષત્પ્રાગ્ભારા " છે. તે ચારેના પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશારૂપ પક્ષ સમાન છે-એટલે કે તે ચારે સમાન પાર્શ્વવાળા હોવાથી તેમને સપક્ષ કહેવામાં આવેલ છે. તથા તેઓ સમાન વિદિશાયુક્ત હોવાથી તેમને સપ્રતિદિક્ કહેવા માં આવેલ છે. સૂ. ૩૧

छाया—ऊर्ध्वलोके खलु चत्वारो द्विशरीराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पृथिवीकायिकाः १, अप्कायिकाः २, वनस्पतिकायिकाः ३, उदाराखसाः प्राणाः ४।

अधोलोके खलु चत्वारो द्विशरीराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एवमेव, एवं तिर्यग्लोकेऽपि ।॥ सू० ३२ ॥

टीका—"उड्ढलोगे णं" इत्यादि-ऊर्ध्वलोके खलु चत्वारः-चतुःसंख्यका द्विशरीराः-द्वे शरीरे येषां ते तथा, प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पृथिवीकायिकाः-पृथिव्येव कायो येषां ते तथा १, अप्कायिकाः २, वनस्पतिकायिकाः ३, उदाराः-स्थूलाः त्रसाः पञ्चेन्द्रियत्रसाः प्राणाः-प्राणिनः। अयं भावः केषांचित्-पृथिव्यब्वनस्पति

अनन्तर कथित ईपत्प्राग्भारा पृथिवी ऊर्ध्वलोकमें हैं इसलिये अब सूत्रकार ऊर्ध्वलोकके वर्णन से यह सूत्र कहते हैं—

उड्ढलोगे णं चत्तारि बिसरीरा इत्यादि ॥ सूत्र ३२ ॥

ऊर्ध्वलोकमें चार दो शरीरवाले कहे गये हैं-जैसे-पृथिवीकायिक १ अप्कायिक २ वनस्पतिकायिक ३ और उदारत्रसप्राण ४ ।

पुनश्च—अधोलोकमें चार दो शरीरवाले कहे गये हैं जैसे-पृथिवीकायिक १ आदि इसी तरहसे तिर्यग्लोकमें भी समझना चाहिये ।

दो शरीर जिनके होते हैं वे द्वि शरीर हैं इनमें पृथिवीकायिक पृथिवी ही हैं काय जिन्होंका वे पृथिवीकायिक १ इसी तरहसे अप्ही काय जिन्होंका वे अप्कायिक हैं २ वनस्पतिही है शरीर जिन्होंका वे वनस्पतिकायिक हैं-एवं पंचेन्द्रिय प्राणी स्थूल त्रस हैं । इस कथनका भाव

પહેલાના સૂત્રમાં જે ઇષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વીની વાત કરવામાં આવી તે ઇષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી ઉર્ધ્વલોકમાં છે તે સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર ઉર્ધ્વલોકનું ચાર સ્થાનકની અપેક્ષાએ કથન કરે છે—

"उड्ढलोगे णं चत्तारि बिसरीरा" ઇત્યાદિ ૩૨

ઉર્ધ્વલોકમાં નીચેના ચાર જીવોને બે શરીરવાળા કહ્યા છે.

(૧) પૃથ્વીકાયિક, (૨) અપ્કાયિક, (૩) વનસ્પતિકાયિક અને (૪) ઉદારત્રસપ્રાણ.

(૧) પૃથ્વીકાયિક આદિ ઉપર્યુક્ત ચાર પ્રકારે જ સમજવા. એજ પ્રમાણે તિર્યગ્લોકમાં પણ એજ ચાર જીવોને બે શરીરવાળા સમજવા.

જેમને બે શરીર હોય છે તેમને દ્વિશરીરી કહે છે. જેમાં પહેલા પૃથ્વીકાયિકો કહ્યા છે. પૃથ્વી જ છે કાય જેની એવા જીવોને પૃથ્વીકાયિક કહે છે અપ્ (જળ)જ છે કાય જેમની એવા જીવોને અપ્કાયિક કહે છે. વનસ્પતિ જ છે કાય જેમની એવા જીવોને વનસ્પતિકાયિક કહે છે. અને

कायिकानां स्थूलत्रसानां च पृथिव्यादिरूपं प्रथमं शरीरं भवति, जन्मान्तरभावि च मानुषं शरीरं द्वितीयम्, तेषां द्वितीयभवे सिद्धिगमनादिति, 'उदारा' इति विशेषणेन तेजोवायुरूपाः सूक्ष्मास्त्रसा निराकृताः, तेषामनन्तरभवे मानुषत्वाप्राप्त्या सिद्धिगतेरभावेन शरीरद्वयाधिकशरीरसम्भवात्। तथा-'उदारास्त्रसाः' इत्यनेन द्वीन्द्रियादित्रसानामुपस्थितावपि पञ्चेन्द्रिया एव त्रसा गृह्यन्ते, तेषामेव केषांचिदनन्तरभवे सिद्धिगमनात्, विकलेन्द्रियाणां त्वनन्तरभवे सिद्ध्यभावात्। तदुक्तम्—"विगला लभेज्ज विरइं ण हु किंचि लभेज्ज सुहुमतसा।"

ऐसा है—कितनेक जीवोंके-पृथिवीकायिकोंके अप्कायिकोंके वनस्पतिकायिकोंके और स्थूलत्रसोंके पृथिव्यादि रूप प्रथम शरीर तो होता ही है और द्वितीय शरीर जन्मान्तर भावी मनुष्य शरीर होता है क्योंकि ये द्वितीय भवमें सिद्धिमें गमन करते हैं। "उदार" पदसे तेजस्कायिक वायुकायिक रूप सूक्ष्मत्रस इनका निराकरण किया गया है क्योंकि अनन्तर भवमें मानुषत्वकी अप्राप्तिसे सिद्धि गतिकी प्राप्ति नहीं होनेके कारण शरीर इससे भी अधिक शरीर इनमें सम्भवित होते है। "उदारास्त्रसाः" इस कथनसे द्वीन्द्रियादिक त्रसोंकी उपस्थिति होने पर भी यहां पञ्चेन्द्रिय त्रस ही गृहीत हुए हैं क्योंकि इनमेंसे कितनेक त्रसोंका अनन्तरभवमें सिद्धि गतिमें गमन होता है। विकलेन्द्रियोंको तो अनन्तर भवमें भी सिद्धिगति प्राप्तिका अभाव रहताहै। उक्तं च "विगला लभेज्ज विरइं" विकलेन्द्रिय जीव अनन्तर भवमें मनुष्य

પંચેન્દ્રિય પ્રાણી સ્થૂલત્રસ છે આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-કેટલાક જીવોને પૃથ્વીકાયિકોને, અપ્કાયિકોને, વનસ્પતિકાયિકોને અને સ્થૂલત્રસોને પૃથ્વી આદિ રૂપ પ્રથમ શરીર તો હોય છે જ, અને બીજું શરીર જન્માન્તર ભાવી મનુષ્ય શરીર હોય છે, કારણ કે તેઓ બીજા ભવે સિદ્ધિમાં ગમન કરે છે "ઉદાર ત્રસ" આ પદના પ્રયોગ દ્વારા તેજસ્કાયિક અને વાયુકાયિક રૂપ સૂક્ષ્મ ત્રસનું નિરાકરણ કરવામાં આવ્યું છે, કારણ કે અનન્તર ભવમાં મનુષ્ય ભવની પ્રાપ્તિ ન થવાને લીધે સિદ્ધિગતિની પ્રાપ્તિ નહી થવાથી બે કરતાં પણ અધિક શરીરોનો તેમનામાં સદ્ભાવ હોઈ શકે છે "ઉદારા-ત્રસાઃ" આ પદના પ્રયોગ દ્વારા દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસોની ઉપસ્થિતિ હોવા છતાં પણ અહીં પંચેન્દ્રિય ત્રસો જ ગૃહીત થયા છે, કારણ કે એ ત્રસોમાંના કેટલાક ત્રસોનું અનન્તર ભવમાં સિદ્ધિગતિમાં ગમન થાય છે વિકલેન્દ્રિયોમાં (દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિયોમાં) તો અનન્તર ભવમાં પણ સિદ્ધિગતિની પ્રાપ્તિનો અભાવ જ રહે છે. કહ્યું પણ છે કે—

छाया—विकला लभेरन् विरतिं न खलु किञ्चित् लभेरन् सूक्ष्मत्रसाः।"
इति, अयं भावः-विकलेन्द्रिया अनन्तरभवे मानुषत्वप्राप्त्या विरतिं-संयमं प्राप्तुं शक्नुवन्ति, न तु सिद्धिम्, तथा-सूक्ष्मत्रसा अनन्तरभवे मानुषत्वाप्राप्त्या किञ्चिदपि=विरतिमपि प्राप्तुं न शक्नुवन्तीति।

भवकी प्राप्ति द्वारा संयमको पा सकते हैं पर वे सिद्धिगतिको नहीं पा सकते है तथा जो सूक्ष्मत्रस हैं वे अनन्तर भवमें मानुषत्वकी अप्राप्ति के कारण विरतिको भी नहीं पा सकते हैं। तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि कितनेक पृथिवीकायिक अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीव तथा स्थूल त्रसकायिक जीव जब अपनी गृहीत पर्यायका परित्याग करते हैं तो वे मनुष्य भवमें जन्म लेकर सिद्धिगतिकोभी प्राप्त कर सकते हैं परन्तु जो तैजस्कायिक जीव हैं और वायुकायिक जीव हैं वे उस पर्यायसे छुटकर अनन्तरभवमें मनुष्य भवमें नहीं उत्पन्न होते हैं अतः सिद्धिगतिकी प्राप्ति इन्हें हो ही नहीं सकतीहै तथा विकलेन्द्रिय जीव अनन्तर भवमें मनुष्य पर्याय प्राप्त कर सकते हैं पर वे भी सिद्धिगतिको प्राप्त नहीं कर सकते हैं इस तरह समझकर यह सूत्र लगाना चाहिये पृथिव्यादिकों में जो द्विशरीरता यहां प्रगट की गई है वह

"विगला लभेज्ज विरइं" ઇત્યાદિ. વિકલેન્દ્રિય જીવો અનન્તર ભવમાં મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ દ્વારા સંયમ પ્રાપ્ત કરી શકે છે, પણ તેઓ સિદ્ધિ ગતિને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તથા જે સૂક્ષ્મત્રસ છે, તે તો અનન્તર ભવમાં માનુષત્વની અપ્રાપ્તિને કારણે વિરતિ પણ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. આ સમસ્ત કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

કેટલાક પૃથ્વીકાયિક, અપ્કાયિક, વનસ્પતિકાયિક અને સ્થૂલત્રસકાયિક જીવો જ્યારે પોતાની ગૃહીત પર્યાયનો પરિત્યાગ કરે છે ત્યારે મનુષ્યભવમાં જન્મ લઈને સિદ્ધિ ગતિને પણ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. પરન્તુ તેજસ્કાયિક અને વાયુકાયિક જીવો જ્યારે પોતાની ગૃહીત પર્યાયનો પરિત્યાગ કરે છે ત્યારે મનુષ્યભવમાં ઉત્પન્ન થતાં નથી. તે કારણે તેમને સિદ્ધિગતિની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી વિકલેન્દ્રિય જીવો અનન્તર ભવમાં મનુષ્યપર્યાય પ્રાપ્ત કરી શકે છે, પણ તેઓ સિદ્ધિગતિને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, આ વાત ધ્યાનમાં લેવાથી આ સૂત્ર સમજવું સરળ પડશે

પૃથ્વીકાય આદિકોમાં જે દ્વિશરીરતા અહીં પ્રકટ કરવામાં આવી છે તે ઉપર્યુક્ત ભાવને ધ્યાનમાં લઈને જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે તે જીવોમાં

अनेनैव प्रकारेण अधोलोक-तिर्यग्लोकयोर्द्विशरीराश्चत्वारश्चत्वारो भवन्ति, तत्प्रतिपादनायाऽऽह-" अहोलोगे णं " इत्यादि स्पष्टम् । ॥सू० ३२ ॥

पूर्वं तिर्यग्लोकद्विशरीराश्चत्वार उक्ताः, साम्प्रतं तिर्यग्लोकाधिकारात्तदुद्भवं संयतादिपुरुषं भेदप्रदर्शनपुरस्सरं निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-हिरिसत्ते १, हिरिमणसत्ते २, चलसत्ते ३, थिरसत्ते ४। ॥ सू० ३३ ॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-ह्रीसत्त्वः १, ह्रीमनः सत्त्वः २, चलसत्त्वः ३, स्थिरसत्त्व ४। ॥ सू० ३३ ॥

इसी भावको लेकर प्रकटकी गई है प्रथम शरीर तो इनमें ये जिस शरीरमें वर्तमान हैं वही है और द्वितीय शरीर इनके अनन्तर जन्ममें प्राप्त होनेवाला जो मनुष्य शरीर है उसकी अपेक्षासे कहा गया है। इसी प्रकारसे ये चार २ अधोलोकमें और तिर्यग्लोकमें भी दो दो शरीरवाले हैं ऐसा कथन कर लेना चाहिये ॥ सू ३२ ॥

अब सूत्रकार तिर्यग्लोकके अधिकारसेही तिर्यग् लोकमें उत्पन्न हुए संयतादि पुरुष भेद प्रदर्शन पुरस्सर निरूपण करते हैं—

'चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र ३३ ॥

पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे-ह्री सत्त्ववाला-१ ह्रीमनः सत्त्ववाला-२ चल सत्त्ववाला ३ और स्थिर सत्त्ववाला-४

વર્તમાન ભવમાં જે શરીર વિદ્યમાન હોય છે તે શરીરને તેમનું પ્રથમ શરીર સમજવું અનન્તર ભવમાં મનુષ્યશરીર તેમને પ્રાપ્ત થવાનું છે, તેને અહીં દ્વિતીય શરીર રૂપે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે આ પ્રકારે જ પૃથ્વીકાય આદિ ઉપર્યુક્ત ચાર પ્રકારના જીવો અધોલોક અને તિર્યગ્લોકમાં પણ બબ્બે શરીરવાળા છે, એવું કથન સમજવું ॥ સૂ ૩૨ ॥

તિર્યગ્લોકનો ઉપરના સૂત્રમાં ઉલ્લેખ થયો છે. તે સંબંધને અનુલક્ષીને તિર્યગ્લોકમાં ઉત્પન્ન થયેલા સંયતાદિ પુરુષોના ભેદોનું નિરૂપણ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—સૂ ૩૩

પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) હ્રી સત્ત્વવાળો, (૨) હ્રીમનઃ સત્ત્વવાળો, (૩) ચલ સત્ત્વવાળો અને (૪) સ્થિર સત્ત્વવાળો.

टीका—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-ह्रीसत्त्वः-ह्रिया-लज्जया सत्त्वं-परीषहादिसहने वा समराङ्गणे स्थैर्यं बलं वा यस्य स ह्रीसत्त्वः १, तथा-ह्रीमनःसत्त्वः-ह्रिया-परीषहादिसहनात् समराङ्गणाद्वा पराङ्मुखं मामुत्तमकुलोत्पन्नं लोका हसिष्यन्तीति लज्जया मनस्येव न तु काये रोमाञ्चकम्पप्रभृतिचिह्न दर्शनात् सत्त्वं यस्य स व्हीमनःसत्त्वः=लोकलज्जानिमित्तमानसधैर्यसम्पन्नः २,

टीकार्थ — लज्जासे जो पुरुष परीषहादिके सहनेमें या समराङ्गणमें स्थिरतावाला या बलवाला होता है वह ह्री सत्त्ववाला पुरुष कहा गया है १ उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए मुझको परीषहादि सहनेसे अथवा समराङ्गणसे पराङ्मुख हुआ देखकर लोग हँसेंगे इस लज्जासे जिसके मनमें ह्री सत्त्व होता है रोमाञ्च कम्प आदि भीतिके चिह्न देखनेसे जिसके कायमें सत्त्व नहीं होता है ऐसा वह पुरुष ह्रीमनः सत्त्ववाला कहा गया है २ अर्थात् लोकलाजके निमित्त से जो मानसिक धैर्यसे सम्पन्न होता है वह इस द्वितीय भङ्गमें गिना गया है जिसका सत्त्व परिषहादिके उपस्थित होने पर अस्थिर हो जाता है वह अस्थिर चित्तवाला तृतीय भङ्गमें लिया गया है ३ परीषह आदिके समुपस्थित होंने परभी जिसका सत्त्व दृढ रहता है वह चतुर्थ भंगमें गृहीत हुआ है इस प्रकारसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो ह्री सत्त्ववाला होता है-१ कोई एक पुरुष ऐसा होता है

જે પુરુષ લજ્જાને કારણે પરીષહાદિકોને સહન કરવાને અથવા સમરાંગણુમાં સ્થિરતા (અડગતા) ધારણ કરવાને સમર્થ હોય છે તેને હ્રીસત્ત્વયુક્ત પુરુષ કહે છે.

ઉત્તમ કુલમાં ઉત્પન્ન થયેલા એવા મને પરીષહ આદિ સહન કરવામાં અસમર્થ દેખીને અથવા સમરાંગણુમાંથી પરાંગમુખ થતો જોઈને લોકો મારી હાંસી કરશે. આ પ્રકારની લજ્જાને કારણે જ જેના મનમાં સત્ત્વ (બળ) ઉત્પન્ન થાય છે. રોમાંચ કંપ આદિ ભીતિના ચિહ્ન જોવાથી જેના શરીરમાં સત્વ ઉત્પન્ન થતું નથી એવા પુરુષને હ્રીમન. સત્ત્વવાળો કહ્યો છે. એટલે કે લોકલાજને નિમિત્તે જે માણુસ માનસિક ધૈર્યથી સંપન્ન થાય છે તેને આ બીજા ભાંગામા ગણુાવી શકાય છે, જેનું સત્ત્વ (માનસિક બળ) પરીષહાદિ સહન કરવાનાં આવી પડે ત્યારે અસ્થિર થઈ જાય છે એવા પુરુષને અસ્થિર ચિત્તવાળો કહે છે. પરીષહો આવી પડે ત્યારે જેનું સત્ત્વ દૃઢ રહે છે તેને સ્થિર સત્ત્વવાળો કહે છે,

तथा—चलसत्त्व—चलति=परीषहादिसमुपस्थितौ इति चलम्=अस्थिरं सत्त्वं यस्य स चलसत्त्वः=अस्थिरचित्तः ३। तथा—स्थिरसत्त्वः—स्थिरं—परीषहादिसमुपस्थितावपि दृढं सत्त्वं यस्य स स्थिरसत्त्वः ४। इति । ॥ सू० ३३ ॥

अनन्तरं स्थिरसत्त्व उक्तः, स चाभिग्रहान् प्रतिपद्य परिपालयति चेत्तदा भवतीत्यभिग्रहान् प्रदर्शयितुं चतुःसूत्रीमाह—

मूलम्—चत्तारि सिज्जपडिमाओ पण्णत्ताओ (१), चत्तारि वत्थपडिमाओ पण्णत्ताओ (२) चत्तारि पायपडिमाओ पण्णत्ताओ (३) चत्तारि ठाणपडिमाओ पण्णत्ताओ (४)॥सू०३४॥

छाया—चतस्रः शय्याप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः(१), चतस्रो वस्त्रप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः(२), चतस्रः पात्रप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः (३), चतस्रः स्थानप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः (४) ॥सू०३४॥

जो ह्रीमनः सत्त्ववाला होता है २ कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो चल सत्त्ववाला होता है ३ और कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो स्थिर सत्ववाला होता है। इस प्रकारसे ये मनुष्यके चार प्रकार प्रकट किये गये हैं ॥ सू० ३३ ॥

अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि "कथित स्थिर सत्त्ववाला प्राणी तभी होता है कि जब वह अभिग्रहोंको स्वीकार कर यथावत् उनका परिपालन करता है" अतः वे अभिग्रह इस प्रकारसे हैं—

"चत्तारि सिज्झपडिमाओ पण्णत्ताओ" इत्यादि सूत्र ३४ ॥

शय्या प्रतिमा चार कही गई है (१) वस्त्र प्रतिमा चार कही गई है

હવે ચારે ભાંગાનું ફરીથી સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે હ્રી સત્ત્વવાળો હોય છે. (૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે હ્રીમન' સત્ત્વવાળો હોય છે. (૩) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ચલ સત્ત્વવાળો હોય છે. અને (૪) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સ્થિર સત્ત્વવાળો હોય છે આ પ્રમાણે મનુષ્યના ચાર પ્રકારો અહીં' પ્રકટ કર્યાં' છે. ॥ સૂ. ૩૩ ॥

આગલા સૂત્રમાં સ્થિર સત્ત્વયુક્ત પુરુષની વાત કરી. જીવ ત્યારે જ સ્થિર-સત્ત્વવાળો બની શકે છે કે જ્યારે તે અભિગ્રહોને ધારણ કરીને તેનું વિધિ અનુસાર પરિપાલન કરે છે. તેથી હવે સૂત્રકાર તે અભિગ્રહોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—"चत्तारि सिज्झपडिमाओ पण्णत्ताओ" ઇત્યાદિ સૂ. ૩૪

टीका:—" चत्तारि सिज्जपडिमाओ " इत्यादि—शय्याप्रतिमाः-शय्यतेऽस्यामिति शय्या-पीठफलकादिरूपा, तस्याः प्रतिमाः-अभिग्रहरूपाः शय्याप्रतिमाः चतस्रः प्रज्ञप्ताः, ता यथा-प्रथमा प्रतिमा 'अमुकप्रकारकं पीठफलकादिकं मया ग्राह्यमिति। १।

द्वितीया प्रतिमा—'अमुकप्रकारकं पीठफलकादि चेद् द्रक्ष्यामि तदा तदेव ग्राह्यमिति। २।

तृतीया प्रतिमा-' अमुकप्रकारकमपि यदि तस्यैव शय्यातरस्य गृहे भवेत् तदा ग्राह्यमिति। ३।

चतुर्थी तु—अमुकप्रकारकमपि फलकादि यदि यथासंस्तृतमेव स्यात्तदा ग्राह्यमिति। ४।

तत्र प्रथम-द्वितीये प्रतिमे गच्छनिर्गतानां न भवतः, किन्तु तृतीय-चतुर्थ्योरन्यतरा प्रतिमा भवति। गच्छस्थितानां तु चतस्रोऽपि प्रतिमाः कल्पन्त इति। १।

---

(२) पात्र प्रतिमा चार कही गई है (३) स्थान प्रतिमा चार कही गई हैं (४)

जिस पर शयन किया जाता है वह शय्या है ऐसी वह शय्या पीठफलक आदि रूप होती है, इस शय्याकी जो अभिग्रह रूप प्रतिमा है वह शय्या प्रतिमा है १ यह शय्या प्रतिमा इस रूपसे चार प्रकारकी होती है-मैं अमुक प्रकारका पीठफलक आदि ग्रहण करूंगा १ अमुक प्रकारका पीठफलक आदि यदि देखूंगा तो वही ग्रहण करूंगा २ यदि उसी शय्यातर के घर पर अमुक प्रकारका भी पीठफलक आदि होगा तो ग्रहण करूंगा ३ अमुक प्रकारका भी पीठफलक आदि यदि यथा संस्कृत ही होगा तो ही ग्रहण करूंगा ४ इनमें प्रथम और द्वितीय प्रतिमा गच्छनिर्गत साधुओंके नहीं होती हैं किन्तु तृतीय और चतुर्थीमें से

---

(૧) શય્યા પ્રતિમા ચાર કહી છે. (૨) વસ્ત્ર પ્રતિમા ચાર કહી છે. (૩) પાત્ર પ્રતિમા ચાર કહી છે. (૪) સ્થાન પ્રતિમા ચાર કહી છે.

જેના પર શયન કરાય છે તેનું નામ શય્યા છે. એવી તે શય્યા પીઠ-ફલક આદિ રૂપ હોય છે, તે શય્યાની જે અભિગ્રહ રૂપ પ્રતિમા તેને શય્યા-પ્રતિમા કહે છે. તેના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર છે-(૧) હું અમુક પ્રકારનું પીઠફલક આદિ ગ્રહણ કરીશ. (૨) અમુક પ્રકારનું પીઠફલક આદિ જોઈશ તો તેને જ ગ્રહણ કરીશ. (૩) જો એજ શય્યાતરના ઘરમાં અમુક પ્રકારનું પણ પીઠફલક આદિ હશે તો ગ્રહણ કરીશ (૪) અમુક પ્રકારનું પીઠફલક આદિ જો યથાસંસ્કૃત હશે તો જ ગ્રહણ કરીશ. આ ચાર પ્રકારની પ્રતિમા-ઓમાંની પહેલી અને બીજી પ્રતિમાઓનું આરાધન ગચ્છનિર્ગત સાધુઓ વડે

"चत्तारि वत्थपडिमाओ" इत्यादि--वस्त्रप्रतिमाः-वस्त्रग्रहणविषया अभिग्रहाः, चतस्रः प्रज्ञप्ताः, ता यथा-अमुकप्रकारकं कार्पासिकादि वस्त्रं याचितव्य-मिति प्रथमा । १ ।

तथा-यद् दृष्टं तदेव याचनीयमिति द्वितीया । २ । तथाऽन्तरपरिभोगेनोत्तरीयपरिभोगेन वा गृहस्थेन परिभुक्तं वस्त्रं ग्राह्यमिति तृतीया । ३ । तथा-तदेवोत्सृष्टधर्मकं ग्राह्यमिति चतुर्थी । ४ ।

"चत्तारि पायपडिमाओ" इत्यादि-पात्रप्रतिमाः-पात्रग्रहणविषयेऽभिग्रहाः, चतस्रः प्रज्ञप्ताः, ता यथा-अमुकप्रकारकं मृत्तिकादारुपात्रादि याचितव्यम्' इति प्रथमा १। तथा-यद् दृष्टं तदेव याचितव्यमिति द्वितीया २। तथा-गृहस्थस्य

कोई एक प्रतिमा होती है । गच्छस्थित साधुओंको तो चारों प्रकारकी ये प्रतिमाएं कल्प्य हैं (१) चार जो वस्त्र प्रतिमाएँ कही गई हैं वे इस प्रकारसे हैं-जैसे मैं अमुक प्रकारका सूतीया ऊनी वस्त्र मांगूंगा१ या जो देखाहै वही मांगूगा२ या अन्तर परिभोग रूपसे या उत्तरीय परिभोगरूपसे गृहस्थजन द्वारा जो वस्त्र परिभुक्त होगा वही वस्त्र लूंगा ३ तथा वस्त्र यदि उत्सृष्ट (फेंकने योग्य) धर्मवाला होगा तो ही लूंगा ४ इस तरहसे जो वस्त्र ग्रहण विषयक अभिग्रह हैं वे वस्त्र प्रतिमा हैं । (२) चार जो पात्र ग्रहण विषयक अभिग्रह होते हैं वे पात्र प्रतिमाएँ हैं-जैसे-जो मृत्तिकाका पात्र काष्ठका पात्र तुम्बीका पात्र आदि अमुक प्रकारका होगा तो ही मैं उसे मांगूंगा १ तथा जो मैने दिखा है वही पात्र मैं

થતું નથી, પણ ત્રીજી અને ચોથીમાંથી કોઈ એક પ્રતિમાનું જ તેમના દ્વારા આરાધન થાય છે. ગચ્છસ્થિત સાધુઓને માટે તો આ ચારે પ્રકારની પ્રતિમાઓ કલ્પ્ય ગણાય છે.

ચાર વસ્ત્રપ્રતિમાઓ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) હું અમુક પ્રકારનું સૂતરાઉ અથવા ગરમ વસ્ત્ર માગીશ. અથવા (૨) જે વસ્ત્ર જોયું છે એજ માગીશ અથવા (૩) આન્તર પરિભોગ રૂપે અથવા ઉત્તરીય પરિભોગ રૂપે ગૃહસ્થ જનદ્વારા જે વસ્ત્ર પરિભુક્ત હશે એજ વસ્ત્ર સ્વીકારીશ અથવા વસ્ત્ર ઉત્સૃષ્ટ ધર્મવાળું હશે તો જ તેનો સ્વીકાર કરીશ. આ રીતે વસ્ત્રગ્રહણ વિષયક જે અભિગ્રહ છે તેને વસ્ત્રપ્રતિમા કહે છે.

પાત્રગ્રહણ વિષયક અભિગ્રહના ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) માટીનું કે કાષ્ઠનું કે તુમ્બીનું પાત્ર જો અમુક પ્રકારનું હશે તો જ ગ્રહણ કરીશ. (૨) અથવા જે પાત્ર મેં દેખ્યું હશે તેનો જ સ્વીકાર કરીશ, (૩)

स्वाङ्गिकं तत्परिभुक्तमायं वा द्वित्रेषु पात्रेषु पर्यायेण परिभुज्यमानं पात्रं याचितव्यम्' इति तृतीया । ३ । तथोज्झितधर्मकं पात्रं याचितव्यमिति चतुर्थी ।४।। ।३।

"चत्तारि ठाणपडिमाओ" इत्यादि–स्थानप्रतिमाः–कायोत्सर्गाद्यर्थं स्थानग्रहणविषयेऽभिग्रहाः चतस्रः प्रज्ञप्ताः, ता यथा–यत् स्थानमचित्तमेषणीयमाकुञ्चनप्रसारणादिक्रियायोग्यं कुडयाद्यालम्बनसमन्वितं चङ्क्रमणावकाशयुक्तं भवेत् तदेवाऽऽश्रयणीमिति प्रथमा १, चङ्क्रमणावकाशरहितं पूर्वनिर्दिष्टं स्थानं यदि भवेत्तदेवाऽऽश्रयणीयमिति द्वितीया । २ । तथा–कुडयाद्यालम्बनादिरहितं चङ्क्रमणावका-

---

मांगूंगा २ तथा गृहस्थका जो स्वाङ्गिक होगा या परिभुक्त प्राय होगा या जो दो तीन पात्रों में पर्यायसे परिभुज्यमान हो रहा होगा वही पात्र मैं मांगूंगा ३ तथा उज्झित धर्मक पात्र ही मांगूगा ४ अर्थात् उन तीन प्रकारका पात्र ही साधुओंको कल्पता है, इसलिये तीनका नाम लिया हैं प्लास्टिक आदि का पात्र लेना नहीं कल्पता । (३) कायोत्सर्ग आदिके लिये स्थानग्रहणके विषयमें जो अभिग्रह होतेहैं वे स्थानप्रतिमाहैं, और ये इस प्रकारसे चार रूप होती हैं–जो स्थान अचित्त होगा एषणीय होगा आकुञ्चन प्रसारण आदि क्रियाके योग्य होगा कुडयादिरूप आलम्बन से समन्वित होगा चङ्क्रमणावकाश युक्त होगा वही मेरे द्वारा आश्रयणीय होगा ऐसी यह प्रथम स्थान प्रतिमा है १ यदि पूर्व निर्दिष्ट स्थान चंक्रमणावकाश (कारणवश इधर उधर फिरने) से रहित होगा तो ही मेरे द्वारा वह आश्रयणीय होगा ऐसी यह द्वितीय स्थानप्रतिमा है २ तथा–पूर्वोक्त स्थान कुडयादि (भित्ति) आलम्बनसे रहित होगा और चंक्रमणावकाशसे रहित होता तब ही

અથવા ગૃહસ્થનું જે સ્વાંગિક હશે અથવા જે પરિભુક્ત (વપરાશને માટે અયોગ્ય ગણીને કાઢી નાખેલું) હશે અથવા જે બે ત્રણ પાત્રોમાં પર્યાયની અપેક્ષાએ પરિભુજ્યમાન થઈ રહ્યું હશે એવું જ પાત્ર હું લઈશ તથા ઉઝિતધર્મક પાત્ર જ લઈશ એટલે કે ઉપર્યુક્ત ત્રણ પ્રકારના પાત્ર જ સાધુઓને કલ્પે છે, તેથી ત્રણના જ નામ અહીં પ્રકટ કર્યાં છે.

કાયોત્સર્ગ આદિને માટે સ્થાનગ્રહણ કરવાના વિષયમાં જે અભિગ્રહ થાય છે તેને સ્થાનપ્રતિમા કહે છે તેના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—(૧) જે સ્થાન અચિત્ત હશે, એષણીય હશે, આકુંચન પ્રસરણ આદિ ક્રિયાઓને યોગ્ય હશે, દિવાલ આદિ રૂપ અવલંબન આધારથી યુક્ત હશે અને ચંક્રમણાવકાશયુક્ત (કારણવશ આમ તેમ ફરવાને યોગ્ય) હશે, એજ સ્થાન મારે માટે આશ્રયણીય થશે. આ પ્રથમ સ્થાનપ્રતિમાનું સ્વરૂપ સમજવું. (૨) જો પૂર્વોક્ત સ્થાન ચંક્રમણાવકાશથી રહિત (કારણવશ આમ તેમ ફરવાને માટે અયોગ્ય

शरहितं च पूर्वोक्तमेव यदि स्थानं भवेत् तदेवाऽऽश्रयणीयमिति तृतीया । ३ । तथा-यत् स्थानम् आकुञ्चनप्रसारणादिक्रियाया अयोग्यं कुडयाद्यालम्बनरहितं चङ्क्रमणावकाशरहितं च सत् अचित्तमेषणीयं च भवेत्तदाऽऽश्रयणीयमिति चतुर्थी । ४ । (४) इति । सू० ३४ ॥

अनन्तरं शरीरचेष्टानिरोध उक्त इति शरीरमस्तावादिदं सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—चत्तारि सरीरगा जीवफुडा पण्णत्ता, तं जहा-वेउव्विए १, आहारए २, तेयए ३, कम्मए ४ । (१)

चत्तारि सरीरगा कम्मुम्मीसगा पण्णत्ता, तं जहा--ओरालिए १, वेउव्विए २, आहारए ३, तेउए ४। (२) ॥ सू० ३५ ॥

छाया—चत्वारि शरीरकाणि जीवस्पृष्टानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-वैक्रियम् १, आहारकं २, तैजसं ३, कार्मणम् ४। (१)

मेरे द्वारा आश्रयणीय होगा ऐसी यह तृतीय स्थानप्रतिमा है ३ तथा जो स्थान आकुञ्चन प्रसारण आदि क्रिया के अयोग्य होगा कुडयादि रूप आलम्बनसे रहित होगा एवं चंक्रमणावकाशसे रहित होगा अचित्त और एषणीय होगा तब वह मेरे द्वारा आश्रयणीय होगा ऐसी यह चतुर्थी स्थान प्रतिमा है ॥ सू० ३४ ॥

अब सूत्रकार शरीरको लेकर दो सूत्र कहते हैं—

"चत्तारि सरीरगा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र ३५ ॥

चार शरीर जीवस्पृष्ट कहे गये हैं-जैसे-वैक्रिय १ आहारक २ तैजस ३ और कार्मण ४ (१)

હશે તો જ તે મારા દ્વારા આશ્રણીય થશે. આ બીજી સ્થાનપ્રતિમા સમજવી. (૩) જો પૂર્વોક્ત સ્થાન દીવાલ આદિ અવલંબન (આધાર)થી રહિત હશે અને ચંક્રમણાવકાશથી રહિત હશે તો જ મારા દ્વારા આશ્રણીય થશે આ ત્રીજી સ્થાનપ્રતિમા સમજવી. (૪) જો પૂર્વોક્ત સ્થાવ આકુંચન પ્રસરણ આદિ ક્રિયાઓને માટે અયોગ્ય હશે, દીવાલ આદિ રૂપ અવલંબનથી રહિત હશે અને ચંક્રમણાવકાશથી રહિત હશે, અચિત્ત અને એષણીય હશે, તો તે મારા દ્વારા આશ્રયણીય થશે આ ચોથી સ્થાનપ્રતિમા સમજવી. ॥ સૂ ૩૪ ॥

હવે સૂત્રકાર શરીર વિષયક બે સૂત્રોનું કથન કરે છે—

" ચત્તારિ સરીરગા પણ્ણત્તા " ઈત્યાદિ—સૂ ૩૫

નીચેનાં ચાર શરીર જીવસ્પૃષ્ટ કહ્યાં છે—(૧) વૈક્રિય, (૨) આહારક, (૩) તૈજસ અને (૪) કાર્મણ ॥૧॥

चत्वारि शरीरकाणि कार्मणोन्मिश्रकाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा=औदारिकं १, वैक्रियम् २, आहारकं ३, तैजसम् ४। (२) ॥ सू० ३५ ॥

टीका—" चत्तारि सरीरगा " इत्यादि—चत्वारि-शरीरकाणि-शरीराण्येव शरीरकाणि, स्वार्थे कन् प्रत्ययोऽत्र बोध्यः, जीवस्पृष्टानि-जीवव्याप्तानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-वैक्रियं-विक्रिया-विविधरूपकरणं तया निर्वृत्तम्-अनेकाद्भुताऽऽश्रयं विविधगुणर्द्धि सम्प्रयुक्तपुद्गलवर्गणाप्रारब्धं वैक्रियम् १, आहारकम्-आह्रियते-निर्वर्त्यते चतुर्दशपूर्वविदा प्राणिदयर्द्धिदर्शन-च्छद्मस्थोपग्रहणसंशयव्युच्छेदरूपचतुष्टयप्रयोजनवशाद् यत्तदाहारकम्, आहारकशरीरं चतुःकृत्वा मोक्षो भव-

चार शरीर कार्मण शरीरसे उन्मिश्र कहे गये हैं-जैसे-औदारिक १ वैक्रिय २ आहारक ३ और तैजस ४ (२)

जीव द्वारा व्याप्त जो शरीर हैं वे जीव स्पृष्ट शरीर हैं विविध रूप करना इसका नाम विक्रिया है इस विक्रियासे जो शरीर निर्वृत्त होता है वह वैक्रिय शरीर है यह वैक्रिय शरीर अनेक अद्भुतरूपोंका आश्रयभूत होता है विविध गुणोंसे एवं ऋद्धियोंसे सम्प्रयुक्त पुद्गल वर्गणाओंसे प्रारब्ध (जिसका प्रारंभ किया जाय) होता है आहारक शरीर चौदह पूर्वधारीकेही पाया जाता है वह चौदह पूर्वधारी मुनि प्राणिदया ऋद्धिदर्शन छद्मस्थोपग्रहण और संशयविच्छेद इन चार प्रयोजनके वशसे आहारक शरीरका निर्माण करता है इस आहारक शरीरका निर्माण चार वार होता है फिर जीवका मोक्ष हो जाता है। तेजः पुद्गलोंका जो विकार है वह तैजस है इसका लिङ्ग उष्मा है और यह

નીચેનાં ચાર શરીર કાર્મણુ શરીર સાથે ઉન્મિશ્ર કહ્યાં છે—

(૧) ઔદારિક, (૨) વૈક્રિય, (૩) આહારક અને (૪) તૈજસ ॥૨॥

જીવદ્વારા વ્યાપ્ત જે શરીરો છે તેમને જીવસ્પૃષ્ટ શરીરો કહે છે. વિવિધ રૂપ કરવું તેનું નામ વિક્રિયા છે આ વિક્રિયાથી જે શરીર નિર્વૃત્ત થાય છે તેને વૈક્રિય શરીર કહે છે તે વૈક્રિય શરીર અનેક અદ્ભુત રૂપોનું આશ્રયભૂત હોય છે, વિવિધ ગુણોથી અને ઋદ્ધિઓથી સંપ્રયુક્ત પુદ્ગલ વર્ગણાઓથી પ્રારબ્ધ (જેનો પ્રારંભ કરાય) હોય છે.

આહારક શરીરનો સદ્ભાવ ચૌદ પૂર્વધારીમાં જ હોય છે. તે ચૌદ પૂર્વધારી મુનિ પ્રાણિદયા, ઋદ્ધિદર્શન, છદ્મસ્થોપગ્રહણુ અને સંશય વિચ્છેદ રૂપ ચાર કારણોને લીધે આહારક શરીરનું નિર્માણુ કરે છે.

આ આહારક શરીરનું નિર્માણુ ચાર વાર થાય છે, ત્યાર બાદ જીવ મોક્ષમાં ચાલ્યો જાય છે. તેજ પુદ્ગલોનો વિકાર છે તે તૈજસ છે. તેનું

तीति । २ । तैजसं-तेजः पुद्गलानां विकारस्तैजसम्-ऊष्मलिङ्गो भुक्ताऽऽहारपरिणमनहेतुः शरीरविशेषः । ३ ।

कार्मणं-कर्मणा निर्वृत्तं कार्मणम्, यद्वा-शरीरनामकर्मण उत्तरप्रकृतिरूपं कर्म समुदायभूतात् कर्माष्टकाद् भिन्नमेवेति कर्मैव कार्मणम्, इदं च कार्मणशरीरं सर्वकर्माधारभूतं धान्यानां कोष्ठवत् सर्वकर्मप्रसवसमर्थम् अङ्कुरादीनां बीजवत् ।-कर्मभिर्निष्पन्नं कर्मसु भवं कर्मसुजातं कर्मैव वा कार्मणम् ४। एतानि वैक्रियाऽऽहारकतैजसकार्मणानि चत्वारि जीवेन स्पृष्टान्येव भवन्ति, न तु यथा-औदारिकं जीवमुक्तमपि भवति मृतावस्थायां तथैतानि । (१)

खाये हुए आहारके परिणमन में हेतु होता है यह कार्मण शरीर कर्मसे निर्वृत्त होता है अथवा-शरीर नामकर्मकी उत्तरप्रकृतिरूप जो कर्म है वह समुदायभूत कर्माष्टकसे भिन्न है इसलिये कर्मरूपही कार्मण है यह कार्मण शरीर सर्व कर्मोंका आधारभूत होता है जैसे धान्योंका आधारभूत कोष्ठ-कोठी-आदि होता है समस्त कर्मोंको प्रसव करनेमें यह समर्थ होता है जैसे अङ्कुरादिकोंको प्रसव करनेमें बीज समर्थ होता है। कर्मोंसे जो निष्पन्न होता है कर्मोंमें जो होता है अथवा-कर्मोंके होने पर जो होता है वह कार्मण शरीर है अथवा कर्मोंका समूहही कार्मण शरीर है। ये चार वैक्रिय आहारक तैजस एवं कार्मण शरीर जीवसे स्पृष्ट ही होते हैं जैसा औदारिक जीव मुक्त भी होता है वह मृतावस्थामें होता है उस प्रकारसे ये शरीर नहीं होते है। तात्पर्य

લક્ષણુ ઉષ્મા છે અને તે ખાધેલા આહારના પરિણુમનમાં કારણભૂત બને છે. કાર્મણુ શરીર કર્મથી નિર્વૃત્ત હોય છે. અથવા શરીર નામકર્મની. ઉત્તર પ્રકૃતિ રૂપ જે કર્મ છે તે સમુદાયભુત કર્માષ્ટકથી ભિન્ન છે, તેથી કર્મ રૂપ જ કાર્મણુ છે. આ કાર્મણુ શરીર સર્વ કર્મોનુ આધારભૂત હોય છે. જેમ ધાન્યોના આધારભૂત કોઠી હોય છે એમ કર્મોના આધારભૂત કાર્મણુ શરીર હોય છે. જેમ અંકુરાદિની ઉત્પત્તિ કરવાને બીજ સમર્થ હોય છે એજ પ્રમાણે સમસ્ત કર્મોના પ્રસવ (ઉત્પત્તિ) કરવાને કાર્મણુ શરીર સમર્થ હોય છે. કર્મો દ્વારા જે નિષ્પન્ન થાય છે અથવા કર્મોમાં જે હોય છે અથવા કર્મોના સદ્ભાવમાં જે હોય છે તે કાર્મણુ શરીર છે અથવા કર્મોનો સમૂહ જ કાર્મણુ શરીર છે. આ ચાર-વૈક્રિય, આહારક, તૈજસ અને કાર્મણુ શરીરો જીવથી સ્પૃષ્ટ જ હોય છે જેમ ઔદારિક શરીર જીવમુક્ત પણુ હોય છે-મૃતાવસ્થામાં પણુ હોય છે એમ આ શરીરોમાં બનતું નથી. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે

पुनः "चत्तारि सरीरगा" इत्यादि—चत्वारि शरीरकाणि कार्मणोन्मिश्रकाणि—कार्मणेन शरीरेण उन्मिश्राणि—युतानि कार्मणोन्मिश्राणि, तान्येव कार्मणोन्मिश्रकाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—औदारिकम्—उदारं—प्रधानं, प्राधान्यं चास्य तीर्थकरगणधरशरीरापेक्षया, ततोऽन्यस्य अनुत्तरसुरशरीरस्यापि अनन्तगुणहीनत्वात्, यद्वा—उदारं—सातिरेकयोजनसहस्रमानत्वात्, शेषशरीरापेक्षया बृहत्प्रमाणम्, बृहत्त्वं

यह है कि औदारिक शरीर जीवको भी छोडकर मृतावस्थामें बना रहता है अतः वह जीव स्पृष्टही होता है ऐसा नहीं कहा जाता है इस प्रकारसे ये चार शरीर नहीं हैं ये तो जीवस्पृष्टही होते हैं जीवके विना नहीं रहते हैं। १

चार शरीर जो कार्मण उन्मिश्रक (मिलेहुवे) कहे गयेहैं सो इसका अभिप्राय ऐसाहै कि ये चार शरीर कार्मण शरीरके साथ रहतेहैं—जहां कार्मण शरीर होगा वहां वैक्रिय शरीरभी हो सकता है, जैसा कि देव और नारकियोंमें वह होता है मनुष्यों तिर्यञ्चोंमें उसके साथ आहारक शरीर होता है चौदह पूर्वधारीके उसके साथ आहारक शरीर होता है तथा तैजस और कार्मण ये साथ २ रहतेही हैं। जो शरीर उदार प्रधान होता है वह औदारिक शरीर है औदारिक शरीरमें प्रधानता तीर्थंकर गणधरके शरीरकी अपेक्षासे आती है क्योंकि इससे भिन्न जो अनुत्तर देवका शरीर है वैक्रिय शरीर है वहां अनन्त गुणहीन होता है अथवा स्वयंभूरमण समुद्रमें रहा हुआ जो महामत्स्य है उसके औदारिक शरी-

જીવને છેડયા બાદ મૃતશરીરમાં મૃતાવસ્થામાં પણ ઔદારિક શરીરને સદ્‌ભાવ કાયમ રહે છે તેથી ઔદારિક શરીર જીવસ્પૃષ્ટ જ હોય છે, એવું કહી શકાતું નથી. પરન્તુ વૈક્રિય આદિ ઉપર્યુક્ત ચાર શરીરે તે જીવસ્પૃષ્ટ જ હોય છે, જીવના વિના તેમનું અસ્તિત્વ જ સંભવી શકતું નથી.

ચાર શરીરને જે કાર્મણ ઉન્મિશ્રક કહ્યા છે તેને ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—તે ચાર શરીરે કાર્મણ શરીરની સાથે જ રહે છે. જ્યાં કાર્મણ શરીર હશે ત્યાં વૈક્રિય શરીર પણ હશે. જેમ કે દેવ અને નારકોમાં તે હોય છે. મનુષ્ય તિર્યંચોમાં તેની સાથે આહારક શરીર હોય છે. ચૌદ પૂર્વધારીને તેની સાથે આહારક શરીર પણ હોય છે, તથા તૈજસ અને કાર્મણ આ બે શરીરે તે સાથે સાથે જ રહે છે જે શરીર ઉદાર પ્રધાન હોય છે તેને ઔદારિક કહે છે. ઔદારિક શરીરમાં પ્રધાનતા તીર્થંકર ગણધરના શરીરની અપેક્ષાએ આવે છે, કારણ કે તેનાથી ભિન્ન જે અનુત્તર દેવનું શરીર છે—વૈક્રિય શરીર છે તે અનંતગણું હીન હોય છે. અથવા સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રમાં

चास्य भवधारणीयवैक्रियापेक्षया, तदेव औदारिकम् । १ । वैक्रियम् २। आहारकम् ३। तैजसम् ४। एतानि शरीराणि कार्मणशरीरयुक्तानि सन्ति ॥ (२) ॥ सू० ३५॥

स्पृष्टप्रसङ्गात् सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—चउहिं अत्थिकाएहिं लोगे फुडे पण्णत्ते, तं जहा--धम्मत्थिकाएणं १, अधम्मत्थिकाएणं २, जीवत्थिकाएणं ३, पुग्गलत्थिकाएणं ४। (१)

चउहिं बायरकाएहिं उववज्जमाणेहिं लोगे फुडे पण्णत्ते, तं जहा--पुढविकाइएहिं १, आउकाइएहिं २, वाउकाइएहिं ३, वणस्सइकाइएहिं ४। (२) ॥ सू० ३६ ॥

छाया—चतुर्भिरस्तिकायैर्लोकः स्पृष्टः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–धर्मास्तिकायेन १, अधर्मास्तिकायेन २, जीवास्तिकायेन ३, पुद्गलास्तिकायेन ४, (१)

रकी अपेक्षा औदारिकको उदार बृहत्प्रमाणवाला कहा गया है क्योंकि उसका प्रमाण शेष शरीरकी अपेक्षा कुछ अधिक एक हजार योजनका कहा गया है अतः शेष शरीरकी अपेक्षा यह बृहत्प्रमाणवाला होता है भवधारणीय वैक्रिय शरीरकी अपेक्षासे इसमें बृहत्ता है । सू०३५॥

स्पृष्ट प्रसङ्गसे अब सूत्रकार दो सूत्र कहते हैं—

"चउहिं अत्थिकाएहिं लोगे फुडे" इत्यादि सूत्र ३६ ॥

यह लोग चार अस्तिकायरूप द्रव्योंसे स्पृष्ट व्याप्त कहा गयाहै जैसे धर्मास्तिकायसे,अधर्मास्तिकायसे जीवास्तिकायसे और पुद्गलास्तिकायसे १

રહેલો જે મહામત્સ્ય છે તેના ઔદારિક શરીરની અપેક્ષાએ ઔદારિકને ઉદાર–બૃહત્ પ્રમાણવાળું કહેવામાં આવ્યું છે, કારણ કે તેનું પ્રમાણ બાકીના શરીરની અપેક્ષાએ ૧૦૦૦. યોજન કરતાં પણ વિશેષ કહ્યું છે. તેથી શેષ શરીરો કરતાં તે અધિક પ્રમાણવાળું હોય છે ભવધારણીય વૈક્રિય શરીરની અપેક્ષાએ તેમાં બૃહત્તા છે. ॥ સૂ. ૩૫ ॥

સ્પૃષ્ટની સાથે સંબધિત બે સૂત્રોનું હવે સૂત્રકાર કથન કરે છે—

" चउहिं अत्थिकाएहिं लोगे फुडे " ઈત્યાદિ—(સૂ. ૩૬)

આ લોક નીચેના ચાર અસ્તિકાય રૂપ દ્રવ્યોથી સ્પૃષ્ટ (વ્યાપ્ત) કહ્યો છે—(૧) ધર્માસ્તિકાયથી (૨) અધર્માસ્તિકાયથી (૩) જીવાસ્તિકાયથી અને (૪) પુદ્ગલાસ્તિકાયથી.

चतुर्भिर्बादरकायैरुपपद्यमानैर्लोकः स्पृष्टः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-पृथिवीकायिकैः १, अप्कायिकैः २, वायुकायिकैः ३, वनस्पतिकायिकैः ४। (२) ॥ सू० २६ ॥

टीका—" चउहिं अत्थिकाएहिं " इत्यादि—चतुर्भिः अस्तिकायैः लोकः स्पृष्टः-प्रतिप्रदेशं व्याप्तः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-' धर्मास्तिकायेने " त्यादि। (१)

" चउहिं बायरकाएहिं " इत्यादि—चतुर्भिः बादरकायैः उपपद्यमानैर्जीवैः लोकः स्पृष्टः-व्याप्तः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-पृथिवीकायिकैः १, अप्कायिकैः २, वायुकायिकैः ३, वनस्पतिकायिकैः ४। अयं भावः-बादरा हि पृथिव्यब्वायुवनस्पतयः सर्वतो लोकादुधृत्य पृथिव्यादि-घनोदध्यादि-घनवातवलयादि घनोदध्यादिषु स्वकीयस्वकीयेषूत्पत्तिस्थानेष्वन्यतरगत्या समुत्पद्यमाना अपर्याप्तकावस्थायामतिबहुत्वात् सकललोकं स्पृशन्ति, ते पुनः पर्याप्ता बादरतेजस्कायिकास्त्रसाश्च लोकासंख्येयभागमेव स्पृशन्ति, उक्तं च प्रज्ञापनायाम्—" एत्थ णं बादरपुढविकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे "।

उत्पद्यमान चार बादर कायोंसे यह लोक स्पृष्ट कहा गया है, जैसे पृथिवीकायिकोंसे अप्कायिकोंसे वायुकायिकोंसे और वनस्पतिकायिकोंसे।

इनमें प्रथम सूत्रका अभिप्राय तो स्पष्ट है द्वितीय सूत्रका अभिप्राय ऐसा है-बादरकायिक पृथिवी, अप्, वायु, और वनस्पति जीव समस्त लोगसे उद्वर्तना करके पृथिवी आदिकोंमें-घनोदध्यादि वातवलयादिकोंमें अपने २ उत्पत्तिस्थानोंमें किसी एक गतिसे उत्पन्न होते हुए अपर्याप्तावस्थामें अति बहुत होनेसे सर्व लोककी स्पर्शना करते हैं और जो पर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव हैं वे और त्रस जीव लोकके असंख्यात भागकोही स्पर्श करतेहैं। उक्तं प्रज्ञापनायाम्-प्रज्ञापना सूत्रमें कहाहै-"एत्थ णं बादरपुढविकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता,उव-

ઉત્પદ્યમાન ચાર બાદર કાયોથી આલોક સ્પૃષ્ટ કહ્યો છે—(૧) પૃથ્વી કાયિકોથી, (૨) અપ્કાયિકોથી, (૩) વાયુકાયિકોથી અને (૪) વનસ્પતિકાયિકોથી.

આ બે સૂત્રોમાંથી પહેલા સુત્રનો ભાવાર્થ તો સુગમ છે. બીજા સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—બાદરકાયિક પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, વાયુકાય અને વનસ્પતિકાય જીવો સમસ્ત લોકમાંથી ઉદ્વર્તના કરીને પૃથ્વી આદિકોમાં-ઘનોદધિ આદિ વાતવલયાદિકોમાં પોત પોતાના ઉત્પત્તિ સ્થાનોમાં કોઇ એક ગતિમાં ઉત્પન્ન થઈને અપર્યાપ્તાવસ્થામાં ઘણા વધારે હોવાથી સર્વ લોકની સ્પર્શના કરે છે. અને જે પર્યાપ્ત બાદર તેજસ્કાયિક જીવો છે તેઓ અને ત્રસજીવો લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાં કહ્યુ છે કે—
" एत्थण बादरपुढविकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता, उववाएणं लोगस्स असं-

छाया—अत्र खलु बादरपृथिवीकायिकानां पर्याप्तकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, उपपातेन लोकस्य असंख्येयभागे"। तथा–"बादरपुढविकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता, उववाएणं सव्वलोए", छाया–"बादरपृथिवीकायिकानामपर्याप्तकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, उपपातेन सर्वलोके" एवमब्वायुवनस्पतीनाम्। तथा–बादरतेउकाइयाणं पज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे" बादरतेउक्काइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता, लोयस्स दोसु उड्ढकवाडेसु तिरियलोयतट्ठे य" छाया–बादरतेजस्कायिकानां पर्याप्तानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, उपपातेन लोकस्य असंख्येयभागे, बादरतेजस्कायिकानाम् अपर्याप्तानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, लोकस्य द्वयोरूर्ध्वकपाटयोः तिर्यग्लोकतटस्थे

वाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे" यहां पर्याप्त बादर पृथिवीकायिकोंके स्थान कहे गये हैं उपपातकी अपेक्षा इनके स्थान लोकके असंख्यातवें भागमें हैं तथा "बादर पुढवीकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता उववाएणं सव्वलोए" बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्तकोंके स्थान लोकके असंख्यातवें भागमें हैं। ये स्थान इनके उपपातकी अपेक्षासे कहे गये हैं। इसी तरहसे पर्याप्तक अपर्याप्तक अप्कायिक वायुकायिक और वनस्पतिकायिकोंके उपपत्तिकी अपेक्षासे स्थान जानना चाहिये। तथा–"बादर तेउकाइयाणं पज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे बादरतेउक्काइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता लोयस्स दोसु उड्ढकवाडेसु तिरियलोयतट्टेय" पर्याप्त तेजस्कायिक जीवोंके उत्पत्तिस्थान लोकके असंख्यातवें भागमें कहे गये हैं। अपर्याप्तक बादर तेजस्कायिकोंके स्थान ऊर्ध्वकपाटस्थ-तिर्यग्-

खेज्जइभागे" અહીં પર્યાપ્ત બાદર પૃથ્વીકાયિકોનાં સ્થાન કહ્યાં છે. ઉપપાતની અપેક્ષાએ તેમનાં સ્થાન લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં છે. તથા "बादर पुढविकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता उववाएणं सव्वलोए" બાદર પૃથ્વીકાયિકોના પૃથ્વીકાયિક અપર્યાપ્તકોનાં સ્થાન ઉપપાતની અપેક્ષાએ સમસ્ત લોકમાં છે.

એજ પ્રમાણે પર્યાપ્તક અને અપર્યાપ્તક અપ્કાયિક વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિકોની ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ સ્થાન સમજવા જોઈએ તથા–"बादर तेउकाइयाणं पज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे बादरतेउक्काइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता, लोयस्स दोसु उड्ढकवाडेसु तिरियलोयतट्टेय" બાદર પર્યાપ્ત તેજસ્કાયિક જીવોનાં ઉત્પત્તિસ્થાન લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં કહ્યા છે. અપર્યાપ્તક બાદર તેજસ્કાયિકોના ઉત્પત્તિસ્થાન **ઉર્ધ્વકપાટસ્થ** તિર્યગ્લોકમાં કહ્યાં છે.

(ऊर्ध्वकपाटस्थतिर्यग्लोके) च " तथा–" कहिण्णं भंते ! सुहुमपुढविकाइया जे पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोगपरियावन्नगा पण्णत्ता, समणाउसो ! । छाया–क्व खलु भदन्त ! सूक्ष्मपृथिवीकायिकानां पर्याप्तकानामपर्याप्तकानां च स्थानानि प्रज्ञप्तानि, गौतम ! सूक्ष्मपृथिवीकायिका ये पर्याप्तका ये च अपर्याप्तकाः ते सर्वे एकविधा अविशेषा अनानात्वाः सर्वलोकपर्यापन्नकाः प्रज्ञप्ताः श्रमणाऽऽयुष्मन् !, एवमन्येऽपि, " एवं बेइंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे ", छाया–द्वीन्द्रियाणां पर्याप्तकापर्याप्तकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, उपपातेन लोकस्यासंख्येयभागे, एवं शेषाणामपि ।

लोकमें कहे गये हैं तथा–" कहिण्णं भंते ! सुहमपुढविकाइया जे पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोगपरियावन्नगा पण्णत्ता समणाउसो " हे भदन्त ! पर्याप्तक अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिकोंके स्थान कहे गये हैं ?–हे गौतम ! जो पर्याप्त अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक हैं वे सब एकविध हैं अविशेष हैं नाना नहीं हैं और सर्व लोकमें पर्यापन्नक हैं व्याप्त हैं इस प्रकारका कथन इनके विषयमें किया गया है इसी तरह अन्य भी सूक्ष्म जीव जानना चाहिये ।

" एवं बेइंदियाणं पज्जत्तापज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे " इसी तरहसे पर्याप्त अपर्याप्त दो इन्द्रिय जीवोंके स्थान कहे गये हैं ये उपपातकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवे

તથા–"કહિણં ભંતે ! સુહુમપુઢવિકાઇયા જે પજ્જત્તગા જે ય અપજ્જત્તગા તે સવ્વે એગવિહા અવિસેસમણાણત્તા સવ્વલોગપરિયાવન્નગા પણ્ણત્તા સમણાઉસો' હે ભગવન્ ! પર્યાપ્તક અપર્યાપ્તક સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિકોનાં સ્થાન ક્યાં કહ્યાં છે.

મહાવીર પ્રભુનો ઉત્તર—" હે શ્રમણાયુષ્મન્ ! હે ગૌતમ ! જે પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિકો છે, તેઓ સૌ એક જ પ્રકારના છે, તેમનામાં વિશેષતા નથી કે વિવિધતા નથી. તેઓ સર્વલોકમાં પર્યાપન્નક-વ્યાપ્ત છે. આ પ્રકારનું કથન તેમને વિષે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે. એજ પ્રમાણે અન્ય સૂક્ષ્મ જીવો વિષે પણ સમજવું.

" " એવં બેઇંદિયાણં પજ્જત્તાપજ્જગાણં ઠાણા પણ્ણત્તા ઉવવાએણં લોયસ્સ અસંખેજ્જઇ ભાગે " એજ પ્રમાણે પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત દ્વીન્દ્રિય જીવોનાં સ્થાન કહ્યાંછે એટલે કે તે સ્થાનો ઉપપાતની અપેક્ષાએ લોકના અસંખ્યાતમાં

ननु तेजसोऽपि परिणामविशेषलक्षणबादरत्वसत्त्वेन बादरतेजः-कायेनापि उत्पद्यमानजीवस्पर्शो लोके वक्तव्यः, एवं च पञ्चभिर्बादरकायैरुपपद्यमानैर्लोकः स्पृष्ट इति वक्तव्ये चतुर्भिर्बादरकायैरित्युक्तौ शास्त्रे न्यूनत्वं प्रतिभातीतिचेत्--श्रूयताम्-यद्यपि सूक्ष्माः पृथिव्यादयः पञ्चापि सर्वलोकात् सर्वलोके समुत्पद्यन्ते, तथापि तत्र बादरतैजसानां सर्वलोकादुद्वृत्य मनुष्यक्षेत्रे ऋजुगत्या वक्रगत्या च जायमानानामूर्ध्वकपाटद्वये एव बादरतैजसत्वं व्यवह्रियत इति न सर्वत्र बादर-तैजसत्वमिति चतुर्भिर्बादरकायैरित्येवोक्तं न तु पञ्चभिरिति ॥सू० ३६॥

भागमें हैं इसी तरहका कथन शेष जीवोंके उपपात स्थानोंके विषयमें भी जानना चाहिये ।

शंका—तेज भी परिणामविशेष रूप बादरत्वमें रहता है अतः बादर तेजस्कायसे भी उत्पद्यमान जीव स्पर्श लोकमें कहने योग्य है इस तरह उपपद्यमान पांच बादर कायों द्वारा लोक स्पृष्ट होता है ऐसा कहना चाहिये था सो ऐसा न कहकर उपपद्यमान चार बादरकायों द्वारा लोक स्पृष्ट है ऐसा कथन न्यूनता भरा हुआ प्रतीत होता है ?

उत्तर—यद्यपि पांचोंही सूक्ष्म पृथिव्यादिक जीव सर्वलोकसे समस्त लोकमें उत्पन्न होते हैं तथापि सर्वलोकसे उद्धर्तना करके मनुष्य क्षेत्रमें ऋजुगतिसे या वक्रगतिसे उत्पन्न होते हुए बादर तेजस्कायिकोंका उर्ध्वकपाट द्वयमें ही बादर तैजसरूपसे व्यवहार होता है सर्वत्र नहीं इस कारण चार उत्पद्यमान बादरकायों द्वारा यह लोक स्पृष्ट है ऐसा ही कहा गया है पांचोंसे यह स्पृष्ट है ऐसा नहीं कहा गया है ॥सू० ३६॥

ભાગમાં છે, એમ સમજવું. એજ પ્રકારનું કથન બાકીના જીવોના ઉપપાત સ્થાનોના વિષયમાં પણ સમજવું.

શંકા—તેજ પણ પરિણામવિશેષ રૂપ બાદરત્વમાં રહે છે તેથી બાદર તેજઃકાયમાંથી ઉત્પદ્યમાન જીવસ્પર્શ લોકમાં કહેવા યોગ્ય છે આ રીતે તો અહીં એવું કથન થવું જોઈએ કે ઉપપદ્યમાન પાંચ બાદરકાયો દ્વારા લોક સ્પૃષ્ટ (વ્યાપ્ત) થાય છે. આ પ્રમાણે કહેવાને બદલે "ઉપપદ્યમાન ચાર બાદરકાયો દ્વારા લોક સ્પૃષ્ટ છે" આ પ્રમાણે કહેવું તે ન્યૂનતાયુક્ત લાગતું નથી?

ઉત્તર—જો કે પાંચે સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાય આદિ જીવો, સર્વ લોકમાંથી સમસ્ત લોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે, છતાં પણ સર્વ લોકમાંથી ઉદ્વર્તના કરીને મનુષ્યક્ષેત્રમાં ઋજુગતિથી કે વક્રગતિથી ઉત્પન્ન થતાં બાદર તેજસ્કાયિકોનો ઉર્ધ્વકપ ટદ્વયમાં જ બાદર તૈજસરૂપે વ્યવહાર થાય છે—સર્વત્ર નહીં. તે કારણે તેજસ્કાયિક સિવાયના ચાર ઉત્પદ્યમાન બાદરકાયો દ્વારા આ લોક સ્પૃષ્ટ (વ્યાપ્ત) છે, એવું કહેવામાં આવ્યું છે-પાંચે દ્વારા સ્પૃષ્ટ હોવાનું કહેવામાં આવ્યુ નથી. સૂ ૩૬

पूर्वं चतुर्भिर्लोकः स्पृष्ट इत्युक्त, सम्प्रति लोकस्य धर्मास्तिकायादीनां च प्रदेशपरिमाणतः परस्परं तुल्यतामाह—

मूलम्—चत्तारि पएसग्गेणं तुल्ला पण्णत्ता, तं जहा--धम्मत्थिकाए १, अधम्मत्थिकाए २, लोगागासे ३, एगजीवे४॥सू०३७॥

छाया—चत्वारः प्रदेशाग्रेण तुल्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—धर्मास्तिकायः १, अधर्मास्तिकायः २ लोकाऽऽकाशः ३, एकजीवः ४॥ सू० ३७ ॥

टीका—"चत्तारि पएसग्गेणं" इत्यादि—प्रदेशाग्रेण - प्रदेशपरिमाणेन चत्वारः तुल्याः—समाः—सर्वेषां धर्मास्तिकायादिकानामेषामसङ्ख्यातप्रदेशत्वेन समानाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—धर्मास्तिकायः १ अधर्मास्तिकायः २, लोकाऽऽकाशः ३, एकजीवः ४। तत्राऽऽकाशस्यानन्तप्रदेशत्वेन धर्मास्तिकायादित्रयतुल्यत्वं न

अब सूत्रकार लोककी और धर्मास्तिकायादिकोंकी प्रदेश परिमाणकी अपेक्षा परस्परमें तुल्यताका कथन करते हैं—

'चत्तारि पएसग्गेणं तुल्ला' इत्यादि सूत्र ३७॥

प्रदेश परिणामकी अपेक्षा चार पदार्थ आपसमें तुल्य कहे गये हैं लोकाकाश के, धर्मास्तिकायके, अधर्मास्तिकाय और एक जीवके असंख्यात प्रदेश होते हैं इस तरह असंख्यात प्रदेशोंकी अपेक्षासे धर्मास्तिकायादिकोंमें समानता प्रकटकी गई हैं "लोकाकाश" ऐसा जो लोक पदसे विशेषित आकाश कहा गया है उसका कारण ऐसा है कि आकाशके अनन्त प्रदेश होते हैं अतः धर्मास्तिकायादिके साथ तुल्यता इसकी घटित नहीं हो सकती है इसलिये धर्मास्तिकायादिकोंके साथ

હવે સૂત્રકાર લોકની અને ધર્માસ્તિકાયાદિકોની પ્રદેશ પરિમાણુની અપેક્ષાએ પરસ્પરમાં તુલ્યતા પ્રકટ કરે છે—

" ચત્તારિ પએસગ્ગેણં તુલ્લા " ઇત્યાદિ (સૂ ૩૭)

પ્રદેશ પરિમાણુની અપેક્ષ એ લોકાકાશ, ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય અને જીવાસ્તિકાયમાં સમાનતા કહી છે, કારણુ કે લોકાકાશના, ધર્માસ્તિકાયના, અધર્માસ્તિકાયના અને એક જીવના અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે. આ રીતે અસંખ્યાત પ્રદેશોની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય આદિ ચાર પદાર્થોમાં તુલ્યતા બતાવવામાં આવી છે.

"લોકાકાશ" આ પદમાં લોકપદથી વિશેષિત જે આકાશ કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણુ એ છે કે આકાશના અનંત પ્રદેશો હોય છે, તેથી ધર્માસ્તિકાય વગેરેની સાથે તેની સમાનતા સંભવી શકતી નથી. તે કારણે, ધર્માસ્તિકાયા-

स्यादिति लोकपदं योजयित्वा लोकाऽऽकाशपदं प्रोक्तं, तथा सति लोकाऽऽकाशस्याप्यसंख्यातप्रदेशत्वेन धर्मास्तिकायादित्रयसाम्यमुपपन्नम् । 'एकजीवे'—स्यत्रैकपदानुपादाने सामान्यतया सर्वजीवोपस्थितौ सर्वेषां जीवानामनन्तप्रदेशत्वाद् धर्मास्तिकायादित्रयसाम्यं न स्यादित्येकजीव इति पदमुपात्तम्, तथा सति एकस्य जीवस्यानन्तप्रदेशत्वाभावेनासङ्ख्यातप्रदेशत्वेन त्रिभिः साम्यमुपपन्नमिति बोध्यम् ॥ सू० ३७ ॥

पूर्वं 'षट्त्रिंशत्तमसूत्रे पृथिव्यादिभिः स्पृष्टो लोकः' इत्युक्तमिति पृथिव्यादीनां चतुर्णां निकायानामेकं शरीरं सुदृश्यं न भवतीति प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—चउण्हमेगं सरीरं नो सुदस्सं भवइ, तं जहा-- पुढविकाइयाणं १, आउकाइयाणं २, तेउकाइयाणं ३, वणस्सइकाइयाणं ४। सू० ३८ ॥

आकाश प्रदेशकी अपेक्षा तुल्यता घटित करनेके लिये "लोकाकाश" एसा कहा गया है क्योंकि लोकाकाशके असंख्यात प्रदेश कहे गये हैं। इसी तरहसे "एक जीव" ऐसा जो पद कहा गया है उसकाभी तात्पर्य ऐसाही है अर्थात् सर्व जीवोंकी अपेक्षा जीवोंके प्रदेश अनन्त होते हैं परन्तु एक जीवके प्रदेश असंख्यातही होते हैं अनन्त नहीं होते हैं यदि जीवके साथ एक पद न दिया जाता सर्व जीवोंकी उपस्थिति हो जानेसे धर्मास्तिकायादिकोंके साथ जीवकी प्रदेशोंकी अपेक्षा समानता नहीं बनती अतः धर्मास्तिकायादिकोंके साथ एक विशेषण दिया गया है क्योंकि एकजीवमें असंख्यात प्रदेशही कहे गये हैं ॥ सू० ३७ ॥

દિકોની સાથે આકાશની પ્રદેશોની અપેક્ષાએ તુલ્યતા ઘટાવવાને માટે "લોકાકાશ" પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે, કારણકે લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશો કહ્યા છે.

એજ પ્રમાણે "એક જીવ" આ પદનો પ્રયોગ કરવાનું કારણ પણ નીચે પ્રમાણે છે—સર્વ જીવોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેમનાં પ્રદેશો અનંત છે. પરન્તુ એક જીવના પ્રદેશો અસંખ્યા જ હોય છે—અનંત હોતા નથી જો 'જીવ' પદની આગળ એક વિશેષણ મૂકવામાં આવ્યું ન હોત તો સર્વ જીવોની ઉપસ્થિતિ થઈ જવાને કારણે ધર્માસ્તિકાય આદિકોની સાથે જીવની પ્રદેશોની અપેક્ષાએ સમાનતા જ સંભવી શકત નહી તેથી ધર્માસ્તિકાય આદિકોની સાથે જીવની સમાનતા ઘટાવવાને નિમિત્તે જીવ પદની આગળ 'એક' વિશેષણ લગાવવામાં આવ્યું છે, કારણ કે એક જીવના અસંખ્યાત પ્રદેશો જ કહ્યા છે. ॥ સૂત્ર ૩૭ ॥

छाया—चतुर्णामेकं शरीरं नो सुदृश्यं भवति, तद्यथा-पृथिवीकायिकानाम् अप्कायिकानां २, तेजस्कायिकानां ३, वनस्पतिकायिकानाम् ४। सू० ३८ ॥

टीका—" चउण्हमेगं " इत्यादि—चतुर्णाम्-अनुपदं वक्ष्यमाणानां पृथिवीकायिकादीनाम्, एकं-सूक्ष्मं शरीरं सुदृश्यम्-अनुमानादिगम्यत्वेऽपि प्रत्यक्षं नो भवति, अतिसूक्ष्मत्वात्, केषां चतुर्णामित्याकाङ्क्षायामाह-" तद्यथे "-त्यादि,-पृथिवीकायिकानाम् १, अप्कायिकानाम २, तेजस्कायिकानाम्, वनस्पतिकायिकानाम् ४। अत्रैकशब्दः सूक्ष्मवाचकः।

ननु वायोरपि शरीरं दृश्यं न भवतीति पञ्चानामिति वक्तव्ये कथं चतुर्णामिति निर्देशः कृत इति चेदाह-बादरवायूनां सूक्ष्माणां पृथिव्यब्वायुतेजोवनस्प-

पृथिवीव्यादिकोंसे लोक स्पृष्ट है ऐसा कहा गया है-सो अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि पृथिव्यादिक चारोंका एक शरीर ऐसाभी है जो सुदृश्य नहीं होता है—" चउण्हमेगं सरीरं नो सुदस्सं " इत्यादि सूत्र ३८ ॥

इन चार पृथिव्यादिकोंका एक शरीर सुदृश्य नहीं होता है वे चार इस प्रकारसे हैं—पृथिवीकायिक १, अप्कायिक २, तेजस्कायिक ३ और वनस्पतिकायिक ४ इनका एक शरीर सुदृश्य नहीं होता है उसका कारण ऐसा है वह अनुमान आदिसे ही गम्य होता है प्रत्यक्षसे गम्य नहीं होता है क्योंकि वह सूक्ष्म शरीर अति सूक्ष्म होना है यहां जो "एक" शब्द प्रयुक्त हुआ है वह इसी सूक्ष्म शरीरका वाचक है।

शंका—वायुका भी तो शरीर दृश्य नहीं होता है फिर यहां सूत्र में " चतुर्णां " ऐसा न कहकर " पञ्चानाम् " ऐसा कहना चाहिये था

પૃથ્વીકાય આદિકોથી લોક સ્પૃષ્ટ છે, એવું પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે, હવે સૂત્રકાર એ વાત પ્રકટ કરે છે કે પૃથ્વીકાય આદિ ચારેનું એક શરીર એવું પણ છે કે જે સુદૃશ્ય હોતું નથી—" चउण्हमेगं सरीरं नो सुदस्सं " ઈત્યાદિ—(સૂ ૩૮)

(૧) પૃથ્વીકાયિક, (૨) અપ્કાયિક, (૩) તેજસ્કાયક અને (૪) વનસ્પતિકાયિક, આ ચાર પ્રકારના જીવોનું એક શરીર સુદૃશ્ય હોતું નથી, તેનું કારણ એ છે કે તે અનુમાન આદિ દ્વારા જ ગમ્ય (જાણી શકાય એવું) હોય છે-પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાય એવું હોતું નથી કારણ કે તે અતિ સૂક્ષ્મ હોય છે.

અહીં જે " એક " શબ્દ વપરાયો છે તે સૂક્ષ્મ શરીરનો વાચક છે-બાદર શરીરનો વાચક નથી.

શંકા—વાયુનું શરીર પણ દૃશ્ય હોતું નથી. તેથી આ સૂત્રમાં 'ચારનું એક શરીર દૃશ્ય હોતું નથી' એમ કહેવાને બદલે 'પાંચનું એક શરીર

तिकायिकानां पञ्चानामेकमनेकं वा शरीरमदृश्यं भवति। बादरपृथिव्यप्तेजोवनस्पतिकायिकानां तु एकमेव शरीरमदृश्यं भवति, अत एव चतुर्णामित्युक्तं, न तु पञ्चानामिति। वनस्पतयस्त्विह साधारणा एव गृह्यन्ते, तेपामेवैकशरीरस्यादृश्यत्वात्, प्रत्येकशरीरस्यतु एकस्यापि दृश्यत्वादिति। सू० ३८॥

पूर्वं पृथिव्यादीनां चतुर्णां सूक्ष्मशरीरस्य चक्षुरग्राह्यत्वमुक्तं, साम्प्रतमिन्द्रियप्रस्तावाच्छ्रोत्रादिकेन्द्रियचतुष्टयशब्दाद्यर्थचतुष्टयस्येन्द्रियसम्बद्धत्वेनाऽऽ-

---

सो ऐसा न कहकर "चतुर्णां" ऐसा ही क्यों कहा गया है?

उत्तर—इस कथनका ऐसा भाव प्रगट करनेके लिये ऐसा कहा गया कि जो वायुकायिक सूक्ष्म और बादर होतेहैं उनका तो कोईभी शरीर चाहे वह सूक्ष्म हो या बादर हो सुदृश्य (देखने योग्य)होताही नहींहै परन्तु जो सूक्ष्म पृथिव्यादि चार हैं उनकाही सूक्ष्म शरीर सुदृश्य नहीं होता है बादर पृथिव्यादिकोंका बादर शरीर तो सुदृश्य होता है, अतः ये चार ऐसे हैं कि जिनका एक सूक्ष्म शरीर ही सुदृश्य नहीं होता है बादर शरीर तो सुदृश्य होता ही है परन्तु वायुकायिकका तो कोई भी शरीर सुदृश्य नहीं होता है। यहां वनस्पति शब्दसे साधारण वनस्पतिकायिक ही गृहीत हुआ है प्रत्येक वनस्पतिकायिक नहीं क्योंकि उनका ही एक सूक्ष्म शरीर अदृश्य होता है बादर वनस्पतिकायिकका बादर शरीर तो दृश्य होता है॥ सू० ३८॥

દૃશ્ય હોતું નથી એમ કહેવું જોઈએ

ઉત્તર—આ કથન પ્રકટ કરવાનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—વાયુકાયિક સૂક્ષ્મ અને બાદર બન્ને પ્રકારના હોય છે. તેમનું બાદર શરીર પણ સુદૃસ્ય હોતું નથી અને સૂક્ષ્મ શરીર પણ સુદૃશ્ય હોતું નથી, આ રીતે તેમનું એક પણ પ્રકારનું શરીર સુદૃશ્ય હોતું નથી. પરન્તુ જે સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાય આદિ પૂર્વોક્ત ચાર પ્રકારના જીવો જ છે તેમનાં જ સૂક્ષ્મ શરીરો સુદૃસ્ય હોતાં નથી. બાદર પૃથ્વીકાય આદિકોના બાદર શરીરો તો સુદૃશ્ય હોય છે જ. તેથી પૂર્વોક્ત પૃથ્વીકાય આદિ ચાર જ એવાં છે કે જેમના સૂક્ષ્મ શરીરો સુદૃશ્ય હોતાં નથી-તેમના બાદર શરીરો તો સુદૃસ્ય હોય છે જ. પરન્તુ વાયુકાયિકોનું તો કોઇ પણ શરીર સુદૃશ્ય હોતું નથી અહીં વનસ્પતિ શબ્દ દ્વારા સાધારણ વનસ્પતિકાયિક જ ગૃહીત થયેલ છે, પ્રત્યેક વનસ્પતિકાયિક ગૃહીત થયેલ નથી કારણ કે તેનું એક સૂક્ષ્મ શરીર જ અદૃશ્ય હોય છે-બાદર વનસ્પતિકાયિકનું બાદર શરીર તો દૃશ્ય હોય છે ॥ સૂ. ૩૮ ॥

स्मज्ञेयत्वं प्रतिपादयितुमाह-

मूलम्--चत्तारि इंदियत्था पुट्ठा वेदेंति, तं जहा-सोइंदियत्थे १, घाणिंदियत्थे २, जिब्भिंदियत्थे ३, फासिंदियत्थे ४। सू०३९॥

छाया--चत्वार इन्द्रियार्थाः स्पृष्टा वेद्यन्ते, तद्यथा-श्रोत्रेन्द्रियार्थः १, घ्राणेन्द्रियार्थः २, जिह्वेन्द्रियार्थः ३, स्पर्शेन्द्रियार्थः ४। ॥ सू० ३९ ॥

टीका--"चत्तारि इंदियत्था" इत्यादि-चत्वारः-चतुःसंख्यका इन्द्रियार्थाः-इन्द्रियैरर्य्यन्ते-स्वविषयीक्रियन्त इतीन्द्रियार्थाः = शब्दादयः स्पृष्टाः - इन्द्रियैः सम्बद्धाः सन्तो वेद्यन्ते-आत्मना ज्ञायन्ते, ते के चत्वार इत्याह-"तद्यथे"-त्यादि-श्रोत्रेन्द्रियार्थः-श्रवणेन्द्रियगोचरः शब्दः १, घ्राणेन्द्रियार्थः घ्राणेन्द्रियगो-

---

पृथिव्यादिक चारोंका सूक्ष्म शरीर चक्षु इन्द्रिय द्वारा ग्राह्य नहीं होता है ऐसा कहकर अब सूत्रकार इन्द्रिय प्रस्तावको लेकर ऐसा कथन करते हैं कि श्रोत्रादिक चार इन्द्रियां ही प्राप्तार्थ प्रकाशक होती हैं अन्य नहीं—"चत्तारि इंदियत्था पुट्ठा वेदेंति" इत्यादि सूत्र ३९ ॥

चार इन्द्रियों के विषय इन्द्रियोंके साथ स्पृष्ट होकर जाते हैं वे इस प्रकारसे हैं—एक श्रोत्रेन्द्रियार्थ १, दूसरा घ्राणेन्द्रियार्थ २, तीसरा जिह्वेन्द्रियार्थ और चौथा स्पर्शनेन्द्रियार्थ ४

इन्द्रियों द्वारा जो अपने विषयभूत बनाये जाते हैं वे इन्द्रियार्थ हैं ऐसे ये इन्द्रियार्थ शब्दादि रूप होते हैं। ये शब्दादिक विषय जब इन्द्रियोंके साथ सम्बद्ध होते हैं तभी आत्मा जाने जाते हैं-शब्द श्रवणेन्द्रिय गोचर होनेसे श्रोत्रेन्द्रियार्थ (श्रोत्रेन्द्रियका विषय) है गन्ध घ्राणेन्द्रिय

પૃથ્વીકાય આદિ પૂર્વોક્ત ચારનાં સૂક્ષ્મ શરીર ચક્ષુઇન્દ્રિય દ્વારા ગ્રાહ્ય હોતા નથી, આ પ્રકારનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર ઇન્દ્રિય-પ્રસ્તાવને અનુલક્ષીને એવું કથન કરે છે કે શ્રોત્રાદિક ચાર ઇન્દ્રિયો જ પ્રાપ્તાર્થ પ્રકાશક હોય છે-અન્ય હોતી નથી—"चत्तारि इंदियत्था पुट्ठा वेदेंति"—(સૂ. ૩૯)

ચાર ઇન્દ્રિયોના વિષય ઇન્દ્રિયોની સાથે સ્પૃષ્ટ થઇને ગ્રાહ્ય થાય છે, તે ચાર વિષયો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) શ્રોત્રેન્દ્રિયાર્થ, (૨) ઘ્રાણેન્દ્રિયાર્થ (૩) જિહ્વેન્દ્રિયાર્થ અને (૪) સ્પર્શનેન્દ્રિયાર્થ.

ઇન્દ્રિયો દ્વારા જેને પોતાના વિષયભૂત ગ્રાહ્ય બનાવવામાં આવે છે તેમને ઇન્દ્રિયાર્થ કહે છે તે ઇન્દ્રિયાર્થ શબ્દાદિ રૂપ હોય છે, તે શબ્દાદિક વિષય જ્યારે ઇન્દ્રિયોની સાથે સંબદ્ધ થાય છે ત્યારે જ આત્મા દ્વારા જાણી શકાય છે. શબ્દ શ્રવણેન્દ્રિય ગોચર હોવાથી શ્રોત્રેન્દ્રિયાર્થ રૂપ છે. ગન્ધ ઘ્રાણેન્દ્રિય

चरो गन्धः २, जिह्वेन्द्रियार्थः-रसनेन्द्रियगोचरो रसः ३, स्पर्शेन्द्रियार्थः-त्वगिन्द्रियगोचरः स्पर्शः ४, एते चत्वार इन्द्रियार्थाः श्रोत्रादीन्द्रियसम्बद्धा आत्मना ज्ञायन्ते । चक्षुर्मनोभ्यां त्वपृष्टा एवार्था आत्मना वेद्यन्त इति ' चत्तारि ' इत्युक्तम् । उक्तं च--

" पुट्ठं सुणेइ सद्दं, रूवं पुण पासइ अपुट्ठं तु ।
गंधं रसं च फासं, बद्धपुट्ठं वियागरे । १ । "

छाया—" स्पृष्टं शृणोति शब्दं, रूप पुनः पश्यत्यस्पृष्टं तु ।
गन्धं रसं च स्पर्शं, बद्धस्पृष्टं व्याकुर्यात् । १ । " इति, ॥सू०३९॥

पूर्वं जीव-पुद्गलयोरिन्द्रियद्वारेण ग्राह्यग्राहकभाव उक्तः, सम्प्रति तयोर्गतिधर्मं प्रदर्शयितुमाह—

मूलम्—चउहिं ठाणेहिं जीवा य पोग्गला य णो संचायेंति बहिया लोगंता गमणयाए, तं जहा—गइअभावेणं १, णिरुवग्गहयाए २, लुक्खयाए ३, लोगाणुभावेणं ४॥सू० ४०॥

गोचर होनेसे घ्राणेन्द्रियार्थहै, रस रसनेन्द्रिय गोचर होनेसे जिह्वेन्द्रियार्थ है, और त्वगिन्द्रिय गोचर होनेसे स्पर्श, स्पर्शेन्द्रियार्थहैं। ये चार ही-शब्द, गन्ध, रस और स्पर्शही श्रोत्रादीन्द्रियोंके साथ सम्बद्ध होने पर आत्मा द्वारा जाने जाते हैं चक्षु इन्द्रिय और मन इनके द्वारा अपने विषयभूत पदार्थ अपृष्ट हुए ही जाने जाते हैं। अतः " चत्तारि " ऐसा कहा गया है। उक्तं च—" पुट्ठं सुणेइ सद्दं " इत्यादि ॥ सूत्र ३९ ॥

इस प्रकारसे जीव और पुद्गलका ग्राह्य ग्राहक भाव कहकर अब सूत्रकार इनके गति धर्मकी प्ररूपणा करते हैं—

ગોચર હોવાથી ઘ્રાણેન્દ્રિયાર્થ રૂપ છે. રસ (સ્વાદ) રસનેન્દ્રિય ગોચર હોવાથી જિહ્વેન્દ્રિયાર્થ રૂપ છે અને સ્પર્શ સ્પર્શેન્દ્રિય ગોચર હોવાથી સ્પર્શેન્દ્રિયાર્થ રૂપ છે. આ ચાર જ-એટલે કે શબ્દ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શ જ શ્રોત્રેન્દ્રિય આદિની સાથે સંબદ્ધ થાય ત્યારે જ આત્મા દ્વારા જાણી શકાય છે ચક્ષુઇન્દ્રિય અને મન, આ બન્ની સાથે સ્પૃષ્ટ થયા વિના જ-અસ્પૃષ્ટ રહીને એમના વિષયભૂત પદાર્થોને તેમના દ્વારા જાણી શકાય છે. કહ્યુ પણ છે કે-" પુટ્ઠં સુણેઇ સદ્દં " ઇત્યાદિ ॥ સૂ. ૩૯ ॥

આ પ્રકારે જીવ અને પુદ્ગલનો ગ્રાહ્ય ગ્રાહક ભાવ પ્રકટ કરીને હવે સૂત્રકાર તેમના ગતિ ધર્મની પ્રરૂપણા કરે છે—

छाया—चतुर्भिः स्थानैर्जीवाश्च पुद्गलाश्च नो शक्नुवन्ति बाह्याल्लोकान्ताद् गमनतायै, तद्यथा-गत्यभावेन १, निरुपग्रहतया २, रूक्षतया ३, लोकानुभावेन ४। ॥ सू० ४० ॥

टीका—" चउहिं ठाणेहिं " इत्यादि—जीवाः पुद्गलाश्च चतुर्भिर्वक्ष्यमाणैः स्थानैः-कारणैः बाह्याल्लोकान्ताद्-अलोके गमनतायै-गमनाय-गन्तुं नो शक्नुवन्ति, तद्यथा-गत्यभावेन-गतिरहितत्वेन, लोकान्तात् परतो जीवपुद्गलानां गति स्वभावविरहात्, अधोगतिस्वभावरहितदीपशिखावत् १, तथा-निरुपग्रहतया-धर्मास्तिकायाभावेन तज्जनितगत्युपष्टम्भविरहात् शकटीप्रभृतिरहितपङ्गुवत् २,

"चउहिं ठाणेहिं जीवाय पोग्गलाय" इत्यादि सूत्र ४० ॥

सूत्रार्थ-इन चार कारणोंसे जीव और पुद्गल बाह्य लोकान्तसे अलोकमें जानेके लिये समर्थ नहीं होते हैं-वे चार कारण इस प्रकारसे हैं-गतिका अभाव १ गति साधक कारणका अभाव २ स्निग्ध रहितता ३ और लोकानुभाव ४ ।

टीकार्थ-लोकान्तसे आगे जीव और पुद्गलोंकी स्वभावताका विरह हो जाता है इसलिये वे अलोकमें जानेके लिये समर्थ नहीं होते हैं, ऐसा यह वहां न जा सकनेका प्रथम कारण है जैसे दीपशिखाका स्वभाव अधोगतिवाला नहीं होताहै, इसी तरहसे लोकान्तमें रहनेवाले जीवका भी ऐसाही स्वभाव है कि जिस कारण वह लोकान्तसे बाहर रहे हुए अलोकमें नहीं जाता है, द्वितीय कारण ऐसा है कि जीव और पुद्गलोंकी गति क्रियामें निमित्त कारण धर्मद्रव्य होता है वह

" चउहिं ठाणेहिं जीवा य पोग्गला य " ઈત્યાદિ (સૂ ૪૦)

સૂત્રાર્થ–નીચેના ચાર કારણોને લીધે જીવ અને પુદ્ગલ લોકાન્તમાંથી બહાર અલોકમાં જઈ શકવાને સમર્થ થતાં નથી–(૧) ગતિનો અભાવ, (૨) ગતિસાધક કારણનો અભાવ, (૩) સ્નિગ્ધતાથી રહિતતા અને (૪) લોકાનુભાવ.

ટીકાર્થ–લોકાન્તથી આગળ જીવ અને પુદ્ગલોની ગતિ સ્વભાવતાનો વિરહ (અભાવ) થઈ જાય છે. તેથી તેઓ અલોકમાં જઈ શકવાને સમર્થ થતાં નથી. આવું અલોકમાં ન જઈ શકવાનું પહેલું કારણ સમજવું. જેમ દીપ શિખાનો સ્વભાવ અધોગતિવાળો હોતો નથી, એજ પ્રમાણે લોકાન્તમાં વિરાજમાન જીવનો પણ એવો જ સ્વભાવ થઈ જાય છે કે જેના કારણે તે લોકાન્તથી બહારના પ્રદેશમાં (અલોકમાં) જઈ શકતો નથી. બીજું કારણ–જીવ અને પુદ્ગલોની ગતિમાં ધર્મદ્રવ્ય નિમિત્તરૂપ બને છે. લોકાન્તની બહાર

तथा–रूक्षतया–स्निग्धतारहितनया वालुकामुष्टिवत्, पुद्गला हि लोकान्तेषु तथा परिणमन्ति यथा ततः परतो गन्तुं न शक्नुवन्ति, कर्मपुद्गलयुक्ता जीवा अपि लोकान्तात् परतो गन्तुं न शक्नुवन्ति, सिद्धजीवास्तु धर्मास्तिकायाभावेनैव लोकान्तात् परतो गन्तुं न शक्नुवन्ति ३, तथा–लोकानुभावेन–लोकमर्यादया विषयक्षेत्रादन्यत्र गन्तुं न शक्नुवन्ति, सूर्यमण्डलवत् ॥ सू० ४० ॥

अनन्तरोक्ता अर्थाः प्रायो दृष्टान्ततः प्राणिनां प्रतीता भवन्तीति दृष्टान्तभेदान् प्रदर्शयितुं पञ्चसूत्रीमाह–

मूलम्–चउव्विहे णाए पण्णत्ते, तं जहा–आहरणे १, आहरणतद्देसे २, आहरणतद्दोसे ३, उवण्णासोवणए ४। (१)

धर्मद्रव्य लोकान्तसे आगे नहीं अतः वे उस कारणके अभावसे शकटी (गाडी)आदि गति साधनसे रहित पङ्गुकी तरह आगे अलोकमें नहीं जाते हैं। तथा–वालुका मुष्टिकी तरह स्निग्धतासे रहित होनेके कारण वे लोकान्तसे आगे नहीं जाते हैं–पुद्गलोंका लोकान्तमें ऐसा परिणमन हो जाता है कि जिससे वे उससे आगेको जानेके लिये समर्थ नहीं होते हैं तथा कर्म पुद्गलोंसे जो वहां जीव रहतेहैं वे भी लोकके अन्तसे आगे अलोकमें नही जा मकते हैं। तथा जो सिद्ध जीव हैं, वे तो धर्मास्तिकायके अभावसेही लोकके अन्तसे आगे नही जा सकतेहैं। चतुर्थ कारण ऐसा है कि जो लोककी मर्यादाही ऐसी बंधी हुई हैं कि अपने विषय क्षेत्रसे आगे सूर्यमण्डलकी तरह जीव और पुद्गल नहीं जा सकते हैं ॥ सू० ४० ॥

અલોકમાં ધર્મદ્રવ્યને સદ્ભાવ જ નથી. જેમ ઘોડી આદિથી રહિત લંગડો માણસ ગતિ કરવાને અસમર્થ બને છે એજ પ્રમાણે ગતિક્રિયાના સાધનરૂપ ધર્મદ્રવ્યને અભાવે અલોકમા જીવ અને પુદ્ગલોની ગતિક્રિયા અટકી જાય છે. ત્રીજું કારણ–જેમ વાલુક (રેતી) સ્નિગ્ધતાથી રહિત હોય છે તેમ તેઓ સ્નિગ્ધતાથી રહિત થઇ જવાને કારણે લોકાન્તની બહાર અલોકમાં જઇ શકતા નથી. પુદ્ગલોનું લોકાન્તમાં એવું (સ્નિગ્ધતા રહિત) પરિણમન થઇ જાય છે કે જેથી તેઓ લોકાન્તથી આગળ જઇ શકવાને સમર્થ થતાં નથી. તથા કર્મપુદ્ગલોથી જે જીવો ત્યાં રહે છે તેઓ પણ લોકાન્તની બહાર અલોકમાં જઈ શકતા નથી તથા જે સિદ્ધ જીવો છે તેઓ તો ધર્માસ્તિકાયના અભાવને લીધે જ લોકાન્તથી આગળ જઇ શકતા નથી ચોથું કારણ એવું છે કે લોકની મર્યાદા જ એવી બંધાયેલી છે કે સૂર્ય મંડળની જેમ જીવ અને પુદ્ગલ પોતાના નિયત ક્ષેત્ર કરતાં આગળ જઇ શકતા જ નથી. ॥ સૂ. ૪૦ ॥

आहरणे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-अवाए १, उवाए २, उवणाकम्मे ३, पडुप्पण्णविणासी ४। (२)

आहरणतद्देसे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-अणुसिट्ठि १, उवालंभे २, पुच्छा ३, निस्सावयणे ४ (३)

आहरणतद्दोसे चतुव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-अधम्मजुत्ते १, पडिलोमे २, अत्तोवणीए ३, दुरुवणीए ४ (४)।

उवण्णासोवणए चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-तव्वत्थुए १, तयन्नवत्थुए २, पडिनिभे ३, हेऊ ४। (५)

हेऊ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा--जावए १, थावए २, वंसए ३, लूसए ४।

अहवा--हेऊ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा--पच्चक्खे १, अणुमाणे २, ओवम्मे ३, आगमे ४।

अहवा--हेऊ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा--अत्थि त्तं अत्थि सो हेऊ १, अत्थि त्तं णत्थि सो हेऊ २, णत्थित्तं णत्थि सो हेऊ ३, णत्थित्तं णत्थि सो हेऊ ४। ॥सू० ४१॥

छाया—चतुर्विधं ज्ञातं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-आहरणम् १, आहरणतद्देशः २, आहरणतद्दोषः ३, उपन्यासोपनयः ४। (१)

अनन्तरोक्त अर्थ प्रायः दृष्टान्तसे प्राणियोंको समझमें आता है इस लिये अब सूत्रकार दृष्टान्त भेदोंको प्रकट करनेके लिये पंचसूत्री कहते हैं "चउव्विहे णाए पण्णत्ते" इत्यादि सूत्र ४१॥

सूत्रार्थ-ज्ञात-दृष्टान्त चार प्रकारका कहा गयाहै जैसे-आहरण१ आह-

---

અનન્તરોક્ત અર્થ-(વિષય) સામાન્ય રીતે દૃષ્ટાન્તો દ્વારા સમજી શકાય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્તના ભેદો પ્રકટ કરવા નિમિત્તે નીચેનાં પાંચ સૂત્રો કહે છે—" ચઉવ્વિહે ણાએ પણ્ણત્તે " ઇત્યાદિ (સૂ ૪૧)

સૂત્રાર્થ-જ્ઞાત (દૃષ્ટાન્ત) ચાર પ્રકારના કહ્યા છે. તે ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-

आहरणं चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-अपायः १, उपायः २, स्थापनाकर्म ३, प्रत्युत्पन्नविनाशी ४। (२)

आहरणतद्देशश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः तद्यथा-अनुशिष्टिः १, उपालम्भः २, पृच्छा ३, निश्रावचनम् ४। (३)

आहारणतद्दोषश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-अधर्मयुक्तं १, प्रतिलोम २, आत्मोपनीतं ३, दुरूपनीतम् ४। (४)

उपन्यासोपनयश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-तद्वस्तुकः १, तदन्यवस्तुकः २, प्रतिनिभः ३, हेतुः ४। (५)

हेतुश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-यापकः १, स्थापकः २, व्यंसकः ३, लूपकः ४।

अथवा-हेतु श्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-प्रत्यक्षम् १, अनुमानम् २, औपम्यम् ३, आगमः ४।

रणतद्देश २ आहरणतद्दोष ३ और उपन्यासोपनय ४ इनमें आहरण चार प्रकारका कहा गया है जैसे-अपाय १ उपाय २ स्थापना कर्म ३ और प्रत्युत्पन्नविनाशी ४-(२)

आहरणतद्देश भी चार प्रकारका कहा गया है जैसे-अनुशिष्ट १ उपालम्भ २ पृच्छा ३ और निश्रावचन ४-(३)

आहरणतद्दोष भी चार प्रकारका कहा गया है जैसे-अधर्मयुक्त १ प्रतिलोम २ आत्मोपनीत ३ और दुरुपनीत ४ (४)

उपन्यासोपनय भी चार प्रकारका कहा गया है जैसे-तद्वस्तुक १ तदन्यवस्तुक २ प्रतिनिभ ३ और हेतु ४ (५)

इनमें हेतु चार प्रकारका कहा गया है जैसे-यापक १ स्थापक २

---

(૧) આહરણ, (૨) આહરણતદ્દેશ, (૩) આહરણતદ્દોષ, અને (૪) ઉપન્યાસોપનય (૧)

તેમાં આહરણના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારો છે-(૧) અપાય, (૨) ઉપાય, (૩) સ્થાપનાકર્મ અને (૪) પ્રત્યુત્પન્નવિનાશી. (૨)

આહરણતદ્દેશના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) અનુશિષ્ટ, (૨) ઉપાલંભ, (૩) પૃચ્છા, અને (૪) નિશ્રાવચન (૩)

આહરણતદ્દોષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) અધર્મયુક્ત, (૨) પ્રતિલોમ, (૩) આત્મોપનીત અને (૪) દુરુપનીત. (૪)

ઉપન્યાસોપનયના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) તદ્વસ્તુક, (૨) તદન્યવસ્તુક, (૩) પ્રતિનિભ અને (૪) હેતુ.

તેમાથી હેતુ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) યાપક, (૨) સ્થાપક, (૩)

अथवा-हेतुश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-अस्तितत्, अस्त्यसौ हेतुः १, अस्ति तत् नास्त्यसौ हेतुः, नास्ति तत् अस्त्यसौ हेतुः ३, नास्ति तत् नास्त्यसौ हेतुः ४॥ ॥ सू० ४१ ॥

टीका--' चउव्विहे णाए ' इत्यादि ।

ज्ञात (न्यायः)चतुर्विधं प्रज्ञप्तं तद्यथा-" आहरणे " इत्यादि, आहरणम् १, आहरणतद्देशः २, आहरणतद्दोषः ३, उपन्यासोपनयः ४ सामान्यतो ज्ञातं द्विविधं

व्यंसक ३ और लूषक ४ अथवा हेतु चार प्रकारका कहा गया है-प्रत्यक्ष १ अनुमान २ औपम्य ३ आगम ४

अथवा-इस प्रकारसे भी हेतु चार प्रकारका कहा गया है अस्तितत् अस्ति असौ हेतुः १ अस्तितत् नास्त्यसौ हेतु २ नास्तितत् अस्त्यसौ हेतुः ३ और नास्तितत् नास्त्यसौ हेतुः ४

विशेषार्थ-ज्ञात शब्दका अर्थ दृष्टान्त उदाहरणहै यह जो प्रथम सूत्र द्वारा आहरण आदिके भेदसे चार प्रकारका कहा गया है उसका तात्पर्यार्थ इस प्रकारसे है—

दृष्टान्त साध्यको बतानेवाला होता है वह साध्य साधनके संबंधमें वादी एवं प्रतिवादीका बुद्धिसाम्यका स्थान होता है अतः सामान्य रूपसे यह दृष्टान्त साधर्म्य दृष्टान्त और वैधर्म्य दृष्टान्त इस तरहसे दो प्रकारका होता है साध्य से व्याप्त साधन जहां दिखाया जाता है वह साधर्म्य दृष्टान्त है इसका दूसरा नाम अन्वय दृष्टान्त भी

વ્યંસક અને (૪) લૂષક. અથવા હેતુના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) પ્રત્યક્ષ, (૨) અનુમાન, (૩) ઔપમ્ય, અને (૪) આગમ.

અથવા હેતુના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) ' अस्तितत् अस्ति असौ हेतुः ", (२) " अस्तितत् नास्त्यसौ हेतुः ", (૩) " नास्तितत् अस्त्यसौ हेतुः" અને (૪) " नास्तितत् नास्त्यसौ हेतु. "

વિશેષાર્થ—'જ્ઞાત' શબ્દ અહીં ઉદાહરણ (દૃષ્ટાન્ત)નો વાચક છે-તે દૃષ્ટાન્તના આહરણ આદિ જે ચાર ભેદો કહ્યા છે તેમનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—

દૃષ્ટાન્ત સાધ્યને બતાવનારું હોય છે. તે સાધ્ય સાધનના સંબંધમાં વાદી અને પ્રતિવાદીના બુદ્ધિસામ્યનું સ્થાન હોય છે. તેથી સામાન્ય રીતે તેના સાધર્મ્ય દૃષ્ટાન્ત અને વૈધર્મ્ય દૃષ્ટાન્ત નામના બે પ્રકાર પડે છે સાધ્ય દ્વારા વ્યાપ્ત સાધન જ્યાં બતાવવામાં આવ્યું હોય છે તેનું નામ 'સાધર્મ્ય દૃષ્ટાન્ત' છે. તેનું બીજું નામ 'અન્વય દૃષ્ટાન્ત' પણ છે કહ્યુ પણ છે કે—

साधर्म्यवैधर्म्यभेदात्, यथा-यत्र यत्र धूमस्तत्राग्निर्यथा महानसः, यत्र वह्नि र्नास्ति तत्र धूमोपि न भवति यथा जलाशये। तदुक्तम्--

" साध्ये नानुगमो हेतोः, साध्याभावे च नास्तिता।
ख्यायते यत्र दृष्टान्तः स साधर्म्येतरो द्विधा ॥१॥

है। उक्त च-"साध्यव्याप्तं साधनं यत्र प्रदर्श्यते सोऽन्वयदृष्टान्तः" जैसे-" यत्र २ धूमस्तत्र तत्राग्निः यथा महानसः यहां पर महानस (रसोई-घर) यह अन्वय दृष्टान्त है क्योंकि-धूम और अग्निका साहचर्य सम्बन्ध हम उन दोनोंको महानसमें देखनेके साथ होता है जहां २ धूम होता है वहां२ अग्नि होती है इस बातकी प्रतीति हम महानस-रसोई-घरमें उन दोनोंको साथ २ रहनेसे करते हैं-रसोई घरमें धूम भी होता है और अग्नि भी होती है, इसलिये धूम अग्निके विना नहीं हो सकता है यदि होगा तो वह अग्निके सद्भावमेंही होगा-जैसा कि वह रसोई घरमेंहै साधनके अभावमें साध्यका अभाव जहां प्रकट किया जाता है वह वैधर्म्य व्यतिरेक दृष्टान्त कहलाता है जैसे-" यत्र वह्निर्नास्ति तत्र धूमोऽपि नास्ति यथा जलाशयः " यहां पर जलाशय तालाब आदि वह व्यतिरेक दृष्टान्त है क्योंकि जलाशयमें साध्यका वह्निका भी अभाव है और धूमका भी अभाव है यही बात "साध्येनानुगमो हेतोः"

" साध्यव्याप्तं साधनं यत्र प्रदर्श्यते सोऽन्वयदृष्टान्तः "

જેમ કે-" यत्र यत्र धूमस्तत्रतत्राग्निः यथा महानसः " અહીં મહાનસ (રસોડું) અન્વય દૃષ્ટાન્ત રૂપ છે, કારણ કે ધૂમ અને અગ્નિનો સાહચર્ય સંબંધ આપણે તે બન્નેને મહાનસમાં જોઈએ ત્યારે સમજી શકાય છે. " જ્યાં જ્યાં ધુમાડો હોય ત્યાં ત્યાં અગ્નિ હોય છે, " આ વાતની પ્રતીતિ આપણે તે બન્નેને રસોડામાં સાથે સાથે જ જોવાથી કરી શકીએ છીએ.-રસોડામાં ધુમાડો પણ હોય છે અને અગ્નિ પણ હોય છે, તેથી એ વાતની પ્રતીતિ થાય છે કે અગ્નિ વિના ધુમાડો સંભવી શકતો નથી, જો ધુમાડાનો સદ્ભાવ હશે તો અગ્નિનો પણ સદ્ભાવ જ હશે.

સાધનને અભાવે જ્યાં સાધ્યનો અભાવ પ્રકટ કરવામાં આવે છે, એવા દૃષ્ટાન્તને 'વૈધર્મ્ય' વ્યતિરેક દૃષ્ટાન્ત કહે છે. જેમ કે-" यत्र वह्नि र्नास्ति तत्र धूमोऽपि नास्ति यथा जलाशयः " અહીં તળાવને વ્યતિરેક દૃષ્ટાન્ત રૂપે પ્રકટ કર્યું છે, કારણ કે તેમાં સાધ્યનો-અગ્નિનો પણ અભાવ હોય છે અને સાધનનો-ધુમાડાનો પણ અભાવ હોય છે એજ વાત " साध्ये नानुगमो हेतोः " ઈત્યાદિ શ્લોક દ્વારા પૃષ્ટ કરવામાં આવી છે.

अथवा आख्यानकं ज्ञातं तत्-चरितकल्पितभेदाद् द्विविधम्। तत्र चरितं यथा 'निदानं दुःखाय ब्रह्मदत्तस्येव' कल्पितं यथा-'प्रमादवत्तां प्रतिबोधनाय "अनित्यं यौवनादिकम्" इत्याद्युपदेशनं; यथा पाण्डुपत्रेण किशलयानां देशितम्। तथाहि--

" जह तुब्भे तह अम्हे, तुब्भे वि य होहिहा जहा अम्हे।
अप्पाहेइ पडंतं, पंडुयपत्तं किसलयाणं ॥१॥" इति।

छाया--यथा यूयं तथा वयं, यूयमपि भविष्यथ यथा वयम्।
अध्यापयति (शिक्षयति) पतत्, पाण्डुपत्रं किशलयानाम् ॥१॥ इति।

इत्यादि। इस श्लोक द्वारा पुष्ट की गई है अथवा-जो आख्यानक होता है वह ज्ञात है यह चरित और कल्पितके भेदसे दो प्रकारका होताहैजैसे-"निदानं दुःखाय ब्रह्मदत्तस्येव" ब्रह्मदत्तकी तरह निदानबन्ध (नियाणा) दुःखके लिये होता है यहां ब्रह्मदत्त चरितरूप आख्यानक है क्योंकि यह प्रसिद्ध है और उसेही यहां दृष्टान्त रूपमें रखा गया है कल्पित आख्यानक इस प्रकारसे है-जैसे प्रमादपतित व्यक्तियोंको प्रतिबोधन करनेके लिये ऐसा कहना कि यौवनादिक अनित्य है जैसा कि पीले पत्तोंने-जीर्णशीर्ण पत्तोंने-किशलयों से कोंपलोंसे कहा "जह तुब्भे तह अम्हे" इत्यादि। जैसे तुम हो वैसे हमभी थे अब तुमभी आगे चलकर हम जैसे हो जाओगे यहां पाण्डुपत्तों (पीले पत्तों)ने किशलयों (कोंपलों)

અથવા—જે આખ્યાનક (ઉદાહરણ) હોય છે તેને જ્ઞાત કહે છે. તેના ચરિત અને કલ્પિત એવા બે ભેદ પડે છે જેમ કે-"निदानं दुःखाय ब्रह्मदत्तस्येव" "બ્રહ્મદત્તની જેમ નિદાનબન્ધ દુઃખરૂપ જ હોય છે." અહીં બ્રહ્મદત્ત ચરિતરૂપ આખ્યાનક (દૃષ્ટાન્ત) છે, કારણ કે તેની કથા જાણીતી છે, છે, તેથી તેને અહીં દૃષ્ટાન્ત રૂપે મૂકવામાં આવેલ છે. કલ્પિત આખ્યાનકનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

કોઈ પ્રમાદી માણસને પ્રતિબોધિત કરવા માટે આ પ્રમાણે કહેવામાં આવે છે કે-"યૌવનાદિક અનિત્ય છે" આ અનિત્યતા પ્રકટ કરવા માટે આ પ્રકારનું કલ્પિત દૃષ્ટાંત આપવામાં આવે છે—

પીળાં પડી ગયેલાં પર્ણોએ જીર્ણશીર્ણ પર્ણોએ-કોંપળોને (નવાં ફૂટી નીકળેલાં પર્ણોને) આ પ્રમાણે કહ્યું-"जह तुब्भे तह अम्हे" ઈત્યાદિ—

"જેવાં તમે છો એવાં અમે પણ હતાં ભવિષ્યમાં તમે પણ અમારાં જેવાં જ બની જશો." અહીં પીળાં પર્ણોએ હરિત કોંપળોને તેમની અનિ-

यद्वा ज्ञातमुपपत्तिमात्रं ज्ञातहेतुत्वात् यथा-" कस्माद् धान्यानि क्रीयन्ते ? यस्मान्मुधान लभ्यन्ते"। यद्वा-' किमर्थः धर्मः क्रियते, मुधा कल्याणं न जायते" इति। अथवा-उपमानमात्रं ज्ञातम्, यथा-सुकुमारः करः कमलवत्, इति। एव-

को जो उपदेश दिया है वह कविने अपनी तरफसे कल्पित किया है अतः इस प्रकारके आख्यानक कल्पित दृष्टान्त हैं। और ये प्रमाद-पतित व्यक्तियोंके धनयौवनादिक अनित्य हैं इस बातको समझानेके लिये कहे जाते हैं।

अथवा—ज्ञातको हेतु होनेसे जो उपपत्ति मात्र होता है वह ज्ञात है जैसे-" कस्मात् धान्यानि क्रीयन्ते? यस्मात् मुधा न लभ्यन्ते" यद्वा-" किमर्थः धर्मः क्रियते ? मुधा कल्याणं न जायते " तुम धान्यको क्यों खरीद रहे हो ? इस प्रकारके प्रश्नके उत्तरमें कहा है कि विना खरीदे चावल नहीं मिलते हैं अथवा-धर्म क्यों किया जाता है ? विना धर्मको किये कल्याण नहीं होता है इस प्रकारका यह सब कथन उपपत्ति मात्र है, क्योंकि यह ज्ञातकाही हेतु है। अथवा-जो उपमान मात्र होता है वह ज्ञात है जैसे-" सुकुमारः करः कमलवत् " कमलकी तरह कर-हाथ सुकुमार है यहां कमल उपमान होनेसे ज्ञात स्वरूप है इस प्रकारसे साध्यके

त्यता विषे ઉપદેશ આપવાની વાત કવિ કલ્પિત હોવાથી તેને કલ્પિત દૃષ્ટાન્ત રૂપ ગણી શકાય. પ્રમાદપતિત વ્યક્તિઓને ધન, યૌવન આદિની અનિત્યતા બતાવવા માટે આ પ્રકારનું દૃષ્ટાન્ત આપવામાં આવે છે

અથવા—જ્ઞાતના હેતુરૂપ હોવાથી જે ઉપપત્તિ માત્ર રૂપ હોય છે, તે જ્ઞાત છે. જેમ કે " कस्मात् धान्यानि क्रीयन्ते ? यस्मात् मुधा न लभ्यन्ते "

અથવા—" किमर्थं धर्मः क्रियते ? मुधा कल्याणं न जायते " તમે ધાન્યને શા માટે ખરીદિ રહ્યા છો ? " આ પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે કહેવામાં આવે છે કે તે ખરિધ્યા વિના ચોખા મળતા નથી અથવા-" ધર્મ શા માટે કરવામાં આવે છે ? "

ઉત્તર—" ધર્મ કર્યા વિના જીવનું કલ્યાણ થતું નથી. " આ પ્રકારનું સમસ્ત કથન ઉપપત્તિ માત્ર જ છે કારણ કે તે જ્ઞાતનો જ હેતુ છે. અથવા-જે ઉપમાન માત્ર હોય છે તે જ્ઞાત છે-જેમ કે-" सुकुमारः करः कमलवत् " " હાથ કમળના જેવાં સુકુમાર છે " અહીં કમલ ઉપમાન હોવાથી જ્ઞાત-સ્વરૂપ છે. આ પ્રકારે સાધ્યના બોધક સ્વરૂપવાળું જ્ઞાત ઉપાધિ ભેદની અપે-

मनेकप्रकारेण साध्यबोधनस्वरूपं ज्ञातमुपाधिभेदात् चतुर्विधं भवति "आह-रण" मित्यादि। तत्र आ=समन्तात् ह्रीयते प्रतीतिपथमानीयते अज्ञातः साध्य-रूपोऽर्थोऽनेनेत्याहरणम् अर्थाद् यत्र स्थले समुदित एव दार्ष्टान्तिकोऽर्थः प्राप्यते तदाहरणम् यथा-पापे कालसौकरिकस्येवेति १। द्वितीयभेदमाह-'आह-रणतद्देसे' इति। 'आहरणतद्देस' इति। तस्याहरणार्थस्य देशस्तद्देशः स च असौ आहरणं चेत्युपचाराद् आहरणतद्दोप इति, अत्र प्राकृतत्वादाहरणपदस्य पूर्वनिपातः। अत्रायमभिसन्धिः यत्र दृष्टार्थस्यैकेनैवावयवेन दार्ष्टान्तिकार्थ-स्योपनयनं क्रियते तद्देशोदाहरणम् यथा चन्द्र इव मुखमिति, अत्र हि दार्ष्टान्ते चन्द्रे बहवो धर्माः सन्ति तेभ्य एकस्यैव सौम्यत्वस्य मुखे उपनयनं न त्वायाम-विष्कम्भादीनामित्येकदेशेनैनोपनय इति २। तृतीयभेदमाह-" आहरणत-

---

बोधक स्वरूपवाला ज्ञात उपाधि भेदसे चार प्रकारका प्रकट किया गया है-जिसके द्वारा अज्ञात साध्यरूप अर्थ अच्छी तरहसे प्रतीति मार्गमें लाया जाता है वह आहरण ज्ञात है अर्थात् जिस स्थलमें समुदितही दार्ष्टान्तिकका अर्थ प्राप्त किया जाता है वह आहरण ज्ञातहै जैसे पापमें कालसौकरिकका समुदित संपूर्ण अर्थ प्राप्त हो जाता है। जिसमें दृष्टान्तार्थके एकही अवयवसे दार्ष्टान्तिक अर्थका उपनयन किया जाता है वह आहरणतद्देश ज्ञात है जैसे-" चन्द्र इव सुखम् " मुख चंद्रमाके समान है यहां दृष्टान्त चंद्रमें यद्यपि अनेक धर्म हैं परन्तु उनमेंसे एक सौम्य धर्मकाही मुखमें उपनयन आरोप किया गया है आयाम वि-ष्कम्भ (लंबाई चौडाई) आदि धर्मोका नहीं, इस तरह दार्ष्टान्तके एक देशसे जो उपनयन होता है वह तद्देशाहरण-आहरणतद्देश ज्ञात है।

क्षाએ ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે—જેના દ્વારા અજ્ઞાત સાધ્ય રૂપ અર્થની સારી રીતે પ્રતીતિ કરાવાય છે, તેને આહરણ જ્ઞાત કહે છે. એટલે જે સ્થળે સમુ-દિત જ દાર્ષ્ટાન્તિકનો અર્થ પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, એવા દૃષ્ટાન્તને આહ-રણ જ્ઞાત કહે છે. જેમકે પાપમાં કાલસૌકરિકનો સમુદિત સંપૂર્ણ અર્થ પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. જેમાં દૃષ્ટાર્થના એક જ અવયવથી દાર્ષ્ટાન્તિક અર્થનું ઉપ-નયન (આરોપણ) કરવામાં આવે છે તેનું નામ " આહરણતદ્દેશ જ્ઞાત " છે જેમ કે-" चन्द्र इव सुखम् " " મુખ ચન્દ્રના સમાન છે. " અહીં ચન્દ્રમાં અનેક ગુણો હોવા છતાં પણ તેમાંથી એક માત્ર 'સૌમ્ય ગુણનું' જ મુખમાં ઉપનયન (આરોપણ) કરવામાં આવ્યું છે-ચન્દ્રની લંબાઈ, પહોળાઈ, વિસ્તાર આદિનું મુખમાં આરોપણ કરવામાં આવ્યું નથી. આ રીતે દાર્ષ્ટાન્તના એક દેશ (અંશ)થી જે ઉપનયન થાય છે તેને તદ્દેશાહરણ (આહરણતદ્દેશ) કહે છે.

दोस" इति। तस्याहरणस्य साक्षात्सम्बन्धीदोषस्तद्दोषः स चासौ आहरणं चेति आहरणतद्दोषः, इहापि प्राकृतत्वादेवाहरणस्य पूर्वनिपातः। यद्वा-तस्य-आहरणस्य दोषो यस्मिन् तत्तथा आहरणतद्दोष इति। अयमाशयः-यत् साध्य-विकलत्वादि दोष दुष्टं तत्-तद्दोषाहरणम् यथा नित्यः शब्दः अमूर्तत्वात् घटव-दित्यत्र दृष्टान्ते नित्यत्वममूर्तत्वं च नास्तीति साध्यसाधन वैकल्यं नाम दृष्टान्त-दोषः। अथवा साध्यसिद्धिं संपादयन् दोषान्तरमप्युपनयति तदपि तद्दोषाहरणमेव यथा-

" वरं कूपशताद्वापी, वरं वापीशतात् क्रतुः।
वरं क्रतुशतात्पुत्रः, सत्यं पुत्रशताद्वरम् " ॥१॥ इति लोकोक्तिः,

---

इसका तात्पर्य ऐसा है-जो ज्ञात उदाहरण साध्य विकल आदि दोषसे दुष्ट होता है वह उदाहरणमदोष-तद्दोषाहरण ज्ञात है जैसे-" नित्यः शब्दः अमूर्तत्वात् घटवत् " यहां " घट " यह ज्ञात है इसमें नित्य-त्वरूप साध्य और अमूर्तत्वरूप साधन ये दोनों नहीं पाये जाते हैं क्योंकि घट कार्य होनेसे अनित्य है और पौद्गलिक होनेसे वह मूर्त है। इस तरह यह घट दृष्टान्त-ज्ञात-साध्य और साधन दोनोंसे विकल (हीन) है साध्य साधनसे विकल (हीन) होना यह दृष्टान्तका दोष है। इस दृष्टान्त दोषवाला घट है, अतः यह घट ज्ञात तद्दोषाहरण भेदवाला है। अथवा-जो ज्ञात साध्य सिद्धिको करता हुआ भी दोषान्तरमें साध्यसिद्धि कर देता है वह भी तद्दोषाहरण ज्ञात है जैसे-" वरं कूप-शताद्वापी " इत्यादि। यह लोकोक्ति है इस कथनसे श्रोताओंके मनमें

હવે આહરણતદ્દોષ (તદ્દોષાહરણ-તદ્દોષ ઉદાહરણ)નો ભાવાર્થ પ્રકટ કરવામાં આવે છે—જે જ્ઞાત-ઉદાહરણ સાધ્યવિકલ આદિ દોષોથી દુષ્ટ (દુષિત) હોય છે તેનું નામ 'તદ્દોષાહરણ જ્ઞાત' છે. જેમકે " नित्यः शब्दः अमूर्त्तत्वात् घटवत् " અહીં " ઘટ " એ જ્ઞાત (ઉદાહરણ) છે તેમાં નિત્યત્વ રૂપ સાધ્ય અને અમૂર્તત્વ રૂપ સાધન એ બન્નેનો સદ્ભાવ દેખાતો નથી, કારણ કે ઘટ કાર્યરૂપ હોવાથી અનિત્ય નથી અને પૌદ્ગલિક હોવાથી મૂર્ત પણ નથી. આ રીતે ઘટનું દૃષ્ટાન્ત સાધ્ય અને સાધન બન્નેથી રહિત છે. સાધ્ય અને સાધનથી વિકલ (હીન) હોવું એજ દૃષ્ટાન્તનો દોષ ગણાય છે. આ પ્રકારના દૃષ્ટાન્ત દોષવાળો ઘટ (ઘડો) છે. તેથી આ ઘટનું દૃષ્ટાન્ત તદ્દોષા-હરણ (આહરણતદ્દોષ) ભેદવાળું ગણાય છે

અથવા જે જ્ઞાત (દૃષ્ટાન્ત) સાધ્યસિદ્ધિ કરતું થકું પણ દોષાન્તરમાં સાધ્યસિદ્ધિ કરી નાખે છે તેને પણ તદ્દોષાહરણ જ્ઞાત કહે છે. જેમકે-

अनेन कथनेन श्रोतृणां मनसि संसारकारणेष्वारम्भपरिग्रहेष्वपि वापीपुत्रादिषु धर्मजनकत्वं स्थापितमिति भवत्येव तस्यापि-आहरणतद्दोषतेति ।३। चतुर्थभेदमाह-'उवन्नासोवणए' इति । वादिना स्वाभिमतसाध्यस्य साधनाय हेतूपन्यासे कृते तद्विघटनाय प्रतिवादिना यद् विरुद्धार्थस्योपनयनं क्रियते स उपन्यासोपनयः, यथा आत्मा अकर्ता अमूर्तत्वाद्गगनवदिति वादिनोक्ते सति तद्विघटनाय प्रतिवादिनोच्यते यदि गगन दृष्टान्तेन त्वया आत्मनि अकर्तृत्वं साध्यते

संसारके कारण आरम्भ एवं परिग्रह रूप वापी पुत्रादिकोंमें भी धर्मजनकता स्थापित होती है।

अतः यह आहरणतद्दोषवाला है तात्पर्य इसका ऐसा है कि यहां क्रतु (यज्ञ) और सत्यके दृष्टान्तसे वापी एवं पुत्रोंमें धर्मजनकता पुष्टकी गई है, अतः ये दोनों दृष्टान्त दृष्टान्तके दोषवालेहैं। "उवन्नासोवणए" यह चतुर्थ भेद है इसका तात्पर्य ऐसा है कि किसी वादीने अपने साध्यको सिद्ध करनेके लिये हेतुका प्रयोग किया और उसे विघटन(निवारण) करनेके लिये प्रतिवादीने विरुद्धार्थका उपनयन किया जैसे-"आत्मा अकर्त्ता अमूर्तत्वात् गगनवत्" ऐसा किसी वादीने-सांख्यने कहा इसके विरुद्ध प्रतिवादीने उसके मन्तव्यको हटानेके लिये ऐसा कहा कि यदि तुम गगनके दृष्टान्तको लेकर आत्मामें अकर्तृत्व सिद्ध करते हो

"वरं कूपशताद्वापी" ઈત્યાદિ—આ લોકોક્તિ છે. આ કથન દ્વારા શ્રોતાઓના મનમાં સંસારના કારણભૂત આરંભ અને પરિગ્રહ રૂપ વાપી પુત્રાદિકોમાં પણ ધર્મજનકતા સ્થાપિત થાય છે. તેથી આ આહરણતદ્દોવાળું દૃષ્ટાંત છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે અહીં ક્રતુ (યજ્ઞ) અને સત્યના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા વાપી (વાવ) અને પુત્રોમાં ધર્મજનકતા પુષ્ટ કરવામાં આવી છે તેથી આ બન્ને દૃષ્ટાન્તો દૃષ્ટાન્તના દોષવાળાં છે.

"उवन्नासोवणए" 'ઉપન્યાસોપનય' આ ચોથા પ્રકારનો ભાવાર્થ હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે–કોઇ વાદીએ પોતાના સાધ્યને સિદ્ધ કરવાને માટે હેતુનો પ્રયોગ કર્યો તેને તોડી પાડવાને માટે પ્રતિવાદીએ વિરુદ્ધાર્થનું ઉપનયન (આરોપણ) કર્યું, જેમકે "आत्मा अकर्ता अमूर्तत्वात् गगनवत्" "અમૂર્ત હોવાને કારણે આત્મા આકાશની જેમ અકર્તા છે", આ પ્રકારનું કથન કોઇ સાંખ્યમતવાળાએ કર્યું. તેના આ મતનું ખંડન કરવાને માટે તેના કરતાં વિરુદ્ધ અભિપ્રાય ધરાવનારે આ પ્રમાણે દલીલ કરી. "જો તમે ગગનના દૃષ્ટાન્તને આધારે આત્મામાં અકર્તૃત્વ સિદ્ધ કરતા હો તો એજ

तदा तेनैव दृष्टान्तेनाभोक्तृत्वमपि सिद्ध्यतु, तच्चानिष्टमिति । यथा वा मांस भक्षणम् अदुष्टं प्राण्यङ्गत्वात् ओदनवदिति प्रयोगेण वादिना मांसभक्षणे दोषाभावः प्रतिपाद्यते. तत्र प्रतिवादिना कथ्यते प्राण्यङ्गत्वाविशेषात् स्वपुत्रमांसभक्षणमपि विधेयं स्यादिति आहरणोपन्यासः । यद्वा-यत्किंचित्साधर्म्यमादाय प्रवर्त्तमानं प्रति यत्किंचित्साधर्म्येणैव प्रत्यवस्थानमाहरणोपन्यास इति ।

तो इसी दृष्टान्तसे अभोक्तृत्वभी सिद्ध हो जाना चाहिये क्योंकि गगनमें अकर्तृत्व और अभोक्तृत्व ये दोनों बाते हैं परन्तु सांख्य आत्मामें अभोक्तृत्व मानता नहीं है यह उसे अनिष्टहै "अकर्त्ता निर्गुणो भोक्ता आत्मा कापिलदर्शने " ऐसा उसका कथन है अथवा-ऐसा कहना कि मांस भक्षणं अदुष्टं प्राण्यङ्गत्वात् ओदनवत् " ओदनकी तरह मांसका भक्षण अदुष्ट है क्योंकि उसकी तरह वह भी प्राणीका अङ्ग है इस प्रकारके कथनमें ओदन दृष्टान्त लेकर प्राण्यङ्ग हेतुद्वारा वादीने मांस भक्षणमें दोषाभाव प्रतिपादित किया तब प्रतिवादीने ऐसा कहा-प्राणीके अङ्गकी अविशेषता होनेसे स्वपुत्रका मांस भक्षणभी विधेय हो जाता है इस तरहसे यह कथन विरुद्धार्थका उपनयन-उपन्यासोपनय रूप है अथवा चाहे जो कुछ साधर्म्य लेकर प्रवर्तमानके प्रति चाहे किसी साधर्म्यसेही प्रत्यवस्थान करना यह उपन्यासोपनय आहरणोपन्यास है

દૃષ્ટાન્ત દ્વારા આત્મામાં અભોકતૃત્વ પણ સિદ્ધ થઈ જવું જોઈએ, કારણ કે આકાશમાં અકર્તૃત્વ અને અભોક્તૃત્વ, આ બન્નેનો સદ્‌ભાવ છે " પરન્તુ સાંખ્ય મતને માનનારા લોકો આત્મામાં અભોકતૃત્વ માનતા નથી-એ વાત તેમને માટે અસ્વીકાર્ય છે. " अकर्ता निर्गुणो भोक्ता, आत्मा कपिलदर्शने " તેઓ તો આત્માને અકર્તા. નિર્ગુણ અને ભોક્તા માને છે. અથવા એવું કહેવું કે " मांस भक्षण अदुष्टं प्राण्यङ्गत्वात् ओदनवत् " ઓદનની જેમ માંસનું ભક્ષણ પણ અદુષ્ટ છે, કારણ કે તેની જેમ તે પણ પ્રાણીનુ અંગ છે "

આ પ્રકારના કથન વડે ઓદન દૃષ્ટાન્તનો આધાર લઈને પ્રાણ્યંગ હેતુ દ્વારા વાદીએ માંસ ભક્ષણમાં દોષના અભાવનું પ્રતિપાદન કર્યું ત્યારે પ્રતિવાદીએ એવી દલીલ કરી કે " પ્રાણીના અંગની અવિશેષતા હોવાથી સ્વપુત્રના માંસનું ભક્ષણ પણ વિધેય થઈ જાય છે એટલે કે સ્વપુત્રનું માંસ ખાવાનો પણ નિષેધ સંભવી શકે નહીં." આ રીતે આ કથન વિરૂદ્ધાર્થના ઉપનયન (આરોપણ) રૂપ એટલે કે ઉપન્યાસોપનય રૂપ છે. અથવા-કોઈ પણ સાધર્મ્યની અપેક્ષાએ પ્રવર્તમાનમાં કોઇ પણ સાધર્મ્ય વડે જ પ્રત્યવસ્થાપન કરવુ તેનુ નામ ઉપન્યાસોપનય આહરણોપન્યાસ છે.

अथैषां प्रत्येकं चातुर्विध्यमाह-' आहरणे ' इत्यादि आहरणं चतुर्विधं प्रज्ञप्तं तद्यथा-' अवाए ' इत्यादि । ' अवाए ' अपायः=अनर्थः, स यत्र द्रव्यादिषु कथ्यते तदाहरणमपायः यथा एतेषु द्रव्यविशेषेष्वस्त्यपायः विवक्षितद्रव्यादिवदेवेति । अथवा-द्रव्यादीनां हेयता कथ्यते तदाहरणमपायः । अपायश्चतुर्विधो द्रव्यक्षेत्र-कालभावभेदात् । तत्र द्रव्यादपायो द्रव्यापायः, द्रव्ये अपायः द्रव्यमेव वा अपायो द्रव्यापायः एतद्धेयता साधकमेतत्साधकं वा आहरणमुच्यते तत्र द्रव्यापायस्यायं प्रयोगः द्रव्यापायः परिहार्यः द्रव्ये वा अपायो निराकरणीयः । देशान्तरगमनेनो-पार्जितद्रविणयोः भ्रातृवणिजोरिव (१)

अब सूत्रकार इन सबके प्रत्येकके चार चार भेदोंको प्रकट करते हुए कहते हैं जो आहरण ज्ञात है वह चार प्रकारका कहा गया है जैसे-" अवाए " इत्यादि अपाय नाम अनर्थका है यह अपाय जहां द्रव्या-दिकोंमें कहा जाता है वह आहरणका भेद अपाय है जैसे-विवक्षित द्रव्यादिकी तरहही इन द्रव्य विशेषोंमें अपाय है । अथवा-द्रव्यादिकोंकी हेयता जिसके द्वारा कही जाती है वह आहरणका भेद अपाय है यह अपायभी द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके भेदसे चार प्रकारका है द्रव्यसे या द्रव्यरूप जो अपाय है वह द्रव्यापाय है द्रव्य की हेयताका साधक अथवा द्रव्यका साधक जो उदाहरण होता है वह अपाय आहरण है देशान्तर गमनसे उपार्जित द्रव्यवाले दो वैश्य भाइयोंकी तरह द्रव्यापाय परिहार्य हैं या द्रव्यमें अपाय निराकरणीय

હવે સૂત્રકાર તે પ્રત્યેકના ચાર ચાર ભેદોનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—આહ-રણજ્ઞાતના " अवाए " અપાય ઈત્યાદિ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે અપાય એટલે અનર્થ. તે અપાયનું જ્યાં દ્રવ્યાદિકોમાં કથન કરવામાં આવે છે ત્યાં તે આહરણના અપાયભેદ રૂપ હોય છે, જેમકે-વિવક્ષિત દ્રવ્યાદિની જેમ જ આ દ્રવ્યવિશેષોમાં અપાય છે અથવા-દ્રવ્યાદિકોની હેયતાનું જેના દ્વારા પ્રતિપાદન કરાય છે તે આહરણના ભેદ અપાયરૂપ છે.

આ અપાય પણ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવના ભેદથી ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે દ્રવ્ય વડે, દ્રવ્યમાં અથવા દ્રવ્યરૂપ જે અપાય છે તેને દ્રવ્યાપાય કહે છે દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિકોની હેયતાનું સાધક અથવા દ્રવ્યની હેયતાનું સાધક જે ઉદાહરણ હોય છે તેને અપાય આહરણ કહે છે. પરદેશ જઈને જેમણે ઘણું જ ધન ઉપાર્જન કર્યું હતું એવાં બે વૈશ્યભાઈઓના દૃષ્ટાન્તની જેમ દ્રવ્યાપાય પરિહાર્ય છે અથવા દ્રવ્યમાં અપાય નિરાકરણીય છે.

तथाहि–कस्मिंश्चिन्नगरे द्वौ वणिजौ स्तः तौ देशान्तराद् धनमुपार्ज्य गृहसमीपमागतौ, तत्रैकेन विचारितं भ्रातरं मारयित्वा सर्वमेव धनं नेयं, तत्र द्वयोर्विवादो जातः तदनन्तरं धनं जले प्रक्षिप्तम् तत्र मत्स्येन निगलितं तद्धनम्, मत्स्यश्च धीवरेण व्यापादितः। तं चान्यः क्रीत्वा स्वगृहे नीतवान्। तद्गृहे मातृपुत्र्यौ मिलित्वा मत्स्यं विदारयितुमारब्धवत्यौ, तदुदरे तादृशं धनं दृष्ट्वा पुत्र्या माता व्यापादिताः एतत्सर्वं दृष्ट्वा तौ भ्रातरौ वणिजौ समुत्पन्नवैराग्यौ प्रव्रजितौ। तत्परिहारश्च प्रव्रज्या ग्रहणादिति आहरणता चैकदेशेन, उपनयस्य त्यागात् १।

है इस दृष्टान्तका स्पष्टीकरण इस प्रकारसे है–किसी नगरमें दो वैश्य रहते थे जब वे देशान्तरसे धन उपार्जित कर अपने घरके पास आ पहुँचे तब एकने विचार किया कि भाईको मारकर सब धन ले लेना चाहिये इतनेमें दोनोंमें विवाद हो गया तब उस धनको जलमें फेंक दिया वहां मत्स्यने उसे निगल लिया, धीवरने उस मत्स्यको पकड़ने से वह मत्स्य मर गया उस मत्स्य को किसी दूसरेने उससे खरीद लिया जब वह उसे लेकर घर आया तो माँ और बेटीने मिलकर उसे चीरा चीरतेही उसके पेटमें धन देखकर पुत्रीने मांको मार दिया यह सब हाल देखकर वे दोनों भाई संसार शरीर और भोगोंसे विरक्त होकर प्रव्रजित हो गये १ यह द्रव्यापाय परिहार्य है

क्षेत्रसे क्षेत्र में जो अपाय है वह या क्षेत्ररूप जो

હવે તે દૃષ્ટાન્તનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—કોઈ નગરમાં બે વૈશ્ય રહેતાં હતા. તેઓ ધન કમાવા પરદેશ ગયા. ધનોપાર્જન કરીને તેઓ પોતાને ગામ પાછા ફરવા માટે રવાના થયા. ઘરની પાસે આવતાં જ એકના મનમાં એવો વિચાર આવ્યો કે ભાઇને મારી નાખીને બધું ધન હું જ કબજે કરી લઉં. આ ધનને કારણે બન્ને ભાઇઓ વચ્ચે ભારે ઝગડો થયો. તેમણે ગુસ્સે થઈને તે ધનને કોઇ જળાશયમાં ફેંકી દીધું. જળાશયમાં રહેલો કોઈ મત્સ્ય તે ધનને ગળી ગયો. કોઈ એક માછીમારે તે માછલાને પકડીને મારી નાખ્યું અને તેને કોઇ બીજા માણસને વેચ્યું. તે માણસે તે મત્સ્ય પોતાને ઘેર લઈ જઈને રાંધવા માટે પત્નીને સોંપ્યું. તેની પત્ની અને પુત્રીએ તે મત્સ્યના જ્યારે ટુકડા કર્યા ત્યારે તેના પેટમાંથી પેલું ધન તેમને હાથ લાગ્યું તે ધનને ખાતર પુત્રીએ માતાને મારી નાખી આ સમસ્ત હકીકત જ્યારે તે વૈશ્ય ભાઇઓએ જાણી ત્યારે તેમને સંસાર પર વૈરાગ્યભાવ આવી જવાથી ભોગોથી વિરકત થઈને તેમણે પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરી લીધી. આ દ્રવ્યાપાય પરિહાર્ય છે.

क्षेत्रापायमाह–क्षेत्रात् क्षेत्रे क्षेत्रं वा अपायः क्षेत्रापायः यथा संभवत्यपायः सशत्रु क्षेत्रे ससर्पगृहवत् " ससर्पे च गृहे वासो मृत्युरेव न संशयः " इति। यथा च जरासन्धाभिध प्रतिवासुदेवात् संभावितापायं सौर्यपुरं परित्यक्तवन्तो दशार्हा इति। कालापायमाह–कालापायो यथा–सापायकालवर्जने प्रयत्नं कुर्यात् द्वैपायनवत् यथा–द्वादशवर्षेण द्वारका विनंक्ष्यतीति नेमिनाथवचनश्रवणेन द्वैपायनो द्वादशवर्षलक्षणसापायकालपरिहारेच्छया. उत्तरापथमवृत्तोऽभूत्। भावापायमाह–भावापायो यथा–कोपभावं परिहरेत् चण्डकौशिकवदिति यथा–समुत्पन्नजातिस्मरश्चण्डकौशिकः कोपरूपं भावापायं परिहृतवानिति। १।

अपाय है वह क्षेत्रापाय है जिस प्रकार सर्प सहित गृहमें निवास करनेसे मृत्यु संभावित है उसी प्रकार शत्रु सहित क्षेत्रमें रहनेसे भी अपाय संभावित है–" ससर्पे च गृहे वासो मृत्युरेव न संशयः " जिस क्षेत्रमें अपाय संभवित होता है उसे छोड़ देना चाहिये जैसे–जरासंध प्रति वासुदेवसे संभावित अपायवाले सौर्यपुर नगरको दशार्हो ने छोड दिया था यह क्षेत्रापाय है अपाय सहित कालके त्यागमें द्वैपायनकी तरह प्रयत्न करना चाहिये जैसे कि १२ वर्षके बाद द्वारका नगरी नष्ट हो जावेगी ऐसी भविष्यवाती जब द्वैपायनने नेमिनाथके मुंहसे सुनी तो वे उस सापायकालको छोडनेकी इच्छासे उत्तरापथमें चले गये थे यह कालापायहै कोपभाव (क्रोध)का चण्डकोशिककी तरह छोड देना भावापाय है चण्डकौशिकको जब जातिस्मरण ज्ञान हो गया तब उसने कोपरूप भावा-

---

ક્ષેત્ર વડે, ક્ષેત્રમાં કે ક્ષેત્રરૂપ જે અપાય છે તેને ક્ષેત્રાપાય કહે છે. જેવી રીતે સર્પવાળા ઘરમાં નિવાસ કરવાથી મૃત્યુનો સંભવ રહે છે. એજ પ્રમાણે શત્રુસહિતના ક્ષેત્રમાં રહેવાથી અપાયનો સંભવ રહે છે. કહ્યું પણ છે કે–" ससर्पे च गृहे वासो मृत्युरेव न संशयः " જે ક્ષેત્રમાં અપાય (અનર્થ) સંભવિત હોય તે ક્ષેત્રનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. જેમકે–પ્રતિવાસુદેવ જરાસંધ દ્વારા અપાય (અનર્થ) થવાનો સંભવ લાગવાથી દશાર્હોએ સૌર્યપુર છોડી દીધું હતું. આ ક્ષેત્રાપાયના દૃષ્ટાન્તરૂપ સમજવુ. કાલાપાયના ત્યાગમાં દ્વૈપાયનની જેમ પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ. નેમિનાથ ભગવાને એવી ભવિષ્યવાણી ઉચ્ચારી કે ૧૨ વર્ષ પછી દ્વારકા નગરીનો નાશ થશે, ત્યારે તે અપાયયુક્ત કાળથી બચવાને માટે દ્વૈપાયન ઉત્તરપથમાં ચાલ્યા ગયા હતા. આ કાલાપાયનું દૃષ્ટાન્ત છે. ચંડકૌશિકની જેમ કોપભાવનો પરિત્યાગ કરી નાખવો

अथ द्वितीय भेदमाह-'उवाए' त्ति. उपायः प्राप्तव्यपदार्थंप्रति पुरुषव्यापारादिरूपा साधनसामग्री, स यस्मिन् द्रव्यादौ उपेये विद्यते इत्यभिधानं, यथा घटादि द्रव्यविशेषेषु साध्येषु विद्यते उपायो विवक्षितद्रव्यवदिति, अथवा यत्रोपादेयता कथ्यते द्रव्यादेस्तदाहरणमुपायः । उपायोपि चतुर्धा द्रव्यक्षेत्रकालभावभेदात् । तत्र द्रव्यस्य सुवर्णादेः प्रासुकोदकादेर्वा उपायः-द्रव्यमेव वा उपाय इति द्रव्योपायः यथाऽस्ति सुवर्णादिषूपायः उपायेनैव वा सुवर्णादौ प्रयत्नो विधेय इति । अथवा प्रासुकोदकादि द्रव्यमेषणोपायेन ग्रहीतव्यमिति १। एवं क्षेत्रपरिकर्मणा उपायः

पायका परिहार कर दिया था, इस प्रकारसे ये आहरणज्ञातके अपाय भेदके चार भेद है १

आहरण ज्ञातका द्वितीय भेद जो उपाय है-वह इस प्रकारसे हैं-प्राप्तव्यपदार्थके प्रति जो पुरुष व्यापारादिरूप साधन सामग्री होती है वही उपाय होती है अतः इस द्रव्यादिरूप उपेयमें यह उपाय है ऐसा आहरण उपाय है जैसे घटादि द्रव्य विशेष साध्योंमें विवक्षित मृत्तिकादि द्रव्य उपायरूप होता है अथवा-द्रव्यादिकोंकी जहां उपादेयता कही जाती है वह आहरण उपाय है यह उपाय भी द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके भेदसे चार प्रकारका है सुवर्णादि द्रव्यका या प्रासुक उदक आदि द्रव्यका जो उपाय है वह या द्रव्यरूप जो उपाय है वह द्रव्योपाय है जैसे-सुवर्णादिकोंके विषयमें उपाय है उपायसेही सुवर्णादिकोंमें प्रयत्न विधेय है अथवा-प्रासुक उदकादि द्रव्य एषणोपायसे

તેનું નામ ભાવાપાય છે ચંડકૌશિકને જ્યારે જાતિસ્મરણ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું ત્યારે તેણે કોપરૂપ ભાવાપાયનો પરિત્યાગ કરી નાખ્યો હતો. આ રીતે અપાય આહરણજ્ઞાતના ચાર ભેદોનું સ્પષ્ટીકરણ અહીં સમાપ્ત થાય છે.

આહરણજ્ઞાત (આહરણ ઉદાહરણ)નો જે બીજો ઉપાય નામનો ભેદ છે તેનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—પ્રાપ્તવ્ય પદાર્થને નિમિત્તે પુરુષ વ્યાપાર આદિ રૂપ સામગ્રી હોય છે, તેનું નામ જ ઉપાય છે. તેથી આ દ્રવ્યાદિ રૂપ ઉપેયમાં (પ્રાપ્તવ્ય પદાર્થમાં) આ ઉપાય છે એમ કહેવું તેનું નામ આહરણ ઉપાય છે. જેમકે-ઘટાદિ દ્રવ્યવિશેષ રૂપ સાધ્યોમાં વિવક્ષિત માટી આદિ દ્રવ્ય ઉપાય રૂપ હોય છે. અથવા-દ્રવ્યાદિકની જેમાં ઉપાદેયતા પ્રતિપાદિત થાય છે તે આહરણ ઉપાય છે, તે ઉપાય પણ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવના ભેદથી ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે સુવર્ણાદિ દ્રવ્યનો અથવા પ્રાસુક ઉદક (પાણી) આદિ દ્રવ્યનો જે ઉપાય છે અથવા દ્રવ્યરૂપ જે ઉપાય છે તેને દ્રવ્યોપાય કહે છે.

क्षेत्रोपायः यथा विद्यतेऽस्य क्षेत्रस्य क्षेत्रीकरणोपायो लांगलादिः, यद्वा लांगलादिनैव प्रवर्तितव्यं तथाविधान्यक्षेत्रवदिति । अथवा–मिथ्यात्वसमाक्रान्तक्षेत्रस्य सदुपदेशाद्युपायेन सम्यक्त्वीकरणम् २, कालज्ञानोपायः कालोपायः यथा अस्ति कालस्य ज्ञाने उपायो धान्यादेरिव, यद्वा जानीहि कालं छायादिनोपायेन तथाविधगणितज्ञवदिति । यद्वा प्रतिलेखनादिकाले ज्ञानं कालोपायः ३। एवं भावोपायो यथा भावज्ञानेऽस्ति उपायः, भावं वा उपायतो जानीयात् यथा बृहत्कु-

---

ग्रहण करना चाहिये ऐसा यह कथन आहरण उपायका प्रथम भेद द्रव्योपाय है । क्षेत्र परिकर्मसे जो उपाय है वह क्षेत्रोपायहै जैसे क्षेत्रको क्षेत्रीकरण करनेमें उपायरूप लाङ्गल (हल) आदि हैं अथवा–जिस प्रकारसे अन्य क्षेत्रादिमें लाङ्गल आदिसे प्रवृत्ति की जाती है उसी प्रकार से इस क्षेत्रादिमेंभी उसीसे प्रवृत्ति करनी चाहिये ऐसा कथन क्षेत्रोपाय है अथवा–मिथ्या समाक्रान्त क्षेत्रको सदुपदेशनादि उपायसे सम्यक्त्वयुक्त करना यह क्षेत्रोपाय है २ जिस प्रकार धान्यादिकके ज्ञानका उपाय है उसी प्रकारसे कालके ज्ञानका भी जो उपाय है वह कालोपाय है अथवा – जिस प्रकार तथाविध गणितज्ञ (गणितविद्या को जानने वाला) छायादिरूप उपाय से कालको जान लेता है उसी प्रकारसे जो छायादि द्वारा कालको जानता है वह कालोपाय है अथवा–प्रतिलेखनादि कालका जो ज्ञान है वह कालोपाय है ३ भावज्ञानमें जो उपाय है वह भावोपाय है अथवा–

જેમકે સુવર્ણાદિકોના વિષયમાં ઉપાય છે, ઉપાય દ્વારા જ સુવર્ણાદિકોમાં પ્રયત્ન વિધેય છે. અથવા–પ્રાસુક ઉદકાદિ દ્રવ્ય એષણોપાય દ્વારા ગ્રહણ કરવું જોઈએ, એવું આ કથન આહરણ ઉપાયના પ્રથમ ભેદ (દ્રવ્યોપાય) રૂપ છે.

ક્ષેત્રપરિકર્મ રૂપ જે ઉપાય છે તેનું નામ ક્ષેત્રોપાય છે. જેમકે–આ ક્ષેત્રને ખેડવાના ઉપાય રૂપ હળ આદિ છે. અથવા–જે પ્રકારે અન્ય ક્ષેત્રાદિમાં હળ વડે પ્રવૃત્તિ કરવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે આ ક્ષેત્રાદિમાં પણ તેના દ્વારા જ પ્રવૃત્તિ કરવી જોઈએ, એવું કથન ક્ષેત્રોપાય છે. અથવા મિથ્યાત્વયુક્ત ક્ષેત્રને સદુપદેશ આદિ ઉપાય દ્વારા સમ્યકત્વયુક્ત કરવું તેનું નામ ક્ષેત્રોપાય છે. જેમ ધાન્યાદિકના જ્ઞાનનો ઉપાય છે એજ પ્રમાણે કાળના જ્ઞાનનો પણ જે ઉપાય છે તેનું નામ કાલોપાય છે. અથવા–જે પ્રકારે તથાવિધ ગણિતજ્ઞ છાયાદિ રૂપ વડે કાળને જાણી લે છે એજ પ્રમાણે જે છાયાદિ દ્વારા કાળને જાણે છે તે કાલોપાય રૂપ છે અથવા પ્રતિલેખના આદિ કાળનું જે જ્ઞાન છે તેનું નામ કાલોપાય છે. ભાવ-જ્ઞાનમાં જે ઉપાય છે તેનું નામ ભાવોપાય

मारिकावार्ता कथनेन विज्ञातचोरभावाऽभयकुमारवदिति। अथवा भावेन कल्याणोपायं परिज्ञाय भगवता नेमिनाथेन गजसुकुमालमुनेः कायोत्सर्गार्थं श्मशानगमननिदेशः कृत इति। २।

तृतीयभेदमाह—'ठवणाकम्म' त्ति स्थापनं स्थापना, तस्याः कर्म=संपादनमिति स्थापना कर्म, अर्थात् यद् ज्ञात्वा परमतं प्रदूष्य स्वमतस्य स्थिरीकरणं तत्स्थापनाकर्म।

एतच्च सूत्रकृताङ्गसूत्रे द्वितीयश्रुतस्कन्धे पुण्डरीकाख्यं प्रथममध्ययनम्। तत्र–काचित्पुष्करिणी स्वल्पजला पङ्कबहुला तन्मध्ये चैकं महत्पुण्डरीकमासीत् तदुद्धरणार्थं चतसृभ्यो दिग्भ्यः समागताश्चत्वारः पुरुषाः पूर्वादिक्रमेण कर्दममा-

---

उपायसे जो भावका जानना होता है वह भावोपाय है, जैसे बृहत्कुमारिकाको बात कहनेसे अभयकुमारने चोरका भाव जान लिया था अथवा–भावसे कल्याणके उपायको जानकर भगवान् नेमिनाथने गजसुकुमार मुनिको कायोत्सर्ग करनेके लिये श्मशान भूमिमें जानेकी आज्ञा दीथी २

स्थापनाकर्म—स्थापनाका जो कर्म–संपादन है वह स्थापना कर्म है अर्थात्–परमतको जानकर जो फिर उसमें दूषण बतला कर अपने मतकी स्थापना की जाती है वह स्थापना कर्म है, यह स्थापनाकर्म सूत्रकृताङ्ग सूत्रमें द्वितीय श्रुतस्कन्धमें पुण्डरीक नामक प्रथम अध्ययन रूप है वहां ऐसा प्रकट किया गया है–एक पुष्करिणीके बीचमें जो कि स्वल्पजलवाली और पङ्कबहुल (बहुत कीचडवाली)थी एक बडा पुण्डरीक

છે. અથવા ઉપાય દ્વારા જે ભાવને જાણવાનું થાય છે તેનું નામ ભાવોપાય છે. જેમકે બૃહત્કુમારીને વાત કરવાથી અભયકુમારે ચોરના ભાવ જાણી લીધા હતા અથવા ભાવ વડે કલ્યાણનો ઉપાય જાણી લઈને નેમિનાથ ભગવાને ગજસુકુમાર મુનિને કાયોત્સર્ગ કરવા માટે શ્મશાન ભૂમિમાં જવાની અનુમતિ આપી હતી. આ રીતે આહરણજ્ઞાતના ઉપાય નામના બીજા ભેદનું વર્ણન અહીં પૂરું થાય છે.

હવે આહરણના ત્રીજા ભેદનું–સ્થાપનાકર્મનું–સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—સ્થાપનાનું જે કર્મ–સંપાદન છે તેનું નામ સ્થાપના કર્મ છે. એટલે કે પરમતને જાણી લઈને અને તેમાં દૂષણો બતાવીને પોતાના મતની સ્થાપના કરવી તેનું નામ સ્થાપનાકર્મ છે

તે સ્થાપનાકર્મ સૂત્રકૃતાંગ સૂત્રના દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધમાં પુંડરીક નામના પ્રથમ અધ્યયન રૂપ છે, ત્યાં એવું પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે–થોડા પાણી અને ઘણા જ કાદવથી ભરપૂર એક પુષ્કરિણી (જળાશય વિશેષ)ની વચ્ચે

र्गेण प्रवेष्टुमारब्धाः ते च कृततदुद्धरणा एव पङ्के निमग्नाः। अन्यस्तु तटस्थ एवासंस्पृष्टकर्दमोऽमोघवचनस्तदुद्धृतवानिति स्थापनाकर्मणि ज्ञातम्। अत्रोपनयश्चेत्थम्—कर्दमस्थानापन्ना विषयाः, पुण्डरीकं राजादिर्भव्यपुरुषः, परतीर्थिकाश्चत्वारः पुरुषाः तटस्थ एकः पञ्चमः पुरुषः साधुः अमोघवचनं धर्मदेशना पुष्करिणी संसारः, तदुद्धारो निर्वाणमिति। इत्थं परदूषणेन स्वमतं स्थापितमितीदं ज्ञातं स्थापनाकर्मेति।

लगा हुआ था उसे लेनेके लिये चार दिशाओंसे चार पुरुष आये थे जिस २ दिशासे आये थे उसी २ दिशावाले कर्दम मार्ग (कीचडवाले मार्ग)सेहोकर उस पुष्करिणीमें प्रवेश किया और प्रवेश करके उन्होंने उस कमलको उखाड लिया परन्तु वे कीचड़में फंस गये वहीं पर कोई एक मनुष्य और तट पर खड़ा हुआ था, वह अमोघ वचनवाला था अतः उसने उन्हें उस कर्दमसे बाहर निकाल लिया इस प्रकारका यह स्थापना-विषय है, पुष्करिणीके स्थानापन्न संसार है, कमलके स्थानापन्न-कर्ममें ज्ञात है यहां इसका उपनय इस प्रकारसे है—कर्दमके स्थापनापन्न राजादि रूप भव्य पुरुष है चार पुरुषोंके स्थानापन्न परतीर्थिक हैं एक पुरुष जो तट पर खड़ा हुआ है उसके स्थानापन्न श्री साधु पुरुष है अमोघवचनके स्थानापन्न धर्मदेशना है और उद्धारके स्थानापन्न निर्वाण है इस प्रकार परके दूषणसे स्वमतकी स्थापना इस दृष्टान्त द्वाराकी गई है इसलिये यह स्वमतस्थापना कर्म है।

એક મોટું પુંડરીક (કમલ વિશેષ) ઉગેલુ હતું તેને લેવાને માટે ચાર દિશામાંથી ચાર માણસ આવ્યા. જે જે દિશાઓમાંથી તેઓ આવ્યા હતા તે તે દિશાઓવાળા કર્દમ (કાદવવાળા) માર્ગે થઇને તેઓ તે પુષ્કરિણીમાં આગળ વધ્યા. અને ગમે તે પ્રકારે તે પુંડરીક પાસે પહોંચીને તેમણે તેને તોડી લીધું. પણ કાદવમાં ફસાઈ જવાને કારણે તેઓ તે પુષ્કરિણીમાંથી બહાર નીકળી શક્યા નહીં. તે પુષ્કરિણીને કિનારે કોઇ એક માણસ ઊભો હતો તે અમોઘવચનવાળો હતો. તેથી તેણે તેમને કોઇ પણ પ્રકારે તે કર્દમ (કાદવ)માંથી બહાર કાઢયાં. આ પ્રકારનું સ્થાપનાકર્મનું આ જ્ઞાત (ઉદાહરણ) છે. અહીં તેનો ઉપનય (આરોપણ) આ પ્રમાણે કરી શકાય છે–કર્દમના સમાન વિષય છે, પુષ્કરિણી સમાન સંસાર છે, કમલ (પુંડરીક) સમાન રાજાદિ રૂપ ભવ્ય પુરુષ છે, ચાર પુરુષો સમાન પરતીર્થિકો છે, કિનારે ઊભેલા પુરુષના સમાન સાધુપુરુષ છે, અમોઘવચન સમાન ધર્મદેશના છે અને ઉદ્ધારના સમાન નિર્વાણ છે. આ પ્રકારે પરના દૂષણને પ્રકટ કરીને સ્વમતની સ્થાપના આ દૃષ્ટાન્ત દ્વારા કરવામાં આવી છે. તેથી તે દૃષ્ટાન્ત સ્થાપનાકર્મ રૂપ છે.

तथाहि—अनित्यः शब्दः कृतकत्वात्, अत्र कृतकत्वेन शब्देऽनित्यत्वं साधयति, तत्र कश्चिद्ब्रूते भो ! वर्णात्मके शब्दे कृतकत्वं नास्ति तेषां नित्यतायाः प्रतिपादनात्, इत्येवं सकलपक्षे हेतुर्न यातीति विभाव्य स्थापनाहेतुवादी वदति वर्णात्मकः शब्दः कृतकः कारणभेदेन भिद्यमानत्वात् घटपटादिवत् यथा स्व स्व कारणभेदाद् घटादयो भिद्यन्ते तथा शुकसारिकादिकारणभेदाद् वर्णात्मकः शब्दोपि भिद्यत एवेति घटादिदृष्टान्तेन वर्णानां कृतकत्वं स्थापितमिति भवत्यत्र स्थापना कर्मेति ॥

अथवा—जैसे-"अनित्य शब्दः कृतकत्वात्" इस प्रकारके अनुमान प्रयोगसे कोई वादी शब्दमें कृतकत्व हेतुसे अनित्यकी सिद्धि करता है तब कोई उससे ऐसा कहता है कि वर्णात्मक शब्दमें "कृतकत्व" नहीं है क्योंकि-मीमांसककी अपेक्षा उनमें नित्यताका प्रतिपादन किया गया है इस तरह कृतकत्व यह हेतु अपने वर्णरूप सम्पूर्ण पक्षमें नहीं जाता है इस प्रकार सुनकर जो स्थापन हेतुवादी है वह कहता है जो वर्णात्मक शब्द है वह कृतकही होता है क्योंकि कारणभेदसे वह घटपटादिकी तरह भेदवाला होता है जैसे अपने २ कारणके भेदसे घटपटादिकोंमें भेद होता है, उसी तरह शुकसारिका आदिरूप कारणके भेदसे वर्णात्मक शब्दभी भेदवाला होता है इस प्रकार घटादि दृष्टान्तसे वर्णोंमें कृतकताकी स्थापनाकी जाती है इसलिये यह दृष्टान्त स्थापनाकर्म है।

અથવા—"अनित्यशब्दः कृतकत्वात्" આ પ્રકારના અનુમાન પ્રયોગ દ્વારા જ્યારે કોઇ વાદી શબ્દમાં કૃતકત્વ હેતુદ્વારા અનિત્યતાની સિદ્ધિ કરે છે, ત્યારે કોઇ તેને એવું કહે છે કે વર્ણાત્મક શબ્દમાં "કૃતકત્વ" હોતું નથી, કારણ કે મીમાંસકની અપેક્ષાએ તેમનામાં નિત્યતાનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. આ રીતે કૃતકત્વહેતુ પોતાના વર્ણરૂપ સંપૂર્ણ પક્ષમાં જતો નથી. આ પ્રકારની દલીલ સાંભળીને જે સ્થાપના હેતુવાદી છે તે કહે છે કે જે વર્ણાત્મક શબ્દ છે તે કૃતક જ હોય છે, કારણ કે કારણભેદથી તે ઘટપટાદિની જેમ ભેદવાળો થાય છે જેમ પોત પોતાના કારણના ભેદથી ઘટપટાદિમાં ભેદ હોય છે, એજ પ્રમાણે શુક સારિકા (પોપટ, મેના) આદિ રૂપ કારણના ભેદથી વર્ણાત્મક શબ્દ પણ ભેદવાળો હોય છે. આ પ્રમાણે ઘટાદિના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા વર્ણોમાં, કૃતકતાની સ્થાપના કરવામાં આવે છે. તેથી તેનું નામ 'દૃષ્ટાન્તસ્થાપના કર્મ' છે.

'पडुप्पन्नविणासि' त्ति=प्रत्युत्पन्नविनाशीति प्रत्युत्पन्नस्य=तत्काले एव जायमानस्य वस्तुनो विनाशो यत्र भवति वाच्यतया स प्रत्युत्पन्नविनाशी यथा-कश्चित् गुरुर्वस्तुविशेषे शिष्यस्याशक्तिमुपलभ्य दुष्करतपश्चरणविहारादौ नियोजयति शिष्यस्याशक्तिकारणं विनाशनीयमित्येवं प्रत्युत्पन्नविनाशनीयता साधकत्वादस्य प्रत्युत्पन्नविनाशिज्ञातता भवति। अथवा आत्मा अकर्त्ता अमूर्तत्वादित्यनुमानेनात्मनोऽकर्तृत्वे साधिते अकर्तृत्वापत्तिलक्षणदोषस्य विनाशायोच्यते आत्मा कर्तैव भवति कथंचिन्मूर्तत्वात्, देवदत्तवदित्यनुमानेन तत्कालोत्पन्नेनात्मनोऽकर्तृत्वमपि नाश्यते इति भवति प्रत्युत्पन्नविनाशिताया ज्ञातमिति समाप्तमिदमाहरणाभिधं ज्ञानम् ॥ १ ॥

'पडुप्पन्नविणासि त्ति " प्रत्युपन्नका (तत्काल,में ही जायमान वस्तुका विनाश जहां पर वाच्यरूप होता है वह प्रत्युपन्न विनाशी है जैसे कोई गुरु वस्तु विशेषमें शिष्यकी अशक्तिको जानकर उसे दुष्कर तप श्चरण विहार आदिमें नियुक्त करता है इस विचारसे कि " शिष्यकी अशक्तिका कारण विनष्ट करना चाहिये " इस तरह प्रत्युपन्नकी विनाशनीयताका साधक होनेसे इसमें प्रत्युत्पन्नविनाशिज्ञातता होती है अथवा-" आत्मा अमूर्त होनेसे अकर्ता है " इस अनुमान-द्वारा आत्मामें अकर्तृत्व साध्य करके इस अकर्तृत्वापत्तिरूप दोषको विनाश करनेके लिये जब ऐसा कहा जाता है कि आत्मा कथंचित् मूर्त होनेसे देवदत्तकी तरह कर्त्ता भी है, इस प्रकार इस तत्कालोत्पन्न अनुमानसे जो आत्माका अमूर्तत्व हटा दिया जाता है वह प्रत्युत्पन्न विनाशिताका ज्ञात है। इस प्रकारसे यहां तक आहरणके

" पडुप्पन्नविणासिनि ' प्रत्युत्पन्ननो—तत्काले जायमान वस्तुनो विनाश ज्यां वाच्यरूप होय छे ते दृष्टान्तने 'प्रत्युत्पन्नविनाशी' कहे छे जेमके कोई गुरु वस्तुविशेषमां शिष्यनी अशक्तिने जाणीने तेने दुष्कर तपश्चरण, विहार आदिमां प्रयुक्त करे छे. आम करवा पाछळ तेमनो एवो ख्याल होय छे के " शिष्यनी अशक्तिनुं कारण मारे विनष्ट करवुं जोईए " आ प्रकारे प्रत्युत्पन्नना विनाश करवामां साधक होवाथी तेमां प्रत्युत्पन्न विनाशी ज्ञातता होय छे.

अथवा—" आत्मा अमूर्त होवाथी अकर्ता छे, " आ अनुमान द्वारा आत्मामां अकर्तृत्व साध्य करीने आ अकर्तृत्वापत्ति रूप दोषनो विनाश करवाने माटे ज्यारे एवुं कहेवामां आवे के " आत्मा कथंचित् (थोडा प्रमाणमां) मूर्त होवाथी देवदत्तनी जेम कर्ता पण छे "

आ प्रकारना आ तत्कालोत्पन्न अनुमान वडे आत्मानुं अमूर्तत्व जे दूर करवामां आवे छे ते प्रत्युत्पन्नविनाशितानुं उदाहरण छे. आ प्रकारे अहीं

संप्रति आहरणतद्देशो व्याख्यायते-'आहरणतद्देसे' इत्यादि। आहरण-तद्देशश्चतुर्विधः अनुशास्त्युपालंभपृच्छा निश्रावचनभेदात्। तत्रानुशास्तिः अनुशासनमनुशास्तिः सद्गुणसंकीर्त्तनेनोपबृंहणम् सद्गुणसंकीर्त्तनमेव यत्र विधेयतयोपदिश्यते सा अनुशास्ति', यथा ये गुणवन्तस्तेऽनुशासनीया भवति, यथा-चम्पानगर्यां कदाचि जिनकल्पिको मुनिर्भिक्षार्थं सुभद्रागृहे समागतः तन्नेत्रे रजःकणं पतितं दृष्ट्वा सुभद्रा स्वजिह्वया तन्निःसारितवती। तत्समये तल्ललाटगतकुङ्कुमबिन्दुर्मुनि ललाटे संलग्नः। तद् दृष्ट्वा लोके तद्विषये शीलभङ्गशङ्का समुत्पन्ना। तामपनेतुं सा लोकसमक्षं चालनीत आमसूत्रेण कूपाज्जलं निस्सार्य तज्जलाच्छोटनेन शास-

चार भेदोंका कथन समाप्त कर अब आहरणतद्देश का कथन किया जाता है-यह आहरणतद्देश भी चार प्रकारका कहा गया है अनुशास्ति १ उपालम्भ २ पृच्छा ३ और निश्रावचन ४ जहां सद्गुण संकीर्तनही विधेयता रूपसे उपदिष्ट होता है वह अनुशास्ति है जैसे-जो गुणवान् होते हैं वे अनुशासनीय होते हैं-इस पर दृष्टान्त इस प्रकारसे है—

चंपानगरीमें किसी समय जिनकल्पिक मुनि गोचरीके लिये सुभद्राके घर पर आये उनकी आंखमें रजःकण(धूलिकण)गिर गया था सुभद्राने रजःकणको उनकी आंखमेंसे अपनी जीभ द्वारा निकाल दिया निकालते समय उसके ललाटकी कुङ्कुमबिन्दु मुनिके ललाटमें लग गई इस बातको देखकर लोकमें उनके शीलभङ्गकी चर्चा प्रारम्भ हो गई इस चर्चाको-शीलभङ्गकी शंकाको-दूर करनेके लिये सुभद्राने लोकोंके समक्ष

સુધીમાં આહરણ દૃષ્ટાન્તના ચાર ભેદોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.

આહરણતદ્દેશના દૃષ્ટાન્તનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે. આહરણતદ્દેશના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) અનુશાસ્તિ, (૨) ઉપાલંભ, (૩) પૃચ્છા અને (૪) નિશ્રાવચન જ્યાં સદ્‌ગુણસંકીર્તન જ વિધેયતા રૂપે ઉપદિષ્ટ થાય છે તેનું નામ અનુશાસ્તિ છે જેમકે-જે ગુણવાન હોય છે તે અનુશાસનીય હોય છે. આ વિષયને અનુલક્ષીને નીચે પ્રમાણે દૃષ્ટાન્ત છે—

ચંપા નગરીમાં કોઈ એક સમયે એક જિનકલ્પિત મુનિ ગોચરી કરવા નિમિત્તે ફરતા ફરતા સુભદ્રા શેઠાણીને ત્યાં પધાર્યા. તેમની આંખમાં રજ (કણ) પડવાને કારણે તેમાંથી આસુ નીકળી રહ્યા હતાં. સુભદ્રાએ પોતાની જીભના ટેરવા વડે તેમની આખમાંથી તે રજને કાઢી નાખી, પણ રજ કાઢતી વખતે તેના લલાટનો કંકુનો ચાંલ્લો મુનિના કપાળમાં લાગી ગયો. મુનિના કપાળમાં તે નિશાન જોઈને લોકોમા તેમના શીલભંગની ચર્ચા ચાલવા માંડી આ શીલભંગની વાત ખોટી છે એ સાબીત કરવાને માટે સુભદ્રાએ કાચા સૂતર

नदेवतामुद्रितं चम्पानगर्या गोपुरत्रयं समुद्घाटितवती तेन 'अहो ! सुभद्रा महाशीलवती'-ति नगरजनेनानुशासितेति १। प्रकृते रजःकणापनयनरूपवैयावृत्यकरणादप्युपनयः संभवति तत्यागेन च नगरजनानुशास्तिमात्रेणात्रोपनयः कृत इत्याहरणतद्देशतेति । एवमनभिमतांशत्यागादभिमतांशग्रहणादुपनयनम् । एवमुत्तरेष्वपि विज्ञेयमिति । अथ द्वितीयभेदमाह-'उवालंभे' इति । उपालंभनम् उपालंभः प्रकारान्तरेणानुशासनमेव । तद् यत्राभिधीयते स उपालंभः यथा-आसीत्काचिन्मृगावती नाम्नी साध्वी, सा भगवतो महावीरस्य समवसरणसमये

कच्चे सूतको चालनीमें बांधकर उससे कुएँमेंसे पानी खींचा और उस पानीको चंपानगरीके तीन दरवाजों पर छिड़का, क्योंकि शासनदेवताने उन दरवाजोंको पहिलेसेही कील दिया था (बन्द कर दिया था) अतः वे दरवाजे खुल गये तब सुभद्रा महाशीलवती है इस प्रकारसे लोकने फिर अनुशासित किया ?

प्रकृतमें रजःकणको निकालने रूप वैयावृत्य करनेसे भी उपनय संभवित होता है क्योंकि उस रजःकणके निकालनेसे जो नगरजनोंने उसकी अनुशास्तिकी है, इतने मात्रसे यहां उपनय किया गया है, यह इस प्रकार अनभिमत अंशके त्यागसे और अभिमत अंशके ग्रहणसे उपनय होताहै। इसी प्रकारसे आगेभी जानना चाहिये "उवालंभे" उलहाना प्रकारान्तरसे अनुशासनही उपालम्भहै यह अनुशासन जहां कहा जाताहै वह उपालम्भहै जैसे कोई एक मृगावती साध्वीथी, वह भगवान्

વડે ચાલણીને બાંધીને લોકની સમક્ષ તે ચાલણી વડે કૂવામાંથી પાણી ખેંચ્યું. તે નગરના ત્રણ દરવાજાઓ શાસન દેવતાએ બંધ કરી દીધા હતા. સુભદ્રાએ ચાલણી વડે કૂવામાંથી ખેંચેલા પાણીને તે ત્રણે દરવાજા પર છાંટયું અને પાણી છાંટતાની સાથે જ તે દરવાજા ઉઘડી ગયા. ત્યારે લોકોએ ફરીથી એવું અનુશાસિત કર્યું કે સુભદ્રા મહા શીલવતી છે

આ દૃષ્ટાન્તમાં રજને કાઢવા રૂપ વૈયાવૃત્ય કરવા રૂપ ઉપનય પણ સંભવિત થાય છે, કારણ કે તે રજને કાઢવાથી જે નગરજનોએ તેની અનુશાસ્તિ કરી છે એટલા માત્રથી જ અહીં ઉપનય કરવામાં આવ્યો છે. આ રીતે અનભિમત અંશના ત્યાગથી અને અભિમત અંશના ગ્રહણથી તેમાં ઉપનય થાય છે એજ પ્રમાણે આગળ પણ સમજી લેવું.

"ઉવાલંભે" પ્રકારાન્તરની અપેક્ષાએ અનુશાસન જ ઉપાલંભ રૂપ છે. આ અનુશાસન જ્યાં કહેવાય છે તેને ઉપાલંભ કહે છે. તેનું નીચે પ્રમાણે

समागता सविमानचन्द्रादित्यप्रकाशेन कालविभागमज्ञात्वा समवसरणे एव स्थिता, ततस्तद्गमने 'अतिकालोऽय'-मिति संभ्रान्तचित्ता साध्वीभिः सहार्यचन्दना समीपे समागता। तया-' अयुक्तमिदं भवादृशीनामुत्तमकुलसमुत्पन्नानामित्युपालब्धेति । अत्र कालातिक्रमरूपैकदेशग्रहणाद् आहरणतद्देशतेति।

अथ तृतीयभेदमाह—' पुच्छा इति।

पृच्छा प्रश्नः किं कथं केन कृतमित्यादि, सा यत्र विधेयतयोपदिश्यते सा पृच्छा यथा कोणिकः श्रेणिकराजपुत्रो भगवन्तं महावीरं पप्रच्छ-भदन्त! अपरित्यक्तकामाश्चक्रवर्तिनो मृताः क्व यान्ति, भगवता कथितम् सप्तम्यां-पृथिव्याम्।

महावीरके समवसरणके समयमें आई वहां सविमानचन्द्र और सूर्य आदिके प्रकाशसे कालका ज्ञान नहीं रहा, सो वह समवसरणमेंही बैठी रही इसके बाद जब वह वहांसे चली तो वह "अतिकालोऽयम्" ऐसा समझकर संभ्रान्तचित्तवाली बन गई, सब साध्वियोंके साथ वह आर्य चन्दनाके पास आई, उसने उसे ऐसा उपालम्भ दिया कि आप जैसी उत्तम कुलोद्भूत साध्वीओंको यह अयुक्त है यहां कालातिक्रम रूप एकदेशताके ग्रहणसे आहरणतद्देशता है "पृच्छा"-क्या किया कैसा किया किसने किया इत्यादि प्रश्नका नाम पृच्छाहै यह पृच्छा जहां विधेयरूपसे उपदिष्ट होतीहै वह पृच्छाहै जैसे-श्रेणिकराजपुत्र कोणिकने भगवान् महावीरसे पूछा-हे भदन्त ! चक्रवर्ती कामभोगोंका परित्याग

દૃષ્ટાન્ત છે—મૃગાવતી નામની કોઈ એક સાધ્વી હતી. તે કોઇ એક વખતે મહાવીર પ્રભુના સમવસરણમાં ગઇ હતી ત્યાં સવિમાન ચન્દ્ર અને સૂર્યના પ્રકાશને લીધે તેને કાળનું ભાન ન રહ્યું. તેથી તે સમવસરણમાં ઘણી વાર સુધી બેસી જ રહી ત્યાર બાદ જ્યારે તે ત્યાંથી ચાલી નીકળી ત્યારે "अतिकालोऽयम्" "ઘણો જ કાળ વ્યતીત થઈ ગયો—ખૂબ મોડું થઈ ગયું" એવું સમજીને સંભ્રાન્ત ચિત્તવાળી બની ગયેલી તે સૌ સાધ્વીઓની સાથે આર્યા ચન્દનાની પાસે આવી ત્યારે તેમણે (આર્યા ચન્દનાએ) તેને એવો ઠપકો આપ્યો કે "આપના જેવી ઉત્તમ કુલોત્પન્ન સાધ્વીઓને માટે ઘણું જ અયુક્ત ગણાય." આ દૃષ્ટાન્તમાં કાલાતિક્રમ રૂપ એકદેશતાના ગ્રહણની અપેક્ષાએ આહરણતદ્દેશતા છે

"પૃચ્છા"-શું કર્યું ? કેવી રીતે કર્યું ? કોણે કર્યું ? ઇત્યાદિ પ્રશ્નનું નામ પૃચ્છા છે. આ પૃચ્છા જેમાં વિધેય રૂપે ઉપદિષ્ટ હોય છે તેને પૃચ્છા કહે છે. જેમકે-શ્રેણિક રાજાના પુત્ર કોણિકે મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો કે "હે ભગવન્! ચક્રવર્તી જો કામભોગોનો પરિત્યાગ કર્યા વિના મરણ પામે

कोणिकः पृष्टवान्-अहं क्व यास्यामि ? भगवानाह-षष्ठयाम् । कोणिकः प्राह-अहं कथं न सप्तम्यां यास्यामि ? । भगवता कथितम्-चक्रवर्त्तिनस्तत्र गच्छंति। ततः कोणिकः पप्रच्छ-किमहं न चक्रवर्ती ? ममापि गजाश्वादिकं चक्रवर्ति साधनं विद्यते । भगवतोक्तम्— तव रत्ननिधयो न सन्ति । ततोऽसौ कृत्रिमाणि रत्नानि कृत्वा भरतक्षेत्रसाधनाय प्रवृत्तः कृतमालिकयक्षेण व्यापादितः षष्ठीं गत इति । अत्र षष्ठीपृथिवीगमनरूपानभिमतांशत्यागात् सप्तमीपृथिवीगमनरूप स्वाभिमतांशग्रहणाद्, आहरणतद्देशतेति ३।

किये विना यदि मर जाते हैं तो वे कहां जाते हैं ? तब भगवान्ने कहा वे सातवीं पृथिवीमें जातेहैं। पुनः कोणिकनेपूछा मैं मरकर कहां जाऊंगा? तब भगवान्ने कहा-तुम मरकर छठी पृथिवीमें जाओगे, पुनः कोणिकने प्रश्न किया-मैं सातवीं पृथिवीमें क्यों नहीं जाऊंगा ? प्रभुने कहा-चक्रवर्तीही वहां जातेहैं । कोणिकने कहा तो क्या मैं चक्रवर्ती नहीं हूं ? मेरे पासभी तो चक्रवर्तीके साधनभूत गज अश्वादिक रत्नहैं । भगवान्ने कहा तुम्हारे पास रत्न और निधियां नहींहैं । तब इसने कृत्रिम रत्नोंको करके भरतक्षेत्रको साधनेके लिये प्रवृत्ति की (और तमस-गुफा पर पहुंचा,) उसी समय कृतमालिक देवने इसे मार डाला सो यह छठी पृथिवीमें गया यहां छठी पृथिवीमें गमनरूप अनभिमत अंशके त्यागसे और सातवीं पृथिवीमें गमनरूप स्वाभिमत अंशके ग्रहणसे आहरणतद्देशता है ।"निश्रावचन" किसी

તો કઇ ગતિમાં ઉત્પન્‍ન થાય છે" ત્યારે ભગવાને જવાબ આપ્યો-"સાતમી નરકમાં ઉત્પન્‍ન થાય છે." કુણિકે બીજો પ્રશ્ન પૂછયો "હે ભગવન્ ! હું મરીને કયાં જઇશ ?" ત્યારે ભગવાને જવાબ આપ્યો-"તમે મરીને છઠ્ઠી નરકમાં જશો." ત્યારે કુણિકે પૂછયું-"હે ભગવન્ ! હું સાતમી નરકમાં શા કારણે નહીં જઉં ?" પ્રભુએ જવાબ આપ્યો-"ચક્રવર્તી જ મરીને સાતમી નરકમાં જાય છે." ત્યારે કુણિકે પૂછયું "શું હું ચક્રવર્તી નથી ? મારી પાસે પણ ચક્રવર્તીના સાધનરૂપ ગજ, અશ્વાદિક છે." ત્યારે ભગવાને તેને એવો જવાબ આપ્યો કે "તમારી પાસે રત્ન અને નિધિઓ નથી" ત્યારે તેણે કૃત્રિમ રત્નોને એકત્ર કરીને ભરતક્ષેત્રને જીતવાની પ્રવૃત્તિ શરુ કરી. ત્યારે કૃતમાલિક નામના દેવે તેને મારી નાખ્યો. તે મરીને છઠ્ઠી નરકમાં ઉત્પન્‍ન થયો. આ દૃષ્ટાન્તમાં છઠ્ઠી નરકમાં ગમનરૂપ અનભિમત અંશના ત્યાગની અપેક્ષાએ અને સાતમી નરકમાં ગમનરૂપ સ્વાભિમત અંશના ગ્રહણની અપેક્ષાએ આહરણતદ્દેશતા સમજવી જોઇએ.

चतुर्थभेदमाह—' निस्सावयणे ' इत्यादि ।

निश्रया वचनं निश्रावचनम् । अयमाशयः कमपि विनीतविनेयमालंब्य यदन्य प्रबोधाय वचनं तद्यत्र विधेयतयोच्यते तदाहरणं निश्रावचनम् । यथा मार्दवादि गुणसंपन्नविनेयनिश्रया असहमानानन्यान् विनेयान् प्रति कथनम् । यथा गौतम-मभिलक्ष्य भगवतो महावीरस्य कथनमिवेति । यथा सद्यः प्रव्रजितस्य गागलि-मुनेः केवलज्ञानोत्पत्तावनुत्पन्नकेवलज्ञानत्वेन परित्यक्तधृतिं गौतमं प्रति भग-वान् कथितवान्–चिरसंश्लिष्टोऽसि गौतम ! चिरपरिचितोऽसि गौतम ! मात्वम-धृतिं कार्षीः ' इत्यादि वचनप्रकारेण गौतममनुशासयता भगवताऽन्येऽप्यनुशा-सिता इति । अत्राधृतिरूपानभिमतांशत्यागाद् धृतिरूपाभिमतांशग्रहणादाहरण तद्देशतेति इत्याहरणतद्देशोदाहरणम् ॥ २ ॥

विनीत शिष्यको लेकर अन्यके प्रबोधनके लिये वचन जहां विधेय-रूपसे कहा जाताहै वह आहरण निश्रावचनहै जैसे-मार्दवादि(कोमलता) गुणसंपन्न विनेय शिष्यकी निश्रासे असहमान अन्य शिष्योंके प्रति गौतमको लक्ष्यकर जैसा भगवान् महावीरने कहा था, उस तरहसे कहना जैसे जब तुरतके दीक्षित गागलिमुनिको केवलज्ञान उत्पन्न हो गया तब केवलज्ञान नहीं होनेसे परित्यक्त धृतिवाले गौतमसे भगवान्ने कहा–बहुत दिनों संश्लिष्ट हो गौतम ! चिरपरिचित हो गौतम ! तुम अधृतिको प्राप्त मत होओ इत्यादि वचन प्रकारसे गौतमको अनुशासित करनेवाले भगवान्ने अन्योंको भी अनुशासित किया यहां अधृतिरूप अनभिमत

" निश्रावचन " કોઈ વિનીત શિષ્યનો દાખલો આપીને અન્યને પ્રબોધિત કરવા નિમિત્તે વિધેય રૂપ જે વચનો કહેવામાં આવે છે તેનું નામ આહરણ-નિશ્રાવચન છે. જેમકે–માર્દવાદિ ગુણસંપન્ન વિનીત શિષ્યની નિશ્રાને સહન ન કરનારા અન્ય શિષ્યોને ગૌતમ સ્વામીને લક્ષ્ય કરીને જે વચનો મહાવીર પ્રભુએ કહ્યા હતાં તે વચનોને નિશ્રાવચન કહે છે. તે પ્રસંગ હવે પ્રકટ કરવામાં આવે છે—તુરતના દીક્ષિત ગાગલિ મુનિને જ્યારે કેવળજ્ઞાન થયું ત્યારે પરિત્યક્ત ધૃતિવાળા ગૌતમસ્વામીને મહાવીર પ્રભુએ આ પ્રમાણે કહ્યું હતું—ઘણા જ દિનોથી સંશ્લિષ્ટ છો ગૌતમ ! ચિરપરિચિત છો ગૌતમ ! તું અધૃતિસંપન્ન ન થઈશ પરિત્યક્ત ધૃતિવાળા થવું તારે માટે ઉચિત નથી," ઈત્યાદિ વચનો દ્વારા ગૌતમને અનુશાસિત કરનાર મહાવીર પ્રભુએ અન્ય મુનિજનોને પણ અનુશાસિત કર્યા હતા અહીં અનભિમત રૂપ અધૃતિ રૂપ

अथ तृतीयमाहरणतद्दोपज्ञातमाह—'आहरणतद्दोसे' इत्यादि। आहरणतद्दोपः, स च चतुर्द्धा—अधर्मयुक्त—प्रतिलोमात्मोपनीत—दुरुपनीतभेदात्। तत्र प्रथमभेदमाह—'अधम्मजुत्ते' इत्यादि। यदुदाहरणं पापाभिधानस्वरूपं कस्यचिदर्थस्य साधनायोपादीयते येन च प्रतिपादितेन श्रोतुरधर्मबुद्धिर्जन्यते तदधर्मयुक्तमुदाहरणम्, यथा कथाप्रसंगे केनचिदुक्तं सप्तरात्रोपितं कांस्यपात्रस्थितं घृतं विपायते तच्छ्रुत्वा कश्चित्तथाविधं घृतं प्रद्वेपिणे भ्रात्रे दत्वा मारित इति आहरणदोपता चास्याधर्मयुक्तत्वात्—तथाविध श्रोतुरधर्मज्ञानोत्पादकत्वाच्चेति।

अंशके त्यागसे एवं घृतिरूप अभिमत अंशके ग्रहणसे आहरणतद्देशता है इस प्रकारसे आहरणतद्देशका यह सभेद कथन है—

आहरणतद्दोषका कथन इस प्रकारसे है—अधर्मयुक्त १ प्रतिलोम २ आत्मोपनीत ३ और दुरुपनीत ४ ये इसके चार भेद हैं—जो उदाहरण पाप कथन स्वरूप हो और किसी अर्थकी सिद्धिके लिये दिया गया है कि जिसके प्रतिपादित होने पर श्रोताको अधर्मबुद्धि हो जाय, ऐसा वह उदाहरण अधर्मयुक्त उदाहरण है जैसे कथा प्रसङ्गमें किसीने ऐसा कहा कि सात रात तक कांसेकी थालीमें रखा गया घृत विषके तुल्य हो जाता है इस बातको सुनकर किसीने ऐसाही किया और उस घृतको अपने द्वेषी भाईके लिये दे दिया तब वह उसके खानेसे मर गया इस उदाहरणमें आहरणदोषता अधर्मयुक्त होनेसे है।

અનભિમત અંશના ત્યાગ અને ધૃતિરૂપ અભિમત અંશના ગ્રહણની અપેક્ષાએ આહરણતદ્દેશતા છે, આ પ્રકારે આહરણતદ્દેશતાના ચારે ભેદોનું કથન અહીં સમાપ્ત થાય છે

આહરણતદ્દોષનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—તેના નીચે પ્રમાણે ચાર ભેદ છે—(૧) અધર્મયુક્ત, (૨) પ્રતિલોમ, (૩) આત્મોપનીત, અને (૪) દુરુપનીત

જે ઉદાહરણ પાપકથન સ્વરૂપ હોય, અને કોઇ એવા અર્થનું પ્રતિપાદન કરવા નિમિત્તે આપવામાં આવ્યું હોય કે જેનું પ્રતિપાદન થઇ જવાથી શ્રોતાની બુદ્ધિ અધર્મયુક્ત થઈ જાય, એવા ઉદાહરણને અધર્મયુક્ત ઉદાહરણ કહે છે જેમકે કોઈ એક કથાકારે એવું કહ્યું કે સાત દિનરાત સુધી કાંસાની થાળીમાં મૂકી રાખેલું ઘી વિષસમાન થઇ જાય છે

આ વાત સાંભળીને કોઇ માણસે એ પ્રમાણે જ કર્યું—ઘીને કાંસાની થાળીમાં સાત દિનરાત રાખી મૂક્યું. ત્યાર બાદ તેણે તે ઘી પોતાના દ્વેષ કરનાર ભાઇને મારી નાખવા માટે વાપર્યું. તે ઘી ખાવાથી તેનો ભાઈ મરી ગયો આ, ઉદાહરણમાં અધર્મયુક્તતાને કારણે તથા શ્રોતામાં અધર્મજ્ઞાન ઉત્પન્ન કરનાર હોવાને કારણે આહરણદોષતા છે.

द्वितीयभेदमाह—'पडिलोमे' इति। प्रतिलोमः=प्रातिकूल्यं, स यत्रोपदिश्यते तत्प्रतिलोमोदाहरणम्, यथा "व्रजति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः" इत्यादि। यथा चण्डप्रद्योतं प्रति तदपहृताभयकुमारेण यथा कृतं तद्वत् तद्दोषताचास्य श्रोतुः परापकरणनिपुणबुद्धिजनकत्वादिति। अथवा–'जीवोऽजीवश्चेति द्वावेव राशी' इत्युक्तेऽन्यः कोऽपि तन्निग्रहार्थमाह–तृतीयोऽपि नोजीवाख्यो राशिरस्ति गृहगोधिकादिच्छिन्नपुच्छवदिति। अस्याहरणतद्दोषता चोत्सूत्रप्ररूपणादिति। अथ तृतीयभेदमाह—'अत्तोवणीए' इति। आत्मोपनीतम् आत्मैव उपनीतो वियोजितो यस्मिंस्तत्तथा अर्थात् येन

"प्रतिलोम" प्रतिकूलता जहां उपदिष्ट होतीहै वह प्रतिलोमोदाहरणहै जैसे-"व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः" इत्यादिमें कहा गयाहै।अथवा–चण्डप्रद्योतके प्रति उसके द्वारा अपहृत हुए अभयकुमारने जैसा किया है वैसा करना यह सब प्रतिलोमोदाहरण है इसमें आहरणतद्दोषता श्रोताको परापकरण (दूसरेको नुकसान करने) में निपुण ऐसी बुद्धिकी जनकतासे आती है अथवा–"जीव और अजीव ऐसी ये दो राशी हैं" ऐसा कहने पर इसके निग्रह निमित्त अन्य कोई भी यदि ऐसा कहता है कि नहीं गृहगोधिकादि छिन्न पुच्छकी तरह नोजीवराशिभी तीसरी राशि है ऐसे कथनमें आहरणतद्दोषता उत्सूत्र प्ररूपणासे आई है "आत्मोपनीत"–जिसमें आत्मा स्वयंही उपनीत हो जाय वह आत्मोपनीत है अर्थात्–ऐसा वह ज्ञात

"प्रतिलोम"—જેમાં પ્રતિકૂળતા ઉપદિષ્ટ થાય છે તે ઉદાહરણને પ્રતિલોમોદાહરણ કહે છે. જેમકે–"व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः" ઇત્યાદિમાં કહેવામાં આવ્યુ છે. અથવા પોતાને અપહૃત કરનાર (અપહરણ કરનાર) ચંડપ્રદ્યોતની સાથે અભયકુમારે જેવું કર્યું એવું કરવું તે પ્રતિલોમના ઉદાહરણ રૂપ છે તેમાં આહરણતદ્દોષતા હોવાનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે–આ પ્રકારનુ ઉદાહરણ શ્રોતાની પરાપકરણ (અન્યને નુકસાન)માં નિપુણ એવી બુદ્ધિનું જનક થઇ પડે છે. અથવા–"જીવ અને અજીવ એવી આ બે જ રાશી છે" આ પ્રમાણે જ્યારે કહેવામા આવે ત્યારે તેના નિગ્રહ નિમિત્તે કોઈ એવું કહે કે "ગૃહગોધિકાદિ છિન્ન પુચ્છની જેમ નોજીવરાશિ પણ ત્રીજી રાશિ છે." આ પ્રકારના કથનમાં ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપણાને લીધે આહરણતદ્દોષતા રહેલી છે.

"આત્મોપનીત"—જેમાં આત્મા પોતે જ ઉપનીત થઇ જાય એવા ઉદાહરણને આત્મોપનીત કહે છે. એટલે કે પરમતના ખંડનને માટે કોઇ

ज्ञातेनान्यदीयमतनिराकरणाय परिगृहीतेन स्वकीयमतमेव दुष्टं भवेद् यत्र तद् आत्मोपनीतम्। यथा परिषदि केनापि कथितम्–अत्र सर्वे मूर्खाः' इति। अत्र-सर्वपदेन स्वात्माऽपि मूर्खतयोपात्त इति। आहरणतद्दोषता चात्र स्ववचनदोषात्। यथावा "सव्वे पाणा न हंतव्वा" सर्वे प्राणिनो न हन्तव्याः अस्य पक्षस्य दूषणाय कश्चिदाह–अन्यधर्मस्थितास्तु हन्तव्या विष्णुना राक्षसा इव, एवं वदता तेनात्मैव हन्तव्यतया उपनीतः तस्यापि धर्मान्तरस्थितत्वात्। अथवा–केनापि राज्ञा पृष्टः–' तडागोऽयं कथमभेद्यो भवति ?' अन्येन कथितम्–द्वात्रिंशल्लक्षणे पुरुषेऽत्र निखाते सत्यभेद्यो भवतीति। अमात्येन तु–स एव तत्र तादृशगुणसम्पन्नत्वा-

कि जो अन्य मतके निराकरणके लिये दिया गया है परन्तु उससे स्वयं का मतही दुष्ट हो जाय वह आत्मोपनीतहै जैसे किसी सभामें किसीने कहा–यहां सबही मूर्ख है सो इस प्रकारके कथनसे कहनेवालेको भी मूर्खता प्राप्त हो जाती है क्योंकि सर्व पदसे वह भी गृहीत हो जाता है ऐसे कथनमें आहरणतद्दोषता स्ववचन दोषसे है अथवा–जैसे–"सव्वे पाणा न हंतव्वा' इस कथनको दूषित करनेके लिये कोई ऐसा कहे कि अन्य धर्मस्थित प्राणीको तो विष्णुने जैसे राक्षसोंको मारा है वैसे मार देना चाहिये, इस प्रकारके उसके कथनके अनुसार वह स्वयं भी हन्तव्य रूपसे उपस्थित हो जाता है क्योंकि वह स्वयं भी धर्मान्तरमें स्थित है अथवा–किसी राजाने पूछा–यह तालाव अमोघ कैसे हो सकता है तब किसीने कहा–बत्तीस लक्षणोंवाला यदि कोईपुरुष यहां पर जीता गाड़

દૃષ્ટાન્ત આપવામાં આવ્યું હોય, પરન્તુ તેના દ્વારા પોતાના મતનું જ ખંડન થઈ જતું હોય, તો એવા દૃષ્ટાન્તને આત્મોપનીત કહે છે. જેમકે કોઇ સભામાં કોઈ માણસ એવું બોલે કે "અહીં બધાં મૂર્ખાઓ એકત્ર થાય છે." તો તેના આ કથન દ્વારા તે પોતે પણ મૂર્ખ ઠરે છે કારણકે "બધા મૂર્ખ છે" એમ કહેવામાં કહેનાર પોતે પણ મૂર્ખ રૂપે ગણાઇ જાય છે. આ કથનમાં સ્વવચન દોષને લીધે આહરણતદ્દોષતા છે. અથવા–"સવ્વે પાણા ન હંતવ્વા" "કોઇ પણ જીવને હણવો જોઇએ નહીં," આ કથનને દૂષિત કરવાને માટે કોઈ એવું કહે કે "જેમ ભગવાન વિષ્ણુએ રાક્ષસોને મારી નાખ્યા હતા, તેમ અન્ય ધર્મસ્થિત જીવોને મારી નાખવા જોઈએ", આ કથન અનુસાર તો આવું કહેનાર પણ હણી નાખવાને યોગ્ય પ્રતિપાદિત થાય છે, કારણ કે અન્ય ધર્મને માનનારા લોકોની દૃષ્ટિએ તો તે પણ વિધર્મી જ છે.

અથવા—કોઇ રાજાએ પૂછયું. "આ તળાવ અમોઘ કેવી રીતે બની શકે ?" ત્યારે કોઈએ એવો જવાબ આપ્યો કે "કોઈ બત્રીશ લક્ષણા

निखात इति तेन स्वात्मैव तत्र नियुक्तः स्वस्यैव वचनदोषादत आत्मोपनीतत्वमत्रेति।

चतुर्थभेदमाह—'दुरुवणीए' इति। दुरुपनीतम् दुष्टमुपनीतं योजितं यस्मिन् इति दुरुपनीतम्—यथा केनचित्कस्मैचित् किमपि पृष्टम् तस्मै तेनासंगतमुत्तरं प्रदत्तं भवेत्, यथा कस्मैचिद् भिक्षुकाय केनापि पृष्टे सति भिक्षोरसंगतमुत्तरम्, यथा—

"भिक्षो! मांसनिषेवणं प्रकुरुषे? किं तेन मद्यं विना,
मद्यं चापि तव प्रियं? प्रियमहो वाराङ्गनाभिः सह।
वेश्या द्रव्यरुचिः कुतस्तव धनं? द्यूतेन चौर्येण वा,
चौर्यद्यूतपरिग्रहोऽपि भवतः? भ्रष्टस्य कान्या गतिः ॥१॥" इति।

यद्वा-केनचिद् धूर्तेन कस्मिंश्चित् हस्तगतजाले भिक्षुके पृष्टे तेनासंगतमुत्तरं दत्तं यथा—

दिया जावे तो यह तालाब अमोघ हो सकता है, उसकी ऐसी बात सुनकर अमात्यने उसकोही बत्तीस लक्षण संपन्न होनेसे वहां गाड़ दिया इस तरह उसने अपने आपकोही अपने वचनदोषसे विपत्तिमें डाल दिया, इस तरह स्ववचनदोषसेही आहरणतद्दोषतामें आत्मोपनीतता आती है "दुरुवणीए" जिसमें उत्तरदाता अपने आपको दुष्ट रूपसे योजित करता है वह दुरुपनीत है अर्थात्-किसीने किसीके लिये कुछ भी पूछा हो, यदि वह उसका असंगत उत्तर देताहै तो ऐसी अवस्थामें वह दुरुपनीत कहा जाता है जैसे-किसीने एक भिखारीसे कुछ पूछा तो उसने मांस सेवनकी शंकासे उसको उत्तर कुछ ही दिया जैसे—

"भिक्षो! मांसनिषेवणं प्रकुरुषे" इत्यादि। हे भिक्षो! क्या तुम मांसका निषेवण-सेवन करते हो? उस भिखारीने कहा मद्यके बिना

પુરુષનો અહીં ભોગ આપવામાં આવે તો આ તળાવ અમોઘ થઈ શકે" તેનાં આ શબ્દો સાંભળીને અમાત્યે, ૩૨ લક્ષણોથી સંપન્ન હોવાને કારણે એવી સલાહ આપનારનું જ બળિદાન આપી દીધું. આ રીતે તેણે પોતાના વચનદોષને કારણે પોતાનો જ જાન ગુમાવ્યો આ રીતે સ્વવચન દોષતાને લીધે જ આહરણતદ્દોષતામાં આત્મોપનીતતા આવી જાય છે

"દુરુવણીપ" 'દુરૂપનીત'—જેમાં ઉત્તરદાતા પોતાને જ દૂષિત રૂપે યોજિત કરે છે, તેનું નામ 'દુરૂપનીત' છે. જેમ કે—કોઈને કોઈ પ્રશ્ન પૂછવામાં આવે અને તે તેનો અસંગત જવાબ આપે, તો એવી પરિસ્થિતિમાં તેને દુરૂપનીત કહેવામાં આવે છે જેમ કે—કોઈએ એક ભિખારીને કંઈ પૂછ્યું તો તેણે માંસ સેવનની શંકાથી તેને બીજો જ ઉત્તર આપ્યો જેમ કે—

"भिक्षो! मांसनिषेवणं प्रकुरुषे" ઇત્યાદિ—"હે ભિક્ષુક! શું તમે માંસનું

"कन्थाऽऽचार्याऽघना ते ननु शफरवधे जालमश्नासि मत्स्यान् ?,
ते मे मद्योपदंशाः पिबसि ननु ? युतो वेश्यया यासि वेश्याम् ?।
दत्त्वाऽरीणां गलेंऽघ्रिं क्व नु तव रिपवो ? येषु सन्धिं छिनद्मि,
चौरस्त्वं ? द्यूतहेतोः कितव इति कथं ? येन दासी सुतोऽस्मि" ॥१॥इति ।

वहअच्छाही नहीं लगता है,तो क्या मद्य सेवनभी करते हो ? हां करता हूं किंतु अकेला नहीं वह तो वेश्याके साथही प्रिय लगता है, तो क्या वेश्याके पास भी जाते हो ? वह तो द्रव्यसे ही प्रेम करनेवाली होती है तो तुम द्रव्य कहांसे लाते हो ? जुएँ और चोरीसे लाता हूं, तो क्या आप जुआँ और चोरी भी करते हो ? हां, भ्रष्ट पुरुषकी अन्य गति ही क्या हो सकती है ? इसमें केवल यही दिखलाया गया है कि किसीके कुछ पूछने पर उत्तर देने वालेने कितना अधिक असंगत उत्तर दिया है इसी तरहसे हाथमें मच्छी पकड़नेकी जाल लिये जाते हुवे भिखारीको किसी धूर्तने पूछा तो उसने उसे इस प्रकारका उत्तर दिया—

"कन्थाऽऽ चार्यघना ते" इत्यादि । जो कन्था लेकर घूमनेवाले हे भिक्षुक । तेरी कन्थामें ये जगह २ छेद क्यों हो रहे हैं ? नहीं २ यह तो मच्छी पकड़नेकी जाल है, तो क्या तू मच्छी भी खाते हो ? हां, वह विना मद्यके अच्छी नहीं लगती है, तो क्या तुम मद्यभी पीते हो

સેવન કરો છો ખરા ? તે ભિખારીએ કહ્યું મદિરાપાન સિવાય તો તેમાં મજા જ કેવી રીતે પડે ? તો શું તમે મદિરાનું પણ સેવન કરો છો ? હા કરૂં છું પણ એકલો નહીં તે તો વેશ્યા સાથે જ પ્રિય લાગે છે તો શું તમો વેશ્યા સેવન પણ કરો છો ? તે તો ધનથી જ પ્રેમ કરવાવાળી હોય છે, તો તમો ધન ક્યાંથી લાવો છો ? જુગાર અને ચોરીથી લાવું છું તો શું તમો ચોરી પણ કરો છો ? હા ભ્રષ્ટ પુરુષની બીજી ગતી જ શું થઈ શકે ?

આ દૃષ્ટાન્તમાં કેવળ એજ વાતને પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે એક સામાન્ય પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે કેવી અસંગત વાતો ઉત્તર દેનાર દ્વારા કરવામાં આવી છે। આ પ્રકારનું એક બીજું દૃષ્ટાન્ત હવે આપવામાં આવે છે. કોઇએ એક ભિખારીને કંઇ પૂછ્યું તો તેણે માંસસેવનની શંકાથી તેને બીજો જ ઉત્તર આપ્યો જેમ કે—" कन्थाऽऽचार्यघना ते "—" હે કન્થાધારી ભિક્ષુક ! તારી કન્થામાં સ્થળે સ્થળે છિદ્ર કેમ દેખાય છે ? ના ના આ તો માછલા પકડવાની જાળ છે, તો શું ? તમો માછલી પણ ખાવ છો ? હાં પણ તે મદ્ય સેવન વગર બરોબર લાગતી નથી તો શું તમે મદ્ય

यत् प्रकृतसाध्यानुपयोगि दार्ष्टान्तिकेन सह साधर्म्याभावात्तद् दुरुपनीतम्, यथा नित्यः शब्दः कार्यत्वाद् घटवदित्यत्र दृष्टान्ते घटे नित्यत्वधर्मो नास्ति इति तत्साधर्म्यात् शब्दस्य नित्यत्वं कथं सिद्ध्येत् अनित्यतैव पर्यवस्यतीति तृतीयं ज्ञातम् ३।

अथ चतुर्थं ज्ञातमाह—'उवन्नासोवणए.' इत्यादि।

'उवन्नासोवणए' उपन्यासोपनयश्चतुर्द्धा भवति-तद्वस्तु-तदन्यवस्तु, प्रति-निभ-हेतु-भेदात्। तत्र प्रथमं भेदमाह-'तव्वत्थुए' इति तद्वस्तुकम् तदेव=

हां किन्तु अकेला नहीं वह वेश्याके साथही पीता हूं, तो क्या तुम वेश्याके यहांभी जाते हो? दुश्मनोंके गले पर पैर रखकर जाता हूं, तुम्हारे दुश्मन कहांसे हुवे? में जिनके घर पर खात लगाता हूं वे मेरे शत्रु हो जाते हैं। तो क्या तुम चोरीभी करते हो? हां, जुवेके लिये सब कुछ करना पड़ता है ऐसा क्यों करते हो? मैं दासी पुत्र हूं इसलिये ॥१॥ दार्शनिक दृष्टिसे इस दुरुपनीतका तात्पर्य ऐसाही निकलता है कि जो प्रकृत साध्यमें उपयोगी नहीं होता है अनुपयोगी रहता है वह दुरुपनीतहै क्योंकि दार्ष्टान्तिकमें इसके साधर्म्यका अभाव रहता है जैसे-" नित्यः शब्दः कार्यत्वात् घटवत् " कार्य होनेसे घटकी तरह शब्द नित्य है। यहां घट दृष्टान्तमें नित्यत्व धर्म नहींहै इसलिये उसके साधर्म्यसे शब्दमें नित्यता कैसे सिद्ध हो सकती है इससे तो अनि-त्यताही सिद्ध होती है ३

પણ પીવો છો? હા, પણ એકલો નથી પીતો વેશ્યાની સાથે જ પીઉં છું, તો શું તમે વેશ્યાને ત્યાં પણ જાવ છો? હા દુશ્મનના ગળા પર પગ રાખીને જાઉં છું, તમારે વળી દુશ્મન કયાથી? હું જેના ઘરોમાં ખાતર પાડું છું તેઓ મારા દુશ્મન બને છે. તો શું? તમો ખાતર પણ પાડો છો! જુગાર માટે તેમ કરવું પડે છે. તો હે ધૂર્ત આવું તું શા માટે કરે છે? હું દાસીનો પુત્ર છું એ માટે?" આ પણ દુરૂપનીતનું દૃષ્ટાન્ત છે.

દાર્શનિક દૃષ્ટિએ આ દુરૂપનીતનો ભાવાર્થ એવો થાય છે કે જે પ્રકૃત સાધ્યમાં ઉપયોગી થતું નથી પણ અનુપયોગી જ થઇ પડે છે, તેને દુરૂપનીત કહે છે, કારણ કે દાર્ષ્ટાન્તિકની સાથે તેના સાધર્મ્યનો અભાવ રહે છે.

જેમકે-" नित्यः शब्द कार्यत्वात् घटवत् " " કાર્ય હોવાથી ઘટ (ઘડા)ની જેમ શબ્દ નિત્ય છે" અહીં ઘટ દૃષ્ટાન્તમા નિત્યત્વ ધર્મનો જ અભાવ હોવાથી તેના સાધર્મ્ય વડે શબ્દમાં નિત્યતા કેવી રીતે સિદ્ધ થઈ શકે? આ દૃષ્ટાન્ત વડે તો શબ્દમાં અનિત્યતા જ સિદ્ધ થાય છે.

परोपन्यस्तसाधनमेव वस्तु इति उत्तरभूतं वस्तु यस्मिन्नुपन्यासोपनये स तद्व-स्तुकः। अथवा तत् परोपन्यस्तं वस्तु इति तद्वस्तु, तदेव तद्वस्तुकं तेन युक्त उपन्यासोपनयोपि तद्वस्तुक इति कथ्यते। यथा कश्चिदाह–भो भोः शृणुत मदीय-ग्रामे महदेकं सरः, तत्परिसरे महान् शाल्मलीतरुर्विद्यते तस्य यानि पर्णानि जले पतंति तानि जलचरा जीवा भवन्ति, यानि च स्थले पतन्ति तानि च स्थलचरा भवन्तीति लोकानां कुतूहलार्थमित्थं निवेदितम्, तत्र तदुपन्यस्तमेव तादृगतरु-पत्रपतनवस्तु अधिकृत्य केनचिदुक्तं भो ? यानि पत्राणि भूमिजलयोरन्तराले पतन्ति तेषां का स्थितिरिति; उपपत्तिमात्रमुत्तरभूतं वस्तु तद्वस्तुक उपन्यासो-

---

चौथा ज्ञात जो उपन्यासोपनय है वह चार प्रकारका है जैसे–तद्वस्तुक १, तदन्यवस्तुक २ प्रतिनिभ ३ और हेतु ४ जिस उपन्यासोपनयमें परके द्वारा दिया गया साधनही वस्तुरूप होता है अर्थात् उत्तररूप होता है वह तद्वस्तुक है। अथवा–परोपन्यस्तवस्तुरूप वस्तुकसे युक्त जो उप न्यासोपनय है वह भी तद्वस्तुक कहलाता है; जैसे किसीने कहा–हे भाईओ ! सुनो मेरे गाँवमें एक बड़ा भारी तालाव है उसके तट पर एक बहुत बड़ा सेमरका वृक्ष है उसके पत्ते जितने जलमें गिरते हैं वे सब जलचर जीवोंके रूपमें परिणत हो जाते हैं, और जितने पत्ते जमीन पर गिरते हैं वे सब स्थलचर जीवोंके रूपमें परिणत हो जाते हैं ऐसा जो उसने कहा सो लोकोंको कुतूहल उत्पन्न करानेके लिये कहा इस पर किसी दूसरेने उससे कहा कि भाई ! यह तो बताओ कि जो पत्ते भूमि और

ચોથા જ્ઞાત (ઉદાહરણ) રૂપ જે ઉપન્યાસોપનય છે, તેના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર છે—(૧) તદ્વસ્તુક, (૨) તદન્યવસ્તુક, (૩) પ્રતિનિભ અને (૪) હેતુ જે ઉપન્યાસોપનયમાં અન્યના દ્વારા આપવામાં આવેલું સાધન જ વસ્તુરૂપ હોય છે એટલે કે ઉત્તર રૂપ હોય છે, તેનુ નામ તદ્વસ્તુક ઉપન્યાસોનય છે.

અથવા—પરોપન્યસ્ત વસ્તુરૂપ વસ્તુકથી યુક્ત જે ઉપન્યાસોપનય છે તેને પણ તદ્વસ્તુક કહે છે. જેમકે-કોઇ પુરુષે આ પ્રમાણે કહ્યું–“ હે ભાઈઓ ! મારા ગામમાં એક ઘણું વિશાળ તળાવ છે. તેના કાંઠા પર એક મોટું સેમર (શીમળા)નું વૃક્ષ છે. તેનાં જેટલાં પાન પાણીમાં પડે છે, તે બધાં જલચર જીવો રૂપે પરિણમી જાય છે અને જેટલાં પત્તાં જમીન પર પડે છે તે બધાં સ્થલચર જીવો રૂપે પરિણમી જાય છે.” તેણે આ પ્રકારનું જે કથન કર્યું તે લોકોમાં કુતૂહલ ઉત્પન્ન કરવા નિમિત્તે કહેવામાં આવ્યું હતું. ત્યારે કોઇએ તેને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછયો–“ એ તો બતાવો કે જે પાન ભૂમિ

पनय इति १। द्वितीयभेदमाह—' तदन्नवत्थुए ' इति। परोपन्यस्तवस्तुनो भिन्न मुत्तरभूतं वस्तु यस्मिन्नुपन्यासोपनये स तदन्यवस्तुकः यथा—तत्रैवोदाहरणे जले पतितानि पर्णानि जलचराः इति कथिते तद्विघटनाय पर्णपतनाद् भिन्नमुत्तरमाह—यानि पर्णानि पुनः दण्डादिना पातयित्वा खादति नयति वा स्वगृहं तस्य का गतिर्भवति ? न काऽपीत्यर्थः। यद्येवं तर्हि यानि पत्राणि जले स्थले वा

जलके अन्तरालमें गिरते हैं उनकी क्या दशा होती है इस प्रकारका उपपत्ति मात्र जो उत्तरभूत वस्तु है वही तद्वस्तुक उपन्यासोपनय है क्योंकि कहनेवाले जो सेमरके वृक्षके पत्रोंके गिरनेके बारेमें कहा है उसेही लेकर दूसरेने उससे ऐसा कहा है इस उत्तररूप कथनसे यही सिद्ध किया गया है कि जिस प्रकार अन्तरालपतित पत्र पत्तोंके रूपमें रहते हैं उसी प्रकारसे पानी और स्थलपर पतित पत्र भी पत्तोंकेही रूपमें रहते हैं इस प्रकारका यह उत्तर कथन तद्वस्तुक उपन्यासोपनय है

" तदन्नवत्थुए " जिस उपन्यासोपनयमें परोपन्यस्त वस्तुसे भिन्न उत्तरभूत वस्तु होतीहै, ऐसा वह उपन्यासोपनय तदन्यवस्तुकहै। जैसे—इसी पूर्वोक्त उदाहरणमें जब उसने ऐसा कहा कि जलमें पतित पत्ते जलचर हो जाते हैं तो जिन पत्तोंको वह दण्डादिक से गिराकर खाता है या अपने घर पर ले जाता है उसकी क्या हालत होती है ? यहां जो

અને જળના અન્તરાલમાં પડે છે, તેમની શી દશા થાય છે ?" આ પ્રકારની જે ઉપપત્તિ માત્ર રૂપ ઉત્તરભૂત વસ્તુ છે, તેનું નામ જ તદ્વસ્તુક ઉપન્યાસોપનય છે કારણ કે કહેનાર વ્યક્તિએ સેમર વૃક્ષના પાન પડવાથી તેમનુ શું થાય છે તે કહ્યુ છે અને બીજી વ્યક્તિએ પણ એ સેમર વૃક્ષના પાન જમીન અને પાણીના અન્તરાલમાં પડવાથી તેમનું શું થાય છે એવો પ્રશ્ન પૂછયો છે. આ ઉત્તર રૂપ કથનથી એજ વાત સિદ્ધ કરવામાં આવી છે કે જે પ્રકારે અન્તરાલપતિત પત્તાં પાન રૂપે જ રહે છે એજ પ્રમાણે જલપતિત અને સ્થલપતિત પત્તાં પણ પાનરૂપે જ રહે છે આ પ્રકારનું આ ઉત્તર કથન તદ્વસ્તુક ઉપન્યાસોપનય રૂપ છે.

" તદન્યવસ્તુક "—જે ઉપન્યાસોપનયમાં પરોપન્યસ્ત વસ્તુ કરતા ભિન્ન ઉત્તરભૂત વસ્તુ હોય છે, એવા ઉપન્યાસોપનયને તદન્યવસ્તુક કહે છે.

જેમકે—પૂર્વોક્ત ઉદાહરણમાં પહેલી વ્યક્તિએ જ્યારે આ પ્રકારનું કથન કર્યું કે " જલમાં પડેલાં પત્તાં જલચર રૂપે પરિણમી જાય છે, " ત્યારે તેને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછી શકાય—" જે પત્તાંને તમે લાકડી આદિ વડે પાડીને ખાઓ છો અથવા તમારે ઘેર લઇ જાઓ છો તેમની શી હાલત

पतन्ति तान्यपि जलचरजीवत्वेन स्थलचरजीवत्वेन वा भवितुं नार्हन्ति मनुष्याद्याश्रितपत्राणीव । यथा–मनुष्याद्याश्रितानि पत्राणि मनुष्यादिभवयूकादि रूपतया न सम्पद्यन्ते तथैव जलस्थलपतितानि पत्राण्यपि जलचरस्थलचरजीवत्वेन भवितुं नार्हन्ति, यदि तानि तथा संपद्यन्ते तर्हि मनुष्याद्याश्रितानि पत्राण्यपि यूकादितया संपद्यन्ताम्, मनुष्याद्याश्रितानि तु न तथा भवन्ति, इति जलस्थलपतितान्यपि तानि न जलचरत्वेन स्थलचरत्वेन च भवितुमर्हन्तीति ।

तृतीयभेदमाह-'पडिनिभे' इति। प्रतिनिभ इति यत्रोपन्यासोपनये वादिना उपन्यस्त-

पूछनेवालेने उससे जो पूछा है वह अपने आप गिरे हुए पत्तोंसे भिन्न रूपसे गिराये गये पत्तोंके विषयमें पूछा है अतः इस प्रकारका यह भिन्न रूपसे उत्तर पूछना रूप कथन उसका यही बात साबित कर देता है कि उनकी जैसी वह गति होनेकी बात कहना है, वैसी उनकी गति नहीं होती है वे तो मनुष्याश्रित पत्तोंकी तरहसेही पत्तोंके रूपमें बने रहते हैं नतो वे जलचर जीव रूपसे परिणमित होते हैं और न स्थलचर जीव रूपसे परिणमित होते हैं अर्थात् जिस प्रकारसे मनुष्यादिकोंमें होनेवाले यूकादि रूपसे वे पत्ते नहीं परिणमते हैं उसी प्रकारसे जलस्थल पतित पत्तेभी जलचर स्थलचर जीव रूपसे नहीं परिणम सकते हैं यदि वे उस रूपसे परिणमते होते तो मनुष्याद्याश्रित पत्ते भी यूकादि रूपसे परिणमित होने चाहिये परन्तु वे तो उस प्रकारसे परिणमित होते नहीं हैं ।

"पडिनिभे"—जिस उपन्यासोपनयमें वादीके द्वारा उपन्यस्त

થાય છે?" અહીં પ્રશ્ન કર્તાએ પહેલી વ્યક્તિને જે પ્રશ્ન પૂછયો છે તે પોતાની જાતે તૂટી પડેલાં પત્તાંથી ભિન્ન રૂપે નીચે પાડવામાં આવેલાં પાન વિષે પૂછયો છે. તેથી આ પ્રકારનો આ ભિન્ન રૂપે ઉત્તર જાણવા રૂપ તેનું કથન એજ વાત સિદ્ધ કરે છે કે જેવી રીતે મનુષ્યાશ્રિત પાન જુદે રૂપે પરિણમતાં નથી એજ પ્રમાણે જલપતિત પાન પણ જલચર જીવો રૂપે પરિણમન પામતાં નથી, અને સ્થલપતિત પાન સ્થલચર જીવો રૂપે પરિણમતા નથી. એટલે કે જેમ મનુષ્યાદિ જીવોની પાસે રહેલાં પાન યૂકાદિ રૂપે (જું લીખ આદિ રૂપે) પરિણમતાં નથી, એજ પ્રમાણે જળ અને સ્થલપતિત પત્તા પણ જલચર અને સ્થલચર જીવો રૂપે પરિણમતાં નથી. જો તેઓ તે રૂપે પરિણમતાં હોત તો મનુષ્યાદિને આશ્રિત પત્તાંઓ પણ જૂં, લીંખ આદિ રૂપે પરિણમિત થવાં જ જોઈએ. પરન્તુ એવું બનતું નથી.

"પડિનિભે" "પ્રતિનિભ"—જે ઉપન્યાસોપનયમાં વાદી દ્વારા ઉપ-

पदार्थस्योत्तरदानाय सदृशमेव वस्तु उपनीयते स प्रतिनिभः, यथा–आसीत्कश्चिद्राजा, स इत्थमघोषयत्–यः अपूर्वं श्लोकं–श्रावयिष्यति तस्मै लक्षं दास्यामि। तच्छ्रुत्वा अपूर्वान् श्लोकान् श्रावयितुं बहवोपि समागता अश्रावयंश्च श्लोकान्। तच्छ्रुत्वा राजोवाच एते तु मया श्रुता एव, ततोऽन्यः कोपि गत्वा इत्थं गाथामपठत्–

"तुज्झ पिया मज्जपिउणो, धारेइ अणूणयं सयसहस्सं।
जइ सुयपुव्व दिज्जउ, अह न सुयं खोरयं देहि" ॥ १ ॥

छाया– तव पिता मम पितु र्धारयत्यनून शतसहस्रम्।
यदि श्रुतपूर्वं ददातु, अथ न श्रुतं कटोरकं देहि ॥ १ ॥

उपस्थित किये गये पदार्थके उत्तर देनेके लिये सदृशही वस्तुका उपनय होता है सदृशही वस्तु उपस्थित की जाती है वह–प्रतिनिभ उपन्यासोपनय है जैसे–किसी राजाने ऐसी घोषणाकी–जो मुझे अपूर्व इलोक सुनावेगा उसके लिये मैं एक लाख रुपया प्रदान करूंगा इस उसकी घोषणाको सुनकर अनेक विद्वानोंने अपूर्व २ इलोकोंकी रचना करके उसे उन्हें सुनाया उत्तरमें राजाने कहा–ये इलोक तो मैंने सुनेही हैं तब किसीने जाकर इस गाथाको उसे सुनाया–

"तुज्झ पिया मज्झ पिउणो" तुम्हारे पिता पर मेरे पिताके एक लाख रुपया लेना है, यदि यह वात तुमने पहिलेसे सुन रखी है तो १ लाख रुपया मुझे दो और जो नहीं सुनी है तो भी मुझे १ लाख रुपया दो क्योंकि मैंने आपको यह अपूर्व श्लोक सुनाया है।

न्यस्त उपस्थित करवामा आवेला पदार्थना उत्तर देवाने माटे सदृश (समान) वस्तुनो ज उपनय थाय छे–समान वस्तु ज उपस्थित कराय छे ते प्रतिनिभ उपन्यासोपनय छे. जेमके कोई एक राजाए एवी जाहेरात करी के जे कोई माणुस मने अपूर्व (पहेलां न सांभळ्यो होय एवो) श्लोक संभळावशे तेने हुं एक लाख रूपीआनुं ईनाम आपीश.

आ घोषणा सांभळीने अनेक विद्वानोए अपूर्व श्लोको बनावीने तेने संभळाव्या. तेमने राजा आ प्रमाणे जवाब आपतो "आ श्लोक तो मे पहेलां सांभळेला छे" त्यार बाद कोई एक माणुसे ते राजा पासे जईने तेने आ श्लोक संभळाव्यो "तुज्झ पिया मज्झपिउणो" इत्यादि–

"तमारा पिताजी पासे मारा पिताजीना एक लाख रूपीया लेणा छे जो आ वात आपे पहेलां सांभळेली होय तो ते लेणा पेटे एक लाख रूपीआ आपो, अने आ वात तमे सांभळेली न होय तो अपूर्व श्लोक सांभळवाना ईनाम तरीके मने एक लाख रूपीआ आपो.

अपि च—

स्वस्ति श्री भोजराज ! त्रिभुवनविजयी धार्मिकस्ते पिताऽभूत्,
पित्रा ते मे गृहीता नवनवति युता रत्नकोटिर्मदीया ।
तास्त्वं देहि मदीयाः सकलबुधगणै ज्ञायते वृत्तमेतत्,
नो वा जानन्ति नूनं नवकृतमथवा देहि लक्षं ततो मे" ॥१॥ इति

एवं प्रकारेण तत्र निगृहीतो राजा, प्रतिनिभत्वं चास्यासत्यवचनं ब्रुवाणं प्रत्यसत्यवचनस्यैवोपन्यासादिति ।

चतुर्थभेदमाह — 'हेउ' इति, हेतुः – यत्रोपन्यासोपनये

तथा—"स्वस्ति श्री भोजराज" इत्यादि । इस श्लोकका भाव भी पूर्वोक्त श्लोकके अनुसारही है इसमें भोजराजके पिताको त्रिभुवनविजयी और धार्मिक प्रकट किया गया है निन्यानवे ९९ करोड़ रत्न उन पर मुझे लेना है ऐसा कर्जा इसमें कहा गया है अतः वह तुम मुझे दो यह बात यहां के सब विद्वानोंको ज्ञात है और यदि वे इस बातसे अनभिज्ञ हैं तो हमारी कृति यह अपूर्व है अतः इसे अपूर्व होनेके कारण आप हमें अपनी घोषणाके अनुसार १ लाख रुपया प्रदान कीजिये ।

इस प्रकारसे राजा निगृहीत परास्त हो जाताहै यहां इस कथनमें जो प्रतिनिभता आई है, वह असत्य वचन बोलनेके प्रति "मैंने ये श्लोकतो सुनेही हैं–इस प्रकारसे कहनेवाले राजाके प्रति असत्य वचनके उपन्यास करनेसेही आई है, क्योंकि-वादीके द्वारा उपन्यस्त पदार्थका उत्तर

તથા—"સ્વસ્તિશ્રી ભોજરાજ" ઈત્યાદિ. આ શ્લોકનો ભાવાર્થ પણ ઉપર્યુંક્ત શ્લોક જેવો જ છે આ શ્લોકમાં ભોજરાજાના પિતાને ત્રિભુવનવિજયી અને ધાર્મિક કહ્યા છે, અને તેમની પાસે પોતાનું (આ અપૂર્વ શ્લોક બનાવનારનું) ૯૯ કરોડ રત્નનું લેણું છે. મારી આ વાત અહીંના સર્વ પંડિતો જાણે છે. જો તેઓ આ વાતને ન જાણતા હોય તો મારી આ કૃતિ અપૂર્વ હોવાને કારણે આપે જાહેર કર્યા અનુસાર એક લાખ રૂપીઆનું ઈનામ મને મળવું જોઈએ

આ પ્રકારે રાજા પરાસ્ત થાય છે એવું બતાવવામાં આવ્યું છે.

આ કથનમાં પ્રતિનિભતા કેવી રીતે આવી છે તે હવે સમજાવવામાં આવે છે—"મેં આ શ્લોક પહેલાં સાંભળેલો છે." આ પ્રકારના અસત્ય-વચન બોલનારની સામે "મારા બાપાનું તમારા પિતાશ્રી પાસે એક લાખ રૂપીઆનું લેણું છે" આ પ્રકારના અસત્ય વચનનો ઉપન્યાસ કરવાથી તેમાં પ્રતિનિભતા આવી છે. કારણ કે વાદીના દ્વારા ઉપન્યસ્ત પદાર્થનો ઉત્તર તેના જેવી જ વસ્તુ વડે અપાયો છે. જેમ પહેલાં રાજાએ જૂઠાણાનો આશ્રય લીધે

पर्यनुयोगस्य (प्रश्नस्य) हेतुरुत्तरतया कथ्यते स हेतुरिति, यथा केनापि कश्चित् पृष्टः-अहो ! त्वया यवाः किं क्रीयन्ते ? स प्राह-येन मुधैव न लभ्यन्ते, एवं कस्माद् ब्रह्मचर्यादिकमनुष्ठीयते उत्तरमाह-अकृततपसां नरके वेदना भवति। यद्वा-कस्मात्त्वया प्रव्रज्या गृहीता ? तां विना मोक्षो न भवतीति। इह उपपत्तिमात्रमेवेदं ज्ञानत्वेनोक्तमर्थज्ञापकत्वादिति ४।

उसकी जैसी सदृश वस्तुसेही दिया गया है राजाने पहिले झूठ कहा बादमें श्लोक उपस्थित करनेवालोंने भी उसमें उसके जैसाही असत्य वस्तुका उल्लेख कर उसे परास्त किया है।

"हेउ"-जिस उपन्यासोपनयमें पर्यनुयोग-प्रश्नका हेतु उत्तर रूपसे कहा जाता है वह हेतु उपन्यासोपनय है जैसे-किसीने किसी से पूछा तुम यवोंको क्यों खरीद करतेहो ? उत्तरमें उसने कहा ये बिना खरीद किये प्राप्त नहीं होतेहैं। ब्रह्मचर्यादिकका पालन क्यों किया जाताहै ? उत्तरमें कहा गया है जो तपस्या नहीं करते हैं उन्हें नरकमें वेदना भोगनी पड़ती है अथवा-तुमने प्रव्रज्या क्यों ग्रहण की है ? उत्तरमें कहा गया है-उसके विना मोक्ष नहीं होता है। इन सब कथनोंमें प्रश्नही उत्तर रूपमें कहा गया है क्योंकि जब पूछनेवालेने ऐसा पूछाहै कि जौ को तुम खरीद क्यों करते हो ? तब उत्तरमें ऐसा कहा गयाहै कि वे विना खरीद किये प्राप्त नहीं होतेहैं इसलिये उन्हें खरीद किया जाताहै इसी तरहसे

હતો. તેમ અપૂર્વ શ્લોક ઉપસ્થિત કરનાર પુરુષે પણ અસત્યનો જ આશ્રય લઈને-લેણા રૂપ અસત્ય વસ્તુનો તે શ્લોકમાં ઉલ્લેખ કરીને-તે રાજાને પરાસ્ત કર્યો હતો.

" हेउ "-' હેતુ '—જે ઉપન્યાસોપનયમાં પર્યનુયોગ પ્રશ્નનો હેતુ ઉત્તર રૂપે કહેવામાં આવે છે તેને " હેતુ ઉપન્યાસોપનય " કહે છે. જેમ કે—કોઈએ કોઈને પૂછયું—" તમે જવ શા માટે ખરીદ કરો છો ? " ઉત્તર — " તે ખરીદ્યા વગર મળતા નથી. " પ્રશ્ન — " બ્રહ્મચર્ય આદિનું પાલન શા માટે કરાય છે ? " ઉત્તર — " જેઓ તપસ્યા કરતા નથી તેમને નરકમાં વેદના ભોગવવી પડે છે. " પ્રશ્ન—"તમે પ્રવ્રજ્યા કેમ ગ્રહણ કરી છે ?" ઉત્તર—પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કર્યા વિના મોક્ષ મળતો નથી. " આ બધાં કથનોમાં પ્રશ્ન જ ઉત્તર રૂપે કહેવામાં આવ્યો છે. કારણ કે જ્યારે પ્રશ્નકર્તા એવો પ્રશ્ન કરે છે કે " તમે શા માટે જવ ખરીદ કરો છો ? " ત્યારે ઉત્તર રૂપે એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે " ખરીદ કર્યા વિના જવ મળતા નથી, તેથી તેને ખરીદ કરવામાં આવે છે. " એ જ પ્રમાણે અન્ય

अथ हेतोश्चातुर्विध्यमाह—'हेऊचउव्विहे' इत्यादि । हेतुः—हिनोति गमयति ज्ञेयमिति हेतुः साध्यनिरूपितव्याप्तिमान् अन्यथाऽनुपपत्ति लक्षणः यथा पर्वतो वह्निमान् धूमान्यथानुपपत्तेरिति, तदुक्तम्—" अन्यथाऽनुपपन्नत्वं हेतोर्लक्षणमीरितम् तदप्रसिद्धिसन्देहविपर्यासैस्तदाभता " ॥ १ ॥ अत्र श्लोकपूर्वार्द्धेन हेतोर्लक्षणम्,

---

अन्य प्रश्नोंके उत्तरमें भी ऐसाही समझना चाहिये जो प्रश्न किया गया है वही उत्तर रूपमें यहां प्रकट किया गया है ।

"हेऊ चउव्विहे" हेतु चार प्रकारका कहा गयाहै—यापक१, स्थापक२, व्यंसक३ और लूषक४ जो ज्ञेयका गमक—बतानेवाला होताहै वह हेतुहै । यह हेतु अपने साध्यके साथ अविनाभाव सम्बन्ध रूप व्याप्तिवाला है "साध्याविनाभावित्वेन निश्चितो हेतुः" ऐसा हेतुका लक्षण कहा गयाहै जो अपने साध्यके साथ अविनाभाव संबन्धवाला होताहै वही हेतु होताहै यह हेतु अन्यथानुपपत्ति है लक्षण जिसका ऐसा होताहै यहां अन्यथा शब्दसे साध्यके विना लिया गयाहै और अनुपपत्ति शब्दसे हेतुका नहीं होना लिया गया है जैसे—" पर्वतोऽयं वह्निमान् धूमान्यथानुपपत्तेः " यह पर्वत अग्निवालाहै क्योंकि धूमकी अन्यथा(अग्निके विना)अनुपपत्ति होतीहै विना अग्निके धूम होता नहींहै, पर वहहै, इससे पर्वतमें अग्निहै यह बात प्रमाणित-अनुमित हो जातीहै यही बात—"अन्यथानुपपन्नत्वं हेतोर्लक्षण-

---

પ્રશ્નોના ઉત્તરો વિષે પણ એવું સમજવું જોઈએ કે જે પ્રશ્ન કરવામાં આવ્યો છે, તેને જ ઉત્તર રૂપે અહીં પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે.

" हेऊ चउव्विहे " હેતુના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) યાપક, (૨) સ્થાપક, (૩) વ્યંસક અને (૪) લૂષક.

જે જ્ઞેયને જણાવનાર હોય છે તેનું નામ હેતુ છે. આ હેતુ પોતાના સાધ્યની સાથે અવિનાભાવ સંબંધ રૂપ વ્યાપ્તિવાળો હોય છે. " साध्याविनाभावित्वेन निश्चितो हेतु " એવું હેતુનું લક્ષણ કહ્યું છે. જે પોતાના સાધ્યની સાથે અવિનાભાવ સંબંધ વાળો હોય છે એનું નામ જ હેતુ છે. તે હેતુ અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણવાળો હોય છે. અહીં "અન્યથા" પદ સાધ્ય વિનાનું વાચક છે અને 'અનુપપત્તિ શબ્દ હેતુના અભાવનો વાચક છે. એટલે કે સાધ્યનો અભાવ હોય તો હેતુનો પણ અભાવ જ હોય છે. જેમકે—"पर्वतोऽयम् वह्निमान् धूमान्यथानुपपत्तेः" " આ પર્વત અગ્નિવાળો છે, કારણ કે ધૂમાડાની અન્યથા (અગ્નિ વગર) અનુપપત્તિ જ હોવી જોઇએ એટલે કે ધૂમાડા વિના અગ્નિ હોતી નથી, ધૂમાડો છે એટલે અગ્નિ પણ હોવી જોઇએ, આ વાત તેના દ્વારા પ્રમાણિત—અનુમાનિત થઇ જાય છે એજ વાત—" अन्यथानुपप-

अपरभागेन तु हेत्वाभासानां लक्षणं प्रतिपादितम् । उपन्यासोपनये उक्तो हेतुः पृष्टस्योत्तररूपमुपपत्तिमात्रम्, अत्र तु अयं साध्य प्रति अन्वयव्यतिरेकवान् दृष्टान्तदर्शितव्याप्तिमान् । असौ यद्यपि एकस्वरूपोपि किंचिद्विशेषात् चतुर्धा भवति-यापक-स्थापक-व्यंसकलूषकभेदात् । तत्र 'जावए' इति-यापयति वादिनः कालयापनां यः करोति स यापको हेतुः । यथा सचेतना वायवः परप्रेरणेष्वसत्सु तिर्यगनियतत्वाभ्यां गतिमत्त्वात् गोशरीरवत्, अत्र हेतुर्विशेषण

मीरितम्, तदप्रसिद्धिसन्देहविपर्यासैस्तदाभता" इस श्लोक द्वारा प्रकटकी गई है। यहां श्लोकके पूर्वार्द्धसे हेतुका लक्षण कहा गया है और अपर भागसे हेत्वाभासोंका लक्षण कहा गया है। उपन्यासोपनय में उक्त हेतुका पृष्ट प्रश्नके उत्तररूपमें उपपत्ति मात्र-कथन मात्र होना है परन्तु यहां वह साध्यके प्रति अन्वयव्यतिरेक सम्बन्धवाला और दृष्टान्तसे दर्शित व्याप्तिवाला होता है यह यद्यपि एक स्वरूप होता है तो भी किञ्चित् विशेषताको लेकर यापक आदिके भेदसे चार प्रकारका हो जाता है—

जो हेतु,वादीकी कालयापना करता है वह यापक हेतु होता है कालयापक वही हेतु होता है जो विशेषण बहुल होता है ऐसे हेतुके उच्चारण करनेमें वादीको विशेष समय लगता है जैसे—"सचेतना वायवः परप्रेरणेष्वसत्सु तिर्यगनियतत्वाभ्यां गतिमत्त्वात् गोशरीरवत्" वायु सचित्त होता है, विना प्रेरणा ही तिर्यङ्‌ और अनियत, गमन करने वाला होने से, गाय के शरीर के समान इस अनुमानप्रयोगमें "गतिमत्त्वात्" हेतुके "परप्रेरणे असति

त्त्व' हेतोर्लक्षणमीरितम् तदप्रसिद्धिसन्देहविपर्यासैस्तदाभता" આ શ્લોક દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવી છે અહી શ્લોકના પૂર્વાર્ધ દ્વારા હેતુનુ લક્ષણ કહેવામાં આવ્યું છે અને અપરાર્ધ દ્વારા હેત્વાભાસોનું લક્ષણ કહેવામાં આવ્યું છે.

ઉપન્યાસોપનયમાં ઉકત હેતુનુ પૃષ્ટ પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપમાં ઉપપત્તિ માત્ર-કથન માત્ર હોય છે, પરન્તુ અહીં તે સાધ્યની સાથે અન્વયવ્યતિરેક સંબંધવાળો અને દૃષ્ટાન્ત દ્વારા દર્શિત વ્યાપ્તિવાળો હોય છે. તે જો કે એક જ સ્વરૂપ વાળો હોય છે, છતા પણ થોડી થોડી વિશેષતાને લીધે તેના યાપક આદિ ચાર ભેદ કહ્યા છે

જે હેતુ વાદીની કાલયાપના કરે છે—ઘણો કાળ ગુમાવે છે—તે હેતુનું નામ 'યાપક હેતુ' છે. કાલયાપક એ જ હેતુ હોય છે કે જે વિશેષણોની વિપુલતાવાળો હોય છે. એવા હેતુનું ઉચ્ચારણ કરવામાં વાદીને ઘણો સમય લાગે છે જેમ કે—"सचेतना वायव परप्रेरणेष्वसत्सु तिर्यगनितयत्वाभ्यां गतिमत्त्वात् गोशरीरवत्" વાયુ સચિત્ત હોય છે, બીજાની પ્રેરણા વગર જ તિર્યક્ અને અનિયતગમન કરવાવાળો હોવાથી આ અનુમાન પ્રયોગમાં "गतिमत्त्वात्" હેતુના આ વિશેષણો છે-"परप्रेरणे असति तिर्यगनियतत्व" આ બહુલ વિશેષણ છે. આ

बहुलतया प्रतिपादितः दुरधिगमत्वात् कालं यापयति अतो यापको हेतुरिति। यद्वा-काचित्कुलटा स्वपतेः कालयापनां कर्त्तु कथितवती-अहो! सांप्रतमुष्ट्रलिण्डानि महार्घाणि जातान्यतस्तानि गृहीत्वा नगरे गच्छ, तत्र एकैकरूप्यकेण एकैकं लिण्डं देयमिति तद्विक्रयार्थप्रेषणोपायेन जारसेवायां कालयापनां कृतवतीति यापको हेतुः। अथवा-यो हेतु र्झटिति साध्यं न प्रत्याययति किन्तु कालक्षेपेण, स कालयापकत्वात् यापको हेतुः, यथा-'सर्वं वस्तु क्षणिकं सत्त्वात्' इत्यत्र

तिर्यगनियतत्त्वं" ये बहुल विशेषण हैं विशेषणबहुल हेतु दुरधिगम हो जाता है-उसका समझना बड़ा कठिन हो जाता है इसलिये ऐसा हेतु दुरधिगम होनेसे काल यापक होता है अर्थात् प्रतिवादी उस हेतुको बड़ी देरमें समझ पाता है इसलिये उसके भी कालकी यापना होती है यद्वा—किसी कुलटाने अपने कालकी यापना करनेके निमित्त पतिसे ऐसा कहा-देखो इस समय ऊंटके मेंगणाओंकी बहुत कीमत बढ गई है इसलिये तुम उन्हें लेकर नगरमें जाओ और वहां एक २ रुपयामें उन्हें बेच आओ इस प्रकार उसने अपने पतिको मेंगणें बेचनेके बहानेसे उसके वापिस आने तकके समयमें अपने प्रणयको उपपत्तिके साथ काल व्यतीत किया। इस प्रकार यहां यह हेतु कालयापक होता है अथवा जो हेतु शीघ्रतासे अपने साध्यका गमक नहीं होताहै, किन्तु देरीसे अपने साध्यका गमक होता है ऐसा वह हेतु कालयापक होनेसे

પ્રકારના વિશેષણોની વિપુલતાવાળો હેતુ દુરધિગમ (સમજવો ઘણો કઠિન) થઈ જાય છે. તે કારણે-દુરધિગમ હોવાને કારણે એવો હેતુ કાલયાપક હોય છે-તેને સમજવામાં ઘણો સમય લાગે એવો હોય છે. એટલે કે પ્રતિવાદી તે હેતુને સમજવામાં ઘણો કાળ વ્યતીત કરી નાખે છે, તેથી તેના કાળની પણ યાપનાથાય છે.

અથવા—કોઈ કુલટાએ પોતે ઇચ્છિત સમય વ્યતીત કરવાને માટે તેના પતિને કહ્યું—"હાલમાં ઊંટના લીંડાઓની કીમત ખૂબ જ વધી ગઈ છે. તેથી તમે અત્યારે જ આપણા ઊંટના લીંડાઓ લઈને નગરમાં જાઓ અને તેને એક રૂપીઆના એકના ભાવે વેચી આવો" આ પ્રકારે તેણે તેના પતિને ઊંટના લીંડાઓ વેચવાને બહાને ગામમાં મોકલીને, તે પાછો ફરે ત્યાં સુધીનો કાળ પોતાના યારની સાથે વ્યતીત કર્યો. આ પ્રકારે અહીં આ હેતુ કાલયાપક થઈ પડે છે. અથવા જે હેતુ શીઘ્રતાથી પોતાના સાધ્યનો ગમક (જાણનારો) હોતો નથી, પણ ઘણા સમય પછી પોતાના સાધ્યનો જાણનારો હોય છે એવો તે હેતુ કાલયાપક હોવાથી યાપક રૂપ હોય છે.

सर्ववस्तुनः क्षणिकत्वं साधयितुं बौद्धैः 'सत्त्वात्' इति हेतुरुपन्यस्तः। नहि कश्चित् सत्त्वश्रवणादेव क्षणिकत्वं प्रत्येति, अतो बौद्धाः सत्त्वं क्षणिकत्वेन साधयन्ति, सत्त्व नामार्थक्रियाकारित्वमेव, अन्यथा, बन्ध्यासुतस्यापि सत्त्वप्रसङ्गः, अर्थक्रियाकारित्वं तु नित्यस्यैकरूपत्वान्न कथंचिदपि संभवति, अतो नित्यभिन्नस्य क्षणिकस्यैव अर्थक्रियाकारित्वरूपं सत्त्वं सिध्यति। इत्थं च सत्त्वं क्षणिकत्वव्याप-

यापक होता है जैसे "सर्वं वस्तु क्षणिकं सत्त्वात्" समस्त वस्तुएँ सत्त्व विशिष्ट होनेसे क्षणिकहैं, इस प्रकारके अनुमानसे बौद्धोंने समस्त पदार्थोंमें क्षणिकता-क्षणविनश्वरताकी सिद्धि जो सत्त्व हेतुसेकी है सो इस हेतुके सुनतेही कोईभी व्यक्ति इस हेतुसे पदार्थों में क्षणिकताकी प्रतीति झटिति नहीं कर पाताहै अतः फिर वह समझाताहै कि "यदेवार्थक्रियाकारि तदेव परमार्थसत्" जो अर्थक्रियाकारी अर्थरूप क्रियाको करनेवाला होताहै वही परमार्थतः सत् होताहै यदि अर्थ क्रियाकारीकोही सत् न माना जावे तो वन्ध्याके पुत्रमेंभी सत्त्व मानना पड़ेगा अतः जब यह बात मानली जाती है कि जो अर्थ क्रियाकारी होता है वही परमार्थसे सत् है तो फिर जो सर्वथा नित्य पदार्थ है कूटस्थ नित्य है उसमें अर्थक्रियाकारिता आती ही नहीं है, क्योंकि वह नित्य तो एक रूपही होता है यदि उसमें अर्थक्रियाकारिता मानी जावे तो वह फिर एकरूप नही रह सकता है एकरूप नहीं रह सकनेसे वह नित्य नहीं

જેમકે—"सर्वं वस्तु क्षणिकं सत्त्वात्" સમસ્ત વસ્તુઓ સત્વવિશિષ્ટ હોવાથી ક્ષણિક છે," આ પ્રકારના અનુમાનથી બૌધ્ધે સમસ્ત પદાર્થોની ક્ષણિકતા— ક્ષણભંગુરતાની સિદ્ધિ જે સત્વહેતુ દ્વારા કરી છે, તે હેતુને સાંભળતાં જ કોઇ પણ વ્યક્તિ તે હેતુ દ્વારા પદાર્થોમાં ક્ષણિકતાની પ્રતીતિ જલ્દીથી (તુરત જ) કરી શકતી નથી તેથી જ તેમણે આ પ્રકારે તેની વિશેષ સ્પષ્ટતા કરી છે—"यदेवार्थक्रियाकारि तदेव परमार्थ सत्" "જે અર્થ ક્રિયાકારી હોય છે એ જ પરમાર્થતઃ (સ્વભાવતઃ) સત્ હોય છે જો અર્થ ક્રિયાકારીને સત્ ન માનવામાં આવે તો વંધ્યા પુત્રમાં પણ સત્ત્વ માનવું પડશે એટલે કે વંધ્યાને પુત્ર હોવાની વાત પણ સ્વીકારવી પડશે. તેથી જો આ વાત માની લેવામાં આવે કે "જે અર્થ ક્રિયાકારી હોય છે એ જ પરમાર્થતઃ સત્ રૂપ છે," તો જે સર્વથા નિત્ય પદાર્થ છે કૂટસ્થ નિત્ય છે તેમાં અર્થ ક્રિયાકારિતા સંભવતી જ નથી, કારણ કે તે નિત્ય તો એક રૂપ જ હોય છે. જો તેમાં અર્થક્રિયાકારિતા માનવામાં આવે તો તે એક રૂપ રહી શકતો નથી, અને એક રૂપ નહીં રહી શકવાથી તેને નિત્ય કહી શકાતો નથી, કારણ કે નિત્યનું

मेव। एवं साध्यसाधने कालो यापितो भवतीति कालयापनाकारित्वादयं सत्त्वलक्षणो हेतुर्यापक इति। द्वितीयभेदमाह—'थावए' इति। स्थापयति पक्षं शीघ्रतया अर्थात् प्रसिद्धव्याप्तिकतया समर्थयतेऽति स्थापको हेतुरिति। यथा पर्वतो-

कहा जा सकता है, क्योंकि नित्यका तो लक्षण "अप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकरूपं नित्यं" अप्रच्युत-नाश न हो उत्पन्न न हो और स्थिर रहे वह नित्य है ऐसा कहा गया है इसलिये यह मानना पड़ता है कि अप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकरूपवाले पदार्थमें किसी भी तरहसे न कालकी अपेक्षासे न देशकी अपेक्षासे अर्थ क्रिया होती है अतः नित्यसे भिन्न जो क्षणिक पदार्थ है उसमेंही अर्थ क्रियाकारिता आती है और इसीसे उसीमें सत्त्व व्यवस्थापित होता है इस प्रकारसे सत्त्व और क्षणिकत्वकी व्याप्ति सिद्ध होकर वह सत्त्व, क्षणिकत्वसेही व्याप्त सिद्ध हो जाता है। इस प्रकार कहकर वह बौद्ध अपने अभीष्ट साध्यको सिद्ध करनेमें प्रवृत्त सत्त्व हेतुकी सिद्धि करनेमें समय व्यतीत करता है अतः सत्त्व यह हेतुकाल यापनाकारी होनेसे अपने साध्यकी सिद्धि करानेमें अधिक समयको खर्च करनेवाला होनेसे यापक होता है—

"थावए" जो हेतु अपने साध्यके साथ प्रसिद्ध व्याप्तिवाला होनेसे शीघ्रताके साथ उसका स्थापक होता है समर्थन करनेवाला होता है ऐसा वह हेतु स्थापक हेतु होता है। जैसे-"पर्वतोऽयं वह्निमान् धूम-

લક્ષણ તો આ પ્રમાણે કહ્યું છે—"अप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकरूपं नित्य" તેથી એમ માનવું પડે છે કે "જેનો નાશ નથી અને જેની ઉત્પત્તિ નથી એવા સ્થિર રૂપ વાળા પદાર્થમાં કોઇ પણ રીતે-કાળની અપેક્ષાએ અથવા દેશની અપેક્ષાએ—અર્થક્રિયા હોતી નથી તેથી નિત્યથી ભિન્ન એવો જે ક્ષણિક પદાર્થ છે તેમાં જ અર્થક્રિયાકારિતા સંભવિત છે અને તેથી જ તેમાં સત્ત્વ વ્યવસ્થાપિત થાય છે. આ પ્રકારે સત્ત્વ અને ક્ષણિકત્વની વ્યાપ્તિ સિદ્ધ થઇને સત્ત્વક્ષણિકત્વથી જ વ્યાપ્ત સિદ્ધ થઇ જાય છે. આ પ્રકારે કહીને તે બૌદ્ધ પોતાના અભીષ્ટ સાધ્યને સિદ્ધ કરવામાં—પ્રવૃત્ત સત્ત્વ હેતુની સિદ્ધિ કરવામાં સમય વ્યતીત કરે છે તેથી સત્ત્વરૂપ હેતુ કાળયાપનાકારી હોવાથી પોતાના સાધ્યની સિદ્ધિ કરાવવામાં અધિક સમય વ્યતીત કરનાર હોવાથી યાપક રૂપ હોય છે.

હવે "થાવए" સ્થાપક હેતુનો અર્થ પ્રકટ કરવામાં આવે છે—જે હેતુ પોતાના સાધ્યની સાથે પ્રસિદ્ધ વ્યાપ્તિવાળો હોય છે, અને તે કારણે શીઘ્રતાથી તેનો સ્થાપક અથવા સમર્થન કરનારો હોય છે, એવા હેતુનું નામ

वह्निमान् धूमात्, तथा नित्यानित्यं वस्तु द्रव्यपर्यायतस्तथैव प्रतीयमानत्वात् अनयो प्रतिपादितहेत्वोर्ज्ञातव्याप्तिकतया झटित्येव साध्यस्य समर्थनात् भवति स्थापकत्वमुभयोर्हेत्वोः। यद्वा–कस्मिंश्चिद् धूर्ते परिव्राजके–' लोकमध्यभागे दत्तं बहुफलं भवति, तच्चाहमेव जानामि इति मायया प्रतिग्राममन्यान्यलोकमध्यं प्ररूपयति सति तन्निग्रहाय कश्चिन्मुनिराह–भो परिव्राजक! लोकमध्यभागस्त्वेको

वत्त्वात्, अथवा नित्यानित्यात्मकं वस्तु द्रव्यपर्यायतस्तथैव प्रतीयमानत्वात्" यहां धूम और वह्निकी "यत्र २ धूमस्तत्र तत्र वह्निः" इस रूपसे व्याप्ति प्रसिद्ध है अतः "धूम" हेतु शीघ्रतासे अपने साध्य अग्निका स्थापक होता है इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु द्रव्यकी अपेक्षासे नित्य और पर्यायकी अपेक्षासे अनित्य मानी गई है तो इससे यह बात झटिति स्थापित हो जाती है वस्तु नित्यानित्यात्मक है। अतः ये दोनों हेतु अपने साध्यके शीघ्रतासे गमक होनेके कारण उसे बतानेमें समर्थ होनेसे स्थापक होते हैं।

यद्वा–किसी धूर्त परिव्राजकने मायासे ऐसी प्ररूपणा प्रत्येक ग्राममें हरएक लोकके समक्ष की–कि लोकके मध्य भागमें दिया गया दान बहुत फलवाला होता है इस बातको केवल मैं ही जानता हूं तब उसकी इस प्ररूपणाके निग्रह करनेके निमित्त उससे किसी मुनिने कहा–भो

સ્થાપક હેતુ છે. જેમકે—" पर्वतोऽयं वह्निमान् धूमवत्वात् " અથવા–" नित्यानित्यात्मकं वस्तु द्रव्यपर्यायतस्तथैव प्रतीयमानभात्वात् " અહીં ધુમાડા અને અગ્નિની " જ્યાં જ્યાં ધૂમાડો હોય છે ત્યાં ત્યાં અગ્નિ હોય છે " આ રૂપે વ્યાપ્તિ પ્રસિદ્ધ છે. તેથી ધૂમરૂપ હેતુ પોતાના અગ્નિરૂપ સાધ્યનો શીઘ્રતાથી સ્થાપક બને છે.

એ જ પ્રમાણે પ્રત્યેક વસ્તુ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ નિત્ય અને પર્યાયની અપેક્ષાએ અનિત્ય મનાય છે તેથી એ વાત શીઘ્રતાથી સ્થાપિત થઈ જાય છે કે વસ્તુ નિત્યાનિત્યાત્મક છે. આ બન્ને હેતુ પોતાના સાધ્યને શીઘ્રતાથી ગ્રહણ કરાવનારા હોવાથી તેમને બતાવવામાં સમર્થ હોય છે તે કારણે આ પ્રકારના હેતુને સ્થાપક કહ્યો છે અથવા–કોઈ એક ધૂર્ત પરિવ્રાજકે માયાભાવથી યુક્ત થઈને પ્રત્યેક ગામમા પ્રત્યેક મનુષ્યની સમક્ષ એવી પ્રરૂપણા કરવા માંડી કે " લોકના મધ્ય ભાગમાં અર્પણ કરવામાં આવેલુ દાન મહાફલ પ્રદાન કરનારૂં હોય છે, આ વાત કેવળ હું જ જાણું છું " ત્યારે તેની આ મિથ્યા પ્રરૂપણાને રોકવાને માટે કોઇ મુનિએ તેને આ પ્રમાણે કહ્યુ—" હે પરિવ્રા-

भवति तत् कथं वहुषु ग्रामादिषु तत्संभव, इत्येवं युक्त्या त्वद्दर्शितो लोकमध्यभागो न भवतीति पक्षं स्थापितवानिति स्थापको हेतुः। तृतीयभेदमाह—' वंसए ' इति। व्यंसकः-व्यंसयति परान् व्यामोहयतीति व्यंसको हेतुः यथा—केनचित् प्रयुक्तम् अस्ति जीवोऽस्तिघटः इति स्वीकारे जीवघटयोरस्तित्वं समानरूपतया वर्तते इति जीवघटयोरेकता-प्राप्यते अभिन्नशब्दविषयत्वात्, घटशब्दविषयघटस्वरू-

परिव्राजक। लोकका मध्यभाग तो एकही होता है फिर वह प्रत्येक ग्राममें अलग २ रूपमें कैसे संभवित हो सकता है अतः तुम्हारे द्वारा प्रदर्शित लोक मध्यभाग ठीक नहीं है इस तरहसे उसने अपने पक्षको स्थापित कर लिया इस प्रकारसे अपने पक्षका स्थापन करनेवाला हेतु स्थापक होता है।

" वंसए " जो हेतु परको व्यामोहित कर लेता है-व्यामुग्ध कर देता है-वह व्यंसक हेतु है जैसे-किसीने कहा-" अस्ति जीवः अस्ति घटः " इस पर किसीने कहा यदि जीव और घटमें समान रूपसे अस्तित्व रहता है तो जीव और घटमें एकता प्राप्त होती है, क्योंकि उन दोनोंका अस्तित्व अभिन्न शब्दका विषयभूत होता है अर्थात् जीव और घटमें रहा हुआ अस्तित्व " अस्तित्व " इस एकही शब्दके द्वारा वाच्य होता है जैसे घट शब्दसे घट और घटका स्वरूप वाच्य होता है अतः एक शब्द वाच्य होनेसे घट और घटके स्वरूपमें अभिन्नता

જક। લોકનો મધ્ય ભાગ તો એક જ હોય છે. તો તે પ્રત્યેક ગામમાં અલગ અલગ રૂપે કેવી રીતે સંભવી શકે છે? તે કારણે તમે પ્રત્યેક ગામ લોકના મધ્ય ભાગ રૂપ હોવાની જે પ્રરૂપણા કરો છો તે મિથ્યા છે" આ રીતે તે મુનિએ પોતાની માન્યતાનું પ્રતિપાદન કર્યું. આ પ્રકારે પોતાના પક્ષનું સ્થાપન કરનારો હેતુ સ્થાપક રૂપ હોય છે.

" વંસએ " વ્યંસક હેતુ—જે હેતુ પરને વ્યામોહિત (વ્યામુગ્ધ) કરી નાખે છે તે હેતુનું નામ ' વ્યંસક હેતુ ' છે જેમ કે—કોઈએ એવું કહ્યું કે " अस्ति जीवः अस्ति घटः " " જીવ પણ છે અને ઘટ પણ છે એટલે કે બન્નેનું અસ્તિત્વ છે" ત્યારે કોઇએ એવી દલીલ કરી કે—" જીવ અને ઘડામાં જો સમાન રૂપે અસ્તિત્વ રહેલું હોય તો જીવ અને ઘડામાં એકતા પ્રાપ્ત થાય છે, કારણ કે તે બન્નેનું અસ્તિત્વ અભિન્ન શબ્દને વિષયભૂત હોય છે—એટલે કે જીવ અને ઘડામાં રહેલું અસ્તિત્વ " અસ્તિત્વ " આ એક જ શબ્દ દ્વારા વાચ્ય થાય છે. જેમ ઘટ શબ્દથી ઘટ અને ઘટનું સ્વરૂપ વાચ્ય થાય છે, તે કારણે એક શબ્દવાચ્ય હોવાથી ઘટ અને ઘટના સ્વરૂપમાં અભિન્નતા પ્રાપ્ત

पवत् यदि जीवादौ अस्तिता न स्वीक्रियते तदा जीवादीनामभाव एव स्यात् अस्तित्वाभावात् इति प्रतिवादिनो व्यामोहकरणाद् व्यंसकोय हेतुरिति। कश्चि दन्तरालब्धतित्तिरीयुक्तेन शकटेन नगरं प्रविष्टः। तत्रैकेन धूर्तेन कथितम्-शकटतित्तिरी कथं लभ्यते? तेन ज्ञातम्—'अयं किल शकटस्थितां तित्तिरीं याचत इत्यभिप्रायेण कथितवान्-तर्पणालोडिकयेति। ततो धूर्तः सतित्तिरिकं

आती है इसी प्रकारसे जीव और घटका अस्तित्व भी एक अस्तित्व शब्दसे वाच्य होनेके कारण एकही माना जावेगा और इसकी एकतासे जीव और घटमें भी एकत्व आनेका प्रसङ्ग प्राप्त होगा यदि कहा जावे कि हम जीवादिकमें अस्तित्व स्वीकार नहीं करते हैं तो जीवादिकोंमें अनस्तित्व आनेसे उनका अभावही स्वीकार करना पड़ेगा, अतः इस तरह के कथनसे जो प्रतिवादीका हेतुवादीको व्यामोह उत्पन्न कर देताहै वह हेतु व्यंसक कहा गया है इस पर दूसरा दृष्टान्त इस प्रकारसेभी है- कोई शकटवाहक गाड़ीवान् अपनी गाड़ीको जोतकर किसी दूसरे गाँव जा रहा था रास्तेमें उसने एक तित्तिरी पकड़ कर अपनी गाड़ीमें रखली चलते २ वह किसी नगरमें पहुँच गया वहां किसी एक धूर्तने उससे कहा-इस शकट तित्तिरीका क्या लेते हो? अर्थात् शकट तित्तिरी कितनेमें देते हो? तब उसकी बातको सुनकर शकटवाहकने ऐसा समझा कि यह शकटमें रक्खी हुई इस तित्तिरीको मांग रहा है तब उसने

થાય છે, એ જ પ્રમાણે જીવ અને ઘટનું અસ્તિત્વ પણ એક અસ્તિત્વ શબ્દ દ્વારા વાચ્ય હોવાથી એક જ માનવું પડશે અને તેની એકતાને લીધે જીવ અને ઘટમાં પણ એકત્વ માનવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે. જો એમ કહેવામાં આવે કે અમે જીવાદિકના અસ્તિત્વનો સ્વીકાર કરતા નથી, તો જીવાદિકોમાં અનસ્તિત્વ પ્રાપ્ત થવાને કારણે તેમનો અભાવ જ સ્વીકારવો પડશે." આ પ્રકારના કથન દ્વારા પ્રતિવાદીનો હેતુ વાદીમાં વ્યામોહ ઉત્પન્ન કરી નાખે છે, તેથી તે હેતુને વ્યંસક કહેવામાં આવ્યો છે. આ વાતનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે નીચે પ્રમાણે દૃષ્ટાન્ત આપવામાં આવ્યું છે—કોઈ એક ગાડાવાળો પોતાનું ગાડું જોડીને કોઇ બીજે ગામ જઈ રહ્યો હતો રસ્તામાં તેણે એક તિત્તિરી પકડી. તે તિત્તિરીને પોતાના ગાડામાં મૂકીને તે ત્યાંથી આગળ વધ્યો, અને કોઇ એક નગરમાં આવી પહોંચ્યો. ત્યાં કોઇ એક ધૂર્તે તેને પૂછ્યું. "આ શકટતિત્તિરીને કેટલામાં વેચવાની છે?" (આ દ્વિઅર્થી શબ્દપ્રયોગ છે. (૧) શકટ સાથે તિત્તિરી (૨) શકટમાં રહેલી તિત્તિરી) ત્યારે ગાડાવાળાએ તેને કહ્યુ—આ શકટતિત્તિરી (ગાડામાં રહેલી તિત્તિરી) હું તર્પણા

शकटं ग्रहीतुं प्रवृत्तः। तेनोक्तं मदीयमेतत् शकटम्। धूर्तेनोक्तम्–त्वमेव शकट-तित्तिरीति कथयित्वा दत्तवान् अतोऽहं शकटसहितां तित्तिरीं गृह्णामीति साक्षिण आहूय सतित्तिरीकं शकटं जग्राह। ततो विषण्णः शाकटिक इति शाकटिकव्यामोहकरणादयं व्यंसको हेतुः। चतुर्थभेदमाह–'लूसए' इति। लूपकः–लूपयति खण्डयति धूर्तापादितमनिष्टमिति लूपको हेतुः यथा–स एव शाकटिकोऽन्यधूर्त्तसमीपे गत्वा युक्तिं शिक्षित्वा समागतस्तं धूर्त्तमवादीत्–भोः! तर्हि देहि

कहा इस शकट तित्तिरीको मैं तर्पणालोडिका....(सत्तू)में देता हूं तब वह धूर्त तित्तिरी सहित शकटको लेने लगा, शकटवाहकने कहा–यह तुम क्या करते हो? गाडी तो मेरी है तब धूर्तने कहा–तुमनेही तो "शकटतित्तिरी" ऐसा कहकर इसे तर्पणालोडिकामें देना स्वीकार किया है इसलिये मैं शकट सहित तित्तिरीको लेता हूं तुम नहीं मानो तो इन गवाहोंसे पूछ लो इस प्रकारसे उसने उसकी सतित्तिरीक गाडीको ले लिया तब वह शाकटिक चिन्तित हो गया इस तरहसे शाकटिकको व्यामोह कर देनेके कारण यह व्यंसक हेतु है।

"लूसए" जो हेतु द्वारा धूर्तजन आपादित अनिष्टका खण्डन कर देता है ऐसा वह हेतु लूपक होता है–जैसे जब उस शाकटिककी वह धूर्त्त गाडी ले लेता है तब वह शाकटिक अन्य धूर्त्तोंके पास जाता है और उनसे युक्तिको सीखकर पुनः उस धूर्त्तके पास आता है और

લોડિકામાં (તાવડી કે કડાહી અગર સાથવાને બદલે) વેચું છું" ત્યારે તે ધૂર્ત ગાડા તથા તિત્તિરીને લઇને ચાલવા માંડયો ત્યારે ગાડાવાળાએ તેને કહ્યુ—"આ તમે શું કરો છો? મારી ગાડી શા માટે લઇ જાઓ છો?" પેલા ધૂર્તે જવાબ આપ્યો—"તમે જ શકટતિત્તિરી (ગાડું અને તિત્તિરી) તર્પણાલોડિકાના બદલામાં આપવાની વાત કબુલ કરી છે, તેથી હું શકટ અને તિત્તિરી લઇ જાઉં છું. જો તને મારી વાત માનવામા ન આવતી હોય તો આ બધાં સાક્ષીઓને પૂછીને ખાતરી કરી લે" આ પ્રમાણે તે ધૂર્તે તેના શકટ અને તિત્તિરીને પડાવી લીધાં. તેથી તે ગાડાવાળો ચિન્તિત થઇ ગયો આ પ્રકારે ગાડી વાળાને વ્યામોહિત કરી નાખનારો હોવાને કારણે આ હેતુ વ્યંસકહેતુ રૂપ છે.

"લૂસએ" લૂષક હેતુ—જે હેતુ ધૂર્તજન દ્વારા આપાદિત અનિષ્ટનું ખંડન કરી નાખે છે એવા હેતુને લૂષક હેતુ કહે છે. જેમ કે—

ઉપર્યુક્ત દૃષ્ટાન્તમાં ગાડીવાળાની ગાડી તે ધૂર્ત લઈ જાય છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. ત્યારબાદ તે ગાડીવાળો કોઈ બીજા ધૂર્ત પાસે જઈને ગાડી પાછી મેળવવાની યુક્તિ શીખી લે છે અને ત્યાર બાદ પોતાની ગાડી

मे तर्पणालोडिकामिति। धूर्तेन स्वभार्या प्रोक्ता–अस्मै सक्तूनालोडय देहीति। तां च तथा कुर्वतीं तद्भार्यां गृहीत्वासौ गन्तुं प्रवृत्तोऽवादीच्च धूर्तम्–मदीयेयं भार्या तर्पणमिति सक्तूनालोडयतीति तर्पणालोडिकेति त्वयैव दत्तत्वादिति लूषकोऽयं हेतुः। सचायं जीवघटयोरेकत्वं व्यंसकः स्थापितवान् तत्र लूषको वदति यदि अस्तित्वाविशेषाज्जीवघटयोरेकत्वमापाद्यते तदा सर्वभावानामेवैकत्वं स्यात् यतः सर्वत्रास्तित्ववृत्तेः समानत्वात् नचैवं दृश्यते संभाव्यते वा ततोयं जीव-

कहता है हे भाई लाओ तुम मुझे तर्पणालोडिका दे दो, धूर्त्तने जाकर अपनी भार्या से कहा–तू इसे सक्तू सानकर दे दे। जब वह सक्तु सानने लगी तो यह उस स्त्रीको लेकर चलने लगा और धूर्तसे बोला–यह भार्या मेरी है, क्योंकि तर्पणके निमित्त जो सत्तुको सानती है वह तर्पणालोडिका है तर्पणालोडिकाको तुम्हींने मुझे कीमतमें देना स्वीकार कर लियाहै। इस प्रकारसे यह हेतु लूषकहै व्यंसकने जो जीव और घट में पूर्वोक्त रूपसे एकत्व स्थापित किया है अतः लूषक इस पर उससे कहता है कि यदि अस्तित्वकी अविशेषता लेकर तुम जीव और घटमें एकत्वकी स्थापना करते हो तो सर्व भावोंमेंही एकत्व हो जावेगा क्योंकि सर्व भावोंमें अस्तित्व रहता है परन्तु ऐसी बात न कहीं देखी जाती है और न संभवित ही होती है इस तरहसे जीव घटमें एकताका

લઈ જનાર પેલા ધૂર્ત પાસે જઈને કહે છે કે "ભાઈ, લાઓ મને તર્પણાલોડિકા આપી દો" ત્યારે તે ધૂર્ત તેને પોતાને ઘેર લઇ ગયો અને તેણે પોતાની પત્નીને કહ્યું—"તું કણેક બાંધીને આને તર્પણાલોડિકા દઈ દે" જ્યારે તે કણેક બાંધવા માંડી ત્યારે પેલો ગાડીવાળો તે ધૂર્તની સ્ત્રીને લઈને ચાલતો થયો. જતાં જતાં તેણે તે ધૂર્તને કહ્યુ—" આ મારી ભાર્યા છે. તે તર્પણને નિમિત્તે સત્ત (લોટની કણેક અથવા સાથવો) બાંધતી હતી માટે તે તર્પણાલોડિકા છે. શકટતિત્તરીના બદલામાં મને તર્પણાલોડિકા આપવાની વાત તેં કબૂલ કરી હતી (અહીં તેનો બીજો અર્થ લોઢી કે કડાહી થાય છે). આ પ્રકારનો આ લૂષક હેતુ સમજવો. વ્યંસક હેતુ દ્વારા જીવ અને ઘટમાં પૂર્વોક્ત રૂપે જે એકત્વ સ્થાપિત કરવામા આવ્યું છે તેનું લૂષક હેતુ દ્વારા આ પ્રમાણે ખંડન કરાય છે જો અસ્તિત્વની અવિશેષતા (સમાનતા) ને લીધે તમે જીવ અને ઘટમાં એકત્વની સ્થાપના કરતા હો, તો સર્વ ભાવોમાં પણ એકત્વ માનવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે, કારણ કે સર્વ ભાવોમાં અસ્તિત્વ રહે છે પરન્તુ એવું કદી જોવામાં પણ આવતું નથી અને એવુ એકત્વ સંભવિત પણ હોતું નથી. આ પ્રકારે જીવ અને ઘટમા એકતાનું

घटयोरेकत्वापादनरूपस्याभावापत्तिरूपस्य वा परापादितानिष्टस्यानेन लूपितत्वात् लूपको हेतु र्भवतीति ।

पुनर्हेतोश्चातुर्विध्यमाह—' अहवा हेऊ चउव्विहे ' इत्यादि । अथवा हेतुश्चतुर्विध इत्यत्र अथवाशब्दो हेतोः प्रकारान्तरद्योतकस्ततः–' अथवा हेतुश्चतुर्विधः ' इति । हिनोति गमयति पदार्थमिति हेतुः, हीयतेऽधिगम्यते पदार्थोऽनेनेति हेतुः पदार्थावगमं प्रति प्रमाणमिति । स चतुर्विधः प्रत्यक्षानुमानौपम्यागमभेदात् । तत्र प्रथमं भेदमाह-' पच्चक्खे ' इत्यादि । प्रत्यक्षम्-अश्नुते व्याप्नोत्यर्थानिति अक्षः=आत्मा तं प्रति यद्वर्तते ज्ञानं तत्प्रत्यक्षम्–निश्चयनयतोऽवधिमनःपर्ययकेवलज्ञा-

---

आपादन करनेवाला अथवा अभावकी आपत्ति प्रकट करनेवाला जो परोक्त अनिष्ट है उसको यह लूषित कर देता है-हटा देता है इसलिये यह लूषक हेतु है

अब अन्य प्रकारसेभी हेतुकी चतुष्प्रकारता प्रकट करनेके लिये सूत्रकार कहते हैं।

"अहवा हेऊ चउव्विहे" इत्यादि–यहां अथवा शब्द, प्रकारान्तरका द्योतक है, जो पदार्थका गमक (बोधक) होता है अथवा पदार्थ जिसके द्वारा जाना जाता है वह हेतु है। यह हेतु पदार्थके जाननेमें प्रमाणरूप होताहै। प्रत्यक्षअनुमानउपमान और आगमके भेदसे यह प्रमाणरूप हेतु चार प्रकारकाहै इनमें "पच्चक्खे" प्रत्यक्ष प्रमाणका स्वरूप ऐसाहै जो ज्ञान अक्ष-आत्माकी प्रति–सहायतासे उत्पन्न होता है इन्द्रियादिकोंकी सहायतासे नहीं वह प्रत्यक्षहै ऐसे प्रत्यक्ष अवधि, मनःपर्यय, केवलज्ञान ये

આપાદન કરનારું અથવા અભાવની આપત્તિ પ્રકટકરનારું જે પરોક્ત અનિષ્ટ છે તેને આ પ્રકારનો હેતુ લૂષિત કરી નાખે છે દૂર કરી નાખે છે, તેથી આ પ્રકારના હેતુને લૂષક હેતુ કહે છે

હવે સૂત્રકાર હેતુના બીજી રીતે પણ ચાર પ્રકાર પ્રકટ કરે છે— " अहवा हेऊ चउव्विहे " ઈત્યાદિ—અહીં " અથવા " પદ પ્રકારાન્તરનું દ્યોતક છે. પદાર્થનો જેના દ્વારા બોધ થાય છે તેનું નામ હેતુ છે. આ હેતુ પદાર્થને જાણવામાં પ્રમાણ રૂપ હોય છે. આ પ્રમાણ રૂપ હેતુના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર છે. (૧) પ્રત્યક્ષ, (૨) અનુમાન, (૩) ઉપમાન અને (૪) આગમ.

" पच्चक्खे "—પ્રત્યક્ષ પ્રમાણનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે. જે બોધ) અક્ષ-આત્માની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે. ઇન્દ્રિયોની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થતો નથી, તેને પ્રત્યક્ષ કહે છે. એવા પ્રત્યક્ષ અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યયજ્ઞાન અને

नात्मकम् । अथवा अक्षाणि=इन्द्रियाणि, तानि प्रति वर्तते यत् तत्प्रत्यक्षम् व्यवहारतश्चक्षुरादिजनितं ज्ञानम् । लक्षण पुनरिदं तस्य—

" अपरोक्षतयार्थस्य, ग्राहकं ज्ञानमीदृशम् ।
प्रत्यक्षमितरत् ज्ञेयं, परोक्षं ग्रहणेक्षया " ॥ १ ॥

ग्रहणेक्षया=ग्रहणापेक्षयेत्यर्थः । द्वितीयभेदमाह-' अणुमाणे ' इति । अनुमानम्–अनु=पश्चात् लिङ्गदर्शनव्याप्तिस्मरणयोः पश्चात् मानं=ज्ञानमनुमानम् । लक्षणमिदम्—

तीन ज्ञान है इनमें प्रत्यक्षताका यह कथन निश्चय नयकी अपेक्षासे है व्यवहार नयकी अपेक्षासे तो जो ज्ञान अक्ष इन्द्रियोंकी प्रति-सहायतासे उत्पन्न होता है वह प्रत्यक्ष है ऐसा प्रत्यक्षज्ञान मतिज्ञान और श्रुतज्ञान है प्रत्यक्षका लक्षण इस प्रकारसे कहा गया है—

" अपरोक्षतयाऽर्थस्य " इत्यादि । जो स्पष्ट रूपसे सर्वथा विशद्-रूपसे अर्थका ग्राहक होता है वह ज्ञान प्रत्यक्ष है तथा जो ज्ञान स्पष्ट-रूपसे पदार्थका ग्राहक नहीं होता है वह परोक्ष है इस गाथाका तात्पर्य ऐसा है मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, और केवल-ज्ञान इस प्रकारसे ज्ञानके पांच भेद माने गये हैं । इनमें आदिके दो ज्ञान परोक्ष हैं और बाकीके ३ ज्ञान प्रत्यक्ष हैं । प्रत्यक्षके भी सकल प्रत्यक्ष और विकल प्रत्यक्षके भेदसे दो भेद हैं अवधि मनःपर्यय ये दो देश प्रत्यक्ष हैं और केवलज्ञान सकल प्रत्यक्ष हैं मतिज्ञान और श्रुत-ज्ञानको सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष माना गया है वैसे तो ये परोक्ष हैं।

કેવળજ્ઞાન છે. તેમને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ પ્રત્યક્ષ કહ્યા છે, વ્યવહાર નયની અપેક્ષાએ તો જે જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે તેને પ્રત્યક્ષ કહે છે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન આ પ્રકારના પ્રત્યક્ષ છે. પ્રત્યક્ષનું લક્ષણ આ પ્રમાણે કહ્યુ છે—

" अपरोक्षतयाऽर्थस्य " ઇત્યાદિ—જે સ્પષ્ટ રૂપે—સર્વથા વિશદ રૂપે અર્થનું ગ્રાહક હોય છે તે જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ ગણાય છે, તથા જે જ્ઞાન સ્પષ્ટ રૂપે પદાર્થનું ગ્રાહક હોતું નથી તેને પરોક્ષ કહે છે આ ગાથાનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જ્ઞાનના પાંચ ભેદ કહ્યા છે. મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મન પર્યયજ્ઞાન અને કેવળજ્ઞાન તેમાંથી મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન પરોક્ષ છે અને બાકીનાં ત્રણ જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ છે. પ્રત્યક્ષના પણ બે ભેદ છે—(૧) સકલ પ્રત્યક્ષ અને (૨) વિકલપ્રત્યક્ષ અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યયજ્ઞાન વિકલ પ્રત્યક્ષ (દેશ પ્રત્યક્ષ) છે અને કેવળજ્ઞાન સકલ પ્રત્યક્ષ છે. મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન પરોક્ષ હોવા છતાં તે બન્નેને સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ માનવામાં આવ્યા

" साध्याविनाभुवो लिंगात्, साध्यनिश्चायकं स्मृतम् ।
अनुमानं तदभ्रान्तं प्रमाणत्वात् समक्षवत् " ॥ १ ॥

इति । एतादृशं ज्ञान हेतुजनितमित्युपचाराद्धेतुरेवानुमानम् ।

तृतीयभेदमाह–' ओवम्मे ' इति । औपम्यम्–उपमा=सादृश्यं तत्साधनमौपम्यम् । अनेन गवयेन सदृशोऽसौ गौरिति सादृश्यप्रतिपत्तिरूपम्, तथोक्तम्–

" गां दृष्ट्वाऽयमरण्येऽन्यं, गवयं वीक्षते यदा ।
भूयोऽवयवसामान्य भाजं वर्तुलकण्ठकम् ॥१॥
तस्यामेवत्ववस्थायां, यद्विज्ञानं मवर्तते ।
पशुनैतेन तुल्योऽसौ, गोपिण्ड इति सोपमा ॥ २ ॥ "

" अणुमाणे " लिङ्ग दर्शन और व्याप्तिके स्मरणके पश्चात् जो ज्ञान होता है वह अनुमान है। इस अनुमानका ऐसा लक्षण कहाहै " साध्याविनाभुवो लिङ्गात् इत्यादि। साध्यके साथ अविनाभावी लिङ्ग से जो साध्यका निश्चायक ज्ञान होता है, वह अनुमानहै यह अनुमान अभ्रान्त होनेसे समक्ष-प्रत्यक्षकी तरह प्रमाण माना गया है, अनुमान ज्ञान यद्यपि हेतुसे जनित होता है परन्तु उसे जो यहां हेतुरूप कहा गया है वह उपचारसे कहा गया है

" ओवम्मे " गवय (रोझ) के समान यह गाय है ऐसी सादृश्य प्रतिपत्ति–समानताका ज्ञान जिससे होता है वह उपमान प्रमाण है सो ही कहा है ।

" गां दृष्ट्वाऽयमरण्ये " इत्यादि । कोई मनुष्य गायको देखकर जंगलमें गया, वहां उसने 'गवय'रोझको देखा, तो देखकर उसने विचार

છે. " अणुमाणे " અનુમાન–લિંગદર્શન (લક્ષણનું દર્શન) અને વ્યાપ્તિના સ્મરણ બાદ જે જ્ઞાન થાય છે તેનું નામ અનુમાન છે. તે અનુમાનનું નીચે પ્રમાણે લક્ષણ કહ્યું છે—" साध्याविनाभुवो लिङ्गात्" ઇત્યાદિ—સાધ્યની સાથે અવિનાભાવી લિંગથી જે સાધ્યનું નિશ્ચયાત્મક જ્ઞાન થાય છે તે અનુમાન છે. આ અનુમાન અભ્રાન્ત હોવાથી સમક્ષ જોઇલે પ્રત્યક્ષની જેમ પ્રમાણભૂત માનવામાં આવ્યું છે, અનુમાન જ્ઞાન જો કે હેતુજનિત હોય છે, પરન્તુ તેનેઅહીં જે હેતુરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે તે ઉપચારની અપેક્ષાએ–ઔપચારિક રીતે કહ્યું છે

" ओवम्मे " ઉપમાનપ્રમાણ—" આ ગાય રોઝ જેવી છે " એવી સાદૃશ્ય પ્રતિપત્તિ–સમાનતાનું જ્ઞાન જેના દ્વારા થાય છે તે પ્રમાણને ઉપમાન પ્રમાણ કહે છે. એ જ વાત " गां दृष्ट्वाऽयमरण्ये " ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરી છે. કોઇ એક માણસ ગાયને જોઈને જંગલમાં ગયો. ત્યાં તેણે

चतुर्थभेदमाह-'आगमे' इति, आगमः-आगम्यन्ते निर्णीयन्ते पदार्था अनेनेत्यागमः आप्तवचनसंपादितं विप्रकृष्टार्थविषयकं ज्ञानम्।
तदुक्तम्-"दृष्टेष्टाव्याहताद्वाक्यात्परमार्थाभिधायिनः।
तस्य ग्राहितयोत्पन्नं ज्ञानं शाब्दं प्रकीर्तितम्" ॥ १ ॥
आप्तोपज्ञमनुल्लङ्घ्य मदृष्टेष्टविरोधकम्।
तत्त्वोपदेशकृत्सार्वं शास्त्रं कापथघट्टनम् ॥ २ ॥ इति ४।
'कापथघट्टन'-मिति कुपथव्यावर्त्तकमित्यर्थः'

किया जैसे-गायके अवयव हैं उसका कण्ठ गोल है, इसी तरहसे इसके भी हैं इस तरहसे अवयवोंकी समानतावाले वर्तुल कण्ठवाले उस रोझको देखकर यह ऐसा ज्ञान कर लेता है कि इस पशुके तुल्य गोपिण्ड है, इस तरहका जो उस मनुष्यको ज्ञान हुआहै वह उपमान है

"आगमे" पदार्थों का निर्णय जिससे किया जाता है वह आगम है यह ऐसी आगम शब्दकी व्युत्पत्ति है तात्पर्य इससे यही निकलता है कि "आप्तवचनादिनिबन्धनमर्थज्ञानमागमः" आप्तके वचनसे उत्पन्न हुआ जो विप्रकृष्टार्थका सूक्ष्म अन्तरित और दूरार्थका ज्ञान है वह आगम है।

तदुक्तम्—"दृष्टेष्टाव्याहताद्वाक्यात्" इत्यादि। जिसके वचनमें दृष्ट और इष्ट प्रमाणसे-प्रत्यक्ष और अनुमान प्रमाणसे बाधा नहीं आती है और जो पदार्थका स्वरूप जैसा है, वैसाही उसे कथन करता

કોઇ એક રોઝ જોયુ તેને જોઈને તેના મનમાં એવો વિચાર થયો કે—"જેવાં ગાયનાં અવયવો છે, એવાં જ આ રોઝના અવયવો છે. ગાયની જેમ રોઝનો કંઠ પણ વર્તુળાકાર છે" આ પ્રકારે અવયવોની સમાનતાવાળા અને વર્તુલાકાર કંઠવાળા તે રોઝને જોઈને તેને એવું ભાન થાય છે કે આ પશુ સમાન ગોપિંડ છે. આ પ્રકારનુ તે મનુષ્યને જે જ્ઞાન થાય છે તે ઉપમાન રૂપ છે.

"आगमे" પદાર્થનો નિર્ણય જેના દ્વારા કરવામાં આવે છે તે આગમ છે," એવી આગમ પદની વ્યુત્પત્તિ થાય છે. તેનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—"आप्तवचनादिनिबन्धनमर्थज्ञानमागमः" આપ્તપુરુષોના (અર્હંત કેવલીના) વચન દ્વારા ઉત્પન્ન થયેલું જે વિપ્રકૃષ્ટાર્થનું સૂક્ષ્મ અન્તરિત અને દૂરાર્થનું જ્ઞાન છે, તે આગમ છે કહ્યુ પણ છે કે—"दृष्टेष्टाव्याहताद्वाक्यात्" ઇત્યાદિ—જેમનાં વચનમાં દષ્ટ અને ઇષ્ટ પ્રમાણથી-પ્રત્યક્ષ અને અનુમાન પ્રમાણથી-કોઇ બાધા (વાંધો) નડતી નથી, અને જે પદાર્થના સ્વરૂપને જેવું

पुनरपि हेतोश्चातुर्विध्यमाह—'अहवा हेऊ चउव्विहे' इत्यादि। अत्रत्वन्यथानुपपन्नत्वलक्षणहेतुजन्यत्वादनुमानमेव कार्ये कारणोपचारात् हेतुः। स चतुर्विधः चतुर्भंगीरूपत्वात्। तत्र प्रथमं भेदमाह—'अत्थित्तं अत्थि सो हेऊ' इति।

है ऐसे आप्त पुरुषके वचनसे उत्पन्न हुआ जो यथार्थ ज्ञान है वह शाब्द आगम ज्ञान है। यह आगम वीतराग सर्वज्ञ और हितोपदेशीसे प्रणीत होता है वादी प्रतिवादी इसका खण्डन नहीं कर सकते हैं। प्रत्यक्ष और अनुमान इनमेंसे किसीभी प्रमाणसे इसमें बाधा नहीं आती है वस्तुके यथार्थ स्वरूपका यह प्रतिपादक होता है सब जीवोंका हित साधक होता है और मिथ्यामतरूप जो कुपथ उससे दूर करानेवाला होता है।

"अहवा-हेऊचउव्विहे" यहां अन्यथानुपपत्ति लक्षणवाले हेतुसे उत्पन्न होनेके कारण अनुमानही कार्यमें कारणके उपचारसे हेतु कहा गया है तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि अनुमान जो होता है वह अन्यथानुपपत्ति लक्षणवाले हेतुसे उत्पन्न होताहै, अतः इस अनुमानका कारण अन्यथानुपपत्ति लक्षणवाला हेतु है, परन्तु यहां पर जो अनुमान रूप कार्यको हेतुरूपसे कहा गया है वह कार्यमें अनुमानमें कारणका अन्यथानुपपत्ति लक्षणवाले हेतुका आरोप कर लिया गया है, इसलिये

છે એવું જ પ્રકટ કરે છે એવાં આપ્ત પુરુષના વચનથી ઉત્પન્ન થયેલું જે યથાર્થ જ્ઞાન છે તેને આગમ જ્ઞાન કહે છે. આ આગમ વીતરાગ સર્વજ્ઞ અને હિતોપદેશી દ્વારા પ્રણીત હોય છે, વાદી પ્રતીવાદી તેનુ ખંડન કરી શકતા નથી. પ્રત્યક્ષ કે અનુમાન પ્રમાણુ દ્વારા પણુ તેમાં કોઇ પણુ બાધા આવતી નથી, તે પદાર્થના યથાર્થ સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરનારુ છે, સમસ્ત જીવોનું હિતસાધક હોય છે અને મિથ્યામત રૂપ જે કુપથ છે તેનાથી દૂર કરાવનારુ હોય છે.

"अहवा-हेऊ चउव्विहे" અહીં અન્યથા અનુપપત્તિ લક્ષણુવાળા હેતુ વડે ઉત્પન્ન હોવાને કારણે અનુમાન જ કાર્યમાં કારણુના ઉપચારથી હેતુ રૂપ કહ્યુ છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—જે અનુમાન થાય છે તે અન્યથાનુપપત્તિ (બીજી રીતે સાધ્ય વગર ઉત્પત્તિનો અભાવ) લક્ષણુવાળું હોય છે તેથી આ અનુમાનનું કારણુ અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણુવાળો હેતુ છે, પરન્તુ અહીં અનુમાન રૂપ કાર્યને જે હેતુરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે, તે કાર્યમાં—અનુમાનમાં કારણુના અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણુવાળા હેતુનું આરોપણુ કરીને કહેવામાં આવ્યું છે તે કારણે તેને હેતુ રૂપ કહેવામાં આવ્યું છે એવો આ અનુમાન રૂપ હેતુ ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે—તેમાં પહેલો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—"अस्ति तत्

अस्ति विद्यते तदिति लिङ्गभूतं धूमादिवस्तु इति कृत्वा अस्ति वह्नयादिरूपः साध्योऽर्थ इत्येवं हेतुरित्यनुमानम् १। द्वितीयभेदमाह—अत्थित्तं नत्थि सो हेऊ 'इति। अस्तित्वं नास्ति स हेतुरिति। अस्तिवह्निरूपं वस्तु तस्मान्नास्ति वह्निविरुद्धः शीतादिरर्थ इत्यपि हेतुरनुमानम् २। तृतीयभेदमाह—'नत्थित्तं अत्थि सो हेऊ' इति, नास्तित्वमस्ति सो हेतुः, तथा नास्तिवह्नयादिकोऽर्थः अत शीतकाले विद्यते शीतादिरर्थ इत्ययमपि हेतुरनुमानम् ३। चतुर्थभेदमाह—'नत्थित्तं नत्थि सो हेऊ' इति, नास्तित्वं नास्ति स हेतुरिति। तथा नास्ति वृक्षरूपोऽर्थ इति नास्ति शिंशपारूपोप्यर्थः इत्ययमपि हेतुरनुमानमिति ४। ॥ सू० ४१ ॥

उसे हेतु कह दिया गया है ऐसा यह अनुमान रूप हेतु चार प्रकारका है—इनमें प्रथम प्रकार " अस्ति तत् अस्त्यसौ " ऐसा है—इसका तात्पर्य ऐसा है कि एक अनुमान ऐसा हो. साधनके होने पर वह्न्यादि रूप साध्यवाला होता है १ द्वितीय प्रकार " अस्ति तत् नास्त्यसौ " ऐसा होता है इसका भाव ऐसा है कि वह्निरूप वस्तुके होने पर वह्नि विरुद्ध शीतादि स्पर्शवाला नहीं होता है २ तृतीय प्रकार—" नास्तित्वं अस्त्यसौ " ऐसा होता है इसका भाव ऐसा है कि वह्निके अभावमें शीतादि स्पर्शवाला होता है और चतुर्थ प्रकार—" नत्थि तं नत्थि " ऐसा होता है इसका भाव ऐसा है कि जहां वृक्षरूप अर्थका अभाव होता है वहां शिंशपारूप अर्थका भी अभाव होता है इस तरहसे ये सब हेतु अनुमानरूप होते हैं। तात्पर्य इसका ऐसाहै—" पर्वतोऽयं वह्निमान् धूमवत्वात् " यहां धूमवत्त्व हेतु प्रथम प्रकारवाला है " अत्र शीत-

---

अस्त्यसौ" એટલે કે એક અનુમાન એવું હોય છે કે જે સાધનના સદ્‌ભાવમાં વહ્નિ આદિ રૂપ સાધ્ય વાળું હોય છે એટલે કે " ધુમાડા રૂપ સાધનનો સદ્‌ભાવ હોય તો અગ્નિનો પણ સદ્‌ભાવ હોય છે, " આ પ્રકારના અર્થનું પ્રતિપાદન કરનારું હોય છે બીજો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—" अस्ति तत् नास्त्यसौ " એટલે કે વહ્નિરૂપ વસ્તુના સદ્‌ભાવમાં વહ્નિવિરૂદ્ધ શીતાદિ સ્પર્શવાળું હોતું નથી.

ત્રીજો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—" नास्तित्वं अस्त्यसौ " એટલે કે વહ્નિના અભાવે શીતાદિ સ્પર્શવાળું હોય છે

ચોથો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—" नत्थि तं नत्थि " છે. એટલે કે જ્યાં વૃક્ષ રૂપ પદાર્થનો અભાવ હોય છે ત્યાં શિંશપારૂપ (શીસમરૂપ) અર્થનો પણ અભાવ હોય છે " આ પ્રમાણે આ બધા હેતુ અનુમાન રૂપ હોય છે. આ સમસ્ત કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-" पर्वतोऽयं वह्निमान् धूमवत्वात् " અહીં ધૂમાડાના સદ્‌ભાવ રૂપ હેતુ પ્રથમ પ્રકારવાળો છે " अत्र शीतस्पर्शो

मूलम्—चउव्विहे संखाणे पण्णत्ते, तं जहा--पडिकम्मं १, ववहारे २, रज्जू ३, रासी ४। सू० ४२ ॥

छाया—चतुर्विधं संख्यानं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–परिकर्म १, व्यवहारः २, रज्जुः ३, राशिः ४। ॥ सू० ४२ ॥

टीका—" चउव्विहे संखाणे " इत्यादि—संख्यानं–संख्यायते–गण्यतेऽनेनेति संख्यानं=गणितं, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–परिकर्म–संकलनव्यवकलन-योजन–विभजनादिरूपं पाटीप्रसिद्धम् १, तथा–व्यवहारः–मिश्रकव्यवहारादिरनेकविधः २, तथा–रज्जुः–रश्मिः, तत्कृतगणितं=क्षेत्रगणितम् ३। तथा–राशिः–त्रैराशिक–पञ्चराशिकादिगणितमिति ४। ॥ सू० ४२ ॥

स्पर्शो नास्ति अग्नि सद्भावत् " यह अग्नि सद्भावरूप हेतु द्वितीय प्रकारवाला है " अत्र अग्निर्नास्ति शीतस्पर्शसद्भावात् " यह अनुमान तृतीय प्रकारवाला है और " नास्त्यत्र शिंशपा वृक्षाभावात् " यह चतुर्थ प्रकारवाला है यह केवल कथनकीही विचित्रता है वैसे तो अविनाभावी साधनसे जो भी साध्यका ज्ञान होता है वह सब अनुमान रूप ही है ॥सू०४१॥

'चउव्विहे संखाणे पण्णत्ते, इत्यादि' सूत्र ४२ ॥

जिससे गिना जाता है वह संख्यान गणित है यह संख्यान रूप गणित चार प्रकारकाहै, संकलन १, व्यवकलन २, योजन ३ विभजन ४ आदि रूप पाटी प्रसिद्ध गणित परिकर्महै, संकलन नाम गुणा करनेकाहै, बांकी करनेका नाम व्यवकलन है जोडका नाम योजन है और भागाकारका

नास्ति अग्निसद्भावात् " આ અગ્નિ સદ્ભાવ રૂપ હેતુ બીજા પ્રકરવાળે। છે. " अत्र अग्निर्नास्ति शीतस्पर्शसद्भावात् " આ અનુમાન ત્રીજા પ્રકારવાળું છે, અને " नास्त्यत्र शिंशपा वृक्षाभावात " આ ચોથા પ્રકારવાળું અનુમાન છે આ તે। કેવળ કથનની જ વિચિત્રતા (વિવિધતા) છે. આમ તે। અવિનાભાવી સાધન વડે જે કોઇ સાધ્યનું જ્ઞાન થાય છે તે બધાં અનુમાન રૂપ જ હોય છે ॥ સૂ. ૪૧ ॥

" चउविहे संखाणे पण्णत्ते " ઇત્યાદિ—(સૂ. ૪૨) જેમાં ગણતરી કરવામાં આવે છે તેનું નામ સંખ્યાન–ગણિત છે. તે સંખ્યાન રૂપ ગણિત ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે—(૧) સંકલન, (૨) વ્યવકલન, (૩) યોજન અને (૪) વિભજન. આ ચાર પ્રકારનું ગણિત પરિકર્મ છે. સંકલન એટલે ગુણાકાર, વ્યવકલન એટલે બાદબાકી, યોજન એટલે સરવાળો અને વિભજન એટલે ભાગાકાર મિશ્ર વ્યવહાર આદિ અનેક પ્રકારનું વ્યવહાર ગણિત છે. માપ-

अनन्तरं रज्जुपदेन क्षेत्रगणितमुक्तमिति क्षेत्रसम्बन्धाल्लोकलक्षणक्षेत्रस्य त्रिधा विभक्तस्यान्धकारोद्योतावाश्रित्य सूत्रत्रयेण निरूपणामाह—

मूलम्—अहोलोगे णं चत्तारि अंधगारं करेंति, तं जहा-नरगा १, णेरया २, पावाइं कम्माइं ३, असुभा पोग्गला ४। (१)

तिरियलोगे णं चत्तारि उज्जोयं करेंति, तं जहा--चंदा १, सूरा २, मणी ३, जोई ४। (२)

उड्ढलोगे चत्तारि उज्जोयं करेंति, तं जहा--देवा १, देवीओ २, विमाणा ३, आभरणा ४। (३) ॥ सू० ४३ ॥

छाया—अधोलोके खलु चत्वारि अन्धकारं कुर्वन्ति, तद्यथा-नरकाः १, नैरयिकाः २, पापानि कर्माणि ३, अशुभाः पुद्गलाः ४। (१)

तिर्यग्लोके खलु चत्वारि उद्द्योतं कुर्वन्ति, तद्यथा-चन्द्राः १, सूर्याः २, मणयः ३, ज्योतिः ४। (२)।

ऊर्ध्वलोके खलु चत्वारि उद्द्योतं कुर्वन्ति, तद्यथा-देवाः १, देव्यः २, विमानानि ३, आभरणानि ४। (३) ॥ सू० ४३ ॥

टीका—" अहोलोगे णं " इत्यादि-अधोलोके-अधोऽवस्थितलोके 'खलु'-वाक्यालङ्कारे, चत्वारि वस्तूनि अनुपदं वक्ष्यमाणानि अन्धकारं कुर्वन्ति, तद्यथा—

नाम विभजन है। मिश्र व्यवहार आदि अनेक प्रकारका व्यवहार गणित है रस्सी आदिसे नापने रूप जो गणित है वह रज्जु गणित है तथा त्रैराशिक एवं पञ्चराशिक आदि रूप जो गणित है वह राशि गणित है।सू०४२॥

रज्जुपदसे जो क्षेत्र गणित कहा गया है सो क्षेत्रके सम्बन्धसे तीन प्रकारसे विभक्त लोकरूप क्षेत्रके अन्धकार और उद्योतको लेकर अब सूत्रकार तीन सूत्रोंसे निरूपण करते हैं—

પટ્ટી આદિ વડે માપવા રૂપ જે ગણિત છે તેનું નામ રજ્જુ ગણિત છે. ત્રૈરાશિક, પંચરાશિક આદિ રૂપ જે ગણિત છે તેનું નામ રાશિગણિત છે ।।સૂ.૪૨।।

રજ્જુપદ દ્વારા જે ક્ષેત્ર ગણિતનું કથન કરવામાં આવ્યું છે, તે ક્ષેત્રના સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર ત્રણે લોકરૂપ ક્ષેત્રના અંધકાર અને ઉદ્યોતનું નિરૂપણ કરવા નિમિત્તે ત્રણે સૂત્રોનું કથન કરે છે—

नरकाः-नरकाऽऽवासाः १, तथा-नैरयिकाः=निरयेभवास्तथा-नारका जीवाः, ते च कृष्णरूपत्वादन्धकारं कुर्वन्ति २, तथा-पापानि-पापजनकानि-कर्माणि-ज्ञानाऽऽवरणीयादीनि अष्टौ मिथ्यात्वाज्ञानरूपभावान्धकारजनकत्वादन्धकारं कुर्वन्ति ३। तथा-अशुभाः=अप्रशस्ताः पुद्गलाः-अन्धकारतया परिणताः सन्तोऽन्धकारं कुर्वन्ति । पुद्गललक्षणं च—

" सद्दंधयारउज्जोओ पहा छायाऽऽतवेइ वा ।
वन्नगंधरसा फासा पुग्गलाणं तु लक्खणं ॥१॥ "

छाया—" शब्दोऽन्धकार उद्योतः प्रभा छायाऽऽतपो वा ।
वर्ण-गन्ध-रसाः स्पर्शाः पुद्गलानां तु लक्षणम् ।१। इति, एभिर्लक्षणैः पुद्गला लक्ष्यन्ते । (१)

"अहो लोगे णं चत्तारि इत्यादि" सूत्र ४३ ॥

अधोलोकमें ये चार वस्तुएँ अन्धकार करती हैं जैसे-नरक नरकावास १ नैरयिक-निरयमें रहे हुए नारक जीव २ पापकर्म ज्ञानावरणीय आदि पापजनक कर्म ३ और अशुभ पुद्गल-अप्रशस्त पुद्गल ४ इनमें नारक जीव कृष्ण स्वरूप होनेसे अन्धकार करते हैं तथा ज्ञानावरणीय आदि आठ पापकर्म मिथ्यात्व अज्ञान रूप भावान्धकारके जनक होनेसे अन्धकार करते हैं और जो अप्रशस्त पुद्गल होते हैं वे अन्धकार रूपसे परिणत होते हुए अन्धकारको करते हैं पुद्गलका लक्षण इस प्रकारसे है-"सद्धयारउज्जोओ " इत्यादि । शब्द अन्धकार उद्योत प्रभा छाया और आतप ये सब पुद्गल द्रव्यकी पर्याय हैं क्योंकि रूप गंध रस और स्पर्श इन गुणोंवाला पुद्गल होता है अतः इन पर्यायोंमें ये सब गुण पाये जाते हैं ।

" अहो लोगेणं चत्तारि " ઈત્યાદિ—(સૂ ૪૩) અધોલોકમાં આ ચાર વસ્તુઓ અંધકાર કરે છે (૧) નરક નરકાવાસ, (૨) નૈરયિક-નરકમાં રહેલા નારક જીવો, (૩) પાપકર્મ-જ્ઞાનાવરણીય આદિ પાપજનક કર્મ અને (૪) અશુભ પુદ્ગલ-અપ્રશસ્ત પુદ્ગલો નારક જીવો કૃષ્ણવર્ણવાળા હોવાને કારણે અંધકાર કરે છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પાપકર્મ મિથ્યાત્વ અજ્ઞાન રૂપ ભાવાન્ધકારના જનક હોવાથી અંધકાર કરે છે. અને જે અપ્રશસ્ત પુદ્ગલો હોય છે તેઓ અંધકાર રૂપે પરિણમિત થઈને અંધકાર કરે છે. પુદ્ગલનું લક્ષણ નીચે પ્રમાણે છે-" સદ્ધયાર ઉજ્જોઓ " ઈત્યાદિ—શબ્દ, અન્ધકાર, પ્રભા, છાયા અને આતપ, આ પુદ્ગલદ્રવ્યની પર્યાયો છે, કારણ કે પુદ્ગલ રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શ, આ ગુણોથી યુક્ત હોય છે. તેથી આ પર્યાયોમાં એ બધાં ગુણો હોય છે.

"तिरियलोगे णं" इत्यादि-तिर्यग्लोके 'खलु' प्राग्वत्, चत्वारि वस्तूनि उद्द्योतं-प्रकाशं कुर्वन्ति, तद्यथा-चन्द्राः १, सूर्याः २, मणयः चन्द्रकान्त-सूर्यकान्तादयः ३, ज्योतिः-वह्निः ४ एते चत्वारस्तिर्यग्लोकप्रकाशं कुर्वन्ति, अन्धकारनाशकत्वात्। (२)

"उड्ढलोगे णं" इत्यादि—ऊर्ध्वलोके चत्वारि वस्तूनि उद्द्योतं=प्रकाशं कुर्वन्ति, तद्यथा-देवाः, तैजसशरीरत्वात्, तथा देव्यश्च प्रकाशं कुर्वन्ति, तथा-विमानानि-सौधर्मेशानादीनां देवानां, तथा-आभरणानि-मणिरचितालङ्काराः, एतानि चत्वारि वस्तूनि ऊर्ध्वलोके प्रकाशं कुर्वन्ति ॥ सू० ४३ ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक - श्रीशाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्मचारि- जैनाचार्य-- जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री -- घासीलालव्रतिविरचितायां 'स्थानाङ्गसूत्रस्य' सुधाख्यायां व्याख्यायां चतुर्थस्थानस्य तृतीयोद्देशः समाप्तः ॥४-३॥

"तिरियलोगेणं" इत्यादि-तिर्यग्लोकमें ये चार वस्तुए प्रकाश करती हैं जैसे-चन्द्रमा १ सूर्य २ चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त आदि मणि ३ और ज्योति अग्नि४ ये सब अन्धकारनाशकहैं इसलिये ये तिर्यग्लोकमें प्रकाश प्रदान करती हैं।

"उड्ढलोगेणं" इत्यादि-ऊर्ध्वलोकमें ये चार वस्तुएँ प्रकाश करती हैं जैसे तैजस शरीरवाले होनेसे देव १ देवियां २ सौधर्म ईशान आदि देवोंके विमान और मणिरचित अलङ्कार ॥ सू०४३ ॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचित "स्थानाङ्गसूत्र" की सुधा नामकी व्याख्याके चौथे स्थानका तीसरा उद्देशा समाप्त ४-३ ॥

"तिरियलोगेण" ઈત્યાદિ. તિર્યગ્લોકમાં આ ચાર વસ્તુઓ પ્રકાશ કરે છે. (૧) ચન્દ્રમા, (૨) સૂર્ય, (૩) ચન્દ્રકાન્ત, સૂર્યકાન્ત આદિ મણિ અને (૪) અગ્નિની જ્યોતિ આ ચાર વસ્તુઓ અંધકારનો નાશ કરીને તિર્યગ્લોકમાં પ્રકાશ પ્રદાન કરે છે.

"उड्ढलोगेणं" ઈત્યાદિ—ઊર્ધ્વલોકમાં આ ચાર વસ્તુઓ પ્રકાશ કરે છે—(૧) દેવો, કારણ કે તેઓ તેજસ્વી શરીરવાળા હોય છે (૨) દેવીઓ, (૩) સૌધર્મ, ઈશાન આદિ દેવોનાં વિમાનો અને (૪) મણિરચિત અલંકારો. ॥સૂ.૪૩॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે રચેલા "સ્થાનાંગ સૂત્ર" ની સુધા નામની વ્યાખ્યાના ચોથા સ્થાનનો ત્રીજો ઉદ્દેશો સમાપ્ત ॥ ૪-૩ ॥

॥ अथ स्थानाङ्गे चतुर्थस्थाने चतुर्थोद्देशः प्रारभ्यते ॥

उक्तस्तृतीय उद्देशः, सम्प्रति चतुर्थ आरभ्यते, पूर्वोद्देशकेन च सहास्यायमभिसम्बन्धः—तृतीये विविधा भावाश्चतुःस्थानकतया प्रोक्ता, इहापि विविधा एव भावाश्चतुःस्थानकतया निरूप्यन्ते ' इत्यनेन सम्बन्धेन समायातस्यास्योद्देशकस्येदं प्रथमं सूत्रम्—

मूलम्--चत्तारि पसप्पगा पण्णत्ता, तं जहा--अणुप्पन्नाणं भोगाणं उप्पाएत्ता एगे पसप्पए १, पुव्वुप्पन्नाणं भोगाणं अविप्पओगेणं एगे पसप्पए २, अणुप्पन्नाणं सोक्खाणं उप्पाइत्ता एगे पसप्पए ३, पुव्वुप्पन्नाणं सोक्खाणं अविप्पओगेणं एगे पसप्पए ४। ॥ सू० १ ॥

छाया—चत्वारः प्रसर्पकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अनुत्पन्नानां भोगानामुत्पादयिता एकः प्रसर्पक १, पूर्वोत्पन्नानां भोगानामविप्रयोगेण एकः प्रसर्पकः २, अनुत्पन्नानां सौख्यानाम् उत्पादयिता एकः प्रसर्पकः ३, पूर्वोत्पन्नानां सौख्यानामविप्रयोगेण एकः प्रसर्पकः ४। सू० १ ।

टीका—" चत्तारि पसप्पगा " इत्यादि—अस्यानन्तरसूत्रेणायं सम्बन्धः—अनन्तरसूत्रे देवा देव्यश्च निर्दिष्टाः, ते च भोगवन्तः सुखिताश्च भवन्तीति भोग-

---

चौथे स्थानका चौथा उद्देशा

तृतीय उद्देश कहा अब चतुर्थ उद्देश प्रारम्भ होता है पूर्वोद्देशके साथ इस उद्देशका सम्बन्ध ऐसा है कि तृतीय उद्देशमें अनेक प्रकारके भाव चार स्थानरूपसे कहे गये हैं सो यहां पर भी विविधही भाव चार स्थानरूपसे निरुपित किये जाते हैं, सो इसी सम्बन्धसे इसका प्रारम्भ हुआ है.

' चत्तारि पसप्पगा पण्णत्ता ' इत्यादि ॥ सूत्र १ ॥

टीकार्थ—इस प्रथम सूत्रका अनन्तर सूत्रके साथ ऐसा सम्बन्धहै कि अन-

---

ચોથા સ્થાનનો ચોથો ઉદ્દેશો

ત્રીજો ઉદ્દેશક પૂરો થયો. હવે ચોથા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ થાય છે. ત્રીજા ઉદ્દેશક સાથે આ ઉદ્દેશાનો સંબંધ આ પ્રમાણે છે–ત્રીજા ઉદ્દેશામાં અનેક પ્રકારના ભાવોની ચાર સ્થાનોની અપેક્ષાએ પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે આ ઉદ્દેશામાં પણ વિવિધ ભાવોનું ચાર સ્થાનોની અપેક્ષાએ નિરૂપણ કરવામાં આવે છે.

" चत्तारि पसप्पगा पण्णत्ता " ઈત્યાદિ—(૧)

ટીકાર્થ—આ સૂત્રનો પૂર્વસૂત્ર સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે–પૂર્વ દેવમાંસૂત્ર

सुखाश्रयणेन प्रसर्पकभेदान् निरूपयति–तथाहि–प्रसर्पकाः–प्र–प्रकर्षेण सर्पन्ति–गच्छन्ति भोगार्थं देशानुदेशं सञ्चरन्ति, यद्वा–आरम्भपरिग्रहतो विस्तारं प्राप्नुवन्तीति प्रसर्पकाः जीवाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–एकः–कश्चित् प्रसर्पको जीवः अनुत्पन्नानाम् भोगानां–भुज्यन्ते–सेव्यन्ते इन्द्रियैरिति भोगाः–शब्दादयः, तेषां–शब्दादीनाम्, उत्पादयिता–जनयिता भवति १, इति प्रथमो भङ्गः । १ ।

तथा–एकः प्रसर्पकः पूर्वोत्पन्नानां–प्राक्सम्पन्नानां भोगानां–शब्दादीनाम् अविप्रयोगेण–अविप्रयोगाय–रक्षणायेत्यर्थः, प्राकृतत्वाच्चतुर्थ्यर्थे तृतीयाविधानात्, भोगार्थं प्रसर्पति । २ ।

न्तर सूत्रमें देव और देवियोंका निर्देश हुआ है ये देव देवियां भोगयुक्त और सुखित होती हैं अतः भोगसुखके आश्रयसे सूत्रकार प्रसर्पकोंके भेदोंका निरूपण करते हैं जो प्रकर्ष रूपसे भोगादिकके निमित्त एकदेशसे दूसरे देशको जाते हैं सञ्चरण करते हैं वे प्रसर्पक हैं अथवा आरम्भ और परिग्रहसे जो विस्तारको प्राप्त होते हैं वे प्रसर्पक हैं ऐसे प्रसर्पक जीव होते हैं ये चार प्रकारके कहे गये हैं इनमें एक प्रसर्पक जीव ऐसा होता है जो अनुत्पन्न भोगोंका उत्पादक होता है इन्द्रियों द्वारा जो सेवित किये जाते हैं वे भोग हैं ऐसे भोग शब्दादिक होते हैं यह प्रथम भङ्ग है

एक प्रसर्पक जीव ऐसा होता है, जो पूर्वोत्पन्न शब्दादिरूप भोगोंके अविप्रयोगके लिये रक्षणके लिये एकदेशसे दूसरे देशमें जाताहै २ एक प्रसर्पक ऐसा होता है जो शब्दादि भोगों द्वारा होनेवाले सुख विशेषोंका उत्पादयिता होता हुआ एकदेशसे दूसरे देशमें जाता है ३ और कोई

અને દેવીઓનો નિર્દેશ થયો છે. તે દેવ, દેવીઓ ભોગયુક્ત અને સુખી હોય છે. આ સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર ભોગસુખ નિમિત્તે દેશવિદેશમાં ગમન કરનારા પ્રસર્પકોના ભેદોનું નિરૂપણ કરે છે. જેઓ પ્રકર્ષ રૂપે ભોગ-ભોગાદિક ભોગવવાને માટે એક દેશમાંથી બીજા દેશમાં જાય છે તેમને ‘પ્રસર્પક’ કહે છે.

અથવા—આરંભ અને પરિગ્રહમાં જેઓ વધુને વધુ વૃદ્ધિયુક્ત થતા રહે છે તેમને ‘પ્રસર્પક’ કહે છે. આવા પ્રસર્પક જીવો હોય છે. તેમના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પ્રસર્પક જીવ એવો હોય છે કે જે અનુત્પન્ન ભોગોનો ઉત્પાદક હોય છે. (ઇન્દ્રિયો દ્વારા જેનું સેવન થાય છે તે ભોગો છે. એવા ભોગો શબ્દાદિક રૂપ હોય છે (૨) કોઈ પ્રસર્પક જીવ એવો હોય છે કે જે પૂર્વોત્પન્ન શબ્દાદિ રૂપ ભોગોના રક્ષણ માટે એક દેશથી બીજા દેશમાં સંચરણ કરે છે. (૩) કોઈ પ્રસર્પક જીવ એવો હોય છે

तथा-एकः प्रसर्पकोऽनुत्पन्नानां सौख्यानां-शब्दादिभोगसम्पाद्यसुखविशेषाणाम् उत्पादयिता सन् प्रसर्पति ३।

तथा—एकः प्रसर्पकः पूर्वोत्पन्नानां सौख्यानाम् अविप्रयोगेण-रक्षणाय प्रसर्पति ४। प्रसर्पकाश्च प्रलोभिन एव भवन्ति, तदुक्तम्—

" धावइ रोहणं तरइ सागरं भमइ गिरिनिकुंजेसु।
मारेइ बंधवंपि हु पुरिसो जो होज्ज धणलुद्धो। १।
अडइ बहु वहइ भरं, सहइ छुहं पावमायरइ धिट्ठो।
कुलसीलजाइपच्चयट्ठिइं च, लोभद्दुओ चयइ। २।"

छाया—" धावति रोहणं तरति सागरं भ्रमति गिरिनिकुञ्जेषु।
मारयति बान्धवमपि हि पुरुषो यो भवेद् धनलुब्धः। १।

एक प्रसर्पक ऐसा होता है जो पूर्वोत्पन्न सुखोंके संरक्षणके लिये एक देशसे दूसरे देशमें जाताहै। प्रसर्पक जीव प्रलोभीही होतेहैं। तदुक्तम्-कहाभी है "धावइ रोहणं तरइ" इत्यादि। जो जीव धनलुब्ध होताहै वह क्या २ काम नहीं करताहै यही इन श्लोकों द्वारा प्रकट किया गयाहै, धन लुब्धक जीव रातदिन इधरसे उधर भमता रहता है समुद्र मार्गसे जानेमें भी वह अपने जीवनकी परवाह नहीं करता है भयंकरसे भी भयंकर गिरि निकुञ्जोंमें जानेमें वह नहीं डरता है यहां तक कुकृत्य वह धन लुब्धक कर देता है कि वह अपने बन्धुजनों का भी गलाघोंट डालता है, भूखकी वेदना वह सह लेता है घोरसे घोर पाप वह कर सकता है अपने कुलकी मर्यादा वह तोडता है और शील और

કે જે શબ્દાદિ ભોગો દ્વારા પ્રાપ્ત થનારા સુખવિશેષોનો ઉત્પાદક બનતો થકો એક દેશમાંથી બીજા દેશમાં જાય (૪) કોઇ પ્રસર્પક જીવ એવો હોય છે કે જે પૂર્વોત્પન્ન સુખના સંરક્ષણ નિમિત્તે એક દેશમાંથી બીજા દેશમાં જાય છે.

પ્રસર્પક જીવ લોભી હોય છે કહ્યુ પણ છે કે-"धावइ रोहणं तरइ" ઇત્યાદિ-ધનલોભી જીવ ધનને માટે શું શું નથી કરતો એ વાત આ શ્લોકમાં પ્રકટ કરવામાં આવી છે. ધનલોભી જીવ રાતદિન ધનપ્રાપ્તિ માટે ભટકયા કરે છે. સમુદ્રમાર્ગે પરદેશ જવાનું જોખમ પણ તે ખેડે છે, ભયંકરમાં ભયંકર પહાડો અને વનોને ઓળંગતા પણ તે ડરતો નથી. ધનલુબ્ધક માણુસ ગમે તેવું દુષ્કૃત્ય કરતા પાછો હઠતો નથી. અરે! ધનને ખાતર તો તે પોતાના સહોદરની પણ હત્યા કરી નાખે છે! તેને ખાતર તે ભૂખની વ્યથા સહન કરી લે છે, ભયંકરમાં ભયંકર પાપ પણ કરી શકે છે, પોતાના કુળની મર્યા-

अटति बहु वहति भारं सहते क्षुधां पापमाचरति धृष्टः ।
कुलशीलजातिप्रत्ययस्थितिं च लोभोपद्रुतस्त्यजति ।२।" इति ॥सू०१॥

पूर्वं प्रसर्पका उक्ताः, ते च भोगसौख्यलोभेनैव प्रसर्पन्ति, लोभिनश्च नरकानुबन्धिकर्म समुपार्ज्य नारकत्वेनोत्पद्यन्त इति नारकाणामाहारनिरूपणामाह—

मूलम्—णेरइयाणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते, तं जहा--इंगालोवमे १, मुम्मरोवमे २, सीयले ३, हिमसीयले ४। सू०२॥

छाया—नैरयिकाणां चतुर्विध आहारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-अङ्गारोपमः १, मुर्मुरोपमः २, शीतलः ३, हिमशीतलः ४। सू० २ ।

टीका—" णेरइयाणं " इत्यादि-स्पष्टम् , नवरम्-अङ्गारोपमः-अङ्गारतुल्यः, अल्पकालदाहत्वात् १, तथा-मुर्मुरोपमः-मुर्मुरः-करीषाग्निः, तदुपमः-तत्तुल्यः,

---

स्वभावमें आग वह लगा सकता है उसको तो धन मिलना चाहिये इस प्रकारसे वह जघन्यसे भी जघन्य नीच से भी नीच कार्य करनेमें जरा साभी संकोच नही करता है ॥सू०१॥

कथित प्रसर्पक जीव भोग एवं सुखके लोभसेही इधरसे उधर जाते हैं, लोभी जीव नरकानुबन्धी कर्मको उपार्जित करके नारककी पर्यायसे उत्पन्न होते हैं अतः अब सूत्रकार नारकोंके आहारकी प्ररूपणा करतेहैं-'णेरइयाणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते' इत्यादि सूत्र २ ॥

नैरयिकोंका चार प्रकारका आहार कहा गया है जैसे-अङ्गारोपम १ मुर्मुरोपम २ शीतल ३ और हिमशीतल ४ जो आहार अल्प कालतक दाह करनेवाला होता है वह आहार अङ्गारोपम है। जो आहार करीषाग्निके जैसा स्थिरता दाहक होता है वह मुर्मुरोपम आहार है २ जो

દાનો લોપ પણ કરી શકે છે, શીલ અને સ્વભાવમાં આગ પણ લગાવી શકે છે. આ રીતે ધનને ખાતર અધમમાં અધમ કાર્ય કરતાં પણ તે પાછો હઠતો નથી. ॥ સૂ ૧ ॥

પૂર્વોક્ત પ્રસર્પક જીવ ભોગ અને સુખના લોભથી જ દેશવિદેશમાં સંચરણ કરે છે. એવો જીવ નરકાયુબન્ધનું ઉપાર્જન કરીને નારકની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે. આ સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર આહારનું નિરૂપણ કરે છે—

" णेरइयाणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते " ઈત્યાદિ—(સૂ. ૨)

નારકોનો આહાર ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે-(૧) અંગારોપમ, (૨) મુર્મુરોપમ, (૩) શીતલ, અને (૪) હિમશીતલ.

જે આહાર થોડા કાળ સુધી શરીરમાં દાહ ઉત્પન્ન કરનારો હોય છે તે આહારને અંગારોપમ કહે છે. જે આહાર કરીષાગ્નિ સમાન દીર્ઘકાલિન દાહકતાનો જનક હોય છે તેને મુર્મુરોપમ આહાર કહે છે. જે આહાર શીત-

स्थिरतरदाहत्वात् २, तथा-शीतलः-शीतः, शीतवेदनाजनकत्वात् ३, तथा-हिमशीतलः-हिमवच्छीतः, अत्यन्तशीतवेदनाजनकत्वात, अयमाहारक्रमः क्रमशोऽधोवर्तिनां नारकाणां बोध्य इति । सू० २ ।

आहाराधिकारात् तिर्यग्मनुष्यदेवानामाहारनिरूपणार्थं सूत्रत्रयमाह—

मूलम्-तिरिक्खजोणियाणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते, तं जहा-कंकोवमे १, बिलोवमे २, पाणमंसोवमे ३, पुत्तमंसोवमे ४। (१)

मनुस्साणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते, तं जहा-असणे जाव साइमे०, (२)

देवाणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते, तं जहा-वन्नमंते १, गंधमंते २, रसमंते ३, फासमंते ४। । सू० ३ ॥

छाया—तिर्यग्योनिकानां चतुर्विध आहारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-कङ्कोपमः १, बिलोपमः २, पाणमांसोपमः ३, पुत्रमांसोपमः ४। (१)

मनुष्याणां चतुर्विध आहारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-अशनं यावत् स्वादिमम् ४ देवानां चतुर्विध आहारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-वर्णवान् १, गन्धवान् २, रसवान् ३, स्पर्शवान् ४ (३) ॥ सू० ३ ॥

टीका—" तिरिक्खजोणियाणं " इत्यादि—

तिर्यग्योनिकानां-पक्षिप्रभृतीनाम् , आहारश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः तद्यथा-कङ्कोपमः-कङ्कः-पक्षिविशेषः तस्याऽऽहारः कङ्काऽऽहारः तेनोपमा यस्य स कङ्कोपमः=

आहार शीतवेदनाका जनक होता है वह शीतल आहार है ३ और जो अत्यन्त शीतवेदनाका जनक होता है वह हिमशीतल आहार है ४ इस प्रकारका यह आहार क्रम क्रमशः अधोऽधोवर्ती नीचे रहनेवाले-नारकोंको होता है ऐसा जानना चाहिये ॥ सू०२ ॥

आहारके अधिकारको लेकर अब सूत्रकार तिर्यग् मनुष्य और

વેદનાનો જનક હોય છે તેને શીતલ આહાર કહે છે, જે આહાર હિમ જેવી અત્યંત શીતવેદનાનો જનક હોય તેને હિમશીતલ આહાર કહે છે. આહારનો આ પ્રકારનો ક્રમ અનુક્રમે વધુને વધુ અધોવર્તી નારકોના નારકોમાં સમજવો. એટલે કે તે સૌથી નીચેની નરકમાં-સાતમી નરકમાં-હિમશીતલ આહાર સમજવો. ॥ સૂ ૨ ॥

આહારનું નિરૂપણ ચાલી રહ્યું છે તેથી હવે સૂત્રકાર તિર્યંચ, મનુષ્ય

कङ्काऽऽहारोपम इत्यर्थः, अत्राऽऽहाररूपमध्यमपदलोपः, शाकपार्थिवादित्वात्, तिरश्चामाहारे कङ्काऽऽहारसादृश्यं च-दुर्जरत्वेन सुभक्षत्वेन च ग्राह्यम्, अयं भावः- यथा-कङ्कस्य स्वरूपेण दुर्जरोऽप्याहारः सुभक्षः सुपरिणामश्च भवति तथा तेषामपि य आहारो स कङ्कोपमो बोध्य इति १।

देवोंके आहारकी प्ररूपणा तीन सूत्रसे करते हैं—

'तिरिक्खजोणियाणं चउव्विहे इत्यादि' सूत्र ३ ॥

टीकार्थ-पक्षी आदि तिर्यश्चोंका आहार चार प्रकारका कहा गयाहै जैसे- कङ्कोपम १ बिलोपन २ पाणमांसोपम ३ और पुत्र मांसोपम ४ कङ्कनाम पक्षी विशेषका है इसका जो आहार है वह आहार कङ्काहार है इस आहारके साथ जिस आहारकी उपमा होती है अर्थात् कङ्काके आहारके जैसा होता है वह कङ्काहार है तिर्यश्चोंके आहारमें कङ्काहारकी समानता दुर्जर होनेसे सुभक्ष होनेसे और सुखपरिणाम होनेसे ग्रहण करना चाहिये, कङ्काहार दुर्जर होता है अर्थात् बड़ी कठिनतासे पचता है फिरभी खानेमें वह अच्छा होता है एवं इसका पाकभी सुखकारी होता है इसी प्रकारसे तिर्यश्चोंकाभी एक आहार ऐसा होता है जो दुर्जर होने परभी सुख भक्ष होता है और सुखद परिणामवाला होता है ऐसा उनका वह आहार कङ्कोपम आहार है १

बिलोपम आहार में बिल शब्द बिलमें जाते हुए

અને દેવોના આહારનું નિરૂપણ કરે છે—

" तिरिक्खजोणियाणं चउव्विहे " ઈત્યાદિ—(સૂ. ૩)

ટીકાર્થ–પક્ષી આદિ તિર્યંચોનો આહાર ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે–(૧) કંકોપમ, (૨) બિલોપમ, (૩) પાણમાંસોપમ અને (૪) પુત્રમાંસોપમ કંક કોઈ પક્ષી વિશેષનું નામ છે તે પક્ષી જે આહાર લે છે તેને કંકાહાર કહે છે. તે કંક- પક્ષીના જેવો આહાર જે તિર્યંચો લે છે તે તિર્યંચોના આહારને કંકોપમ આહાર કહે છે. તિર્યંચોના આહારમાં કંકાહારની સમાનતા દુર્જર હોવાથી, સુભક્ષ હોવાથી અને સુખપરિણામરૂપ હોવાથી ગૃહીત થવી જોઇએ. કંકાહાર દુર્જર હોય છે એટલે કે પચવો મુશ્કેલ હોય છે પણ ખાવામાં સુખાકારી હોય છે. આ રીતે તિર્યંચોનો એક આહાર એવો હોય છે કે જે પચવો મુશ્કેલ હોય છે પણ ખાવામાં સુખોત્પાદક હોય છે અને સુખદ પરિણામવાળો હોય છે. એવા આહારને કંકોપમ આહાર કહે છે.

तथा—बिलोपमः—अत्र बिलशब्दो बिले प्रविशद्‌द्रव्यपरः तेन बिलं बिले प्रविशद्‌द्रव्यमित्यर्थः, तेनोपमा यस्य स बिलोपमः—यथा—बिले शीघ्रं प्रविशद्‌द्रव्यम् अलब्धरसाऽऽस्वादं भवति तथा गलबिले शीघ्रं प्रविशन् तेषामाहारोऽलब्धरसाऽऽस्वादो भवति २।

तथा—पाणमांसोपमः—पाणः—श्वपचश्चाण्डाल इत्यर्थः, तन्मांसं चाण्डालशरीरमांसं जुगुप्सितत्वेन दुःखाद्यं दुःखेन खाद्यं तद्‌दुःखाद्यत्वेन तदुपमस्तिरश्चामाहारः स इति ३। तथा—पुत्रमांसोपमंयथा पुत्रमांसं स्नेहपरतया दुःखाद्यतरम् अत्यन्तदुःखेन खाद्यं भवति तद्‌दुःखाद्यत्वेन तदुपमस्तिरश्चामाहारो भवति, इति ४। एते क्रमेण—समा-ऽशुभा-ऽशुभतरा बोध्याः । (१)

'मणुस्साणं' इत्यादि—मनुष्याणामाहारश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—अशनं, 'यावत्'—पदेन पानं खादिमं तथा स्वादिमम् ४। (२)

द्रव्यका बोधक है, इस बिलमें जाते हुए द्रव्यसे जिस आहारकी उपमा होती है वह बिलोपम आहार है अर्थात् बिलमें प्रवेश करता हुआ द्रव्य जिस प्रकार अपने रसास्वादका प्रदाता नहीं होता है उसी प्रकारसे जो आहार गलेमें शीघ्रतासे प्रवेश पाता हुआ अपने रसास्वादका जनक नहीं होता है ऐसा वह आहारकि जिसके रसका आस्वाद उपभोक्ताको अलब्ध हो वह बिलोपम आहारहै २ तथा तृतीय प्रकारका जो पाणमांसोपम आहार है वह चाण्डालके शरीरके मांस जैसा होता है ३ और जो चौथे प्रकारका आहार है वह पुत्रके मांसके जैसा होता है ४ ये आहार क्रमसे शुभ, सम, अशुभ और अशुभतर होते हैं ऐसा जानना चाहिये.

मनुष्योंका आहार चार प्रकारका होता है जैसे अशन पान खादिम तथा स्वादिम.

બિલોપમ આહાર—બિલ એટલે દર અહીં બિલ શબ્દ બિલમાં પ્રવિષ્ટ થતાં દ્રવ્યનો વાચક છે. આ બિલમાં પ્રવેશ કરતાં દ્રવ્યની સાથે જે આહારને સરખાવી શકાય છે તે આહારને "બિલોપમ આહાર" કહે છે. એટલે કે બિલમાં પ્રવેશ કરતો પદાર્થ જે પ્રકારે પોતાના રસાસ્વાદનું પ્રદાન કરાવનારો હોતો નથી એજ પ્રમાણે જે આહાર ગળામાં શીઘ્રતાથી પ્રવિષ્ટ થવાને કારણે પોતાના રસાસ્વાદનો પ્રદાતા થતો નથી એવા આહારને બિલોપમ કહે છે. ઉપભોક્તા એવા આહારના રસનો આસ્વાદ કરી શકતો નથી.

પાણુમાંસોપમ આહાર—આ આહાર ચાંડાળના શરીરના માંસ જેવો હોય છે. પુત્રના માસ જેવા આહારને પુત્રમાંસોપમ આહાર કહે છે

આ ચારે પ્રકારના આહાર તે અનુક્રમે શુભ, સમ, અશુભ અને અશુભતર ગણાય છે.

“देवाणं” इत्यादि—देवानामाहारश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-वर्णवान्= प्रशस्तवर्णसम्पन्नो वाऽतिशयितवर्णसम्पन्नः, प्रशंसायां वाऽतिशायने मतुब्विधानात्, एवमग्रेऽपि १, तथा-गन्धवान् २, रसवान् ३, स्पर्शवान् ४। (३) ॥ सू०३॥

पूर्वमाहार उक्तः, स च भक्षणीय इति भक्षणाधिकारादाशीविषान् निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि जाइ आसीविसा पण्णत्ता, तं जहा-विच्छुअजाइ आसीविसे १, मंडुक्कजाइ आसीविसे २, उरगजाइ आसीविसे ३, मणुस्सजाइ आसीविसे ४ विच्छुयजाइ आसीविसस्स णं भंते ! केवइए विसए पण्णत्ते ? पभू णं विच्छुजाइ आसीविसे अद्धभरहप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिणयं विसट्टमाणिं करित्तए विसए से विसट्टयाए नो चेव णं संपत्तीए कासी वा करेइ वा करिस्सइ वा। १ मंडुक्कजाइ आसीविसस्स पुच्छा, पभू णं मंडुक्कजाइ आसीविसे भरहप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिणयं विसट्टमाणिं सेसं तं चेव जाव करिस्सइ वा २। उरगजाइ पुच्छा, पभू णं उरगजाइ आसीविसे जंबूदीवपमाणमेत्तं बोंदिं तं चेव जाव करिस्सइ वा ३। मणुस्सजाइपुच्छा,

---

देवोंका आहार चार प्रकारका होता है जैसे-प्रशस्त वर्णवाला, प्रशस्त गंधवाला, प्रशस्त रसवाला और प्रशस्त स्पर्शवाला अथवा वह प्रशस्त वर्णसम्पन्न होता है अतिशयित वर्णसे युक्त होता है इसी प्रकार गन्धादिकोंमें भी जानना चाहिये ॥सू०३॥

મનુષ્યના આહારના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) અશન, (૨) પાન, (૩) ખાદિમ અને (૪) સ્વાદિમ..

દેવોના આહારને નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) પ્રશસ્ત વર્ણવાળો, (૨) પ્રશસ્ત ગંધવાળો, (૩) પ્રશસ્ત રસવાળો અને (૪) પ્રશસ્ત સ્પર્શવાળો એટલે કે તેમના આહાર પ્રશસ્ત વર્ણસંપન્ન હોય છે, અને અતિશયિત વર્ણયુક્ત હોય છે એવું જ કથન ગન્ધાદિકોમાં પણ સમજવું. સૂ. ૩

पभू णं मणुस्साजाइआसीविसे समयखेत्तपमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिणयं विसट्टमाणिं करित्तए, विसए से विसट्टयाए नो चेव णं जाव करिस्सइ वा । सू० ४ ॥

छाया—चत्वारो जात्याशीविषाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–वृश्चिकजात्याऽऽशीविषः मण्डूकजात्याऽऽशीविषः २, उरगजात्याऽऽशीविषः ३, मनुष्यजात्याऽऽशीविषः४।

वृश्चिकजात्याऽऽशीविषयस्य खलु भदन्त ! कियान् विषयः प्रज्ञप्तः १, प्रभुः खलु वृश्चिकजात्याऽऽशीविषः अर्द्धभरतप्रमाणमात्रां बोन्दिं विषेण विषपरिणतां विदलयन्तीं कर्तुं, विषयस्तस्य विषार्थतया नैव खलु सम्पत्त्या अकार्षीद्वा करोति वा करिष्यति वा १।

मण्डूकजात्याऽऽशीविषस्य पृच्छा, प्रभुः खलु मण्डूकजात्याऽऽशीविषः भरतप्रमाणमात्रां बोन्दिं विषेण विषपरिणतां विदलयन्तीं शेषं तदेव यावत् करिष्यति वा २।

उरगजातिपृच्छा, प्रभुः खलु उरगजात्याशीविषः जम्बूद्वीपप्रमाणमात्रां बोन्दिं तदेव यावत् करिष्यति वा, ३

मनुष्यजातिपृच्छा, प्रभुः खलु मनुष्यजात्याशीविषः समयक्षेत्रप्रमाणमात्रां बोन्दिं विषेण विषपरिणतां विदलयन्तीं कर्तुं, विषयः स विषार्थतया नैव खलु यावत् करिष्यति वा । सू० ४ ।

टीका—"चत्तारि जाइआसीविसा" इत्यादि— जात्याशीविषाः–जातितः= जन्मतः आशीविषाः–विषधराः प्राणिनश्चतुर्विधाः प्रोक्ताः, तद्यथा–वृश्चिकजात्या-

---

अब सूत्रकार भक्षणके अधिकारको लेकर आशीविषोंकी प्ररूपणा करते हैं—'चत्तारि जाइ आसीविसा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र ४ ॥

आशीविष चार प्रकारके होते हैं जैसे–वृश्चिक जात्याशीविष १ मण्डूकजात्याशीविष २ उरगजात्याशीविष ३ और मनुष्यजात्याशीविष ४ जो प्राणी जातिसे जन्मसे आशीविष विषधर होते हैं वे जात्याशीविष हैं.

ભક્ષણનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. આ સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર આશીવિષોની પ્રરૂપણા કરે છે—

"चत्तारि जाइ आसीविसा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—(સૂ. ૪)

આશીવિષ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) વૃશ્ચિક જાત્યાશીવિષ, (૨) મંડૂક જાત્યાશીવિષ, (૩) ઉરગજાત્યાશીવિષ અને (૪) મનુષ્ય જાત્યાશીવિષ. જે જીવ જન્મથી જ આશીવિષ (વિષધર) હોય છે તેને 'જાત્યાશીવિષ' કહે છે.

शीविषः १, मण्डूकजात्याशीविषः २, उरगजात्याशीविषः ३ मनुष्यजात्याशीविषः ४। तत्र प्रत्येकविषयप्रश्नः—

"विच्छुयजाई आसीविसस्से"—त्यादि—हे भदन्त ! वृश्चिकजात्याशीविषस्य कियान् विषस्य विषयः प्रज्ञप्तः १ इति प्रश्नः, प्रभुराह–हे गौतम ! वृश्चिकजात्याशीविषः खलु अर्द्धभरतप्रमाणमात्राम्-अर्द्धभरतस्य प्रमाणं सातिरेकत्रिषष्ट्यधिकयोजनशतद्वयलक्षणमेव मात्रा=प्रमाणं यस्यास्तां बोन्दि–शरीरं विषेण–करणभूतेन विषपरिणतां=विषव्याप्ताम्, विदलयन्तीं=विदलकरणसमर्थां परविनाशनशीलामित्यर्थः कर्तुं प्रभुः-समर्थोऽस्ति। तस्य=वृश्चिकस्य विषयः विषार्थतया-विषमेवार्थो विषार्थस्तस्य भावो विषार्थता तया नैव खलु सम्पत्त्या–एतादृशशरीरमाप्त्या वृश्चिकः

प्र०—हे भदन्त वृश्चिक जात्याशीविषके विषका विषय कितना कहा गया है ?

उ०—वृश्चिकजात्याशीविषका विष, भरतक्षेत्रका जितना प्रमाण है उसके आधे प्रमाणवाले शरीरको व्याप्त कर सकता है उसे विदलन अर्थात् विनाश करने की शक्ति से युक्त कर सकता है भरतक्षेत्र का विस्तार ५२६$\frac{6}{19}$ योजनका कहा गया है इसका आधासे कुछ अधिक २६३ योजन होता है इतने बडे शरीरको भी वृश्चिक अपने विषसे विषरूपमें परिणत कर सकता है उसे पूरे रूपमें व्याप्त कर सकताहै उसे दूसरेको विनाश करनेवाला कर सकताहै यह ऐसा कथन उसके विषकी शक्तिको प्रकट करनेके लिये कहा गया है यद्यपि आज तक ऐसा देखा नहीं गया है न देखा जाता है और न देखा जावेगा परन्तु यदि उसका विष व्याप्त होना चाहे तो

પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! વૃશ્ચિક જાત્યાશીવિષના વિષનો વિષય કેટલો કહ્યો છે.

ઉત્તર—વૃશ્ચિક જાત્યાશીવિષનું વિષ ભરતક્ષેત્ર કરતાં અર્ધા પ્રમાણવાળા શરીરને વ્યાપ્ત કરી શકે છે અને તેને વિદલન અર્થાત્ વિનાશ કરવાની શકતીથી યુક્ત કરી શકે છે. ભરતક્ષેત્રનો વિસ્તાર ૫૨૬$\frac{6}{19}$ યોજનનો કહ્યો છે તેનાથી અર્ધો એટલે કે ૨૬૩ યોજન કરતાં થોડો વધારે યોજનનો વિસ્તાર સમજવો. એટલા મોટા શરીરને પણ વીંછી પોતાના વિષથી વિષ રૂપે પરિણુત કરી શકે છે–તેને સંપૂર્ણ રૂપે વ્યાપ્ત કરી શકે છે અને તેનાથી બીજાને વિદીર્ણ અવસ્થાવાળું કરી શકે છે.

આ કથન તેના વિષની શક્તિ બતાવવા માટે જ કરવામાં આવ્યું છે જો કે એવું કદી બન્યું નથી, બનતું નથી અને બનવાનું પણ નથી. સૂત્રકાર અહીં એ વાત જ પ્રકટ કરવા માગે છે કે તેનું વિષ અર્ધ જંબૂપ્રમાણ શરી-

अकार्षीद्वा करोति वा करिष्यति वा । त्रिकालनिर्देशश्चाशीविषाणां त्रिकालवर्तित्वसूचनार्थः । (१)

" मंडुक्कजाइआसीविसस्स " इत्यादि—प्राग्वत्, नवरम्—मण्डूकसूत्रे 'भरतक्षेत्रप्रमाणमात्रां बोन्दिं ' इति, उरगसूत्रे जम्बूद्वीपप्रमाणमात्रां बोन्दिं, इति, मनुष्यसूत्रे समयक्षेत्रप्रमाणमात्रां बोन्दिम्, इति बोध्यम् ॥ सू० ४ ॥

इतने बडे शरीरमें भी वह पूर्णरूपसे व्याप्त हो सकता है ऐसी उसकी शक्तिहै ऐसा कथन उसकी शक्तिके प्रभावको प्रकट करनेके लियेही सूत्रकारने कहाहै। "मंडुक्कजाइ आसीविसे" इत्यादि-इस सूत्रका प्रश्नोद्भावन पहिले जैसाही है अर्थात् हे भदन्त ! मण्डूकके विषका विषय कितना कहा गया है ? उत्तरमें प्रभुने कहा है कि—मण्डूकका विष भरतक्षेत्र प्रमाणवाले शरीरको भी अपने प्रभावसे प्रभावित कर सकता है यद्यपि ऐसी बात अभी तक हुई नहीं है, न होती है और न होनेवाली है परन्तु यह उसकी शक्ति मात्रका प्रदर्शन किया गया है इसी तरहसे उरग (सर्प)का जो विष है वह अपने प्रभावसे जम्बूद्वीप प्रमाणवाले शरीरको प्रभावित कर सकता है अर्थात् इतने बडे शरीरमें वह व्याप्त हो सकता है उसे विचलित कर सकता है परन्तु यह केवल उसके प्रभावका प्रदर्शन मात्र है क्योंकि ऐसा न पहिले कभी हुआ है न होनेवाला है और न होता है इसी प्रकारसे मनुष्यका जो विष है वह भी

રમાં પણ સંપૂર્ણ રૂપે વ્યાપ્ત થઈ શકે છે. તેના વિષની શક્તિને પ્રભાવ બતાવવા માટે જ આ કથન કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું.

" मंडुक्कजाइआसीविसे " ઇત્યાદિ—

પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! દેડકાના વિષનો વિષય કેટલો કહ્યો છે ?

ઉત્તર—દેડકાનું વિષ ભરતક્ષેત્રના જેટલા પ્રમાણુવાળા શરીરને પણ વ્યાપ્ત કરી શકે છે. જો કે એવી વાત કદી બની નથી, બનતી પણ નથી અને બનવાની પણ નથી. આ વાત તો તેના વિષની શક્તિ બતાવવા નિમિત્તે જ કહેવામાં આવી છે. એજ પ્રમાણે ઉરગ (સર્પ)નું ઝેર પણ જબૂદ્વીપપ્રમાણુ શરીરને વ્યાપ્ત કરી શકે છે, તેને વિદીર્ણ કરી શકે છે. આ વાત પણ તેના વિષનો પ્રભાવ પ્રકટ કરવા નિમિત્તે કરવામાં આવ્યું છે, પરન્તુ એવું કદી બન્યું નથી, બનતું નથી અને બનવાનું પણ નથી. એજ પ્રમાણે મનુષ્યનું વિષ પણ સમયક્ષેત્ર (અઢી દ્વીપ) પ્રમાણુ શરીરને પોતાના પ્રભાવથી

विषपरिणामो हि व्याधिरिति तदधिकाराद् व्याधिभेदान्निरूपयितुमाह—

मूलम्—चउव्विहे वाहि पण्णत्ते, तं जहा—वाइए १, पित्तिए २, सिंभिए ३, संनिवाइए ४।

चउव्विहा तिगिच्छा पण्णत्ता, तं जहा—विज्जो १, ओसधाइं २, आउरे ३, परिचारए ४ ॥ सू० ५ ॥

छाया—चतुर्विधो व्याधिः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—वातिकः १, पैत्तिकः, श्लैष्मिकः ३, सान्निपातिकः ४।

चतुर्विधा चिकित्सा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—वैद्यः १, औषधानि २, आतुरः ३, परिचारकः ४। ॥ सू० ५ ॥

समय क्षेत्र (अढाई द्वीप) प्रमाणवाले शरीरको अपने प्रभावसे प्रभावित कर सकता है ऐसा जानना चाहिये यह सब कथन किसके विषका कितना विषय है इस बातको प्रकट करनेके लिये किया गया है ॥सू०४॥

विषका परिणाम व्याधिरूप होता है अतः अब सूत्रकार व्याधिके भेदोंका निरूपण करते हैं—"चउव्विहे वाही पण्णत्ते" इत्यादि सूत्र ५ ॥

सूत्रार्थ—व्याधि चार प्रकारकी कही गई है—जैसे—वातजन्य व्याधि १ पित्तजन्य व्याधि २ कफजन्य व्याधि ३ और सन्निपातजन्य व्याधि ४

चिकित्सा चार प्रकारकी कही गई है जैसे—वातकी चिकित्सा १ पित्तकी चिकित्सा २ कफकी चिकित्सा ३ और सन्निपातकी चिकित्सा ४

પ્રભાવિત કરવાને સમર્થ હોય છે. આ કથન પણ તેનો પ્રભાવ બતાવવા નિમિત્તે જ કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું.

આ કથન વીંછી આદિના વિષનો કેટલો વિષય છે તે પ્રકટ કરવા માટે જ કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂત્ર ૪ ॥

વિષનું પરિણામ વ્યાધિ રૂપ હોય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર વ્યાધિના ભેદોનું નિરૂપણ કરે છે—" ચઉવ્વિહે વાહી પણ્ણત્તે " ઈત્યાદિ—સૂ. ૫

સૂત્રાર્થ—વ્યાધિના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) વાતજન્ય, (૨) પિત્તજન્ય, (૩) કફજન્ય અને (૪) સન્નિપાત જન્ય.

ચિકિત્સા ચાર પ્રકારની કહી છે-(૧) વાતની ચિકિત્સા, (૨) પિત્તની ચિકિત્સા, (૩) કફની ચિકિત્સા અને (૪) સન્નિપાતની ચિકિત્સા.

टीका—" चउव्विहे वाही " इत्यादि—

व्याधिः—रोगः चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—वातिकः—वातो-वायुः, तस्माज्जातो वातिकः=वायुप्रकोपोत्पन्नः १, पैत्तिकः—पित्तप्रकोपभवः २, श्लैष्मिकः—कफप्रकोपजातः ३, सान्निपातिकः=वातादिषु द्वयोस्त्रयाणां वा संयोगजः। वातादीनां स्वरूपमन्यत्राभिहितम्। तत्र वातस्वरूपं यथा—

" तत्र रूक्षो लघुः १ शीतः २ खरः ३ सूक्ष्म ४ श्चलो ५ ऽनिलः " इति। पित्तस्य यथा—पित्तं सस्नेह १ तीक्ष्णो २ ष्णं ३ लघु ४ विस्रं ५ सरं ६ द्रवम् ७। " इति, कफस्य—यथा—कफो गुरु १ हिमः २ स्निग्धः ३ प्रक्लेदी ४

टीकार्थ—व्याधि नाम रोगका है वातके प्रकोपसे जो रोग होता है वह वातिक व्याधि है, पित्तके प्रकोपसे जो व्याधि उत्पन्न होती है वह पैतिक व्याधि है, कफके प्रकोपसे जो रोग उत्पन्न होता है वह श्लैष्मिक व्याधि है, एवं वात आदिकोंमें दो या तीनके संयोगसे जो व्याधि उत्पन्न होती है वह सान्निपातिक व्याधि है। वातादिकोंका स्वरूप अन्यत्र कहा गया है जैसे—वातका स्वरूप ऐसा है—

" तत्र रूक्षो लघुः शीतः " इत्यादि अनिल अर्थात् वायु, हलका ठंडा खर कर्कश स्पर्शवाला, सूक्ष्म और चल—चलन स्वभाववाला होता है। पित्तका स्वरूप ऐसा है—" पित्तं सस्नेह तीक्ष्णोष्णं " पित्त चिकना, तीखा, उष्ण—गरम, हलका, कच्चो गन्धवाला सर—सरण—गमन स्वभाववाला, द्रव—तरल और ढीला होता है।

ટીકાર્થ—વ્યાધિ એટલે રોગ. વાયુના પ્રકોપથી જે રોગ થાય છે તેને વાતજનિત વ્યાધિ કહે છે. પિત્તના પ્રકોપથી જે રોગ થાય છે તેને પિત્તજન્ય વ્યાધિ કહે છે. કફના પ્રકોપથી જે રોગ થાય છે તેને શ્લૈષ્મિક વ્યાધિ (કફ જનિત વ્યાધિ) કહે છે.

વાત, પિત્ત અને કફ, આ ત્રણેના પ્રકોપથી અથવા તેમાંથી ગમે તે બેના પ્રકોપથી જનિત રોગને સાન્નિપાતિક વ્યાધિ કહે છે. વાતાદિકોનું સ્વરૂપ અન્યત્ર પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. વાતનું સ્વરૂપ નીચે પ્રમાણે કહ્યું છે—

" तत्र रूक्षो लघुः शीतः " ઈત્યાદિ અનિલ—વાયુ—પવન—હલકો, ઠંડો, ખર—કઠોર સ્પર્શવાળો, સૂક્ષ્મ અને ચલ—ચલન સ્વભાવવાળો હોય છે.

પિત્તનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે " पित्तं सस्नेह तीक्ष्णोष्णं ", ઈત્યાદિ પિત્ત ચિકણું, તીખું, ઉષ્ણ, ગરમ, હલકું, કાચી ગંધવાળું, સર—સરણ—ગમન સ્વભાવવાળું દ્રવ—તરલ અને ઢીલું હોય છે.

स्थिर ५ पिच्छिलः ।" इति, सन्निपातस्य-यथा-सन्निपातस्तु सङ्कीर्णलक्षणो द्व्यादिमीलकः" इति ।

वातादीनां कार्याण्यपि तत्राऽभिहितानि, तत्र वातस्य कार्यं यथा-

"पारुष्य-सङ्कोचन-तोद-शूल-श्यामत्व-मङ्गव्यथ-चेष्टभङ्गाः ।

सुप्तत्व-शीतत्व-खरत्व-शोषाः कर्माणि वायोः प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥१॥" इति।

पित्तस्य यथा-परिस्रव-स्वेद-विदाह-रागा वैगन्ध्य-संक्लेद-विपाक-कोपाः।

प्रलाप-मूर्च्छा-भ्रमि-पीतभावाः पित्तस्य कर्माणि वदन्ति तज्ज्ञाः ।२। "इति कफस्य यथा-श्वेतत्व-शीतत्व-गुरुत्व-कण्डू-स्नेहोपदेह-स्तिमितत्वलेपाः ।

कफका स्वरूप ऐसा है-"कफो गुरुर्हिमः स्निग्धः" इत्यादि कफ-गुरु-भारी ठंडा चिकना क्लिन्न-गीला स्थिर होता है।

सन्निपातका स्वरूप ऐसा है-"सन्निपातस्तु संकीर्ण लक्षणो द्व्यादि मीलकः" वातादिकोंके कार्य भी वहां कहे गये हैं--

वातका कार्य ऐसा कहा है-"पारुष्यसंकोचनतोदशूल" इत्यादि अर्थात् शरीरमें कठिनता, संकोच, सूजन, शूल, श्यामता अंगपीडा और चेष्टाका भंग, अधिक निद्रा होना. शरीरमें ठंडापन, खरदरापन और कंठशोष होना इत्यादि है।

पित्तका कार्य " परिस्रवस्वेदविदाहरागा " इत्यादि अर्थात् लार आदि टपकना, पसीना, दाह, राग, दुर्गन्ध, गीला, पाककुपित होना, बकना मूर्च्छा, चक्कर चढना, शरीरमें पीलापन इत्यादि है।

કફનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે કહ્યું છે " कफो गुरुर्हिमस्निग्धः " ઈત્યાદિ કફ ગુરૂ-ભારે, ઠંડા, ચિકણો, કલીન્ન-નરમ અને સ્થિર હોય છે.

સન્નિપાતનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું કહ્યુ છે-" सन्निपातस्तु संकीर्णलक्षणो द्व्यादि मीलकः "

વાયુનું કાર્ય આ પ્રમાણે કહ્યુ છે " पारुष्यसंकोचनतोदशूल " ઈત્યાદિ અર્થાત્ શરીરમાં કઠણતા, સંકોચ, સોજો, શૂલ, કાળાશ, અંગપીડા અને ચેષ્ટાનો ભંગ તેમજ ઉંઘ વધારે આવવી, શરીરમાં ઠંડાપણું, ખરબચડાપણું અને કંઠશોષ-ગળું સુકાવું એ રીતે કહ્યું છે.

પિત્તનુ કાર્ય-" परिस्रवस्वेदविदाहरागा " ઈત્યાદિ અર્થાત્ લાળ આદિનું ટપકવું, પરસેવો, દાહ, રાગ, દુર્ગંધ ઢીલાપણું, કુપિત થવું, બકવું, મૂર્છા આવવી ચક્કર આવવા, શરીર પીળું પડવુ ઈત્યાદિ હોય છે.

उत्सेध-सम्पात-चिरक्रियाश्च कफस्य कर्माणि वदन्ति तज्ज्ञाः ।३।" इति ।

अनन्तरं व्याधिरुक्तः, अधुना तच्चिकित्सामाह-"चउव्विहा तिगिच्छा" इत्यादि-चिकित्सा-व्याधिप्रतीकारः, चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-वैद्यः-प्रसिद्धः १, औषधानि-हरीतक्यादिरूपाणि २, आतुरः-रोगार्त ३, परिचारकः-शुश्रूषुः, एतत्सूत्रोक्तमपरैरप्यनुदितम्—

"भिषग् द्रव्याण्युपस्थाता रोगी पादचतुष्टयम् ।
चिकित्सितस्य निर्दिष्टं प्रत्येकं तच्चतुर्गुणम् । १ ।
दक्षो विज्ञातशास्त्रार्थो दृष्टकर्मा शुचिर्भिषक् ।
वहुकल्पं वहुगुणं सम्पन्नं योग्यमौषधम् । २ ।
अनुरक्तः शुचिर्दक्षो बुद्धिमान् परिचारकः ।
आढ्यो रोगी भिषग्वश्यो ज्ञापकः सत्त्ववानपि । ३ ।" इति,

इति द्रव्यरोगचिकित्सा ।

कफका कार्य इस प्रकार है-"श्वेतत्व शीतत्व गुरुत्व कण्डू "इत्यादि शरीरमें सफेदी, ठंडक, भारीपन, कण्डू-खाज, चिकनापन, इत्यादि है

"चउव्विहे तिगिच्छा" व्याधि प्रतिकाररूप चिकित्सा चार प्रकारकी कही गईहै ऐसा कथन करते हैं-इनमें एक कारण वैद्यहै, दूसरा कारण औषधियां हैं, तीसरा रोगार्त है, और चौथा परिचारिक शुश्रूषा करनेवाला है । इस चिकित्सा सूत्रमें जो कहा गयाहै दूसरे जनोंने भी इसे इस प्रकारसे अनुमोदित किया है—

" भिषक् द्रव्याणि उपस्थाता " इत्यादि ।

वह जो वैद्य आदिके भेदसे चिकित्सा चार प्रकारकी कही गई है वह द्रव्यरोगकी चिकित्साको लेकर कहा गया है, मोहरूप भावरोगकी

કફનું કાર્ય આ પ્રમાણે કહ્યું છે "श्वेतत्वशीतत्त्वगुरुत्त्वकण्डू" ઈત્યાદિ શરીરમાં સફેદી, ઠંડક, ભારેપણુ કણ્ડૂ-ખંજવાળ આવવી, ચિકણાપણું ઈત્યાદિ છે.

આ પ્રમાણે વ્યાધિઓનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર વ્યાધિઓના પ્રતિકાર રૂપ ચિકિત્સાનું કથન કરે છે-"चउव्विहा तिगिच्छा"

ચિકિત્સા ચાર પ્રકારની કહી છે—(૧) ચિકિત્સા કરવામાં પહેલો મદદગાર વૈદ બને છે, (૨) ઔષધિઓ પણ ચિકિત્સામાં કારણભૂત બને છે, (૩) રોગાર્ત (રોગી) પણ તેમાં કારણભૂત બને છે અને (૪) પરિચારક કે પરિચારિકાઓ પણ ચિકિત્સામાં કારણ રૂપ બને છે આ વાતને અન્ય લોકોએ પણ અનુમોદિત કરી છે.—"भिषक द्रव्याणि उपस्थाता" ઈત્યાદિ વૈદ આદિના

मोहरूपभावरोगचिकित्सात्वेवम्—

" निव्विगइ निब्बलोमे तव उद्धट्ठाणमेव उब्भामे ।
वेयावच्चाहिंडणमंडलिकप्पट्ठियाहरणं । १ ।

छाया—" निर्विकृतिः निर्बलम् अवमं तप ऊर्ध्वस्थानमेव उद्भ्रामः ।
वैयावृत्त्याऽऽहिण्डनमण्डली कल्पस्थिताऽऽहरणम् । १ ।

अयमर्थः—निर्विकृतिः—विकृतिप्रत्याख्यानम्, निर्बलम्—वल्लचणकाद्यन्नविशेषः, अवमं—न्यूनम् अवमोदरी, तपः—आचामाम्लादि, ऊर्ध्वस्थानं कायोत्सर्गः, उद्भ्रामो-भिक्षार्थभ्रमणम्, वैयावृत्त्यम्—अन्नपानादिभिः साहाय्यकरणम्, आहिण्डनं—देशेषु विहारः, मण्डली—सूत्रार्थसमूहः, एषा मोहचिकित्सा । अत्र आहरणम्=उदाहरणं-कल्पस्थिता=मर्यादास्थिता कुलवधूः । सू० ५ ॥

पूर्वं चिकित्सोक्ता, सा च चिकित्सकाधीनेति चिकित्सकं निरूपयति—

मूलम्—चत्तारि तिगिच्छया पण्णत्ता, तं जहा--आय तिगि-च्छए नाममेगे नो परतिगिच्छए १, परतिगिच्छए नाममेगे

चिकित्सा इस प्रकारसे है--" निव्विगइ तिव्वलोमे इत्यादि)

इसका अर्थ इस प्रकारसे है-घृतादि विकृतियोंका प्रत्याख्यान करना निर्बल बल्लादि अन्न विशेषका उपयोग करना, अर्थात् भारी खोराक न लेना अवम-भूखसे काम करना, ऊनोदर तप करना, आचामाम्ल आदिकी तपस्या करना कायोत्सर्ग करना, भिक्षाके निमित्त भ्रमण करना, अन्नपान आदिसे वृद्धग्लान आदि साधुजनोंकी सेवा करना एक देशसे दूसरे देशमें विहार करना और सूत्रका अर्थका और तदुभयका पठन पाठन करना आदि ये सब मोहरूप भावरोगकी चिकित्सारूप है ॥सू०५॥

ભેદથી ચિકિત્સા જે ચાર પ્રકારની કહી છે તે દ્રવ્યરોગની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવેલ છે. મોહરૂપ ભાવરોગની ચિકિત્સા આ પ્રકારની છે—

" निव्विगइ तिव्वलोमे " ઇત્યાદિ. આ ગાથાનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-ઘી આદિ વિકૃતિઓના પ્રત્યાખ્યાન કરવા, નિઃસત્ત્વ અન્નવિશેષોનો ઉપયોગ કરવો, ભૂખ હોય તેના કરતા અલ્પ આહાર કરવો, ઊણોદરી તપ કરવું, આયંબિલ આદિ તપસ્યા કરવી, કાયોત્સર્ગ કરવો, ભિક્ષા નિમિત્તે ભ્રમણ કરવુ, વૃદ્ધ, ગ્લાન (બિમાર) આદિને માટે અન્નપાન લાવી દઈને તેમની સેવા કરવી, એકદેશમાંથી બીજા દેશમાં વિહાર કરવો, તથા સૂત્રનું, અર્થનું અને તે બન્નેનું પઠન પાઠન કરાવવું, આદિ કાર્યો મોહરૂપ ભાવરોગની ચિકિત્સા રૂપ છે એમ સમજવું. ॥ સૂ ૫॥

नो आयतिगिच्छए २। आयतिगिच्छएवि, परतिगिच्छएवि ३। नो आयतिगिच्छए नो परतिगिच्छए ४। (१)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा -वणकरे णाममेगे णो वणपरिमासी १, वणपरिमासी नाममेगे णो वणकरे २, एगे वणकरे वि वणपरिमासी वि ३, एगे णो वणकरे णो वणपरिमासी ४। (१)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—वणकरे णाममेगे णो वणसारक्खी ४ (२)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—वणकरे णाममेगे णो वणसंरोही ४ (३)

चत्तारि वणा पण्णत्ता, तं जहा—अंतोसल्ले नाममेगे णो बहिसल्ले ४ (१) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--अंतोसल्ले णाममेगे णो बाहिंसल्ले ४ (२)

चत्तारि वणा पण्णत्ता, तं जहा—अंतोदुट्ठे णाममेगे णो बहिंदुट्ठे, बाहिंदुट्ठे णाममेगे णो अंतोदुट्ठे, ४, (३) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—अंतो दुट्ठे णाममेगे णो बाहिदुट्ठे ४ (४)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--सेयंसे णाममेगे सेयंसे १, सेयंसे णाममेगे पावंसे २, पावंसे णाममेगे सेयंसे ३, पावंसे णाममेगे पावंसे ४, (१)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--सेयंसे णाममेगे सेयंसेत्ति सालिसए, सेयंसे णाममेगे पावंसेत्ति सालिसए ४ (२)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--सेयंसे णाममेगे सेयंसेत्ति मण्णइ, सेयंसेत्ति णाममेगे पावंसेत्ति मण्णइ ४, (३)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--सेयंसे णाममेगे सेयंसेत्ति सालिसए मण्णइ, सेयंसे णाममेगे पावंसेत्ति सालिसए मण्णइ ४ (४)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--आघवइत्ता णाममेगे णो परिभावइत्ता, परिभावइत्ता णाममेगे णो आघवइत्ता४(५)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--आघवइत्ता णाममेगे णो उंछजीविसंपन्ने, उंछजीविसंपन्ने णाममेगे णो आघवइत्ता ४ (६)

चउव्विहा रुक्खविगुव्वया पण्णत्ता, तं जहा--पवालत्ताए १, पत्तत्ताए २, पुप्फत्ताए ३, फलत्ताए ४। (७) ॥ सू० ६ ॥

छाया—चत्वारश्चिकित्सकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आत्मचिकित्सको नामैको नो परचिकित्सकः १, परचिकित्सको नामैकः नो आत्मचिकित्सकः २। एक आत्मचिकित्सोऽपि परचिकित्सकोऽपि ३, एको नो आत्मचिकित्सकः नो परचिकित्सकः ४, (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—व्रणकरो नामैको नो व्रणपरिमर्शी १, व्रणपरिमर्शी नामैको नो व्रणकरः २, एको व्रणकरोऽपि व्रणपरिमर्श्यपि ३, एको नो व्रणकरो नो व्रणपरिमर्शी ४। (१(

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—व्रणकरो नामैको नो व्रणसंरक्षी० ४। (२)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—व्रणकरो नामैको नो व्रणसंरोही० ४। (३)

चत्वारो व्रणाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अन्तःशल्यो नामैको नो बहिःशल्यः, (१) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–अन्तःशल्यो नामैको नो बहिः शल्यः ४, (२)

चत्वारो व्रणाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अन्तर्दुष्टो नामैको नो बहिर्दुष्ट, बहिर्दुष्टो नामैको नो अन्तर्दुष्टः० ४ (३)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–अन्तर्दुष्टो नामैको नो बहिर्दुष्ट० ४, (४)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–श्रेयान् नामैकः श्रेयान् १, श्रेयान् नामैकः पापीयान् २, पापीयान् नामैकः श्रेयान् ३, पापीयान् नामैकः पापीयान् ४। (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–श्रेयान् नामैकः श्रेयानिति सदृशकः, श्रेयान् नामैकः पापीयानिति सदृशक० ४ (२)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–श्रेयानिति नामैकः श्रेयानिति मन्यते, श्रेयानिति नामैकः पापीयानिति मन्यते० ४, (३)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–श्रेयान् नामैकः श्रेयानिति सदृशकः मन्यते, श्रेयान् नामैकः पापीयानिति सदृशको मन्यते० ४, (४)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–आख्यायको नामैको नो परिभावयिता, परिभावयिता नामैको नो आख्यायकः० ४, (५)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–आख्यायको नामैको नो उञ्छजीविका सम्पन्नः १, उञ्छजीविका सम्पन्नो नामैको नो आख्यायकः० ४, (६)

चतुर्विधा वृक्षविकुर्वणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–प्रवालतया १, पत्रतया २, पुष्पतया, फलतया ४। ॥ सू० ६ ॥

टीका—" चत्तारि तिगिच्छगा " इत्यादि—

चिकित्सकाः रोगप्रतिकारकाः, ते च द्विधा–द्रव्यतो भावतश्च। तत्र–द्रव्यतो–ज्वरादिरोगाणाम्, भावतस्तु रागादीनां बोध्याः, ते चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–

चिकित्सा रोग प्रतीकार चिकित्सकके आधीन होती है अतः अब सूत्रकार चिकित्सककी निरूपणा करते हैं--

"चत्तारि तिगिच्छया पण्णत्ता" इत्यादि सूत्र ६॥

टीकार्थ–चार चिकित्सक कहे गये हैं जैसे कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो अपनी चिकित्सा करता है परकी चिकित्सा नहीं करता है १

ચિકિત્સાનો આધાર ચિકિત્સક પર રહે છે તેથી હવે સૂત્રકાર ચિકિત્સકનું નિરૂપણ કરે છે–" चत्तारि तिगिच्छया पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—(સૂ ૬)

ટીકાર્થ–ચિકિત્સક ચાર પ્રકારના કહ્યા છે–(૧) કોઇ એક ચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે પોતાની ચિકિત્સા કરે છે, પણ પરની ચિકિત્સા કરતો નથી. (૨)

एकः-कश्चिच्चिकित्सकः आत्मचिकित्सकः-आत्मनो ज्वरादेः कामादेर्वा चिकित्सकः-प्रतिकारको भवति, किन्तु नो परचिकित्सकः-परस्य-अन्यस्य ज्वरादेः कामादेर्वा नो चिकित्सकः १, इति प्रथमः १।

एकः परचिकित्सको भवति न तु आत्मचिकित्सकः २, एक आत्मचिकि

कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो परकी चिकित्सा करताहै, अपनी चिकित्सा नहीं करता है २। तीसरा चिकित्सक ऐसा होता है जो अपनी भी चिकित्सा करता है, और परकी भी चिकित्सा करता है ३। और कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो न अपनी चिकित्सा करताहै, और न परकी चिकित्सा करताहै ४। अर्थात् चिकित्सक वही होताहै जो रोगका प्रतीकार करनेवाला होता है, ये चिकित्सक द्रव्य और भावकी अपेक्षा दो प्रकारके कहे गये हैं-जो ज्वरादि रोगोंका प्रतीकार करते हैं, वे द्रव्य चिकित्सक हैं और जो रागादि रूप रोगोंका प्रतीकार करते हैं वे भाव चिकित्सक हैं। इन चिकित्सकोंकेही यहां ये चार प्रकार कहे गये हैं इनमें कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकका प्रतिकारक होताहै पर-अन्यके ज्वरादिका अथवा कामादिकका चिकित्सक नहीं होता है। १ ऐसा यह प्रथम विकल्प है। दूसरा कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो परके ज्वरादिकोंका या

કોઈ ચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે પરની ચિકિત્સા કરે છે પણ પોતાની ચિકિત્સા કરતો નથી (૩) કોઇ એક ચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે પોતાની ચિકિત્સા પણ કરે છે અને પરની ચિકિત્સા પણ કરે છે. (૪) કોઈ ચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે પોતાની ચિકિત્સા પણ કરતો નથી અને પરની ચિકિત્સા પણ કરતો નથી.

ચિકિત્સક એને જ કહી શકાય છે કે જે પોતાના રોગના નિવારણનો ઉપાય કરે છે. તેના દ્રવ્ય અને ભાવની અપેક્ષાએ મુખ્ય બે પ્રકાર પડે છે જે જ્વરાદિ (તાવ આદિ) રોગોના નિવારણનો ઉપાય કરે છે તેને દ્રવ્ય-ચિકિત્સક કહે છે, અને રાગાદિ રૂપ રોગોના નિવારણનો ઉપાય કરનારને ભાવચિકિત્સક કહે છે તે પ્રત્યેકના અહીં ચાર ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક ચિકિત્સક એવો હોય છે જે પોતાના જ્વરાદિનો અથવા કામાદિક વિકારોનો પ્રતિકાર કરનારો હોય છે પણ પર-બીજાના જ્વરાદિને કે કામાદિકનો પ્રતિકાર કરવાવાળો હોતા નથી. (૨) કોઈ એક ચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે અન્યના જ્વરાદિ રોગોનો અથવા કામાદિક વિકારોનો ચિકિત્સક

त्सकोऽपि परचिकित्सकोऽपि ३, एको नो आत्मचिकित्सको नो परचिकित्सकः ।४। इति ।

अथाऽऽत्मचिकित्सकान् भेदतः सूत्रत्रयेणाऽऽह—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः-आत्मचिकित्सकः, व्रणकरः-व्रणं-शरीरे क्षतं स्वयं करोतीत्येवं शीलो व्रणकरो भवति, किन्तु नो व्रणपरिमर्शी-व्रणं परिमृशति-स्पृशतीत्येवं शीलो व्रणपरिमर्शी व्रणस्पर्शी न भवति। इति प्रथमः १। तथा-एको-व्रणपरिमर्शी भवति किन्तु व्रणकरो न भवति, इति

कामादि विकारोंका चिकित्सक होता है अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका चिकित्सक नहीं होता है २। तृतीय प्रकारका कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका भी चिकित्सक होता है और परके ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका भी चिकित्सक होता है ३। तथा कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो न अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका चिकित्सक होता है, और न परकेही ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका चिकित्सक होता है ४।

अब सूत्रकार आत्मचिकित्सकोंका उनके भेदोंको लेकर तीन सूत्रसे कथन करते हैं-" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि--

पुरुष जात चार कहे गये हैं इनमें कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो व्रणकर होता है व्रणपरिमर्शी नहीं होता है अर्थात् जो शरीरमें क्षत-घाव स्वयं करता है पर व्रणस्पर्शी नहीं होता है १। तथा

હોય છે, પણ પોતાના જવરાદિકો અથવા કામાદિકોનો ચિકિત્સક હોતો નથી. (૩) કોઇ એક ચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે પોતાના અને અન્યના જ્વરાદિક રોગોનો અને કામાદિક વિકારોનો ચિકિત્સક હોય છે. (૪) કોઇ એક ચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે પોતાના જવરાદિક રોગોનો અથવા કામાદિક વિકારોનો ચિકિત્સક પણ હોતો નથી અને પરના જ્વરાદિક રોગોનો અથવા કામાદિક વિકારોનો પણ ચિકિત્સક હોતો નથી.

હવે સૂત્રકાર આત્મચિકિત્સકોના ભેદોનું ત્રણ સૂત્રો દ્વારા નિરૂપણ કરે છે—" चत्तारि पुरिसजाया " ઇત્યાદિ-પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઇ એક આત્મચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે વ્રણકર હોય છે પણ વ્રણપરિમર્શી હોતો નથી. એટલે કે જે પોતે શરીરમાં ક્ષત (ઘાવ) કરે છે પણ વ્રણસ્પર્શી હોતો નથી. (૨) કોઇ એક આત્મચિકિત્સક એવો હોય છે

द्वितीयः २। तथा-एको व्रणकरोऽपि व्रणपरिमर्श्यपि च भवति । इति तृतीयः ३। एको नो व्रणकरो नो व्रणपरिमर्शी च भवतीति चतुर्थः। ४।

इति द्रव्यव्रणमाश्रित्य व्याख्या ।

भावव्रणमाश्रित्य तु-व्रणकरः-व्रणम्-अतिचारलक्षणं करोति कायेनेत्येवंशीलो भवति किं तु न व्रणपरिमर्शी-व्रणमतिचाररूपं परिमृशति-पुनः पुनः स्मरणेन स्पृशतीत्येवं शीलो न भवति, इति प्रथमः १।

तथा-एकः-व्रणपरिमर्शी-अतिचारस्य स्मरणेन पुनः पुनः स्पर्शनशीलो भवति किन्तु न व्रणकरः-अतिचारकरणशीलो न भवति कायतः संसारभयादिभिः। इति द्वितीयः २। एवं शेषभङ्गद्वयम् ।

कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होनाहै जो व्रणको-घावको स्पर्श करताहै पर व्रणका करनेवाला नहीं होता है २। कोई एक तीसरा आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो व्रणको करनेवाला भी होता है और व्रणका स्पर्श करनेवाला भी होता ३। और कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो न व्रणकर होता है और न व्रणपरिमर्शीही होता है ४। यह व्याख्या द्रव्य व्रणको आश्रित करके की गई है भावव्रण को आश्रित कर के व्याख्या इस प्रकार से है - कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो कायसे अतिचार रूप व्रणको करनेके स्वभाववाला होता है पर अतिचार रूप उस व्रणको वह पुनः पुनः स्मरणसे स्पर्श नहीं करता है १ कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो अतिचार रूप व्रणको पुनः-पुनः स्मरणसे स्पर्श न करनेके स्वभा-

---

કે જે વ્રણુસ્પર્શી હોય છે પણુ વ્રણુકર (ઘાવ કરનારો) હોતો નથી. (૩) કોઇ એક આત્મચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે વ્રણુકર પણુ હોય છે અને વ્રણુસ્પર્શી પણુ હોય છે. (૪) કોઇ એક આત્મચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે વ્રણુકર પણુ હોતો નથી અને વ્રણુસ્પર્શી પણુ હોતો નથી. આ ચાર પ્રકારો દ્રવ્યવ્રણુને અનુલક્ષીને પાડવામાં આવ્યા છે ભાવવ્રણુની અપેક્ષાએ આત્મચિકિત્સકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે-(૧) કોઈ એક આત્મચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે કાયા વડે અતિચાર રૂપ વ્રણુ કરનારો હોય છે, પરન્તુ અતિચાર રૂપ તે વ્રણુનું ફરી ફરીને સ્મરણુ કરનારો હોતો નથી. એટલે કે તે અતિચારનો સ્મરણુ વડે સ્પર્શ કરનારો હોતો નથી. (૨) કોઈ એક આત્મચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે અતિચાર રૂપ વ્રણુનો ફરી ફરીને સ્મરણુ વડે સ્પર્શ કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે. પણુ સંસારના ભય આદિને કારણે

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः-कश्चित्पुरुषो व्रणकरः-द्रव्यतः शरीरे क्षतकरः, भावतोऽतिचारलक्षणव्रणकरो भवति, किन्तु न व्रणसंरक्षी-द्रव्यतो व्रणस्य पट्टबन्धनादिना संरक्षणकारी भावतोऽतिचारस्य सानुबन्धीभवतः कुशीलादिजनसंसर्गतन्निदानापनयनतः संरक्षणकारी न भवति। इति प्रथमः १।

तथा-व्रणसंरक्षी नामैको नो व्रणकरः इति द्वितीयः २, तथा-एको व्रणकरोऽपि व्रणसंरक्ष्यपि ३ इति तृतीयः ३। तथा-एको नो व्रणकरो नो व्रणसंरक्षीति चतुर्थः। भङ्गत्रयं प्रथमभङ्गमनुसृत्य विवरणीयम्।

ववाला होताहै, पर संसारके भय आदिसे अतिचार करनेके स्वभाववाला नहीं होताहै इसी तरहसे शेष दो भङ्गोंका कथन भी कर लेना चाहिये।

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-पुनः पुरुष जात चार कहे गये हैं इनमेंसे कोई एक पुरुष ऐसा होना है जो द्रव्यकी अपेक्षा अपने शरीरमें व्रणकर होता है और भावकी अपेक्षा अतिचार रूप व्रण करनेवाला होता है, किन्तु वह द्रव्यकी अपेक्षा उसका पट्टी बांधने आदि रूपसे संरक्षणकारी नहीं होताहै, और भावकी अपेक्षा अनुबन्ध सहित होनेवाले अतिचारका कुशील आदि जनके संसर्गको एवं अतिचारके कारणोंको हटानेसे संरक्षणकारी नहीं होता है ऐसा यह प्रथमभङ्ग है। तथा कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो व्रणसंरक्षी होता है पर व्रणकर नहीं होता है २। कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो न व्रणकर होता है, और न व्रणसंरक्षी होता है ३। तथा कोई

અતિચાર કરવાના સ્વભાવવાળો હોતો નથી, એજ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગા પણ સમજી લેવા.

" चत्तारि पुरिसजाया "ઇત્યાદિ—પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પોતાના શરીરમાં વ્રણ કરનારો હોય છે અને ભાવની અપેક્ષાએ અતિચાર રૂપ વ્રણ કરનારો હોય છે, પરન્તુ તે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તેના પર પાટો આદિ બાંધવા રૂપ સંરક્ષણકારી હોતો નથી અને ભાવની અપેક્ષાએ અતિચારના અતિચારના કારણોને દૂર કરવાના સ્વભાવવાળો—સંરક્ષણકારી હોતો નથી, કારણ કે એવો માણસ કુશીલવાળા જનોને સંસર્ગ રાખનારો અને અતિચારોનું સેવન કરનારો હોય છે.

(૨) કોઇ એક આત્મચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે વ્રણસંરક્ષી હોય છે પણ વ્રણકર હોતો નથી. (૨) કોઈ એક આત્મચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે વ્રણકર હોય છે પણ વ્રણસંરક્ષી હોતો નથી. (૪) કોઇ એક આત્મ-

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषो व्रणकरः द्रव्यतः क्षतकरः, भावतोऽतिचारकरो भवति, किन्तु व्रणसंरोही-द्रव्यतो व्रणं संरोहयति-औषधदानादिना नैरुज्य करोतीत्येवंशीलो व्रणसंरोही न भवति, भावतो व्रणमतिचारं संरोहयतीत्येवं शीलो न भवति, प्रायश्चित्ताप्रतिपत्तेः इति प्रथमः १।

तथा-एको व्रणसंरोही-द्रव्यतः क्षतनैरुज्यकारी, भावतोऽतिचारसंशोधी च पूर्वकृतातिचारप्रायश्चित्तप्रतिपत्त्या भवति, किन्तु व्रणकरः=द्रव्यतः क्षतकरः, भावतस्तु अतिचारकरो न भवति, इति द्वितीयः २।

एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो न व्रणकर होता है और व्रणसंरक्षी होता है ४ इन तीन भङ्गोंकी व्याख्या प्रथम भङ्गकी व्याख्याको हृदयंगम करके कर लेनी चाहिये।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुष जात चार कहे गये हैं इनमें एक पुरुष ऐसा होताहै जो व्रणकर होताहै, द्रव्यकी अपेक्षा व्रण-घावको करनेवाला होता है, और भावकी अपेक्षा अतिचार करनेवाला होताहै, किन्तु वह व्रण संरोही (रुझानेवाला) नहीं होताहै—द्रव्यकी अपेक्षा औषधिदान आदिसे उसे निरोग अवस्थावाला नहीं करताहै। और भाव की अपेक्षा उन अतिचारोंकी प्रायश्चित्त आदि नहीं लेनेसे शुद्धि नहीं करता है, ऐसा यह प्रथमभङ्ग है। कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो द्रव्यकी अपेक्षासे व्रणको ठीक करता है और भावकी अपेक्षासे अतिचारकी शुद्धि करताहै क्योंकि पूर्वकृत अतिचारोंकी शुद्धि प्रायश्चित्तलेनेसे

ચિકિત્સક એવો હોય છે કે જે વ્રણકર પણ હોતો નથી અને વ્રણસંરક્ષી પણ હોતો નથી. બીજા, ત્રીજા અને ચોથા વિકલ્પોની વ્યાખ્યા પહેલા વિકલ્પની વ્યાખ્યાને આધારે સમજી લેવી.

"चत्तारि पुरिसजाया" — ઇત્યાદિ – પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) કોઇ એક પુરુષ વ્રણકર હોય છે પણ વ્રણસંરોહી હોતો નથી. એટલે કે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વ્રણ (ઘાવ) કરનારો હોય છે અને ભાવની અપેક્ષાએ અતિચાર સેવનારો હોય છે, પરન્તુ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ઔષધિ આદિ દ્વારા તેને રોગરહિત કરનારો હોતો નથી અને ભાવની અપેક્ષાએ પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ દ્વારા તે અતિચારોની શુદ્ધિ કરનારો હોતો નથી. (૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે વ્રણસંરોહી હોય છે પણ વ્રણકર હોતો નથી. એટલે કે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વ્રણને ઔષધિ આદિ દ્વારા રૂઝવનારો હોય છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ દ્વારા અતિચારોની

एवं-एको व्रणसंरोह्यपि व्रणकरोऽपि इति तृतीयः ३, तथा-एको नो व्रणसंरोही नो व्रणकरः । इति चतुर्थः । ४ ।

इत्यात्मचिकित्सकनिरूपणा ।

अथ चिकित्स्यव्रणं दृष्टान्तीकृत्य पुरुषभेदानाह—

" चत्तारिवणा " इत्यादि—व्रणाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः-कश्चिद् व्रणः अन्तःशल्यः-अन्तः-मध्ये शल्यं-यस्यादृश्यमानतया सोऽन्तःशल्यो भवति, किन्तु बहिःशल्यो-बहिः-व्रणस्यान्तर्गताल्पशल्यापेक्षया बहिःप्रदेशे शल्यं यस्य स बहिःशल्यो न भवति इति प्रथमः । १ । तथा-एको बहिःशल्यो भवति

होतीहै किन्तु व्रणकर द्रव्यकी अपेक्षा क्षतकर(घाव करनेवाला)नहीं होता है और भावकी अपेक्षा अतिचार कर नहीं होता है ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है । कोई एक पुरुष ऐसा होताहै, जो व्रण संरोही भी होताहै, और व्रणकर भी होता है ऐसा यह तृतीय भङ्गहै । तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो न व्रणसंरोही होता है और न व्रणकर होता है ४ इस प्रकारसे यह आत्मचिकित्सककी निरूपणा है

अब सूत्रकार चिकित्साके योग्य व्रणको दृष्टान्तभूत करके पुरुष भेदोंका कथन करते हैं—

" चत्तारि वणा " इत्यादि-व्रण चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-कोई एक व्रण ऐसा होता है जो अन्तःशल्यवाला होता है, किन्तु बहिःशल्यवाला नहीं होता है अदृश्यमान होनेसे नहीं दिखलाई पडनेसे-मध्यमें है शल्य-दुःख जिसको ऐसा वह व्रण अन्तःशल्यवाला कहा गया

શુદ્ધિ કરનારો હોય છે પરન્તુ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વ્રણ (ક્ષત-ઘાવ) કરનારો હોતો નથી અને ભાવની અપેક્ષાએ અતિચારનુ સેવન કરનારો પણ હોતો નથી. (૩) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે વ્રણકર પણ હોય છે અને વ્રણસંરોહી પણ હોય છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે વ્રણકર પણ હોતો નથી અને વ્રણસંરોહી પણ હોતો નથી. આ પ્રમાણે આત્મચિકિત્સકનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર ચિકિત્સાને યોગ્ય વ્રણના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા પુરુષ ભેદોનું કથન કરે છે—

" ચત્તારિ વણા " ઇત્યાદિ—વ્રણના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઈ એક વ્રણ (ઘાવ) અન્તઃશલ્યવાળો હોય છે પણ "નો બહિઃ શલ્ય." બહિર્શલ્યવાળો હોતો નથી એટલે કે કોઈ વ્રણ એવો હોય છે કે જે અદૃશ્યમાન હોવાથી અંદરને અંદર વ્યથા કરનારો હોય છે, પણ શરીરના બાહ્ય ભાગમાં પીડા કરનારો હોતો નથી. અથવા કોઈ વ્રણ એવો હોય છે કે જે આંતરિક વેદના ઉત્પન્ન કરનારો હોય છે પણ બાહ્યવેદના ઉત્પન્ન કરનારો

न तु अन्तःशल्यः, इति द्वितीयः । २ । तथा-एकोऽन्तःशल्योऽपि बहिःशल्योऽपि भवति, इति तृतीयः३। तथा-एको नो अन्तःशल्यो न बहिःसल्यः, इति चतुर्थः४।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव-व्रणवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः कश्चित् पुरुषः अन्तःशल्यः-अन्तः-अन्तःकरणवर्ति शल्यम्-अतिचारलक्षणं यस्य स तथा-अनालोचितातिचारो भवति न

है बाहरमें जिसकी वेदना नहीं होती है ऐसा वह व्रण "नो बहिः शल्यः" ऐसा कहा गया है तात्पर्य ऐसा कहा गया है कि कितनेक व्रण ऐसे होते हैं जो भीतरही भीतर दुःख देते हैं-बाहरमें उनकी वेदना नही होती है भीतरमें जितनी वेदना होती है उतनी वेदना बाहरमें-बाहरके स्थानमें नहीं होती है ऐसा यह प्रथमभङ्ग है। कोई एक व्रण ऐसा होता है कि जो बहिःशल्यवाला होता है भीतरमें शल्यवाला नहीं होता है अर्थात् जहां वह होता है उतनेही ऊपरी स्थानमें वह वेदनाकारक होता है, भीतरमें वह वेदनाकारक नहीं होता है ऐसा यह द्वितीय भङ्गहै तथा कोई एक व्रण ऐसा होता है जो भीतर बाहर दोनों स्थानोंमें वेदनाकारी होताहै ऐसा यह तृतीयभङ्ग है। तथा कोई एक व्रण ऐसा होता है जो न भीतरही वेदनाकारी होता है और न बाहरही वेदनाकारी होता है ऐसा यह चौथा भङ्ग है।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—इसी तरहसे पुरुष जात भी चार होतेहैं जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होताहै जो केवल अन्तः शल्यवालाही होता है बहिः शल्यवाला नहीं होता है अर्थात् अतिचार रूप

હોતો નથી. અથવા અધિક આન્તરિક વેદના અને ઓછી બાહ્ય વેદના કરનારો હોય છે. (૨) કોઇ એક વ્રણ એવો હોય છે કે જે બહિર્શલ્યવાળો હોય છે પણ અન્તઃશલ્યવાળો હોતો નથી. એટલે કે શરીરના જે બાહ્ય ભાગમાં વ્રણ પડયો હોય એટલા ભાગમાં જ વેદના ઉત્પન્ન કરનારો હોય છે પણ આંતરિક વેદના ઉત્પન્ન કરનારો હોતો નથી. (૩) કોઇ એક વ્રણ એવો હોય છે કે જે આંતરિક અને બાહ્ય, બન્ને પ્રકારની વેદના ઉત્પન્ન કરનારો હોય છે. (૪) કોઇ એક વ્રણ એવો હોય છે કે જે આંતરિક વેદનાકારી પણ હોતો નથી અને બાહ્ય વેદનાકારી પણ હોતો નથી.

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" ઇત્યાદિ—વ્રણના ચાર પ્રકારો જેવા પુરુષના પણ ચાર પ્રકારો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે કેવળ અન્ત શલ્યવાળો-હોય છે પણ બહિ શલ્યવાળો હોતો નથી એટલે કે અતિચાર

तु बहिःशल्यः-क्रियापरिणतातिचार-आलोचितातिचारो न भवति, इति प्रथमः १, तथा-एको बहिःशल्यो बहिः शल्यमालोचिततया यस्य स तथा-आलोचितातिचारो भवति न तु अन्तःशल्यः-अनालोचितातिचारो भवति, इति द्वितीयः २। तथा-एकोऽन्तःशल्योऽपि-अनालोचितातिचारोऽपि बहिःशल्योऽपि आलोचितातिचारोऽपि भवति, इति तृतीयः ३। तथा-एको नो अन्तःशल्यो न बहिःशल्यः। इति चतुर्थः ४। (२)

शल्य जिसके अन्तःकरणमेंही रहता है बाहरमें नहीं रहता है, बाहरमें तो वह जितनी भी क्रियाएँ करता है उनमें अतिचार नहीं लगाता है अतः ऐसा वह मनुष्य क्रिया परिणत अतिचारवाला नहीं होनेसे आलोचित अतिचारवाला नही होताहै, इस प्रकारका यह प्रथमभङ्गहै। तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो बहिःशल्यवालाही होताहै, अन्तःशल्यवाला नहीं होना है, ऐसा वह पुरुष बाहिरी क्रिया जो अतिचार लगते हैं, उनकी तो आलोचना नहीं करता है, केवल मानसिक अतिचारोंका ही आलोचना करता है ऐसा वह पुरुष द्वितीयभङ्गमें लिया गया है। तथा तीसरे प्रकारका पुरुष ऐसा होता है जो कायिक और मानसिक दोनों प्रकारके भी अतिचारोंकी आलोचना नहीं करता है अर्थात् मानसिक अतिचारोंकी आलोचना नहीं करनेसे अन्तःशल्यवाला भी होता है, और बाहिरी क्रियामें आगत अतिचारोंकी आलोचना नहीं करनेसे बहिःशल्यवाला भी होता है ऐसा वह पुरुष तृतीयभङ्गवाला होता है। तथा चतुर्थभङ्गमें वह पुरुष

રૂપ શલ્ય કેવળ તેના અંતઃકરણમાં જ રહે છે, પણ બહાર રહેતું નથી. એટલે કે તેની બાહ્ય ક્રિયાઓ અતિચાર રહિત હોય છે. તેથી તે મનુષ્ય ક્રિયાપરિણુત અતિચારવાળો નહીં હોવાથી આલોચિત અતિચારવાળો હોતો નથી, આ પ્રકારનો આ પહેલો ભાંગો છે (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે બહિ શલ્યવાળો હોય છે પણ અન્તઃશલ્યવાળો હોતો નથી. એવો પુરુષ બાહ્ય ક્રિયાકાંડોમાં જે અતિચારો લાગે છે તેમની આલોચના તો કરતો નથી, પણ માનસિક અતિચારોની જ આલોચના કરે છે. આ પ્રકારનો પુરુષ બીજા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે. (૩) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે કાયિક અને માનસિક બન્ને પ્રકારના અતિચારોની આલોચના કરતો નથી. એટલે કે માનસિક અતિચારોની આલોચના નહીં કરવાને કારણે તે અંતઃ-શલ્યવાળો પણ હોય છે અને બાહ્ય ક્રિયાકાંડોને લીધે લાગેલા અતિચારોની આલોચના નહીં કરવાને કારણે બાહ્યશલ્યવાળો પણ હોય છે. આ પ્રકારનો પુરુષ ત્રીજા ભાંગાવાળો ગણાય છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે

पुनर्व्रणदृष्टान्तसूत्रम्—

"चत्तारि वणा" इत्यादि—व्रणाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको व्रणः अन्तर्दुष्टः-अन्तः-मध्ये दुष्टः-लूतादि दोषयुक्तो भवति, किंतु न बहिर्दुष्टः-बहिर्व्याप्रोक्तदोषयुक्तो न भवति, इति प्रथमः। १। तथा-एको बहिर्दुष्टो भवति न त्वन्तर्दुष्टः, इति द्वितीयः २, तथा-एकोऽन्तर्दुष्टोऽपि बहिर्दुष्टोऽपि च भवति, इति तृतीयः ३। तथा-एको नो अन्तर्दुष्टो नो बहिर्दुष्टः। इति चतुर्थः ४। (३)

आता है जो न अन्तःशल्यवालाही होता है, और न बहिः शल्यवाला ही होता है, ऐसा पुरुष केवलज्ञानी आत्मा ही होता है।

पुनश्च—"चत्तारि वणा" इत्यादि-व्रण चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे एक अन्तर्दुष्ट नो बहिर्दुष्ट, १ बहिर्दुष्ट नो अन्तर्दुष्ट २ अन्तर्दुष्ट भी और बहिर्दुष्ट भी ३ और न अन्तर्दुष्ट नो बहिर्दुष्ट ४ इनमें प्रथम प्रकारका जो व्रण होता है वह भीतरमें तो लूतादि (वातादि रोग) दोषसे युक्त होता है, पर बाहरमें लूतादि (वातादि रोग) दोषसे युक्त नहीं होता है, द्वितीय प्रकारका जो व्रण होता है वह बाहरमेंही लूतादि दोषसे युक्त है भीतरमें लूतादि दोषसे युक्त नहीं होता है। तृतीय प्रकारका व्रण भीतर बाहर दोनो जगहमें लूतादि दोषसे युक्त रहता है और चौथे प्रकारका व्रण न भीतरमें लूतादि दोषवाला होता है और न बाहरमेंही लूतादि दोषवाला होता है ४

જે અન્તઃશલ્યવાળો પણ હોતો નથી અને બહિઃશલ્યવાળો પણ હોતો નથી. કેવળજ્ઞાની જીવને આ પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે આ ચોથો ભાંગો સમજવો.

"चत्तारि वणा" ઈત્યાદિ—વ્રણના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) અંતર્દુષ્ટ નો બહિર્દુષ્ટ, (૨) બહિર્દુષ્ટ નો અંતર્દુષ્ટ, (૩) અંતર્દુષ્ટ અને બહિર્દુષ્ટ અને (૪) નોઅંતર્દુષ્ટ નોબહિર્દુષ્ટ આ ચારે પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ—પહેલા પ્રકારનો વ્રણ અંદરથી તો વાતાદિક દોષથી યુક્ત હોય છે પણ બહારથી વાતાદિ દોષથી યુક્ત હોતો નથી, બીજા પ્રકારનો જે વ્રણ કહ્યો છે તે બહારથી તો વાતાદિ દોષથી યુક્ત હોય છે પણ અંદરથી વાતાદિ દોષથી યુક્ત હોતો નથી ત્રીજા પ્રકારનો વ્રણ અંદર અને બહાર બન્ને જગ્યાએ વાતાદિ દોષથી યુક્ત હોય છે ચોથા પ્રકારનો વ્રણ બહાર પણ વાતાદિ દોષથી યુક્ત હોતો નથી અને અંદરથી પણ વાતાદિ દોષથી યુક્ત હોતો નથી

अथ दार्ष्टान्तिकपुरुषसूत्रम्—

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—

एवमेव-अणवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः-कश्चित् पुरुषोऽन्तर्दुष्टः शठतया भवति किंतु बहिर्दुष्टो न भवति संगोपिताकारत्वात्, इति प्रथमः १,

तथा—एको बहि र्दुष्टः-केनचित्कारणेन बहिरेवोपदर्शितपारुष्यादित्वाद्दुष्टो भवति किन्तु अन्तर्दुष्टो न भवति, इति द्वितीयः २

तथा—एकोऽन्तर्दुष्टोऽपि बहि र्दुष्टोऽपि च भवति, इति तृतीयः ३।

तथा—एको नो अन्तर्दुष्टो नो बहि र्दुष्टः, इति चतुर्थः । ४ । (४)

पुरुषाधिकारात्पुरुषभेदनिरूपणाय षट्सूत्रीमाह—

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः श्रेयान्-पूर्वमतिशयेन प्रशस्यः-प्रशस्य भावो भवति, तद्बोधसम्पन्न-

---

इसी तरहसे पुरुषजात भी चार होते हैं-जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो शठतासे भीतरमेंही दुष्ट होता है बाहरमें संगोपित आकारवाला होनेसे दुष्ट नहीं होता है, १ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो किसी कारणवश बाहरसेही कठोरता आदि दिखानेसे दुष्ट होता है भीतरसे दुष्ट नहीं होताहै २, कोई एक पुरुष ऐसा होताहै, जो भीतरसेभी दुष्ट होताहै, और बाहरसे भी दुष्ट होताहै, ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होताहै जो न भीतरसे दुष्ट होताहै और न बाहरसेही दुष्ट होताहै४।

षट् सूत्री द्वारा पुरुषभेद निरूपण--

" चत्तारि पुरुषजाया " इत्यादि-पुरुषजात चार कहे गये हैं जैसे-एक श्रेयान् श्रेयान १ श्रेयान पापीयान् २ पापीयान श्रेयान् ३ और

એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે તેની આંતરિક શઠતાને કારણે અન્તર્દુષ્ટ હોય છે પણ મૃદુભાવયુક્ત મુખાકૃતિને કારણે બહિર્દુષ્ટ હોતો નથી. (૨), કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જેની મુખાકૃતિ જ કઠોર હોય છે પણ તેનું અંતઃકરણ દુષ્ટતાયુક્ત હોતું નથી. (૩) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે અન્તર્દુષ્ટ પણ હોય છે અને બહિર્દુષ્ટ પણ હોય છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે અન્તર્દુષ્ટ પણ હોતો નથી અને બહિર્દુષ્ટ પણ હોતો નથી. બાકીના ભાંગાઓનું સ્પષ્ટીકરણ પહેલા ભાંગાને આધારે સમજી લેવું.

છ સૂત્રો દ્વારા પુરુષ ભેદોનું નિરૂપણ—

" चत्तारि पुरिसजाया " પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે (૧) " श्रेयान्-श्रेयान् " કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સદ્બોધ

त्वात, स एव पुनः पश्चादपि श्रेयान् प्रशस्ताचरणत्वाद्भवति साधुवत् इति प्रथमः १। तथा-एकः-श्रेयान्-पूर्वं प्रशस्यभावो भवति स एव पश्चात् तु पापीयान् भवति अविरतत्वेन दुष्क्रियाऽव्यसनित्वात्, इति द्वितीयः २। तथा-एकः पापीयान्-शैवतो मिथ्यात्वादिभिरुपहतत्वादतिशयेन पापः-पापकर्मवासनावासितान्तःकरणो भवति, स एव केनापि करणेन सदाचारित्वाच्छ्रेयान्-प्रशस्यभावो भवति, उदायिनृपघातकवत् इति तृतीयः। ३। तथा-एकः पूर्वमपि पापीयान् पश्चादपि पापीयानेव भवति, इति चतुर्थः। ४।

पापीयान् पापीयान् ४ इनमें प्रथम प्रकारका जो पुरुष होता है, वह सद्बोधयुक्त होनेसे पहिलेसे ही प्रशस्य भाववाला होता है और अन्ततक भी प्रशस्त आचरणवाला बना रहनेसे साधुकी तरह प्रशस्त भाववाला बना रहता है। दूसरे प्रकारका जो पुरुष होता है वह पहिले तो प्रशस्य भाववाला होता है और बादमें निमित्तवश दुष्क्रिया आदिमें फंस जानेके कारण अविरतियुक्त हो जानेसे अत्यन्त पापी बन जाता है। तृतीय प्रकारका जो पुरुष होता है वह पहिले तो अत्यन्त पापी होता है-मिथ्यात्व आदि भावोंसे आहत होनेके कारण पापकर्मों की वासनासे अतिशय दूषित अन्तःकरणवाला होताहै, पर बादमें वही किसी निमित्तवश सदाचारी बन जानेसे प्रशस्त भाववाला हो जाताहै, जैसे उदायि राजाको मारनेवाला पुरुष ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता जो अपने जीवन में पहिलेभी पापी रहताहै और बादमें भी पापी बना रहताहै ४ अथवा-

---

युक्त होवाथी पहेलां पण प्रशस्यभावयुक्त होय छे अने पाछळथी पण (आजीवन) प्रशस्त आचरणवाळो ज रहेवाने कारणे साधुना जेवा प्रशस्त भाववाळो ज चालु रहे छे (२) "श्रेयान्-पापीयान्" कोई एक पुरुष पहेलां तो प्रशस्त भाववाळो होय छे पण पाछळथी कोई पण कारणे दुष्क्रिया आदिमां लपटाई जवाथी अविरतियुक्त थई जवाथी अत्यंत पापी बनी जाय छे. (३) "पापीयान्-श्रेयान्" कोई एक पुरुष पहेलां घणो ज पापी होय छे-मिथ्यात्व आदि भावोथी युक्त थइ जवाने कारणे पापकर्मोनी वासनाथी अतिशय दूषित अन्तःकरणवाळो होय छे, पण पाछळथी कोइ सद्बोध आदि निमित्त मळवाथी सदाचारी बनी जवाथी प्रशस्त भाववाळो बनी जाय छे. उदायी नृपने मारनारा पुरुषनी माफक. (४) "पापीयान्-पापीयान्" कोइ पुरुष पोताना जीवनमां पहेलां पापी होय छे अने पछी पण पापी ज रहे छे.

यद्वा-एकः पुरुषः पूर्वं गृहस्थत्वे वा गृहतो निष्क्रमणकाले श्रेयान् भवति, स एव पुनः प्रव्रज्यायां वा विहारसमये श्रेयान्-प्रशस्यभावो भवति, इति प्रथमः । १ । तथा-एकः पूर्वं-गृहस्थत्वे वा निष्क्रमणकाले पापीयान् भवति स एव पुनः प्रव्रज्यायां वा विहारकाले श्रेयान् भवति इति द्वितीयः । २ । एवं भङ्गद्वयमपि योजनीयम् । ४ । (१)

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषो भावतः श्रेयान् भवति, द्रव्यतस्तु श्रेयान्-अतिप्रशस्य इति. इत्येवं बुद्धिजनकतया सदृशकः-श्रेयसा तुल्यो न तु सर्वथाऽतिप्रशस्य एव भवतीति

कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले गृहस्थावस्थामें अथवा गृहसे निष्क्रमण (दीक्षा) कालमें जैसे प्रशस्यभावों युक्त होता है, वैसेही प्रशस्य भावोंसे युक्त होता है, वसेही प्रशस्त भावोंसे युक्त वह प्रव्रज्यामें या विहार समयमें बना रहता है, ऐसा यह प्रथमभङ्ग है । तथा कोई एक ऐसा होता है जो पहिले गृहस्थावस्थामें या निष्क्रमणकालमें अतिशय पापी होता है वही बादमें प्रव्रज्यामें या विहारकालमें प्रशस्त भाववाला हो जाता है ऐसा यह द्वितीयभङ्ग है । इसी तरहसे शेष दो भङ्गोंको भी समझ लेना चाहिये १

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-पुनश्च-पुरुष चार कहे गये हैं जैसे इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो भावकी अपेक्षा श्रेयान् प्रशस्त होता है पर द्रव्यकी अपेक्षा तो वह " अतिप्रशस्त है " ऐसी बुद्धिका जनक होनेसे प्रशस्त तुल्य होता है अति प्रशस्तके जैसा होता

અથવા આ ચાર ભાંગાનો નીચે પ્રમાણે અર્થ પણ થઇ શકે છે-(૧) કોઇ એક પુરુષ ગૃહસ્થાવસ્થામાં અથવા દીક્ષા અંગીકાર કરતી વખતે પ્રશસ્ત ભાવોથી યુક્ત હોય છે અને ત્યાર બાદ પોતાના સમસ્ત દીક્ષાકાળમાં પણ પ્રશસ્ત ભાવોથી જ યુક્ત રહે છે. (૨) કોઇ એક પુરુષ પોતાની ગૃહસ્થાવસ્થામાં અતિશય પાપી હોય છે પણ પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કર્યા બાદ પોતાની શ્રમણુપર્યાયમાં પ્રશસ્ત ભાવયુક્ત જ રહે છે. એ જ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગા પણ સમજી લેવા.

" ચત્તારિ પુરિસજાયા "-પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભાવની અપેક્ષાએ શ્રેયાન્ (પ્રશસ્ય) હોય છે, અને દ્રવ્યની અપેક્ષાએ " આ માણસ અતિ પ્રશસ્ત છે " આ પ્રકારના ભાવનો જનક હોવાથી અતિ પ્રશસ્ત જેવો લાગે છે-સર્વથા અતિ

प्रथमः । १ । तथा-एको भावतः श्रेयान् भवन्नपि द्रव्यतः पापीयान्=अति पाप इति-इत्येवं बुद्धिजनकतया-सदृशकः-पापीयसा तुल्यो न तु सर्वथाऽतिपाप एव भवतीति द्वितीयः । २ । तथा-पापीयान्नामैकः श्रेयानिति सदृशकः एकः पापीयान्-भावतोऽतिपापो भवन्नपि संगोपिताकारतया श्रेयानिति-अतिप्रशस्य इत्याकारकबुद्धिजनकतया सदृशकः श्रेयसा पुरुषेण तुल्यो न तु श्रेयान् भवति, इति तृतीयः ३। तथा-एकः पापीयान् पापीयानिति सदृशकः अयं भावतो द्रव्यतश्च पापीयानेव भवति । इति चतुर्थः ४ (२)

है सर्वथा अति प्रशस्तही नहीं होता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है-जो भावकी अपेक्षा श्रेयान् प्रशस्त होता हुआ भी द्रव्यकी अपेक्षा पापीयान्-" अतिपापी है " इस प्रकारकी बुद्धिका जनक होनेसे सदृशक-पापीयसा तुल्य होता है अतिपापीके जैसा होता है-सर्वथा अतिपापीही नहीं होता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो भावकी अपेक्षा अतिपापी होता हुआ भी अपने आकारको छिपानेवाला होनेसे " यह अतिप्रशस्त है " इस प्रकारकी बुद्धिका जनक होनेसे अति प्रशस्तके जैसा होताहै, अति प्रशस्त नहीं होता है ३तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो भावकी अपेक्षा अतिपापी होता हुआ भी " यह अतिपापी है " इस प्रकारकी बुद्धिका जनक होनेसे अतिपापी जैसा होता है सर्वथा अतिपापी नहीं होता है, यह भावकी अपेक्षासे और द्रव्यकी अपेक्षासे दोनों अपेक्षासे अतिशय पापीही होता है ४

પ્રશસ્ય હોતો નથી. (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભાવની અપેક્ષાએ શ્રેયાન્ (પ્રશસ્ય) હોવા છતાં પણ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ "પાપીયાન્" "આ માણુસ અતિ પાપી છે", આ પ્રકારના ભાવનો જનક હોવાથી અતિ પાપી જેવો હોય છે-સર્વથા અતિપાપી હોતો નથી.

(૩) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભાવની અપેક્ષાએ અતિપાપી હોવા છતાં પણ પોતાના મનોભાવને મુખ પર પ્રકટ નહીં થવા દેવાને કારણે "આ માણુસ અતિ પ્રશસ્ય છે" આ પ્રકારના ભાવનો જનક હોવાથી અતિ પ્રશસ્ય જેવો લાગે છે પણ ખરી રીતે અતિ પ્રશસ્ય હોતો નથી. (૪) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભાવની અપેક્ષાએ અતિપાપી હોય છે, અને પોતાના મનોભાવોને છૂપાવી નહીં શકવ ને કારણે "આ માણુસ અતિ પાપી છે," આ પ્રકારના ભાવોનો જનક હોવાથી અતિ પાપી જેવો લાગે છે-સર્વથા અતિપાપી હોતો નથી. તે માણુસ ભાવની અપેક્ષએ પણ અતિપાપી હોય છે અને દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ અતિપાપી જ હોય છે.

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-स्पष्टम्-नवरम्-एकः श्रेयान्-अतिप्रशस्यभावो भवति सद्वृत्तत्वात्तस्मादहं श्रेयान्-प्रशस्यभावोऽस्मीत्यात्मानं मन्यते, यथावद्‍बोधात्, यद्वा-प्रशस्यतराचरणात् स श्रेयानिति लोकेन मन्यते=स्वीक्रियते, अस्मिन् पक्षे कर्मणि प्रत्यये यक्। प्रथमपक्षे तु देवादिकः श्यन् कर्तरि, इति प्रथमः १। एकः श्रेयान् भवन्नपि आत्मन्यरुचितत्परत्वात् पापीयानहमित्यात्मानं मन्यते-स्वीकरोति, यद्वा-श्रेयान् सन्नपि लोकेन पूर्वलब्धतद्दोषेण पापीयानिति-मन्यते-स्वीक्रियते, दृढप्रहारिचोरवत्। इति द्वितीयः २। तथा-एकः पापीयान्-पापतरोऽपि मिथ्यात्वाद्युपहततयाऽहं श्रेयान्=अति प्रशस्योऽस्मीत्यात्मानं मन्यते-

---

पुनश्च—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-स्पष्ट है इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अतिशय प्रशस्त (अच्छे) भाववाला होता है क्योंकि यह सद्‍वृत्तवाला होता है, इसलिये मैं प्रशस्त भाववाला हूं इस प्रकारसे अपनेको यथावद्‍बोधसे मानता है अथवा-अतिप्रशस्त आचरणवाला होनेसे वह अतिशय प्रशस्तभाववाला है, ऐसा लोकों द्वारा स्वीकार किया जाता है १ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अति प्रशस्त भाववाला होता हुआ भी अपनेमें अरुचिवाला होनेसे मैं अति-पापी हूं " ऐसा अपने आपको मानता है अथवा अति प्रशस्त भाववाला होता हुआ भी यह लोकों द्वारा पूर्वके प्राप्त उसके दोषसे "यह अतिपापी है " ऐसा स्वीकार किया जाता है २ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अतिपापी होता हुआ भी मिथ्यात्व आदि दोषोंसे उपहत होनेके कारण मैं अति प्रशस्त हूं ऐसा अपने आपको मानता है,

---

"चत्तारि पुरिसजाया" ઇત્યાદિ-પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) કોઇ પુરુષ સદ્‍વૃત્તિવાળો હોવાને કારણે અતિશય પ્રશસ્ત ભાવ વાળો હોય છે. તે પોતે એમ માનતો હોય છે કે "હું પ્રશસ્ત ભાવવાળો છું" અને તેનું પ્રશસ્ત આચરણ જોઈને લોકો પણ એમ કહેતા હોય છે કે "આ માણસ અતિશય પ્રશસ્ત ભાવવાળો છે" (૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે અતિશય પ્રશસ્ત ભાવવાળો હોવા છતાં પણ પોતે એમ માને છે કે "હું અતિશય પાપી છું" અથવા તે અતિશય પ્રશસ્ત ભાવ-વાળો હોવા છતાં પણ તેના પૂર્વ જીવનના દોષોને કારણે લોકો એમ કહેતા હોય છે કે "આ માણસ અતિપાપી છે."

(૩) કોઇ માણસ અતિપાપી હોય છે, પણ મિથ્યાત્વ આદિ દોષોથી યુક્ત હોવાને કારણે એમ માનતો હોય છે કે "હું અતિશય પ્રશસ્ય છું"

स्वीकरोति, कुतीर्थिकवत्, यद्वा—पापिष्ठजनसेवकेन पापीयानपि श्रेयानिति मन्यते लोकेन। इति तृतीयः। ३।

तथा—एकः पापीयान्—अविरतत्वात्, पापीयानहमित्यात्मानं मन्यते सद्बोधात्, यद्वा—एकः पापीयान् अविरतत्वात् संयतलोकेन पापीयानिति=असंयत इति मन्यते—स्वीक्रियते। इति चतुर्थः (३)

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषः श्रेयान्—भावतोऽतिप्रशस्यः, द्रव्यतस्तुकिञ्चित्सदनुष्ठायित्वात् श्रेयानिति—प्रशस्यतरोऽयमित्येवं विकल्पजनकतया सदृशकः—श्रेयसा पुरुषेण तुल्यो

जैसा कुतीर्थिक अपने आपको अति प्रशस्त मानता है अथवा—पापिष्ट जनकी सेवा करनेवाले लोकके द्वारा अतिपापी भी श्रेयान्—अति प्रशस्य भाववाला माना जाता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अविरति होनेसे अतिपापी होता है, और मैं अतिपापी हूं, ऐसा सद्बोधसे अपनेको मानता है अथवा—अविरति होनेसे अति पापी बना हुआ वह संयतजन द्वारा यह पापीहै असंयतहै ऐसा स्वीकार किया जाताहै ४

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुरुष जात चार कहे गये हैं—इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो श्रेयान् भावकी अपेक्षा अति प्रशस्य होता है पर द्रव्यकी अपेक्षा किञ्चित् सदनुष्ठायी होनेसे अर्थात् सदनुष्ठान करनेवाला होनेसे—"यह प्रशस्यतरहै" ऐसा विकल्प उत्पन्न कर देता है सो इस विकल्पका जनक होनेसे लोक उसे ऐसा जानते,

---

જેમ કે કુતીર્થિક પોતાને અતિપ્રશસ્ય માને છે. અથવા—પાપીજનની સેવા કરનારા લોકો તેને પાપી માનવાને બદલે અતિ પ્રશસ્ય ભાવવાળો માનતા હોય છે. (૪) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે અવિરતિથી યુક્ત હોવાને કારણે અતિપાપી હોય છે અને સદ્બોધને કારણે તે પોતાને અતિ પાપી જ માનતો હોય છે અથવા અવિરતિને કારણે અતિ પાપી બનેલા તે જીવને વિષે સંયત માણુસો આ પ્રમાણે માનતા હોય છે—"આ માણુસ અસંયત છે—અતિ પાપી છે."

"ચત્તારિ પુરિસજાયા" ઇત્યાદિ—પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે શ્રયાન્ ભાવસંપન્ન હોવાને લીધે ભાવની અપેક્ષાએ અતિપ્રશસ્ય હોય છે અને દ્રવ્યની અપેક્ષાએ થોડા ઘણા સદનુષ્ઠાન કરનારો હોવાથી "આ માણુસ પ્રશસ્યતર છે," એવું લોકો કહેતા હોય છે. એટલે કે તેને અતિપ્રશસ્ય પુરુષ જેવો ગણુતા હોય

जनेन मन्यते-ज्ञायते, यद्वा-महाशक्रमात्मानं मन्यते, स्वयम्, । इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा-एकः श्रेयान् पापीयानिति सदृशको मन्यते २, तथा-एकः पापीयान् श्रेयानिति सदृशको मन्यते ३, एकः पापीयान् पापीयानिति सदृशको मन्यते ४, एते त्रयोऽपि भङ्गाः प्रथमभङ्गमनुसृत्य विज्ञेयाः (४)

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः आख्यायकः-प्रवचनोपदेष्टा भवति, किन्तु परिभावयिता-शासनस्य प्रभावको न भवति उदारक्रिया-प्रतिभाप्रभृतिरहितत्वात् ।

यद्वा—'परिभावइत्ते' त्यस्य 'परिभाजयिते=तिच्छाया, तत्पक्षे प्रवच-

---

हैं कि यह अति प्रशस्य पुरुषके जैसा है अथवा वह स्वयं आपको मैं अति प्रशस्य पुरुष हूं ऐसा मानता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो श्रेयान्-भावकी अपेक्षा अति प्रशस्य होता है, पर अपनेको मैं अतिपापी जैसा हूं ऐसा मानता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पापीयान अतिपापी होता हुआ भी अपनेको श्रेयान् अति प्रशस्य भाववालेके जैसा मानता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अतिपापी होता हुआ भी अपनेको अतिपापी जैसा मानता है ४

फिरभी—"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुरुष जात चार कहे गये हैं-जैसे कोई एक पुरुषऐसा होताहै जो आख्यायक-प्रवचनका उपदेशक होता है परन्तु वह परिभावयिता-शासनका प्रभावक नहीं होताहै क्योंकि वह उदार क्रिया-प्रतिभा आदिसे रहित होता है अथवा "परिभावइत्तो" इसकी संस्कृतच्छाया-"परिभाजयति" ऐसी भी

છે. અથવા તો પોતે એમ માનતો હોય છે કે "હું અતિપ્રશસ્ય છું" (૨) કોઈ એક પુરુષ શ્રેયાન્-ભાવની અપેક્ષાએ અત્યંત પ્રશસ્ય હોય છે, છતાં પોતે એમ માનતો હોય છે કે "હું અતિ પાપી છું" (૩) કોઇ એક પુરુષ પાપીયાન-અતિપાપી હોય છે, છતાં તે એમ માનતો હોય છે કે "હું શ્રેયાન્-અતિ પ્રશસ્ય ભાવવાળો છું."

(૪) કોઈ એક માણસ અતિપાપી હોય છે અને તે પોતે પણ એમ જ માને છે કે 'હું અતિ પાપી છું'"

"चत्तारि पुरिसजाया" ઈત્યાદિ—પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) કોઈ એક પુરુષ આખ્યાયક હોય છે એટલે કે પ્રવચનનો ઉપદેષ્ટા હોય છે, પણ તે પરિભાવયિતા હોતો નથી-એટલે કે તે શાસનનો પ્રભાવક હોતો નથી કારણ કે તે ઉદાર ક્રિયા-પ્રતિભા આદિથી રહિત હોય છે. અથવા-"परिभावइत्ते" આ પદની સંસ્કૃત છાયા "परिभाजयति" લેવામાં

नार्थस्य नयोत्सर्गापवादादिद्वारेण विवेचयिता न भवति, इति ।

यद्वा—आख्यायकः-सूत्रस्योपदेशकः, स भवति किन्तु न परिभावयिता-सूत्रार्थस्य न विचारयिता, यद्वा-सूत्रार्थस्य न परिभाजयिता-विवेचयिता न भवतीत्यर्थः, इति प्रथमः । एवं शेषभङ्गत्रयं बोध्यम् । ४ । (५)

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि— पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः आख्यायकः-सूत्रार्थस्योपदेशको भवति, किन्तु नो उ छजीविकासम्पन्नः-एषणादिनिरतो न भवति, स चापद्गतः संविग्नः संविग्नपाक्षिको वा, यदुक्तम्—

"होज्ज उ वसणं पत्तो, सरीरदुब्बलयाए असमत्थो ।
चरणकरणे असुद्धे, सुद्धं मग्गं परूवेज्जा ॥ १ ॥

होती है तब इस पक्षमें इसका अर्थ ऐसा होता है, कि वह प्रवचनके अर्थका नय मार्गसे एवं उत्सर्ग और अपवाद आदि मार्गसे विवेचक नहीं होता है, अथवा-आख्यायक होता है सूत्रका वह उपदेशक होता है पर सूत्रार्थका वह विचारक नहीं होता है अथवा सूत्रार्थका वह परिभाजयिता-विवेचन करनेवाला नहीं होता है ऐसा यह प्रथम भङ्ग है इसी तरह शेष तीन भङ्ग भी जानना चाहिये ५

फिरभी—"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुरुष जात चार कहे गये हैं-जैसे इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो आख्यायक-सूत्रार्थका उपदेशक होताहै किन्तु वह उञ्छजीविकासम्पन्न एषणादि दोष टालनेमें तत्पर नहीं होताहै ऐसा वह पुरुष या तो आपत्तिमें पड़ा हुआ संविग्न (वैराग्यवाला) होता है या संविग्न पाक्षिक होता है-उक्तं च-

આવે તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-" તે પ્રવચનના અર્થનો નય-માર્ગથી અને ઉત્સર્ગ તથા અપવાદ આદિ માર્ગથી વિવેચક હોતો નથી. અથવા-તે સૂત્રનો ઉપદેશક હોય છે પણ સૂત્રાર્થનો વિચારક હોતો નથી. અથવા-તે સૂત્રનો ઉપદેશક હોય છે પણ પરિભાજયિતા (વિવેચન કરનારો) હોતો નથી. આ પ્રકારનો આ પહેલો ભાગો સમજવો એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજવા

" चत्तारि पुरिसजाया " ઈત્યાદિ—પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ આખ્યાયક હોય છે-પ્રવચનનો ઉપદેશક હોય છે, પણ ઉંછજીવિકાસંપન્ન હોતો નથી એટલે કે એષણાદિનિરત હોતો નથી, એવો તે પુરુષ કાંતો આપદગ્રસ્ત સંવિગ્ન (વૈરાગ્યવાળો) હોય છે, અથવા તો સવિગ્નપાક્ષિક હોય છે. કહ્યુ પણ છે કે-

तथा—" ओसन्नोऽवि विहारे कम्मं सिढिलेइ सुलहबोही य ।
चरणकरणं विसुद्धं उववूहंतो परूवेंतो ॥ २ ॥ "

छाया—भवेद् हि व्यसनं प्राप्तः शरीरदुर्बलतया असमर्थः ।
चरणकरणे अशुद्धे शुद्धं मार्गं प्ररूपयेत् ॥ १ ॥

तथा—अवसन्नोऽपि विहारे कर्म शिथिलयति सुलभबोधिश्च ।
चरणकरणं विशुद्धम्, उपबृंहयन् प्ररूपयन् । २ । " इति,

इति प्रथमः १।

तथा—एक उञ्छजीविकासम्पन्नो भवति, नत्वाख्यायकः, स च यथाच्छन्द', इति द्वितीयः २। तथा-एकः आख्यायकोऽपि उञ्छजीविकासम्पन्नोऽपि, स च

" होज्ज उ वसणं पत्तो " इत्यादि ।

तात्पर्य इन गाथाओंका यही है जो संविग्न व्यसनग्रस्त-कष्ट प्राप्त होता है या शरीरसे दुर्बल होनेके कारण असमर्थ हो जाता है उसके चरणकरण अशुद्ध हो जाते हैं, अवसन्न भी विहारमें अपने कर्तव्यमें शिथिल हो जाता है पर उसकी बोधि शिथिल नहीं होती है वह चरण-करणकी विशुद्धिको बढानेकी चेष्टामें रहता है और शुद्ध मार्गकी प्ररूपणा करता है १

तथा कोई एक मनुष्य ऐसा है जो उञ्छजीविकासम्पन्न होता है-एषणादि निरत होताहै, पर वह आख्यायक (प्रवचनका उपदेशक) नहीं होता है-ऐसा वह यथाच्छन्द होता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो आख्यायक भी होता है और उञ्छजीविकासंपन्न भी होता है ऐसा वह साधु होता है ३, तथा कोई एक ऐसा पुरुष होता है,

---

"होज्ज उ वसणं पत्तो"ઈત્યાદિ આ ગાથાઓનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-જે સંવિગ્ન વ્યસનગ્રસ્ત અથવા આપદ્‌ગ્રસ્ત હોય છે, અથવા શરીરની કમજોરીને કારણે અશક્ત થઇ ગયો હોય છે, તેના ચરણકરણ અશુદ્ધ થઇ જાય છે, એવો સાધુ પોતાના શ્રમણને યોગ્ય કર્તવ્યપાલનમાં પણ શિથિલ બની ગયો હોય છે, પરન્તુ તેની બોધિ શિથિલ થતી નથી, તેથી તે ચરણકરણની વિશુદ્ધિ વધારવાની ચેષ્ટા કર્યા કરે છે અને શુદ્ધ માર્ગની પ્રરૂપણા કરે છે (૧)

કોઇએક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ઉંછજીવિકાસંપન્ન હોય છે-એષણાદિ નિરત હોય છે, પણ તે આખ્યાયક (પ્રવચનનો ઉપદેશક) હોતો નથી એવો પુરુષ યથાચ્છંદ હોય છે (૨) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે આખ્યાયક પણ હોય છે અને ઉંછજીવિકાસંપન્ન પણ હોય છે એવો જીવ સાધુ હોય છે. (૩)

साधुः। इति तृतीयः ३। तथा–एको नो आख्यायको नो उञ्छजीविकासम्पन्नः, स च गृहस्थादिः. इति चतुर्थः। ४। (६)

इति षट्सूत्री—

पूर्वमुञ्छजीविकासम्पन्नः साधुपुरुष उक्तः, तस्य च वैक्रियलब्धिमतः प्रयोजनवशाद् वृक्षं विकुर्वतो यादृशी वृक्षविक्रिया स्यात्तामाह–" चउव्विहे " त्यादि—

यद्वा – पूर्वसूत्रे साधुपुरुषस्याख्यापकत्वोञ्छजीविकासम्पन्नत्वरूपविभूषणमुक्तं सम्प्रति तत्तुल्यत्वाद् वृक्षविभूषणमाह–"चउव्विहे" त्यादि–चतुर्विधा वृक्षविकुर्वणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-प्रवालतया १, पत्रतया २, पुष्पतया ३, फलतया च ४॥सू०६॥

जो न आख्यायक होताहै और न उञ्छजीविका सम्पन्नही होताहै४–६ इस प्रकारसे यह षट्सूत्री है उञ्छजीविकासम्पन्न साधुपुरुष कहा गया है–सो इनमें जो वैक्रियलब्धिसम्पन्न होता है, वह प्रयोजनवश वृक्षकी भी विकुर्वणा कर सकता है तब उसकी जैसी वृक्षविक्रिया होती उसको अब सूत्रकार "चउव्विहे" इत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट करते हैं

यद्वा—पूर्वोक्त सूत्रमें साधु पुरुषको आख्यापक और उञ्छजीविकासम्पन्न इन दो विभूषणोंसे युक्त प्रकट किया गया है सो अब तत्तुल्य होनेसे वृक्षके विभूषण सूत्रकार कहते हैं—

वृक्ष विकुर्वणा चार प्रकारकी कही गई है जैसे–एक प्रवालरूप दूसरी पत्ररूप तीसरी पुष्परूप और चौथी फल रूप ॥सू०६॥

કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આખ્યાયક પણ હોતો નથી અને ઉંછજીવિકાસંપન્ન પણ હોતો નથી. ॥૪–૬॥

આ પ્રકારે છ સૂત્રો દ્વારા અહીં પુરુષપ્રકારોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે સાધુ પુરુષને ઉંછજીવિકાસંપન્ન કહેવામાં આવેલ છે. જે સાધુ વૈક્રિયલબ્ધિસંપન્ન હોય છે તે કોઇ પ્રયોજન ઉદ્ભવવાથી વૃક્ષની વિકુર્વણા પણ કરી શકે છે. ત્યારે તેના દ્વારા જે વૃક્ષવિક્રિયા થાય છે તેનું સૂત્રકાર " ચઉવ્વિહે " ઈત્યાદિ સૂત્ર દ્વારા કથન કરે છે–અથવા પૂર્વોક્ત સૂત્રમાં સાધુપુરુષને આખ્યાપક અને ઉંછજીવિકાસંપન્ન, આ બે વિશેષણોથી યુક્ત પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. વૃક્ષ સાધુસમાન હોવાથી હવે સૂત્રકાર વૃક્ષવિકુર્વણાના ચાર પ્રકારની પોતે પ્રરૂપણ કરે છે—

(૧) પ્રવાલ (કોપળ) રૂપ વિકુર્વણા, (૨) પત્રરૂપ વિકુર્વણા, (૩) પુષ્પરૂપ વિકુર્વણા અને (૪) ફલરૂપ વિકુર્વણા ॥સૂ ૬॥

पूर्वं वृक्षविभूषणं प्रोक्तं, धर्मस्य विभूषणं तीर्थिका भवन्तीति तत्स्वरूपं निरूपयितुमाह--

मूलम्---चत्तारि वाइसमोसरणा पण्णत्ता, तं जहा-किरियावाई १, अकिरियावाई २, अन्नाणियावाई ३, वेणइयावाई ४। ॥ सू० ७ ॥

छाया---चत्वारि वादिसमवसरणानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-क्रियावादिनः १, अक्रियावादिनः २, अज्ञानिकवादिनः ३, वैनयिकवादिनः ४ ॥ सू० ७ ॥

टीका---"चत्तारि वाइसमोसरणा" इत्यादि-वादिसमवसरणानि-वादिनः-वादि-१ प्रतिवादि-२ सभ्य-३ सभापति-४ रूपायां चतुरङ्गायां सभायां परमतखण्डनपूर्वकं स्वमतस्थापनार्थमवश्यं वादोऽस्त्येषामिति तथा, निरुपमवादिलब्धिस-

वृक्ष विभूषण कहकर अब सूत्रकार "धर्मके विभूषण तीर्थिक होते हैं" इस कारण उनके स्वरूपका निरूपण करते हैं---

"चत्तारि वाइसमोसरणा पण्णत्ता" इत्यादि सूत्र ७ ॥

वादि समवसरण चार कहे गये हैं-जैसे एक क्रियावादीका एक अक्रियावादीका एक अज्ञानिकवादीका और एक वैनयिकवादीका वादी प्रतिवादी, सभ्य और सभापतिरूप चारप्रकारकी सभामें जो परमतको खण्डन करते हुए अपने मतकी स्थापना अवश्य करताहै उसका नाम वाद है अर्थात् चतुरङ्ग चार प्रकारकी सभामें परमत खण्डनपूर्वक जो स्वमत स्थापनहै उसका नाम वादहै इस प्रकारका वाद जो करताहै वह वादी निरूपम वादि लब्धिवाला होता है अतः वाचालवादि वृन्द भी वाग्वैभवको

વૃક્ષવિભૂષણનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર ધર્મના વિભૂષણ રૂપ તીર્થિકોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે-"चत्तारि वाइसमोसरणा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ-સૂ. ૭

વાદિસમવસરણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-ક્રિયાવાદીનું (૨) અક્રિયાવાદીનું, (૩) અજ્ઞાનિકવાદીનું અને (૪) વૈનયિકવાદીનું

વાદી, પ્રતિવાદી, સભ્યો અને સભાપતિ રૂપ ચતુરંગ સભામાં જે પરમતનું ખંડન કરીને પોતાના મતની અવશ્ય સ્થાપના કરે છે તેનું નામ વાદી છે. એટલે કે ચતુરંગ સભામાં પરમતના ખંડન પૂર્વક સ્વમતનું સ્થાપન કરવા માટેનો જે વિવાદ ચાલે છે તેનું નામ વાદ છે. આ પ્રકારનો વાદ કરનાર વ્યક્તિને વાદી કહે છે તે વાદી નિરૂપમ વાદિલબ્ધિસંપન્ન હોય છે તેથી વાચાલ વાદિવૃન્દ પણ તેના વાગ્વૈભવને મન્દ પાડી શકતું નથી એટલે કે તેના મતનું ખંડન કરવાને કોઈ સમર્થ હોતું નથી. એવા વાદી તરીકે

स्पन्नत्वेन वाचालवादिवृन्दैरप्यमन्दीकृतवाग्विभवाः, ते चात्र तीर्थिकाः, ते समवसरन्ति-सम्यगवतरन्ति-समुपस्थिता भवन्ति एष्विति समवसरणानि, वादिनां समवसरणानि वादिसमवसरणानि-वादिसमुपस्थितिस्थानानि, तेषां तदाश्रयिणां चाभेदोपचाराद्वादिसमवसरणपदेनेहवादिनो गृह्यन्ते, तानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि। वादिनश्चत्वारः प्रज्ञप्ता इति चातुर्विध्यमेवाह—'तद्यथे' त्यादि-क्रियावादिनः क्रियां - जीवाजीवादिपदार्थोऽस्तीत्याकारिका - जीवाजीवादिपदार्थसत्तात्मिकां वदन्तीत्येवं शीलाः क्रियावादिनः-आस्तिकाः १, अक्रियावादिनः-न क्रियावादिनः-क्रियावादिविपरीता नास्तिकाः २, अज्ञानिकवादिनः-अज्ञानं स्वीकरणीयतयाऽस्त्येषामित्यज्ञानिकास्त एव वादिनोऽज्ञानिकवादिनः=अज्ञानमेवातिप्रशस्यमित्येवं प्रतिज्ञाकारिणः ३, तथा-वैनयिकवादिनः-विनयः-विनयनं कर्मापनयनं,

---

मन्द नहीं कर सकते हैं ऐसे वादी यहां तीर्थिक लिये गये हैं, ये जहां पर समुपस्थित होते हैं वे वादिसमवसरण हैं अर्थात् वादि जनोंकी जो उपस्थितिके स्थान हैं वे वादिसमवसरण हैं परन्तु यहां वादि समवसरण पदसे उन स्थानोंको ग्रहण नहीं किया गया है किन्तु उन स्थानोंमें और वादिजनोंमें अभेद सम्बन्धके उपचारसे वादि जनोंकोही ग्रहण किया गया है इस तरह वादिसमवसरणहै वादिजन चार प्रकारके क्रियावादी आदिके भेदसे प्रकट किये गये हैं, जो जीव अजीव आदि पदार्थोंकी "अस्ति" इस रूप क्रियाको-जीव अजीव आदि पदार्थोंकी सत्तात्मक स्थितिको कहनेके स्वभाववाले हैं वे क्रियावादी हैं अर्थात् आस्तिकजन क्रियावादी हैं इनसे विपरीत अक्रियावादी हैं वे अक्रियावादी नास्तिक हैं। अज्ञानही अतिप्रशंसनीयहै इस प्रकारसे

અહીં તીર્થિકને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. તેઓ જે સભામાં હાજર હોય છે તે સભાને વાદીસમવસરણ કહે છે. એટલે કે વાદિ જનો વિવાદ કરવા માટે જ્યાં એકત્ર થાય છે તે સ્થાનને વાદિસમવસરણ કહે છે.

અહીં વાદિસમવસરણ પદ વડે તે સ્થાનોને ગ્રહણ કરવાના નથી, પણ તે સ્થાનોમાં અને વાદીજનોમાં અભેદ સંબંધના ઉપચારની અપેક્ષાએ વાદીજનોને જ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. આ રીતે વાદિસમવસરણ અથવા વાદીજનોના અહીં ક્રિયાવાદી આદિ ચાર પ્રકાર કહેવામાં આવ્યા છે—

જે લોકો જીવ, અજીવ આદિની સત્તાત્મક સ્થિતિનો સ્વીકાર કરનારા હોય છે—જીવ, અજીવ આદિના અસ્તિત્વને સ્વીકારનારા હોય છે અને તેનું પ્રતિપાદન કરનારા હોય છે તેમને ક્રિયાવાદી કહે છે. એટલે કે આસ્તિકજન ક્રિયાવાદી છે-તેમના કરતાં વિપરીત માન્યતાવાળા લોકો અક્રિયાવાદી અથવા

स एव वैनयिकम्, स्वार्थिक ठक् प्रत्ययोऽत्र विनयादित्वात्, तदेव मोक्षाय कल्पत इत्येवं वदन्तीत्येवं शीलाः वैनयिकवादिनः ४, एतेषां भेदसंख्या चेयम्—

" असियसयं किरियाणं, अकिरियावाईण होइ चुलसीई।
अन्नाणिय सत्तट्ठी वेणइयाणं च वत्तीसा ॥ १ ॥

छाया—" अशीति-शतं क्रियाणामक्रियावादिनां भवति चतुरशीतिः।
अज्ञानिनां सप्तषष्टिः वैनयिकानां च द्वात्रिंशत् ॥ १ ॥

तत्राशीतिशतम्-अशीत्यधिकं शतं क्रियाणां=क्रियावादिनाम्, अन्यत्सुगमम् इति। एषां स्वरूपमन्यतोऽवसेयम् ॥ सू० ७ ॥

पूर्वं वादिसमवसरणानि निरूपितानि, सम्प्रति तान्येव चतुर्विंशतिदण्डके-निरूपयितुमाह—

मूलम्—णेरइयाणं चत्तारि वादिसमोसरणा पण्णत्ता, तं जहा-किरियावाई जाव वेणइयवाई ४ एवमसुरकुमाराणं वि जाव थणियकुमाराणं, एवं विकलिंदियवज्जं जाव वेमाणियाणं ॥ सू० ८ ॥

छाया—नैरयिकाणां चत्वारि वादिसमवसरणानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-क्रिया-

---

जो उसका मण्डन करके उसे स्वीकार किये रहते हैं वे अज्ञानिकवादी हैं विनयकोही जो मोक्ष प्राप्तिका कारण मानते हैं वे वैनयिक हैं इनके भेदोंकी संख्या इस प्रकारसे है—

" असियसयं किरियाणं " इत्यादि। क्रियावादियोंके भेद १८० हैं अक्रियावादियोंके ८४ हैं अज्ञानवादियोंके ६७ और वैनयिकवादियोंके ३२ हैं। इन सबका स्वरूप षट्दर्शन समुच्चय आदि ग्रन्थोंसे जान लेना चाहिये।सू०७।

નાસ્તિક છે. " અજ્ઞાન જ અતિ પ્રશસ્ય છે, " આ પ્રકારની માન્યતાવાળા અને તે માન્યતાનું પ્રતિપાદન કરનારા લોકોને અજ્ઞાનિકવાદી કહે છે. વિનયને જ જે લોકો મોક્ષપ્રાપ્તિનું કારણુ માને છે તેમને વૈનયિક કહે છે. તેમના ભેદોની સંખ્યા નીચે પ્રમાણે છે—

" असियसयं किरियाणं " ઇત્યાદિ-ક્રિયાવાદીઓના ૧૮૦ ભેદ છે, અક્રિયાવાદીઓના ૮૪ ભેદ છે, અજ્ઞાનીઓના ૬૭ ભેદ છે અને વૈનયિકોના ૩૨ ભેદ છે. આ બધાનું સ્વરૂપ ષટ્દર્શન સમુચ્ચય આદિ ગ્રંથોમાંથી સમજી લેવું જોઈએ. ॥ સૂ ૭ ॥

वादी यावत् वैनयिकवादी ४। एवमसुरकुमाराणामपि यावत् स्तनितकुमाराणाम्। एवं विकलेन्द्रियवर्जं यावत् वैमानिकानाम् ॥ सू० ८ ॥

टीका—" णेरइयाणं " इत्यादि, स्पष्टम्, नवरं—नारकादिपञ्चेन्द्रियाणां समनस्कत्वादेतानि चत्वारि अपि वादिसमवसरणानि भवति, " विकलिंदिय-वज्जं " इति एक द्वि त्रिचतुरिन्द्रियाणामसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां जीवानाममनस्कत्वा-देतानि चत्वारि न सम्भवन्तीति ॥ सू० ८ ॥

पुरुषाधिकारात् पुरुषविशेषान्निरूपयितुं प्रायो दृष्टान्तसूत्रपुरस्सराणि त्रिच-त्वारिंशतं (४३) पुरुषसूत्राण्याह—

मूलम्—चत्तारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा—गज्जित्ता णाममेगे णो वासित्ता १, वासित्ता णाममेगे णो गज्जित्ता, २, एगे गज्जि-त्ताऽवि वासित्ताऽवि ३, एगे णो गज्जित्ता णो वासित्ता ४। (१)। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—गज्जित्ता णाम मेगे णो वासित्ता ४, (२)

वादि समवसरणोंका कथन करके अब सूत्रकार उन्हें २४ दण्ड-कोंमें निरूपित करते हैं-" णेरइयाणं चत्तारि वादिसमोसरणा पण्णत्ता इत्यादि

नारकादि पञ्चेन्द्रियोंके क्रियावादी यावत् वैनयिकवादी आदि चार वादिसमवसरण होते है। इसी तरहसे असुरकुमारों को लेकर यावत् स्तनितकुमारोंके भी ये चार वादिसमवसरण होते हैं। तथा विकलेन्द्रिय-दो इन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय इन जीवोंको तथा एकेन्द्रियको और असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवोंको छोड़कर यावत् वैमानिकजीवों तक येही चार वादिसमवसरण होते हैं। ये सब एकेन्द्रियादिक जीव अम-नस्क (असंज्ञी) होते हैं अतः उनमें ये सम्भवित नहीं होते हैं ॥सू०८॥

વાદિ સમવસરણોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર તેમને ૨૪ દંડકોમાં નિરૂપિત કરે છે " णेरइयाणं चत्तारि वादिसमोसरणा पण्णत्ता " ઈત્યાદિ–સૂ. ૮

નારકાદિ પંચેન્દ્રિયોના ક્રિયાવાદીથી લઈને વૈનયિકવાદી પર્યન્તના ચાર વાદિસમવસરણો હોય છે એજ પ્રમાણે અસુરકુમારોથી લઈને સ્તનિતકુમારો પર્યન્તના પણ ચાર વાદિસમવસરણો હોય છે તથા વિકલેન્દ્રિયો (દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય), એકેન્દ્રિયો અને અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવો સિવા-યના વૈમાનિક પર્યન્તના સમસ્ત જીવોના પણ એજ ચાર સમવસરણો હોય છે. એકેન્દ્રિય, વિકલેન્દ્રિય અને અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવો અમનસ્ક હોય તેથી તેમનામાં તે સંભવી શકતા નથી. ॥સૂ. ૮॥

चत्तारि मेहा पण्णत्ता तं जहा–गज्जित्ता णाममेगे णो विज्जुयाइत्ता १, विज्जुयाइत्ता णाममेगे णो गज्जित्ता ४। (३) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–गज्जित्ता णाममेगे णो विज्जुयाइत्ता ४, (४)।

चत्तारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा--वासित्ता णाममेगे नो विज्जुयाइत्ता ४। (५) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--वासित्ता णाममेगे णो विज्जुयाइत्ता ४, (६)

चत्तारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा--कालवासी णाममेगे णो अकालवासी ४, (७) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--कालवासी णाममेगे णो अकालवासी ४, (८)।

चत्तारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा--खेत्तवासी णाममेगे णो अखेत्तवासी ४, (९)। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता तं जहा- खेत्तवासी णाममेगे णो अखेत्तवासी ४ (१०)

चत्तारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा–जणइत्ता णाममेगे णो णिम्मवइत्ता, णिम्मवइत्ता णाममेगे णो जणइत्ता ४, (११) एवामेव चत्तारि अम्मापियरो पण्णत्तो, तं जहा--जणइत्ता णाममेगे णो णिम्मवइत्ता ४ (१२)

चत्तारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा--देसवासी णाममेगे णो सव्ववासी ४, (१३) एवामेव चत्तारि रायाणो पण्णत्ता, तं जहा--देसाहिवई णाममेगे णो सव्वाहिवई ४ (१४) ॥ सू०९ ॥

छाया—चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-गर्जिता नामैको नो वर्षिता १, वर्षिता नामैको नो गर्जिता २, एको गर्जिताऽपि वर्षिताऽपि ३, एको नो गर्जिता नो वर्षिता ४। (१) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-गर्जिता नामैको नो वर्षिता ४। (२)।

चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-गर्जिता नामैको नो विद्युयिता १, विद्युयिता नामैको नो गर्जिता ४, (३) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-गर्जिता नामैको नो विद्युयिता ४ (४)।

चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-वर्षिता नामैको नो विद्युयिता ४। (५) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-वर्षिता नामैको नो विद्युयिता ४, (६) ।चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कालवर्षी नामैको नो अकालवर्षी ४। (७) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-कालवर्षी नामैको नो अकालवर्षी ४ (८)

चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-क्षेत्रवर्षी नामैको नो अक्षेत्रवर्षी ४ (९) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-क्षेत्रवर्षी नामैको नो अक्षेत्रवर्षी ४। (१०)।

चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-जनयिता नामैको नो निर्मापयिता, निर्मापयिता नामैको नो जनयिता ४ (११), एवमेव चत्वारि मातापितरः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-जनयितारौ नामैको नो निर्मापयितारौ ४, (१२)। चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-देशवर्षी नामैको नो सर्ववर्षी ४ (१३) एवमेव चत्वारो राजानः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-देशाधिपति नामैको नो सर्वाधिपतिः ४, (१४) सू० ९ ॥

टीका—"चत्तारि मेहा" इत्यादि—मेघाः-चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः-कश्चिन्मेघः गर्जिता-गर्जनकारी भवति, किन्तु-वर्षिता-जलवर्षणकारी नो

पुरुष अधिकारको लेकरही अब सूत्रकार पुरुष विशेषोंका निरूपण करनेके लिये प्रायः दृष्टान्तसूत्र पुरस्सर ४३ पुरुष सूत्र कहते हैं—

टीकार्थ-'चत्तारि मेहा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र ९ ॥

मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे कोई एक मेघ ऐसा होता है जो गर्जना करता है पर वह जल बरसानेवाला नहीं होता है १। कोई

પુરુષ અધિકાર ચાલી રહ્યો છે તેથી હવે સૂત્રકાર પુરુષ વિશેષોનું નિરૂપણ કરવા માટે દૃષ્ટાન્ત સૂત્રો સહિતના ૪૩ પુરુષ સૂત્રો કહે છે—

ટીકાર્થ—"ચત્તારિ મેહા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ સૂ ૯

મેઘના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે ગર્જના કરે છે પણ વરસતો નથી. (૨) કોઈ મેઘ એવો હોય છે

भवति, इति प्रथमः १, एको वर्षिता न तु गर्जितेति द्वितीयः २, एको गर्जिताऽपि वर्षिताऽपीति तृतीयः ३, एको नो गर्जिता नो वर्षिताऽपि च भवतीति चतुर्थः ४ (१) 'एवामेवे' त्यादि—एवमेव मेघवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः-कश्चित् गर्जिता-दानज्ञानव्याख्यानानुष्ठानशत्रुनिग्रहादि-विषये उच्चैः प्रतिज्ञाकारी भवति, किन्तु नो वर्षिता-प्रतिज्ञातकारको न भवति। इति प्रथमः १। तथा-एको वर्षिता-कार्यकर्ता भवति, किन्तु नो गर्जिता-उच्चैः प्रतिज्ञाता न भवतीति द्वितीयः २। तथा-एको गर्जिताऽपि वर्षिताऽपि, इति तृतीयः ३। तथा-एको नो गर्जिता नो वर्षिता च भवति। इति चतुर्थः ४। (२)

एक मेघ ऐसा होता है, जो जल बरसानेवाला होता है, पर वह गर्जनकारी नहीं होता है २। कोई एक मेघ ऐसा होताहै, जो गरजता भी है और बरसता भी है ३। और कोई एक मेघ ऐसा होता है जो न गरजता है और न बरसताही है ४ (१) इसी तरहसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो दान ज्ञान व्याख्यान अनुष्ठान एवं शत्रुनिग्रह आदिके विषयमें ऊंची प्रतिज्ञा करनेवाला होता है परन्तु वह प्रतिज्ञात अर्थका करनेवाला नहीं होता है १। तथा-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो केवल कार्यका करनेवाला होता है, किन्तु वह ऊंची प्रतिज्ञा करनेवाला नहीं होताहै २। तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो कार्य करता भी होता है और ऊंची प्रतिज्ञा करनेवाला भी होता है ३। तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो न ऊंची प्रतिज्ञा करता है और न उसका निर्वाह करनेवालाही होता है ४(२)

કે જે વરસે છે ખરો પણ ગર્જતો નથી. (૩) કોઇ મેઘ એવો હોય છે કે જે ગર્જે પણ છે અને વરસે પણ છે (૪) કોઇ મેઘ એવો હોય છે કે જે ગર્જતો પણ નથી અને વરસતો પણ નથી. ।૧।

મેઘની જેમ પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે જ્ઞાન, દાન, વ્યાખ્યાન, અનુષ્ઠાન, શત્રુનિગ્રહ આદિ વિષે ઊંચી પ્રતિજ્ઞા કરનારો હોય છે, પરન્તુ પ્રતિજ્ઞા અનુસાર આચરણ કરનારો હોતો નથી. (૨) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે કેવળ કાર્ય કરનારો હોય છે અને ઊંચી ઊંચી પ્રતિજ્ઞા કરનારો હોતો નથી. (૩) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે કાર્ય કરનારો પણ હોય છે અને ઊંચી ઊંચી પ્રતિજ્ઞા કરનારો પણ હોય છે. (૪) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ઊંચી ઊંચી પ્રતિજ્ઞા કરનારો પણ હોતો નથી. અને એવાં કાર્યો કરનારો પણ હોતો નથી. ।૨।

" चत्तारि मेहा " इत्यादि—चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको मेघो गर्जिता भवति न तु विद्युयिता-विद्युत्कर्त्ता १, एवं शेपभङ्गत्रयम् ४ (३) । 'एवामेवे " त्यादि—एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः-कश्चित् पुरुषः गर्जिता उच्चैः प्रतिज्ञाता भवति, किन्तु न विद्युयिता-विद्युत्कर्त्ता-विद्युतः-विद्युत्सदृशस्य-दानज्ञानव्याख्यानानुष्ठानशत्रुनिग्रहादिविषये उच्चः प्रतिज्ञाता· र्थारम्भाडम्बरस्य कर्ता न भवति इति प्रथमः १। तथा-एको विद्युयिता-आरम्भाडम्बरस्य कर्ता भवति किन्तु गर्जिता-प्रतिज्ञाता न भवति इति द्वितीयः २।

तथा-एको गर्जिताऽपि विद्युयिताऽपि भवति इति तृतीयः ३।

तथा-एको नो गर्जिता नो विद्युयिता च भवतीति चतुर्थः ४। (४)

पुनश्च—" चत्तारि मेहा " इत्यादि-चार मेघ कहे गये हैं-जैसे कोई एक मेघ ऐसा होता है जो गरजता है पर चमकता नहीं है १ कोई एक ऐसा होता है जो चमकता है पर गरजता नहीं है २ कोई एक मेघ ऐसा होता है जो गरजता भी है और चमकता भी है ३ तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो न गरजता है और न चमकता है ४ (३) इसी तरहसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं जैसे-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो गर्जिता-ऊंची प्रतिज्ञा करनेवाला होता है किन्तु चमकनेके जैसे दान, ज्ञान, व्याख्यान, अनुष्ठान एवं शत्रुनिग्रह आदिके विषयमें उच्च प्रतिज्ञात अर्थके आरम्भके आडम्बरको करनेवाला नहीं होता है १। कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो आरम्भके आडम्बरका करनेवाला होता है किन्तु वह प्रतिज्ञा करनेवाला नहीं होता है २। कोई

" चत्तारि मेहा " ઇત્યાદિ—મેઘના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે ગર્જે છે ખરો પણ ચમકતો નથી. કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે ચમકે છે ખરો પણ ગર્જતો નથી. (૩) કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે ગર્જે છે ખરો અને ચમકે છે પણ ખરો. (૪) કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે ગર્જતો પણ નથી અને ચમકતો પણ નથી. ॥૩॥

એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—

(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ઊંચી પ્રતિજ્ઞા કરનારો હોય છે પણ ચમકનારો હોતો નથી. એટલે કે દાન, જ્ઞાન, વ્યાખ્યાન, અનુષ્ઠાન અને શત્રુનિગ્રહ આદિના વિષયમાં ઉચ્ચ પ્રતિજ્ઞા રૂપ અર્થના આરંભનો આડંબર કરનારો હોતો નથી. (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આરંભનો આડંબર કરનારો હોય છે, પણ પ્રતિજ્ઞા કરનારો હોતો નથી. (૩)

"चत्तारि मेहा" इत्यादि—मेघाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको मेघो वर्षिता-न तु विद्युयिता भवति इति प्रथमः १। एवं शेषभङ्गत्रयं बोध्यम् ४, (५)। 'एवामेवे' त्यादि—एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषो वर्षिता-दानादिभि र्भवति, किन्तु नो विद्युयिता-दानाद्यारम्भाडम्बर-कर्ता न भवति इति प्रथमः १। तथा-एको विद्युयिता न तु गर्जितेति द्वितीयः

एक पुरुष ऐसा होता है जो गर्जनेवाला भी होता है और विद्युयिता भी होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो न गर्जिता होता है और न विद्युयिता होता है ४ (४)

पुनश्च—"चत्तारि मेहा" इत्यादि-मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-एक मेघ ऐसा होता है जो वर्षिता-बरसता है पर वह विद्यु-यिता नहीं होता है चमकता नहीं है १ शेष तीन भङ्ग इसी प्रकारसे लगा लेना चाहिये ४ (५) इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार होते हैं-इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है, जो दानादिकों द्वारा बरसता है, किन्तु वह दानादिकोंके आरम्भका आडम्बरकर्ता नहीं होता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होताहै, जो विद्युयिता दानादिकोंके आरम्भका आडम्बरकर्ता होता है पर वह गर्जिता दान, ज्ञान, व्याख्यान, अनु-ष्ठान, शत्रुनिग्रह आदिके विषयमें उच्च प्रतिज्ञाकारी नहीं होता है २। तथा कोई एक ऐसा भी होता है, जो गर्जिता भी होता है और विद्यु-

કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પ્રતિજ્ઞા કરનારો પણ હોય છે અને આરંભનો આડંબર કરનારો પણ હોય છે (૪) કોઇ એક પુરુષ પ્રતિજ્ઞા કરનારો પણ હોતો નથી અને આરંભનો આડંબર કરનારો પણ હોતો નથી. ॥૪॥

"चत्तारि मेहा" ઈત્યાદિ—મેઘના નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઇ મેઘ એવો હોય છે કે જે વરસે છે ખરો પણ ચમકતો નથી. ઉપરના ક્રમને અનુસરીને બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા. ॥૫॥

એજ પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે-(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દાનાદિક દ્વારા વરસે છે ખરો પણ દાનાદિકોના આરંભનો આડંબરકર્ત્તા હોતો નથી (૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ચમકે છે ખરો પણ વરસતો નથી. એટલે કે દાનાદિકોના આરંભનો આડંબરકર્ત્તા હોય છે, પણ દાન, જ્ઞાન, વ્યાખ્યાન, અનુષ્ઠાન અને શત્રુનિગ્રહ આદિના વિષયમાં ઉચ્ચ પ્રતિજ્ઞાકારી હોતો નથી. (૩) કોઈ એક પુરુષ વરસે છે પણ ખરો અને ચમકે છે પણ ખરો. (૪) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે

२। तथा-एको गर्जिताऽपि विद्युयिताऽपि च भवतीति तृतीयः ३। तथा-एको नो गर्जिता नो विद्युयिताऽपि च भवतीति चतुर्थः ४ (६)

" चत्तारि मेहा " इत्यादि—स्पष्टम्-नवरम्-कालवर्षो-अवसरवर्षी:, एवमन्येऽपि बोध्याः ४ (७) एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि, तद्यथा-एकः पुरुषः कालवर्षी-कालवर्षीव कालवर्षी-अवसरे दानव्याख्यानादिपरोपकारार्थप्रवृत्तिकः, न तु अकालवर्षी भवतीति प्रथमः १, तथा-एकः अकालवर्षी-अनवसरवर्षी भवति न तु कालवर्षीति द्वितीयः २। (७) तथा-एकः कालाकालवर्षी भवति इति तृतीय· ३। एको नो कालवर्षी नो अकालवर्षीति चतुर्थः।४।(८)

यिता भी होता है ३ तथा कोई एक ऐसा पुरुष होता जो न गर्जिता होता है, और न विद्युयिता भी होता है ४ (६)

फिरभी—" चत्तारि मेहा " इत्यादि-मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-कोई एक मेघ ऐसा होता है, जो कालवर्षी अवसर पर वरसता है, विना अवसरके नहीं वरसताहै १ इसी प्रकारसे शेष तीन भङ्ग भी समझ लेना चाहिये (७) इसी प्रकारसे पुरुषजात चार कहे गयेहैं-इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो कालवर्षी मेघकी तरह अवसर पर दान देता है, व्याख्यान देता है और परके उपकार आदि करनेमें प्रवृत्तिवाला होता है, पर वह अकालवर्षी नहीं होता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अकालवर्षी होता है, अवसरवर्षी होता है विना अवसरकेही दान देता है व्याख्यान आदि देता है और परके उपकार करने आदि सुकार्यमें प्रवृत्ति करनेवाला होता है, पर कालवर्षी

વરસતો પણ નથી અને ચમકતો પણ નથી. પહેલા બે ભાંગાને આધારે ત્રીજા અને ચોથા ભાગાનો ભાવાર્થ સમજી લેવો. ॥૬॥

"ચત્તારિ મેહા" ઈત્યાદિ-મેઘના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે કાલવર્ષી હોય છે પણ અકાલવર્ષી હોતો નથી. એટલે કે યોગ્ય અવસરે વરસનારો હોય છે પણ અયોગ્ય અવસરે વરસતો નથી. એજ ક્રમે બીજા ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા. ॥૭॥

એજ પ્રમાણે પુરુષ પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે કાલવર્ષી મેઘની જેમ અવસર આવે ત્યારે દાન દે છે, અને પરોપકાર આદિ કરે છે, પણ તે અકાલવર્ષી હોતો નથી. એટલે કે યોગ્ય અવસર આવ્યા વિના એવી પ્રવૃત્તિ કરતો નથી. (૨) કોઈ પુરુષ અકાલવર્ષી હોય છે પણ કાલવર્ષી હોતો નથી. એટલે કે યોગ્ય અવસર વિના પણ દાનાદિ પ્રવૃત્તિઓ કરનારો હોય છે પણ યોગ્ય અવસરે દાનાદિ સુકાર્ય

"चत्तारि मेहा" इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्-एको मेघः क्षेत्रवर्षीक्षेत्रे-धान्याद्युत्पत्तिस्थाने वर्षतीत्येवं शीलः क्षेत्रवर्षी भवति किंतु नो अक्षेत्रवर्षी क्षेत्रभिन्नप्रदेशे वर्षणकारी न भवति इति प्रथमः १। तथा-एकः अक्षेत्रवर्षी न तु क्षेत्रवर्षीति द्वितीयः २। तथा-एकः क्षेत्राक्षेत्र वर्षीति तृतीयः ३, एको नो क्षेत्रवर्षी नो अक्षेत्रवर्षीति चतुर्थः।४। (९)

'एवमेव' इत्यादि—एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः क्षेत्रवर्षी-क्षेत्रे-पात्रे वर्षति-दानश्रुतादिनिक्षिपतीत्येवंशीलस्तथा भवति,

---

नहीं होता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो काल अकाल दोनों अवसरों पर वरसनेवाला होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो न कालवर्षी होता है और न अकालवर्षी होता है ४ (८)

फिरभी—"चत्तारि मेहा" इत्यादि-मेघ चार प्रकारके होते हैं जैसा-कोई एक मेघ ऐसा होता है जो क्षेत्रमें-धान्यादि उत्पत्तिके स्थानभूत खेतमें वर्षी-वरसनेके स्वभाववाला होता है अक्षेत्रवर्षी नहीं होता है, क्षेत्रसे भिन्न प्रदेशमें वरसनेके स्वभाववाला नहीं होता है १ तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो अक्षेत्रवर्षी होता है क्षेत्रवर्षी नहीं होता है २ तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो क्षेत्र और अक्षेत्र इन दोनोंमें वरसनेके स्वभाववाला होता है ३। तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो क्षेत्र और अक्षेत्र इन दोनों में भी वरसने के स्वभाव वाला नहीं होता है (४) ९ इसी प्रकारसे पुरुष भी चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो क्षेत्रवर्षी होता है क्षेत्रमें-पात्रमें दान, श्रुत आदिका निक्षेपण कर-

---

કરનારો હોતો નથી. (૩) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે કાલવર્ષી પણ હોય છે અને અકાલવર્ષી પણ હોય છે (૪) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે કાલવર્ષી પણ હોતો નથી અને અકાલવર્ષી પણ હોતો નથી. ॥૮॥

"ચત્તારિ મેહા" ઈત્યાદિ-મેઘના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારો પણ કહ્યા છે-કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે ક્ષેત્રમાં-ધાન્યાદિ ઉત્પન્ન કરનારાં ખેતરોમાં વરસનારો હોય છે, પણ અક્ષેત્રમાં-વેરાન-પ્રદેશમાં વરસનારો હોતો નથી. (૨) કોઇ મેઘ અક્ષેત્રવર્ષી હોય છે પણ ક્ષેત્રવર્ષી હોતો નથી. (૩) કોઈ મેઘ ક્ષેત્રવર્ષી પણ હોય છે અને અક્ષેત્રવર્ષી પણ હોય છે. (૪) કોઈ મેઘ ક્ષેત્રવર્ષી પણ હોતો નથી અને અક્ષેત્રવર્ષી પણ હોતો નથી ॥૯॥

એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ ક્ષેત્રવર્ષી હોય છે પણ અક્ષેત્રવર્ષી હોતો નથી. એટલે કે

किं तु नो अक्षेत्रवर्षी-अपात्रे दानश्रुतादीनां निक्षेपी न भवतीति प्रथमः १। तथा-एकोऽक्षेत्रवर्षी न तु क्षेत्रवर्षी भवति इति द्वितीयः २। तथा-एको महौदार्यात् पात्रापात्रविचाररहिततया प्रवचनप्रभावनादिकरणाद्वा क्षेत्राक्षेत्रवर्षी-पात्रापात्रवर्षी भवति इति तृतीयः ३। तथा-एकः पात्रापात्रवर्षी-दानादानप्रवृत्तिकः कृपणः इति चतुर्थः (१०)

"चत्तारि मेहा" इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्-एको मेघो जनयिता-धान्याद्यङ्कुरोत्पादयिता भवति किन्तु निर्मापयिता-सस्यादिसम्पादयिता न भवति अन्ते वृष्टिवर्जितत्वात् इति प्रथमः १।

नेके स्वभाववाला होता है अक्षेत्रवर्षी नहीं होता है-अक्षेत्रमें-अपात्रमें दान श्रुतादिका निक्षेप करने वाला नहीं होता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है, जो अक्षेत्रवर्षी होता है, क्षेत्रवर्षी नहीं होता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होताहै, जो महान् उदारतादि गुणवाला होनेसे या प्रवचनकी प्रभावनादि रूप कारणसे पात्र अपात्रका विचार किये विनाही क्षेत्राक्षेत्रवर्षी होता है पात्रापात्रवर्षी होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो न पात्रवर्षी होता है और न अपात्रवर्षीही होता है ऐसा वह दानादान इन दोनोंमें अप्रवृत्तिवाला होता है-अर्थात् कृपण होता है ४ (१०)

फिरभी—"चत्तारि मेहा" इत्यादि-मेघ चार प्रकारके होते हैं इनमें कोई एक मेघ ऐसा होता है-जो जनयिता होता है-धान्यादि अङ्कुरोंका उत्पन्न करनेवाला होता है, किन्तु निर्मापयिता नहीं होता

તે યોગ્ય પાત્રમાં દાન, શ્રુત આદિને નિક્ષેપ કરનારો હોય છે પણ અયોગ્ય પાત્રમાં દાન, શ્રુત આદિને નિક્ષેપ કરનારો હોતો નથી. (૨) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે અક્ષેત્રવર્ષી હોય છે, પણ ક્ષેત્રવર્ષી હોતો નથી. (૩) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે તે ક્ષેત્ર-અક્ષેત્રનો વિચાર કર્યા વિના પાત્ર-અપાત્રનો વિચાર કર્યા વિના દાન દેનારો અને પ્રવચનની પ્રભાવના કરનારો હોય છે એટલે કે તે ક્ષેત્રવર્ષી પણ હોય છે અને અક્ષેત્રવર્ષી પણ હોય છે. (૪) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ક્ષેત્રવર્ષી પણ હોતો નથી-યોગ્ય વ્યક્તિને દાનાદિ દેનારો પણ હોતો નથી, અને અક્ષેત્રવર્ષી અયોગ્ય વ્યક્તિને દાનાદિ દેનારો પણ હોતો નથી. એવો પુરુષ કૃપણ હોય છે. ॥૧૦॥

"ચત્તારિ મેહા" ઇત્યાદિ—મેઘના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ મેઘ એવો હોય છે કે જે જનયિતા (ધાન્યાદિના અંકુરોને ઉત્પન્ન કરનારો હોય છે પણ નિર્માપયિતા (સંપાદયિતા) હોતો નથી એટલે

तथा-एकोऽन्ते वर्षणेन निर्मापयिता-सस्यसम्पादयिता भवति किन्तु जनयिता-धान्याङ्कुरादीनामुद्गमयिता न भवतीति, द्वितीयः २।

तथा-एको जनयिताऽपि निर्मापयिताऽपि च भवतीति तृतीयः ३।

तथा-एको नो जनयिता नापि च निर्मापयिता भवतीति चतुर्थः ४ (११)

'एवामेव' चत्तारि अम्मापियरो" इत्यादि—एवमेव-पूर्वोक्तमेघवदेव मातापितरश्चत्वारः भङ्गाः, तद्यथा-एकौ-प्रथमौ-मातापितरौ जनयितारौ-जन्मदातारौ भवतः, किन्तु निर्मापयितारौ-गुणसम्पन्नकर्तारौ न भवतः इति प्रथमभङ्गः १। तथा-एकौ-अन्यौ द्वितीयौ कौ चित् तौ निर्मापयितारौ भवतः न तु जनयितारौ, इति द्वितीयो भङ्गः २। एवं शेषावपि। एवं शिष्यं प्रतिआचार्योऽपि योजनीयः।४। (१२)

है अन्नमें वृष्टिवर्जित होनेसे उनका सम्पादयिता नहीं होता है १ तथा कोई मेघ ऐसा होता है जो अन्नमें बरसनेसे निर्मापयिता होता है सस्यादिका सम्पादयिता होता है, पर जनयिता नहीं होताहै-धान्याङ्कुरादिकोंका उद्गमयिता-उगानेवाला नहीं होताहै २ तथा-कोई एक मेघ ऐसा होता है जो जनयिता भी होता है और निर्मापयिता भी होता है ३ तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो न जनयिता होता है और न निर्मापयिताही होता है ४ (११) इसी प्रकारसे "चत्तारि अम्मापियरो" इत्यादि-मातापिता भी चार प्रकारके होते हैं-कोई एक मातापिता ऐसे होते हैं-जो जनयिता होते हैं-जन्मदाता होते हैं पर वे निर्मापयिता नहीं होते हैं-गुणोंसे युक्त करनेवाले नहीं होते हैं १ तथा कोई एक मातापिता ऐसे होते हैं-जो निर्मापयिता होते हैं

કે પાછેતર વૃષ્ટિને અભાવે ડાંગર આદિ ધાન્યનો ઉત્પાદક હોતો નથી. (૨) કોઈ એક મેઘ એવો હોય છે કે જે વર્ષાન્તકાળે વરસનારો હોવાથી ડાંગર આદિ ધાન્યોના બીજોનો સંપાદયિતા (ઉત્પાદક) હોય છે પણ ધાન્યાંકુરોનો જનયિતા (ઉગાડનારો) હોતો નથી. (૩) કોઈ એક મેઘ ધાન્યાંકુરોનો જનયિતા પણ હોય છે અને બીજોનો સંપાદયિતા પણ હોય છે અને (૪) કોઇ મેઘ એવો હોય છે કે જે જનયિતા પણ હોતો નથી અને સંપાદયિતા પણ હોતો નથી. ॥૧૧॥ "चत्तारि अम्मापियरो" ઈત્યાદિ—એજ પ્રમાણે માતાપિતાના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર હોય છે—કોઇ માતાપિતા જન્મદાતા હોય છે પણ બાળકોમાં સારા ગુણોનું સિંચન કરનારા હોતા નથી (૨) કોઇ માતા પિતા નિર્માપયિતા (સારા સારા ગુણોનું સિંચન કરનારા) હોય છે પણ જનયિતા

" चत्तारि मेहा " इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम् चत्वारो भङ्गा यथा–देशवर्षी नो सर्ववर्षी १ सर्ववर्षी नो देशवर्षी २, देशवर्ष्यपि सर्ववर्ष्यपि३, नो देशवर्षी नो सर्ववर्षी ४। तत्राद्यं भङ्गद्वयं स्पष्टमेव यस्तृतीयो भङ्गः–' देशवर्ष्यपि सर्ववर्ष्यपि ' इत्येवरूपः तस्य क्षेत्रकालात्मशब्दानाश्रित्य नव विकल्पाः भवन्ति यथा–यो विवक्षितभरतादिक्षेत्रस्य वर्षादिकालस्य चैकदेशे आत्मनोऽप्येकदेशेन वर्षति स देशवर्षी १, क्षेत्रकालयोः सर्वयोः आत्मनोऽपि सर्वतो वर्षति स सर्ववर्षी २, क्षेत्रतो

जनयिता नहीं होते हैं २ इसी प्रकारसे शेष दो भङ्गोंके विषयमें लगा लेना चाहिये ४ इसी प्रकारसे शिष्यके प्रति आचार्यको भी लगा लेना चाहिये (१२)

फिरभी—" चत्तारि मेहा " इत्यादि–मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-' देशवर्षी नो सर्ववर्षी १, सर्ववर्षी नो देशवर्षी २, देशवर्ष्यपि; सर्ववर्ष्यपि ३ नो देशवर्षी नो सर्ववर्षी४। उनमें प्रथम दो भांगे स्पष्टही हैं। देशवर्ष्यपि सर्ववर्ष्यपि इस प्रकारका जो तीसरा भांगा है उनका क्षेत्र–काल–आत्म शब्दोंको आश्रित करके नव विकल्प होते हैं, जैसेकि जो विवक्षित भरतादि क्षेत्रके एवं वर्षादि कालके एकदेशमें–और आत्माकेभी एकदेशसे वरसे वह देशवर्षी है १ क्षेत्र–काल–आत्मासे सर्वतः वरसे वह सर्ववर्षी है २ क्षेत्रसे देशमें कालसे और आत्मासे सर्वतः ३ कालसे देशमें, क्षेत्रसे और आत्मासे सवत्र और सर्वतः ४

હોતા નથી. એજ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગા પણ સમજી લેવા. એજ પ્રમાણે, આચાર્ય શિષ્ય સંબંધી ચાર ભાંગા પણ સમજી લેવા જોઈએ. ॥૧૨॥

" चत्तारि मेहा " ઈત્યાદિ—મેઘના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે જેમકે–દેશવર્ષી નો સર્વવર્ષી ૧, સર્વવર્ષી નો દેશવર્ષી ૨, દેશવર્ષ્યપિ સર્વવર્ષ્યપિ ૩ ' नो देशवर्षी नो सर्ववर्षी ૪, તેમાં પહેલાના બે ભંગો સ્પષ્ટ જ છે, ' देशवर्ष्यपि सर्ववर्ष्यपि ' એ રીતનો જે ત્રીજો ભગ છે તેના ક્ષેત્ર–કાલ, આત્મા એ શબ્દોનો આશ્રય કરીને નવ વિકલ્પો બને છે. જેમકે–જે વિવક્ષિત ભરતાદિ ક્ષેત્રના અને વર્ષાદિકાળના એકદેશમાં અને આત્માના પણ એકદેશથી વરસે તે દેશવર્ષી છે. ૧, ક્ષેત્ર–કાલ આત્માથી સર્વતઃ વરસે તે સર્વવર્ષી છે ૨, ક્ષેત્રથી દેશમાં કાલથી અને આત્માથી સર્વતઃ ૩, કાલથી દેશમાં ક્ષેત્રથી અને આત્માથી સર્વત્ર અને સર્વતઃ ૪ આત્માથી દેશમાં ક્ષેત્ર અને

देशे कालतः आत्मनश्च सर्वतः ३, कालतो देशे क्षेत्रतः-आत्मनश्च सर्वत्र सर्वतः ४, आत्मनो देशेन क्षेत्रतः कालतश्च सर्वत्र ५, क्षेत्रकालतो देशेन आत्मनश्च सर्वतः ६, क्षेत्रत आत्मनश्च देशेन कालतः सर्वत्र ७, कालतः क्षेत्रतो देशेन आत्मनश्च सर्वतः ८, कालत आत्मनश्च देशेन क्षेत्रतः सर्वत्र ९। इत्येवं नवभिर्विकल्पैर्वर्षति स देशवर्षी सर्ववर्षी चेति तृतीयो भङ्गः ३। चतुर्थस्तु द्विधाऽपि देशतः सर्वतो निषेधरूपः सुगम एवेति।

"एवामेव चत्तारि रायाणो" इत्यादि—एवमेव-उक्तमेघवदेव राजानश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको राजा देशाधिपतिः-विवक्षितदेशस्य अधिपतिः-तत्रैव योगक्षेमकरणे प्रभुर्देशाधिपति भवति, किन्तु सर्वाधिपतिः-सर्वयोगक्षेमकरणप्रभुर्न भवति, स च पल्लीपत्यादिरिति प्रथमः १। तथा-एकः सर्वाधिपतिः स्वदेशेऽन्यत्र वा सर्वत्र प्रभवति यः स भवति किन्तु न देशाधिपतिः-देशमात्रस्याधिपतिर्न भवति, इति द्वितीयः २। तथा-एको देशाधिपतिरपि सर्वाधिपतिरपि

आत्मासे देशमें, क्षेत्र और कालसे सर्वत्र ५, क्षेत्र और कालसे देशमें आत्मासे सर्वतः ६, क्षेत्र और आत्मासे देशमें कालसे सर्वत्र ७, कालसे और क्षेत्रसे देशमें आत्मासे सर्वतः ८, कालसे और आत्मासे देशमें क्षेत्रसे सर्वत्र ९, इस प्रकार नौ विकल्पोंसे बरसनेके स्वभाववाला होता है वह देशवर्षी और सर्ववर्षीहै, इस प्रकार तीसरा भंगहै। और चौथा भंग देशसे और सर्वसे निषेधरूपसे सुगमहीहै ४। (१३)

"एवामेव चत्तारि रायाणो" इसी प्रकारसे राजा चार प्रकारके होते हैं, जैसे कोई एक राजा देशाधिपति होता है सर्वाधिपति नहीं होता है १ कोई एक राजा ऐसा होता है जो सर्वाधिपति होता है

કાળથી સર્વત્ર ૫, ક્ષેત્ર અને કાળથી દેશમાં આત્માથી સર્વતઃ ૬, ક્ષેત્ર અને આત્માથી દેશમાં કાળથી સર્વત્ર, કાળથી અને ક્ષેત્રથી દેશમાં આત્માથી સર્વતઃ ૮, કાલથી અને આત્માથી દેશમાં, ક્ષેત્રથી સર્વત્ર ૯, આ રીતે નવ વિકલ્પોથી વરસવાના સ્વભાવવાળો જે હોય તે દેશવર્ષી અને સર્વવર્ષી છે. આ રીતે ત્રીજો ભંગ છે. ચોથો ભંગ દેશથી અને સર્વથી નિષેધ રૂપે સરળ જ છે.॥૧૩॥

"एवमेव चत्तारि रायाणो ઇત્યાદિ—એજ પ્રમાણે રાજાના પણ ચાર પ્રકારો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક રાજા દેશાધિપતિ હોય છે પણ સર્વાધિપતિ હોતો નથી (૨) કોઈ એક રાજા એવો હોય છે કે જે સર્વાધિપતિ હોય છે પણ દેશાધિપતિ હોતો નથી (૩) કોઈ એક રાજા એવો હોય છે કે

च यद्वा-देशाधिपतिर्भूत्वा सर्वाधिपतिर्भवति, वासुदेवादिवत् स देश-सर्वोभयाधिपतिरिति तृतीयः ३। तथा-एको नो देशाधिपतिर्नापि च सर्वाधिपति र्भवति स च राज्यपरिभ्रष्टः। इति चतुर्थः।४। (१४) ॥ सू० ९॥

मूलम्—चत्तारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा-पुक्खलसंवट्टए १ पज्जुन्ने २ जीमूए ३ जिम्हे ४। पुक्खलवट्टए णं महामेहे

देशाधिपति नहीं होता है २ तथा कोई एक राजा ऐसा होता है, जो देशाधिपति भी होता है, और सर्वाधिपति भी होता है ३ और कोई राजा ऐसा होता है जो न देशाधिपति होता है और न सर्वाधिपति होता है ४ इनमें प्रथम प्रकारका राजा किसी एक विवक्षित देशका अधिपति होता है, वह वहीं पर योगक्षेम करनेमें समर्थ रहता है सर्वत्र योगक्षेम (अलब्ध लाभ - योग, लब्ध का रक्षण - क्षेम) करनेमें समर्थ नहीं होता है ऐसा वह पल्लीपति आदि रूप होता है द्वितीय प्रकारका जो राजा होता है वह स्वदेशमें भी और अन्यत्र भी सर्वत्र योगक्षेम करनेमें समर्थ होता है वह केवल देशमात्रका अधिपति नहीं होता है-तृतीय प्रकारका जो राजा होताहै वह वासुदेव आदिकी तरह देशाधिपति होकर सर्वाधिपति हो जाताहै ३ तथा चतुर्थ प्रकारका जो राजा होता है वह जब राज्यसे परिभ्रष्ट हो जाता है तब वह कहींका भी अधिपति नहीं होता है (१४) सूत्र ९ ॥

દેશાધિપતિ પણ હોય છે અને સર્વાધિપતિ પણ હોય છે. (૪) કોઇ રાજા એવો હોય છે કે જે દેશાધિપતિ પણ હોતો નથી અને સર્વાધિપતિ પણ હોતો નથી આ ચાર વિકલ્પોનુ સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—પહેલા પ્રકારનો રાજા કોઇ અમુક દેશનો અધિપતિ હોય છે અને એટલા જ દેશનું યોગક્ષેમ કરવાને સમર્થ હોય છે, પણ સર્વત્ર યોગક્ષેમ કરવાને સમર્થ હોતો નથી. એવો તે રાજા પલ્લીપતિ આદિ રૂપ હોય છે: (૨) બીજા પ્રકારનો જે રાજા કહ્યો છે તે સ્વદેશમાં પણ યોગક્ષેમ કરવાને સમર્થ હોય છે, અને અન્યત્ર પણ યોગક્ષેમ કરવાને સમર્થ હોય છે તે કેવળ દેશ માત્રનો જ અધિપતિ હોતો નથી.

ત્રીજા પ્રકારનો રાજા વાસુદેવ આદિની જેમ દેશાધિપતિમાંથી સર્વાધિપતિ બની ગયો હોય છે. ચોથા પ્રકારમાં રાજ્યભ્રષ્ટ રાજાને ગણાવી શકાય છે કારણ કે તે દેશાધિપતિ પણ હોતો નથી અને સર્વાધિપતિ પણ હોતો નથી ॥ ૧૪॥સૂ ૯ ॥

एगेणं वासेणं दसवाससहस्साइं भावेइ १, पज्जुन्नेणं महामेहे एगेणं वासेणं दसवाससयाइं भावेइ २ जीमूए णं महामेहे एगेणं वासेणं दसवासाइं भावेइ ३, जिम्हेणं महामेहे बहुहिं-वासेहिं एगं वासं भावेइ वा णवा भावेइ ४। (१५) ॥सू० १०॥

छाया—चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पुष्करावर्तः १, पर्जन्यः २, जीमूतः ३ जिह्मः ४। पुष्करावर्तः खलु महामेघः एकया वृष्ट्या दशवर्षसहस्राणि भावयति १, पर्जन्यः खलु महामेघः एकया वर्षया दशवर्षशतानि भावयति २, जीमूतः खलु महामेघः एकया वर्षया दशवर्षाणि भावयति ३, जिह्मः खलु महामेघो बहुभिर्वर्षाभिरेकं वर्षं भावयति वा न वा भावयति ४ (१५) ॥सू०१०॥

टीका—" चत्तारि मेहा " इत्यादि—मेघाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पुष्करावर्तः १, पर्जन्यः २, जीमूतः ३, जिह्मश्च ४। तत्र पुष्करावर्तो नाम खलु-महामेघः एकया वृष्ट्या-सकृद्वर्षणेन दशवर्षसहस्राणि-दशसहस्रसंख्यकवर्षपर्यन्तम् पृथिवीं भावयति-जलार्द्रां करोति-धान्यादिनिष्पत्तिसमर्थां सम्पादयतीति भावः १। तथा-द्वितीयः पर्जन्यो महामेघ एकया वर्षया दशवर्षशतानि-एकसहस्रवर्ष-

"चत्तारि मेहा पण्णत्ता" इत्यादि सूत्र १० ॥

मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे-पुष्करावर्त १, पर्जन्य २ जीमूत ३ और जिह्म ४ इनमें पुष्करावर्त यह महामेघ होता है और यह एकबारही बरसने पर दस हजार वर्ष तक भूमिको जलसे आर्द्र-आदि कर देताहै, उसे धान्यादि निष्पत्तिमें समर्थ कर देताहै द्वितीय प्रकारका जो मेघ होता है वह भी महामेघ रूप होता है यह भी एक बारकी वर्षासे पृथिवीको एक हजार वर्ष तक धान्यादि निष्पत्तिमें समर्थ कर देता है

" चत्तारि मेहा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—(સૂ. ૧૦)

મેઘના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) પુષ્કરાવર્ત, (૨) પર્જન્ય, (૩) જીમૂત અને (૪) જિહ્મ- પુષ્કરાવર્ત મહામેઘ રૂપ હોય છે તે મેઘ એક જ વખત વરસવાથી ૧૦ હજાર વર્ષ સુધી ભૂમિમાં ભીનાશ રહે છે તે કારણે તે મેઘ ભૂમિને ધાન્યાદિ ઉત્પન્ન કરવાને સમર્થ કરી નાખે છે. બીજો જે પર્જન્ય નામનો મેઘ છે તે પણ મહા મેઘરૂપ છે. તે એક જ વખત વરસવાથી જમીનને એક હજાર વર્ષ સુધી ધાન્યાદિ ઉત્પાદ કરવાને લાયક

पर्यन्तं भूतं भावयति २। तथा–जीमूतो महामेघो दशवर्षाणि भुवं भावयति ३। तथा–जिह्मस्तु महामेघो बहुभिर्वर्षाभिरेकं वर्षम्–एकवर्ष पर्यन्तमेव भुवं भावयति, वा–यद्वा न भावयति रूक्षजलत्वात्, इति चतुर्थः। ४।

अत्रान्तरे पुरुषाधिकारात् पुष्करावर्तादिवत् पुरुषाश्चत्वारः ऊहनीयाः। तत्र पुष्करावर्तसमानः पुरुषः सकृदुपदेशेन सकृद्दानेन वा बहुकालपर्यन्तं प्राणिनं भावयति–शुभस्वभावसम्पन्नं करोति, यद्वा–समृद्धं करोति १, तथा–पर्जन्यसमानः पुरुषोऽल्पकालपर्यन्तमेव सकृदुपदेशेन सकृद्दानेन वा देहिनं भावयति–शुभस्वभावं धनिनं वा करोति २। तथा–जीमूततुल्यः पुरुषोऽल्पतरकालपर्यन्त-

---

तथा जीमूत नामका जो महामेघ होताहै, वह दस वर्ष तक पृथिवीको अपनी एकबारकी वर्षासे धान्यादिकी निष्पत्ति करनेमें समर्थ बना देता है और जो जिह्म नामका महामेघ होता है वह अपनी अनेक वर्षाओंसे एक वर्ष तकही पृथिवीको धान्यादिकी निष्पत्ति करनेमें समर्थ बनाता है अथवा नहीं भी बनाता है क्योंकि इसका जल रूक्ष होता है।

इसी प्रकारसे पुरुषाधिकारको लेकर यहां ऐसा कथन कर लेना चाहिये कि पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं पुष्करावर्त महामेघके समान वह पुरुष है जो एकबारके उपदेशसे या एक बारके दानसे प्राणियोंको बहुत समय तक शुभ स्वभावसे युक्त कर देता है अथवा समृद्ध कर देता है १ पर्जन्य समान वह पुरुष है जो एक बारके उपदेशसे या एक बारके दान अल्पकाल तकही प्राणियोंको या प्राणीको–शुभ स्वभावसे युक्त कर देता है २ जीमूतके समान वह पुरुष है जो अल्पतर काल

બનાવી દે છે. ત્રીજો જીમૂત નામનો જે મેઘ કહ્યો છે તે પણ મહામેઘ રૂપ છે તે એક જ વખત વરસવાથી ભૂમિમાં ૧૦ વર્ષ સુધી ધાન્યાદિની ઉત્પત્તિ થઈ શકે છે. ચોથો જે જિહ્મ નામનો મહામેઘ છે, તે પોતાની અનેક વર્ષાઓથી ભૂમિને એક વર્ષ સુધી જ ધાન્યાદિ ઉત્પન્ન કરવાને સમર્થ બનાવે છે ખરો અને નથી પણ બનાવતો, કારણ કે તેનું પાણી રૂક્ષ હોય છે.

એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) પુષ્કરાવર્ત મેઘસમાન પુરુષ—જે માણસ એક જ વાર ઉપદેશ આપીને જીવોને લાંબા સમય સુધી શુભ સ્વભાવવાળો કરી નાખે છે અથવા એક જ વાર દાન આપીને જીવોને લાંબા સમય સુધી સમૃદ્ધ કરી નાખે છે તે પુરુષને પુષ્કરાવર્ત મેઘ સમાન ગણવામાં આવે છે. (૨) પર્જન્ય સમાન પુરુષ—જે પુરુષ એક જ વાર ઉપદેશ આપીને અથવા દાન આપીને જીવોને અલ્પકાળ પર્યન્ત શુભ સ્વભાવ યુક્ત અથવા સમૃદ્ધ કરી નાખે છે, એવા પુરુષને પર્જન્ય સમાન

मेव सकृदुपदेशेन सकृद्दानेन वा भविनं भावयति समृद्धिशालिनं वा करोति ।३। तथा-जिह्मसमानः पुरुषोऽसकृदुपदेशेनासकृद्दानेनापि वाऽल्पतमकालपर्यन्तं जन्तुं भावयति वा न भावयति, उपकरोति वा नोपकरोतीति ४। (१५)॥सू०१०॥

मूलम्——चत्तारि करंडगा पण्णत्ता, तं जहा-सोवागकरंडगा १, वेसियाकरंडए २, गाहावइकरंडए ३, रायकरंडए ४, (१६)। एवामेव चत्तारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा--सोवागकरंडगसमाणे १, वेसियाकरंडगसमाणे २, गाहावइकरंडगसमाणे ३, रायकरंडगसमाणे ४ (१७) ॥सू० ११ ॥

छाया—चत्वारः करण्डकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-श्वपाककरण्डकः १, वेश्याकरण्डकः २, गृहपतिकरण्डकः ३, राजकरण्डकः ४। (१६) एवमेव चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-श्वपाककरण्डकसमानः १, वेश्याकरण्डकसमानः २, गृहपतिकरण्डकसमानः ३, राजकरण्डकसमानः ४। (१७) ॥सू० ११॥

टीका—" चत्तारि करंडगा " इत्यादि — करण्डः-वंशशलाकादिनिर्मितो भाजनविशेषः 'करंडिया ' इति भाषाप्रसिद्धः स एव करण्डकः, ते चत्वारः प्रज्ञप्ताः,

---

तकही एक वारके उपदेशसे या एक वारके दानसे प्राणीको शुभ भावसे युक्त कर देता है या समृद्धिशाली बना देता है ३ तथा जिह्म मेघ समान वह पुरुष है जो वार २ के उपदेश या वार २ के दानसे भी अल्पतम काल तकही प्राणीको शुभ स्वभाववाला या पैसेवाला बना देता है अथवा नहीं भी बना देता है ऐसा मनुष्य किसीका उपकार करता भी है नहीं भी करता है १५ सू. १०

"चत्तारि करंडगा पण्णत्ता" इत्यादि सूत्र ११ ॥

वंशकी शालाकाओंसे निर्मित हुए पात्र विशेषका नाम करंडक है, जिसे भाषामें करंडिया कहते हैं ये करंडक चार प्रकारके होते हैं-

---

કહે છે (૩) જીમૂત સમાન પુરુષ—જે પુરુષ એક જ વાર ઉપદેશ આપીને અથવા દાન આપીને જીવોને અલ્પતર કાળ સુધી શુભ સ્વભાવવાળા અથવા સમૃદ્ધ કરી નાખે છે તે પુરુષને જીમૂત સમાન કહે છે. (૪) જિહ્મ મેઘ સમાન પુરુષ—જે માણસ વારંવાર ઉપદેશ અથવા દાન દેવા છતાં પણ જીવોને અલ્પતમ કાળ સુધી શુભ સ્વભાવવાળા અથવા સમૃદ્ધિશાળી બનાવી શકે છે અથવા બનાવી શકતો નથી એવા પુરુષને જિહ્મસમાન કહે છે. (૧૫) સૂ. ૧૦

तद्यथा–श्वपाककरण्डकः स च कचवरोच्छिष्टाशुचिप्रभृत्यसारस्त्वाश्रयतयाऽत्यन्तमसारो भवति १, तथा–वेश्याकरण्डकः स तु जतुपूरितसुवर्णनिर्मितालङ्काराद्याश्रयतया श्वपाककरण्डापेक्षया किञ्चित्सारोऽपि गृहपति–राजकरण्डापेक्षया त्वसार एव भाति २, तथा–गृहपतिकरण्डकः–गृहपतिः–सम्पत्तिशाली कौटुम्बिकः तस्य करण्डकस्तथा, स च विशिष्टमणिस्वर्णाभरणाद्याश्रयतया पूर्वोक्तकरण्डद्वयात् सारतरो भवति ३, तथा–राजकरण्डकः–स तु बहुमूल्यरत्नाद्याश्रयतया पूर्वोक्तकरण्डत्रयात्सारतमो भवति ४।

एक श्वपाककरण्डक १ दूसरा वेश्या करण्डक, तीसरा गृहपति करण्डक और चौथा राजकरण्डक इनमें जो श्वपाकका चाण्डालका करण्डक होता है, वह कूडा वगैरहके रखे जानेके कारण या झूठ वगैरहके रखे जानेके कारण या अपवित्र टट्टी आदिके भरनेके कारण अत्यन्त असार होता है १ वेश्याका जो करण्डक होता है वह लाखसे युक्त चपडीके युक्त सोनेके बने गहनों अलंकारोंसे युक्त होनेके कारण–वे उसमें धरे रहते हैं–इस कारणसे श्वपाकके करण्डककी अपेक्षा कुछ सारवाला होता है पर गृहपतिके या राजाके करण्डककी अपेक्षा तो असार होता है २ जो सम्पत्तिशाली कौटुम्बिक गृहपति होता है, उसका करण्डक विशिष्ट मणियोंके गहनोंसे या स्वर्णके गहनोंसे भरा रहनेके कारण पूर्वोक्त करण्डक द्वयसे सारतर होता है ३ तथा राजाका जो करण्डक होता है वह बहुमूल्यवाले रत्नादिकोंसे भरा रहनेके कारण पूर्वोक्त तीन करण्डकोंकी अपेक्षा सारतम होता है ४ (१६)

"चत्तारि करंडगा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—(સૂ. ૧૧)

કરડિયાના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) શ્વપાક કરડિયો—ચાંડાળના કરંડિયાને શ્વપાક કરંડક કહે છે. તેમા કચરો, એંઠ, મળ આદિ અપવિત્ર ચીજો ભરવામા આવે છે તે કારણે તે અસાર હોય છે (૨) વેશ્યા કરંડક—વેશ્યાના કરંડિયાને વેશ્યાકરંડક કહે છે. તેમાં લાખ આદિથી યુક્ત સોનાનાં આભૂષણો ભરેલા હોવાને કારણે તે શ્વપાક કરંડક જેવો અસાર હોતો નથી. તે શ્વપાક કરંડક કરતા સારયુક્ત હોય છે પણ ગૃહપતિકરંડક અને રાજ-કરંડક કરતાં તો અસાર હોય છે (૩) ગૃહપતિકરડક—સંપત્તિશાળી ગૃહસ્થના કરડિયાને ગૃહપતિકરંડક કહે છે. તે વિશિષ્ટ મણિઓના કે સુવર્ણના આભૂષણોથી ભરેલો હોય છે. તે કારણે પૂર્વોક્ત બે કરંડિયા કરતાં તે વધારે સારયુક્ત હોય છે. (૪) રાજકરડક—રાજાનો કરંડિયો બહુ મૂલ્યવાન રત્નાદિકોથી ભરેલો હોવાને કારણે પૂર્વોક્ત ત્રણે કરંડિયા કરતા વધારે સારયુક્ત હોય છે.॥૧૬॥

"एवामेव चत्वार आयरिया" इत्यादि—एवमेव-उक्त करण्डकचतुष्टयवदेव आचार्याश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-श्वपाककरण्डकसमानः-य आचार्य उत्सूत्रादि प्ररूपकत्वादुन्मार्गगामितया चारित्रपरिभ्रष्टो भवति सोऽत्यन्तासारत्वाश्चाण्डालकरण्डकतुल्य उच्यते । १ । इति प्रथमः १। तथा-वेश्याकरण्डकसमानः-यस्तु किञ्चिदेवश्रुतं यथा कथंचित्पठित्वा वागाडम्बरेण मुग्धजनमाकृष्टं करोति स परीक्षायामदक्षतयाऽसारत्वादेववेश्याकरण्डकतुल्यः । इति द्वितीयः २। तथा-गृहपतिकरण्डकसमानः-यस्तु स्व-परसिद्धान्तज्ञः क्रियादिगुणसम्पन्नश्च भवति स सारसम्पन्नत्वाद् गृहपतिकरण्डकतुल्यः । इति तृतीयः ३। तथा-राजकरण्डकसमानः-यस्तु सर्वैरप्याचार्यगुणैरलङ्कृततया तीर्थङ्करसदृशः स सारतमत्वाद् नृपतिकरण्डकतुल्यः सुधर्मादिवत् इति चतुर्थः ४ (१७) ॥ सू० ११ ॥

इसी प्रकारसे आचार्यजन भी चार प्रकारके होते हैं—श्वपाक करण्डक तुल्य वह आचार्य है, जो उत्सूत्र शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करता हैं उन्मार्गगामी होता है अतः चारित्रसे भ्रष्ट होता है १ वेश्या करण्डकके तुल्य वह आचार्यहै जो थोड़ासाही श्रुत यथाकथञ्चित् रूपसे पढकर अपने वचनाडम्बरसे मुग्धजनको आकृष्ट करताहै वह परीक्षामें अदक्ष अचतुर होनेके कारण असार कहा गयाहै २ गृहपति करण्डकके समान वह आचार्य है जो स्वसिद्धान्त और परसिद्धान्तका जाननेवाला होता है, और क्रियादि गुणोंसे सम्पन्न होता है ऐसा वह सारसम्पन्न आचार्य गृहपति करण्डक जैसा कहा गया है ३ तथा राजाके करण्डक समान वह आचार्य है जो समस्त आचार्योंके गुणोंसे अलङ्कृत होनेके कारण

એજ પ્રમાણે આચાર્યો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે--(૧) શ્વપાક કરંડક સમાન આચાર્ય—જે આચાર્ય ઉત્સૂત્ર (શાસ્ત્ર વિરુદ્ધની) પ્રરૂપણા કરે છે, ઉન્માર્ગગામી હોય છે અને તે કારણે ચારિત્રભ્રષ્ટ હોય છે એવા આચાર્યને શ્વપાક કરંડક સમાન કહે છે. (૨) વેશ્યાકરંડક સમાન આચાર્ય—જે આચાર્ય થોડા થોડા શ્રુતનો જ્ઞાતા હોય છે, અને પોતાના વચનાડંબર દ્વારા મુગ્ધજનોને આકર્ષનારા હોય છે તેઓ શ્રુતજ્ઞાનમાં પૂર્ણ ન હોવાને કારણે શ્વપાકકરંડક કરતા વધારે સારયુક્ત અને ત્રીજા અને ચોથા પ્રકારના આચાર્યોની અપેક્ષાએ અસારયુક્ત ગણાય છે.

(૩) ગૃહપતિ કરંડક સમાન આચાર્ય—જે આચાર્ય સ્વસિદ્ધાંત અને પરસિદ્ધાંતના જાણકાર હોય છે અને ક્રિયાદિ ગુણોથી સંપન્ન હોય છે, તેમને ગૃહપતિકરંડક સમાન કહે છે. (૨) રાજકરંડક સમાન આચાર્ય—જેઓ

मूलम्—चत्तारि रुक्खा पण्णत्ता, तं जहा--साले णाममेगे सालपरियाए १, साले णाममेगे एरंडपरियाए २, एरंडे णाममेगे सालपरियाए ३, एरंडे णाममेगे एरंडपरियाए ४ (१८)। एवामेव चत्तारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा--साले णाममेगे सालपरियाए १, साले णाममेगे एरंडपरियाए २, एरंडे णाममेगे सालपरियाए ३, एरंडे णाममेगे एरंडपरियाए ४। (१९)।

चत्तारि रुक्खा पण्णत्ता, तं जहा—साले णाममेगे सालपरिवारे ४ (२०)। एवामेव चत्तारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा-साले णाममेगे सालपरिवारे ४ (२१)।

सालदुममज्झयारे जह साले णाम होइ दुमराया।
इय सुंदर आयरिए सुंदर सीसे मुणेयव्वे ॥ १ ॥
एरंडमज्झयारे जह साले णाम होइ दुमराया।
इय सुंदर आयरिए मंगुल सीसे मुणेयव्वे। २ ॥
सालदुममज्झयारे एरंडे णाम होइ दुमराया।
इय मंगुल आयरिय सुंदरसीसे मुणेयव्वे ॥ ३ ॥
एरंडमज्झयारे एरंडे णाम होइ दुमराया।
इय मंगुल आयरिए मंगुलसीसे मुणेयव्वे ।४। सू० १२ ॥

छाया—चत्वारो वृक्षाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–सालो नामैकः सालपर्यायः १, सालो नामैक एरण्डपर्यायः २, एरण्डो नामैकः सालपर्यायः ३, एरण्डो नामैक

तीर्थंकर जैसा होताहै, ऐसा वह सुधर्मास्वामीकी तरह सारतम होनेसे नृपतिकरण्डक जैसा कहा गया है ४ (१७) सूत्र ११ ॥

આચાર્યોના સમસ્ત ગુણોથી વિભૂષિત હોવાને કારણે તીર્થંકર જેવાં હોય છેએવા સુધર્માસ્વામી જેવા સારતમ આચાર્યને નૃપતિકરંડક સમાન કહે છે ।૧૭।સૂ.।૧૧।

एरण्डपर्यायः (१८) । एवमेव चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-सालो नामैकः सालपर्यायः १, सालो नामैक एरण्डपर्यायः २, एरण्डनामैकः सालपर्यायः ३, एरण्डो नामैक एरण्डपर्यायः ४ (१९) चत्वारो वृक्षाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-सालो नामैकः सालपरिवारः ४ (२०) एवमेव चत्वार आचार्या प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-सालो नामैकः सालपरिवारः ४ (२१) ।

सालद्रुममध्यकारे यथा सालो नाम भवति द्रुमराजः ।
इति सुन्दर आचार्यः सुन्दरः शिष्यो ज्ञातव्यः ॥ १ ॥
एरण्डमध्यकारे यथा सालो नाम भवति द्रुमराजः ।
इति सुन्दर आचार्यः मङ्गुलः (असुन्दरः) शिष्यो ज्ञातव्यः । २ ॥
सालद्रुममध्यकारे एरण्डो नाम भवति द्रुमराजः ।
इति मङ्गुल आचार्यः सुन्दरः शिष्यो ज्ञातव्यः ॥ ३ ॥
एरण्ड मध्यकारे एरण्डो नाम भवति द्रुमराजः ।
इति मङ्गुल आचार्यः मङ्गुलः शिष्यो ज्ञातव्यः ॥ ४ ॥ सू० १२ ॥

टीका—'चत्तारि रुक्खा" इत्यादि—पुनर्वृक्षाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको वृक्षः सालः-सालाख्यवृक्षजातिमत्त्वात् सालो भवन् सालपर्यायः-सालगत-निविडच्छायत्वसंसेव्यत्वादि धर्मसम्पन्नो भवतीति प्रथमः । १ ।

तथा—एकः सालो भवन्नपि एरण्डपर्यायः-एरण्डगतालपच्छायत्वासेव्यत्वा-दिधर्मवान भवति । इति द्वितीयः । २ । तथा-एक एरण्डः सन् घनच्छायत्वादि-

---

'चत्तारि रुक्खा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र १२ ॥

टीकार्थ-वृक्ष चार प्रकारके कहे गयेहैं जैसे-साल साल पर्याय १ साल एरण्ड पर्याय २ एरण्ड साल पर्याय ३ और एरण्ड एरण्ड पर्याय ४ इनमें जो प्रथम प्रकारका वृक्षहै वह साल नामक वृक्षकी जातिवाला होनेसे साल होता हुआ सालगत जो निबिड छाया आदि धर्म है तथा लोगोंके द्वारा आश्रय लेना आदि जो बातें हैं उनसे युक्त होता है ॥१॥ द्वितीय प्रकारका जो वृक्ष है वह साल होता हुआ भी एरण्डके जैसी पर्यायवाला होता है जैसे-एरण्ड अल्प छायावाला होता है अत

"चत्तारि रुक्खा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ-(સૂ ૧૨)

વૃક્ષ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) સાલ-સાલપર્યાય, (૨) સાલ-એરંડ પર્યાય, (૩) એરંડ-સાલપર્યાય, (૪) એરંડ-એરંડપર્યાય. તેમાંથી પહેલા પ્રકારનું વૃક્ષ સાલ નામના વૃક્ષની જાતિનું હોય છે અને સાલવૃક્ષના ગુણોથી યુક્ત હોય છે એટલે કે ઘાડ છાયાથી યુક્ત હોવાને કારણે લોકો અને પ્રાણીઓને આશ્રય આપનારું હોય છે માટે તેને 'સાલ-સાલપર્યાય' રૂપ કહ્યું છે. (૨) બીજા પ્રકારનું વૃક્ષ સાલ જાતિનું હોવા છતાં પણ એરંડાના

धर्मसम्पन्नत्वात् सालपर्यायो भवतीति तृतीयः ३, तथा–एक एरण्डः सन् पुनरे-रण्डपर्यायः–एरण्डगताल्पच्छायत्वादि धर्मोपेतो भवतीति चतुर्थः ४ (१८)

"एवामेव चत्तारि आयरिया" इत्यादि—एवमेव–सालवदेव आचार्याश्च-त्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–एकः–कश्चिदाचार्यः सालः–सालसदृशः–सालो यथा साल-जातीयो वृक्षो बहुच्छायस्तथाऽऽचार्योऽपि सत्कुलोत्पन्नः सद्गुरुकुलश्च साल एवो-च्यमानः सालपर्यायः–सालधर्मा, यथा हि सालः सच्छायत्वादि धर्मयुक्तस्तथा शारीरिकमानसिकदुःखज्वालादह्यमानभविनां तपानां ज्ञानामृतेनापहारकतया स्वयं ज्ञानक्रियाजनितयशः–प्रभृति गुणसम्पन्न आचार्योऽपि साल एव व्यपदि-

एव असंख्य होता है ऐसेही धर्मवाला वह होता है तृतीय प्रकारका वृक्ष एरण्ड होना हुआ भी ऐसा होता है कि घनी छायावाला होता है अतएव जनों द्वारा संसेव्य होता है इत्यादि रूपसे सालवृक्ष गत धर्मोंवाला होनेसे वह साल पर्यायवाला होता है। तथा–चतुर्थ प्रकारका वृक्ष एरण्ड हुआ भी एरण्ड गत अल्प छायावाले धर्मसे असंसेव्यत्व आदि बातोंसे युक्त बना रहता है (१८)

इसी प्रकारसे चार आचार्य होते हैं–इनमें साल सालपर्यायवाला वह आचार्य होता है जो सत्कुलमें उत्पन्न हुआ होता है, सत् गुरुकुल-वाला होता है तथा–शारीरिक एवं मानसिक दुःखरूप ज्वालासे अत्यन्त जलते हुए भव्य जनोंके तापको जो अपने ज्ञानामृतके सिंचनसे शान्त कर देताहै और स्वयं ज्ञान क्रियाके निर्दोष(निरतिचार)रूप पालनसे जनित यश आदि गुणोंसे सम्पन्न होताहै। साल हुआ भी एरण्डपर्यायवाला वह

જેવી પર્યાયવાળું હોય છે, એટલે કે એરંડાની જેમ અલ્પ છાયાયુક્ત હોય છે. તે કારણે પ્રાણીઓ દ્વારા અસંસેવ્ય હોય છે–તેમના આશ્રયસ્થાન રૂપ હોતું નથી. (૩) ત્રીજા પ્રકારનું વૃક્ષ એરંડાની જાતિનું હોવા છતાં ઘાડ છાયાયુક્ત હોવાને કારણે સાલ પર્યાયવાળું (સાલના ધર્મોથી સંપન્ન) હોય છે, અને તે કારણે પ્રાણીઓ દ્વારા સંસેવ્ય હોય છે. ચોથા પ્રકારનું વૃક્ષ એરંડાની જાતિનું હોય છે અને અલ્પ છાયાદિ એરંડાના ધર્મોથી યુક્ત હોવાને કારણે પ્રાણીઓ દ્વારા અસંસેવ્ય હોય છે ।૧૮।

એજ પ્રમાણે આચાર્ય પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) સાલ–સાલ-પર્યાયવાળા આચાર્ય–જે આચાર્ય સત્કુલમાં ઉત્પન્ન થયા હોય છે–સત્ ગુરુ-કુલવાળા હોય છે, તથા શારીરિક અને માનસિક દુઃખરૂપ જ્વાળાથી બળી રહેલા ભવ્યજનોના તાપને જેઓ પોતાના જ્ઞાનામૃતના સિંચન દ્વારા શાન્ત કરી નાખે છે અને જેઓ પોતે જ્ઞાનક્રિયાના નિર્દોષ પાલનથી જનિત યશ

ज्यते, इति प्रथमः १। एकः सालो भवन्नपि एरण्डपर्यायः-एरण्डधर्मा-अल्पज्ञानादिरूपच्छायत्वाद् भवतीति द्वितीयः २। एवं शेषभङ्गद्वयमपि बोध्यम् ।४। (१९)

" चत्तारि रुक्खा " इत्यादि - वृक्षाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको वृक्षः सालः-सालवृक्षजातीयः सन् सालपरिवारः-साल एव परिवारो यस्य स तथा भवति इति प्रथमः । एवं शेषभङ्गत्रयमपि ४। (२०)

आचार्य है जो सत्कुलमें उत्पन्न हुआ भी सत् गुरुकुलवाला हुआ भी अल्प ज्ञानादि रूप छायावाला होता है २ इसी प्रकारसे शेष दो भङ्गका भी व्याख्यान कर लेना चाहिये ४ (१९)–" चत्तारि रुक्खा " वृक्ष चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे-साल साल परिवारवाला १ आदि ४ इसी तरहसे आचार्य भी चार कहे गये हैं साल साल परिवारवाला १ आदि ४ तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि जैसे कोई एक वृक्ष-सालवृक्ष ऐसा होता है जो स्वयं सालवृक्ष होता हुआ भी सालवृक्षके परिवारवाला होता है १ कोई एक वृक्ष सालवृक्ष ऐसा होता है जो एरण्डके परिवार-वाला होता है २ कोई एक वृक्ष ऐसा होता है जो एरण्ड हुआ भी साल परिवारवाला होता है ३ और कोई एक वृक्ष ऐसा होता है, जो एरण्ड

આદિ ગુણોથી સંપન્ન હોય છે એવા આચાર્યને સાલ-સાલપર્યાય રૂપ પહેલા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે.

(૨) સાલ-એરંડપર્યાય સમાન આચાર્ય--જે આચાર્ય સત્કુલમાં ઉત્પન્ન થયેલા હોવા છતાં પણ અને સત્ ગુરુકુલવાળા હોવા છતાં પણ ઘણા ઓછાં જીવોને તેમના જ્ઞાનાદિ રૂપ છાયાનો લાભ આપનારા હોય છે, એવા આચાર્યને ' સાલ એરંડપર્યાય સમાન ' કહી શકાય છે. (૩) એરંડ-સાલપર્યાય સમાન અને (૪) એરંડ-એરંડપર્યાય સમાન આ બન્ને ભાંગાનો ભાવાર્થ જાતે જ સમજી લેવો. ।૧૯।

" ચત્તારિ રુક્ખા " ઇત્યાદિ-વૃક્ષ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે --

(૧) સાલ-સાલ પરિવારવાળું (૨) સાલ-એરંડ પરિવારવાળું, (૩) એરંડ-સાલપરિવારવાળું અને (૪) એરંડ-એરંડપરિવારવાળું એજ પ્રમાણે આચાર્ય પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) સાલ-સાલપરિવારવાળા ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર સમજવા દૃષ્ટાન્ત સૂત્રના ચારે ભાગાનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-કોઇ એક વૃક્ષ, જાતિની અપેક્ષાએ સાલવૃક્ષની જાતિનું હોય છે અને સાલવૃક્ષના પરિવારથી યુક્ત હોય છે. (૨) કોઈ એક વૃક્ષ, જાતિની અપેક્ષાએ સાલવૃક્ષની જાતિનું હોય છે પણ પરિવારની અપેક્ષાએ એરંડા જેવું હોય છે. (૩) કોઈ એક વૃક્ષ, એરંડાની જાતિનું હોવા છતાં સાલવૃક્ષ જેવાં પરિવારવાળું

"एवामेवे" त्यादि—एवमेव चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः-सालः-सालसदृशः सद्गुरुकुलश्रुतादिभिरुत्तमत्वात् स पुनः सालपरिवारः-सालायमानमहानुभाव साधुपरिजनत्वात् भवति इति प्रथमः १। तथा एकः-सालः सन्नेरण्डपरिवारः-एरण्डायमाननिर्गुणसाधुपरिवारकत्वात्, इति द्वितीयः २। तथा-एकः श्रुतादिहीनतया एरण्डः सन्नपि सालपरिवारो भवति। इति तृतीयः ३। तथा-एक एरण्डः सन् पुनरेरण्डपरिवारो भवतीति चतुर्थः ४। (२१)।

प्रागुक्तमर्थं द्रढयितुं गाथा उपन्यस्यति—" सालदुममज्झयारे " इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्-सालद्रुममध्यकारे—सालद्रुममध्ये। मङ्गुलशब्दोऽसुन्दरार्थः॥सू० १२॥

हुआ भी एरण्ड परिवारवाला ही होता है ४ इसी प्रकारसे कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो सालवृक्षके जैसा होता है—सद्गुरु कुलवाला होताहै श्रुताभ्यास आदि गुणोंसे उत्तम होता है—और सालवृक्षके जैसे परिवारसे—तपस्वी आदि महानुभाववाले साधु परिजनोंसे युक्त होता है तथा कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो स्वयं सालके जैसा होता हुआ भी एरण्ड के परिवार जैसे—निर्गुण साधु परिवारसे युक्त होता है कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो एरण्डके जैसा हुआ भी श्रुतादिसे हीन हुआ भी-सालके परिवार जैसे महा प्रभावशाली साधु परिवारवाला होता है तथा कोई एक आचार्य ऐसा होता है कि जो स्वयं एरण्डके तुल्य होता है और एरण्डके जैसे शिष्य परिवारवाला होता है ४ (२०) इस कथनको दृढ करनेके लिये सूत्रकारने इन गाथाओंको कहा है—

હોય છે. (૪) કોઈ એક વૃક્ષ એરંડાની જાતિનું હોય છે અને એરંડાના જેવા પરિવારવાળું હોય છે.

હવે દાર્ષ્ટાન્તિક સૂત્રનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઇ એક આચાર્ય સાલવૃક્ષ સમાન હોય છે-સદ્ ગુરુકુલવાળા હોય છે અને શ્રુતાભ્યાસ આદિ ગુણોથી સપન્ન હોય છે, અને સાલવૃક્ષ જેવા પરિવારથી પણ યુક્ત હોય છે એટલે કે મહાનુભાવવાળા (પ્રભાવશાળી) સાધુઓના પરિવારથી યુક્ત હોય છે. (૨) કોઇ આચાર્ય એવા હોય છે કે જેઓ પોતે સાલવૃક્ષ સમાન હોય છે પણ નિર્ગુણ સાધુજનો રૂપી એરડ પરિવારથી યુક્ત હોય છે. (૩) કોઈ આચાર્ય પોતે એરંડવૃક્ષ સમાન એટલે કે શ્રુતાદિથી રહિત હોય છે પણ સાલવૃક્ષ જેવા પરિવાર રૂપ મહા પ્રભાવશાળી સાધુઓના પરિવારથી યુક્ત હોય છે (૪) કોઇ આચાર્ય પોતે એરડવૃક્ષ સમાન હોય છે અને એરંડ સમાન પરિવારથી યુક્ત હોય છે ।૨૦। આ કથનનું સમર્થન કરવા માટે

मूलम्—चत्तारि मच्छा पण्णत्ता, तं जहा—अणुसोयचारी १, पडिसोयचारी २, अंतचारी ३, मज्झचारी ४। (२२) एवामेव चत्तारि भिक्खागा पण्णत्ता, तं जहा—अणुसोयचारी १, पडिसोयचारी २, अंतचारी ३, मज्झचारी ४ (२३)

चत्तारि गोला पण्णत्ता, तं जहा-महुसित्थगोले १, जउगोले २, दारुगोले ३, मट्टियागोले ४ (२४)। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—महुसित्थगोलसमाणे ४ (२५)।

"सालदुममज्झयारे" इत्यादि। इन गाथाओंका भावार्थ ऐसा है कि जैसे सालद्रुमोंके बीचमें कोई एक द्रुमराज होता है, उसी प्रकारसे कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो स्वयं सुन्दर होता है और उसका शिष्य भी सुन्दर होतेहैं। एरण्डद्रुमोंके बीचमें जैसे सालद्रुमराज होताहै उसी प्रकारसे आचार्य तो सुन्दर होता है, पर शिष्य सुन्दर नहीं होता है। जिस प्रकार सालद्रुमके बीचमें एरण्ड द्रुमराज होताहै, उसी प्रकार कोई एक आचार्य ऐसा होता है, जो स्वयं तो असुन्दर होताहै, और शिष्य (परिवार) सुन्दर होता है, तथा जैसे एरण्डोंके बीचमें एरण्डही द्रुमराज होताहै, उसी प्रकार आचार्य भी असुन्दर होताहै और शिष्य भी असुन्दर होता है। यहां मध्यकार पद बीचका वाचक और मङ्गुल पद असुन्दर अर्थका वाचक है ॥ सूत्र १२ ॥

સૂત્રકારે નીચેની ગાથાઓ આપી છે–"सालदुममज्झयारे" ઇત્યાદિ. આ ગાથાઓનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) જેમ સાલદ્રુમોની વચ્ચે રહેલું કોઇ એક સાલદ્રુમરાજ (ઉત્તમ સાલવૃક્ષ) શોભે છે એજ પ્રમાણે ઉત્તમ શિષ્યોની વચ્ચે રહેલા ઉત્તમ આચાર્ય પણ શોભતા હોય છે (૨) જેમ એરંડવૃક્ષોની વચ્ચે કોઈ એક ઉત્તમ સાલવૃક્ષ હોય છે, તેમ કોઈ એક આચાર્ય તો સુંદર (ઉત્તમ) હોય છે પણ તેમના શિષ્યો સુંદર હોતા નથી. (૩) જેમ સાલવૃક્ષોની વચ્ચે કોઈ એક એરંડ દ્રુમરાજ હોય છે, તેમ કોઈ સુંદર શિષ્ય સમુદાયથી યુક્ત એવા અસુંદર આચાર્ય હોય છે. (૪) જેમ એરંડવૃક્ષોની વચ્ચે કોઈ એરંડદ્રુમરાજ હોય છે તેમ કોઈ આચાર્ય પોતે પણ અસુંદર હોય છે અને તેમના શિષ્યો પણ અસુંદર હોય છે. અહીં "મધ્યકાર" પદ વચ્ચેનું વાચક છે અને "મङ्गुल" પદ અસુંદરના અર્થનું વાચક છે, એમ સમજવું. ॥સૂ ૧૨॥

चत्तारि गोला पण्णत्ता, तं जहा—अयगोले १, तउगोले २, तंबगोले ३, सीसगगोले ४ (२६)। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—अयगोलसमाणे, जाव सीसगगोलसमाणे ४, (२७)।

चत्तारि गोला पण्णत्ता, तं जहा—हिरण्णगोले १, सुवण्णगोले २, रयणगोले ३, वयरगोले ४ (२०)। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—हिरण्णगोलसमाणे जाव वइरगोलसमाणे ४। (२९)।

चत्तारि पत्ता पण्णत्ता, तं जहा--असिपत्तेय १, करपत्ते २, खुरपत्ते ३, कलंबचीरियापत्ते ४ (३०)। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--असिपत्तसमाणे जाव कलंबचीरियापत्तसमाणे ४ (३१)

चत्तारि कडा पण्णत्ता, तं जहा--सुंबकडे १, विदलकडे २, चम्मकडे ३, कंबलकडे ४ (३२)। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--सुंबकडसमाणे जाव कंबलकडसमाणे ४। (३३) ॥ सू० १३ ॥

छाया—चत्वारो मत्स्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अनुस्रोतश्चारी १, प्रतीस्रोतश्चारी २, अन्तचारी ३, मध्यचारी ४। (२२) एवमेव चत्वारो भिक्षाकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अनुस्रोतश्चारी १, प्रतिस्रोतश्चारी २, अन्तचारी ३, मध्यचारी ४ (२३)।

चत्वारो गोलाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—मधुसिक्थगोलः १, जतुगोलः २, दारुगोलः ३, मृत्तिकागोलः ४। (२४)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—मधुसिक्थगोलसमानः ४ (२५)।

चत्वारो गोलाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अयोगोलः १, त्रपुगोलः २, ताम्रगोलः ३, सीसकगोलः ४ (२६)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—अयोगोलसमानः यावत् सीसकगोलसमानः ४ (२७)।

चत्वारो गोलाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–हिरण्यगोलः १, सुवर्णगोलः २, रत्नगोलः ३, वज्रगोलः ४ (२८)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–हिरण्यगोलसमानः यावत् वज्रगोलसमानः ४। (२९)।

चत्वारि पत्राणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–असिपत्रं १, करपत्रं २, क्षुरपत्रं ३, कदम्बचीरिकापत्रम् ४। (३०)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–असिपत्रसमानः यावत् कदम्बचीरिकापत्रसमानः ४ (३१)।

चत्वारः कटाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–सुम्बकटः १, विदलकटः २, चर्मकटः ३, कम्बलकटः ४। (३२)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–सुम्बकटसमानः यावत् कम्बलकटसमानः ४ (३३)॥ सू० १३॥

टीका—" चत्तारि मच्छा " इत्यादि—चत्वारो मत्स्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अनुस्रोतश्चारी–अनुस्रोतसा चरतीत्येवंशीलस्तथा–नद्यादि प्रवाहगामी १, तथा–प्रतिस्रोतश्चारी–नद्यादिप्रवाहाभिमुखगामी २, तथा–अन्तचारी–पार्श्वचारी ३, तथा–मध्यचारी–मध्ये–अभ्यन्तरे चरतीत्येवंशीलस्तथा ४ (२२)।

'एवामेवे' त्यादि—एवमेव–मत्स्यवदेव भिक्षाकाः–भिक्षाशीलाः साधवः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अनुस्रोतश्चारी–यो भिक्षाकोऽभिग्रहविशेषादुपाश्रयसमी-

---

चत्तारि मच्छा पण्णत्ता इत्यादि सूत्र १३॥

टीकार्थ–मत्स्य चार प्रकारके कहे गयेहैं जैसे–अनुस्रोतचारी१ प्रतिस्रोतचारी २ अन्तचारी ३ और मध्यचारी४ इनमें जो नदी आदिके प्रवाहके साथ चलता है वह अनुस्रोतश्चारी मत्स्य है, जो नदी आदिके प्रवाहके सामने जाताहै वह प्रतिस्रोतचारी मत्स्यहै नदीके पासमें पार्श्वभागमें जो चलता है वह अन्तचारी मत्स्यहै। और जो नदीके भीतरमें मध्य भागमें नीचे चलता है वह मध्यचारी मत्स्य है इसी प्रकारसे भिक्षाक–भिक्षाशील साधु भी चार प्रकारके होते हैं जैसे–कोई एक भिक्षाक–ऐसा

" चत्तारि मच्छा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—(સૂ. ૧૩)

મત્સ્યના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) અનુસ્રોતચારી, (૨) પ્રતિસ્રોતચારી, (૩) અન્તચારી અને (૪) મધ્યચારી

જે મત્સ્ય નદી આદિના પ્રવાહની દિશામાં ચાલે છે તેને અનુસ્રોતચારી કહે છે. જે મત્સ્ય પ્રવાહની સામેની દિશામાં ચાલે છે તેને પ્રતિસ્રોતચારી કહે છે. જે મત્સ્ય નદીના કિનારા પાસે જ સંચરણ કરે છે તેને અન્તચારી કહે છે. અને જે મત્સ્ય નદીના મધ્ય ભાગમાં પાણીની નીચે સંચરણ કરનારું હોય છે તેને મધ્યચારી કહે છે.

प्रात् क्रमेण गृहेषु भिक्षते सोऽनुस्रोतश्चारीति प्रथमः १। तथा-प्रतिस्रोतश्चारी-यस्तूत्क्रमेण-प्रथमं गृहेषु भिक्षते ततो निजस्थानसमीपस्थगृहमायाति भिक्षार्थं स तथा=दूरादारभ्योपाश्रयसमीपचारीत्यर्थः२, तथा-अन्तचारी-यस्तु क्षेत्रस्यान्ते-अवसाने भिक्षार्थं चरतीत्येवंशीलस्तथा ३, तथा-मध्यचारी-क्षेत्राभ्यन्तरे चरतीत्येवंशीलस्तथा ४। (२३)।

"चत्तारि गोला" इत्यादि—गोलाः-वृत्तपिण्डाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मधुसिक्थगोलः-मधुसिक्थं-मदनं 'मोम' इति भाषायां प्रसिद्धं द्रव्यं तस्य गोलः

होता है जो अनुस्रोतचारी होता है, ऐसा वह भिक्षाक अभिग्रह विशेषके वश उपाश्रयके पाससे लगाकर क्रमशः गृहोंमें भिक्षा मांगता है। कोई एक भिक्षाक ऐसा होताहै, जो प्रतिस्रोतचारी होताहै-ऐसा वहसाधु उत्क्रमसे पहिले गृहोंमें भिक्षाकी याचना करता है बादमें उपाश्रय आदि अपने स्थानके समीपस्थ गृह पर आकर भिक्षा याचना करता है। यह भिक्षा याचना पहिले दूरसे प्रारम्भ करताहै और बादमें उपाश्रयके पास रहे हुए घरोंसे भिक्षा करताहै, कोई एक भिक्षाक ऐसा होता है जो अन्तचारी होता है ऐसा वह भिक्षाक क्षेत्रके अन्तमें भिक्षाके लिये पर्यटन करता है कोई एक साधु ऐसा होता है जो मध्यचारी होता है-ऐसा वह भिक्षाक क्षेत्रके भीतरही भिक्षाके लिये फिरता है ४ (२३)

"चत्तारि गोला" इत्यादि-गोला-वृत्तपिण्ड-चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-मधुसिक्थ गोल १ जतुगोल २ दारुगोल ३ और मृत्तिका गोल ४ मोमका-मेणका जो गोला होताहै वह मधुसिक्थ गोलहै, लाखका

એજ પ્રમાણે ભિક્ષાક (ભિક્ષાશીલ સાધુ) પણ ચાર પ્રકારના હોય છે-(૧) અનુસ્રોતચારી—કોઇ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે અભિગ્રહવિશેષને કારણે ઉપાશ્રયની સમીપના ઘરથી શરૂ કરીને ક્રમશઃ ભિક્ષા માગવા માટે ગમન કરે છે. (૨) પ્રતિસ્રોતચારી ભિક્ષુક-કોઇ એક ભિક્ષુક (સાધુ) એવો હોય છે કે જે ઉત્ક્રમથી (ઉલ્ટા ક્રમથી) ભિક્ષા માગવી શરૂ કરે છે. એટલે કે ઉપાશ્રયથી દૂર આવેલા ઘરથી ભિક્ષા માગવાની શરૂ કરીને ક્રમશઃ ઉપાશ્રયની સમીપના સ્થાન તરફ ભિક્ષા પ્રાપ્તિ માટે સંચરણ કરનારો હોય છે (૩) અન્તચારી ભિક્ષાક—તે ક્ષેત્રના અન્ત ભાગમાં ભિક્ષા માગવા માટે ગમન કરતો હોય છે (૪) મધ્યચારી ભિક્ષાક - કોઈ સાધુ એવો હોય છે કે જે ક્ષેત્રના મધ્યભાગના સ્થળોમા ભિક્ષા માગવા માટે ફરતો હોય છે ।૨૩।

'चत्तारि गोला" ઈત્યાદિ—ગોળાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) મધુસિકથ ગોળો-મીણના ગોળાને મધુસિકથ ગોળો કહે છે. (૨)

१, तथा-जतुगोलः-जतु लाक्षा-'लाख' इति भाषायां प्रसिद्धं द्रव्यम्-तस्य गोलः २, दारुगोलः-काष्ठगोलः ३, मृत्तिकागोलः, एते क्रमेण मृदु-कठिनतर-कठिनतमा भवन्ति । (२४) ।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव-उक्तगोलचतुष्टयवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-मधुसिक्थगोलसमानः-मदनगोलो यथाऽल्पतापेनापि द्रवितो भवति तथा-परीषहादिना यः पुरुषो मृदुसत्त्वो भवति स तत्पदव्यपदेश्यः १, तथा-जतुगोलसमानः-जतुगोलो यथाऽल्पतापेनाद्रवन्मदनगोलापेक्षया कठिनो भवति तथा यः पुरुष परीषहादिषु दृढसत्त्वो भवति स तत्पदव्यपदेश्यः २, तथा-दारुगोलसमानः-यथा-दारुगोलः-काष्ठगोलः, स

जो गोला होता है वह जतुगोल है २ काठका जो गोला होता है वह दारुगोल है ३ और मिट्टीका जो गोला होता है वह मृत्तिका गोल है ४ ये चारों गोले क्रमशः मृदु, कठिन, कठिनतर और कठिनतम होते हैं (२४) इसी तरहसे पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं इनमें मधुसिक्थ गोल समान वह पुरुष है जो परीषह आदिसे कमजोर बलवाला बन जाता है, जैसे मोमका गोला थोडेसे भी तापसे पिघल जाता है इसीलिये ऐसे पुरुषको मधुसिक्थ गोला जैसा कहा गया है १ । जैसे जतु गोला अल्प तापसे नहीं पिघलता है, क्योंकि वह मोमके गोलाकी अपेक्षा कठिन होता है उसी प्रकार जो परीषह आदिके आने पर चलायमान नहीं होता है, वह पुरुष जतुगोलाके समान कहा गया है २ जैसे-काष्ठका गोला तापसे पिघलता नहीं है, क्योंकि वह कठिनतर

જતુગોળો-લાખના ગોળાને જતુગોળો કહે છે (૩) દારુગોળો-લાકડાના ગોળાને દારુગોળો કહે છે (૪) મૃત્તિકાગોળો-માટીના ગોળાને મૃત્તિકાગોળો કહે છે. તે ચારે ગોળા અનુક્રમે મૃદુ, કઠિન, કઠિનતર અને કઠિનતમ હોય છે ।૨૪। એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) મીણના ગોળા સમાન પુરુષ-જેમ મીણનો ગોળો થોડા તાપથી પણ પીગળી જાય છે તેમ કોઇ કોઇ પુરુષ એવા હોય છે કે જે પરીષહ આદિ વડે કમજોર બની જાય છે એવા પુરુષોને મીણના ગોળા સમાન કહ્યા છે. (૨) લાખના ગોળા સમાન પુરુષ-લાખનો ગોળો કઠણ હોય છે તેથી થોડા તાપથી પીગળી જતો નથી એજ પ્રમાણે જે પુરુષ પરીષહો આવી પડતાં અડગ રહે છે-બિલકુલ ચલાયમાન થતો નથી, એવા પુરુષને લાખના ગોળા સમાન કહ્યો છે (૩) લાકડાના ગોળા સમાન પુરુષ—જેમ લાકડાનો ગોળો અધિકમાં અધિક તાપથી પણ

तापेनाद्रवणात्कठिनतरो भवति. तथा—यः पुरुषः परीषहादिषु दृढतरसत्त्वो भवति स तत्पदव्यपदेश्यः ३, तथा—मृत्तिकागोलकसमानः—यथा मृत्तिकागोलः प्रचुरतापेनाप्यद्रवणात्कठिनतमो भवति—तथा—यः पुरुषः परीषहादिषु दृढतमसत्त्वो भवति स तत्पदव्यपदेशभाक् ४। (२५)।

'चत्तारि गोला' इत्यादि—पुनर्गोलाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अयोगोलः १, त्रपुगोलः २, ताम्रगोलः ३, सीसकगोलः ४। एते गुरु—गुरुतर—गुरुतमाऽत्यन्तगुरवो भवन्ति (२६)।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव—उक्तगोलवदेव—पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—अयोगोलसमानः—अयोगोलो यथा गुरुर्भवति तथा यः पुरुषो गुरुभूतारम्भादिविचित्रप्रवृत्त्युपार्जितकर्मभारः, यद्वा—पितृमातृ-

होता है उसी प्रकारसे जो पुरुष परीषह आदिकोंके आने पर दृढतर सत्त्ववाला होता है वह पुरुष दारुगोलाके जैसा कहा गया है ३ और मृत्तिकाके गोलाके समान वह पुरुष कहा गया है जो पुरुष परीषह आदिकोंके आने पर दृढतम बलवाला बना रहता है, जैसे मिट्टीका गोला प्रचुर तापसे भी नहीं पिघलता है क्योंकि वह दृढतम होता है ४ (२५)

पुनश्च—"चत्तारि गोला" इत्यादि—गोला चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—अयोगोल १ त्रपुगोल २ ताम्रगोल ३ और सीसकगोल ४ ये क्रमशः गुरु, गुरुतर, गुरुतम और अत्यन्त गुरु होते हैं (२६) इसी तरहसे पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं—इनमें अयोगोलके समान वह पुरुष है जिसने गुरुभूत आरम्भ आदिमें अपनी विचित्र प्रवृत्तिसे

પીગળતો નથી—પોતે બળી જાય છે પણ પીગળતો નથી, એજ પ્રમાણે આકરામાં આકરાં પરીષહો સામે પણ જે માણસ અતિ દૃઢતાથી ટકી રહે છે—પ્રાણ જાય તો પણ ચલાયમાન થતો નથી એવા દૃઢતર સત્ત્વવાળા પુરુષને લાકડાના ગોળા સમાન કહ્યો છે (૪) માટીના ગોળા સમાન પુરુષ—જેમ માટીનો ગોળો પ્રચંડમાં પ્રચંડ તાપથી પણ પીગળતો નથી એમ દૃઢતમ સત્ત્વવાળો પુરુષ ઉગ્રમાં ઉગ્ર પરીષહો સામે પણ અડગતાથી ટકી રહે છે. ।૨૫।

"ચત્તારિ ગોલા" ઇત્યાદિ—ગોળાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) અયોગોલ (લોઢાનો ગોળો, (૨) ત્રપુગોલ (કથીરનો ગોળો) (૩) તામ્રગોલ (તાંબાનો ગોળો), અને (૪) સીસકગોલ (સીસાનો ગોળો) આ ગોળાઓ વજનની અપેક્ષાએ અનુક્રમે ગુરુ,ગુરુતર, ગુરુતમ અને અત્યન્ત ગુરુ હોય છે. ।૨૬।

એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) લોઢાના ગોળા સમાન પુરુષ—જેણે ભારે ભારે આરંભ આદિમાં પ્રવૃત્ત થઈને કર્મભારને

पुत्रकलत्रादिषु गुरुस्नेहभाराक्रान्तो भवति स तथा १, तथा–त्रपुगोलसमानः–ताम्रगोलसमानः सीसगोलसमानः, एते त्रयः क्रमेण गुरुतर–गुरुतमा–ऽत्यन्तगुरुभूतारम्भादिविचित्रप्रवृत्त्युपार्जितकर्मभाराः, यद्वा–पित्रादिषु गुरुतरादिस्नेहभाराऽऽक्रान्ताः पुरुषा बोध्याः ४ (२७)।

'चत्तारि गोला' इत्यादि—पुनश्चत्वारो गोलाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–हिरण्यगोलः १, सुवर्णगोलः २ रत्नगोलः ३, वज्रगोलः ४। एते चाऽल्पगुणाऽधिकगुणा-ऽधिकतरगुणा-ऽधिकतमगुणा भवन्ति, (२८)।

कर्मभारको उपार्जित किया है अर्थात् जिस प्रकार लोहेका गोला भारवाला वजनवाला होता है उसी प्रकारसे जो प्राणी आरम्भ आदि कार्योमें प्रवृत्ति करनेसे उपार्जित कर्मभारसे भारी बन जाता है ऐसा वह पुरुष अयोगोलके समान कहा गया है अथवा–पिता, माता, पुत्र, कलत्र आदिकोंमें बहुत अधिक ममता रूप स्नेहके भारसे जो आक्रान्त होता है, वह अयोगोलके समान पुरुष है त्रपुगोल समान, ताम्रगोल समान और सीसगोल समान पुरुषमें गुरुतर, गुरुतम और अत्यन्त गुरुभूत आरम्भादि कार्योमें अपनी विचित्र प्रवृत्तिसे उपार्जित कर्मभारसे आक्रान्त होते हैं अथवा–माता पिता आदिकोंमें गुरुतर आदि भेदवाले स्नेहके भारसे दबे रहते हैं–इसलिये वे क्रमशः त्रपुगोलाके जैसे कहे गये हैं (२७) "चत्तारि गोला" पुनश्च––गोला चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे–हिरण्य गोला १ सुवर्णगोला २ रत्नगोला ३ और

ઉપાર્જિત કર્યો હોય છે–એટલે કે જેમ લોઢાનો ગોળો વજનદાર હોય છે તેમ જે જીવ આરંભ આદિમાં પ્રવૃત્ત થવાને કારણે ઉપાર્જિત કરેલા કર્મભારથીં ભારે બનેલો છે એવા પુરુષને લોઢાના ગોળા સમાન કહ્યો છે–અથવા માતા, પિના, પુત્ર, પુત્રી, પત્ની આદિ પ્રત્યે અધિક મમતા રૂપ સ્નેહના ભારથી જે માણુસ જકડાયેલો હોય છે તેને લોઢાના ગોળા સમાન કહે છે. એજ પ્રમાણે ગુરુતર, ગુરુતમ અને અત્યંત ગુરુભૂત આરંભાદિ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થઈને કર્મભારને ઉપાર્જિત કરનારા પુરુષોને અથવા માતા, પિતા આદિ પ્રત્યેના ગુરુતર, ગુરુતમ અને અત્યન્ત ગુરુભૂત સ્નેહ ભાવથી જકડાયેલા પુરુષને અનુક્રમે ત્રપુગોળા સમાન, તાંબાના ગોળા સમાન અને સીસાના ગોળા સમાન કહે છે. ।૨૭।

"चत्तारि गोला" ગોળાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે–(૧) ચાંદીનો ગોળો, (૨) સોનાનો ગોળો, (૩) રત્નનો ગોળો અને (૪)

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया' इत्यादि—एवमेव–उक्तगोलवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–हिरण्यगोलसमानः–रजतगोलतुल्यः–यावत्पदेन–' सुवर्णगोलकसमानः रत्नगोलकसमानः' इति पदद्वयं ग्राह्यम्, तथा–वज्रगोलसमानः। एतच्चतुष्टयसमानाः पुरुषाः क्रमेणाल्पादिसमृद्धिसम्पन्नत्वेन, यद्वा–ऽल्पादिज्ञानादिगुणसम्पन्नत्वेन बोध्याः।२९।

"चत्तारि पत्ता" इत्यादि—पत्राणि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–असिपत्रम्–खड्गरूपपत्रम् १ः तथा–करपत्रं–दारुच्छेदनं क्रकचम् 'आरा'–' करवत' इति भाषाप्रसिद्धम् २, तथा–क्षुरपत्रं–क्षुररूपपत्रम् ३, तथा–कदम्बचीरिकापत्रम्–कदम्बचीरिकेति तन्नामकः शस्त्रविशेषः तद्रुपपत्रम्। ४। (३०)।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव–पत्रवदेव पुरुषजा-

वज्रगोला ४ ये चारोंही गोले क्रमशः अल्प गुणवाले अधिक गुणवाले, अधिकतर गुणवाले और अधिकतम गुणवाले होते हैं (२८) इसी तरहसे इनके समान जो पुरुष होते हैं, वे भी क्रमशः अल्प समृद्धिवाले, अधिक समृद्धिवाले, अधिकतर समृद्धिवाले और अधिकतम समृद्धिवाले होतेहैं। अथवा अल्प ज्ञान गुणवाले, अधिक ज्ञान गुणवाले, अधिकतर ज्ञान गुणवाले और अधिकतम ज्ञान गुणवाले होतेहैं (२९)"चत्तारि पत्ता" पत्र चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे–असिपत्र१ खड्गरूप पत्र–करपत्र–करोंतरूप पत्र२ क्षुरपत्र–क्षुररूपपत्र३ और कदम्बचीरिका रूपपत्र ४। कदम्बचीरिका इस नामका एक विशेष शस्त्र होताहै "एवामेव" इत्यादि-इसी प्रकारसे पुरुष भी चार प्रकारके होतेहैं, असिपत्रसमान१ करपत्रस-

---

વજ્રનો ગોળો. આ ચારે ગોળા અનુક્રમે અલ્પ ગુણવાળા અધિક ગુણવાળા, અધિકતર ગુણવાળા અને અધિકતમ ગુણવાળા હોય છે. ।૨૮। એજ પ્રમાણે પુરુષોમા પણ ચાંદીના ગોળા સમાન આદિ ચાર પ્રકાર પડે છે. તેઓ અનુક્રમે અલ્પ સમૃદ્ધિવાળા, અધિક સમૃદ્ધિવાળા, અધિકતર સમૃદ્ધિવાળા અનેઅધિકતમ સમૃદ્ધિવાળા હોયછે, અથવા તેઓ અનુક્રમે અલ્પ જ્ઞાન ગુણવાળા, અધિક જ્ઞાનગુણવાળા, અધિકતર જ્ઞાનગુણવાળા અને અધિકતમ જ્ઞાનગુણવાળા હોયછે. ૨૯

"ચત્તારિ પત્તા" ઈત્યાદિ પત્ર (પાન) ચાર પ્રકારના કહ્યાં છે–(૧) અસિપત્ર (તલવારના જેવી ધારવાળું પાન), (૨) કરોતરૂપ પત્ર–કરપત્ર (કરવત જેવું પાન) (૩) ક્ષુરપત્ર (અસ્રા જેવું પાન) (૪) કદમ્બચીરિકારૂપ પત્ર (કદમ્બ ચીરિકા નામના શસ્ત્ર જેવું પાન).

तानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-असिपत्रसमानः-खड्गरूपपत्रं यथा रज्ज्वादि शीघ्रं छिनत्ति तथा-यः पुरुषः स्नेहपाशं शीघ्रं छिनत्ति स शीघ्रच्छेदकत्वधर्मणाऽसिपत्रसमानो व्यवह्रियते, अवधारितदेववचनसनत्कुमारचक्रवर्तिवत्। इति प्रथमः १। तथा-करपत्रसमानः-करपत्रं-क्रकचं तद् यथा दारु शनैः शनैश्छिनत्ति, तथा यः पुरुषः प्रतिबोधकेन वारंवारमुपदिश्यमानस्तदुपदिष्टभावनामभ्यसन् पुत्रकलत्रादिस्नेहं विलम्बेन छिनत्ति स विलम्बच्छेदकत्वेन तत्पदव्यपदेश्यः, तथाविधश्रावकवत्। इति द्वितीयः २। तथा-क्षुरपत्रसमानः-यथा-क्षुररूपपत्रं केशमात्रं

मान २ क्षुरपत्रसमान ३ और चीरिकापत्रसमान ४ जिस तरह असिपत्र, रज्जु आदिको शीघ्र काट देता है, उसी प्रकारसे जो मनुष्य स्नेहपाशको शीघ्रतासे काट देता है, वह मनुष्य असिपत्र समान कहा गयाहै। जिस प्रकार सनत्कुमार चक्रवर्तीने देवके वचन सुनकर जल्दीसे जल्दी स्नेहपाश काट डाला। उसी प्रकार ऐसा मनुष्य भी शास्त्रगुरु आदिकी वाणी सुननेसे स्नेहपाश शीघ्र नष्ट कर आत्मकल्याणके मार्गका पथिक बन जाताहै। करौंत जैसे लकड़ीको धीरे २ चीरताहै, वैसेही जो पुरुष प्रतिबोधकके वचनसे बार २ समझाया जानेसे उसके उपदेशपूर्ण वचनोंका विचार करते २ पुत्र कलत्र आदिकोंके स्नेहपाशको धीरे २ छेदता है, और आत्माके हितके मार्गमें लगता है, ऐसा वह पुरुष विलम्बसे छेदकताके साधर्म्यको लेकर करपत्रके जैसा कहा गया है। क्षुरपत्रसमान,

"एवामेव" ઇત્યાદિ—એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) અસિપત્ર સમાન, (૨) કરપત્ર સમાન, (૩) ક્ષુરપત્ર સમાન અને (૪) કદમ્બ ચીરિકા પત્ર સમાન. હવે આ ચારે પ્રકારની સ્પષ્ટતા કરવામાં આવે છે—જેમ અસિપત્ર દોરડા આદિને તુરત કાપી નાખે છે, એજ પ્રમાણે જે માણુસ સ્નેહપાશને તુરતજ કાપી નાખે છે એવા માણુસને અસિપત્ર સમાન કહ્યો છે. જેમ સનત્કુમાર ચક્રવર્તીએ દેવનાં વચન શ્રવણ કરીને સ્નેહપાશને જલ્દીમાં જલ્દી કાપી નાખ્યો હતો, એજ પ્રમાણે અસિપત્ર સમાન મનુષ્ય પણ શાસ્ત્ર, ગુરુ આદિની વાણી સાંભળતાની સાથે જ સ્નેહપાશને તોડી નાખીને આત્મકલ્યાણને માર્ગે આગળ વધવા માંડે છે, જેમ કરવત લાકડાને ધીરે ધીરે ચીરે છે, તેમ ગુરુ આદિના ઉપદેશને વારંવાર સાંભળીને અને તેના પર વિચાર કરીને ધીરે ધીરે પુત્ર, પુત્રી આદિના સ્નેહપાશને તોડતો તોડતો જે માણુસ આત્મકલ્યાણને માર્ગે સંચરે છે તેને કરપત્ર સમાન કહ્યો છે. કરપત્ર અને કરપત્ર સમાન મનુષ્યમાં વિલમ્બથી છેદવાનું સાધર્મ્ય હોવાથી વિલમ્બપૂર્વક સ્નેહપાશ તોડનાર પુરુષને કરપત્ર સમાન કહ્યો છે, ક્ષુરપત્ર સમાન

छिनत्ति न तु काष्ठादि तथा यः पुरुषो धर्ममार्गं श्रुत्वाऽपि सर्वथा स्नेहपाशच्छेदनेऽसमर्थो देशस्नेहमात्रं छिनत्ति देशविरतिमेवाङ्गीकरोति न तु सर्वविरतिं सोऽल्पच्छेदकत्वधर्मेण क्षुरपत्रतुल्य उच्यते ३। तथा- कदम्बचीरिकापत्रसमानः--यथा--कदम्बचीरिकाख्योऽस्त्रविशेषो नामगोत्रेणास्त्रं न तु छेदनकार्येण तथा यः पुरुषः संकल्पमात्रेण स्नेहं छिनत्ति न तु क्रियया स छेदकत्वेन स्वरूपसद्धर्मेण तत्समान उच्यते स चाविरतसम्यग्दृष्टिः ४, यद्वा-एते चत्वारः पुरुषा एवम्-ये गुर्वादिषु क्रमेण शीघ्र-मन्द-मन्दतरमन्दतमतया स्नेहं छिन्दन्ति तेऽसिपत्रादिसमानाः४।(३१)

जैसे क्षुरा केशमात्रको काटता है काष्ठादिकोंको नहीं काटता है, उसी प्रकार जो पुरुष धर्ममार्गको सुनकर भी सर्वथा स्नेहपाशको नष्ट करनेमें असमर्थ होकर केवल देश स्नेहकोही नष्ट करता है-देशविरतिकोही धारण करता है सर्वविरतिको धारण नहीं करता है, ऐसा वह पुरुष स्नेहको अल्प मात्रामें छेदनेवाला होनेसे क्षुरपत्रके जैसा कहा गया है। अल्प रूपसे छेदक धर्मको समानता लेकरही उसे क्षुरपत्र तुल्य कहा गयाहै । कदम्बचीरिकापत्र समान जैसे-कदम्बचीरिका नामक शास्त्र, नाम मात्रसेही शास्त्र कहलाता है, वह किसीका छेदन नहीं कर सकता है उसी प्रकार जो पुरुष संकल्प मात्रसे स्नेहका छेदन किया करता है क्रियासे नहीं अर्थात् स्नेहको छेदनेके मनोरथही बनाया करता है उसे क्रियारूपमें परिणत नहीं करता है ऐसा वह अविरत सम्यग्दृष्टि जीव कदम्बचीरीकापत्र समान कहा गया है अथवा-जो पुरुष गुरु आदि-

પુરુષ-જેમ ક્ષુરા (અસ્રો) માત્ર કેશોને જ કાપવાને સમર્થ હોય છે-કાષ્ઠાદિકોને કાપવાને સમર્થ હોતો નથી, એજ પ્રમાણે ધર્મમાર્ગનું શ્રવણ કરવા છતાં પણ જે પુરુષ સ્નેહપાશને પૂરેપૂરો તોડી શકતો નથી, અંશતઃ જ તોડી શકે છે, અથવા સર્વવિરતિને ધારણ કરવાને બદલે દેશવિરતિ જ ધારણ કરી શકે છે, એવા પુરુષને ક્ષુરપત્ર સમાન કહે છે.

એવો પુરુષ સ્નેહનું અલ્પ માત્રમાં જ છેદન કરનારો હોય છે. તે બન્નેમાં અલ્પ રૂપે છેદક ધર્મની સમાનતા હોવાથી આ પ્રકારના પુરુષને ક્ષુરપત્ર સમાન કહ્યો છે.

કદમ્બચીરિકા પત્ર સમાન પુરુષ—કદમ્બચીરિકા નામનું શસ્ત્ર કોઈપણ વસ્તુનું છેદન કરવાને સમર્થ હોતું નથી. તેથી તેને નામનું જ શસ્ત્ર કહેવાય છે. એજ પ્રમાણે જે માણસ સ્નેહપાશ તોડવાનો સંકલ્પ જ કર્યા કરે છે પણ તેને તોડવાને સમર્થ હોતો નથી-તેના વિચારોને ક્રિયારૂપે પરિણુત કરી શકતો નથી, એવા અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવને કદમ્બ ચીરિકા પત્ર સમાન કહ્યો છે.

'चत्तारि कडा' इत्यादि—कटाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा – शुम्बकटः–शुम्बः–तृणविशेषः, तन्निर्मितः कटस्तथा १, विदलकटः–वंशखण्डनिर्मितकटः २, चर्मकटः–चर्मकृतकटः–चर्ममयरज्जुव्यूतमञ्चकादिः ३, कम्बलकटः–कम्बल एवकटः ४। (३२)।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव–कटवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–शुम्बकटसमानः–शुम्बकटो यथा-ऽल्पबन्धो भवति तथा यः पुरुषो गुर्वादिष्वल्पप्रतिबन्धः स्वल्पप्रतिकूलव्यापारेणाविगमात् स शुम्बकट-

---

कोंके विषयमें क्रमशः शीघ्र रूपसे मन्द रूपसे मन्दतररूपसे और मन्दतम रूपसे स्नेहका छेदन करनेवाले होतेहैं वे असिपत्रादिके समान होतेहैं ४।३१।

"चत्तारि कडा" इत्यादि–कट चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे–शुम्बकट १ विदलकट २ चर्मकट ३ और कम्बलकट ४ तृण विशेषोंसे जो कट चटाई बनाया जाता है वह शुम्बकट है, वंशकी पंचोंसे जो कट बनाया जाता है वह विदलकट है, चमडेकी रज्जुसे या तांतोसे बुना गया जो मंचक आदि होता है वह चर्मकट है और जो कम्बल है वह कम्बलकटहै। इसी प्रकारसे पुरुष चार होतेहैं, जिसका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें अल्प होता है, जैसा कि तृणविशेषोंसे बनी हुई चट्टाईका होता है, वह थोड़ीसी भी प्रतिकूलतामें शिथिल हो जाता है खुल जाता है ऐसा वह पुरुष शुम्बकट समान होता है शुम्बकटकी अपेक्षा विदलकटका बन्ध दृढ होता है यह थोड़ीसी प्रतिकूलतामें शिथिल ढीला नहीं

અથવા જે માણુસ ગુરુ આદિના ઉપદેશથી ક્રમશઃ શીઘ્ર રૂપે, મન્દ રૂપે, મન્દતર રૂપે અને મન્દતમ રૂપે સ્નેહપાશનું છેદન કરનારો હોય છે તેને અનુક્રમે અસિપત્ર, કરપત્ર, ક્ષુરપત્ર અને કદમ્બચીરિકા પત્ર સમાન કહે છે. ૩૧

"चत्तारि कडा" ચટ્ટાઈ ચાર પ્રકારની કહી છે–(ચટ્ટાઈને માટે અહીં 'કટ' શબ્દ વાપર્યો છે) (૧) શુમ્બકટ–તૃણુવિશેષોની મદદથી જે ચટ્ટાઈ બનાવવામાં આવે છે તેને 'શુમ્બકટ' કહે છે (૨) વિદલકટ–વાંસની ચીપોમાંથી બનાવેલી ચટ્ટાઈને 'વિદલકટ' કહે છે. (૩) ચર્મકટ–ચામડાની દોરીને ગૂંથીને બનાવેલી ચટ્ટાઈને 'ચર્મકટ' કહે છે (૪) અને 'કમ્બલકટ'–ઊન આદિની કામળને 'કમ્બલ કટ' કહે છે

એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) શુમ્બકટ સમાન પુરુષ–જેમ તૃણુવિશેષોમાંથી બનાવેલી ચટ્ટાઈ થોડી પ્રતિકૂળતામાં પણ શિથિલ થઈ જાય છે-તેના તંતુઓ છૂટા પડી જાય છે એજ પ્રમાણે ગુરુ આદિ પ્રત્યેનો

तुल्य उच्यते १, एवं क्रमेण बहु-बहुतर-बहुतमप्रतिबन्धवन्तो गुर्वादिषु त्रयः पुरुषा विभावनीयाः ४। (३३) ॥ सू० १३ ॥

मूलम्—चउव्विहा चउप्पया पण्णत्ता, तं जहा--एगखुरा १, दुखुरा २, गंडीपया ३, सणप्फया ४, (३४)।

चउव्विहा पक्खी पण्णत्ता, तं जहा--चम्मपक्खी १, लोमपक्खी २, समुग्गपक्खी ३, विततपक्खी ४,।३५।

होताहै। इसी प्रकारसे जिसका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें थोड़ीसी प्रतिकूलतामें शिथिल नहीं होताहै, वह विदल-सम्बन्ध कटके जैसा पुरुषहै चर्मकटका बन्ध शुम्बकटकी अपेक्षा भी दृढ होताहै वह मुश्किलसे ढीला होता है इसी प्रकारसे जिसका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें अधिक प्रतिकूलतामें भी शिथिल नहीं होता है वह चर्मकटके जैसा पुरुष है, कम्बलकटका बन्ध बहुत अधिक दृढ होताहै। इसी प्रकारसे जिसका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें बहुत अधिक होता है ऐसा वह पुरुष कम्बलकटके जैसा कहा गयाहै। तात्पर्य इसका ऐसाहै कि जिस पुरुषोंका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें अल्प, बहु, बहुतर और बहुतम होता है वे पूर्वोक्त प्रकारसे चार प्रकारके कहे गये हैं (३३) ॥ सूत्र १३ ॥

જેમનો પ્રતિબંધ (અનુરાગ) અલ્પ કાળમાં જ તૂટી જાય છે એવા પુરુષને શુમ્બકટ સમાન કહે છે

શુમ્બકટ કરતાં વિદલકટનો બન્ધ વધારે દૃઢ હોય છે, તેથી તે થોડી પ્રતિકૂળતામાં શિથિલ થઈ જતો નથી. એજ પ્રમાણે ગુરુ આદિ પ્રત્યેનો જેનો પ્રતિબંધ થોડી પ્રતિકૂળતામાં શિથિલ થતો નથી એવા પુરુષને વિદલકટ સમાન કહે છે. ચર્મકટનો બન્ધ વિદલકટના બન્ધ કરતાં પણ દૃઢતર હોય છે તેથી તે જલ્દીથી શિથિલ થતો નથી.

એજ પ્રમાણે ગુરુ આદિ પ્રત્યેનો જેનો પ્રતિબન્ધ અધિક પ્રતિકૂળતામાં પણ શિથિલ થતો નથી એવા પુરુષને ચર્મકટ સમાન કહે છે.

કમ્બલકટ (ઊન આદિની કામળ)નો બંધ ઘણો જ વધારે હોય છે એજ પ્રમાણે ગુરુ આદિકોમાં જેનો પ્રતિબંધ ઘણો જ અધિક હોય છે એવા પુરુષને કમ્બલકટ સમાન કહેવામાં આવ્યો છે. આ સૂત્રમાં ગુર્વાદિક પ્રત્યેના અલ્પ, બહુ, બહુતર અને બહુતમ પ્રતિબન્ધની અપેક્ષાએ ચાર પુરુષપ્રકાર બતાવવામાં આવ્યા છે, એમ સમજવું ।૩૩। ॥ સૂ. ૧૩ ॥

चउव्विहा खुड्डपाणा पण्णत्ता, तं जहा--बेइंदिया १, तेइंदिया २, चउरिंदिया ३, संमुच्छिमपंचिंदियतिरिक्खजोणिया ४ ।३६। सू० १४ ॥

छाया—चतुर्विधाश्चतुष्पदाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकखुराः १, द्विखुराः २, गण्डीपदाः ३, सनखपदाः ४ (३४)।

चतुर्विधा पक्षिणः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-चर्मपक्षिणः १, लोमपक्षिणः २, समुद्गकपक्षिणः ३, विततपक्षिणः ४ (३५)।

चतुर्विधाः क्षुद्रप्राणाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-द्वीन्द्रियाः १, त्रीन्द्रियाः २, चतुरिन्द्रियाः ३, संमूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः ४ (३६)॥ सू० १४॥

टीका—" चउव्विहा चउप्पया " इत्यादि — चतुष्पदाः-चतुश्चरणाः-चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकखुराः-प्रत्येकपदे एक खुरो येषां ते तथा-अश्वादयः १, तथा-द्विखुराः-खुरद्वयवन्तो गवादयः २, गण्डीपदाः-गण्डीस्वर्णकारादीनामधिकरणी ' घन ' इति भाषा प्रसिद्धा गण्डिका, तद्वत् पदानि येषां ते तथा=हस्त्यादयः ३, सनखपदाः-नखयुक्तपादवन्तः सिंहादयः ४। इति (३४)।

'चउव्विहा चउप्पया पण्णत्ता' इत्यादि १४ ॥

टीकार्थ-चौपाये चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-एक खुरवाले १ दो खुरवाले २ गंडी पदवाले ३ और नखयुक्त पदवाले ४ चार चरण जिनके होते हैं वे चतुष्पद कहे जाते हैं। प्रत्येक पदमें जिनके एक खुर होता है, ऐसे घोडे आदि जानवर एक खुरवाले जानवर हैं। प्रत्येक पदमें जिनके दो खुर होते हैं ऐसे वे गाय आदि जानवर दो खुरवाले जानवर हैं। घनका नाम गण्डी है घनके समान जिनका चरण होता है वे गण्डी पदवाले जानवर हैं, जैसे हाथी आदि, नखोंसे युक्त जिनके पैर होते हैं वे सनखपदवाले जानवर हैं जैसे-सिंह आदि (३४)

" चउव्विहा चउप्पया पण्णत्ता" ईत्यादि—(सू. १४)

ચોપગા જાનવરોના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) એક ખરીવાળાં (૨) બે ખરીવાળાં, (૩) ગંડીપદવાળા (૪) નખયુક્ત પગવાળાં. ચાર પગવાળાં જાનવરોને ચતુષ્પદ કહે છે. જેના પગની ખરીમાં ફાટ હોતી નથી એવા પ્રાણીઓને એક ખરીવાળાં કહે છે જેમકે ઘોડા. જે પ્રાણીના પ્રત્યેક પગની ખરીમાં ફાટ હોય છે એવાં પ્રાણીઓને બે ખરીવાળાં કહે છે, જેમકે ગાય આદિ પ્રાણીઓ. (૩) હાથીના જેવી ગોળાકારની ખરીવાળાં પ્રાણીઓને ગંડીપગવાળાં કહે છે. (૪) જે પ્રાણીઓના પગ નહોર (નખ)થી યુક્ત હોય છે તે પ્રાણીઓને નખયુક્ત પગવાળાં કહે છે, જેમકે વાઘ, સિંહ વગેરે ।૩૪।

"चउव्विहा पक्खी" इत्यादि—पक्षिणश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-चर्मपक्षिणः-चर्ममयपक्षसहिताः-वल्गुलीप्रभृतयः १, तथा-लोमपक्षिणः-लोमयुक्तपक्षवन्तः-हंसादयः २, समुद्गकपक्षिणः-समुद्गकौ-सम्पुटकौ ताविव पक्षौ येषां ते तथा=सम्पुटकयुक्तपक्षसहिताः, तथा-विततपक्षिणः-विस्तृतपक्षयुक्ताः, अन्तिमा उभयेऽपि समयक्षेत्रतो बहिरेव भवन्ति । (३५) ।

"चउव्विहा खुड्डपाणा" इत्यादि—क्षुद्रप्राणाः-प्राणन्तीति प्राणाः क्षुद्राश्च ते प्राणाः क्षुद्रप्राणाः=अधमप्राणिनः, अनन्तरभवे सिद्धिगमनाभावात्, चतुर्विधा प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-द्वीन्द्रियाः-इन्द्रियद्वयवन्तः कृम्यादयः १, तथा-त्रीन्द्रियाः-इन्द्रियत्रयवन्तः-पिपीलिकादयः २, चतुरिन्द्रियाः-इन्द्रियचतुष्टयवन्तो भ्रमरादयः ३, सम्मूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः-सम्मूर्च्छनं सम्मूर्च्छः, तेन निर्वृत्ताः

पक्षी चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—चर्मपक्षी १ लोमपक्षी २ समुद्गकपक्षी ३ और विततपक्षी ४ (३५) चर्ममय पक्ष (पंख) सहित जो पक्षी होते हैं, वे चर्मपक्षीहैं जैसे—चमगादड़ वगैरह। लोमयुक्त पांखोंवाले जो पक्षी होते हैं वे लोमपक्षीहैं जैसे—हंस आदि । सम्पुटके जैसे पंख जिनके होते हैं, वे समुद्गक पक्षी हैं और जो विस्तृत (फैले हुए) पांखोंवाले पक्षी होते हैं, वे विततपक्षीहैं। ये समुद्गकपक्षी और विततपक्षी ये दोनों अढाई द्वीपके बाहरही होते हैं (३५)

"चउव्विहा खुड्डपाणा" इत्यादि-अधम प्राणी जो चार प्रकारके कहे गयेहैं अनन्तर भवमें इन्हें सिद्धि प्राप्त नहीं होतीहै इसलिये इन्हें क्षुद्रप्राणी कहा गया है, इनके चार प्रकार ये हैं द्वीन्द्रिय जीव जैसे—कृमी आदि जीव१ तेइन्द्रिय जीव जैसे-पिपीलिका (कीडी) आदि जीव२ चौइन्द्रियजीव जैसे भ्रमर आदि जीव ३ और संमूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च ४

પક્ષીના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) ચર્મપક્ષી, (૨) લોમપક્ષી, (૩) સમુગ્દક પક્ષી અને (૪) વિતતપક્ષી. ચર્મમય પાંખવાળા પક્ષીને ચર્મપક્ષી કહે છે, જેમકે ચામડચિડિયું. લોમથી યુક્ત પાંખોવાળા પક્ષીને લોમપક્ષી કહે છે, જેમકે હંસ આદિ પક્ષી. સંપુટનાજેવી પાંખોવાળા પક્ષીને વિતતપક્ષી કહે છે તે સમુગ્દકપક્ષી અને વિતતપક્ષી અઢી દ્વીપની બહારના પ્રદેશોમાં જ હોય છે.૩૫

"ચઉવ્વિહા ખુડ્ડપાણા" ઈત્યાદિ—ક્ષુદ્ર જીવો ચાર પ્રકારના કહ્યા છે. અનન્તર ભવમાં તેમને સિદ્ધિ ગતિની પ્રાપ્તિ થતી નથી. તે કારણે તેમને ક્ષુદ્ર કહ્યા છે. તેમના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે-(૧) દ્વીન્દ્રિય જીવ-કૃમી આદિ જીવો, (૨) ત્રીન્દ્રિય જીવો-જેમકે કીડી વગેરે જીવો, (૩) ચતુરિન્દ્રિય જીવો-જેમકે ભમરો (૪) સંમૂર્ચ્છિમ પચેન્દ્રિય તિર્યંચ. સંમૂર્ચ્છન જન્મથી

संमूच्छिमाः-संमूर्च्छनजाः ते च ते पञ्चेन्द्रियाः इन्द्रियपञ्चकवन्तश्च ते तिर्यग्योनिकाः-तिरश्चां योनिर्येषां ते तथा-भूताश्च ते इति सम्मूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः, अत्र-पदत्रयकर्मधारयसमासो बोध्यः ४ (३६) ॥ सू० १४ ॥

अथ पुरुषविशेषाभिरूपयितुं दृष्टान्तभूतान् पक्षिणो निरूपयति—

मूलम्-चत्तारि पक्खी पण्णत्ता, तं जहा--णिवइत्ता णाममेगे णो परिवइत्ता १ परिवइत्ता णाममेगे णो निवइत्ता २, एगे निवइत्ताऽवि परिवइ- ऽवि ३, एगे णो निवइत्ता णो परिवइत्ता ४ । ३७ । एवामेव चत्तारि भिक्खागा पण्णत्ता, तं जहा--णिवइत्ता णाममेगे णो परिवइत्ता ४ । ३८ । ॥ सू० १५ ॥

छाया—चत्वारः पक्षिणः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-निपतिता नामैको नो परिव्रजिता १, परिव्रजिता नामैको नो निपत्तिता २, एको निपतिताऽपि परिव्रजिताऽपि ३, एको नो निपतिता नो परिव्रजिता ४, (३७) । एवमेव चत्वारो भिक्षाकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-निपतिता नामैको नो परिव्रजिता ४ (३८) ॥ सू० १५ ॥

टीका—' चत्तारि पक्खी " इत्यादि—पक्षिणश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः पक्षी निपतिता-नीडादवतरीता-अधः पतनशीलो भवति धृष्टत्वात् अज्ञत्वाद्वा,

---

संमूर्च्छन जन्मसे जोउत्पन्न होतेहैं वे संमूर्च्छिमहैं, ऐसे संमूर्च्छिम पांच इन्द्रियोंवाले तिर्यञ्च जीवही यहां क्षुद्रप्राणियोंमें लिये गयेहैं (३६)सूत्र १४

'चत्तारि पक्खी पण्णत्ता इत्यादि' सूत्र १५ ॥

टीकार्थ-पक्षी चार प्रकारके कहे गयेहैं-जैसे-निपतिता नो परिव्रजिता१ परिव्रजिता ना निपतिता २ निपतिता भी और परिव्रजिता भी ३ और नो निपतिता नो परिव्रजिता ४ इनमें जो पक्षी धृष्ट होनेसे या अज्ञ होनेसे नीडसे अवतरणके स्वभाववाला होता है, अर्थात् नीचे जमीन पर गिर पडनेके स्वभाववाला होताहै, बालभाव होनेसे उड़नेके स्वभा-

---

જે જીવો ઉત્પન્ન થાય છે તેમને સંમૂર્છિમ કહે છે એવા પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ જીવોને જ અહીં ક્ષુદ્ર જીવો રૂપે પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે. ।૩૬। ।સૂ. ૧૪।।

ટીકાર્થ—" चत्तारि पक्खी पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—('સૂ. ૧૪)

પક્ષીના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) " निपतिता नो परिव्रजिता " જે પક્ષી ધૃષ્ટ હોવાથી અથવા અજ્ઞ હોવાથી માળામાંથી નીચે અવતરણ કરવાના સ્વભાવવાળું હોય છે એટલે કે નીચે પડી જવાના સ્વભાવવાળું હોય છે, પણ બાલ્યાવસ્થાને કારણે ઉડવાના સ્વભાવવાળું હોતું નથી

किन्तु स नो परिव्रजिता-उड्डयनशीलो न भवति बालभावात्, तथा-एकः परिव्रजिता भवति किन्तु नो निपतिता २, तथा-एकोनिपतिताऽपि परिव्रजिताऽपि च भवति ३। तथा-एको नो निपतिता नापि च परिव्रजिता भवतीति । (३७) ।

'एवामेवे' त्यादि-एवमेव-उक्तपक्षिवदेव भिक्षाकाः-साधवश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको भिक्षाको निपतिता-भिक्षाचर्यायामवतरीता भवति भोजनार्थित्वात्, किन्तु नो परिव्रजिता-परिभ्रमणशीलो न भवति ग्लानत्वादलसत्वाल्लज्जावत्त्वाद्वा इति प्रथमः । १ ।

तथा—एकः परिव्रजिता-परिभ्रमणशील आश्रयान्निर्गतः सन् भवति, किन्तु नो निपत्तिता-भिक्षार्थमवतरीता न भवति सूत्रार्थाऽऽसक्तत्वात् इति द्वितीयः२।

ववाला नहीं होता है, ऐसा वह पक्षी प्रथम भङ्गमें लिया गया है जो उड़नेके स्वभाववाला होता है पर गिरनेके स्वभाववाला नहीं होता है ऐसा वह पक्षी द्वितीय भंगमें लिया गयाहै। जो पक्षी परिव्रजनके स्वभाववाला और निपतनके स्वभाववाला होता है वह तृतीय भंगमें लिया गयाहै। तथा जो न निपतनके स्वभाववालो होताहै और न परिव्रजनके स्वभाववाला होता है ऐसा वह पक्षी चतुर्थ भंगमें लिया गया है (३७)

"एवामेव"—इसी प्रकारसे साधु भी चार प्रकारके कहे गये हैं उनमें कोई एक साधु ऐसा भी होता है, जो भोजनार्थी होनेसे भिक्षा चर्यामें उतरतातो है, पर वह ग्लान होनेसे या आलसी होनेसे या लज्जाशील होनेसे परिभ्रमण नहीं करता है १ कोई एक साधु ऐसा होता है जो परिभ्रमण शील होता है-आश्रयस्थानसे भिक्षाके निमित्त

તેને આ પહેલાં ભાંગામા (પ્રકારમાં) ગણાવી શકાય છે. (૨) "परिव्रजिता नो निपतिता" જે પક્ષી ઉડવાના સ્વભાવવાળું હોય છે પણ પડવાના સ્વભાવવાળું હોતું નથી તેને આ બીજા પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે. (૩) "निपतिताऽपि परिव्रजिताऽपि" જે પક્ષી પરિવ્રજનના અને નિપતનના સ્વભાવથી યુક્ત હોય છે તેને આ ત્રીજા પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે (૪) "नो निपतिता नो परिव्रजिता" જે પક્ષી નિપતનના સ્વભાવવાળું પણ હોતું નથી અને પરિવ્રજનના સ્વભાવવાળું પણ હોતું નથી તેને આ ચોથા પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે. ૩૭।

"एवामेव" એજ પ્રમાણે સાધુ પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) કોઇ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે ભોજનાર્થી હોવાથી ભિક્ષાચર્યામાં ઉતરે છે તો ખરો, પોતાના આશ્રય સ્થાનમાંથી બહાર નીકળે છે તો ખરો, પણ બીમારી, આળસ કે લજ્જાને કારણે પરિવ્રજન (પરિભ્રમણ) કરતો નથી. (૨) કોઇ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે પરિભ્રમણશીલ હોય છે-આશ્રયસ્થાનમાંથી ભિક્ષાને

एको निपतिता परिव्रजिताऽपि च भवतीति तृतीयः ३। तथा-एको नो निपतिता नापि च परिव्रजिता भवतीति चतुर्थः। (३८) सू० १५॥

पुरुषाधिकारात् पुनः पुरुषविशेषान्निरूपयितुमाह—

मूलम्-चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-णिक्कट्ठे णाममेगे णिक्कट्ठे, णिक्कट्ठे णाममेगे अणिक्कट्ठे ४ (३९)।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--णिक्कट्ठे णाममेगे णिक्कट्ठप्पा, णिक्कट्ठे णाममेगे अणिक्कट्ठप्पा ४ (४०)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--बुहे णाममेगे बुहे १, बुहे णाममेगे अबुहे ४ (४१)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--बुहे णाममेगे बुह हियए ४ (४२)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--आयाणुकंपए णाममेगे णो पराणुकंपए ४ (४३) ॥ सू० १६॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-निष्कृष्टो नामैको निष्कृष्टः, निष्कृष्टो नामैकोऽनिष्कृष्टः ४ (३९)।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-निष्कृष्टो नामैको निष्कृष्टात्मा, निष्कृष्टो नामैकोऽनिष्कृष्टात्मा ४ (४०)।

उठता तो है, पर वह भिक्षा लानेके लिये नहीं जाता है, क्योंकि वह सूत्रार्थमें आसक्त होता है। कोई एक साधु ऐसा होता है जो भिक्षाके निमित्त जाता भी है और परिभ्रमण भी करता है ३। और कोई एक साधु ऐसा होता है जो न निपतिता होता है और न परिव्रजिता होता है (३८)॥ सूत्र १५॥

નિમિત્તે ઉઠે તો ખરો પણ ભિક્ષા લેવાને માટે જતો નથી, કારણ કે—તે સૂત્રાર્થમાં આસક્ત હોય છે. (૩) કોઇ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે ભિક્ષાપ્રાપ્તિ માટે ઉપાશ્રયમાંથી નીકળે છે પણ ખરો અને પરિભ્રમણ પણ કરે છે. (૪) કોઈ એક સાધુ નિપતિતા પણ હોતો નથી અને પરિવ્રજિતા પણ હોતો નથી-ભિક્ષાપ્રાપ્તિ માટે ઉપાશ્રયમાંથી નીકળતો પણ નથી અને પરિભ્રમણ પણ કરતો નથી. ।૩૮। ॥ સૂ. ૧૫॥

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-बुधो नामैको बुधः, बुधो नामैकोऽबुधः ४, (४१)।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-बुधो नामैको बुधहृदयः (४२)।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-आत्मानुकम्पको नामैको नो परानुकम्पकः ४, (४३) ॥ सू० १६ ॥

टीका—'चत्तारि पुरिसजाया' इत्यादि-पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषो निष्कृष्टः-दुर्बलः-तपसा कृशशरीरो भवति, पुनः स निष्कृष्टः-भावतः कृशीकृतकषायत्वादुपशान्तचित्तो भवतीति प्रथमः १, तथा-एको निष्कृष्टः सन्नपि भावतोऽजितकषायत्वादनिष्कृष्टः-चञ्चलमनोवृत्तिर्भवतीति

पुनः पुरुष विशेषोंका निरूपण करते हैं—

'चत्तारि पुरिसजाया' इत्यादि सूत्र १६ ॥

टीकार्थ-पुरुष जाति चार कहे गयेहैं-जैसे-कोई एक पुरुष ऐसा होताहै जो निष्कृष्ट २ होता है १। कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो निष्कृष्ट अनिष्कृष्ट होता है २। कोई एक ऐसा होता है जो अनिष्कृष्ट निष्कृष्ट होता है ३। और कोई एक ऐसा होताहै जो अनिष्कृष्ट अनिष्कृष्ट होता है ४। तपसे जिसका शरीर कृश हो गया है ऐसा वह पुरुष दुर्बल पद-वाच्य हुआ है ऐसा हुआ भी वह वंशमें कषायोंको करलेनेसे उपशान्त चित्तवाला होताहै तो वह प्रथम भंगमें लिया गया है १। तथा कोई एक पुरुष जो तपस्यासे कृश (दूबला) शरीरवाला होने पर भी यदि कषायों पर विजय नहीं पाता है तो वह चंचल मनोवृत्तिवाला द्वितीय भंगमें

પુરુષવિશેષોનું નિરૂપણ આગળ ચાલે છે—

"ચત્તારિ પુરિસજાયા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ—(સૂ ૧૬)

ટીકાર્થ-પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) નિષ્કૃષ્ટ-નિષ્કૃષ્ટ, (૨) નિષ્કૃષ્ટ-અનિષ્કૃષ્ટ, (૩) અનિષ્કૃષ્ટ-નિષ્કૃષ્ટ અને (૪) અનિષ્કૃષ્ટ-અનિષ્કૃષ્ટ

તપને લીધે જેનું શરીર કૃશ અથવા દુર્બળ થઈ ગયું હોય એવા પુરુષને નિષ્કૃષ્ટ કહે છે.

પહેલાં ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ—તપને લીધે જેનું શરીર કૃશ થઇ ગયેલું હોય છે એવો સાધુ જો કષાયો પર કાબૂ રાખીને ઉપશાન્ત ચિત્તવાળો થઇ જાય તો તેને "નિષ્કૃષ્ટ-નિષ્કૃષ્ટ" રૂપ પહેલા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે.

(૨) જે સાધુનું શરીર તપને લીધે કૃશ થઇ ગયેલું હોય છે, છતાં પણ જે કષાયો પર વિજય મેળવી શકતો નથી એવા ચંચળ વૃત્તિવાળા સાધુને "નિષ્કૃષ્ટ-અનિષ્કૃષ્ટ" રૂપ બીજા ભાંગામાં મૂકી શકાય છે. (૩) જે પુરુષ

द्वितीयः २, तथा-एकोऽनिष्कृष्टः सन्नपि पुनर्निष्कृष्टो भवतीति तृतीयः ३, तथा-एकः पूर्वमपि अनिष्कृष्टः पश्चादप्यनिष्कृष्ट एव भवतीति चतुर्थः ४ (३९)।

एतत्सूत्रोक्तार्थमेव द्रढयितुं परमेतत्सूत्रमुपन्यस्यति—

'चत्तारि पुरिसजाया' इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्-एको निष्कृष्टः-कृश शरीरतया भवति, पुनः स कषायादिनिर्मूलनेन निष्कृष्टात्मा-निष्कृष्टआत्मानो यस्य स तथाभूतो भवतीति प्रथमः १, एवं शेषभङ्गत्रयम् ४,

यद्वा-निष्कृष्टः-पूर्वं तपसा कृशीकृतदेहो भवति स एव पश्चादपि निष्कृष्टो भवति, इति शेषं यथोक्तमेव (४०)।

गिना गयाहै। तथा जो कोई पुरुष अनिष्कृष्ट होता हुआ भी कषायों पर विजय नहीं पाता हुआ भी यदि बादमें कषायों पर विजय पा लेता है तो वह तृतीय भंगमें लिया गया है। तथा जो न तप करता है और न कषायों पर ही विजय प्राप्त करताहै वह चतुर्थ भंगमें लिया गयाहै४(३९)

इसी सूत्रकी दृढताके लिये सूत्रकार यह दूसरा सूत्र कहते हैं- "चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुरुष जात चार कहे गये हैं-जैसे निष्कृष्ट निष्कृष्टात्मा १ निष्कृष्ट अनिकृष्टात्मा २-४-(४०) जो कोई पुरुष तपस्यासे शरीरको कृश(दुर्बल)कर देताहै और कषायको बिलकुल निर्मूल कर देता है ऐसा वह प्रथम भंगमें कहा गयाहै। इसी प्रकारसे जो पुरुष तपस्यासे कृश शरीरवाला हुआ भी कषायोंका निर्मूलन नहीं

અનિષ્કૃષ્ટ (સબળ-શક્તિસંપન્ન) હોવા છતાં પણ શરૂઆતમાં કષાયો પર વિજય પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી પણ પાછળથી કષાયો પર વિજય પ્રાપ્ત કરી લે છે એવા પુરુષને "અનિષ્કૃષ્ટ-નિષ્કૃષ્ટ" રૂપ ત્રીજા ભાંગામાં મૂકી શકાય છે. (૪) જે પુરુષ તપ પણ કરતો નથી અને કષાયોને જીતતો પણ નથી તેને ચોથા પ્રકારમા મૂકી શકાય છે. ।૩૯।

આ સૂત્રની પુષ્ટિ નિમિત્તે સૂત્રકાર આ બીજું સૂત્ર કહે છે-"चत्तारि पुरिसजाया" ઈત્યાદિ—નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પુરુષપ્રકારો કહ્યા છે-(૧) નિષ્કૃષ્ટ-નિષ્કૃષ્ટાત્મા, (૨) નિષ્કૃષ્ટ-અનિષ્કૃષ્ટાત્મા, (૩) અનિષ્કૃષ્ટાત્મા-નિષ્કૃષ્ટ અને (૪) અનિષ્કૃષ્ટાત્મા-અનિષ્કૃષ્ટાત્મા.

સ્પષ્ટીકરણ—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે તપસ્યાથી શરીરને કૃશ કરી નાખે છે અને કષાયોને બિલકુલ નિર્મૂળ કરી નાખે છે (૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે તપસ્યાથી શરીરને કૃશ કરી નાખવા છતાં પણ કષાયોને નિર્મૂળ કરી શકતો નથી. એજ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગા પણ સમજી લેવા. ।૪૦।

' चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एको बुधः-सत्क्रियापण्डितो भवति, उक्तं च—

करता है वह द्वितीय भंगमें लिया गयाहै । इसी प्रकारसे अवशिष्ट दो भंग भी समझ लेना चाहिये अथवा-निष्कृष्ट निष्कृष्ट ऐसा जो ३९ वां सूत्र कहा गयाहै उसका ऐसा भी अर्थ हो सकता है, कि कोई एक पुरुष ऐसा है जो पहिले भी तपस्यासे कृशीकृतदेहवाला होता है, और बादमें भी तपस्यासे कृशीकृत देहवाला बना रहता है, अर्थात् पहिले भी वह तपस्या करता है और तपस्या आगे भी करता जाता है जब तक जीवित रहता है तब तक तपस्या करना नहीं छोडता है, ऐसा अर्थ लेकर इस सूत्रकी व्याख्या करलेनी चाहिये और जो यह ४० वां सूत्र कहा गया है उसमें जैसी अभी व्याख्याकी गई है वैसीही व्याख्या कर लेनी चाहिये ३९ वें सूत्रमें " कृशीकृतकषायत्वात् उपशान्तचित्तो भवतीति " ऐसी व्याख्या नहीं करनी चाहिये ऐसी व्याख्या तो यहां ४० वें सूत्रमें करनी चाहिये ।

फिर भी-"चत्तारि पुरिसजाया इत्यादि, पुरुषजात चार कहे गयेहैं जैसे बुध-बुध१ बुध अबुध२ अबुध बुध३ और अबुध अबुध४ इनमें जो सत् क्रियामें पण्डित होता है और विवेक सम्पन्न मनवाला होता है, ऐसा वह बुध

३९ માં સૂત્રમાં " નિષ્કૃષ્ટ-નિષ્કૃષ્ટ " જે પહેલે ભાંગો છે તેનો નીચે પ્રમાણે અર્થ પણ થાય છે—કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ તપસ્યાથી કૃશીકૃત દેહવાળો હોય છે અને પછી પણ તપસ્યા ચાલુ રાખીને કૃશીકૃતદેહવાળો જ રહે છે. એટલે કે પહેલાં પણ તપસ્યા કરે છે અને પછી પણ તપસ્યા ચાલુ જ રાખે છે એટલે કે જીવે ત્યાં સુધી તપસ્યા કર્યા જ કરે છે. આ પ્રકારનો અર્થ કરીને સૂત્રની વ્યાખ્યા કરવી જોઇએ અને આ જે ૪૦ મું સૂત્ર કહ્યું છે, તેમાં આગળ બતાવ્યા પ્રમાણે જ વ્યાખ્યા કરવી જોઇએ. ૩૯માં સૂત્રમાં " कृशीकृतकषायत्वात् उपशान्तचित्तो भवतीति " આ પ્રકારની વ્યાખ્યા કરવી જોઇએ નહીં, એવી વ્યાખ્યા તો ૪૦માં સૂત્રમાં કરવી જોઇએ.

" चत्तारि पुरिसजाया " ઇત્યાદિ—પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) બુધ, બુધ, (૨) બુધ-અબુધ, (૩) અબુધ-બુધ અને (૪) અબુધ-અબુધ હવે આ ચારે ભાંગાનો અર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—જે પુરુષ સત્ક્રિયા સંપન્ન હોય છે અને વિવેકસંપન્ન મનવાળો હોય છે તેને " બુધ બુધ " રૂપ પહેલા ભાંગામાં મૂકી શકાય છે કહ્યું પણ છે કે—

"पठकः पाठकश्चैव ये चान्ये तत्त्वचिन्तकाः ।
सर्वे व्यसनिनः सन्ति । यः क्रियावान् स पण्डितः । १ ।" इति.

स पुनर्बुधः-विवेकसम्पन्नमनस्त्वात् पण्डितो भवति, इति प्रथमः १, तथा-एको बुधो भवन्नपि विवेकविकलमनस्त्वादबुधो भवतीति द्वितीयः २, तथा-एकः सत्क्रियारहितत्वादबुधः सन्नपि विवेकसम्पन्नमनस्त्वाद् बुधो भवतीति तृतीयः ३, तथा-एकः सत्क्रियाविवेकैतदुभयरहितत्वादबुधः सन्नबुधो भवतीति चतुर्थः ४। (४१)।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि स्पष्टम्, नवरम्—एको बुधः-सत्क्रियत्वात् पण्डितो भवति स पुनर्बुधहृदयः-बुधं-सदसद्बोधसम्पन्नं हृदयं मनो यस्य स तथा भवति विवेककारकमनस्त्वात् १,

---

बुध इस प्रथम भंगमें लिया गया है उक्तं च--"पठकः पाठकश्चैव" इत्यादि-हे भव्य जो पढानेवाला है, पढनेवाला है, तथा जो तत्त्वोका चिन्तवन करनेवाले हैं, वे सब व्यसनी हैं। पण्डित तो वही है जो क्रियावाला है, दूसरा वह पुरुष जो बुध होता हुआ भी विवेक विकल मनवाला होता है वह द्वितीय भंगमें लिया गया है। तीसरा पुरुष वह जो सत्क्रिया रहित होनेसे अबुध होता हुआ भी विवेक सम्पन्न मनवाला होते बुध होता है, ऐसा यह पुरुष तृतीय भंगमें लिया गया है। और जो सत्क्रिया और विवेक इन दोनोंसे रहित होता है वह अबुध अबुध ऐसे चतुर्थ भंगमें लिया गया है (४१)

फिरभी—"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुरुषजात चार कहे गये हैं जैसे बुध बुध हृदय १ बुध अबुध हृदय २ अबुध बुध हृदय ३ एवं

"पठकः पाठकश्चैव" ઇત્યાદિ—"હે રાજન્! જે પઠન કરનારા છે, પઠન કરાવનારા છે તથા તત્ત્વોનું ચિન્તન કરનારા છે, તેઓ તો વ્યસની છે. પંડિત તો તેને જ કહી શકાય છે કે જે ક્રિયાસંપન્ન હોય છે. (૨) જે પુરુષ બુધ હોવા છતાં પણ વિવેકશૂન્ય મનવાળો હોય છે તેને "બુધ-અબુધ" રૂપ બીજા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે. (૩) જે પુરુષ સત્ક્રિયા રહિત હોવાથી અબુધ હોવા છતાં પણ વિવેકસંપન્ન મનવાળો હોવાથી બુધ હોય છે તેને "અબુધ-બુધ" રૂપ ત્રીજા ભાંગામાં મૂકી શકાય છે. (૪) જે પુરુષ સત્ક્રિયાથી પણ વિહીન હોય છે અને વિવેકથી પણ વિહીન હોય છે તેને "અબુધ અબુધ" રૂપ ચોથા ભાંગામાં મૂકી શકાય છે. ।૪૧।

"चत्तारि पुरिसजाया" ઇત્યાદિ—નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો પણ કહ્યા છે—(૧) બુધ-બુધ હૃદય, (૨) બુધ-અબુધ હૃદય, (૩) અબુધ-બુધ હૃદય અને (૪) અબુધ-અબુધહૃદય.

यद्वा—एको बुधः-शास्त्रज्ञानसम्पन्नः सन् क्रियायां बुधहृदयः—किंकर्तव्यताविमूढतारहितत्वाल्लक्ष्यज्ञानसम्पन्नमना भवतीति प्रथमः १। एवं शेषभङ्गत्रयमूहनीयम् । ४ । (४२) ।

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—स्पष्टम् , नवरम्—एकः पुरुष आत्मानुकम्पको—स्वात्मरक्षको भवति, किन्तु नो परानुकम्पकः—पररक्षको न भवति, स प्रत्येकबुद्धो जिनकल्पिको वा, परानपेक्षो निर्दयो वा १, तथा-एकः परानु-

---

अबुध अबुध हृदय ४ इनमें जो सक्रियावाला होनेसे पण्डित होता है और सत् और असत्के बोधसे सम्पन्न हृदयवाला होताहै, वह प्रथम भंगमें लिया गया है । ऐसा यह पुरुष विवेककारक मनवाला होता है। अथवा जो पुरुष शास्त्रीयज्ञानसे सम्पन्न होता हुआ क्रियामें बुध हृदयवाला होता है, किंकर्तव्यतामें विमूढतासे रहित होनेसे लक्ष्य ज्ञानसे सम्पन्न-मनवाला होता है, ऐसा वह पुरुष प्रथम भंगमें लिया गया है इसी तरहसे शेष भंगत्रय भी समझ लेना चाहिये (४२)

फिरभी—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-पुरुषजात चार कहे गये हैं—जैसे आत्मानुकम्पक नो परानुकम्पक १ परानुकम्पक नो आत्मानुकम्पक २ उभयानुकम्पक ३-और अनुभयानुकम्पक ४ इनमें प्रथम भंगमें वह पुरुष लिया गया है जो स्वात्मरक्षकही होता है- पररक्षक नहीं होता है जैसे—प्रत्येक बुध अथवा जिनकल्पिक अथवा दूसरेकी

પહેલા ભાંગાનુ સ્પષ્ટીકરણ—જે પુરુષ સત્ક્રિયાવાળો હોવાથી પંડિત હોય છે અને સત્ અને અસત્‌ના બોધથી યુક્ત હૃદયવાળો હોય છે, તેને પહેલા ભાંગામાં લઈ શકાય છે. એવો પુરુષ વિવેકકારક મનવાળો હોય છે અથવા જે પુરુષ શાસ્ત્રીય જ્ઞાનથી સંપન્ન પણ હોય છે, અને ક્રિયામાં પણ બુધ હૃદયવાળો હોય છે-કર્તવ્ય વિમૂઢ હોતો નથી અને લક્ષ્યજ્ઞાનથી સંપન્ન મનવાળો હોય છે તેને પહેલા ભાંગામાં મૂકી શકાય છે એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ જાતે જ સમજી લેવા. ॥૪૨॥

" ચત્તારિ પુરિસજાયા " ઇત્યાદિ—નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) આત્માનુકંપક નો પરાનુકંપક, (૨) પરાનુકંપક નો આત્માનુકંપક, (૩) ઉભયાનુકંપક અને (૪) અનુભયાનુકંપક.

પહેલા ભાંગામાં એવા પુરુષને લેવામાં આવ્યો છે કે જે સ્વાત્મરક્ષક જ હોય છે પણ પરરક્ષક હોતો નથી. જેમકે પ્રત્યેક બુધ, અથવા જિનકલ્પિક અથવા અન્યની પરવા ન કરનારો નિર્દય પુરુષ. બીજા ભાંગામાં એવો પુરુષ

कम्पकः किन्तु नो आत्मानुकम्पकः—स्वात्मानुकम्पको न भवति, स च तीर्थङ्करः, आत्मानपेक्षो वा दयालुः मेघरथवत्, इति द्वितीयः २। तथा—एकः स्वपरानुकम्पको भवति, स च स्थविरकल्पिक—इति तृतीयः ३, तथा—एको नो आत्मानुकम्पको नापि च परानुकम्पको भवति, स च पापात्मा कालसौकरिकादिवदिति चतुर्थः ४। (४३) ॥ सू० १६ ॥

पूर्वं पुरुषविशेषा अभिहिताः, सम्प्रति देवादीनां वेदसंपाद्यं व्यापारविशेषं निरूपयितुं सप्तसूत्रीमाह—

मूलम्—चउव्विहे संवासे पण्णत्ते, तं जहा–दिव्वे १, आसुरे २, रक्खसे ३, माणुस्से ४ (१)

चउव्विहे संवासे पण्णत्ते, तं जहा--देवे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ १, देवे णाममेगे असुरीए सद्धिं संवासं गच्छइ २, असुरे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ ३, असुरे णाममेगे असुरीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (२)।

चउव्विहे संवासे पण्णत्ते, तं जहा--देवे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ १, देवे णाममेगे रक्खसीए सद्धिं संवासं

अपेक्षा नहीं करनेवाला निर्दय पुरुष १ द्वितीय भंगमें वह पुरुष लिया गया है, जो परानुकम्पक होता है आत्मानुकम्पक नहीं होता है। जैसे तीर्थंकर अथवा अपनी परवाह नहीं करनेवाला मेघरथके जैसा पुरुष। तृतीय भंगमें वह पुरुष लिया गयाहै, जो स्व और पर इन दोनोंके प्रति अनुकम्पावाला होता है, जैसा स्थविर काल्पिक मुनि। चतुर्थ भंगमें वह पुरुष लिया गया है जो स्वानुकम्पा और परानुकम्पा इन दोनोंसे रहित होताहै, जैसे कालसौकरिक कसाई आदि पुरुष ४३ सू. १६

લેવામાં આવ્યો છે કે જે પરની અનુકંપા રાખનારો હોય છે પણ પોતાની અનુકંપા રાખનારો હોતો નથી, જેમકે તીર્થંકર અથવા પોતાની પરવા ન કરનાર મેઘરથ જેવા પુરુષો. ત્રીજા ભાંગામાં એ પુરુષને લેવામાં આવ્યો છે કે જે પોતાના અને પરના પ્રત્યે અનુકંપાવાળો હોય છે, જેમકે સ્થવિર કાલ્પિક મુનિ ચોથા ભાંગામાં એવા પુરુષને લેવામાં આવ્યો છે કે જે સ્વ અને પર બન્ને પ્રત્યે અનુકંપા વિનાનો હોય છે. ।૪૩। ॥ સૂ. ૧૬ ॥

गच्छइ २, रक्खसे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ ३, रक्खसे णाममेगे रक्खसीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (३)।

चउव्विहे संवासे पण्णत्ते तं जहा-देवे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ १, देवे णाममेगे मणुस्सीए सद्धिं संवासं गच्छइ २, मणुस्से णाममेगे देवीहिं सद्धिं संवासं गच्छइ ३, मणुस्से णाममेगे माणुस्सीहिं सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (४)।

चउव्विहे संवासे पण्णत्ते, तं जहा-असुरे णाममेगे असुरीए सद्धिं संवासं गच्छइ, असुरे णाममेगे रक्खसीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (५)।

चउव्विहे संवासे पण्णत्ते, तं जहा-असुरे णाममेगे असुरीए सद्धिं संवासं गच्छइ, असुरे णाममेगे मणुस्सीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (६)

चउव्विहे संवासे पण्णत्ते, तं जहा-रक्खसे णाममेगे रक्खसीए सद्धिं संवासं गच्छइ रक्खसे णाममेगे माणुस्सीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४, (७) ॥ सू० १७ ॥

छाया—चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-दिव्यः १, आसुरः २, राक्षसः ३, मनुषः ४ (१)।

चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-देवो नामैको देव्या सार्द्धं संवासं गच्छति १, देवो नामैकः असुर्या सार्द्धं संवासं गच्छति २, असुरो नामैको देव्या सार्द्धं संवासं गच्छति ३, असुरो नामैक असुर्या सार्द्धं संवासं गच्छति ४, (२)।

चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-देवो नामैको देव्या सार्धं संवासं गच्छति १, देवो नामैको राक्षस्या सार्द्धं संवासं गच्छति २, राक्षसो नामैको देव्या सार्द्धं संवासं गच्छति ३, राक्षसो नामैको राक्षस्या सार्द्धं संवासं गच्छति ४, (३)।

चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—देवो नामैको देव्या सार्द्धं संवासं गच्छति १, देवो नामैको मानुष्याः सार्धं संवासं गच्छति २, मनुष्यो नामैको देव्या सार्द्धं संवासं गच्छति ३, मनुष्यो नामैको मानुष्यासार्द्धं संवासं गच्छति ४, (४)।

चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—असुरो नामैकोऽसुर्या सार्द्धं संवासं गच्छति, असुरो नामैको राक्षस्या सार्द्धं संवासं गच्छति ४, (५)।

चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—असुरो नामैकोऽसुर्या सार्द्धं संवासं गच्छति, असुरो नामैको मानुष्या सार्द्धं संवासं गच्छति ४, (६)

चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—राक्षसो नामैको राक्षस्या सार्द्धं संवासं गच्छति, राक्षसो नामैको मानुष्या सार्द्धं संवासं गच्छति ४ (७) ॥सू० १८॥

टीका—'चउव्विहे संवासे" इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं-संवसन-संवासः-स्त्रिया सह सङ्गमः, 'दिव्यः'-द्यौः-स्वर्गः, तद्वासी देवोऽपि उपचाराद् द्यौः,

---

'चउव्विहे संवासे पण्णत्ते इत्यादि' सूत्र १७॥

टीकार्थ-संवास चार प्रकारका कहा गयाहै जैसे-दिव्य१ आसुर२ राक्षस ३ एवं मानुष ४ स्त्रियोंके साथ जो संगम किया जाता है उसका नाम संवास है "दिवि भवः दिव्यः" इस व्युत्पत्तिके अनुसार देवलोक होनेवाला जो संवास है वह दिव्य संवासहै। परन्तु यहां वैमानिक देव सम्बन्धी संवास लिया गयाहै "द्यौ" नाम देवलोकका है, देवलोकमें रहनेवाले देव भी उपचारसे "द्यौ" कह दिये गयेहैं। इन देवोंमें जो संवास होता है, वही दिव्य संवास है। इस प्रकार कहनेसे नवग्रैवेयक आदि विमानोंमें भी संवास होनेकी आपत्ति आ सकतीहै, परन्तु वहां संवास देवलोगोंसे आगे नवग्रैवेयक आदिकोंमें नहींहै, अतः यहां दिव्य संवा-

---

"चउव्विहे संवासे पण्णत्ते" ઇત્યાદિ—(સૂ ૧૭)

ટીકાર્થ-પુરુષ અને સ્ત્રીના મૈથુન સેવનને સંવાસ કહે છે. તેના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) દિવ્ય સંવાસ, (૨) આસુર સંવાસ, (૩) રાક્ષસ સંવાસ અને (૪) માનુષ સંવાસ. "दिवि भवः दिव्यः" આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર સ્વર્ગમાં (દેવલોકમાં) જે સંવાસ થાય છે તેનુ નામ દિવ્યસંવાસ છે અહીં વૈમાનિક દેવ સંબંધી સંવાસ જ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે. "द्यौ" એટલે સ્વર્ગ. સ્વર્ગમાં રહેનારા દેવોને પણ અહીં ઔપચારિક રીતે "द्यौ" કહેવામાં આવેલ છે આ દેવોમાં જે મૈથુન સેવન થાય છે તેને દિવ્ય સંવાસ કહે છે આ પ્રકારના કથનમાં નવગ્રૈવેયકવાસી દેવોમાં પણ સંવાસ હોવાની વાત માનવાનો પ્રસંગ ઉદ્‌ભવશે. પણ ત્યાં સંવાસનો સદ્‌ભાવ હોતો જ નથી. તેથી અહીં વૈમાનિક દેવ સંબંધી સંવાસ જ, 'દિવ્યસંવાસ', પદ દ્વારા ગૃહીત

तत्र भवो दिव्यः–वैमानिकदेवसम्बन्धी संवासः, आसुरः–असुरस्य–भवनपति-विशेषस्यायम् आसुरः, राक्षसः–रक्षो राक्षसो वा व्यन्तरविशेषः, तस्यायं राक्षसः संवासः, एवं मानुष्यः–मनुष्यस्यायमित्यर्थः, इति प्रथमं सामान्यसूत्रम् । अतः

सले वैमानिकदेव सम्बन्धी संवास कहा गया है ऐसाही जानना चाहिये भवनपति विशेष सम्बन्धी जो संवास है वह आसुर संवास है असुरका संवास आसुर संवास है, असुर ये भवनपतिका एक भेद है व्यन्तरका भेद राक्षस है इस राक्षसका जो संवास है वह राक्षस संवास है और जो मनुष्यकृत संवास है वह मानुष संवास है.

फिरभी—संवास चार प्रकारका कहा गया है–जैसे–कोई एक देव देवीके साथ संवास करता है १ कोई एक देव असुरीके साथ संवास करता है कोई एक असुर देवीके साथ संवास करता है कोई एक असुर असुरीके साथ संवास करता है ४ (२)

फिरभी—संवास चार प्रकारका कहा गया है–जैसे–कोई एक देव देवीके साथ संवास करताहै, कोई एक देव राक्षसीके साथ संवास करता है २ कोई एक राक्षस देवीके साथ संवास करता है ३ कोई एक राक्षस राक्षसीके साथ संवास करता है ४ (३)

થવો જોઇએ ત્યાંથી આગળ નવગ્રૈવેયક આદિમાં સંવાસનો સદ્ભાવ જ હોતો નથી ભવનપતિ દેવો અને દેવીઓના સંવાસને આસુરસંવાસ કહે છે.

અસુર એ ભવનપતિઓનો એક ભેદ છે. તે અસુરકુમારના અસુરકુમારી સાથેના સંભોગને પણ આસુરસંવાસ કહે છે.

વ્યન્તરનો રાક્ષસ નામનો ભેદ છે. તે રાક્ષસના સંવાસને રાક્ષસ સંવાસ કહે છે. મનુષ્યકૃત સંવાસને—મનુષ્ય જાતિના પુરુષ અને સ્ત્રીના મૈથુન સેવનને—માનુષસંવાસ કહે છે. ।૧।

સંવાસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક દેવ દેવીની સાથે સંવાસ કરે છે. (૨) કોઇ એક દેવ અસુરી (અસુરકુમારી) સાથે સંવાસ કરે છે. (૩) કોઈ એક અસુર દેવીની સાથે સંવાસ કરે છે (૪) કોઈ એક અસુર અસુરી સાથે સંવાસ કરે છે. ।।૨।।

વળી સંવાસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક દેવ દેવીની સાથે સંવાસ કરે છે. (૨) કોઈ એક દેવ રાક્ષસી સાથે સંવાસ કરે છે. (૩) કોઇ એક રાક્ષસ દેવીની સાથે સવાસ કરે છે અને (૪) કોઇ એક રાક્ષસ રાક્ષસી સાથે સંવાસ કરે છે. ।।૩।।

परं चतुर्भङ्गिकासूत्राणि देवासुरादि संयोगतः षडिति सामान्यसूत्रेण सह संकलनेन सप्तसूत्री । ७ । सू० १७ ॥

पुनश्च—संवास इस प्रकारसे भी चार प्रकारका कहा गया है जैसे-कोई एक देव देवीके साथ संवास करता है १ कोई एक देव मानुषीके साथ संवास करता है २ कोई एक मनुष्य देवीके साथ संवास करता है ३ कोई एक मनुष्य मानुषीके साथ संवास करता है ४ (४)

इस रीतिसे भी संवास चार प्रकारका कहा गया है जैसे-कोई एक असुर असुरीके साथ संवास करता है १ कोई एक असुर राक्षसीके साथ संवास करता है २ इत्यादि ४-(५)

इस रूपसे भी संवास चार प्रकारका कहा गया है-जैसे-कोई एक असुर असुरीके साथ संवास करता है १ कोई एक असुर मनुष्य स्त्रीके साथ संवास करता है २ इत्यादि ४-(६)

इस पद्धतिसे भी संवास चार प्रकारका कहा गया जैसे-कोई एक राक्षस राक्षसीके साथ संवास करता है १ कोई एक राक्षस मनुष्य स्त्रीके साथ संवास करता है २ इत्यादि ४ (७)

इनमें प्रथम सूत्र सामान्य सूत्र है बाकीके ६ सूत्र चतुर्भंगके सूत्र

વળી સંવાસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક દેવ દેવી સાથે સંવાસ કરે છે. (૨) કોઇ એક દેવ માનુષી (મનુષ્ય જાતિની સ્ત્રી) સાથે સંવાસ કરે છે. (૩) કોઇ એક મનુષ્ય દેવીની સાથે સંવાસ કરે છે અને (૪) કોઇ એક મનુષ્ય માનુષી સાથે સંવાસ કરે છે. ॥૪॥

વળી સંવાસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ ક ા છે—(૧) કોઇ એક અસુર અસુરીની સાથે સંવાસ કરે છે. (૨) કોઈ એક અસુર મનુષ્ય સ્ત્રી સાથે સંવાસ કરે છે. (૩) કોઈ એક મનુષ્ય અસુરી સાથે સંવાસ કરે છે. (૪) કોઇ એક મનુષ્ય મનુષ્ય સ્ત્રી સાથે સંવાસ કરે છે. ॥૬॥

સંવાસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક રાક્ષસ રાક્ષસી સાથે સંવાસ કરે છે. (૨) કોઈ એક રાક્ષસ મનુષ્ય સ્ત્રી સાથે સંવાસ કરે છે. (૩) કોઈ એક મનુષ્ય રાક્ષસી સાથે સંવાસ કરે છે. (૪) કોઇ એક મનુષ્ય મનુષ્યસ્ત્રી સાથે સંવાસ કરે છે. ॥૭॥

આ સાત સૂત્રોમાંનું પહેલું સૂત્ર સામાન્ય સૂત્ર છે. બાકીના જે છ સૂત્રો છે તેમાં દેવ અસુર, દેવ રાક્ષસ, દેવ મનુષ્ય, અસુર રાક્ષસ, અસુર મનુષ્ય અને રાક્ષસ મનુષ્યના સંયોગથી ચતુર્ભંગીઓ બની છે. આ પ્રકારે

पुरुषाधिकारादेवापध्वंससूत्रमाह—

मूलम्—चउव्विहे अवद्धंसे पण्णत्ते तं जहा-आसुरे १, अभिओगे २, संमोहे ३, देवाकिब्बिसे ४।

चउहिं ठाणेहिं जीवा असुरत्ताए कम्मं पगरेंति तं जहा-- कोवसीलयाए १, पाहुडसीलयाए २, संसत्ततवोकम्मेणं ३, निमित्ताजीवयाए ४, चउहिं ठाणेहिं जीवा आभिओगत्ताए कम्मं पकरेंति, तं जहा-अत्तुक्कोसेणं १ परपरिवाएणं २ भूइकम्मेणं ३ कोउयकरणेणं ४।

चउहिं ठाणेहिं जीवा संमोहत्ताए कम्मं पगरेंति, तं जहा-- उम्मग्गदेसणयाए १ मग्गंतराएणं २, कामासंसप्पओगेणं ३, भिज्जानियाणकरणेणं ४।

चउहिं ठाणेहिं जीवा देवकिब्बिसियत्ताए कम्मं पगरेंति, तं जहा-अरहंताणं अवन्नं वयमाणे १, अरहंतपन्नत्तस्स धम्मस्स अवन्नं वयमाणे २, आयरिय उवज्झायाणमवन्नं वदमाणे ३, चाउवन्नस्स संघस्स आवन्नं वयमाणे ४ ॥ सू० १८ ॥

छाया—चतुर्विधोऽपध्वंसः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-आसुरः १, आभियोगः २, साम्मोहः ३ दैवकिल्विषः ४।

चतुर्भिः स्थानैर्जीवा आसुरतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-कोपशीलतया १ प्राभृतशीलतया २ संसक्ततपःकर्मणा ३, निमित्ताजीवतया ४।

चतुर्भिः स्थानैर्जीवा आभियोगतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा—आत्मोत्कर्षेण १, परपरिवादेन २, भूतिकर्मणा ३, कौतुककरणेन ४,

हैं ये देव असुर आदिके संयोगसे हुए हैं। इस प्रकार ये ६ सूत्र और एक सामान्य सूत्र मिलकर कुल ७ ये सूत्र हैं ॥ सूत्र १७ ॥

૭ સૂત્રો અને એક સામાન્ય સૂત્ર મળીને કુલ સાત સૂત્રોનુ પ્રતિપાદન અહીં કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ. ૧૭ ॥

चतुर्भिः स्थानैर्जीवाः साम्मोहतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा–उन्मार्गदेशनतया १, मार्गान्तरायेण २, कामाऽऽशंसाप्रयोगेण ३, अभिध्यानिदानकरणेन ४,

चतुर्भिः स्थानैर्जीवाः देवकिल्विषतायै कर्मप्रकुर्वन्ति, तद्यथा–अर्हतामवर्णं वदन् अर्हत्प्रज्ञप्तस्य धर्मस्यावर्णं वदन् आचार्योपाध्यायानामवर्णं वदन्, चातुर्वर्ण्यस्य सङ्घस्यावर्णं वदन् ॥ सू० १८ ॥

टीका—'चउव्विहे अवद्धंसे" इत्यादि—अपध्वंसः–चारित्रस्य–तत्फलस्य वा विनाशः, चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–आसुरः=असुरभावनाजनितः. यद्वा–येष्वनुष्ठानेषु वर्तमानो जीवोऽसुरत्वमर्जयति तैरनुष्ठानैरात्मनो भावनमासुरः १, तथा–आभियोगः–अभियोगभावनाजनितः आभियोगाः आज्ञाकारीत्यर्थः २ तथा–साम्मोहः–संमुह्यन्तीति संमोहाः–मूढात्मानो मिथ्यादृष्टयो देवविशेषाः, तेषामयं

'चउव्विहे अवद्धंसे पण्णत्ते' इत्यादि सूत्र १८ ॥

टीकार्थ–चार प्रकारका अपध्वंस कहा गयाहै जैसे–आसुर १ आभियोग २ साम्मोह ३ और देवकिल्विष ४ चारित्र अथवा चारित्रके फलका विनाश होना, इसका नाम अपध्वंस है । जो अपध्वंस असुर भावनासे होता है, वह आसुर अपध्वंस है अथवा–जिन अनुष्ठानोंमें वर्तमान जीव असुरत्वका उपार्जन करता है उन अनुष्ठानोंसे आत्माको भावित करना सो आसुरहै १। जो अपध्वंस अभियोग भावनासे जनित होता है, वह आभियोग अपध्वंस है २ जो अपध्वंस संमोह भावनासे उत्पन्न होता है, वह साम्मोह अपध्वंस है, मूढात्मावाले जो मिथ्यादृष्टि देव-विशेष हैं वे यहां संमोह पदसे लिये गये हैं उनकी जो भावना है वह

"चउव्विहे अवद्धंसे पण्णत्ते" ઇત્યાદિ—(સૂ ૧૮)

ચારિત્ર અથવા ચારિત્રના ફળનો વિનાશ થવો તેનું નામ "અપધ્વંસ" છે તે અપધ્વંસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—

(૧) આસુર, (૨) અભિયોગ, (૩) સામ્મોહ અને (૪) દેવકિલ્બિષ જે અપધ્વંસ અસુર ભાવનાથી થાય છે તે અપધ્વંસને આસુર અપધ્વસ કહે છે અથવા જે અનુષ્ઠાનોમાં વર્તમાન (રહેલો) જીવ અસુરત્વનું ઉપાર્જન કરે છે એવા અનુષ્ઠાનોથી આત્માને ભાવિત (યુક્ત) કરવો તેનુ નામ આસુરભાવ છે.

જે અપધ્વંસ અભિયોગ ભાવનાને લીધે જનિત હોય છે તેને આભિયોગ અપધ્વંસ કહે છે. બીજો અપધ્વંસ સંમોહ ભાવનાને લીધે ઉત્પન્ન થયેલો હોય છે તેને સામ્મોહ અપધ્વંસ કહે છે.

મૂઢાત્માવાળા જે મિથ્યાદષ્ટિ દેવવિશેષ છે તેમને અહીં સંમોહ પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે તેમની જે ભાવના છે તેનું નામ સંમોહ છે ૩ જે

सांमोहः, सांमोहभावनाजनितः अज्ञानभावनाजनित इत्यर्थः ३, तथा–देवकिल्विषः–देवकिल्बिषभावनाजनितः, इति, इह कन्दर्पभावनाजनितरूपः कान्दर्पोऽपध्वंसः पञ्चम आगमोक्तोऽपि नोक्तश्चतुःस्थानकानुरोधात्, आगमे हि पञ्च भावना आह–

"कंदप्प १ देवकिब्बिस २ अभिओगा ३ आसुरा ४ य संमोहा।
एसा उ संकिलिट्ठा पंचविहा भावणा भणिया ॥ १ ॥

छाया—कान्दर्पं १ दैवकिल्बिषाभियोग्या ३ आसुरी च साम्मोहा।
एषा तु संक्लिष्टा पञ्चविधा भावना भणिता ॥ १ ॥

आसां भावनानां मध्ये यः संयतो यस्यां भावनायां वर्तते स तद्विधेषु देवेषु गच्छन्ति चारित्रलेशप्रभावात्। यद्येतद्भावनायुक्तश्चारित्रहीनो भवेत्तदा तस्य देवलोकगमने भजना भवति–देवेषूत्पद्यते न वेति स भजनीयो भवति। उक्तञ्च—

सांमोहहै ३। तथा जो अपध्वंस दैवकिल्विष भावनासे जनित होता है वह दैवकिल्विष अपध्वंसहै ४। कन्दर्पभावनासे जनित भी अपध्वंस होता है पर वह यहां इसलिये नहीं लिया गया है कि यहां चतुःस्थानकका अनुरोध है। आगममें पांच भावनाएँ इस प्रकारसे कही गई हैं। "कंदप्पदेवकिब्बिस" इत्यादि। इन भावनाओंमेंसे जिस भावनामें संयत जीव वर्तमान रहता है, वह उस प्रकारके देवोंमें जाता है, क्योंकि उसके पास चारित्रका लेश रहता है, अतः उसके प्रभावसे वह मरकर वहां जाता है यदि इन भावनाओंसे युक्त हुआ जीव चारित्रहीन हो जाता है तो ऐसे उस जीवकी देवलोक गमनमें भजना होती है, अर्थात् वह देवलोकमें उत्पन्न होता भी है, और नहीं भी होताहै कहा भी है–

અપધ્વંસ દૈવકિલ્વિષ ભાવનાથી જનિત હોય છે તેને દૈવકિલ્વિષ અપધ્વંસ કહે છે. ૪ કંદર્પ ભાવનાથી જનિત અપધ્વંસ પણ હોય છે, પણ ચાર સ્થાનનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી તેને અહીં ગણાવવામાં આવેલ નથી.

આગમમાં આ પ્રકારની પાંચ ભાવનાઓ કહી છે—"कंदप्प देवकिब्बिस" ઇત્યાદિ. આ ભાવનાઓમાંની જે ભાવનામાં સંયત જીવ વર્તમાન રહે છે–જે ભાવનાથી યુક્ત રહે છે–તે પ્રકારના દેવોમાં તે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, કારણ કે તે ચારિત્રના પ્રભાવથી મરીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થઇ જાય છે. કદાચ આ ભાવનાઓથી યુક્ત થયેલો જીવ ચારિત્રહીન થઈ જાય તો એવો જીવ દેવલોકમાં જાય છે પણ ખરો અને નથી પણ જતો. એટલે કે એવા જીવનું દેવલોકગમન અવશ્ય થાય છે જ એવું નથી, પણ ભજનાથી (વિકલ્પે) થાય છે, એમ સમજવું કહ્યુ પણ છે કે "सो संजओ वि सयासु" ઇત્યાદિ–જે

" जो संजओवि एयासु अप्पसत्थासु वट्टइ कहंचि ।
सो तव्विहेसु गच्छइ, सुरेसु भइओ चरणहीणो ॥ १ ॥"
छाया—यः संयतोऽप्येतासु, अप्रशस्तासु वर्त्तते कथञ्चित् ।
स तद्विधेषु गच्छति, सुरेषु भजनीयश्चरणहीनः ॥ १ ॥ इति ।

पूर्वमासुरादिरपध्वंस उक्तः, स चासुरत्वादिनिबन्धन इत्यसुरादिभावनास्वरूपभूतान्यसुरादित्वसाधनकर्मणां कारणानि चतुर्भिः—सूत्रैराह—" चउहिं ठाणेहिं " इत्यादि—जीवाश्चतुर्भिः स्थानैरासुरतायै—असुर एव आसुरः, तद्भावस्तत्ता, तस्यै कर्म—असुरायुष्कादि प्रकुर्वन्ति, तद्यथा—कोपशीलतया—क्रोधस्वभावतया १,

---

" जो संजओ वि सया सु " इत्यादि । जो संयत जीव इन अप्रशस्त भावनाओंमें रहता है वह मरकर उन देवोंमें जाता है और चरणहीन—चारित्रहीन—जीवमें वहां जानेकी भजना है । आसुरादि रूप जो अपध्वंस कहा गया है वह असुरत्वादि है, कारण जिसका ऐसा होता है । इसलिये अब सूत्रकार असुरादि भावनाके स्वरूपभूत जो कारण हैं अर्थात् असुरता आदिके साधनभूत कर्मोंके जो कारण हैं उनका कथन चार सूत्रोंसे करते हैं—" चउहिं ठाणेहिं " इत्यादि—जीव इन वक्ष्यमाण चार कारणोंसे असुरताके साधनभूत कर्मोंका उपार्जन करते हैं—वे चार कारण ये हैं—कोपशीलता, क्रोध स्वभावता जरा जरासी बातमें क्रोधका आवेग आजाना चेहरे ऊपर सदा आखोंका चढा रहना इत्यादि रूपसे जो जीवका स्वभाव है वह कोपशीलता है । इसकोपशी-

---

સંયત જીવ આ અપ્રશસ્ત ભાવનાઓમાં રહે છે તે મરીને ઉપર્યુક્ત દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, પણ ચરણુહીન (ચારિત્રહીન) જીવનું ત્યાં વિકલ્પે ગમન થાય છે. એટલે કે એવો જીવ દેવલોકમાં જાય છે પણુ ખરો અને નથી પણુ જતો.

અસુરાદિ રૂપ જે અપધ્વંસ કહ્યા છે, તે અસુરત્વ આદિ રૂપ કારણુવાળા હોય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર અસુરાદિ ભાવનાના સ્વરૂપભૂત જે કારણો છે એટલે કે અસુરતા આદિના સાધનભૂત કર્મોના જે કારણો છે તેમનું ચાર સૂત્રો દ્વારા કથન કરે છે—" ચઉહિં ઠાણેહિં " ઇત્યાદિ—

જીવ નીચેના ચાર કારણોને લીધે અસુરતાના સાધનભૂત કર્મોનું ઉપાર્જન કરે છે—(૧) કોપશીલતા અથવા ક્રોધ સ્વભાવતા—વાત વાતમાં ગુસ્સે થવું, ક્રોધથી આંખો લાલ કરવી, ડોળા કાઢવા, ક્રોધને લીધે લાલચોળ મુખાકૃતિ કરવી, ઇત્યાદિ રૂપ જીવનો જે સ્વભાવ હોય છે તેનું નામ કોપશીલતા છે તે કોપશીલતાને કારણે જીવ અસુરપર્યાયના કારણુભૂત આયુષ્ક આદિ

प्राभृतशीलतया कलहशीलतया २, संसक्ततपःकर्मणा-आहारोपधिशय्यादि-प्रतिबद्धभावतपश्चरणेन ३, निमित्ताजीवतया-भूकम्पादिनिमित्तं कथयित्वा जीवननिर्वाहकतया ४, इति अयमर्थोऽन्यत्रैवमुक्तः-

" अणुबद्धविग्गहोवि य, संसत्ततवो निमित्तमाएसी ।
णिक्किवणिराणुकंपो, आसुरियं भावणं कुणइ ॥ १ ॥ "

छाया—अनुबद्धविग्रहोऽपि च, संसक्ततपा निमित्तादेशी ।
निष्कृपो निरणुकम्पः, आसुरिकीं भावनां करोति ॥ १ ॥ इति ॥

लतासे जीव असुरपर्यायके कारणभूत आयुष्क आदि कर्मोंका बन्ध करता है। दूसरा कारण है प्राभृतशीलता कलहशीलताका नाम प्राभृतशीलता है। जरासा भी निमित्त मिलाकि क्लेश करने के लिये तैयार हो जाना आगेपीछेका कुछ भी विचार न करके जो भी मनमें आवे, बकने लगना इत्यादि रूपसे जो परिणति होती है वह कलहशीलता है, इस कलह-शीलतासे भी जीव असुरपर्यायके साधनभूत कर्मोंका उपार्जन करताहै। तीसरा कारण है आहार उपधि शय्या आदिमें प्रतिबद्धभावसे तपश्चरण करना। तथा चौथा कारण है भूकम्पादिका कथन करके जीवनका निर्वाह करना ४। यह कथन अन्यत्र इस प्रकारसे कहा हुआ है-" अनुबद्ध विग्गहो वि य " इत्यादि। जो व्यक्ति अनुबद्ध विग्रहवाला होता है रातदिन कलह कजिया करनेके स्वभावसे बंधा रहता है १। जो संसक्त तपस्या करता है, आहारादि में जिसकी लोलुपता रहती है, और

કર્મોનો બન્ધ કરે છે, અને તેથી મરીને અસુરોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. (૨) પ્રાભૃતશીલતા-વાત વાતમાં ઝગડો કરવાને તૈયાર થવું, આગળ પાછળનો વિચાર કર્યા વિના ફાવે તેવો બકવાટ કરવો ઇત્યાદિ રૂપ જે પરિણતિ થાય છે તેનું નામ કલહશીલતા અથવા પ્રાભૃતશીલતા છે. આ કલહશીલતાને કારણે પણ જીવ અસુરપર્યાયના સાધનભૂત કર્મોનું ઉપાર્જન કરે છે. (૩) આહાર, ઉપધિ, શય્યા આદિમાં લોલુપતાપૂર્વક તપશ્ચરણ કરવાથી પણ જીવ અસુર-પર્યાયમાં જવા યોગ્ય કર્મોનું ઉપાર્જન કરે છે (૪) ભૂકંપ આદિ થવાનું ભવિષ્ય ભાખીને લોકો પર પ્રભાવ પાડીને ખાવાપીવાની સારી સારી સામગ્રી એકત્ર કરનાર જીવ પણ અસુરપર્યાયમાં જવા યોગ્ય કર્મોનો બન્ધ કરે છે. આ વિષયને અનુલક્ષીને અન્ય ગ્રન્થમાં આ પ્રમાણે કહ્યુ છે-" અનુબદ્ધવિગ્ગહો વિ ય " ઇત્યાદિ-જે જીવ અનુબદ્ધ વિગ્રહવાળો હોય છે, રાતદિન કલહ કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે, ૧ સંસક્ત તપસ્યા કરે છે-તપસ્યા કરવા છતાં આહારાદિમાં જેની લોલુપતા ચાલુ જ રહે છે, ૨ જે લોકરંજનને માટે નિમિત્તા૦

तथा—चतुर्भिः स्थानैर्जीवा आभियोग्यतायै अभियोगः — व्यापारणं, तद्योग्याः—अभियोग्याः, त एवाभियोग्या—किङ्करदेवविशेषाः, तद्भाव आभियोग्यता, तस्यै कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा—आत्मोत्कर्षेण—स्वगुणगर्वेण १, परपरिवादेन—अन्यदीयदोषपरिकीर्त्तनेन २, भूतिकर्मणा—भूत्या—भस्मना, उपलक्षणत्वात्—

तपस्या करता है, लोकरंजनके लिये जो निमित्तादेशी होकर अच्छे २ खाने पीनेके साधनोंको जुटाता रहताहै ३, जो दयासे और अनुकंपासे रहित होता है ४, ऐसी वह व्यक्ति आसुरी भावनावाला माना गया है। इन चार कारणोंसे जीव आभियोगयता भृत्यपनेके योग्य कर्मोंका बन्ध करता है—जैसे—आत्मोत्कर्ष अपने गुणोंके गौरवका कथन करना अर्थात् अपनी झूठी श्लाघा करना अपने भीतर रहे हुए मामूली गुणको असाधारण समझना, वृथा अहङ्कारसे फूले हुए रहना यह सब यहाँ आत्मोत्कर्षसे लिया गया है। स्वोत्कर्ष स्वाभिमानमें और इसमें अन्तर है स्वोत्कर्ष भावनावाला व्यक्ति अपने द्वारा ऐसे कार्य करनेसे अपने आपको बचाता रहता है कि जिसमें उसकी आत्माका पतन होता हो गृहीत चारित्रमें बाधा आती हो सदाचारमें दूषण लगता हो, कषायादिकोंकी वृद्धि होती हो १ दूसरा कारण है—पर परिवाद—दूसरेके दोषोंको प्रकट करना अर्थात् दूसरोंके वास्तविक गुणोंको या निंदाके अभिप्रायसे

દેશી (ભવિષ્યવાણી ભાખનારો) થઈને સારી સારી ખાવાપીવાની સામગ્રીઓ એકત્ર કરતો રહે છે, ૩ જે દયા અને અનુકંપા ભાવથી રહિત હોય ૪ છે, એવા જીવને આસુરી ભાવનાવાળો માનવામાં આવ્યો છે.

નીચેના ચાર કારણોને લીધે જીવ અભિયોગતાને યોગ્ય કર્મોનો બન્ધ કરે છે—(૧) આત્મશ્લાઘા—પોતાના ગુણોનું ગૌરવ કરવું, પોતાના સામાન્ય ગુણને પણ અસાધારણ સમજવો, ખોટી બડાઈ હાંકવી અને મિથ્યાભિમાનમાં જ લીન રહેવું તેનું નામ આત્મોત્કર્ષ (આત્મશ્લાઘા) છે. સ્વોત્કર્ષ, સ્વાભિમાન અને આત્મોત્કર્ષમાં ઘણો તફાવત છે સ્વોત્કર્ષ ભાવનાવાળો માણસ તો પોતાના આત્માનું પતન થાય, ગૃહીત ચારિત્રમાં દોષ લાગી જાય, સદાચારનો લોપ થઈ જાય અને કષાયાદિકોની વૃદ્ધિ થાય, એવી પ્રવૃત્તિથી દૂર જ રહે છે. ત્યારે આત્મશ્લાઘા કરનારો જીવ તો ઉપર્યુક્ત પ્રવૃત્તિમાં જ લીન રહે છે.

બીજું કારણ—પરપરિવાદ—અન્યના દોષોને પ્રકટ કરવા તેનું નામ પરપરિવાદ છે પરપરિવાદ કરનારો જીવ અન્યના વાસ્તવિક ગુણોને જોવાને બદલે

मृत्तिकया सूत्रेण वा कर्म-रक्षार्थं वसत्यादिपरिवेष्टनं-भूतिकर्म, तेन ३, कौतुककरणेन सौभाग्यादिनिमित्तं स्नपनकादिकरणेनेति ४। इयं भावनाऽन्यत्रैवमुक्ता-

" कोउयभूईकम्मे, पसिणापसिणे निमित्तमाजीवी।
इड्ढिरससायगुरुओ, अभिओगं भावणं कुणइ ॥ १ ॥"

छाया—" कौतुकभूतिकर्मा, प्रश्नाप्रश्नः निमित्ताजीवी।
ऋद्धिरससातगुरुकः, आभियोग्यां भावनां करोति ॥ १ ॥ इति।

तथा—चतुर्भिः स्थानै र्जीवाः साम्मोहतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-उन्मार्गदेशनतया-कुमार्गदेशनया १, मार्गान्तरायेण-मोक्षमार्गप्रवृत्तजनविघ्नकरणेन २,

---

उसके दोष रूपमें प्रकट करना २ मैं मन्त्रशास्त्र आदिका वेत्ता हूं, ऐसा प्रकट करनेके लिये मृत्तिकासे या सूत्रसे अपनी वसतिका आदिको रक्षा करनेके अभिप्रायसे परवेष्टित करना यह भूति कर्म है ३ चौथा कारण है-कौतुककरण सौभाग्य आदिके निमित्त दूसरोंको स्नान आदि कराना ये चार कारण अन्यत्र इस प्रकारसे कहे गये हैं " कोउयभूईकम्मे " इत्यादि। कौतुक कर्म करनेसे भूतिकर्म करनेसे हाथ आदि देखकर किसीका शुभाशुभ कहनेसे ऋद्धिरस आदिमें गौरवशाली होनेसे जीव अभियोग्य भावनावाला माना जाता है, इस भावनाके वशवर्ती हुआ जीव आभियोग्य(भृत्य)जातिके देवोंमें उत्पन्न करानेवाले कर्मोंका बन्ध करता है

इन चार कारणोंसे जीव सांमोहताके लिये कर्मोंका बन्ध करता है जैसे-कुमार्गका उपदेश देना १ मोक्षमार्गके साधनमें प्रवृत्त जनको

તેના દોષો જ શોધ્યા કરે છે, અને તેની નિંદા કરવા નિમિત્તે તે દોષોને પ્રકટ કર્યા કરે છે.

ત્રીજું કારણ—ભૂતિકર્મ-" હું મંત્રશાસ્ત્ર આદિમાં નિપુણ છું,' એવું પ્રકટ કરવાને માટે મૃત્તિકા (માટી)થી અથવા સૂત્રથી (દોરાથી) પોતાના રહેઠાણ આદિને રક્ષા કરવાના અભિપ્રાયથી પરિવેષ્ટિત કરવું તેનું નામ ભૂતિકર્મ છે. ચોથું કારણ કૌતુકકરણ—સૌભાગ્ય આદિને નિમિત્તે અન્યને સ્નાનાદિ કરાવવું તેનું નામ કૌતુકકરણ છે આ ચાર કારણોને અન્યત્ર આ પ્રમાણે બતાવ્યા છે—" कोउयभूईकम्मे " ઇત્યાદિ—કૌતુકકર્મ કરવાથી, ભૂતિકર્મ કરવાથી, હાથ આદિ જોઈને કોઈનું શુભાશુભ કહેવાથી અને ઋદ્ધિ, રસ આદિમાં ગૌરવશાળી થવાથી, મિથ્યાભિમાન કરવાથી જીવ અભિયોગ્ય ભાવનાવાળો ગણાય છે તે ભાવનાથી યુક્ત થયેલો જીવ અભિયોગ્ય જાતિના દેવોમાં ઉત્પન્ન કરાવનારા કર્મોનો બન્ધ કરે છે.

આ ચાર કારણોને લીધે જીવ સાંમોહતાને યોગ્ય કર્મોનું ઉપાર્જન

कामाशंसाप्रयोगेण–शब्दादिकामाभिलापकरणेन ३, अभिध्यानिदानकरणेन–अभिध्या–लोभः–अभिकाङ्क्षा, तेन निदानकरणम्–'एतस्मात्तपः प्रभृतेश्चक्रवर्त्यादिका ऋद्धि में भवतु' इत्येवं परभवसंबन्धिचक्रवर्त्यादिपदप्रार्थनम्, तेन। इयमपि भावनाऽन्यत्रैवमुक्ता—

विघ्न उपस्थित करना २ शब्दादि कामोंकी अभिलाषा करना ३ और लोभके वशवर्त्ती होकर निदान (नियाणा) करना ४ जीव कुमार्गकी देशनासे सुमार्गका एक प्रकारसे लोप करता है, ऐसा जीव स्वयं भी कुमार्गगामी होता है तथा दूसरोंका उस पर चलनेसे उसके द्वारा उपार्जित पाप कर्मों का भागी होताहै,अतः वह साम्मोहनाके लिये कर्मोंका बन्धक होता है, मोक्षमार्गकी आराधनामें प्रवृत्तिशाली जीवके द्वारा सन्मार्गका प्रचार होता है, जीव उसके कहनेसे कुमार्गका त्याग कर सुमार्ग पर चलते हैं। अतः ऐसे जीवके लिये जो विघ्नभूत होता है उसकी आराधनामें विघ्न उपस्थित करना है वह भी साम्मोहताके योग्य कर्मोंका उपार्जन करता है। इसी प्रकारसे कामाशंसाप्रयोग आदिमें भी समझ लेना चाहिये। तप करते हुए इस तपस्या आदिके फलसे चक्रवर्ती आदिकी विभूति मुझे मिले ऐसी चाहना करना इसका नाम निदान है यह भावना भी अन्यत्र इस प्रकारसे कही गई है—

કરે છે—(૧) કુમાર્ગનો ઉપદેશ દેવાથી, (૨) મોક્ષમાર્ગના સાધનમાં પ્રવૃત્ત માણુસની પ્રવૃત્તિમાં વિઘ્ન નાખવાથી, (૩) શબ્દાદિ કામભોગોની અભિલાષા કરવાથી અને (૪) લોભને આધીન થઈને નિદાન (નિયાણુ) કરવાથી કુમાર્ગની દેશના આપનાર જીવ સુમાર્ગનો લોપ કરે છે એવો જીવ પોતે કુમાર્ગગામી હોય છે, તે કારણે અન્ય દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મોનો પણ ભાગીદાર બને છે. તેથી એવો જીવ સમોહતાને યોગ્ય કર્મોનો બન્ધક બને છે.

મોક્ષમાર્ગની આરાધનામાં પ્રવૃત્ત જીવ દ્વારા સન્માર્ગનો પ્રચાર થાય છે તેની પ્રેરણાથી જીવ કુમાર્ગનો ત્યાગ કરીને સન્માર્ગે ચડી જાય છે એવા જીવની પ્રવૃત્તિમાં વિઘ્ન નાખનાર જીવ સાંમોહતાને યોગ્ય કર્મોનું ઉપાર્જન કરે છે. એજ પ્રમાણે કામાશંસા પ્રયોગ આદિમાં પણ સમજી લેવું. તપસ્યા કરતી વખતે એવી ભાવના સેવવી કે તપસ્યાના ફળરૂપ મને ચક્રવર્તી આદિની વિભૂતિ પ્રાપ્ત થાય, તે પ્રકારની ભાવનાનું નામ જ નિદાન અથવા નિયાણુ છે આ ભાવનાને પણ અન્યત્ર આ પ્રમાણે વર્ણવી છે—

" उम्मग्गदेसओ मग्गनासओ मग्गविप्पडीवत्ती ।
मोहेणं मोहेत्ता, संमोहं भावणं कुणइ ॥ १ ॥ "

छाया—उन्मार्गदेशको मार्गनाशको मार्गविप्रतिपत्तिः ।
मोहेन च मोहयित्वा, सांमोही भावनां करोति ॥ १ ॥ इति ।

तथा—चतुर्भिः स्थानैर्जीवा देवकिल्बिषिकतायै चाण्डालस्थानीयदेवविशेषत्वाय कर्म प्रकुर्वन्ति तद्यथा-अर्हतां-जिनानाम् अवर्ण वदन्-निन्दां कुर्वन् । अयमर्थोऽन्यत्रैवमुक्तः—

" उम्मग्ग देसओ " इत्यादि । इस कारिकाका अर्थ स्पष्ट है इन चार कारणोंसे जीव-संयत प्राणी-देवकिल्बिषिकताके लिये-चाण्डालके जैसे स्थानापन्न देवविशेषत्वके लिये कर्मोंका बन्ध करता है । जैसे-अर्हन्तदेवका अवर्णवाद करना १ अर्हत्प्रज्ञप्त धर्मका अवर्णवाद करना २ आचार्य उपाध्यायका अवर्णवाद करना ३ और चतुर्विधसंघका अवर्णवाद करना ४ जिसमें जो दोष नहीं हो उनका उनमें प्रकट करना इसका नाम अवर्णवादहै । अर्हन्तदेवके विषयमें ऐसा कहना कि ये केवली हुएही नहींहै, सर्वज्ञ यदि ये होते तो उन्होंने मोक्षका सरल उपाय क्यों नहीं कहा ? जिनका आचरण करना शक्य नहीं है ऐसे दुर्गम कठिन उपाय क्यों कहेहैं ? इसी प्रकारसे अर्हत्प्रज्ञप्त धर्मके विषयमें आचार्य उपाध्यायके विषयमें एवं साधु साध्वी श्रावक श्राविकारूप चतुर्विध संघके विषयमें भी अवर्णवाद समझ लेना चाहिये । उक्तं

" उम्मग्गदेसओ " ઇત્યાદિ—આ ચાર કારણોને લીધે જીવ (સંયત જીવ) દેવકિલ્બિષિકોમાં ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય કર્મોનો બન્ધ કરે છે-(કિલ્વષિક દેવો હલકી કોટિના દેવો ગણાય છે. દેવોમાં તેમનું સ્થાન ચાંડાલ જેવું છે.) (૧) જિનેન્દ્ર દેવનો અવર્ણવાદ કરવાથી, અર્હંત પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મનો અવર્ણવાદ કરવાથી, (૩) આચાર્ય ઉપાધ્યાયનો અવર્ણવાદ કરવાથી, અને (૪) ચતુર્વિધ સંઘનો અવર્ણવાદ કરવાથી

જે વ્યક્તિમાં જે દોષ ન હોય તે દોષનું આરોપણ કરવું તેનું નામ અવર્ણવાદ છે. જિનેન્દ્ર દેવના વિષયમાં કદાચ કોઈ આ પ્રમાણે કહે કે " તેઓ કેવળજ્ઞાની હતા જ નહીં. જો તેઓ સર્વજ્ઞ હોય તો મોક્ષપ્રાપ્તિનો સરળ માર્ગ બતાવવાને બદલે જેનું આચરણ શકય જ ન હોય એવા દુર્ગમ કઠિન ઉપાય તેમણે શા કારણે બતાવ્યા હશે ! " આ પ્રમાણે કહેનાર જિનેન્દ્ર દેવનો અવર્ણવાદ કરનારો ગણાય છે. એ જ પ્રમાણે અર્હંત પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મના વિષયમાં, આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયના વિષયમાં, તથા ચતુર્વિધ સંઘના વિષયમાં પણ અવર્ણવાદ વિષેનું કથન સમજવું. કહ્યું પણ છે કે—

"नाणस्स केवलीणं धम्मायरियाणं संघसाहूणं।
माई अवन्नवाई किब्बिसियं भावणं कुणई ॥ १ ॥

छाया—ज्ञानस्य केवलिनां धर्माचार्याणां संघ-साधूनाम्।
मायी अवर्णवादी कैल्विषिकीं भावनां करोति ॥ १ ॥" इति,

तथा—अर्हत्प्रज्ञप्तस्य धर्मस्य अवर्णं वदन् तथा-आचार्योपाध्यायानामवर्णं वदन् ३, तथा-चातुर्वर्ण्यस्य सङ्घस्यावर्णं वदन् ४। इति।

यद्यपीह कन्दर्पभावना चतुःस्थानकानुरोधान्नोक्ता, तथाऽपि भावनाप्रसङ्गात् सा प्रदर्श्यते—

"कंदप्पे कुक्कुइए, दवसीले यावि हासणकरे य।
विम्हाविंतो य परं, कंदप्पं भावणं कुणइ ॥ १ ॥"

छाया—कान्दर्पः कौकुच्यितः द्रवशीलश्चापि हासनकरश्च।
विस्मापयंश्च परं कान्दर्पीं भावनां करोति ॥ १ ॥ इति।

अयमर्थः—कान्दर्पः-कन्दर्पकथाकारकः, कौकुच्यितः-भाण्डवच्चेष्टाकारी द्रव-

---

"नाणस्स केवलीणं" इत्यादि। तात्पर्य इस गाथाका यही है, कि मायी अवर्णवादी अर्हन्तका अर्हन्त प्रज्ञप्त धर्म आदिका अवर्णवाद करता हुआ किल्विषिकी भावनावाला होताहै। यद्यपि यहां चतुःस्थानकके अनुरोधसे कन्दर्प भावना नहीं कही गईहै, फिर भी भावनाके प्रसङ्गसे वह ऐसी होती है यह प्रकट किया जाता है--

"कंदप्पे कुक्कुइए" इत्यादि--जो कन्दर्पकी कथा करनेवाला होता है भाण्डकी तरह कायसे कुचेष्टा करता है अहङ्कारके वश होकर

"नाणस्स केवलीणं" ઇત્યાદિ—

આ ગાથાનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—માયી અવર્ણવાદી અહંત ભગવાનનો, કેવલીપ્રજ્ઞપ્તધર્મનો અને આચાર્ય આદિનો અવર્ણવાદ કરવાને લીધે કૈલ્વિષિકી ભાવનાથી યુક્ત થાય છે. તેથી તે કિલ્વિષિક દેવોમાં ઉત્પન્ન થવા યોગ્ય કર્મોનો બન્ધ કરે છે. જો કે અહીં ચાર સ્થાનોનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે તેથી પાંચમી કંદર્પ ભાવનાનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યુ નથી. છતાં ભાવનાઓનું પ્રતિપાદન ચાલતું હોવાથી અહીં પ્રસંગ સાથે અનુરૂપ હોવાથી કંદર્પ ભાવનાનું કેવું સ્વરૂપ હોય છે તે ટીકાકાર પ્રકટ કરે છે.

"કંદપ્પે કુક્કુઇએ" ઇત્યાદિ—

જે કંદર્પની કથા કરનારો હોય છે, ભાંડની જેમ શરીર વડે કુચેષ્ટાઓ કરનારો હોય છે, અહંકારને અધીન થઇને શીઘ્ર ગમનકારી હોય છે, ભાષ-

शीलः-गर्वाच्छीघ्रगमनभाषणादिकारी, हासनकर'-वेषवचनादिना स्वपरहासोत्पादकः परम्-अन्यं विस्मापयन्-विस्मयमुत्पादयंश्च कान्दर्पीं भावनां करोति॥सू.१८॥

पूर्वमपध्वंस उक्तः, स च प्रव्रज्यासम्पन्नस्य भवतीति प्रव्रज्यास्वरूपं निरूपयितुमष्टसूत्रीमाह—

मूलम्—चउव्विहा पव्वज्जा पण्णत्ता, तं जहा—इहलोगपडिबद्धा १, परलोगपडिबद्धा २, दुहओलोगपडिबद्धा ३, अप्पडिबद्धा ४। (१)

चउव्विहा पव्वज्जा पण्णत्ता, तं जहा,-पुरओ पडिबद्धा १, मग्गओ पडिबद्धा २, दुहओ पडिबद्धा ३, अप्पडिबद्धा ४, (२)।

चउव्विहा पव्वज्जा पण्णत्ता, तं जहा—ओवायपव्वज्जा १, अक्खायपव्वज्जा २, संगरपव्वज्जा ३, विहगगइपव्वज्जा ४,(३)

चउव्विहा पव्वज्जा पण्णत्ता, तं जहा—तुयावइत्ता १, पूयावइत्ता २, मोयावइत्ता ३, परिपूयावइत्ता ४ (४)।

चउव्हिा पव्वज्जा पण्णत्ता, तं जहा—नडखइया १, भडखइया २, सीहखइया ३, सियालखइया ४ (५)।

चउव्विहा किसी पण्णत्ता, तं जहा—वाविया १, परिवाविया २, णिंदिया ३, परिणिंदिया ४, (६) एवामेव चउव्विहा पव्वज्जा पण्णत्ता, तं जहा-वाविया १, परिवाविया २, णिंदिया ३, परिणिंदिया ४ (७)।

जो शीघ्र गमनकारी एवं भाषणादिकारी होता है अपने वेष और वचन आदिसे जो स्व और परको हास्यका उत्पादक होता है, तथा जो हरएक तरहसे दूसरोंको विस्मय (आश्चर्य)का उत्पन्न करनेवाला होता है वह कान्दर्पी भावनावाला होता है ॥ सू० १८ ॥

ણાદિ કરનાર હોય છે, પોતના વેષ અને વચનથી જે સ્વને અને અન્યને હસાવનારો હોય છે, તથા જે અનેક પ્રકારે અન્ય લોકોમાં વિસ્મય (આશ્ચર્ય) ઉત્પન્ન કરનારો હોય છે, એવા પુરુષને કાન્દર્પી ભાવનાવાળો કહે છે. સૂ. ૧૮

चउव्विहा पव्वज्जा पण्णत्ता, तं जहा–धन्नपुंजियसमाणा १, धन्नविरल्लियसमाणा २, धन्नविक्खित्तसमाणा ३, धन्नसंकड्डियसमाणा ४ ॥ सू० १९ ॥

छाया—चतुर्विधा प्रव्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा–इहलोकप्रतिबद्धा १, परलोकप्रतिबद्धा २, द्विधातो लोकप्रतिबद्धा ३, अप्रतिबद्धा ४। (१)

चतुर्विधा प्रव्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा–पुरतः प्रतिबद्धा १, मार्गतः प्रतिबद्धा २ द्विधातः प्रतिबद्धा ३, अप्रतिबद्धा ४। (२)

चतुर्विधा प्रव्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा–अवपातप्रव्रज्या १, आख्यातप्रव्रज्या २, सङ्गरप्रव्रज्या ३, विहगगतिप्रव्रज्या ४। (३)

चतुर्विधा प्रव्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा–तोदयित्वा १, प्लावयित्वा २, मोचयित्वा ३, परिप्लुतयित्वा ४। (४)।

चतुर्विधा प्रव्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा–नटखादिता १, भटखादिता २, सिंहखादिता ३, गालखादिता ४। (५)

चतुर्विधा कृषिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा–उप्ता१, पर्युप्ता२, निन्दिता ३, परिनिन्दिता ४। (६)। एवमेव चतुर्विधा प्रव्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा–उप्ता १, पर्युप्ता २, निन्दिता ३, परिनिन्दिता ४। (७)।

चतुर्विधा प्रव्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा–धान्यपुञ्जितसमाना १, धान्यविरेछितसमाना २, धान्यविक्षिप्तसमाना ३, धान्यसङ्कर्षितसमाना ४। (७) ॥ सू० १९ ॥

टीका—" चउव्विहा पव्वज्जा " इत्यादि—प्रव्रज्या–पञ्चमहाव्रतग्रहणलक्षणा, सा चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–इहलोकप्रतिबद्धा–इहलोके इहजन्मनि ये जीवननिर्वा-

---

यह अपध्वंस प्रव्रज्यासम्पन्न मनुष्यको होता है अतः अब सूत्रकार प्रव्रज्याका स्वरूप अष्ट सूत्रोंसे कहते है—

टीकार्थ–" चउव्विहा पव्वज्जा पण्णत्ता " इत्यादि सूत्र १९॥

प्रव्रज्या चार प्रकारका कहा गया है जैसे–इहलोकप्रतिबद्धा १ परलोकप्रतिबद्धा २ उभयलोकप्रतिबद्धा ३ और अप्रतिबद्धा ४ पंच

આ અપધ્વંસનો સદ્‌ભાવ પ્રવ્રજ્યા સંપન્ન મનુષ્યોમાં જ હોય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર પ્રવ્રજ્યાના સ્વરૂપનું આઠ સૂત્રો દ્વારા નિરૂપણ કરે છે—

ટીકાર્થ—" ચઉવ્વિહા પવ્વજ્જા પણ્ણત્તા " ઇત્યાદિ—

પ્રવ્રજ્યા ચાર પ્રકારની કહી છે—(૧) ઇહલોક પ્રતિબદ્ધા, (૨) પરલોક પ્રતિબદ્ધા, (૩) ઉભયલોક પ્રતિબદ્ધા, (૪) અપ્રતિબદ્ધા.

हादयस्तन्मात्रप्रयोजने प्रतिबद्धा-मनसि संकल्पिता या सा इहलोकप्रतिबद्धा प्रव्रज्या, सा च एतज्जन्मजीवननिर्वाहादिमात्रार्थिनां भवति १, तथा-परलोक प्रतिबद्धा-परलोके-जन्मान्तरे ये-कामादयस्तत्प्रयोजने प्रतिबद्धा या सा परलोक-प्रतिबद्धा, सा च जन्मान्तरकामाद्यर्थिनां भवति २, तथा-द्विधातो लोकप्रति-बद्धा=द्विधातः-द्विप्रकारौ यौ लोकौ-एतज्जन्म-जन्मान्तरे तत्र ये कामादयस्तत्र प्रतिबद्धा या प्रव्रज्या सा तथा, सा चैहलौकिकपारलौकिकसुखाद्यर्थिनां जनानां भवति ३, तथा-अप्रतिबद्धा-इहलोकपरलोकाशंसारहितलक्षणा, प्रव्रज्या, सा च विशिष्टसामायिकसम्पन्नानां मोक्षार्थिनां भवति ४। (१)।

महाव्रतोंका ग्रहण करना इसका नाम प्रव्रज्याहै। जो प्रव्रज्या इस लोकमें जीवननिर्वाहादि रूप प्रयोजनसे प्रतिबद्ध होतीहै, वह इहलोक प्रतिबद्ध-प्रव्रज्या है १ अर्थात् जो मनमें संकल्पित होती है वह इहलोक प्रति-बद्धप्रव्रज्या है ऐसी यह प्रव्रज्या इह जन्ममें जीवननिर्वाहादि मात्रके अभिलाषियोंकी होती है १। जो प्रव्रज्या परलोक सम्बन्धी कामादिक भोगने रूप प्रयोजनसे प्रतिबद्ध होतीहै, वह परलोकप्रतिबद्धप्रव्रज्या है ऐसी यह प्रव्रज्या परलोकमें कामादिकोंके भोगनेके अभिलाषियोंकी होती है२। जो प्रव्रज्या इहलोक सम्बन्धी और परलोकसम्बन्धी कामभोगादिक भोगनेकी अभिलाषासे प्रतिबद्ध होतीहै, वह उभयलोक प्रतिबद्ध प्रव्रज्या है ३। ऐसी यह प्रव्रज्या इहलोक और परलोकके सुखाभिलाषी पुरुषोंकी होतीहै। तथा जो प्रव्रज्या इहलोक और परकोक सम्बन्धी सुखोंको भोग-

---

પાંચ મહાવ્રતોને ગ્રહણ કરવા તેનું નામ પ્રવ્રજ્યા છે. જે પ્રવ્રજ્યા આ લોકમાં જીવનનિર્વાહ આદિ રૂપ પ્રયોજનથી પ્રતિબદ્ધ હોય છે, એટલે કે આ લોકના સુખની આકાંક્ષાપૂર્વક લેવામાં આવી હોય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને ઈહલોક પ્રતિબદ્ધા કહે છે. જે પ્રવ્રજ્યા પરલોક સંબંધી કામાદિક ભોગરૂપ પ્રયોજનથી પ્રતિબદ્ધ હોય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને પરલોકપ્રતિબદ્ધપ્રવ્રજ્યા કહે છે. પરલોકમાં (દેવલોક આદિમાં) કામભોગો ભોગવવાની અભિલાષાવાળાની પ્રવ્રજ્યા આ પ્રકારની હોય છે. જે પ્રવ્રજ્યા આલોક સંબંધી અને પરલોક-સંબંધી કામાદિક ભોગવવાની ઇચ્છાથી પ્રતિબદ્ધ હોય છે તે પ્રવ્રજ્યાને ઉભયલોક પ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા કહે છે. આલોક અને પરલોકના સુખની અભિ-લાષાવાળા જીવોની પ્રવ્રજ્યા આ પ્રકારની હોય છે. જે પ્રવ્રજ્યા આલોક અને પરલોકના સુખોને ભોગવવાની આશંસાથી રહિત હોય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને

"चउव्विहा पव्वज्जा" इत्यादि—पुनः प्रव्रज्या चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-पुरतः प्रतिबद्धा-पुरतः-अग्रतः प्रव्रज्यापर्यायभाविषु शिष्याहाराऽऽदिषु या प्रतिबद्धा सा पुरतः प्रतिबद्धा १, तथा-मार्गतःप्रतिबद्धा मार्गतः-पृष्ठतः स्वजनादिषु प्रतिबद्धा-स्वजनाद्याशंसासहितलक्षणा मार्गतःप्रतिबद्धा २, तथा-द्विधातः प्रति-

नेकी आशंसासे इच्छासे रहित होतीहै वह अप्रतिबद्ध प्रव्रज्याहै ऐसी वह प्रव्रज्या विशिष्ट सामायिकवाले मोक्षाभिलाषी जीवोंके होती है ४ (१)

फिरभी--प्रव्रज्या चार प्रकारकी कही गईहै-जैसे पुरतः प्रतिबद्ध १ मार्गतः प्रतिबद्ध २ उभयतः प्रतिबद्ध ३ और अप्रतिबद्ध ४ इनमें जो प्रव्रज्या प्रव्रज्या पर्यायमें आगे होनेवाली वस्तुओंकी प्राप्तिकी चाहना आकाङ्क्षासे प्रतिबद्ध होती है जैसे-मैं प्रव्रज्या लेकर अमुक २ प्रकारके आहार प्राप्त करूंगा ऐसे२ शिष्य बनाऊंगा आदि १। जो प्रव्रज्या पीछेकी वस्तुओंमें प्रतिबद्ध होतीहै, वह मार्गतः प्रतिबद्ध प्रव्रज्याहै२। जैसे दीक्षा लेकर भी अपने सगे सम्बन्धियोंकी चाहनासे बंधे रहना यह दीक्षा प्रव्रज्या मार्गतःप्रतिबद्ध इसलिये कही गई है कि प्रव्रज्या लेनेके बाद स्वजन संबन्धियोंके मोहसे प्राणी सर्वथा रहित हो जाताहै, वह समस्त जीवोंमें समभावी बन जाता है, परन्तु प्रव्रज्या लेकर भी अपने सगे

અપ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા કહે છે એવી પ્રવ્રજ્યા વિશિષ્ટ સામાયિકવાળા મોક્ષાભિલાષી જીવોની હોય છે. । ૧ ।

વળી પ્રવ્રજ્યાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) પુરતઃ પ્રતિબદ્ધ, (૨) માર્ગતઃ પ્રતિબદ્ધ, (૩) ઉભયતઃ પ્રતિબદ્ધ, (૪) અપ્રતિબદ્ધ. જે પ્રવ્રજ્યા સાધુપર્યાયમાં પ્રાપ્ત થનારી વસ્તુઓની આકાંક્ષાથી પ્રતિબદ્ધ હોય છે એવી પ્રવ્રજ્યાનું નામ પુરતઃ પ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા છે. જેમકે પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરવાથી મને સારા સારા આહારની પ્રાપ્તિ થશે, શિષ્યોની પ્રાપ્તિ થશે આ રીતે આગામી ભૌતિક લાભોની આકાંક્ષાપૂર્વક જે પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરાય છે તેને 'પુરતઃ પ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા' કહે છે. ૧ જે પ્રવ્રજ્યા પાછળથી (પૂર્વકાલિન) વસ્તુઓમાં પ્રતિબદ્ધ હોય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને "માર્ગતઃ પ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા" કહે છે જેમકે દીક્ષા અંગીકાર કર્યા બાદ પણ પોતાના સાંસારિક સગાસંબંધીઓના સ્નેહપાશમાં બંધાયેલા રહેવું તેનું નામ માર્ગતઃ પ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા છે. તે પ્રવ્રજ્યાને માર્ગતઃ પ્રતિબદ્ધા કહેવાનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે-પ્રવ્રજ્યા લીધા પછી તો સગાસંબંધીઓના મોહથી રહિત થઈ જવું જોઈએ અને સમસ્ત જીવો પ્રત્યે સમભાવ રાખવો જોઈએ. પણ પ્રવ્રજ્યા

बद्धा-पुरतो मार्गतश्च प्रतिबद्धा ३, तथा-अप्रतिबद्धा-क्वचिदपि न प्रतिबद्धा-सकलाऽऽशंसावर्जिता ४। (२)।

" चउव्विहा पव्वज्जा " इत्यादि—पुनः प्रव्रज्या चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-अवपातप्रव्रज्या-अवपातात्सद्गुरुसेवनतः प्राप्ता या प्रव्रज्या सा अवपातप्रव्रज्या १, आख्यातप्रव्रज्या-आख्यातेन धर्मोपदेशेन या प्रव्रज्या सा, यद्वा-प्रव्रज्याशब्द-श्रवणेन या प्रव्रज्या साऽऽख्यातप्रव्रज्या, आर्यरक्षितभ्रातुः फल्गुरक्षितस्येव २,

सम्बन्धियोंके मोहसे बँधा रहता है उसकी वह प्रव्रज्या इसी कारण मार्गतः प्रतिबन्ध कही गईहै२। जो प्रव्रज्या प्रव्रज्या, पर्यायके आगे समयमें होनेवाली वस्तुओंकी चाहनासे और मार्गतः पीछेकी त्यक्त वस्तुओंकी चाहनासे प्रतिबद्ध होतीहै, वह उभयतः प्रतिबद्ध प्रव्रज्या है३। तथा जिस प्रव्रज्यामें सकल आशंसा इच्छासे रहितता रहती है वह प्रव्रज्या अप्रतिबद्धप्रव्रज्या है ४ (२)

फिर भी--प्रव्रज्या चार प्रकारकी कही गई है जैसे-अवपात प्रव्रज्या १ आख्यात प्रव्रज्या २ सङ्गरप्रव्रज्या ३ और विहगगतिप्रव्रज्या ४ इनमें जो प्रव्रज्या अवपातसे-सद्गुरुकी सेवासे प्राप्त होती है, वह अवपात प्रव्रज्या है। जो प्रव्रज्या आख्यात-धर्मोपदेशसे प्राप्त होती है, वह आख्यात प्रव्रज्या है। जैसे आर्यरक्षितके भाई फल्गुरक्षितको प्राप्त हुई प्रव्रज्या आख्यातप्रव्रज्या कही गई है। जो प्रव्रज्या संकेतसे प्राप्तकी

લઈને પણ જે માણુસ પોતાના સગાંસંબંધીઓના મોહમાં જકડાયેલો રહે છે તેવી પ્રવ્રજ્યાને આ કારણે જ માર્ગતઃ પ્રતિબદ્ધા કહી છે, કારણ કે માર્ગતઃ (પૂર્વકાલિન) મોહ આદિ બંધનો તેમાં ચાલુ જ રહે છે. ૨ જે પ્રવ્રજ્યા શ્રમણ પર્યાયમાં પ્રાપ્ત થનારા ભાવી લાભોની ચાહનાથી અને પૂર્વકાલિન ત્યક્ત વસ્તુઓની ચાહનાથી પ્રતિબદ્ધ હોય છે તે દીક્ષાને ઉભયતઃ પ્રતિબદ્ધા કહે છે. ૩ જે પ્રવ્રજ્યા સકળ આશંસાઓથી (ઈચ્છાઓથી) રહિત હોય છે એટલે કે માત્ર મોક્ષપ્રાપ્તિની અભિલાષાવાળી જે પ્રવ્રજ્યા હોય છે તેને અપ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા કહે છે. ૪ । ૨ ।

પ્રવ્રજ્યાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) અવપાત પ્રવ્રજ્યા આખ્યાત પ્રવ્રજ્યા, (૩) સંગર પ્રવ્રજ્યા, (૪) વિહગગતિ પ્રવ્રજ્યા. જે પ્રવ્રજ્યા અવપાતને લીધે (સદ્ગુરુની સેવાને લીધે) પ્રાપ્ત થાય છે, તેને અવપાત પ્રવ્રજ્યા કહે છે જે પ્રવ્રજ્યા આખ્યાનથી-ધર્મોપદેશના શ્રવણથી પ્રાપ્ત થાય છે તેને અથવા-" પ્રવ્રજ્યા " શબ્દ સાભળવાથી પ્રાપ્ત થાય છે તેને આખ્યાત પ્રવ્રજ્યા કહે છે. જેમકે આર્યરક્ષિતના ભાઈ ફલ્ગુરક્ષિતને પ્રાપ્ત

तथा—सङ्गरप्रव्रज्या—सङ्गरात्—सङ्केतात् प्रव्रज्या सङ्गरप्रव्रज्या, मेतार्यादीनामेव, यद्वा—' यदि त्वं प्रव्रजसि तदाऽहमपि प्रव्रजिष्यामी ' इत्येवं सङ्केतात् प्रव्रज्या सङ्गर-प्रव्रज्या २, तथा—विहगगतिप्रव्रज्या—विहगस्य—पक्षिणो गतिः—प्रकारो न्यायो विहगगतिः तथा प्रव्रज्या विहगगतिप्रव्रज्या=परिवारादि वियोगेनैकाकिनः, तेषां देशान्तरगमनेन वा या प्रव्रज्या सा (३)।

यद्वा—पित्रादीनां प्रव्रज्याग्रहणेन पुत्रादीनामपि क्रमेण या प्रव्रज्या सा ४(३)।

" चउव्विहा पव्वज्जा " इत्यादि—पुनः प्रव्रज्या चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथ—तोदयित्वा—व्यथामुत्पाद्य या प्रव्रज्या दीयते, मुनिचन्द्रपुत्रस्य सागरचन्द्रे-

---

जाती है जैसे—मेतार्य आदिकोंने प्राप्तकी है वह—अथवा—यदि तुम प्रव्रजित होते हो, तो मैं भी प्रव्रजित होता हू। इस प्रकारके सङ्केतसे जो प्रव्रज्या प्राप्तकी जाती हैं वह सङ्गर प्रव्रज्या है और जिस प्रव्रज्यामें परिवार आदि जनोंकी उपस्थिति न हो उनका वियोग हो ऐसी एकाकी अवस्थाकी जो प्रव्रज्या है, वह विहगगति प्रव्रज्याहै क्योंकि ऐसी प्रव्रज्या पक्षीकी जैसी गति होती है उस गतिसे ली गई होतीहै। अथवा घरको छोडकर देशान्तरमें जा करके जो प्रव्रज्या ली जाति है, वह विहगगति प्रव्रज्या है (३) अथवा-पिता आदिके द्वारा प्रव्रज्या ग्रहण कर लेने पर जो पुत्रादिकों द्वारा बादमें दीक्षा लेली जातीहै वह विहगगति प्रव्रज्या है अर्थात् पिताके दीक्षित होने पर पुत्र भी दीक्षित हो जाता हैं ४।

फिर भी—प्रव्रज्या चार प्रकारकी है जैसे—तोदयित्वा१ प्लावयित्वा २ मोचयित्वा ३ और परिप्लुतयित्वा ४ (४) व्यथाको उत्पन्न कराकर

થયેલી પ્રવજ્યાને આખ્યાત પ્રવ્રજ્યા કહી છે. મેતાર્ય આદિની જેમ જે પ્રવ્રજ્યા સંકેતથી પ્રાપ્ત થાય છે તેને સંગર પ્રવ્રજ્યા કહે છે. અથવા તમે પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરો તો હું પણ પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરીશ. આ પ્રકારના સંકેતપૂર્વક જે પ્રવ્રજ્યા લેવામાં આવે છે તેને ' સંગર પ્રવ્રજ્યા ' કહે છે. પરિવાર આદિની અનુપસ્થિતિમાં અથવા તેના વિયોગ રૂપ એકાકી અવસ્થામાં જે પ્રવ્રજ્યા લેવામાં આવે છે તેને વિહગગતિ પ્રવ્રજ્યા કહે છે, કારણ કે પક્ષીની જેવી ગતિ હોય છે એવી ગતિને કારણે એવી પ્રવ્રજ્યા લેવામાં આવી હોય છે. અથવા ઘર છોડીને પરદેશમાં જઈને જે પ્રવ્રજ્યા લેવામાં આવે છે તેને વિહગગતિ પ્રવ્રજ્યા કહે છે. અથવા પિતા આદિ દ્વારા પ્રવ્રજ્યા લેવામાં આવી હોય અને ત્યારબાદ પુત્રાદિકો દ્વારા જે પ્રવ્રજ્યા લેવામાં આવે છે તેનું નામ વિહગગતિ પ્રવ્રજ્યા છે. । ૩ ।

વળી પ્રવ્રજ્યાના નીચે પ્રમાણે ચાર પકાર પણ કહ્યા છે—(૧) તોદયિત્વા (૨) પ્લાવયિત્વા, (૩) મોચયિત્વા, (૪) પરિપ્લુતયિત્વા. વ્યથા ઉત્પન્ન કરા-

णेव सा तोदयित्वा प्रव्रज्योच्यते १, तथा-प्लावयित्वा-गमयित्वाऽन्यत्रनीत्वेति यावत् या प्रव्रज्या दीयते स प्लावयित्वा प्रव्रज्या, आर्यरक्षितवत्, यद्वा-'पुयावइत्ता' इत्यस्य पूतयित्वेतिच्छाया, तत्पक्षे-प्रायश्चित्तादिना दोषमपहृत्य पूतं कृत्वा -पवित्रं कृत्वेत्यर्थः या प्रव्रज्या दीयते सा पूतयित्वा प्रव्रज्येत्युच्यते। 'वुयावइत्ता' इति पाठे तु उक्त्वा या प्रव्रज्या दीयते सा, गौतमेन कर्षकवत्, यद्वा-पूर्वपक्षरूपं वचनं कारयित्वा या प्रव्रज्या दीयते सा, यद्वा-निगृह्य प्रतिज्ञावचनं कारयित्वा या प्रव्रज्या सा उक्त्वा प्रव्रज्या २। तथा-मोचयित्वा-कस्माच्चित्कार्याद्वियोज्य या

जो प्रव्रज्या दी जाती है वह तोदयित्वा प्रव्रज्या है, जैसी प्रव्रज्या मुनिचन्द्र पुत्रको सागरचन्द्रने दी है। जो प्रव्रज्या दूसरी जगह ले जाकर दी जाती है वह प्लावयित्वा प्रव्रज्या है, जैसे आर्यरक्षितको प्रव्रज्या दी गई है अथवा "पुयावइत्ता" की संस्कृत छाया "पूतयित्वा" ऐसी भी होती है, सो इसके अनुसार ऐसा अर्थ होता है कि प्रायश्चित्त आदिसे दोषोंकी शुद्धि करके जो प्रव्रज्या दी जाती है, यह पूतयित्वा प्रव्रज्या है "वुयावइत्ता" इस प्रकारके पाठमें तो कह करके जो प्रव्रज्या दी जाती है वह "उक्त्वा" प्रव्रज्याहै जैसे गौतमने कर्षक(किसान)को दीहै अथवा-पूर्वपक्षरूप५ वचन करवाकर जो प्रव्रज्या दी जाती है वह अथवा-निगृहीत(पराजित)करके प्रतिज्ञा वचन करवा करके जो प्रव्रज्या दी जातीहै वह उक्त्वा प्रव्रज्या है अथवा-किसी कार्यसे छुड़ाकर जो प्रव्रज्या दी जातीहै

વીને જે પ્રવ્રજ્યા આપવામાં આવે છે તેનું નામ તોદયિત્વા પ્રવ્રજ્યા કહે છે. મુનિચન્દ્ર પુત્રને સાગરચન્દ્રે આ પ્રકારની પ્રવ્રજ્યા આપી હતી. દીક્ષાર્થીને બીજી જગ્યાએ લઈ જઈને જે પ્રવ્રજ્યા આપવામાં આવે છે તે પ્રવ્રજ્યાને પ્લાવયિત્વા પ્રવ્રજ્યા કહે છે આ પ્રકારની પ્રવ્રજ્યા આર્યરક્ષિતને દેવામાં આવી હતી. અથવા "પુયાવઇત્તા" આ પદની સંસ્કૃત છાયા "પૂતયિત્વા" થાય છે. તેનો અર્થ એ પ્રમાણે થાય છે-પ્રાયશ્ચિત આદિ દ્વારા દોષોની શુદ્ધિ કરીને જે પ્રવ્રજ્યા આપવામાં આવે છે તેનું નામ 'પૂતયિત્વા પ્રવ્રજ્યા' છે.

"વુયાવઇત્તા" આ પ્રકારનો પાઠ ગૃહીત કરવામાં આવે તો કહીને જે પ્રવ્રજ્યા આપવામાં આવે છે તેને "उक्त्वा" "ઉક્ત્વા પ્રવ્રજ્યા" કહે છે. આ પ્રકારની પ્રવ્રજ્યા ગૌતમે ખેડુતને દીધી હતી અથવા-પૂર્વપક્ષ રૂપ વચન કરાવીને જે પ્રવ્રજ્યા અપાય છે તેનું નામ ઉક્ત્વા પ્રવ્રજ્યા છે. અથવા નિગૃહીત કરીને પ્રતિજ્ઞાબદ્ધ કરીને પોતે દીક્ષા લેશે એવા વચનથી બાંધી લઈને જે પ્રવ્રજ્યા અપાય છે તેને ઉક્ત્વા પ્રવ્રજ્યા કહે છે. 'મોચયિત્વા પ્રવ્રજ્યા' કોઈને ગુલામી, દાસત્વ આદિમાંથી મુક્ત કરાવીને જે પ્રવ્રજ્યા

प्रव्रज्या दीयते सा मोचयित्वा प्रव्रज्या यथैकेन साधुना तैलार्थदासत्वप्राप्तभागिन्यै प्रव्रज्या दत्ता३, परिप्लुतयित्वा—परिप्लुतं कृत्वा=घृतादिभिः परिपूर्णं कृत्वा घृतादि भोजयित्वेत्यर्थः या प्रव्रज्या दीयते सा परिप्लुतयित्वा प्रव्रज्योच्यते, सुहस्तिना रङ्कवत् । ४ । (४) ।

"चउव्विहा पव्वज्जा" इत्यादि—पुनः प्रव्रज्या चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—नटखादिता—नटस्येव संवेगविकलधर्मकथाकरणोपार्जितभोजनादीनां खादितं=भक्षणं यस्यां सा नटखादिता, एवं भटखादित भटस्येव—वीरस्येव तथाविधबलोपदर्शनलब्धभोजनादीनां खादितं भक्षणं यस्यां सा भटखादिता २, तथा—सिंहखादिता—सिंहस्येव खादित शौर्यातिशयादवज्ञयोपात्तस्य भक्षणं वा यथाप्रारब्धं भक्षणं

वह मोचयित्वा प्रव्रज्या है। जैसे एक साधुने तैलके निमित्त दासताको प्राप्त हुए भगिनीको छुडवाकर दीक्षा दी, घृतादिसे परिपूर्ण करके घृतादिका भोजन करवा करके—जो प्रव्रज्या दी जातीहै वह परिप्लुतयित्वा प्रव्रज्या है जैसे सुहस्तीने रङ्कको दी ४ (४)

फिरभी—"चउव्विहा पव्वज्जा" प्रव्रज्या चार प्रकारकी कही गई है जैसे—नटखादिता १ भटखादिता २ सिंहखादिता ३ और शृगालखादिता ४ जिस प्रव्रज्यामें नटकी तरह संवेग विकल वैराग्य रहित धर्मकथाके करनेसे उपार्जित भोजनादिकोंका सेवन होता है, वह नटखादिता प्रव्रज्या है१ जिस कथामें वीरकी तरह तथाविध बलके दिखानेसे लब्ध भोजनादिकोंका सेवन होता है वह भटखादिता प्रव्रज्या है २ जिस भिक्षामें सिंहकी तरह शौर्यातिशयसे अवज्ञापूर्वक प्राप्त भोजनका

અપાય છે તેનું નામ "મોચયિત્વા પ્રવજ્યા" છે. જેમકે તેલને બહાને દાસ બનેલી ભગિનીને અપાયેલી દીક્ષા. ઘી આદિથી પરિપૂર્ણ કરીને—ઘી આદિના ભોજન જમાડીને જે પ્રવજ્યા આપવામાં આવે છે તેને 'પરિપ્લુતયિત્વા પ્રવજ્યા' કહે છે. આ પ્રકારની પ્રવજ્યા સુહસ્તીએ રંકને દીધી હતી । ૪ ।

"ચઉવ્વિહા પવ્વજ્જા" પ્રવજ્યાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) નખખાદિતા, (૨) ભટખાદિતા, (૩) સિંહખાદિતા, (૪) શૃગાલખાદિતા. જે પ્રવજ્યામાં નટની જેમ સંવેગ રહિત—વૈરાગ્ય રહિત ધર્મકથા કરીને જે ભોજન પ્રાપ્ત થાય તેનું સેવન કરવામાં આવે છે, તે પ્રવજ્યાને 'નખખાદિતા પ્રવજ્યા' કહે છે જે કથામાં વીરની જેમ તથાવિધ (તે પ્રકારનું) બલ દર્શાવીને પ્રાપ્ત થતાં ભોજનાદિકનું સેવન થાય છે તે પ્રવજ્યાને 'ભટખાદિતા પ્રવજ્યા' કહે છે. જે ભિક્ષામા સિંહની જેમ શૌર્યાતિશયથી

यस्यां सा तथा ३, तथा-शृगालखादिता-शृगालस्येव नीचवृत्त्योपात्तस्य खादितं भक्षणं यस्यां वाऽन्यान्यस्थाने भक्षणं यस्यां सा तथा । ४ ।

"चउव्विहा किसी" इत्यादि—कृषिः-धान्यार्थं क्षेत्रकर्षणं, सा चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-उप्ता-गोधूमादिधान्यवद्वपनवती १, पर्युप्ता द्विस्त्रिर्वा उत्पाटय स्थानान्तराऽऽरोपणतः परिवपनवती शालिवत् २। निन्दिता-एकदा विजातीय तृणाद्यपनयनेन शोधिता, परिनिन्दिता-द्विस्त्रिर्वा तृणादिदूरीकरणेन शोधिता ४।(६)

सेवन होता है, वह सिंह खादिता प्रव्रज्या है ३ जिस भिक्षामें श्रृगालकी तरह नीचवृत्तिसे प्राप्त भोजनका सेवन होता है अथवा-अन्य अन्य स्थानमें सेवन होता है वह श्रृगालखादिता प्रव्रज्या है ४ "चउव्विहा किसी" इत्यादि-कृषि (खेती चार प्रकारकी कही गईहै धान्यके निमित्त क्षेत्रका कर्षण (जोतना हल चलाना) करना इसका नाम कृषि (खेती) है यह कृषि उप्ता १ पर्युप्ता २ निन्दिता ३ और परनिन्दिता ४ इस रीति से चार प्रकार की है। गेहुं आदि की तरह जो बोई जाती है, वह उप्ता कृषि है १। धान्य जिस प्रकारसे दो बार अथवा तीन बार उखाड़कर अन्यत्र लगाया जाता है उसी प्रकारसे जो एक स्थानसे उखाड़कर दूसरे स्थानमें रोपी जाती है, वह परिवपनवती-पर्युप्ता कृषि है २, जो कृषि विजातीय तृण घास वगैरह उखाड़कर शोधित की जाती है वह निन्दिताकृषि है ३ जिस कृषिमेंसे दो

અવજ્ઞાપૂર્વક પ્રાપ્ત થયેલા ભોજનનું સેવન થાય છે તે પ્રવ્રજ્યાને 'સિંહખાદિતા પ્રવ્રજ્યા' કહે છે. જે ભિક્ષામાં શિયાળની જેમ નીચ વૃત્તિથી પ્રાપ્ત થયેલા ભોજનનું સેવન કરાય છે, અથવા-અન્ય અન્ય સ્થાનમાં સેવન કરાય છે, તેનું નામ 'શૃંગાલખાદિતા પ્રવ્રજ્યા' કહે છે. ॥ ૫ ॥

"चउव्विहा किसी" ઈત્યાદિ—કૃષિ ખેતી ચાર પ્રકારની કહી છે. ધાન્યાદિને નિમિત્તે ખેતરને જે ખેડવાની ક્રિયા થાય છે તેને કૃશિ કહે છે. (૧) ઉપ્તા, (૨) પર્યુપ્તા, (૩) નિન્દિતા અને (૪) પરિનિન્દિતા.

ઘઉં આદિની જેમ જેનું વાવેતર કરવામાં આવે છે તેનું નામ 'ઉપ્તા-કૃષિ' છે. (૨) ડાંગરના છોડને (ધરુને) ઉખાડીને જેમ ફરીથી રોપવામાં આવે છે, તે પ્રમાણે ધાન્યના રોપને બે કે ત્રણવાર ઉખાડીને બીજી જગ્યાએ રોપીને જે ખેતી કરવામા આવે છે તેને "પરિવપનવતી-પર્યુપ્તા કૃષિ કહે છે.

વિજાતીય છોડ, ઘાસ આદિને ઉખાડી નાખીને જે કૃશિ થાય છે તેને "નિન્દિતા કૃષિ" કહે છે. જે ખેતીમાં નકામા ઘાસ આદિને બે ત્રણવાર

"एवामेव चउव्विहा पव्वज्जा" इत्यादि—एवमेव-कृषिवदेव प्रव्रज्या चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-उप्ता-सामायिकाऽऽरोपणेन १, पर्युप्ता-महाव्रताऽऽरोपणेन निरतिचारस्य सातिचारस्य वा मूलप्रायश्चित्तदानतः २, तथा-निन्दिता-सकृदतिचारालोचनेन ३, तथा-परिनिन्दिता-पुनः पुनरतिचारालोचनेन ४। (७)।

"चउव्विहा पव्वज्जा" इत्यादि — धान्यपुञ्जितसमाना-पुञ्जः - राशिः संजातोऽस्यामिति पुञ्जितं, पुञ्जितं च तद् धान्यं धान्यपुञ्जितम्-अत्र प्राकृतत्वा-

---

तीन बार घास वगैरह उखाडा जाताहै, और उसे शोधित किया जाता है ऐसी वह कृषि परिनिन्दिता कृषि है ४ (६)

" एवामेव चउव्विहा पव्वज्जा " इत्यादि-इसी प्रकारसे प्रव्रज्या भी चार प्रकारकी होती है-जिस प्रव्रज्यामें सामायिकका आरोपण किया जाता है वह प्रव्रज्या उप्ताहै१ जिस प्रव्रज्यामें महाव्रतोंका आरोपण किया जाता है, वह पर्युप्ता प्रव्रज्याहै २ जिस प्रव्रज्यामें सातिचार अथवा निरतिचार हुए प्राणीमें मूल-प्रायश्चित्त देकर महाव्रतोंका आरोपण किया जाता है, जिस प्रव्रज्यामें एकही बार अतिचारोंकी आलोचना की जाती है वह निन्दिता प्रव्रज्या है ३ और जिस प्रव्रज्यामें पुनः पुनः अतिचारोंकी आलोचनाकी जाती है वह परिनिन्दिता प्रव्रज्या है ४ (७)

" चउव्विहा पव्वज्जा " पुनः-प्रव्रज्या चार प्रकारकी कही गई है जैसे धान्य पुञ्जित समान १ धान्य विरेल्लित समान २ धान्य विक्षिप्त

ખેંચી કાઢીને ખેતરની શુદ્ધિ કરવામાં આવે છે, એવી ખેતીને " પરિનિન્દિતા કૃષિ કહે છે. । ૬ ।

" एवामेव चउव्विहा पव्वज्जा " ઇત્યાદિ—કૃષિના જેવા જ પ્રવ્રજ્યાના પણ ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) જે પ્રવ્રજ્યામાં સામાયિકનું આરોપણ કરવામાં આવે છે તેને 'ઉપ્તા-પ્રવ્રજ્યા' કહે છે. (૨) જે પ્રવ્રજ્યામાં મહાવ્રતોનું આરોપણ કરવામાં આવે છે તે પ્રવ્રજ્યાને પર્યુપ્તા પ્રવ્રજ્યા કહે છે. (૩) જે પ્રવ્રજ્યામાં સાતિચાર અથવા નિરતિચાર જીવને મૂળ પ્રાયશ્ચિત્ત દઈને મહાવ્રતોનું આરોપણ કરવામાં આવે છે, અથવા જે પ્રવ્રજ્યામાં એક જ વાર અતિચારોની આલોચના કરાય છે તે પ્રવ્રજ્યાને " નિન્દિતા પ્રવ્રજ્યા " કહે છે. તે પ્રવ્રજ્યામાં વારંવાર અતિચારોની આલોચના કરાય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને " પરિનિન્દિતા પ્રવ્રજ્યા કહે છે. । ૭ ।

" चउव्विहा पव्वज्जा " પ્રવ્રજ્યાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) ધાન્યપુંજિત સમાન, (૨) ધાન્યવિરેલ્લિત સમાન, (૩) ધાન્યવિક્ષિપ્ત

त्पुञ्जितपदस्य परप्रयोगः, पुञ्जितधान्यमित्यर्थः तेन समाना धान्यपुञ्जितसमाना= लूनपूनविशुद्धपुञ्जीकृतधान्यतुल्या–सर्वातिचाररूपकचवरविरहेण लब्धस्वभावत्वात् इति प्रथमा प्रव्रज्या १। तथा–धान्यविरेल्लितसमाना–विरेल्लितं–विस्तृतं च तद् धान्यं धान्यविरेल्लितं यद् धान्यं विस्तृतं पवनेन शोधितमपुञ्जीकृतं तद्विरेल्लित-धान्यं तेन समाना–तुल्या धान्यविरेल्लितसमाना–प्रव्रज्यायां धान्यविरेल्लित-सादृश्यं च स्वल्पेनाऽपि यत्नेन स्वभावलाभित्वेन, तथाहि–यथा–विस्तृतं वायुना

समान३ और धान्य कर्षित समान४ जो प्रव्रज्या राशिकृत धान्यके समान होतीहै अर्थात् काटकर कूड़ा (भूसा)पलाव वगैरह सब हटाकर और साफ कर जिस प्रकार धान्यकी राशि कर दी जातीहै, इसी प्रकार जो प्रव्रज्या सर्वातिचार रूप कूड़ाकी सफाईसे बिलकुल शुद्ध स्वभाववाली होती है वह धान्यपुञ्जित समान प्रव्रज्या है १। जो धान्य विस्तृत हो पवनमें उडावनी करके जिसे शुद्ध कर लिया गया हो, और जिसकी राशि नहीं की गई हो बिखरा हुआ पड़ा हो ऐसा वह विरेल्लित धान्य है इसके समान जो प्रव्रज्या है वह धान्य विरेल्लित समान प्रव्रज्याहै। प्रव्रज्यामें धान्य विरेल्लित सदृशताहै, वह थोडेसे भी प्रयत्नसे उसमें स्वभाव लाभ-वाली हो जानेसेहै। जिस तरह विस्तृत वायुसे पूत शुद्ध किये बिना राशि का धान्य अल्पसेभी प्रयत्नसे राशिरूपमें होकर अपनी प्रकृतिमें आ जाता है उसी तरहसे जो प्रव्रज्या अतिचारसे दूषित होने पर भी थोडेसे भी प्रायश्चित्त आदि द्वारा पुनः शुद्ध हो जाती है, ऐसी वह प्रव्रज्या धान्य

સમાન, (૪) ધાન્યકર્ષિત સમાન. જે પ્રવ્રજ્યા ધાન્યના ઢગલા જેવી હોય છે એટલે કે ધાન્યની કાપણી કરીને તેમાંથી નકામાં તણખલાં, કાંકરા વગેરે પદાર્થો દૂર કરીને તે ધાન્યનો જેમ ઢગલો કરવામાં આવે છે, એ જ પ્રમાણે સમસ્ત અતિચાર રૂપ કચરાની શુદ્ધિ થઈ જવાને કારણે બિલકુલ શુદ્ધ સ્વભા-વવાળી જે પ્રવ્રજ્યા હોય છે તેને ધાન્યપુંજિત સમાન પ્રવ્રજ્યા કહે છે. જે ધાન્યને પવનમાં ઉપણીને તેમાંથી ઘાસ, ફોતરાં વગેરે દૂર કરી નાખીને જમીનપર ઢગલો કર્યા વિના વિસ્તૃત રૂપે પથરાયેલી સ્થિતિમાં પડયું રહેવા દેવામાં આવ્યું હોય એવા ધાન્યને વિરેલ્લિત ધાન્ય કહે છે. તેના સમાન જે પ્રવ્રજ્યા હોય છે તેને ધાન્યવિરેલ્લિતસમાન પ્રવ્રજ્યા કહે છે. આ સમાનતા કેવી રીતે યોગ્ય છે તે હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે. જેમ તૃણાદિથી યુક્ત વિસ્તૃત ધાન્ય થોડા પવનથી પણ શુદ્ધ થઈ જાય છે. તેમાંથી તૃણાદિ ઊડી જઈને ધાન્યને શુદ્ધ કરી નાખે છે, એ જ પ્રમાણે જે પ્રવ્રજ્યા અતિચારથી દૂષિત હોવા છતાં પણ થોડા સરખા પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ

पूतमपुञ्जीकृत धान्यमल्पेनापि प्रयत्नेन पुनः पुञ्जीकृतं सत् स्वप्रकृतिमापद्यते तथा-प्रव्रज्याऽपि याऽतिचारदूषितासती स्वल्पेनापि प्रायश्चित्तादिना पुनः शुद्धा भवति सा प्रव्रज्या धान्यविरेल्लितसमानाऽभिधीयते । २ । तथा-धान्यविक्षिप्त-समाना-विक्षिप्तं बलीवर्दखुरक्षुदक्षुण्णतया विकिर्णं च तद् धान्यं धान्यविक्षिप्तं, विकीर्णधान्यमित्यर्थः, तेन समाना धान्यविक्षिप्तसमाना-यथा-विकीर्णधान्यं सह-जकचवरयुक्तत्वात् शूर्पादि सामग्र्यपेक्षिततया विलम्बेन स्वप्रकृतिमायाति, तथा या प्रव्रज्या स्वाभाविकातिचारयुक्तत्वात् प्रायश्चित्तादिसामग्र्यपेक्षिततया विलम्बेन स्व स्वभावं लभते सा धान्यविक्षिप्तसमानोच्यते ३। तथा-धान्यसङ्कर्षितसमाना-सङ्कर्षितं-क्षेत्रादाकर्षितं-खलमानीतं च तत् धान्यं धान्यसङ्कर्षितं=सङ्कर्षितधान्य-

---

विरेल्लित समान कही जातीहै २तथा जब धान्य बलीवर्दो के-बैलोंके खुरोंसे क्षुण्ण (मर्दित)होताहै अर्थात् जब अनाजकी दाय होतीहै तब वह इधर उधर विकीर्ण हो जाताहै-बिखर जाताहै-फैल जाता है। इस तरह इधर उधर फैल जानेसे वह धान्य अनाज कूड़ाकरकटवाला हो जाता है, और फिर सूप आदि द्वारा शुद्ध किया जाता है, इस तरह वह सूपादि सामग्रीकी अपेक्षावाला होनेसे विलम्बसे साफ होता है-अपनी प्रकृतिमें आता है, इसी तरहसे जो प्रव्रज्या स्वाभाविक अतिचार युक्त होनेसे प्रायश्चित्त आदि सामग्रीकी अपेक्षावाली होनेके कारण विलम्बसे अपने स्वभावको पाती है, वह प्रव्रज्या धान्यविक्षिप्त समान कही जाती है ३। जिस प्रकार खेतमेंसे खलिहानमें लाया गया अनाज बहुत अधिक

द्वारा પણ ફરીથી શુદ્ધ થઈ જાય છે, એવી પ્રવ્રજ્યાને " ધાન્યવિરેલ્લિત સમાન " પ્રવ્રજ્યા કહી છે.

જ્યારે અનાજની કાપણી કરીને તેના ડૂંડાંઓ ઉપર બળદોને ચલાવવામાં આવે છે ત્યારે અનાજના ફોતરાં જુદા પડી જાય છે અને તે અનાજ એક રાશિ-ઢગલા રૂપે રહેવાને બદલે પથરાઈ જાય છે, તે વખતે તે ધાન્ય સાથે જે તણખલાં, ફોતરાં વગેરે ભળેલા હોય છે તેમને પવનમાં સૂપડા વગેરે વડે ઉપણીને અલગ કરવામાં આવે છે. આ રીતે તેને સાફ કરવામાં સૂપડા આદિ સામગ્રીની આવશ્યકતા રહે છે, તે કારણે તેની સાફસૂફીમાં વિલંબ થાય છે. એ જ પ્રમાણે જે પ્રવ્રજ્યા સ્વાભાવિક અતિચારથી યુક્ત હોવાથી પ્રાયશ્ચિત આદિ સામગ્રીની અપેક્ષાવાળી હોવાને કારણે પોતાના સ્વભાવને પ્રાપ્ત કરવામાં વિલંબ કરે છે, તે પ્રવ્રજ્યાને ધાન્યવિક્ષિપ્ત સમાન કહી છે. જેમ ખેતરમાંથી ખળામાં લાવવામાં આવેલું ધાન્ય ઘણાં જ તણખલાં, કાંકરા આદિથી યુક્ત

मित्यर्थः, तत्समाना=धान्यसङ्कर्षितसमाना–सङ्कर्षितधान्यं यथा बहुतरकचवरोपेतत्वादतिचिरकाललभ्यस्वस्वभावं भवति तथा या प्रव्रज्या बहुतरातिचारोपेतत्वाद्बहुतरकालप्राप्तव्यस्वस्वभावा सा धान्यसङ्कर्षितसमाना ४। (८)।सू०१९॥

पूर्वं प्रव्रज्योक्ता, सा चैवं विचित्रा संज्ञावशाद् भवतीति संज्ञा निरूपयितुं पञ्चसूत्रीमाह—

चत्तारि सन्नाओ पण्णत्ताओ, तं जहा--आहारसन्ना १, भयसन्ना, २, मेहुणसन्ना ३, परिग्गहसन्ना ४। (१)

चउहिं ठाणेहिं आहारसन्ना समुप्पज्जइ, तं जहा–ओमकोट्ठयाए १, छुहावेयणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं २, मईए ३, तयट्ठोवओगेणं ४ (२)

चउहिं ठाणेहिं भयसन्ना समुप्पज्जइ, तं जहा–हीणसत्तत्ताए १, भयवेयणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं २, मईए ३, तयट्ठोवओगेणं ४। (३)।

चउहिं ठाणेहिं मेहुणसन्ना समुप्पज्जइ, तं जहा–चियमंससोणियत्ताए १ मोहणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं २ मईए ३ तयट्ठोवओगेणं ४ (४)

चउहिं ठाणेहिं परिग्गहसन्ना समुप्पज्जइ, तं जहा–अविमुत्तयाए १, लोभवेयणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं २ मईए ३ तयट्ठोवओगेणं ४ (५)॥ सू० २०॥

कूडाकरकटवाला होनेसे बहुत समयके (पीछे) अपने स्वभावमें आता है उसी प्रकार जो प्रव्रज्या बहुतर अतिचारोंसे युक्त होनेके कारण बहुतर कालमें प्राप्तव्य (प्राप्त होने योग्य) स्वभाववाली होती है वह प्रव्रज्या धान्यसंकर्षित समान होती है ४ (८) है, सूत्र १९॥

હોવાને કારણે ઘણા સમય સુધી સાફસૂફી કર્યા બાદ પોતાની મૂળ પ્રકૃતિમાં આવી જાય છે, એ જ પ્રમાણે જે પ્રવ્રજ્યા ઘણા જ અતિચારોથી યુક્ત હોવાને કારણે દીર્ઘ કાળે પોતાના સ્વભાવને પ્રાપ્ત કરનારી હોય છે તે પ્રવ્રજ્યાને ધાન્ય સંકર્ષિત સમાન કહી છે. । ૮ । ॥ સૂ૦ ૧૯ ॥

छाया—चतस्रः संज्ञाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आहारसंज्ञा १, भयसंज्ञा २, मैथुनसंज्ञा ३, परिग्रहसंज्ञा ४। (१)

चतुर्भिः स्थानैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा-अवमकोष्ठकतया १, क्षुधावेदनीयस्य कर्मण उदयेन २, मत्या ३, तदर्थोपयोगेन ४, (२)

चतुर्भिः स्थानैर्भयसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा—हीनसत्त्वतया १ भयवेदनीयस्य कर्मण उदयेन २ मत्या ३ तदर्थोपयोगेन ४ (३)।

चतुर्भिः स्थानैर्मैथुनसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा—चितमांसशोणिततया १, मोहनीयस्य कर्मण उदयेन २ मत्या ३ तदर्थोपयोगेन ४ (४)।

चतुर्भि स्थानैः परिग्रहसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा—अविमुक्ततया १, लोभवेदनीयस्य कर्मण उदयेन २ मत्या ३ तदर्थोपयोगेन ४ ॥ सू० २० ॥

टीका—' चत्तारि सन्नाओ " इत्यादि—संज्ञानानि संज्ञाः—चेष्टाः—अभिलापा इति यावत्, ता असातवेदनीयमोहनीयकर्मोदयजन्यविकारयुक्ताः सत्य आहारादि संज्ञात्वं लभन्ते, इति ताश्चतस्रः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आहारसंज्ञा—आहाराभिलापः १, भयसंज्ञा—भयमोहनीयजन्यो जीवपरिणामः२, मैथुनसंज्ञा—वेदोदयजनितो मैथुनाभिलापः३, परिग्रहसंज्ञा-चारित्रमोहोदयजनितःपरिग्रहाभिलापः४।इति(१)

उक्त प्रव्रज्या संज्ञाके वशसे इस प्रकार विचित्रतावाली होतीहै इसलिये अब सूत्रकार संज्ञाका निरूपण करनेके लिये पंचसूत्री करते हैं—

'चत्तारि सन्नाओ पण्णत्ताओ' इत्यादि सूत्र २० ॥

टीकार्थ-संज्ञाएँ चार प्रकारकी कही गईहैं जैसे—आहार संज्ञा१ भय संज्ञा २ मैथुन संज्ञा ३ और परिग्रह संज्ञा ४ चेष्टा अभिलापा—इसका नाम संज्ञा है, यह जब असातावेदनीय मोहनीय कर्मके उदयसे जन्य विकार युक्त हो जाती है तब आहारादि संज्ञापनेको प्राप्त करती है, इनमें आहारकी अभिलापारूप आहारसंज्ञा होतीहै । भय मोहनीय जन्य जो

ઉપર્યુક્ત પ્રવ્રજ્યા સંજ્ઞાને અધીન થઈને આ પ્રકારની વિચિત્રતાવાળી થાય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર સંજ્ઞાનું નિરૂપણ કરવા નિમિત્તે પંચસૂત્રીનું કથન કરે છે " चत्तारि सन्नाओ पण्णत्ताओ " ઈત્યાદિ—

સંજ્ઞાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) આહાર સંજ્ઞા, (૨) ભય સંજ્ઞા, (૩) મૈથુન સંજ્ઞા અને (૪) પરિગ્રહ સંજ્ઞા ચેષ્ટા અથવા અભિલાષાને સંજ્ઞા કહે છે. તે જ્યારે અસાતા વેદનીય મોહનીય કર્મના ઉદયથી જન્ય વિકાર યુક્ત થઈ જાય છે, ત્યારે આહારાદિ સંજ્ઞા રૂપતાને પ્રાપ્ત કરે છે. આહારની અભિલાષા રૂપ સંજ્ઞાને આહાર સંજ્ઞા કહે છે. ભયમોહનીય

"चउहिं ठाणेहिं" इत्यादि—चतुर्भिर्वक्ष्यमाणैः स्थानैः=कारणैः, आहार-संज्ञा समुत्पद्यते-जायते, तद्यथा – अवमकोष्ठतया-रिक्तोदरतयाऽऽहाराभिलाषो जायते १, तथा-क्षुद्वेदनीयस्य कर्मण उदयेन २, तथा-मत्या-आहारकथाश्रवणादिजनितया बुद्ध्या ३, तथा-तदर्थोपयोगेन सदाऽऽहारार्थचिन्तनेन ४। (२)

"चउहिं ठाणेहिं भयसन्ना" इत्यादि—चतुर्भिर्वक्ष्यमाणैः स्थानैर्भयसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा-हीनसत्त्वतया-हीनं-न्यून सत्त्वं-बलं यस्य स हीनसत्त्वस्तस्य-भावो हीनसत्त्वता तया=निर्वलतया १, तथा-भयवेदनीयस्य कर्मण उदयेन २,

---

जीव परिणाम है वह भयसंज्ञाहै। वेदके उदयसे जनित जो मैथुनाभिलाषारूप परिणामहै, वह मैथुनसंज्ञा है और चारित्र मोहनीयके उदयसें जनित जो परिग्रहाभिलाषा है वह परिग्रह संज्ञा है ४ (१)

"चउहिं ठाणेहिं" इत्यादि चार कारणोंसे आहार संज्ञा उत्पन्न होती है वे चार कारण ये हैं-पेट जब खाली हो जाताहै, तब आहाराभिलाषा होती है १ क्षुधावेदनीय कर्मका जब उदय होता है तब आहाराभिलाषा होती है २ आहारकथाके श्रवणसे जनित बुद्धिसे आहाराभिलाषा उत्पन्न होती है ३ और सदा आहारार्थके चिन्तवनसे आहाराभिलाषा उत्पन्न होती है ४ (२) इसी तरहसे चार कारणों द्वारा भय-संज्ञा उत्पन्न होती है १ भय वेदनीय कर्मके उदयसे भयसंज्ञा होती है २ भयकी बात सुननेसे तथा भयङ्कर पदार्थों आदिके देखनेसे जनित

જન્ય જે જીવપરિણામ છે તેનું નામ ભયસંજ્ઞા છે. વેદના ઉદયથી જન્ય જે મૈથુનાભિલાષા રૂપ પરિણામ છે તેનું નામ મૈથુન સંજ્ઞા છે, અને ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયથી જે પરિગ્રહાભિલાષા છે તેને પરિગ્રહ સંજ્ઞા કહે છે. ।૧।

"ચઉહિં ઠાણેહિં" ઇત્યાદિ—નીચેના ચાર કારણોને લીધે આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે-(૧) જ્યારે પેટ ખાલી થઇ જાય છે ત્યારે આહારાભિલાષા ઉત્પન્ન થાય છે. (૨) ક્ષુધા વેદનીય કર્મનો જ્યારે ઉદય થાય છે ત્યારે આહારાભિલાષા થાય છે. (૩) આહાર કથાનું શ્રવણ કરવાથી આહારાભિલાષા ઉત્પન્ન થાય છે. (૪) સદા આહાર વિષયક વિચારો કર્યા કરવાથી આહારાભિલાષા ઉત્પન્ન થાય છે. ।૨।

નીચેના ચાર કારણોથી ભયસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે—(૧) બલહીન હોવાથી ભયસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે (૨) ભયવેદનીય કર્મના ઉદયથી ભયસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. (૩) ભય લાગે એવી વાત સાંભળવાથી અને ભયંકર પદાર્થ આદિ

तथा-मत्या-भयवार्ताश्रवण-भयङ्करदर्शनादिजनितया बुद्धया ३, तथा-तदर्थोपयोगेन-इहलोकादिभयरूपार्थविचारेण ४, इति (३)।

"चउहिं ठाणेहिं मेहुणसन्ना" इत्यादि—चतुर्भिर्वक्ष्यमाणैः स्थानैर्मैथुनसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा-चितमांसशोणिततया-चिते-उपचिते वृद्धिं प्राप्ते मांसशोणिते यस्य स चितमांसशोणितस्तस्य भावश्चितमांसशोणितता तया १, तथा-मोहनीयस्य कर्मण उदयेन २, तथा-मत्या मैथुनकथाश्रवणादिजनितबुद्धया ३, तथा-तदर्थोपयोगेन-मैथुनरूपार्थचिन्तनेन ४, (४)।

"चउहिं ठाणेहिं परिग्गहसन्ना" इत्यादि—चतुर्भिर्वक्ष्यमाणैः स्थानैः परिग्रहसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा-अविमुक्ततया-पदार्थसङ्ग्रहादवियुक्ततया परिग्रहितेत्यर्थः १, तथा-लोभवेदनीयस्य कर्मण उदयेन २, तथा-मत्या-सचेतनादि परिग्रहदर्शनादिजनितबुद्धया ३, तथा-तदर्थोपयोगेन-परिग्रहरूपार्थानुचिन्तनेन ४ इति (५)॥ सू० २०॥

बुद्धिसे भयसंज्ञा उत्पन्न होती है ३ और इहलोकादि सम्बन्धी भयरूप अर्थके विचारसे भयसंज्ञा उत्पन्न होती है ४ (३)

मैथुन संज्ञा इन चार कारणोंसे उत्पन्न होती है-शरीरमें मांस और शोणित खूनकी वृद्धि होनेसे मैथुन संज्ञा उत्पन्न होती है १ मोहनीयकर्मके उदयसे मैथुनसंज्ञा उत्पन्न होती है २। मैथुनकी कथाके श्रवण से जनित बुद्धिसे मैथुनसंज्ञा उत्पन्न होती है ३। और मैथुनरूप अर्थके चिन्तवनसे मैथुन संज्ञा उत्पन्न होती है ४ (४)

तथा-इन चार कारणोंसे परिग्रह संज्ञा उत्पन्न होतीहै जैसे पदार्थोंके संग्रह करनेसे तत्पर रहनेसे रातदिन पदार्थोंका संग्रह करते रहनेसे १ लोभ वेदनीय कर्मके उदयसे सचेतन परिग्रहके देखने आदिसे जनित

દેખવાથી ભયસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. (૪) આલોક આદિ વિષયક ભયરૂપ અર્થના વિચાર કરવાથી ભયસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. । ૩ ।

નીચેના ચાર કારણોથી મૈથુન સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે—(૧) શરીરમાં માંસ અને રક્તની વૃદ્ધિ થવાથી, (૨) મોહનીય કર્મના ઉદયથી, (૩) મૈથુન વિષયક કથા શ્રવણ કરવાથી અને (૪) મૈથુન રૂપ અર્થનું ચિન્તવન કર્યા કરવાથી મૈથુન સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. । ૪ ।

આ ચાર કારણોને લીધે પરિગ્રહ સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે—(૧) પદાર્થોના સંગ્રહ કરવામાં લીન રહેવાથી, રાતદિન પદાર્થોના સંગ્રહ કર્યા કરવાથી, (૨) લોભ વેદનીય કર્મના ઉદયથી, (૩) સચેતન પરિગ્રહને દેખવાને લીધે જનિત

पूर्वं संज्ञा प्रोक्ता, सा च शब्दादिकामविषया भवन्तीति कामान् निरूपयितुमाह—

मूलम्—चउव्विहा कामा पण्णत्ता, तं जहा-सिंगारा १, कलुणा २ बीभच्छा ३, रोद्दा ४। सिंगारा कामा देवाणं, कलुणा कामा मणुयाणं, बीभच्छा कामा तिरिक्खजोणियाणं, रोद्दा कामा णेरइयाणं ॥ सू० २१ ॥

छाया—चतुर्विधाः कामाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-शृङ्गाराः १, करुणाः २, बीभत्साः ३, रौद्राः ४। शृङ्गाराः कामा देवानाम्१, करुणाः कामा मनुजानाम्२, बीभत्साः कामास्तिर्यग्योनिकानाम् ३, रौद्राः कामा नैरयिकाणाम् ४ ॥ २१ ॥

टीका—" चउव्विहा कामा " इत्यादि—कामाः-काम्यन्तेऽभिलष्यन्त इति कामाः-शब्दादयश्चतुर्विधाः-चतुष्प्रकाराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा शृङ्गाराः १, करुणाः २, बीभत्साः ३, रौद्राः ४ इति, तत्र-शृङ्गाराः कामा देवानां भवन्ति, ऐकान्तिकाऽत्यन्तमनोज्ञत्वेन प्रकृष्टरतिरसाश्रयत्वादिति, यतः शृङ्गारो रतिरूपो भवति, यदाह—

बुद्धिसे और परिग्रहरूप अर्थके बार २ चिन्तवनसे परिग्रह संज्ञा उत्पन्न होती है ४ (५) ॥ सू० २० ॥

कथित ये संज्ञाएँ शब्दादिरूप काम विषयवाली होती हैं, अतः अब सूत्रकार कामोंका निरूपण करते हैं—" चउव्विहा कामा पण्णत्ता " इत्यादि सूत्र २१ ॥

टीकार्थ—काम चार प्रकारके कहे गयेहै—जैसे शृङ्गार१ करुणा२ बीभत्स ३ और रौद्र ४ जो चाहना अभिलाषाके विषय होतेहैं वे काम हैं। वे काम शब्दादिरूप होतेहैं। ये शब्दादिरूप काम-जो शृंगार आदिके भेदसे चार प्रकारके कहे गये हैं, सो शृङ्गाररूप काम, देवोंको होते हैं, क्योंकि

મતિથી અને (૪) પરિગ્રહ રૂપ અર્થનું વારંવાર ચિન્તવન કર્યા કરવાથી પરિગ્રહ સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. ॥ સૂ. ૨૦ ॥

ઉપર્યુક્ત સંજ્ઞાઓ શબ્દાદિ રૂપ કામ વિષયવાળી હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર કામો (વિષયો) નું નિરૂપણ કરે છે. "चउव्विहा कामा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—કામ ચાર પ્રકારનાં કહ્યા છે—(૧) શ્રૃંગાર, (૨) કરુણા, (૩) બીભત્સ અને (૪) રૌદ્ર. ચાહના (અભિલાષા) ના વિષય રૂપ જે હોય છે તેમને 'કામ' કહે છે. તે કામ શબ્દાદિ રૂપ હોય છે તેના શ્રૃંગાર આદિ જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—શ્રૃંગાર રૂપ કામનો સદ્ભાવ

"व्यवहारः पुं-नार्योरन्योऽन्यं रक्तयोरतिप्रकृतिः शृङ्गारः" इति १, तथा-करुणाः कामा मनुजानां=मनुष्याणां भवन्ति, यतस्ते तादृगमनोज्ञा न भवन्तीति तथा क्षणेन दृष्टाः सन्तो नश्यन्तीति तथा-शुक्रशोणितप्रभृतिशरीराश्रयिणो भवन्तीति शोचनरूपा भवन्तीति करुणो हि रसः शोकस्वभावो भवति, उक्तं च-"करुणः शोकप्रकृति"-रिति २, तथा-बीभत्साः कामास्तिर्यग्योनिकानां-तिर्यग्योनिजातानां प्राणिनां पक्षिप्रभृतीनां भवन्ति, बीभत्सकामानां निन्दनीयत्वात्, बीभत्सरसो हि जुगुप्सात्मको भवति, यदाह—"भवति जुगुप्साप्रकृति-र्बीभत्सः" इति ३, तथा-रौद्राः-दारुणा अत्यन्तमनिष्टत्वेन क्रोधोत्पादकत्वात्,

शृंगार रतिरूप होताहै, और देव ऐकान्तिकरूपसे अत्यन्त मनोज्ञ होते हैं, इसलिये वे प्रकृष्ट रतिरसके आश्रयभूत होते हैं। सो ही कहा है-"व्यवहारः पुं-नार्योरन्योन्यं रक्तयोरतिप्रकृतिः शृङ्गारः" परस्परमें रक्त स्त्री पुरुषोंका जो व्यवहारहै वह रति है, कारण जिसका ऐसा होता है वह रतिही श्रृङ्गारहै। करुणारूप जो कामहैं वे मनुष्योंको होतेहैं, क्योंकि वे देवोंके जैसे मनोज्ञ नहीं होते हैं। देखते २ वे एक क्षणभरमें नष्ट हो जाते हैं शुक्र शोणितके सम्बन्धसे जनित शरीरवाले होते हैं और शोचनरूप होते हैं करुणरस शोक स्वभाववाला होता है कहा भी है-"करुणः शोकप्रकृतिरिति" २। बीभत्सकाम तिर्यञ्च योनिमें उत्पन्न हुए पक्षि आदि प्राणियोंके होते हैं ३। बीभत्सकाम निंदनीय होते हैं क्योंकि बीभत्सरस जुगुप्सात्मक होताहै। कहा भीहै-"भवति जुगुप्सा प्रकृतिः बीभत्सरसः" जुगुप्सा प्रकृतिवाला बीभत्सरस होता है रौद्र-

દેવોમાં હોય છે, કારણ કે શ્રૃંગાર રતિરૂપ હોય છે અને દેવો એકાન્તિક રૂપે (સંપૂર્ણતઃ) મનોજ્ઞ હોય છે, તેથી તેઓ પ્રકૃષ્ટ રતિરસથી સંપન્ન હોય છે. કહ્યું પણ છે કે-"व्यवहारः पुं-नार्योरन्योन्यं रक्तयोरतिप्रकृतिःशृंगारः" પરસ્પરમાં રક્ત (આસક્ત) સ્ત્રી પુરુષોનો જે વ્યવહાર છે તેનું નામ રતિ છે, અને તે રતિ જ શ્રૃગાર રૂપ છે.

કરુણારૂપ કામનો સદ્‌ભાવ મનુષ્યોમાં હોય છે, કારણ કે તેઓ દેવોના જેવા મનોજ્ઞ હોતા નથી, તેઓ જોતજોતામાં એક ક્ષણ માત્રમાં જ નષ્ટ થઇ જાય છે, અને શોચનરૂપ હોય છે

કરુણ રસ શોક સ્વભાવવાળો હોય છે. કહ્યું પણ છે કે-"करुणः शोकप्रकृतिरिति" બીભત્સ કામનો સદ્‌ભાવ તિર્યંચ યોનિમાં ઉત્પન્ન થયેલાં પક્ષીઓ, પ્રાણીઓ આદિમાં હોય છે બીભત્સ કામ નિંદનીય હોય છે, કારણ કે બીભત્સરસ જુગુપ્સાજનક હોય છે. કહ્યું પણ છે કે—"भवति जुगुप्सा प्रकृतिः बीभत्सरसः" જુગુપ્સા પ્રકૃતિવાળો બીભત્સરસ હોય છે.

ते कामा नैरयिकाणां-नरकोत्पन्नानां जीवानां भवन्ति, रौद्ररसो हि क्रोधरूपो भवति, " रौद्रः क्रोधप्रकृति "-रित्युक्तेरिति । ४ । ॥ सू० २१ ॥

पूर्वं कामा उक्ताः, ते च तुच्छ-गंभीरयोर्बाधकाबाधका भवन्तीति तौ प्रतिपादयितुं सदृष्टान्तामष्टसूत्रीमाह--

मूलम्—चत्तारि उदगा पण्णत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोदए १, उत्ताणे णाममेगे गंभीरोदए २, गंभीरे णाममेगे उत्ताणोदए ३, गंभीरे णाममेगे गंभीरोदए ४। (१) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--उत्ताणे णाममेगे उत्ताणहियए, उत्ताणे णाममेगे गंभीरहियए ४, (२)।

चत्तारि उदगा पण्णत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोभासी उत्ताणे णाममेगे गंभीरोभासी ४ (३) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोभासी, उत्ताणे णाममेगे गंभीरोभासी ४, (४)

चत्तारि उदही पण्णत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोदही, उत्ताणे णाममेगे गंभीरोदही ४, (५) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणहियए ४(६)।

चत्तारि उदही पण्णत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणो-

दारुण होता है वह अत्यन्त अनिष्ट होनेसे क्रोधोत्पादक होता है, इसलिये दारुण काम नैरयिकोंके नारकोत्पन्न जीवोंके होतेहैं रौद्ररस क्रोधरूप होताहै, क्योंकि रौद्राः क्रोधप्रकृतिः " ऐसा कथन है ॥ सू० २१ ॥

रौद्र अत्यंत दारुण होय छे. ते अत्यंत अनिष्ट होवाथी क्रोधोत्पादक होय छे. तेथी नारक जीवोमां रौद्र कामनो सद्भाव होय छे. रौद्र रस क्रोध रूप होय छे. कह्युं पण छे के—" रौद्राः क्रोधप्रकृतिः " ॥ सू० २१ ॥

भासी, उत्ताणे णाममेगे गंभीरोभासी ४ (७) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोभासी ४ (८) ॥ सू० २२ ॥

छाया—चत्वारि उदकानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—उत्तानं, नामैकमुत्तानोदकम् उत्तानं नामैकं गम्भीरोदकं २, गम्भीरं नामैकमुत्तानोदकं ३, गम्भीरं नामैकं गम्भीरोदकम् ४ (१) । एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—उत्तानो नामैक उत्तानहृदयः, उत्तानो नामैको गम्भीरहृदयः ४, (२) ।

चत्वारि उदकानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—उत्तानं नामैकमुत्तानावभासि, उत्तानं नामैकं गम्भीरावभासि ४ (३) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—उत्तानो नामैक उत्तानावभासी, उत्तानो नामैको गम्भीरावभासी ४ (४) ।

चत्वार उदधयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-उत्तानो नामैक उत्तानोदधिः, उत्तानो नामैको गम्भीरोदधिः ४, (५) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-उत्तानो नामैक उत्तानहृदयः ४, (३) ।

चत्वार उदधयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—उत्तानो नामैक उत्तानावभासी, उत्तानो नामैको गम्भीरावभासी ४ (७) । एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-उत्तानो नामैक उत्तानावभासी ४ (८) ॥ सू० २२ ॥

टीका--" चत्तारि उदगा " इत्यादि-उदकानि=जलानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकमुदकमुत्तानं-तुच्छत्वात् प्रतलं भवति, तदेव पुनरुत्तानोदकं भवति, स्वच्छतयोपलभ्यमध्यस्वरूपत्वात् , ।

उक्त ये काम तुच्छ और गम्भीरके बाधक और अबाधक होते हैं इसलिये इनको प्रतिपादन करनेके लिये सूत्रकार दृष्टान्त सहित अष्ट-सूत्री कहते हैं—चत्तारि उदगा पण्णत्ता इत्यादि सूत्र २२ ॥

टीकार्थ-जल चार प्रकारके कहे गयेहैं, इनमें कोई उदक ऐसा होताहै जो उत्तान तुच्छ होनेसे प्रतल पतला होता है हलका होता है और स्वच्छ होनेसे उपलब्धिके योग्य है, मध्य स्वरूप जिसका ऐसा होता है१। तथा

ઉપર્યુક્ત કામ તુચ્છ અને ગંભીરના બાધક અને અબાધક હોય છે, તેથી તેમનું પ્રતિપાદન કરવા નિમિત્તે સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત સહિતની અષ્ટસૂત્રી કહે છે. " चत्तारि उदगा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-જળના ચાર પ્રકાર કહ્યાં છે—(૧) કોઈ જળ એવું હોય છે કે જે ઉત્તાન-તુચ્છ હોવાથી પ્રતલ (પાતળું) હોય છે અને સ્વચ્છ હોવાથી જેનું મધ્ય સ્વરૂપ ઉપલબ્ધ થઈ શકે એવું હોય છે. (૨) કોઈ જળ એવું હોય છે

तथा-एकमुदकमुत्तानं सद् गम्भीरोदकम् अगाधत्वादनुपलभ्यमानस्वरूपं भवति २, तथा-एकमुदकं गम्भीरम्-अगाधं प्रचुरत्वात् सत्पुनरुत्तानोदकम्-स्वच्छतयोपलभ्यस्वरूपत्वात् ३, तथा-एकमुदकं-गम्भीरमगाधत्वात् पुनर्गम्भीरोदकं भवति अगाधत्वादिति ४।

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—एवमेव-उदकवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः उत्तानः-गाम्भीर्यरहितो भवति बहिर्दर्शितमददैन्यादिजन्यविकृतकायवाक्चेष्टत्वात् स एव पुनरुत्तानहृदयो भवति-दैन्यादि युक्त गोपनीयधारणाशक्तेरसमर्थचित्तत्वादिति प्रथमः १।

एक उदक ऐसा होना है, जो उत्तान होता हुआ गंभीरोदक होता है-अगाध (ऊंडा) होनेसे जिसका स्वरूप उपलभ्यमान नहीं होताहै, ऐसा होताहै२। एक उदक ऐसा होताहै जो प्रचुर होनेसे अगाध होताहै, और स्वच्छ होनेसे जिसका मध्य उपलब्धिके योग्य स्वरूपवाला होता है ३। तथा एक उदक ऐसा होता है जो गंभीर-गंभीरोदक होता है। अगाध होनेसे जिसका स्वरूप उपलब्धिके योग्य नहीं होता है, और स्वच्छ होने पर भी जिसका मध्यभाग नहीं दिखाता है ४ " एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-जैसे ये जलके चार प्रकार प्रकट किये गये हैं वैसेही पुरुष प्रकार चार होतेहैं-इनमें कोई एक पुरुष प्रकार ऐसा होताहै जो उत्तान होताहै गंभीरतासे रहित होताहै और बाहरमें मद एवं दैन्य आदिसे जन्य विकृत कायकी और वचनकी चेष्टा दिखलानेवाला होनेसे उत्तान हृदयवाला होताहै दैन्यादि युक्त अपनी गोपनीय स्थितिको छिपा

કે જે ઉત્તાન હોવા છતા ગંભીર હોય છે-અગાધ હોવાથી જેનું મધ્ય સ્વરૂપ ઉપલબ્ધ ન થઈ શકે એવું હોય છે. (૩) કોઈ ઉદક ખૂબ ગંભીર હોવાથી અગાધ હોય છે, અને સ્વચ્છ હોવાને કારણે જેનું મધ્ય સ્વરૂપ ઉપલબ્ધ થઈ શકે એવું હોય છે (૪) કોઈ ઉદક એવું હોય છે કે ગભીર-ગભીરોદક વાળું હોય છે, અગાધ હોવાથી તેનું સ્વરૂપ જાણી શકાતું નથી અને સ્વચ્છ હોવા છતાં પણ તેનો મધ્યભાગ દેખાતો નથી.

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " ઇત્યાદિ—

જેવાં જળના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે એવા જ મનુષ્યના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ઉત્તાન હોય છે ગંભીરતાથી રહિત હોય છે અને મદ અને દૈન્ય આદિ જન્ય કાય અને વચનની વિકૃત ચેષ્ટા બતાવનારો હોવાથી બહારથી ઉત્તાન હૃદયવાળો હોય છે-દૈન્યા

तथा-एकः पुरुष उत्तानो भवति, कारणवशाद्दर्शितविकृतचेष्टत्वात्, स एव पुनर्गम्भीरहृदयो भवति प्रकृत्या गांभीर्यगुणसम्पन्नचित्तत्वात् इति द्वितीयः २। तथा-एको गम्भीरः-दैन्यादियुक्तोऽपि गाम्भीर्यगुणसम्पन्नो भवति, स एव पुनः कारणवशात् सङ्गोपिताकारतया उत्तानहृदयो भवति, इति तृतीयः ३, तथा-एको गम्भीरो भवन् गम्भीरहृदयो भवतीति चतुर्थः ।४। (२)।

"चत्तारि उदगा" इत्यादि--पुनरुदकानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकमुदकमुत्तानं भवति प्रतलत्वात्, तदेव पुनरुत्तानावभासि-उत्तानमवभासत इत्येवं शीलमुत्तानावभासि भवति, स्थानविशेषात् इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा-

नेमें सर्वथा असमर्थ चित्तवाला होता है (१) कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो उत्तान और गंभीर हृदयवाला होता है-कारणवश दर्शित चेष्टावाला होनेसे उत्तान होता है और स्वभावसे गांभीर्य गुणसंपन्न चित्तवाला होनेसे गंभीर हृदयवाला होता है २ तीसरा पुरुष ऐसा होता जो दैन्यादिसे युक्त होने पर भी गांभीर्यगुणसे युक्त होता है और कारणवश वही अपने आकारको छिपालेनेवाला होनेसे उत्तान हृदयवाला होता है ३ तथा चौथा पुरुष प्रकार ऐसा होना है जो गंभीर होता हुआ गंभीर हृदयवाला होता है ४ (२)

फिरभी—"चत्तारि उदगा" इत्यादि उदक चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे उत्तान-उत्तानावभासी१ उत्तान गंभीरावभासी२ गंभीर उत्तानावभासी३ और गंभीर गंभीरावभासी४ इनमें जो उदक प्रतल(पतला)

દિથી યુક્ત પોતાની ગોપનીય (છુપાવવા લાયક) સ્થિતિને છુપાવવાને બિલકુલ અસમર્થ હોય છે. (૨) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ઉત્તાન અને ગંભીર હૃદયવાળો હોય છે-કારણવશ દર્શિત ચેષ્ટાવાળો હોવાથી ઉત્તાન હોય છે અને સ્વભાવે ગાંભીર્ય ગુણસંપન્ન ચિત્તવાળો હોવાથી ગંભીર હૃદયવાળો હોય છે. કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે જે દૈન્યાદિથી યુક્ત હોવા છતાં ગાંભીર્ય ગુણથી યુક્ત હોય છે અને કારણવશ એ જ પોતાની ચેષ્ટાઓને છુપાવી શકનારો હોવાથી ઉત્તાન હૃદયવાળો હોય છે. (૪) કોઇ પુરુષ ગંભીર પણ હોય છે અને ગંભીર હૃદયવાળો પણ હોય છે । ૨ ।

વળી "ચત્તારિ ઉદગા" ઇત્યાદિ—ઉદક (પાણી) નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારનું પણ હોય છે-(૧) ઉત્તાન-ઉત્તાનાવભાસી, (૨) ઉત્તાન-ગંભીરાવભાસી (૩) ગંભીર-ઉત્તાનાવભાસી અને (૪) ગભીર-ગંભીરાવભાસી (૧) જે ઉદક

एकमुदकमुत्तानं-प्राग्वत्,-भवति, पुनस्तत् गम्भीरावभासि-अगाधावभासि-सङ्कीर्णस्थानाश्रितत्वादिनेतिद्वितीयः २। तथा-एकमुदकं गम्भीरम्-अगाधं सदुत्तानावभासि-विस्तीर्णस्थानाश्रयत्वादिनेति तृतीयः ३। तथा-एकमुदकं गम्भीरम्-अगाधं सद् गम्भीरावभासि-अगाधावभासि भवति गम्भीरस्थानाश्रितत्वादिनैवेति चतुर्थः ४ (३)।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव-उदकवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुष उत्तानः-तुच्छो भवति स एव पुनरुत्तानावभासी-उत्तान एवावभासत इत्येवंशीलउत्तानावभासी भवति, प्रदर्शिततुच्छत्वविकारत्वात्, इति प्रथमः ।१। तथा-एक-उत्तानो गम्भीरावभासी

होता है परन्तु स्थान विशेषसे उत्तान जैसा प्रतीत होता है वह प्रथम भंगमें परिगणित हुआ है १। जो उदक प्रतल-पतला होताहै वह संकीर्ण स्थानमें रहनेसे अगाध जैसा प्रतीत होता है वह द्वितीय भंगमें गिना गया है २। जो उदक गंभीर अगाध होता हुआ भी विस्तीर्ण स्थानमें रहनेसे उत्तान जैसा प्रतीत होता है वह तृतीय भंगमें लिया गया है ३ और जो उदक अगाध होता हुआ भी गंभीर स्थानके आश्रयसे अगाध जैसा प्रतीत होता है वह चतुर्थ भंगमें लिया गया है ४ (३)

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-जैसे ये उदकके प्रकार कहे गये हैं, वैसेही पुरुषके भी चार प्रकार होते हैं-इनमें एक पुरुष ऐसा होता है जो उत्तान तुच्छ होता है और अपनी तुच्छतारूप विकारके दिखानेसे उत्तानावभासी होता है। दूसरा पुरुष प्रकार ऐसा

છાછરું હોય અને સ્થાનવિશેષમાં રહેવાને કારણે ઉત્તાન (છાછરું) દેખાતું હોય તે ઉદકને પહેલા ભાગામાં મૂકી શકાય છે. (૧) જે ઉદક પ્રતલ હોય પણ સંકીર્ણ સ્થાનમાં રહેવાને કારણે અગાધ જેવું લાગતું હોય તેને બીજા પ્રકારનું ગણી શકાય (૨) જે ઉદક ગંભીર (અગાધ) હોવા છતાં પણ વિસ્તીર્ણ સ્થાનમાં રહેલુ હોવાથી ઉત્તાન જેવું લાગતું હોય તેને ત્રીજા પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે. (૩) જે ઉદક અગાધ હોય અને સંકીર્ણ સ્થાનવિશેષમાં રહેલુ હોવાને કારણે અગાધ લાગતું હોય તેને ચોથા પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે. (૪) । ૩ ।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" ઇત્યાદિ—પુરુષોના પણ એવા જ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઈ પુરુષ ઉત્તાન (તુચ્છ) હોય છે અને પોતાની તુચ્છતાને ચેષ્ટાઓ દ્વારા પ્રકટ કરતો હોવાથી ઉત્તાનાવભાસી પણ હોય છે.

संवृतत्वात् इति द्वितीयः २। तथा—एको गम्भीरउत्तानावभासी भवति कारणवशात् प्रदर्शितविकारत्वादिति तृतीयः ३। तथा—एको गम्भीरो भवति स पुनर्गम्भीरावभासी भवतीति चतुर्थः ४। (४)।

"चत्तारि उदही" इत्यादि—उदधयः—समुद्राश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एक उदधिः उत्तानः—तुच्छत्वात्प्रतलो भवतीत्याद्युदकसूत्रवद्विवरणं बोध्यम्। यद्वा—एक उदधिः—पूर्वमुत्तानः—प्रतलो भवति स एव पश्चादपि उत्तानोदधिः—उत्तानोदधिप्रदेशो भवति, तरङ्गस्य समुद्राद्बहिरसत्त्वात् इति प्रथमः। १। तथा—एकः पूर्वमु-

होता है जो—उत्तान होता हुआ भी अपने आकारको छुपा लेनेवाला होनेके कारण गंभीर प्रतीत होताहै २। तीसरा पुरुप प्रकार ऐसा होता है जो गंभीर होता हुआ भी कारणवश विकारके दिखानेसे उत्तानके जैसा प्रतीत होता है ३। और चतुर्थ पुरुपप्रकार ऐसा होता है जो गंभीर होता हुआ भी गंभीरही जैसा प्रतीत होता है ४ (४)

"चत्तारि उदही" इत्यादि। समुद्र चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—उत्तान उत्तानोदधि १ उत्तान गंभीरोदधि २ इत्यादि ४ यह सब भंग कथन, उदक सूत्रकी तरह कर लेना चाहिये। यद्वा—एक उदधि ऐसा होता है जो पहिले भी उत्तान होता है प्रतल होता है और बादमें भी वह तरङ्गोंका समुद्रसे बाहर असत्व होनेसे उत्तानोदधि प्रदेशवाला होता है। १ तथा—एक उदधि ऐसा होता है जो पहिले उत्तान होता है और पीछे भी तरङ्गोंके आगमनसे वह अगाध होनेके कारण गंभीरोदधि प्रदेशवाला हो जाता है। २ एक उदधि ऐसा होता जो गम्भीर

(२) કોઇ પુરુષ ઉત્તાન (તુચ્છ) તો હોય છે, પણ પોતાની તુચ્છતાને છુપાવનારો હોવાથી ગંભીર લાગે છે. (૩) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ગંભીર હોવા છતાં પણ કોઇ કારણે પોતાના મનોભાવોને છુપાવી શકતો નથી તેથી ઉત્તાન જેવો લાગે છે. (૪) કોઈ પુરુષ ગંભીર હોય છે અને પોતાના મનોભાવોને મુખપર પ્રકટ નહીં થવા દેવાને કારણે ગંભીર જ લાગે છે. ।૪।

"ચત્તારિ ઉદહી" ઇત્યાદિ—સમુદ્ર ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે—(૧) ઉત્તાન ઉત્તાનોદધિ, (૨) ઉત્તાન—ગંભીરોદધિ, ઈત્યાદિ ચારે પ્રકાર ઉદક સૂત્રમાં કહ્યા પ્રમાણે સમજવા. અથવા—કોઇ એક ઉદધિ (સમુદ્ર) એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ ઉત્તાન (તુચ્છ) હોય છે અને પછી પણ મોજાંઓનું સમુદ્રની બહાર અસ્તિત્વ નહીં હોવાથી ઉત્તાનોદધિ પ્રદેશવાળો હોય છે. (૨) કોઇ એક સમુદ્ર એવો હોય છે કે જે પહેલાં ઉત્તાન હોય છે અને પાછળથી પણ તરંગોનું આગમન થવાથી ગંભીરોદધિ પ્રદેશવાળો થઇ જાય છે. (૩) કોઇ

त्तानः पश्चाद् गम्भीरोदधिः-गम्भीरोदधिप्रदेशो भवति तरङ्गागमनेनागाधत्वात्, इति द्वितीयः । २।

तथा—एकः पूर्वं गम्भीरः पश्चात् तरङ्गापसरणेन उत्तानोदधिः-उत्तानोदधिप्रदेशो भवतीति तृतीयः । तथा-एकः पूर्वं गम्भीरः पश्चाद् गम्भीरोदधिः-गम्भीरोदधिप्रदेशः सदाऽगाधत्वादिति चतुर्थः ४ । ५ । एवं पुरुषदार्ष्टान्तिकोऽपि योजनीयः । ६ । दृष्टान्तदार्ष्टान्तिकसूत्रद्वयं सुगमम् । ८ । ॥ सू० २२ ॥

पूर्वमुदधय उक्ताः, सम्प्रति तत्तरकान्निरूपयितुं सूत्रचतुष्टयमाह—

मूलम्-चत्तारि तरगा पण्णत्ता, तं जहा—समुद्दं तरामीतेगे समुद्दं तरइ १, समुद्दंतरामीतेगे गोप्पयं तरइ २, गोप्पयं तरामीतेगे समुद्दं तरइ ३, गोप्पयं तरामीतेगे गोप्पयं तरइ ४। (१) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता तं जहा—समुद्दं तरामीतेगे समुद्दं तरइ ४। (२)।

चत्तारि तरगा पण्णत्ता, तं जहा--समुद्दं तरित्ता णाममेगे समुद्दे विसीयइ १ समुद्दं तरित्ता णाममेगे गोप्पए विसीयइ २, गोप्पयं तरित्ता णाममेगे समुद्दे विसीयइ ३, गोप्पयं तरित्ता

होता है और पीछेसे वह तरङ्गोंके अपसरणसे उत्तानोदधि प्रदेशवाला होता है ३। और एक उदधि ऐसा होता है जो पहिले गम्भीर होता है और पीछे भी अगाध होनेसे गम्भीरोदधि प्रदेशवाला होता है ४। इसी तरहसे पुरुष दार्ष्टान्तिक सूत्र भी समझ लेना चाहिये ये दृष्टान्त दार्ष्टान्तिक सूत्रद्वय सुगम है ॥ सू० २२ ॥

એક સમુદ્ર એવો હોય છે કે જે ગંભીર હોય છે પણ ત્યારબાદ તેમાંથી તરંગોનું અપસરણ થવાને કારણે ઉત્તાનોદધિ પ્રદેશવાળો બની જાય છે. (૪) કોઇ સમુદ્ર એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ ગંભીર હોય છે અને પછી પણ અગાધ જ રહેવાને કારણે ગભીરોદધિ પ્રદેશવાળો રહે છે. એ જ પ્રમાણે દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના ચાર પ્રકારો પણ સમજી લેવા. આ બન્ને સૂત્ર સુગમ હોવાથી વધુ સ્પષ્ટીકરણ કર્યું નથી. ॥ સૂ૦ ૨૨ ॥

णाममेगे गोप्पए विसीयइ ४। (३)। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--समुद्दं तरित्ता णाममेगे समुद्दे विसीयइ ४(४) ॥ सू० २३ ॥

छाया—चत्वारस्तरकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-समुद्रं तरामीत्येकः समुद्रं तरति १, समुद्रं तरामीत्येको गोष्पदं तरति २, गोष्पदं तरामीत्येकः समुद्रं तरति ३ गोष्पदं तरामीत्येको गोष्पदं तरति ४। (१)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-समुद्रं तरामीत्येकः समुद्रं तरति ४। (२)।

चत्वारस्तरकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-समुद्रं तरीत्वा नामैकः समुद्रे विषीदति १, समुद्रं तरीत्वा नामैको गोष्पदे विषीदति २. गोष्पदं तरीत्वा नामैकः समुद्रे विषीदति ३, गोष्पदं तरीत्वा नामैको गोष्पदे विषीदति ४। (३)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-समुद्रं तरीत्वा नामैकः समुद्रे विषीदति ४ (४) ॥ सू० २३ ॥

टीका—चत्तारि तरगा" इत्यादि—तरकाः-तरन्तीति तरास्त एव तरकाः ते चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः-कश्चित् तरकः तरणशीलः समुद्रं तरामीति कृत्वा समुद्रं तरति १, एकः कश्चित्तरकः समुद्रं तरामीति कृत्वा तत्तरणासमर्थो गोष्पदं-गोखुरपरिमितजलयुक्तं जलाशयं तरति २, एकः कश्चित्तरकः गोष्पदं तरामीति निश्चित्य सामर्थ्यबाहुल्यात् पश्चात् समुद्रं तरति ३, एकः कश्चिद्

अब सूत्रकार इनके तरणशीलोंका निरूपण करनेके लिये सूत्र चतुष्टयका कथन करते हैं'-चत्तारि तरगा पण्णत्ता इत्यादि' सूत्र २३ ॥

टीकार्थ-तरक-तैरनेवाले चार प्रकारके होते हैं-जैसे-एक तरक ऐसा होता है जो "मैं समुद्रमें तैरूं" ऐसा विचार करके समुद्रमें तैरता है १ एक तरक ऐसा होता है जो-"मैं समुद्रमें तैरूं" इस प्रकार विचार करके गोष्पदमें तैरता है २ एक तरक ऐसा होता है जो "मैं गोष्पदमें तैरूं" ऐसा विचार करके समुद्रमें तैरता है ३ एक तरक ऐसा होता है जो "मैं गोष्पदमें तैरूं" ऐसा विचार करके गोष्पदमेंही तैरता है ४

હવે સૂત્રકાર તે સમુદ્રને તરી જવાનો પ્રયત્ન કરનાર તરવૈયાઓનું ચાર સૂત્રો દ્વારા નિરૂપણ કરે છે. "चत्तारि तरगा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-તરકના (તરવૈયાઓના) નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક તરક "હું સમુદ્રમાં તરીશ," એવો વિચાર કરીને સમુદ્રમાં તરે છે. કોઇ એક તરક એવો વિચાર કરે છે કે 'હું સમુદ્રમાં તરીશ, ધારે છે" પણ તે ગોષ્પદમાં તરે છે. (૩) કોઈ તરવૈયો "હું ગોષ્પદમાં તરીશ" આ પ્રકા

गोष्पदं तरामीति निश्चित्याऽल्पशक्तिकत्वाद् गोष्पदमेव तरति ४ (१)। समुद्रं-समुद्रवद् दुस्तरं सर्वविरत्यादिकं कार्यं तरामि-धातूनामनेकार्थत्वात् करोमीत्येवं निश्चित्य तत्र समर्थत्वात् समुद्रं-समुद्रवद् दुस्तरं सर्वविरत्यादिकं कार्यमेव तरति-तत्र समर्थो भवतीति प्रथमः १। तथा—एकस्तरकः समुद्रं-समुद्रवत् दुस्तरं तरामीति निश्चित्य तत्रासामर्थ्याद् गोष्पदं-गोष्पदवत् सुतर देशविरत्यादिकमल्पतमं-तरति-निर्वाहयतीति द्वितीयः २। तथा-एको गोष्पदं-गोष्पदवत् सुतरं तरामीति कृत्वा सामर्थ्यातिशयात् समुद्रंसमुद्रवद्दुस्तरं कार्यं तरति-साधयति, धातूनाम-

---

एक तरक जो प्रथम भंगमें प्रकट किया गयाहै, वह जैसा विचार करता है वैसा नहीं करताहै। तृतीय भंगमें जो तरक प्रकट किया गयाहै वह भी ऐसा हीहै। और चतुर्थ भंगगत पुरुष जैसा विचार करता है वैसा ही काम करता है। गोखुर परिमित जलसे युक्त जो जलाशय है, वह यहां गोष्पदसे गृहीत हुआ है। जो जिसमें तरनेका विचार करता है वह उसमें इसलिये नहीं तरता है कि या तो उसमें तैरनेकी उसमें अशक्ति है या उसमें तैरनेकी शक्तिकी बहुलता है-जैसे-जो इस प्रकारका विचार करता है कि मैं समुद्रमें तैरू और वह तैरता है गोखुर-परिमित जलयुक्त जलाशयमें तो इसका कारण यही है कि उसमें उसको तैरनेकी शक्ति नहीं है। तथा जो ऐसा विचार करता है कि मैं तैरूं गोखुरपरिमित जलवाले जलाशयमें, और वह तैरता है समुद्रमें,

---

રનો વિચાર કરીને સમુદ્રમાં તરે છે. અને (૪) કોઈ પુરુષ "હુ ગોષ્પદમાં તરીશ" આ પ્રકારનો વિચાર કરીને ગોષ્પદમાં જ તરે છે

ગોખુર પરિમિત જળથી યુક્ત જળાશયને ગોષ્પદ કહે છે. પહેલા અને ચોથા પ્રકારના પુરુષો જેવો વિચાર કરે છે એવું જ કાર્ય કરી બતાવે છે બીજા અને ત્રીજા પ્રકારના પુરુષો જેવો વિચાર કરે છે એવું કરી શકતા નથી. સમુદ્રમાં તરવાનો વિચાર કરીને તેમાં નહીં તરનાર માણુસમાં તેની શક્તિનો અભાવ સમજવો. ગોષ્પદમાં તરવાનો વિચાર કરીને તેમાં નહીં તરનારમાં તરવાની શક્તિની અધિકતા સમજવી જે માણુસ એવો વિચાર કરે છે કે "હું સમુદ્રમાં તરું," પણુ સમુદ્રમાં તરવાને બદલે ગોખુર પરિમિત જલયુક્ત જળાશયમાં તરે છે-નાનકડા જળાશયમાં તરે છે, તેનું કારણુ એ છે કે સમુદ્રમાં તરવાને તે અસમર્થ છે. કોઇ માણુસ એવો વિચાર કરે છે કે "હું ગોખુર પરિમિત જળાશયમાં તરું," પરન્તુ એવા જળાશયમાં તરવાને બદલે તે સમુદ્રમાં તરે છે, તેનું કારણુ એ છે કે તેનામાં તરવાની

तो इसका कारण यही है कि उसमें शक्तिका बाहुल्यहै। तथा जो "समुद्रमें तैरू" ऐसा विचार करता है और फिर समुद्रमें ही तैरता है, तो इसका भी कारण शक्तिकी बाहुल्यताहै, और मैं गोष्पदमें तरूं, ऐसा विचार कर वह गोष्पदमें तैरताहै। यहां पर भी उसमें उसके तैरनेकी शक्तिका अभाव कारण है, अर्थात् उसमें अल्प शक्ति है इसी तरहसे पुरुषजात भी चार हैं, जैसे जो इस बातको सोचता है कि "समुद्रं तरामि" मैं समुद्रकी तरह दुस्तर सर्वविरति आदिरूप कार्य करूं, ऐसा निश्चित करके भी जो उसेही करता है अर्थात् सर्वविरतिरूप चारित्रको पालता है वह प्रथम भंगमें लिया गया है। इस पक्षमें "तरामि"का अर्थ "करोमि" ऐसा जो किया गया है वह धातुकी अनेकार्थताको लेकर किया गया है। संकल्पानुसार जो कार्य करता है वह उसके करनेमें समर्थ है इसलिये करता है। दूसरा पुरुष ऐसा विचार करताहै मैं समुद्रकी तरह दुस्तर सर्वविरतिरूप चारित्रको धारण करूं, परन्तु उसके धारण करने में उसकी अशक्ति होने से वह गोष्पदकी तरह सुतर (सुखपूर्वक तैरने योग्य) देशविरति आदिरूप अल्पतम चारित्रका निर्वाह करता है २। तीसरा पुरुष जो ऐसा विचार करता है कि मैं गोष्पदकी समान सुतर जो देशविरति

શક્તિ અપાર છે સમુદ્રમાં તરવાનો વિચાર કરીને સમુદ્રમાં જ તરનાર માણસમાં પણ શક્તિનું બાહુલ્ય સમજવું. ગોષ્પદમાં તરવાનો વિચાર કરીને ગોષ્પદમાં જ તરનાર માણસમાં તરવાની શક્તિનો અભાવ અથવા તેની શક્તિની અલ્પતા છે એમ સમજવું.

હવે સૂત્રકાર આ ચાર પુરુષ પ્રકારોનું બીજી રીતે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે— (૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સમુદ્રના જેવી દુસ્તર સર્વવિરતિ ધારણ કરવાનો નિશ્ચય કરે છે અને સર્વવિરતિ રૂપ ચારિત્રની આરાધના કરે છે. આ પ્રકારનો પુરુષ "समुद्रं तरामि" ઇત્યાદિ પહેલા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે "तरामि" આ પદનો અર્થ જે "करोमि" લેવામાં આવ્યો છે તે ધાતુની અનેકાર્થતાની અપેક્ષાએ લેવામાં આવ્યો છે સંકલ્પ અનુસાર જે માણસ કામ કરે છે તે માણસ તે કામ કરવાને સમર્થ હોવાને કારણે તે કામ કરી શકે છે. (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો વિચાર કરે છે કે "હું સમુદ્રના જેવું દુસ્તર એવું સર્વવિરતિ રૂપ ચારિત્ર ધારણ કરું," પણ સર્વ વિરતિ રૂપ ચારિત્રને ધારણ કરવામાં પોતાને અસમર્થ સમજીને તે ગોષ્પદ સમાન સરળ એવા દેશવિરતિ રૂપ અલ્પતમ ચારિત્રનું પાલન કરે છે. (૩) (૩) કોઈ પુરુષ એવો વિચાર કરે છે કે "હું ગોષ્પદના સમાન સરળ એવા

नेकार्थत्वात् इति तृतीयः ३। तथा–एकस्तरको गोष्पदं–गोष्पदवत् सुतरं–सुसाधं कार्यं तरामि–करोमीति निश्चित्य गोष्पदं–गोष्पदवत् सुतरं–सुसाधं तरति–साधयति। इति चतुर्थः ४ (१)।

"चत्तारि तरगा" इत्यादि—चत्वारस्तरकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–एकः कश्चित्तरकः पूर्वं समुद्रं तरीत्वा पश्चात् शक्तिह्रासात्समुद्रे विषीदति न तरीतु समर्थो भवति१, एकः कश्चित्समुद्रं तरीत्वा गोष्पदे विषीदति, शक्तेरत्यन्तह्रासात् २, एकः कश्चिद् गोष्पदं तरीत्वा पश्चात् प्रचुरशक्तिप्रभावात्समुद्रमपि तरति ३,

---

आदि है उनका पालन करूं, परन्तु वह सामर्थ्यकी अधिकतासे समुद्रकी तरह दुस्तर सर्वविरति आदिरूप चारित्रका धारण कर लेता है यह तृतीय भंगमें गिना गया है ३। तथा जो पुरुष ऐसा विचार करताहै कि मैं गोष्पदतुल्य सुसाध्य देशविरति आदि रूप चारित्रका पालन करूं और वह उसेही पालताहै तो ऐसा वह पुरुष चतुर्थ भंगमें लिया गयाहै ४(२)

"चत्तारि तरगा" इत्यादि–तरक चार कहे गये हैं–इनमें कोई एक तरक ऐसा होता है, जो पूर्वमें समुद्रको तिर करके पश्चात् शक्तिके ह्रासमे समुद्रमें दुःखी हो जाता है, उसे फिर तरनेमें समर्थ नहीं होता है १ कोई एक तरक ऐसा होताहै, जो गोष्पदको तिर करके गोष्पदमेंही शक्तिके अत्यन्त ह्रास हो जानेसे दुःखी हो जाता है २ कोई एक तरक ऐसा होता है, जो गोष्पदको तिर करके पश्चात् प्रचुर शक्तिके प्रभावसे

દેશવિરતિ રૂપ ચારિત્રનું પાલન કરૂં," પરન્તુ તેને એમ લાગે છે કે સર્વ વિરતિ આદિ રૂપ ચારિત્રનું પાલન કરવાને પણ પોતે સમર્થ છે, તેથી તે સમુદ્રના જેવા દુસ્તર સર્વવિરતિ આદિ રૂપ ચારિત્રને ધારણ કરી લે છે (૪) કોઈ એક પુરુષ એવો વિચાર કરે છે કે "ગોષ્પદ સમાન સુસાધ્ય દેશ વિરતિ આદિ રૂપ ચારિત્રનું હું પાલન કરુ," આ પ્રમાણે તે વિચાર કરીને તે દેશવિરતિ રૂપ ચારિત્રને જ ધારણ કરે છે, કારણ કે તે પોતે એમ માને છે કે સર્વવિરતિ રૂપ ચારિત્રનું પાલન કરવાને પોતે સમર્થ નથી

"ચત્તારિ તરગા" ઈત્યાદિ—ચાર પ્રકારના તરવૈયા કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક તરવૈયો એવો હોય છે કે જે પહેલાં તો સમુદ્રને તરી જાય છે, પણ પાછળથી તેની શક્તિનો હ્રાસ થઈ જવાથી તે સમુદ્રમાં દુઃખી થઈ જાય છે તેને ફરી તરીને પાર કરવાને અસમર્થ બની જાય છે. (૨) કોઈ એક તરવૈયો ગોખુર પરિમિત જળયુક્ત જળાશયને તરવાનો પ્રયત્ન કરે છે પણ એમ કરતાં કરતાં તેની શકિતનો હ્રાસ થઈ જવાથી તે જળાશયને પાર કરતાં કરતાં દુઃખી થાય છે. (૩) કોઈ એક તરવૈયો ગોષ્પદને તર્યા બાદ પ્રચુર શકિતના પ્રભાવથી સમુદ્રને

एकः कश्चित् गोष्पदं तरीत्वा गोष्पदेऽपि विषीदति-अल्पशक्तिकत्वात् ४ (३)। एवमेव तरकवदेव चत्वारि पुरुषजातानि, प्रज्ञप्तानि तद्यथा-एकः कश्चित् तरकः कार्य करणसमर्थः पुरुषः समुद्रं-समुद्रमिव दुस्तरं-दुःसाध्यं कार्यं तरीत्वा पारयित्वा समुद्रे-समुद्रसदृशे दुःसाधे कार्यान्तरे विषीदति-क्षयोपशमवैलक्षण्यात्कार्यान्तरं न पारयति १ एवं भङ्गत्रयमूहनीयम् । २ ॥ सू० २३ ॥

पूर्वं तरका उक्ताः, ते च पुरुषविशेषा एव भवन्तीति पुरुषविशेषानेव कुम्भ दृष्टान्तप्रदर्शनपूर्वकं निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि कुंभा पण्णत्ता, तं जहा—पुण्णे णाममेगे पुण्णे १, पुण्णे णाममेगे तुच्छे २, तुच्छे णाममेगे पुण्णे ३, तुच्छे णाममेगे तुच्छे ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—पुण्णे णाममेगे पुण्णे ४।

चत्तारि कुंभा पण्णत्ता, तं जहा—पुण्णे णाममेगे पुण्णोभासी १, पुण्णेणाममेगे तुच्छोभासी २, तुच्छे णाममेगे पुण्णोभासी ३, तुच्छे णाममेगे तुच्छोभासी ४। एवं चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—पुण्णे णाममेगे पुण्णोभासी ४।

समुद्रमें भी तैर जाता है ३ और कोई एक तरक ऐसा होता है जो अल्प शक्तिवाला होनेसे गोष्पदको तैर करके भी गोष्पदमेंही दुःखी हो जाता है ४ (३)

इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं—इनमें कोई एक तरक कार्य करनेमें समर्थ हुआ पुरुष समुद्रकी तरह दु स्तर दु साध्य कार्यको समाप्त करके समुद्र जैसे दुःसाध्य कार्यान्तरमें क्षयोपशमकी विलक्षणतासे नहीं लगताहै१ इसी प्रकारसे तीन भंग समझ लेना चाहिये॥सू.२३॥

પણ તરી જાય છે. (૪) કોઇ એક તરવૈયો એવો હોય છે કે જે અલ્પ શકિતવાળો હોવાથી ગોષ્પદને તરીને ગોષ્પદમાં જ દુઃખી દુઃખી થઇ જાય છે. તરવૈયાની જેમ પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે–કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સમુદ્રને તરવા જેવું દુસ્તર–દુઃસાધ્ય કાર્ય પૂર્ણ કરે છે, પણ ક્ષયોપશમની વિલક્ષણુતાને લીધે એવાં જ કોઇ બીજા દુઃસાધ્ય કાર્યમાં પડતો નથી. એ જ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા. ॥ સૂ૦ ૨૩ ॥

चत्तारि कुंभा पण्णत्ता, तं जहा--पुण्णे णाममेगे पुण्णरूवे पुण्णे णाममेगे तुच्छरूवे ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--पुण्णे णाममेगे पुण्णरूवे ४।

चत्तारि कुंभा पण्णत्ता, तं जहा--पुण्णेऽवि एगे पियट्ठे १, पुण्णेऽवि एगे अवदले २, तुच्छेऽवि एगे पियट्ठे ३, तुच्छेऽवि एगे अवदले ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--पुण्णेऽवि एगे पियट्ठे ४,

तहेव चत्तारि कुंभा पण्णत्ता, तं जहा--पुण्णेऽवि एगे विस्संदइ १, पुण्णेऽवि एगे णो विस्संदइ २, तुच्छेऽवि एगे विस्संदइ ३, तुच्छेऽवि एगे णो विस्संदइ ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--पुण्णेऽवि एगे विस्संदइ ४।

तहेव चत्तारि कुंभा पण्णत्ता, तं जहा--भिन्ने १, जज्जरिए २, परिस्साई ३, अपरिस्साई ४, एवामेव चउव्विहे चरित्ते पण्णत्ते, तं जहा--भिन्ने जाव अपरिस्साई ४।

चत्तारि कुंभा पण्णत्ता, तं जहा--महुकुंभे णाममेगे महुप्पिहाणे १, महुकुंभे णाममेगे विसपिहाणे २, विसकुंभे णाममेगे महुपिहाणे ३, विसकुंभे णाममेगे विसपिहाणे ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--महुकुंभे णाममेगे महुपिहाणे ४।

हिययमपावमकलुसं जीहाऽवि य महुरभासिणी निच्चं ।
जंमि पुरिसंमि विज्जइ से महुकुंभे महुपिहाणे ॥१॥

हियमपावमकलुसं जीहाऽवि य कडुयभासिणी निच्चं ।
जंमि पुरिसंमि विज्जइ से महुकुंभे विसपिहाणे ॥२॥
जं हियं कलुसमयं जीहाऽविय महुरभासिणी निच्चं ।
जंमि पुरिसंमि विज्जइ से विसकुंभे महुपिहाणे ॥३॥
जं हियं कलुसमयं जीहाऽवि य कडुयभासिणी निच्चं ।
जंमि पुरिसंमि विज्जइ से विसकुंभे विसपिहाणे ।४॥ सू०२४॥

छाया—चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णो नामैकः पूर्णः १, पूर्णो नामैकस्तुच्छः २, तुच्छो नामैकः पूर्णः ३, तुच्छो नामैकस्तुच्छः ४। एवमेव चत्वारि पुरुपजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णो नामैकः पूर्णः ४।

चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णो नामैकः पूर्णावभासी १, पूर्णो नामैकस्तुच्छावभासी २, तुच्छो नामैकः पूर्णावभासी ३, तुच्छो नामैकस्तुच्छावभासी ४। एवं चत्वारि पुरुपजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णो नामैकः पूर्णावभासी ४।

चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णो नामैकः पूर्णरूपः १, पूर्णो नामैकः स्तुच्छरूपः ४। एवमेव चत्वारि पुरुपजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णो नामैकः पूर्णरूपः ४।

चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णोऽप्येकः प्रियार्थः १, पूर्णोऽप्येकोऽप(व)दलः २, तुच्छोऽप्येकः प्रियार्थः ३, तुच्छोऽप्येकोऽप(व)दलः ४। एवमेव चत्वारि पुरुपजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णोऽप्येकः प्रियार्थः ४।

तथैव चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णोऽप्येको विष्यन्दते १, पूर्णोऽप्येको नो विष्यन्दते २, तुच्छोऽप्येको विष्यन्दते ३, तुच्छोऽप्येको न विष्यन्दते ४। एवमेव चत्वारि पुरुपजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णोऽप्येको विष्यन्दते४,

तथैव चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—भिन्नः १, जर्जरितः २, परिस्रावी ३, अपरिस्रावी ४। एवमेव चतुर्विधं चारित्रं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—भिन्नं यावत् अपरिस्रावि ४।

चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, मधुकुम्भो नामैको मधुपिधानः १, मधुकुम्भो नामैको विषपिधानः,२ विषकुम्भो नामैको मधुपिधानः ३, विपकुम्भो नामैको विपपिधानः ४। एवमेव चत्वारि पुरुपजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—मधुकुम्भो नामैको मधुपिधानः ४ ।

हृदयमपापमकलुषं, जिह्वाऽपि च मधुरभाषिणी नित्यम् ।
यस्मिन् पुरुषे विद्यते स मधुकुम्भो मधुपिधानः ॥१॥
हृदयमपापमकलुषं जिह्वाऽपि च कटुकभाषिणी नित्यम् ।
यस्मिन् पुरुषे विद्यते स मधुकुम्भो विषपिधानः ॥ २ ॥
यद्धृदयं कलुषमयं जिह्वाऽपि च मधुरभाषिणी नित्यम् ।
यस्मिन् पुरुषे विद्यते स विषकुम्भो मधुपिधानः ॥ ३ ॥
यद्हृदयं कलुषमयं जिह्वाऽपि च कटुकभाषिणी नित्यम् ।
यस्मिन् पुरुषे विद्यते स विषकुम्भो विषपिधानः ॥ ४ ॥ २४ ॥

टीका—' चत्तारि कुंभा ' इत्यादि—कुम्भाः-घटाः, चत्वारः प्रज्ञप्ताः, एको घटः पूर्णः सर्वाङ्गसम्पन्नः, यद्वा-प्रमाणसम्पन्नो भवति, स एव पुनः पूर्णः-मधुघृतादिभृतो भवतीति प्रथमः १, नायशब्दो वाक्यालङ्कारे, एवमग्रेऽपि, तथा-एकः कुम्भः पूर्णः समस्तावयवयुक्तोऽपि तुच्छः-मध्वादिवस्तुरिक्तो भवतीति द्वितीयः २, तथा-एकस्तुच्छः अपूर्णाङ्गो, यद्वा-लघुः सन्नपि पूर्णः-मध्वादि भृतो भवतीति तृतीयः ३ तथा-एकस्तुच्छसंतुच्छ एव भवतीति चतुर्थः ४ ।

ये तरक जो चार कहे गये हैं वे विशेष पुरुषरूपही होतेहैं, इसलिये अब सूत्रकार उन पुरुषविशेषोंका कुम्भ दृष्टान्तको लेकर निरूपण करतेहैं 'चत्तारि कुंभा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र २४ ॥

टीकार्थ—कुम्भ चार प्रकारके कहे गयेहैं-जैसे-कोई एक कुम्भ घट ऐसा होता है, जो पूर्ण सर्वाङ्गसे युक्त होता है अथवा-प्रमाणसंपन्न होता है, वही पुनः पूर्ण-मधु घृतादिसे भरा हुआ रहता है १। कोई एक कुम्भ ऐसा होताहै जो पूर्ण होताहै-समस्त अवयवोंसे युक्त होता है, तब भी तुच्छ मध्वादि(शहद आदि)वस्तुओंसे रिक्त होताहै २। तथा कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो तुच्छ अपूर्ण अङ्गवाला होता है यद्वा-छोटा होता

અહીં જે તરકો (તરવેંયા) નું કથન કર્યું, તેઓ વિશિષ્ટ પુરુષો રૂપ જ હોય છે, આ સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર કુંભના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા પુરુષ વિશેષોનું નિરૂપણ કરે છે. “ चत्तारि कुंभा पण्णत्ता ” ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—કુંભના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક કુંભ એવો હોય છે કે જે પૂર્ણ (સર્વાંગ સંપન્ન અથવા પ્રમાણુ સંપન્ન) હોય છે, અને ઘી, મધ આદિથી ભરેલો હોય છે. (૨) કોઈ એક કુંભ પૂર્ણ (સમસ્ત અવયવોથી યુક્ત) હોય છે, પરંતુ મધ, ઘી આદિ દ્રવ્યો તેમાં ભરેલાં ન હોવાને કારણે ખાલી હોય છે. (૩) કોઈ એક કુંભ એવો હોય છે કે જે અપૂર્ણ (અપૂર્ણ

यद्वा–एकः कुम्भः पूर्वं पूर्णः–मध्वादि भृतो भवति, स पुनः पश्चादपि पूर्ण इत्येवं चत्वारोऽपि भङ्गा विवरणीयाः ।४।

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि–एवमेव–कुम्भवदेव–पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकः पुरुषो जात्यादि गुणैः पूर्णः सन् पुनर्ज्ञानादिगुणैः पूर्णो भवतीति प्रथमः १ । यद्वा–एकः पुरुषो धनेन गुणै र्वा पूर्णः सन् पश्चादपि स धनेन गुणै र्वा पूर्णो भवति, एवं शेषास्त्रयोऽपि भङ्गाः बोध्याः । ४ ।

" चत्तारि-कुंभा " इत्यादि—पुनः कुम्भाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–एकः कुम्भोऽखिलावयवैर्दध्यादिना वा पूर्णः सन् पूर्णावभासी–पूर्ण एव दर्शकदृष्टोऽव-

---

हुआ भी पूर्ण मध्वादिसे भरा होता है ३। तथा कोई एक घट ऐसा होता है, जो तुच्छ होता हुआ भी तुच्छही रहता है ४

यद्वा—एक कुम्भ पहिले पूर्ण मधुआदिसे भरा होता है और पीछे भी वह पूर्ण होता है १ इसी प्रकारसे शेष भंग भी समझ लेना चाहिये ४

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि–इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं–जैसे–कोई एक पुरुषजात ऐसा होता है जो जात्यादि गुणोंसे पूर्ण होता हुआ भी पुनः ज्ञानादि गुणोंसे पूर्ण होता है १ यद्वा—पहिले धनसे या गुणोंसे पूर्ण होता हुआ भी पीछे भी वह धनसे या गुणोंसे पूर्ण बना रहता है इसी प्रकार शेष तीन भंग भी समझ लेना चाहिये ।

અંગોવાળો અથવા નાનો) હોવા છતાં પણ મધ, ઘી આદિથી પૂર્ણ હોય છે. (૪) કોઈ એક કુંભ એવો હોય છે કે જે અપૂર્ણ અંગોવાળો અથવા તુચ્છ) હોય છે અને તેમાં ઘી, મધ આદિ દ્રવ્યો ભરેલાં નહીં હોવાને કારણે પણ અપૂર્ણ જ હોય છે.

અથવા આ રીતે પણ ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઈ એક કુંભ પહેલાં પણ મધ આદિથી ભરેલો હોવાને કારણે પૂર્ણ હોય છે અને પછી પણ તે દ્રવ્યોથી ભરેલો હોવાને કારણે પૂર્ણ જ હોય છે. એ જ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા.

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે જાત્યાદિ ગુણોથી પૂર્ણ હોય છે અને જ્ઞાનાદિ ગુણોથી પણ પૂર્ણ હોય છે. અથવા તે પહેલાં ધન અથવા ગુણોથી પૂર્ણ હોય છે, અને પછી પણ તેનાથી પૂર્ણ જ રહે છે. એ જ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા.

भासत इत्येवं शीलो भवतीति प्रथमः १। तथा-एकः कुम्भः पूर्णोऽपि केनापि कारणेनाभिप्रेतार्थसाधकत्वाभावात् तुच्छावभासो-तुच्छ इवावभासत इत्येवं शीलो भवतीति द्वितीयः २। एवं शेषभङ्गद्वयमपि बोध्यम्। ४।

"एवं चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवं-कुम्भवत् पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषो धनश्रुतादिभिः पूर्णःसन् धनश्रुतादिविनियोगात् पूर्णावभासी-पूर्ण एवावभासत इत्येवं शीलो भवतीति प्रथमः १। तथा-एकः पुरुषः पूर्णः सन्नपि धनश्रुतादिसहितत्वात्, तुच्छावभासी-धनश्रुतादिहीन वदवभासनशीलो भवतीति द्वितीयः २। तथा-एक स्तुच्छोऽपि-धनश्रुतादि रहि-

---

पुनश्च—"चत्तारि कुंभा" इत्यादि—कुम्भ चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे-एक कुम्भ ऐसा होता है जो सम्पूर्ण अवयवोंसे अथवा दही आदिसे पूर्ण होता हुआ-पूर्णावभासी दर्शकजनोंकी दृष्टिमें पूर्णही है ऐसा प्रतीत होता है १। एक कुम्भ ऐसा होता है जो पूर्ण होने पर भी किसी कारणवश उसमें अभिप्रेत-इष्ट अर्थकी साधकता नहीं होनेसे तुच्छावभासी वह तुच्छकी तरह प्रतीत होता है २ इसी तरहसे शेष दो भंग भी समझ लेना चाहिये ४ "एवं चत्तारि पुरिसजाया" इसी प्रकारसे पुरुषजात चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो धन श्रुत आदिसे पूर्ण होता हुआ-धन श्रुत आदिके विनियोगसे-व्ययसे पूर्णावभासी पूर्णहीहै ऐसा प्रतीत होता रहताहै१।कोई एक पुरुष ऐसा होता है, जो पूर्ण होता हुआ भी धनश्रुत आदिसे सहित होता हुआ भी धनश्रुत

"चत्तारि कुंभा" ઇત્યાદિ—કુંભના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે. (૧) કોઇ એક કુંભ એવો હોય છે કે જે સમસ્ત અવયવોથી સંપન્ન હોય છે અથવા દહીં આદિથી પૂર્ણ હોય છે અને પૂર્ણાવભાસી પણ હોય છે એટલે કે દર્શકોની દૃષ્ટિએ પણ તે પૂર્ણ જ લાગે છે. (૨) કોઈ એક કુંભ પૂર્ણ હોવા છતાં પણ તુચ્છાવભાસી હોય છે, એટલે કે તેમાં ભરેલુ દ્રવ્ય કોઈ કારણે નજરે નહીં પડતુ હોવાથી તે કુંભ ખાલી જ હોવાનો ભાસ થાય છે. એ જ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગા પણ સમજી લેવા.

"एवं चत्तारि पुरिसजाया" ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ પુરુષ એવા પ્રકારના હોય છે કે તેઓ ધનશ્રુત આદિથી પૂર્ણ (સંપન્ન) હોય છે અને ધનશ્રુત આદિના વિનિયોગથી પૂર્ણાવભાસી-પૂર્ણ જ છે એવું દર્શકોને લાગે છે (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ધનશ્રુત આદિથી પૂર્ણ હોવા છતાં પણ તુચ્છાવભાસી-ધનશ્રુત આદિથી

तोऽपि केनापि प्रकारेण प्रसङ्गोचितप्रवृत्तेः पूर्णावभासी–पूर्ण इवावभासत इत्येवं शीलो भवतीति तृतीयः ३। तथा–एकस्तुच्छो धनश्रुतादिसहितो भवतीति धनश्रुतादिसहितत्वात् तुच्छावभासी–तुच्छ एवावभासत इत्येवं शीलो भवतीति चतुर्थः ४।

"चत्तारि कुंभा" इत्यादि—पुनः कुम्भाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–एकः कुम्भः पूर्णः–जलादिना भृतो भवति स पुनः पूर्णरूपं–पूर्णं रूपं यस्य स तथा–अविकलसंस्थानकः, यद्वा–पुण्यरूपः शोभनसंस्थानको भवतीति प्रथमः १, तथा–एकः पूर्णोऽपि सन तुच्छरूपः–हीनाऽऽकारो भवतीति द्वितीयः २ एवं शेषभङ्गद्वयं बोध्यम् ।४।

आदिसे हीनकी तरह प्रतीत होता है २ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो तुच्छ होने पर भी–धनश्रुन आदिसे रहित होने पर भी किसी प्रकारसे प्रसङ्गोचित प्रवृत्तिसे पूर्णावभासी पूर्णकी तरह प्रतीत होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो तुच्छ धन श्रुतादिसे रहित होता है और तुच्छावभासी तुच्छकी तरहही प्रतीन होता है ४

फिरभी—"चत्तारि कुंभा" इत्यादि–कुम्भ चार प्रकारके कहे गये हैं–जैसे–एक कुम्भ ऐसा होता है जो जलादिसे भरा हुआ होता है और पूर्ण रूपवाला–अविकल संस्थानवाला होता है यद्वा–पुण्य रूपवाला शोभन–संस्थानवाला होता है १। एक कुम्भ ऐसा होता है–पूर्ण होता हुआ भी तुच्छरूपवाला–हीन आकारवाला होता है २ इसी प्रकारसे शेष दो भंग भी समझ लेना चाहिये ४

રહિત જ હોય એવો લાગે છે. (૩) કોઇ એક પુરુષ ધનશ્રુત આદિથી રહિત હોવાને કારણે તુચ્છ હોય છે; પરન્તુ પ્રસંગોચિત પ્રવૃત્તિને કારણે પૂર્ણાવભાસી લાગે છે એટલે કે ધનશ્રુત આદિથી સંપન્ન લાગે છે. (૪) કોઇ એક પુરુષ તુચ્છ (ધનશ્રુત આદિથી રહિત) હોય છે અને તુચ્છાવભાસી જ લાગે છે એટલે કે લોકો પણ તેને ધનશ્રુત આદિથી રહિત જ લાગે છે.

"ચત્તારિ કુંભા" કુંભના આ પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર પડે છે–(૧) કોઇ એક કુંભ જલાદિથી પણ પૂર્ણ હોય છે અને પૂર્ણ રૂપવાળો સંપૂર્ણ (અવિકલ–અખંડિત) સંસ્થાનવાળો હોય છે અથવા પુણ્ય રૂપવાળો સુંદર આકારવાળો હોય છે. (૨) કોઈ એક કુંભ દહીં આદિથી પૂર્ણ હોવા છતાં પણ તુચ્છ રૂપવાળો અસુંદર આકારવાળો હોય છે. એ જ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગા પણ સમજી લેવા.

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव-कुम्भवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषो ज्ञानादिना पूर्णः सन् पूर्णरूपः पुण्यरूपो वा भवति विशिष्टरजोहरणादिद्रव्यलिङ्गसम्पन्नत्वात्, स च सुसाधुरिति प्रथमः १। तथा-एकः पूर्णः सन् राजादिकारणवशात् तुच्छरूपः-त्यक्तलिङ्गो भवति सच साधुरेवेति द्वितीयः २। तथा-एकस्तुच्छो-ज्ञानादि विरहितोऽपि सन् पूर्णरूपः पुण्यरूपो वा भवति, साधुलिङ्गसम्पन्नत्वात्, स च निह्नवादिरिति तृतीयः ३। तथा-एकस्तुच्छः-ज्ञानादि रहितः सन् तुच्छरूपः-द्रव्यलिङ्गरहितो भवति स च गृहस्थादिरिति चतुर्थः। ४।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—इसी प्रकारसे पुरुष-जात चार कहे गये हैं-इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो ज्ञाना-दिसे पूर्ण होता है और पूर्ण रूपवाला या पुण्यरूपवाला होता है, अर्थात् विशिष्ट रजोहरणादि रूप द्रव्यलिङ्गसे सम्पन्न होनेके कारण पुण्य-रूपवाला होता है ऐसा वह पुरुष साधु होताहै १। तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पूर्ण होता है पर राजा आदिरूप कारणके वशसे तुच्छ रूप त्यक्त लिङ्ग-छोड़ दिया है लिङ्ग-वेष जिसने ऐसा हो जाता है जो तुच्छ-ज्ञानादिसे रहित हुआ भी पूर्णरूप या साधुलिङ्गसे युक्त होनेसे पुण्यरूप होता है, ऐसा वह निह्नवादि होता है ३ तथा-कोई एक ऐसा होता है जो तुच्छ-ज्ञानादिसे रहित होता है और तुच्छरूप-द्रव्यलिङ्गसे भी रहित होता है ऐसा वह गृहस्थ आदि होता है ४

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે જ્ઞાનાદિથી સંપન્ન પણ હોય છે અને પૂર્ણ રૂપવાળો—અથવા પુણ્ય રૂપવાળો હોય છે, એટલે કે રજોહરણ, મુખવસ્ત્રિકા આદિ રૂપ દ્રવ્યલિંગથી પણ સંપન્ન હોવાને કારણે પુણ્ય રૂપવાળો હોય છે. એવા પુરુષમાં સાધુને ગણાવી શકાય છે (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે જ્ઞાનાદિથી પૂર્ણ તો હોય છે પણ પુણ્યરૂપ હોતો નથી-તુચ્છ રૂપ હોય છે. એટલે કે રાજાદિના ભયને કારણે જેણે પોતાના સાધુ વેષનો પરિત્યાગ કર્યો છે એવા પુરુષને અહીં તુચ્છ રૂપવાળો કહ્યો છે. (૩) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે જ્ઞાનાદિથી રહિત હોવા છતાં પણ પૂર્ણરૂપ હોય છે અથવા સાધુના વેષથી યુક્ત હોવાને કારણે પુણ્ય રૂપ હોય છે નિહ્નવાદિને આ પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે (૪) કોઇ એક પુરુષ તુચ્છ અને તુચ્છરૂપ હોય છે, એટલે કે જ્ઞાનાદિથી રહિત હોવાને કારણે તુચ્છ હોય છે અને દ્રવ્યલિંગ (રજોહરણ આદિ સાધુની ઉપધિ) થી રહિત હોવાથી તુચ્છરૂપ હોય છે. ગૃહસ્થને આ પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે.

'चत्तारि कुंभा इत्यादि—पुनः कुम्भाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एकः कश्चित् कुम्भः पूर्णः=जलादिना भृत सन् प्रियार्थः—प्रियशब्दस्य भावप्रधाननिर्देशत्वात्प्रियत्वमर्थः, तेन प्रियत्वार्थः-प्रीत्यर्थो भवति स्वर्णादिमयत्वपूर्णत्वसारसम्पन्नत्वादिति प्रथमः । १ । तथा-एकः पूर्णोऽपि=पूर्णः सन्नपदलः—कुत्सितमृत्तिकादिद्रव्यनिर्मितः, यद्वा—अवदल.=अवदल्यते-विदीर्यते इत्यवदलः—स्वल्प पक्वतया सोऽसारो भवतीति द्वितीयः २ । तथा—एकस्तुच्छः कुम्भः प्रियार्थः—प्रीत्यर्थो भवति कनकादिमयत्वेन सारत्वादिति तृतीयः ।३। तथा—एक स्तुच्छोऽपि अपदलो भवतीति चतुर्थः । ४ ।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव—कुम्भवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः—कश्चित् पुरुषो धनश्रुतादिभिः पूर्णः सन्

पुनश्च—"चत्तारि कुंभा" इत्यादि—कुंभ चार प्रकारके होते हैं जैसे-कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो पूर्ण होता है जलादिसे भरा होता है और प्रियार्थ होता है यहां प्रिय शब्द भावप्रधान निर्देशवाला है इसलिये वह प्रियत्वार्थ स्वर्णादिमय होनेसे और सारसंपन्न होनेसे प्रीतिके लिये होता है १ कोई एक कुंभ ऐसा होता है जो पूर्ण हुआ भी अपदल होता है—खराब मिट्टी आदिका बना हुआ होता है यद्वा—अवदल होता है—स्वल्प पका हुआ होनेसे असार होता है २ कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो तुच्छ होता हुआ भी प्रियार्थ प्रीत्यर्थ होता है क्योंकि ऐसा घट सुवर्ण आदिका बना होनेसे सारवाला होता है ३ तथा कोई एक घट ऐसा होताहै जो तुच्छ होताहै और अवदल होता है४

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—इसी तरहसे पुरुषजात

"चत्तारि कुंभा" ઈત્યાદિ—કુંભના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક કુંભ પૂર્ણ (જલાદિથી ભરેલો) હોય છે અને પ્રિયાર્થ (પ્રીતિજનક) હોય છે, એટલે કે સુવર્ણ આદિથી નિર્મિત હોવાથી અને સારસંપન્ન હોવાથી પ્રિય લાગે તેવો હોય છે. અહીં "પ્રિય" શબ્દ ભાવપ્રધાન નિર્દેશવાળો છે. (૨) કોઈ એક કુંભ પૂર્ણ હોવા છતાં પણ અપદલ હોય છે—ખરાબ માટી આદિમાંથી બનેલો હોય છે, અથવા અવદલ હોય છે એટલે કે પૂરેપૂરો પાકેલો નહીં હોવાથી અસાર હોય છે (૩) કોઈ એક કુંભ પૂર્ણ નહીં હોવાને કારણે તુચ્છ હોય છે, પણ સુવર્ણ આદિનો બનાવેલો હોવાને કારણે સારયુક્ત હોવાથી પ્રીતિજનક હોય છે. (૪) કોઈ એક કુંભ તુચ્છ પણ હોય છે અને અપદલ અથવા અવદલ પણ હોય છે.

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" ઈત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે પુરુષોના પણ

प्रियार्थः=प्रियवचनदानादिभिः प्रीतिजनको भवतीति प्रथमः । १ । तथा-एकः पुरुषः पूर्णोऽपि अपदलः=परोपकारं प्रत्ययोग्यो भवतीति द्वितीयः । २ । तथा-एकस्तुच्छोऽपि-ज्ञानादिविहीनोऽपि प्रियार्थः-प्रीत्यर्थी भवति परोपकारपरायणत्वादिति तृतीयः ।३। तथा-एकस्तुच्छोऽपि अपदलो भवतीति चतुर्थः ।४।

" तहेव चत्तारि कुंभा " इत्यादि—तथैव-पूर्ववदेव कुम्भाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः-कश्चित् कुम्भः पूर्णोऽपि=जलादिना भृतः विष्यन्दते=स्रवति सच्छिद्रत्वादिति प्रथमः ।१। तथा-एकः पूर्णोऽपि नो विष्यन्दते-न स्रवति निश्छिद्रत्वात् इति द्वितीयः ।२। तथा-एकस्तुच्छः-तुच्छः-तुच्छजलादियुक्तो भवति,

---

भी चार होते हैं-जैसे-कोई एक पुरुष ऐसा है जो धनश्रुत आदिसे पूर्ण होता है और प्रियार्थ प्रियवचन आदिसे प्रीतिजनक होता है १ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पूर्ण होता है पर वह परोपकारके प्रति अयोग्य होता है २ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो तुच्छ होता है ज्ञानादिसे हीन होता है फिर भी प्रीत्यर्थ परोपकारपरायण होता है ३ और कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो तुच्छ भी होता है और अपदल भी होता है परोपकारके प्रति अयोग होता है ४

" तहेव चत्तारि कुंभा " इत्यादि—पहिलेकी तरहसेही कुम्भ चार प्रकारके होते हैं-इनमें कोई एक कुम्भ ऐसा होता है पूर्ण-जलादिसे भरा होता है पर वह छिद्रसहित होनेसे चूताहै १ कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो जलादिसे भरा होताहै पर वह निश्छिद्र रहित होनेसे चूता नहीं है २ कोई एक घट ऐसा होता है जो तुच्छ थोडेसे जलादिसे भरा

ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ધનશ્રુત આદિથી પૂર્ણ હોય છે અને પ્રિયાર્થ પણ હોય છે એટલે કે પ્રિયવચન આદિને લીધે પ્રીતિજનક પણ હોય છે. (૨) કોઈ એક પુરુષ ધનશ્રુત આદિથી પૂર્ણ હોય છે પણ પરોપકારી નહીં હોવાથી પ્રિયાર્થ હોતો નથી. (૩) કોઇ એક પુરુષ ધન આદિથી પૂર્ણ હોતો નથી પણ પ્રીત્યર્થ-પરોપકાર પરાયણ હોય છે. (૪) કોઇ એક પુરુષ તુચ્છ (જ્ઞાનાદિથી રહિત) પણ હોય છે અને અપદલ (પરોપકારી વૃત્તિથી રહિત) પણ હોય છે.

" તહેવ ચત્તારિ કુંભા " ઇત્યાદિ—કુંભના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ એક કુંભ જલાદિથી પૂર્ણ હોય છે પણ તેમાં છિદ્ર પડેલું હોવાથી તેમાંથી પાણી જલાદિ ઝમતું હોય છે. (૨) કોઈ એક કુંભ જલાદિથી પૂર્ણ હોય છે અને છિદ્રરહિત હોય છે તેથી તેમાથી પાણી ટપકતું નથી. (૩) કોઇ એક કુંભ તુચ્છ-થોડા જલાદિથી ભરેલો હોય છે, છતાં છેદયુક્ત

स एव विष्यन्दते-स्रवतीति तृतीयः ।३। तथा-एकस्तुच्छः न विष्यन्दते-नं स्रवतीति चतुर्थः ।४।

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि— एवमेव-कुम्भवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः पूर्णः सन् विष्यन्दते-धनं यद्वा-श्रुतं ददातीति प्रथमः १ तथा-एकः पूर्णोऽपि-धनश्रुत-सम्पन्नोऽपि नो विष्यन्दते-धनं श्रुतं वा न ददातीति द्वितीयः ।२। तथा-एकस्तुच्छोऽपि अल्पधनश्रुतोऽपि विष्यन्दते- धनं श्रुतं वा ददातीति तृतीयः ।३। तथा-एकस्तुच्छः सन् धनं श्रुतं वा न विष्यन्दते=न ददातीति चतुर्थः ।४।

हुआ होता है फिर भी वह चूता है ३ और कोई घट ऐसा होता है जो तुच्छ-थोडेसे जलादिसे भरे होने पर चूता नहीं है ४

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—इसी तरहसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं-जैसे-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पूर्ण होता है और धनको या श्रुतको दूसरोंके लिये होता है-धनश्रुत आदिसे संपन्न होता है फिर भी दूसरोंके लिये धन या श्रुत नहीं होता है २ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो तुच्छ-अल्प धन तथा श्रुतवाला होता है फिर भी दूसरोंकी भलाईके लिये धन या श्रुतको देता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा है जो तुच्छ होता है और अपने धन या श्रुतको दूसरोंके लिये नहीं देता है ४

હોવાથી તેમાંથી પાણી ટપકતું હોય છે. (૪) કોઇ એક કુંભ એવો હોય છે કે જે થોડા પાણીથી ભરેલો હોય છે પણ છેદ વિનાનો હોય છે, તેથી તેમાંથી પાણી ટપકતું નથી.

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ધનશ્રુત આદિથી પૂર્ણ હોય છે અને તેના ધન, જ્ઞાન આદિનો અન્યના હિત માટે ઉપયોગ કરે છે. (૨) કોઇ એક પુરુષ ધનાદિથી પૂર્ણ હોય છે પણ અન્યના હિતને માટે તેના તે ધન આદિનો ઉપયોગ કરતો નથી. (૩) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે તુચ્છ હોય છે. અલ્પ ધન કે શ્રુતવાળો હોય છે, પણ અન્યના હિતને માટે તેનો ઉપયોગ કરે છે. (૪) કોઇ એક પુરુષ અલ્પ ધન, શ્રુત આદિથી સંપન્ન હોવાને કારણે તુચ્છ હોય છે અને તે ધનાદિનો અન્યના હિતને માટે ઉપયોગ કરનારો હોતો નથી.

"तहेव चत्तारि कुंभा" इत्यादि—तथैव=कुम्भाः पुनश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-भिन्नः-स्फुटितः १, तथा-जर्जरितः-राजीयुक्तः २, तथा-परिस्रावी-क्षरणशीलोऽसम्यक्पक्वत्वात् ३, तथा-अपरिस्रावी-अक्षरणशीलः सुपक्वत्वेन दृढत्वादिति ४।

"एवामेव चउव्विहे चरित्ते" इत्यादि- एवमेव-कुम्भवदेव चारित्रं चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-भिन्नं-खण्डितं मूलप्रायश्चित्ताऽऽपत्त्या १, यावत्पदेन 'जर्जरितं, परिस्रावि' इत्युभयं ग्राह्यम्, तत्र जर्जरितं-छेदादि प्राप्त्या २,

---

"तहेव चत्तारि कुम्भा" इत्यादि—पहिलेकी तरहसेही कुम्भ चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे-कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो भिन्न फूटा होता है १ कोई एक ऐसा होता है जो जर्जरित राजीयुक्त (लाख आदिसे) चिपकाकर ठीक होता है, बहुत पुराना होता है २ कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो परिस्रावी होता है, अच्छी तरहसे पका हुआ न होनेसे क्षरणशील होता है ३ तथा कोई एक घट ऐसा होता है जो अपरिस्रावी-अच्छी तरहसे पका हुआ होनेसे मजबूतीके कारण क्षरणशील नहीं होता है ४.

"एवामेव चउव्विहे चरित्ते" इत्यादि-इसी तरहसे चारित्र भी चार प्रकारका होता है-इनमें कोई एक चारित्र ऐसा होताहै, भिन्न होता है मूल प्रायश्चित्तकी प्राप्तिसे खण्डित होताहै १। यहां यावत्पदसे-"जर्जरित और परिस्रावी" इन दो पदोंका ग्रहण हुआ है। तथा कोई एक चारित्र ऐसा होता है जो छेदादि प्राप्तिसे जर्जरित होता है २। कोई एक

"तहेव चत्तारि कुंभा" ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે કુંભના આ ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક કુંભ એવો હોય છે કે ફૂટેલો હોય છે (૨) કોઇ એક કુંભ એવો જર્જરિત અને પુરાણો થઇ ગયો હોય છે કે તેને સ્થળે સ્થળે લાપી, લાખ આદિ વડે સાંધીને ઉપયોગમાં લેવા યોગ્ય કર્યો હોય છે. (૩) કોઇ એક કુંભ પરિસ્રાવી હોય છે એટલે કે બરાબર પકવેલો ન હોવાથી તેમાંથી પાણી ઝમતું હોય છે. (૪) કોઈ એક કુંભ અપરિસ્રાવી હોય છે એટલે કે સારી રીતે પકવેલો અને રીઢો હોવાથી તેમાંથી પાણી ઝમતું નથી.

"एवामेव चउव्विहे चरित्ते" ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે ચારિત્ર પણ ચાર પ્રકારનું હોય છે. (૧) ભગ્ન ઘડા જેવું-કોઇ ચારિત્ર એવું હોય છે કે જે ભિન્ન થાય છે-મૂળ પ્રાયશ્ચિત્તની પ્રાપ્તિથી ખંડિત થાય છે. (૨) કોઇ એક ચારિત્ર

परिस्रावि-सूक्ष्मातिचारत्वेन ३, तथा-अपरिस्रावि-क्षरणरहितं निरतिचारतयेति ४। इह पुरुषाधिकारेऽपि पुरुषस्य चारित्ररूपधर्मप्रतिपादनं धर्म-धर्मिणोः कथञ्चिदभेदाभ्युपगमात्।

"चत्तारि कुंभा" इत्यादि—पुनः कुम्भाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको कुम्भो मधुकुम्भःमधुन आधारभूतः कुम्भो मधुकुम्भः=मधुपूर्णः सन् मधुपिधानः मध्वेव पिधानमाच्छादनं यस्य स तथा-मधुभृतपात्रपिधानो वा भवतीति प्रथमः। १। तथा-एकः कुम्भो मधुकुम्भः सन् विषपिहितो भवतीति द्वितीयः। २। तथा-एको विषकुम्भो मधुपिधानो भवतीति तृतीयः ३। तथा-एको विषकुम्भः सन् विषपिधानो भवतीति चतुर्थः ४।

चारित्र ऐसा होता है सूक्ष्म अतिचारसे परिस्रावी होताहै ३। और कोई एक चारित्र ऐसा होता है जो अपरिस्रावी निरतिचारवाला होनेसे परिस्रावी नहीं होता है ४। यहां पुरुषाधिकारमें भी पुरुषके चारित्ररूप धर्मका जो प्रतिपादन किया गया है वह धर्म और धर्मीमें कथंचित् अभेद है इस मान्यताको लेकर किया गया है

"चत्तारि कुंभा" इत्यादि—पुनश्च—कुम्भ चार प्रकारके कहे गये हैं—जैसे-कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो मधुका आधारभूत होनेसे मधुकुम्भ हो जाताहै और उसका ढक्कन भी मधुका-शहद ही होताहै-अथवा-मधुसे भरा हुआ पात्र उसका ढक्कन होताहै १। कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो मधुकुम्भ होता हुआ भी विषके ढक्कनसे ढका हुआ होता है २। कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो विषसे भरा हुआ

એવું હોય છે કે જે છેદાદિની પ્રાપ્તિથી જર્જરિત થાય છે (૩) કોઈ એક ચારિત્ર એવું હોય છે કે જે સૂક્ષ્મ અતિચાર વડે પરિસ્રાવી હોય છે. (૪) કોઈ એક ચારિત્ર અપરિસ્રાવી હોય છે એટલે કે નિરતિચારવાળું હોવાથી પરિસ્રાવી હોતું નથી. અહીં પુરુષનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે, છતાં પણ અહીં ચારિત્ર રૂપ ધર્મનું જે પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યુ છે તે ધર્મ અને ધર્મીમાં અભેદ માનીને કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું.

"ચત્તારિ કુંભા" ઈત્યાદિ—કુંભના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક કુંભ એવો હોય છે કે જેમાં મધ ભરવામાં આવતું હોવાથી તેને મધુકુંભ કહેવામાં આવે છે, અને તેનું ઢાંકણુ પણ મધનું જ હોય છે એટલે કે મધથી ભરેલુ પાત્ર તેના ઢાંકણા રૂપ હોય છે (૨) કોઈ એક કુંભમાં મધ ભરેલું હોય છે પણ તેના ઢાંકણા રૂપે વિષથી ભરેલું પાત્ર મૂકેલું હોય છે. (૩) કોઈ એક કુંભ એવો હોય છે કે જે વિષથી પૂર્ણ હોય

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि – एवमेव-उक्तकुम्भवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–मधुकुम्भो नामैको मधुपिधानः १, मधुकुम्भो नामैको विषपिधानः २, विषकुम्भो नामैको मधुपिधानः ३, विषकुम्भो नामैको विषपिधानः ४। एतद्भङ्गचतुष्टयस्यार्थं गाथाचतुष्टयेन विशदयति– "हियमपाव" मित्यादि, आसां मूलोक्तानां चतसृणां गाथानां व्याख्या सुगमा ॥सू० २४॥

होताहै, और मधुके पिधान–ढक्कनवाला होताहै ३। तथा कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो विषसेही भरा रहता है और विषकेही ढक्कनवाला होता है ४

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–इसी तरहसे पुरुषजात भी चार कहे गये हैं–जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होताहै, जो मधुकुम्भके जैसा होता है, और मधुपिधान-ढकनवाला होता है १। कोई एक पुरुष ऐसा होनाहै–जो मधुकुम्भ जैसा होता हुआ भी विष पिधानवाला होना है २। कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो विषकुम्भ जैसा होता हुआ भी मधुपिधानवाला होता है ३। और कोई एक पुरुष ऐसा होताहै, जो विष-कुम्भ जैसा होता है और विषपिधानवाला होना है इन चार भङ्गोंका अर्थ 'हिययमपावमकलुसं' इन गाथाओं द्वारा इस प्रकारसे विशद किया गया है–जिस पुरुषका हृदय पापरहीत और कलुषताहीन होताहै, और जिह्वा जिसकी मधुरभाषिणी होती है वह पुरुष मधु पिधानवाले मधु-कुम्भके जैसा कहा गया है १ हिययमपावमकलुसं जीहावि इत्यादि जिसका हृदय पापविहीन और कलुषताहीन होताहै परन्तु जिह्वा जिसकी कटुकभाषिणी होतीहै वह विषपिधानवाले मधुकुम्भके जैसा कहा

છે, પણ મધથી ભરેલું પાત્ર તેના પર ઢાંકણા રૂપે રહેલુ હોય છે. (૪) કોઈ એક કુંભ વિષથી ભરેલો હોય છે, અને તેનું ઢાંકણું પણ વિષપૂર્ણ પાત્ર જ હોય છે.

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" ઈત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. (૧) કોઈ એક પુરુષ મધુકુંભ સમાન હોય છે અને મધુપિધાન (મધુયુક્ત ઢાંકણાવાળો) વાળો હોય છે. જે પુરુષનું હૃદય પાપ-હીન અને કલુષતાહીન હોય છે અને જેની જીભ મધુરભાષિણી હોય છે એવા પુરુષને મધુપિધાનયુક્ત મધુકુંભ સમાન ગણવામાં આવે છે

(૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે મધુકુંભ સમાન હોવા છતાં પણ વિષપિધાનવાળો હોય છે. જે માણસનું હૃદય પાપહીન અને કલુષતાહીન હોય છે, પણ જેની વાણી કડવી અથવા અપ્રિય લાગે છે એવા પુરુષને વિષપિધાનવાળો મધુકુંભ સમાન કહ્યો છે.

पूर्वं विपकुम्भो विपपिधानः पुरुप उक्तः सचोपसर्गकारीति उपसर्गानभि-रूपयितुमाह—

मूलम्—चउव्विहा उवसग्गा पण्णत्ता, तं जहा--दिव्वा १, माणुसा २, तिरिक्खजोणिया ३, आयसंचेयणिज्जा ४।

दिव्वा उवसग्गा चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा--हासा १ पाओसा २, वमिंसा ३, पुढोवेमाया ४।

माणुस्सा उवसग्गा चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा—हासा १, पाओसा २, वीमंसा ३, कुसीलपडिसेवणया ४।

तिरिक्खजोणिया उवसग्गा चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा—भाया १, पाओसा २, आहारहेउया ३, अवच्चलेणसारक्खणया ४।

आयसंचेणिज्जा उवसग्गा चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा—घट्टणया, १, पवडणया २, थंभणया ३, लेसणया ४। ॥सू० २५॥

चतुर्विधा उपसर्गाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—दिव्याः १, मानुषाः २, तैर्यग्योनिकाः ३, आत्मसंचेतनीयाः ४। (१)

दिव्या उपसर्गाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा हासाः१, प्राद्वेपाः २, वैमर्शाः ३, पृथग्विमात्राः ४। (२)।

गया है २। जं हिययं इत्यादि, जिसका हृदय कलुषतासे भरा होता है, परन्तु जो मीठा बोलता है ऐसा वह पुरुष विषकुम्भके जैसा मधु-पिधानवाला कहा गयाहै३। जं हिययकलुससयं इ. तथा—जिसका हृदय कलुषतासे भरा होताहै, और जीभ भी जिसकी कटुकभाषिणी होतीहै ऐसा, वह पुरुष विष पिधानवाले विषकुम्भके जैसा कहा गयाहै४॥सू०२४॥

---

(૩) કોઈ એક પુરુષ વિષકુંભ સમાન હોય છે, પણ મધુપિધાનવાળો હોય છે. જે માણુસનું હૃદય કલુષતાથી પૂર્ણ હોય છે પણ જેની વાણી મીઠી હોય છે એવા પુરુષને મધુપિધાનવાળા વિષકુંભ સમાન કહ્યો છે.

(૪) કોઈ એક પુરુષ વિષકુંભ સમાન હોય છે અને વિષપિધાનવાળો હોય છે. એટલે કે જેનું હૃદય પણ કલુષતાથી ભરેલું હોય છે અને જેની જીભ પણ કડવી વાણી બોલનારી હોય છે એવા પુરુષને વિષપિધાનવાળા વિષકુંભ સમાન કહેવામાં આવ્યો છે ॥ સૂ૦ ૨૪ ॥

मानुषा उपसर्गाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा हासाः १, प्राद्वेषाः २, वैमर्शाः ३, कुशीलप्रतिसेवनकाः ४।

तिर्यग्योनिका उपसर्गाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-भायाः १, प्राद्वेषाः २, आहारहेतुकाः ३, अपत्यलयनसंरक्षणकाः ४।

आत्मसंचेतनीया उपसर्गाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-घट्टनकाः १, प्रपतनकाः २, स्तम्भनकाः ३, श्लेषणकाः ४ ॥ सू० २५ ॥

टीका—"चउव्विहा उवसग्गा" इत्यादि—उपसर्जनानि-उपसर्गाः-यद्वा-उपसृज्यते=धर्मात् प्रच्याव्यते जीव एभिरित्युपसर्गाः=उपद्रवविशेषाः, ते च कर्तृभेदाच्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, आह च—

"उवसज्जणमुवसग्गो जेण जओ य उवसिज्जए जम्हा।
सो दिव्वमणुय-तेरिच्छ आयसंवेयणाभेओ ॥ १ ॥

छाया—उपसर्जनमुपसर्गः येन यतश्चोपसृज्यते यस्मात्।
स दिव्य-मानुज-तैरश्चा-ऽऽत्म संवेदनाभेदः ॥ १ ॥ इति,

तद्यथा-दिव्याः-देवसम्बन्धिनः १, तथा-मानुषाः-मनुष्यसम्बन्धिनः २,

---

'चउव्विहा उवसग्गा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र २५ ॥

टीकार्थ-उपसर्ग चार प्रकारके कहे गयेहैं जैसे-दिव्य १ मानुष २ तिर्यग्योनिक ३ और आत्मसंचेतनीय ४ जीव जिनके द्वारा श्रुतचारित्ररूप धर्मसे चलायमान कर दिया जाताहै, वे उपसर्ग हैं। ये उपसर्ग उपद्रव-विशेषरूप होते हैं, यहां कर्त्ताके भेदसे इन्हें चार प्रकारका कहा गया है उक्तं च—"उवसज्जणमुवसग्गो" इत्यादि-इसका अर्थ स्पष्ट है। जो उपसर्ग देवों द्वारा किया जाता है वह दिव्य उपसर्ग है १ मनुष्यों द्वारा जो उपसर्ग किया जाता है वह मानुष उपसर्ग है २ जो उपसर्ग तिर्यञ्च जीवों द्वारा किया जाता है वह तिर्यञ्च संबन्धी उपसर्ग

"चउव्विहा उवसग्गा पण्णत्ता" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ-ઉપસર્ગના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) દિવ્ય-દેવકૃત, (૨) માનુષી-મનુષ્ય-કૃત, (૩) તિર્યગ્યોનિક (તિર્યંચ કૃત) (૪) આત્મ સંચેતનીય (સ્વકૃત) જીવ જેના દ્વારા શ્રુત ચારિત્ર રૂપ ધર્મમાંથી ચલાયમાન કરાય છે તેને ઉપ-સર્ગ ઉપદ્રવ વિશેષ રૂપ હોય છે. અહીં કર્તાના ભેદની અપેક્ષાએ તેમના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. કહ્યુ પણ છે કે-"ઉવસજ્જણમુવસગ્ગો" ઈત્યાદિ તેનો અર્થ સ્પષ્ટ છે. જે ઉપસર્ગ દેવના દ્વારા કરવામાં આવે છે, તેને દિવ્ય ઉપ સર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ મનુષ્યો દ્વારા કરવામાં આવે છે તેને માનુષી

तथा-तैर्यग्योनिकाः-तिर्यक्सम्बन्धिनः३, तथा-आत्मसंचेतनीयाः-आत्मना स्वेन संचेत्यन्ते-क्रियन्त इत्यात्मसंचेतनीयाः आत्मसम्बन्धिनः ४।

तत्र—'दिव्वा उवसग्गा' इत्यादि—दिव्या उपसर्गाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-हासाः-हासेन-हास्येन निर्वृत्ता हासाः, यद्वा-हासाज्जाता हासाः १, तथा-प्राद्वेषाः-प्रद्वेषो-विप्रियम्, तस्माज्जाताः २, तथा-वैमर्शाः-विमर्शो विचारः धैर्यपरीक्षारूपः, तस्माज्जाताः-वैमर्शाः३, तथा-पृथग्विमात्राः-पृथग्-भिन्ना मात्रा= हासादिवस्तुलक्षणा येषूपसर्गेषु ते पृथग्विमात्राः ४।

तत्र-हासा उपसर्गाः प्रसिद्धाः १, प्राद्वेषा-यथा-सङ्गमको देवो भगवतो महावीरस्योपसर्गानकार्षीत् २, वैमर्शा यथा-क्वचिद् व्यन्तरायतने स्वकर्मनिर्ज

है ३ और जो उपसर्ग स्वयं से किया जाता है वह आत्मसंचेतनीय उपसर्ग है४। इनमें जो दिव्य उपसर्ग है वे चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-हास १ प्राद्वेष २ वैमर्श ३ और पृथग्विमात्र ४ जो उपसर्ग हास्यसे निर्वर्तित होते हैं-वे अथवा जो हास्य के द्वारा उत्पन्न होते हैं वे उपसर्ग हास हैं १। जो उपसर्ग प्रद्वेषसे - उत्पन्न होते हैं वे प्राद्वेष उपसर्ग हैं २। जो उपसर्ग धैर्य परीक्षा करनेरूप विचारसे उत्पन्न होते हैं-किये जातेहैं-वे वैमर्श उपसर्गहैं। तथा-जिन उपसर्गोंमें हासादि रूप मात्रा अलग २ रहती है वे पृथग्विमात्रा उपसर्ग हैं ४ इनमें जो हास उपसर्ग है वह तो प्रसिद्धहीहै। प्राद्वेष उपसर्ग ऐसे होते हैं कि जैसे-उपसर्ग संगमदेवने भगवान् महावीर पर किये थे वैमर्श उपसर्ग ऐसे होते हैं कि जैसे-कोई मुनि किसी व्यन्तरके स्थान पर

ઉપદ્રવ—ઉપસર્ગ કહે છે જે ઉપસર્ગ તિર્યંચ જીવો દ્વારા કરવામાં આવે છે તેને તિર્યંચ સંબંધી ઉપસર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ પોતાના દ્વારા જ કરવામાં આવે છે તેને આત્મસંચેતનીય ઉપસર્ગ કહે છે.

દિવ્ય ઉપસર્ગના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) હાસ, (૨) પ્રાદ્વેષ, (૩) વૈમર્શ અને (૪) પૃથગ્વિમાત્ર. જે ઉપસર્ગ હાસ્ય વડે નિર્વર્તિત હોય છે તેમને અથવા હાસ્ય દ્વારા જે ઉપસર્ગ ઉત્પન્ન થાય છે તેમને હાસ-સર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ પ્રદ્વેષ દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે તેમને પ્રાદ્વેષ ઉપસર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ ધૈર્યની કસોટી કરવા માટે કરાય છે તે ઉપ-સર્ગને વૈમર્શ ઉપસર્ગ કહે છે.

જે ઉપસર્ગમાં ઉપહાસ આદિ રૂપ માત્રા અલગ અલગ રહે છે તેને પૃથગ્વિમાત્રા ઉપસર્ગ કહે છે. "હાસ ઉપસર્ગ" તો જાણીતો હોવાથી તેનું વધુ સ્પષ્ટીકરણ અહીં કર્યું નથી. સંગમ દેવે ભગવાન મહાવીર પર જે ઉપસર્ગો કર્યા હતા તેમને પ્રાદ્વેષ ઉપસર્ગો કહી શકાય. વૈમર્શ ઉપસર્ગનું સ્વરૂપ

रार्थं कश्चिन्मुनिः कायोत्सर्गं कृत्वा स्थितः, तदनन्तरं व्यन्तरो देवस्तस्य देवता कीदृशोऽयमिति विचारादुपसर्गानकरोदिति ३।

पृथग्विमात्रा यथा-सङ्गमक एव देवो हासेनोपसर्गान् कृत्वा प्रद्वेषेण चकार, पुनर्विमर्षेण कृत्वा प्रद्वेषेण कृतवानिति ।४। इत्युपसर्गचतुष्टयोदाहरणानि ॥

" माणुस्सा उवसग्गा " इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं-मानुषा हासा उपसर्गा यथा-वेश्यापुत्री क्षुल्लकस्योपसर्गं कृतवती, ततः क्षुल्लको वेश्यादुहितरं दण्डेन ताडयामास, विवादे प्रवृत्ते च राज्ञः पार्श्वे श्रीगृहदृष्टान्तोऽमुना साधुना निवेदित इति १

अपने कर्मोंकी निर्जराके लिये कायोत्सर्ग करके बैठ गया, और उसके बाद वहांका व्यन्तरदेव "यह कैसा धैर्यशाली है" इस बातकी परीक्षाके विचारसे उस पर उपसर्ग करें, तो ऐसे उपसर्ग वैमर्श उपसर्ग कहलाते हैं। पृथग्विमात्रा उपसर्ग ऐसे होते हैं जैसे संगमदेवहीने पहिले हाससे उपसर्गोंको किया, फिर उन्हे प्रद्वेषसे करना शुरू करदिया, पुनः विमर्शसे उपसर्गों करके फिर उसने उन्हे प्रद्वेषसे करना शुरू कर दिया। इस प्रकारसे किये गये ये उपसर्ग पृथग्विमात्र उपसर्ग हैं ये चार उपसर्ग के दृष्टान्त हैं।

मनुष्य सम्बन्धी उपसर्ग भी इसी तरहसे चार प्रकारसेहै-हास, प्राद्वेष, वैमर्श और कुशीलप्रतिसेवनक। इनमें जो मानुष सम्बन्धी हास उपसर्ग हैं वे इस प्रकारके होतेहैं, जैसे वेश्याकी पुत्रीने किसी क्षुल्लकके

આ પ્રકારનું છે. ધારો કે કોઈ મુનિ પોતાના કર્મોની નિર્જરા કરવા માટે કોઇ વ્યન્તરના સ્થાનમાં કાયોત્સર્ગ કરીને બેસી જાય છે ત્યારબાદ તેના ધૈર્યની કસોટી કરવા માટે વ્યન્તર દેવ જુદી જુદી રીતે હેરાન કરીને ચલાયમાન કરવાનો પ્રયત્ન કરે છે આ પ્રકારે તે મુનિને જે ઉપસર્ગો સહન કરવા પડે છે, તે ઉપસર્ગોને વૈમર્શ ઉપસર્ગો કહે છે. પૃથગ્વિમાત્રા ઉપસર્ગનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું હોય છે—

સંગમ દેવે પહેલાં હાસ દ્વારા મહાવીર પ્રભુને પરેશાન કર્યા, ત્યારબાદ પ્રદ્વેષથી ઉપસર્ગ કર્યા, ત્યારબાદ વિમર્શથી ઉપસર્ગો કર્યા વળી પ્રદ્વેષથી કરવા શરૂ કર્યા. આ પ્રકારે જે ઉપસર્ગો કરવામાં આવે છે તેમને પૃથગ્વિમાત્ર ઉપસર્ગ કહે છે. આ પ્રકારના ચારે પ્રકારના દૈવી ઉપસર્ગોના દૃષ્ટાન્તો અહીં આપવામાં આવ્યા છે

મનુષ્યકૃત ઉપસર્ગોના પણ આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર છે—(૧) હાસ, (૨) પ્રાદ્વેષ, (૩) વૈમર્શ અને (૪) કુશીલ પ્રતિસેવનક

હાસ ઉપસર્ગનું દૃષ્ટાન્ત—કોઈ વેશ્યાની પુત્રીએ કોઈ ક્ષુલ્લક ઉપર ઉપ-

तथा-प्राद्वेषा उपसर्गा यथा-सोमिलाख्यब्राह्मणेन गजसुकुमारो व्यपरोपित इति २।

तथा-वैमर्शा यथा-चाणक्यप्रेरितश्चन्द्रगुप्तनृपो धर्म परीक्षितुं सर्वमतानुयायिसाधून् अन्तःपुरे प्रवेश्य तद्द्वारा धर्ममाख्यापयामास अन्यांश्च क्षोभयामास परन्तु जैनमुनीन् क्षोभयितुं नाशक्नोत् इति । ३।

तथा-कुशीलप्रतिसेवनता-कुशीलस्य प्रतिसेवनं येषु ते कुशीलप्रतिसेवनका उपसर्गाः,-व्यधिकरणो बहुव्रीहिः; यथा-कश्चित्साधुः सायंकाले प्रवासगतस्य कस्यचिदीर्ष्यालोर्नरस्य गृहे वासार्थं प्रविष्टः, तत्रेर्ष्यालुस्त्रीचतुष्टयेन समर्पितोऽऽत्रा- सोऽसौ साधुर्निशि प्रत्येकं चतुरोऽपि प्रहरानुपसर्गितो न च क्षोभं गाप्त इति, ४।

उपर उपसर्ग किया, तब उस क्षुल्लकने उसे दण्डेसे ताडित किया। विवाद बढ जाने पर राजाके पास क्षुल्लकने श्रीगृहका दृष्टान्त कहा १। प्राद्वेष उपसर्ग इस प्रकारसे है जैसे-सोमिलल ब्राह्मणने गज सुकुमारको मार दिया २। वैमर्श उपसर्ग इस प्रकारसे है जैसे-चाणक्यसे प्रेरित हुए चन्द्रगुप्त राजाने धर्मकी परीक्षा करनेके लिये सर्व मतके अनुयायी साधुओंको अन्तःपुरमें प्रवेश कराया-बुलाया और प्रवेश कराकर फिर उनसे धर्मका उपदेश कहलवाया तथा बादमें कितनेक साधुओंको उसने क्षुभित कराया। परन्तु वह जैन साधुओंको क्षुभित करानेमें समर्थ नहीं हो सका। जिनमें कुशीलका प्रतिसेवन होता है वे कुशीलप्रतिसेवनक उपसर्ग हैं। वे इस प्रकारके होते हैं जैसे-कोई साधु सायंकालके समय किसी प्रवासगत ईर्ष्यालु व्यक्तिके घर पर ठहरनेके अभिप्रायसे घुस गया

સર્ગ કર્યો. ત્યારે તે ક્ષુલ્લકે તેને લાકડી વડે મારી. તેથી મોટો ઝગડો થયો અને રાજા પાસે ફરિયાદ કરાઈ. ત્યારે ક્ષુલ્લકે રાજાની સમક્ષ શ્રીગૃહનું દૃષ્ટાન્ત કહ્યું.

પ્રાદ્વેષ ઉપસર્ગ—સોમિલ બ્રાહ્મણે જે પ્રકારના ઉપસર્ગ વડે ગજસુકુમારને મારી નાખ્યો, તે પ્રકારના ઉપસર્ગને પ્રાદ્વેષ ઉપસર્ગ કહે છે.

વૈમર્શ ઉપસર્ગનું દૃષ્ટાન્ત—ચાણક્યની પ્રેરણાથી એક વખત ચન્દ્રગુપ્તે સર્વમતના અનુયાયીઓની કસોટી કરી. તેણે તેમને પોતાના અંતઃપુરમાં બોલાવ્યા. ત્યારબાદ તેમની પાસે ધર્મોપદેશ અપાવ્યો. ત્યારબાદ તેણે કેટલાક સાધુઓને ક્ષુભિત કરાવ્યા. પણ જૈન સાધુઓને ક્ષુભિત કરાવવાને તે સમર્થ થયો નહીં. જે ઉપસર્ગો દ્વારા સંયમી આત્માને કુશીલ પ્રતિસેવી બનાવવાનો પ્રયત્ન કરાય છે, તે ઉપસર્ગોને કુશીલ પ્રતિસેવનક ઉપસર્ગો કહે છે જેમકે કોઇ એક સાધુ સાયંકાળે કોઇ એક ગામમાં આવી પહોંચ્યો અને કોઇ એક બહારગામ ગયેલા ઇર્ષ્યાળુ પુરુષના ઘરમાં તેમણે આશ્રય લીધો. તે ઘર માલિકને ચાર સ્ત્રીઓ હતી.

तथा—" तिरिक्खजोणिया उवसग्गा " इत्यादि—स्पष्टम् , नवरं—भायाः—भयाज्जाता भाया उपसर्गाः, ते चोपसर्गाः श्वादिदशनभयजन्याः १, तथा—प्राद्वेषा यथा—चण्डकौशिकाख्यसर्पकृतो महावीरप्रभोर्दंशनोपसर्गः इत्यादिरूपाः २। तथा—आहारहेतुकाः—आहारो—भक्षणमेव हेतुः—कारणं यत्र ते आहारहेतुका उपसर्गाः ते च सिंहादिहिंस्रजन्तुकृताः ३, तथा—अपत्यलयनसंरक्षणकाः—अपत्यस्य—

ईर्ष्यालुकी चार स्त्रियां थी, सो उन्होंने उसे ठहरनेके लिये जगह दे दी सो वह वहां ठहर गया। परन्तु उक्त चारों स्त्रियोंने उस पर रात भर उपसर्ग किये परन्तु यह क्षोभको प्राप्त नहीं हुआ ४।

" तिरिक्खजोणिया उवसग्गा " तिर्यञ्चों द्वारा कृत उपसर्ग चार प्रकारके होते हैं जैसे भाय १ प्राद्वेष २ आहारहेतुक ३ और अपत्यलयनसंरक्षणक ४ जो उपसर्ग भयसे उत्पन्न होते हैं वे भाय उपसर्ग हैं। ऐसे ये उपसर्ग कुत्ता आदिके द्वारा काट खानेके भयसे उत्पन्न होते हैं १। प्राद्वेष उपसर्ग वे हैं जो प्रद्वेषसे उत्पन्न होते हैं जैसे—चण्डकौशिक सर्पने महावीर प्रभुको काटखानेसे किये हैं इत्यादि। जिन उपसर्गोंके होनेमें आहारही हेतु होता है, ऐसे वे उपसर्ग आहार हेतुक होते हैं जैसे—आहारके निमित्त सिंहादि हिंसक जन्तु करतेहैं। जिन उपसर्गोंमें अपत्य—संतानका और लयन—स्थानका संरक्षण करना कारण होताहै

તેમણે તેને ઘરનો અમુક ભાગ ઉતરવા માટે આપ્યો તે સાધુ તે ભાગમા ઉતર્યો તે ચારે સ્ત્રિઓ તે સાધુને ચારિત્રભ્રષ્ટ કરવા માટે આખી રાત ઉપસર્ગ કરતી રહી. છતાં તે સાધુ ચલાયમાન થયો નહીં આ પ્રકારના ઉપસર્ગને કુશીલ પ્રતિસેવનક ઉપસર્ગો કહે છે.

" तिरिक्खजोणिया उवसग्गा " તિર્યંચો દ્વારા જે ઉપસર્ગો કરાય છે તેમના ચાર પ્રકાર છે—(૧) ભાય ઉપસર્ગ, (૨) પ્રાદ્વેષ ઉપસર્ગ, (૩) આહાર હેતુક ઉપસર્ગ અને (૪) અપત્યલયન સંરક્ષણક ઉપસર્ગ. જે ઉપસર્ગો ભયને લીધે ઉત્પન્ન થાય છે, તેમને ભાય ઉપસર્ગ કહે છે જેમકે કૂતરા આદિ કરડવાના ભયથી જે ઉપસર્ગ ઉત્પન્ન થાય છે તેમને ભાય ઉપસર્ગ કહે છે પ્રાદ્વેષ ઉપસર્ગ—જે ઉપસર્ગ પ્રદ્વેષથી ઉત્પન થાય છે તેને પ્રાદ્વેષ ઉપસર્ગ કહે છે. જેમકે ચંડકૌશિક નાગે મહાવીર પ્રભુને ડંસ દેવા રૂપ જે ઉપસર્ગ કર્યો હતો તેને પ્રાદ્વેષ ઉપસર્ગ કહી શકાય. જે ઉપસર્ગોમાં આહાર જ કારણ રૂપ હોય છે–એટલે કે આહારને નિમિત્તે સિંહાદિક હિંસક પશુઓ જે ઉપદ્રવ કરે છે તેને આહારહેતુક ઉપસર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ કરવા પાછળ સંતા-

सन्तानस्य लयनस्य=स्थानस्य संरक्षणं येषु ते तथा, काक्योद्यो हि स्वसन्तानलयनसंरक्षणार्थमुपसर्गान् कुर्वन्तीति ४।

"आयसंवेयणिज्जा उवसग्गा"—इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-घट्टनकाः, संघट्यते-संघर्ष्यत इति संघट्टनं-संघर्षितं, तद् विद्यते येषु ते यथा, यथा-नेत्रे रजःकणे पतिते सति तन्नयनं करतेन मर्दितं सत् दुःखमुत्पादयति, तथा-प्रपतनकाः-प्रपतनसंभवाः, यथा ऽसावधानतया संचरतो जनस्य प्रपतनं भवतीति ततो दुःखं भवति २, तथा-स्तम्भनकाः-स्तम्भनं-स्तब्धता, यथा-सुप्तः-सुप्तएव, उपविष्ट एव तिष्ठति, तत्र-वातादिप्रकोपेण पादादीनां स्तम्भनं भवतीत्युपसर्गाः

वे उपसर्ग अपत्यलयन संरक्षणक होते हैं जैसे-कागली आदि पक्षी अपनी संतान और लयन घोंसलाके संरक्षणके लिये उपद्रवोंको करती है।

"आयसंवेयणिज्जा उवसग्गा" इत्यादि-आत्मसंचेतनीय उपसर्ग भी चार प्रकारके होते हैं जैसे घट्टनक १ प्रपतनक २ स्तम्भनक ३ और श्लेषणक ४। जिन उपसर्गोंका कारण संघट्टन होताहै जैसे-आंखमें पतित रजःकण संघट्टित किये जाने पर उसे दूर करनेके लिये हाथसे मर्दित किये जाने पर नेत्रमें दुःखका जनक होना है वे उपसर्ग घट्टनक होते हैं १। जिन उपसर्गोंका कारण प्रपतन होता है वे उपसर्ग प्रपतनक उपसर्ग होते हैं जैसे-असावधान होकर चलनेवाले मनुष्यके गिर पडनेसे उसे दुःख होता है, ऐसा उपसर्ग प्रपतनक उपसर्ग कहलाते

નોનું રક્ષણ અથવા માળા આદિ રહેઠાણનું સંરક્ષણ કારણભૂત હોય છે, તે ઉપસર્ગને અપત્યલયન સંરક્ષણક ઉપસર્ગ કહે છે. જેમકે ચીબરી, કાગડી આદિ પક્ષીઓ તેમનાં બચ્ચાઓ અને માળાઓના રક્ષણને માટે આ પ્રકારના ઉપસર્ગો કરે છે.

"આયસંવેયણિજ્જા ઉવસગ્ગા" ઇત્યાદિ—આત્મસંચેતનીય ઉપસર્ગ પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) ઘટ્ટનક, (૨) પ્રપતનક, (૩) સ્તંભતક અને (૪) શ્લેષણક. જે ઉપસર્ગોનું કારણ સંઘટ્ટન હોય છે, તે ઉપસર્ગોને ઘટ્ટનક કહે છે જેમકે આંખમાં પડેલ કણને સંઘટ્ટિત કરવાથી—એટલે કે તેને કાઢવા માટે હાથ વડે આંખ ચોળવાથી નેત્રમાં પીડા થાય છે. આ પ્રકારના ઉપસર્ગને ઘટ્ટનક ઉપસર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ પ્રપતનને કારણે થાય છે. જેમકે બેદરકારીથી ચાલતાં ચાલતાં પડી જવાથી હાથ પગ ભાંગે છે કે મચકોડાય છે, આ પ્રકારના ઉપસર્ગોને પ્રપતનક ઉપસર્ગ કહે છે.

स्तम्भनाख्याः ३, तथा–श्लेषणकाः–यत्र–यथा पादं संकोच्य स्थितो भवति, वातादिना तथैव पादः संश्लिष्टो भवति ते ४ ॥ सू० २५ ॥

पूर्वमुपसर्गा उक्ताः, तत्सहनात् कर्माणि क्षीयन्त इति कर्मविशेषान्निरूपयितुमाह—

मूलम्——चउव्विहे कम्मे पण्णत्ते, तं जहा–सुभे णाममेगे सुभे १, सुभे णाममेगे असुभे २, असुभे णाममेगे सुभे ३, असुभे णाममेगे असुभे ४। (१)

चउव्विहे कम्मे पण्णत्ते, तं जहा–सुभे णाममेगे सुभवि-

हैं। जिन उपसर्गोंका हेतु स्तम्भन शरीरादि अवयवोंका रह जाना होता है वे उपसर्ग स्तम्भनक उपसर्ग होते हैं जैसे–कोई सोता है तो सोताही रहता है वह अपने आप नहीं उठ सकताहै। बैठता है तो बैठा ही रहताहै अपने आप खड़ा नहीं हो पाताहै। इस कारण वात आदिके प्रकोपसे चरणादिकोंका स्तम्भन हो जाना होताहै, ऐसे जो उपसर्ग होते हैं वे स्तम्भनक उपसर्ग होते हैं। श्लेषणक उपसर्ग वे जो किसी निमित्तसे चरण आदिके जुड जानेसे होते हैं जैसे–कोई जहां जिस तरहसे पैरोंको संकोच करके बैठ जावे और उसके पैर वहां वैसेही वात आदिसे संकुचित बन जावें उठा नहीं जावे तो ऐसे उपसर्ग संश्लेषणक उपसर्ग कहे जाते हैं ४ ॥ सूत्र २५ ॥

જે ઉપસર્ગોને કારણે શરીરના અવયવો કામ કરતાં અટકી જાય છે, તે ઉપસર્ગોને સ્તંભનક ઉપસર્ગો કહે છે જેમકે વાતાદિકને કારણે હાથ પગ અકડાઇ જવાં, પક્ષઘાતને કારણે અધું અંગ ખોટું પડી જવું. આ પ્રકારના ઉપસર્ગોને સ્તંભનક ઉપસર્ગો કહે છે. આવા ઉપસર્ગોને કારણે માણુસ જાતે હલનચલન કરી શકતો નથી.

શ્લેષણુક ઉપસર્ગ—કોઇ વખત હાથ, પગ આદિ અંગોને અમુક સ્થિતિમાં ગોઠવ્યા બાદ એ જ સ્થિતિમાં રહે છે, દા. ત. પગને સંકોચીને બેસી ગયા બાદ પગ એ જ સ્થિતિમાં રહે, ત્યાંથી ખસેડી શકાય નહીં કે લાંબો ટૂંકો કરી શકાય નહીં, આ પ્રકારના ઉપદ્રવને શ્લેષણુક ઉપસર્ગ કહે છે. આ ઉપસર્ગમાં એક અંગ સાથે જાણે કે બીજું અંગ જોડાઇ ગયું હોય એવું લાગે છે. ॥ સૂ. ૨૫ ॥

वागे,१, सुभे णाममेगे असुभविवागे २, असुभे णाममेगे सुभविवागे ३, असुभे णाममेगे असुभविवागे ४ (२) चउव्विहे कम्मे पण्णत्ते, तं जहा-पगडिकम्मे १, ठिइकम्मे २, अणुभावकम्मे ३, पएसकम्मे ४। (३)॥ सू० २६ ॥

छाया—चतुर्विधं कर्म प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-शुभं नामैकं शुभं १, शुभं नामैकमशुभम् २, अशुभं नामैकं शुभम् ३, अशुभं नामैकमशुभम् ४। (१)

चतुर्विधं कर्म प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-शुभं नामैकं शुभविपाकं १, शुभं नामैकमशुभविपाकम् २, अशुभं नामैकं शुभविपाकम्३, अशुभं नामैकमशुभविपाकम्४।(२)

चतुर्विधं कर्म प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-प्रकृतिकर्म १, स्थितिकर्म २, अनुभावकर्म ३, प्रदेशकर्म ४। (३) ॥ सू० २७ ॥

टीका—" चउव्विहे कम्मे " इत्यादि—क्रियते-अनुष्ठीयते आत्मना इति कर्म-ज्ञानावरणीयादि, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-एकं-किञ्चित् कर्म शुभं-पुण्यप्रकृतिरूपं भवति तदेव पुनः शुभं-कल्याणकारकं भवति शुभानुबन्धित्वात्,

---

इन कहे गये उपसर्गोंको सहनेसे कर्मोंका विनाश होता है। अब सूत्रकार कर्म विशेषोंकी निरूपणा करते हैं—

'चउव्विहे कम्मे पण्णत्ते' इत्यादि सूत्र २६ ॥

टीकार्थ-कर्म चार प्रकारके कहे गयेहैं जैसे-शुभ शुभ१ शुभ अशुभ२ अशुभ शुभ ३ और अशुभ अशुभ ४ आत्माके द्वारा जो किया जाता है वह कर्म है ऐसा वह कर्म ज्ञानावरणीयादि रूप होताहै। इस ज्ञानावरणीयादिमें कोई कर्म ऐसा होताहै जो पुण्य प्रकृतिरूप होता है, और शुभ कल्याणका करानेवाला होता है १। ऐसा वह कर्म शुभानुबन्धी होता है और इसीसे वह जीवोंके कल्याणका कारक होता है जैसे-

---

ઉપર્યુક્ત ઉપસર્ગોને સહન કરવાથી કર્મોનો ક્ષય થાય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર કર્મવિશેષોનું નિરૂપણ કરે છે—"चउव्विहे कम्मे पण्णत्ते" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ-કર્મ ચાર પ્રકારનાં કહ્યાં છે—(૧) શુભ-શુભ, (૨) શુભ-અશુભ, (૩) અશુભ-શુભ, અને (૪) અશુભ-અશુભ. આત્મા દ્વારા જે કરવામા આવે છે તેનું નામ કર્મ છે. એવાં તે કર્મ જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપ હોય છે. તે જ્ઞાનાવરણીય આદિમાં કોઇ કર્મ એવું હોય છે કે જે પુણ્ય પ્રકૃતિરૂપ હોય છે અને શુભ (કલ્યાણકારક) હોય છે. એવું તે કર્મ શુભાનુબન્ધી હોય છે, અને તેથી જ તે જીવોના કલ્યાણનું કારણ બને છે. જેમકે ભરતાદિનું કર્મ તેમના

यथा–भरतादीनाम्, इति प्रथमो भङ्गः १। तथा–एकं कर्म शुभं-पुण्यात्मकं सदपि अशुभम्–अकल्याणकरं भवति अशुभानुबन्धित्वात् यथा–ब्रह्मदत्तादीनाम् इति द्वितीयो भङ्गः २। तथा–एकं कर्म अशुभं=पापप्रकृतिरूपं भवति, तत्पुनः शुभं–शुभानुबन्धित्वात् यथा–कष्टप्राप्तानां विनाऽपि कर्मनिर्जरेच्छां स्वयंजायमानकर्म निर्जराणां गवादीनाम् इति तृतीयो भङ्गः ३, तथा–एकं कर्म–अशुभं–पापप्रकृतिरूपं भवति तत्पुनरशुभम् भवति, अशुभानुबन्धित्वात् यथा धीवरादीनामिति चतुर्थः४। (१)

"चउव्विहे कम्मे" इत्यादि—कर्म पुनश्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–एकं कर्म

भरतादिकोंका कर्म उनके कल्याणका कारक हुआ है १। कोई एक कर्म ऐसा होता है जो पुण्यप्रकृतिरूप हुआ भी अशुभानुबन्धी होनेसे कल्याणका कारक नहीं होताहै। जैसे ब्रह्मदत्तादिकोंका कर्म उनके कल्याणका कारक नहीं हुआ है २ कोई एक कर्म ऐसा होता है जो अशुभ प्रकृतिरूप होने पर भी शुभानुबन्धी होनेसे शुभ कल्याणकारक होता है जैसे–कष्टमें पतित गाय आदि जानवरोंका कर्म अशुभ होता हुआ भी वह उनके कल्याणका कारक होताहै क्योंकि वे उस समय कर्मोंकी निर्जरा करनेके अभिलाषी तो होते नहीं हैं, स्वयंही उनके कर्मोंकी निर्जरा होती रहती है ३ तथा–कोई एक कर्म ऐसा होता है जो अशुभ पाप प्रकृतिरूप होता है और अशुभानुबन्धी होनेसे अशुभ अकल्याणकारक होता है जैसे धीवरोंका कर्म अशुभ होता हुआ उनके अशुभानुबन्धी होनेसे अशुभकारकही होता है ४

पुनश्च—"चउव्विहे कम्मे" इत्यादि–कर्म चार प्रकारका कहा

કલ્યાણનું કારક બન્યું હતું કોઇ એક કર્મ એવું હોય છે કે જે પુણ્ય પ્રકૃતિરૂપ હોવા છતાં પણ અશુભાનુબન્ધી હોવાથી કલ્યાણકારક હોતું નથી જેમકે બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તી આદિકોનું કર્મ તેમના કલ્યાણનું કારક બન્યું હતું. કોઈ એક કર્મ એવું હોય છે કે જે અશુભ પ્રકૃતિરૂપ હોવા છતાં પણ શુભાનુબન્ધી હોવાથી શુભ કલ્યાણકારક હોય છે જેમકે કષ્ટપતિત (કષ્ટ સહન કરતી) ગાય આદિ જાનવરોનું કર્મ અશુભ હોવા છતાં પણ તે તેમના કલ્યાણનું કારક બને છે, કારણ કે તે સમયે તે જીવો કર્મની નિર્જરા કરવાની અભિલાષાવાળાં હોતાં નથી, છતાં પણ આપોઆપ તેમનાં કર્મોની નિર્જરા થતી રહે છે.

કોઈ એક કર્મ એવું હોય છે કે જે અશુભ પાપપ્રકૃતિ રૂપ હોય છે અને અશુભાનુબન્ધી હોવાથી અશુભ–અકલ્યાણકારક હોય છે. જેમકે માછીમારોનું કર્મ અશુભ હોય છે, અશુભાનુબન્ધી હોય છે અને અશુભકારકજ હોય છે.

"ચઉવ્વિહે કમ્મે" કર્મના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—

शुभं-सातवेदनीयादि भवति, तदेव पुनः शुभविपाकं-शुभपरिणामं शुभतयैव=सातवेदनीयादिरूपतयैव बद्धं सत् सातवेदनीयादिरूपतयैवोदितं भवतीति प्रथमः १, तथा-एकं कर्म शुभं=शुभत्वेन बद्धं सद् अशुभविपाकं-संक्रमनामकरणवशाद् अशुभत्वेनोदितं भवति, तत्र संक्रमणं-एकस्मिन् कर्मण्यपरस्य कर्मणोऽनुप्रवेशः, स च संक्रमाख्यकरणवशाद्भवति, उक्तञ्च—

"मूलप्रकृत्यभिन्नाः संक्रमयति गुणत उत्तराः प्रकृतीः ।
जन्नात्माऽमूर्तत्वादध्यवसानप्रयोगेण ॥ १ ॥ इति,

तथा मतान्तरम्—"मोत्तूण आउयं खलु, दंसणमोहं चरित्तमोहंच ।
सेसाणं पयडीणं, उत्तरविहिसंकमो भणिओ ॥ १ ॥"

छाया—'मुक्त्वा आयुः खलु दर्शनमोहं चारित्रमोहं च ।
शेषाणां प्रकृतीनामुत्तरविधिसंक्रमो भणितः ॥१॥ इति द्वितीयो भङ्गः२।

गया है, जैसे शुभ शुभ विपाकवाला १ शुभ अशुभ विपाकवाला २ अशुभ शुभ विपाकवाला ३ और अशुभ अशुभ विपाकवाला ४ इनमें जो कर्म शुभ होता है सातवेदनीयादिरूप होता है और वही सातवेदनीयादिरूपसे बद्ध होता हुआ सातवेदनीयादि रूपसे ही उदित होता है। ऐसा कर्म शुभ शुभ विपाकवाला कहा गया है १। जो कर्म शुभ रूपसे बद्ध हुआ भी अशुभ विपाकवाला होता है-संक्रमण नामक करणके वशसे अशुभ रूपसे उदित होताहै, वह ऐसा कर्म शुभ अशुभ विपाकवाला कहा गया है २। एक कर्ममें दूसरे कर्मका प्रवेश हो जाना अर्थात् एक कर्मका दूसरे कर्मरूपमें बदल जाना इसका नाम संक्रमण है ऐसा परिवर्तन कर्मोंमें संक्रमण करणके वशसे होता है। उक्तं च-

---

(૧) શુભ-શુભ વિપાકવાળું, (૨) શુભ-અશુભ વિપાકવાળું, (૩) અશુભ-શુભ વિપાકવાળું અને (૪) અશુભ-અશુભ વિપાકવાળું.

જે કર્મ શુભ હોય છે, તે સાતાવેદનીય રૂપ હોય છે, અને સાતાવેદનીય રૂપે બદ્ધ થઈને સાતાવેદનીય રૂપે જ ઉદયમાં આવે છે તે કર્મને શુભ-શુભ વિપાકવાળું કહે છે

જે કર્મ શુભ રૂપે બદ્ધ થવા છતાં પણ અશુભ વિપાકવાળું હોય છે. સંક્રમણ નામના કરણને લીધે અશુભ રૂપે ઉદયમાં આવે છે-એવા કર્મને શુભ-અશુભ વિપાકવાળું કહ્યું છે. એક કર્મમાં બીજા કર્મનો પ્રવેશ થઈ જવો અથવા એક કર્મનું બીજા કર્મ રૂપે પરિવર્તન થઈ જવું તેનું નામ સંક્રમણ છે. સંક્રમણ કરણને લીધે કર્મોમાં એવું પરિવર્તન થાય છે. કહ્યું પણ છે કે—

"मूलप्रकृत्यभिन्ना" इत्यादि। इस श्लोकका भाव ऐसा है कि ऐसा नियम है कि आठ मूलप्रकृतियोंका परस्परमें संक्रमण नहीं होता है, अर्थात् एक मूलप्रकृति दूसरी मूलप्रकृतिरूप नहीं बदलती, वह स्वमुखसेही निर्जराको प्राप्त होती है, किन्तु उत्तरप्रकृतियोंमें यह नियम नहीं है, उनमें समानजातीय प्रकृतियोंका अपनी समानजातीय दूसरी प्रकृतियोंमें भी संक्रमण देखा जाता है अर्थात् एक प्रकृति बदलकर दूसरी प्रकृतिरूप हो जाती है जैसे-मतिज्ञानावरण बदलकर श्रुतज्ञानावरणरूप हो जाता है, तब उदयकालमें वह अपना फल उस श्रुतज्ञानरूप रूपसे देताहै, इसी प्रकारसे सब उत्तरप्रकृतियोंके विषयमें जानना चाहिये, फिर भी कुछ ऐसी उत्तरप्रकृतियांहैं, जिनका परस्परमें संक्रमण नहीं होताहै जैसे-दर्शन मोहनीयका चारित्रमोहनीयरूपमें,और चारित्रमोहनीयका दर्शन मोहनीयके रूपमें संक्रमण नहीं होता है। हां दर्शनमोहनीयके अवान्तर भेदोंका परस्परमें और चारित्र मोहनीयके अवान्तर भेदोंका परस्परमें संक्रमण होना अवश्य संभव है। इसी प्रकारसे नारकीय देव तिर्यग् मनुष्य रूप चारों आयुओंका परस्परमें संक्रमण नहीं होता, अर्थात् एक आयुके परमाणु बदलकर दूसरी आयुरूप कभी नहीं होते, किन्तु प्रत्येक आयु स्वमुखसेही फल

"मूलप्रकृत्यभिन्ना" ઇત્યાદિ. આ શ્લોકનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—આઠ મૂળ કર્મ પ્રકૃતિઓનું પરસ્પરમાં સંક્રમણ થતું નથી, એટલે કે એક મૂળ પ્રકૃતિ બીજી મૂળ પ્રકૃતિ રૂપે બદલાતી નથી-તે સ્વમુખે જ નિર્જરા પામતી રહે છે પરન્તુ ઉત્તરપ્રકૃતિઓમાં આ પ્રકારનો નિયમ નથી. જાતીય ઉત્તર પ્રકૃતિઓનું પરસ્પરમાં સંક્રમણ થાય છે ખરૂં એટલે કે એક પ્રકૃતિનું બીજી પ્રકૃતિ રૂપે પરિવર્તન થતું જોવ.માં આવે છે પણ ખરુ. જેમકે મતિજ્ઞાનાવરણ બદલાઇને શ્રુતજ્ઞાનાવરણ રૂપ થઈ જાય છે, અને આવું પરિવર્તન થાય ત્યારે ઉદયકાળે તે તેનું ફળ તે રૂપે આપે છે આ પ્રમાણે સઘળી ઉત્તર પ્રકૃતિઓ વિષે પણ સમજવું. કોઇ કોઈ એવી ઉત્તર પ્રકૃતિઓ પણ છે કે જેમનું પરસ્પરમાં સંક્રમણ થતું નથી. જેમકે દર્શન મોહનીયનું ચારિત્ર મોહનીય રૂપે અને ચારિત્રમોહનીયનું દર્શન મોહનીય રૂપે સંક્રમણ થતું નથી. હા, દર્શન મોહનીયના અવાન્તર ભેદોનું પરસ્પરમાં સંક્રમણ અવશ્ય થઇ શકે છે, અને ચારિત્રમોહનીયના અવાન્તર ભેદોનું પણ પરસ્પરમાં સંક્રમણ સંભવી શકે છે.

એ જ પ્રમાણે ચારે આયુઓનું પણ પરસ્પરમાં સંક્રમણ થતું નથી, એટલે કે એક આયુના પરમાણુઓ બદલાઈ જઇને બીજા આયુના પરમાણુઓ રૂપે કદી પણ પરિણમિત થતાં નથી, પરન્તુ પ્રત્યેક આયુ સ્વમુખે જ ફળ

तथा—एकं कर्म अशुभम्—अशुभतया बद्धं सदपि शुभविपाकं=शुभतयोदितं भवतीति तृतीयः ३। तथा-एकमशुभमशुभविपाकं भवतीति चतुर्थः ४। (२)।

" चउव्विहे कम्मे " इत्यादि—तृतीयमिदं कर्मसूत्रमस्यैव चतुर्थस्थानस्य द्वितीयोद्देशकोक्तवन्धसूत्रमनुसृत्य बोध्यम् ॥ सू० २६ ॥

पूर्वं चतुर्विधं कर्म निरूपितं, तच्च सङ्घ एव ज्ञातुमर्हतीति सङ्घं निरूपयितु-माह—

मूलम्—चउव्विहे संघे पण्णत्ते, तं जहा—समणा १, समणीओ २, सावगा, ३, सावियाओ ४। ॥ सू० २७ ॥

देकर निर्जराको प्राप्त होती है यह सब आत्माके अध्यवसायसे होता है यही विषय इस गाथा द्वारा प्रकट किया है " भोत्तूण आउयं खलु " इत्यादि। ऐसा यह द्वितीय भंग है जो कर्म अशुभ रूपसे बद्ध हुआ भी शुभ रूपसे उदित होता है वह तृतीय भंगवाला कर्म है ३। तथा जो कर्म अशुभरूपसे बद्ध होता हुआ अशुभरूपसेही विपाकवाला होता है यह चतुर्थ भंगमें लिया गया है ४

पुनश्च—" चउव्विहे कम्मे " इत्यादि कर्म चार प्रकारका कहा गया है। प्रकृतिकर्म १ स्थितिकर्म २ अनुभावकर्म ३ और प्रदेशकर्म ४ इस तृतीय कर्मसूत्रका व्याख्यान चतुर्थ स्थानके द्वितीय उद्देशकमें कहे गये बन्धसूत्रके अनुसार कर लेना चाहिये ॥ सू० २६ ॥

દઈને નિર્જરા પામતું રહે છે. આત્માના અધ્યવસાય દ્વારા જ આવું બન્યા કરે છે એ જ વિષયને સૂત્રકારે " भोत्तूण आउयं खलु " ઈત્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કર્યો છે. આ રીતે બીજા ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ કરીને હવે સૂત્રકાર બાકીના ભાંગાઓનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—

જે કર્મ અશુભ રૂપે બદ્ધ થવા છતાં પણ શુભ રૂપે ઉદયમાં આવીને શુભવિપાક આપે છે તેને અશુભ-શુભ વિપાકવાળું કહે છે. જે કર્મ અશુભ રૂપે જ બદ્ધ થઈને અશુભ વિપાક આપનારું હોય છે, તે કર્મને અશુભ-અશુભ વિપાકવાળું કહે છે.

" चउव्विहे कम्मे " ઈત્યાદિ—કર્મના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) પ્રકૃતિ કર્મ, (૨) સ્થિતિ કર્મ, (૩) અનુભાવ કર્મ અને (૪) પ્રદેશ કર્મ ચોથા સ્થાનના બીજા ઉદ્દેશામાં જે બન્ધસૂત્ર આપવામાં આવ્યું છે તેને આધારે આ ચારે પ્રકારના કર્મોની વ્યાખ્યા સમજી લેવી ॥ સૂ. ૨૬॥

छाया—चतुर्विधः सङ्घः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-श्रमणाः १, श्रमण्यः २, श्रावकाः ३, श्राविकाः ४ ॥ सू० २७ ॥

टीका—" चउव्विहे संघे " इत्यादि — सङ्घः=गुणरत्नपात्रभूतजीवसमूहः, चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-श्रमणाः-श्राम्यन्ति-तपस्यन्तीति श्रमणाः, यद्वा-' समणा ' इत्यस्य ' समनस ' इतिच्छाया, तदर्थश्चायम्-सह मनसा=शोभनेन निदानपरिणामलक्षणपापरहितेन च चेतसा वर्तन्त इति समनसः, यद्वा-समानं-सर्वेषु स्वपरजनादिषु तुल्यं मनो येषां ते समनसः । अथवा सं=समतया शत्रुमित्रादिषु अणन्ति=प्रवर्तन्त इति समणाः । एवं ' समणीओ ' श्रमण्यः २, तथा-श्रावकाः-शृण्वन्ति जिनवचनमिति श्रावकाः, उक्तं च—

चतुर्विध निरूपित इस कर्मका स्वरूप सङ्घमेंही ज्ञात हो सकता है अतः अब सूत्रकार सङ्घको निरूपणा करते हैं—

'चउव्विहे संघे पण्णत्ते' इत्यादि सूत्र २७ ॥

टीकार्थ-संघ चार प्रकारका कहा गयाहै जैसे-श्रमण१ श्रमणी२ श्रावक ३ और श्राविका ४ गुणरूपका पात्रभूत जो जीवका समूह है वह सङ्घ है, इनमें " श्राम्यन्ति इति श्रमणाः " जो विविध प्रकारके तपोंका आचरण करते हैं वे श्रमण हैं अथवा-" समणा " इसकी संस्कृत छाया " समनसः " ऐसी जब होती है तब इसका अर्थ ऐसा होता है शोभन मनसे निदानपरिणामरूप पापसे रहित चित्तसे जो युक्त होते हैं, वे " समनसः " हैं अथवा-स्वपर जनादिरूप समस्त जनोंमें जिनका मन तुल्य होता है, वे " समनसः " हैं अथवा-"सं अणन्ति इति समणाः" शत्रु मित्र आदिकोंमें जो समान रूपसे प्रवृत्ति करते हैं वे समण हैं ।

આ ચારે પ્રકારના કર્મોનું સ્વરૂપ સંઘમાં જ જાણી શકાય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર સંઘના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે. " चउव्विहे सघे पण्णत्ते " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ-સંઘ ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે-(૧) શ્રમણ (સાધુ), (૨) શ્રમણી (સાધ્વી) (૩) શ્રાવક અને (૪) શ્રાવિકા ગુણને પાત્ર એવા જીવોનો જે સમૂહ છે તેનું નામ સંઘ છે. શ્રમણનો અર્થ નીચે પ્રમાણે છે-" श्राम्यन्ति इति श्रमणाः " જેઓ વિવિધ પ્રકારની તપશ્ચર્યા કરે છે તેમને શ્રમણ કહે છે. અથવા " समणा " આ પદની સંસ્કૃત છાયા " समनसः " લેવામાં આવે, તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-શોભન મનથી-નિદાન પરિણામ રૂપ પાપથી રહિત ચિત્તવાળા જીવને " समनसः " કહે છે-અથવા સ્વજનો અને અન્ય લોકો પ્રત્યે સમભાવ રાખનાર માણસને સમનસ કહે છે. અથવા " सं अणन्ति

" अवाप्त दृष्ट्यादि विशुद्धसम्पत्, परं समाचारमनुप्रभातम्।

शृणोति यः साधुजनादतन्द्र-स्तं श्रावकं प्राहुरमी जिनेन्द्राः ॥१॥ इति,

यद्वा-श्रान्ति=तत्त्वार्थश्रद्धानं पचन्ति=परिपाकं-निष्ठां नयन्तीति श्राः, तथा-वपन्ति चतुर्विधसंघे धनबीजानि निक्षिपन्तीति वाः, तथा-किरन्ति क्लिष्ट-कर्मरजो विक्षिपन्तीति काः, ततः श्राश्च ते वाश्च ते काश्चेति श्रावकाः, पृषोदरादित्वादयं साधुः। यथाह—

इसी प्रकारसे " श्रमणी " इनके संबन्धमें भी ऐसाही कथन जानना चाहिये २ जो जिन वचनको सुनते हैं वे श्रावक है ३ कहा भी है—

" अवाप्तदृष्ट्यादि विशुद्धसम्पत् " इत्यादि।

इस श्लोकका तात्पर्य ऐसा है कि सम्यग्दर्शनादिरूपविशुद्ध सम्पत्तिशाली जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल आलस्यरहित होकर साधुजनसे धर्मोपदेशका श्रवण करता है, जिनेन्द्रदेवने उसे श्रावककी कोटिमें रखा है। अथवा-तत्त्वार्थश्रद्धानरूप सम्यक्त्वका जो पूर्णरूपसे निर्दोष रूपसे पालन करते हैं तथा चतुर्विध संघरूप खेतमें जो अपने धनरूप बजको बोते हैं, और क्लिष्ट कर्मरूप रजको जो हटाते हैं वे श्रावक है, पाकार्थक श्रा धातुसे, वपनार्थक वप् धातुसे और विक्षेपार्थक कृ धातुसे इस श्रावक शब्दकी निष्पत्ति हुई है। इसकी व्युत्पत्ति— " श्राश्च ते वाश्च ते काश्च ते श्रावकाः" ऐसी है। यह कर्मधारय समासहै

इति समणाः " શત્રુ અને મિત્ર પ્રત્યે સમાન વર્તાવ રાખનારને શ્રમણ કહે છે. એ જ પ્રમાણે શ્રમણીનો અર્થ પણ સમજવો જેઓ જિનવચનોનું શ્રવણ કરે છે તેમને શ્રાવક કહે છે. કહ્યું પણ છે કે-" अवाप्तदृष्ट्यादिविशुद्ध सम्पत् " ઇત્યાદિ-આ શ્લોકનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

સમ્યગ્ દર્શન આદિ રૂપ વિશુદ્ધ સંપત્તિશાળી જે મનુષ્ય હંમેશા પ્રમાદનો ત્યાગ કરીને પ્રાતઃકાળે સાધુઓ પાસે ધર્મોપદેશનું શ્રવણ કરે છે એવા પુરુષને જ જિનેન્દ્ર ભગવાને શ્રાવકની કોટિમાં મૂક્યો છે. અથવા તત્ત્વાર્થ શ્રદ્ધાન રૂપ સમ્યક્ત્વનું જે પૂર્ણ રૂપે નિર્દોષ રૂપે પાલન કરે છે તથા ચતુર્વિધ સંઘ રૂપ જે ક્ષેત્રમાં જે પોતાના ધનરૂપ બીજનું વાવેતર કરે-છે, વાપરે છે, અને ક્લિષ્ટ કર્મરૂપ રજને દૂર કરે છે એવા પુરુષોને શ્રાવક કહે છે. પાકાર્થક 'श्रा' ધાતુ, વપનાર્થક 'वप्' ધાતુ અને વિક્ષેપાર્થક 'कृ' ધાતુમાંથી આ 'શ્રાવક' પદની ઉત્પત્તિ થઇ છે તેની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે. " श्राश्च

" श्रद्धालुतां श्राति पदार्थचिन्तनाद्
धनानि पात्रेषु वपत्यनारतम् ।
किरत्यपुण्यानि सुसाधुसेवना —
दथापि तं श्रावकमाहु रञ्जसा ॥ १ ॥ " इति, ३,

एवं श्राविका अपि ४। ॥ सू० २७ ॥

पूर्वं सङ्घः उक्तः, स च सर्वज्ञवचनसंस्कृतया बुद्ध्या युज्यत इति बुद्धिं विवेक्तुमाह—

मूलम्—चउव्विहा बुद्धी पण्णत्ता, तं जहा—उप्पत्तिया १, वेणयिया २, कम्मिया ३, पारिणामिया ४।

चउव्विहा मई पण्णत्ता, तं जहा—उग्गहमई १, ईहामई २, अवायमई ३, धारणामई ४।

अहवा—चउव्विहा मई पण्णत्ता, तं जहा--अरंजरोदग-समाणा १, वियरोदगसमाणा २, सरोदगसमाणा ३, सागरोदग-समाणा ४। ॥ सू० २८ ॥

सो ही कहा है–" श्रद्धालुतां श्राति पदार्थचिन्तनात् " इत्यादि जिनेन्द्रदेव द्वारा कहे गये जीवादिरूप तत्त्वोंका चिन्तवन करनेसे जो अपनेमें उनके स्वरूपके प्रति श्रद्धालुको पचता है–अर्थात् जिनेन्द्रदेव द्वारा कथित तत्वोंका जो श्रद्धान करता है, उन पर दृढ आस्था–विश्वास रखता है पात्रोंमें निरन्तर धनका सदुपयोग करता है, निष्परिग्रही साधुकी सेवासे जो पाप प्रकृतियोंको विखेरता है उसे श्रावक कहा गया है । इसी तर-हका कथन " श्राविका " के संबन्धमें भी जानना चाहिये ॥ सूत्र २७ ॥

ते वाश्च ते काश्च ते श्रावकाः " આ પદ કર્મધારય સમાસ રૂપ છે. એ જ વાત નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરી છે–" श्रद्धालुतां श्राति पदार्थचिन्तनात् " ઈત્યાદિ. જિનેન્દ્ર દેવ દ્વારા પ્રતિપાદિત જીવાદિ રૂપ તત્ત્વોનું જેઓ ચિન્તન કરે છે અને તેમના વચનો પ્રત્યે શ્રદ્ધા રાખે છે તેનાપર દૃઢ આસ્થા (વિશ્વાસ) રાખે છે અને સુપાત્રને દાન આપીને પોતાના ધનનો નિરંતર સદુપયોગ કરે છે, અને નિષ્પરિગ્રહી સાધુઓની સેવા દ્વારા જેઓ પોતાની પાપપ્રકૃતિઓને વિખેરતા રહે છે, તેમને શ્રાવક કહે છે. આ પ્રકારનું કથન શ્રાવિકા વિષે પણ સમજવું. ॥ સૂ. ૨૭ ॥

छाया-चतुर्विधा बुद्धिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-औत्पत्तिकी१, वैनयिकी२, कार्मिका३, पारिणामिकी ४।

चतुर्विधा मतिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-अवग्रहमतिः १, ईहामतिः २, अवायमतिः ३, धारणामतिः ४।

अथवा—चतुर्विधा मतिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-अरञ्जरोदकसमाना १, विदरोदकसमाना २, सरउदकसमाना ३, सागरोदकसमाना ४। ॥ २८॥

टीका—"चउव्विहा बुद्धी" इत्यादि—बुद्धिश्चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-औत्पत्तिकी-उत्पत्तिरेव प्रयोजनमस्या इत्यौत्पत्तिकी, ननु क्षयोपशमो बुद्ध्युत्पत्तिं प्रति कारणं भवतीति स हेतुरस्या इति क्षयोपशमिक्यपि वक्तुमुचिता, कथं न सोक्तेति चेच्छृणु नहि औत्पत्तिकीमेवबुद्धिं प्रति क्षयोपशमो हेतुः, अपि तु सर्वबुद्धिः प्रत्ययं प्रधानो हेतुरिति क्षयोपशमकारणाविवक्षयोत्पत्तिमात्रप्रयोजनं विव-

---

कहा गया यह संघ सर्वज्ञके वचनसे स्फीत (स्फीत-निर्मल) हुई बुद्धिवाला होता है। अतः अब सूत्रकार बुद्धिकी विवेचना करते हैं—

'चउव्विहा बुद्धी पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र २८ ॥

टीकार्थ-बुद्धि चार प्रकारकी होतीहै जैसी-औत्पत्तिकी१ वैनयिकी२ कार्मिका ३ और पारिणामिकी ४ इनमें जिस बुद्धिका प्रयोजन उत्पत्तिही होती है, वह औत्पत्तिकी बुद्धि है, इस औत्पत्तिकी बुद्धिमें ज्ञानावरणीय कर्मका विशिष्ट क्षयोपशम होता है।

शंका-क्षयोपशम बुद्धिकी उत्पत्तिके प्रति कारण होता है, तो फिर यहां क्षयोपशम है हेतु जिसका, ऐसी क्षायोपशमिकी बुद्धि उसे क्यों नहीं कही है ?

ઉપર્યુક્ત સંઘ સર્વજ્ઞના વચનથી વિશુદ્ધ બુદ્ધિવાળો થાય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર બુદ્ધિનું નિરૂપણ કરે છે. "चउव्विहा बुद्धी पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-બુદ્ધિના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) ઔત્પાતિકી, (૨) વૈનયિકી, (૩) કાર્મિકા, અને (૪) પારિણામિકા. જે બુદ્ધિનું પ્રયોજન ઉત્પત્તિ જ હોય છે, તે બુદ્ધિને ઔત્પાતિકી બુદ્ધિ કહે છે. આ ઔત્પાતિકી બુદ્ધિમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો વિશિષ્ટ ક્ષયોપશમ થતો હોય છે.

શંકા—જો ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિની ઉત્પત્તિનું કારણ ક્ષયોપશમ હોય, તો તેને ક્ષાયોપશમિકી બુદ્ધિ કેમ કહી નથી ? જેનું કારણ ક્ષયોપશમ હોય એવી બુદ્ધિને ઔત્પત્તિકી શા માટે કહી છે ?

क्षित्वा औत्पत्तिकीमेवबुद्धिं तद्भेदतयाऽऽह । औत्पत्तिकीबुद्धिर्हि यथा क्षयोपशमम-पेक्षते तथा तदन्यच्छास्त्रं वा कर्मवाऽभ्यासादिकं नापेक्षत इति,

यद्वा—औत्पत्तिकी बुद्धिः लोकद्वयाऽविरुद्धैकान्तिकफलशालिनी सा यथा बुद्ध्या बुद्ध्युत्पत्तितः पूर्वं स्वयमदृष्टोऽपरमुखादनाकर्णितो मनसाऽप्यचिन्तितोऽर्थो यथावत् सद्योऽवबुध्यते, यदाह—

"पुव्वमदिट्ठमसुया वेइयतक्खणविसुद्धगहियट्ठा ।
अव्वाहयफलजोगा बुद्धी उप्पत्तिया नाम ॥ १ ॥"

छाया—"पूर्वमदृष्टाश्रुताविदित तत्क्षणविशुद्धगृहीतार्था ।
अव्याहतफलयोगा बुद्धिरौत्पत्तिकी नाम ॥ १ ॥" इति ।

उ०—केवल औत्पत्तिकी बुद्धिके प्रति ही क्षायोपशम कारण होता हो ऐसी बात तो नहीं है वह तो समस्त बुद्धियोंके प्रति प्रधान कारण होता है, परन्तु यहां जो उसकी विवक्षा नहींकी है उसका कारण उसमें उत्पत्ति मात्र प्रयोजनकी विवक्षा है, यह औत्पत्तिकी बुद्धि क्षायोप-शमिक बुद्धिकाही एक भेद है । औत्पत्तिकी बुद्धि जिस प्रकारसे क्षायो-पशमकी अपेक्षा रखती है, उस प्रकारसे वह अन्य शास्त्रकी या अभ्या-सादिरूप कर्मकी अपेक्षा नहीं रखती है ।

यद्वा—यह औत्पत्तिकी बुद्धि दोनों लोकोंमें अविरुद्ध ऐकान्तिक फलवाली होती है । यह अपनी उत्पत्तिके पहिलेही स्वयं अदृष्ट परके मुखसे अश्रुत और मनसे अचिन्तित ऐसे विषयको यथावत् जान लेती है सोही कहा है–"पुव्वमदिट्ठमसुया" इत्यादि । यह बुद्धि पूर्वमें कभी

ઉત્તર—કેવળ ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિની જ ઉત્પત્તિમાં ક્ષયોપશમ કારણભૂત બને છે, એવી કોઇ વાત નથી. પરન્તુ તે તો સમસ્ત બુદ્ધિઓની ઉત્પત્તિમાં મુખ્ય કારણરૂપ બને છે. પરન્તુ અહીં જે તેનું વર્ણુંન કરવામાં આવ્યું નથી તેનું કારણ એ છે કે તેમાં ઉત્પત્તિ માત્ર રૂપ પ્રયોજનની જ વિવક્ષા થઇ છે. તે ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ ક્ષાયોપશમિકી બુદ્ધિના જ એક ભેદ રૂપ છે. ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ જેટલા પ્રમાણમાં ક્ષયોપશમની અપેક્ષા રાખે છે એટલા જ પ્રમાણમાં અન્ય શાસ્ત્રની કે અભ્યાસ આદિ રૂપ કર્મની અપેક્ષા રાખતી નથી. અથવા આ ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ બન્ને લોકમાં (આલોક અને પરલોકમાં) અવિરૂદ્ધ અને ઐકાન્તિક ફલ આપનારી હોય છે. આ બુદ્ધિ અદૃષ્ટ, અશ્રુત અને અચિ-ન્તિત વિષયોને પણ યથાર્થ રૂપે જાણી લે છે. કહ્યું છે કે—

"पुव्वमदिट्ठमसुया" ઇત્યાદિ—પૂર્વે કદી નહીં દેખેલા, કાનથી નહીં

यथा—नटपुत्ररोहकादीनामिति । १

तथा—वैनयिकी–विनयो–गुरुशुश्रूषा, तेन निर्वृत्ता वैनयिकी विनयरूपकारणजन्या, यद्वा–विनय एव वैनयिकः, विनयादित्वाट्ठक्, स प्रधानो यस्याः सा वैनयिकप्रधाना, सैव वैनयिकी अत्र 'विनाऽपि प्रत्ययं' पूर्वोत्तरपदयो र्वा लोपो वाच्यः' इति वार्तिकेन प्रधानपदलोपे स्त्रियां ठगन्तत्वाङीपि साधुता बोध्या।

यद्वा—कार्यमात्रसाधनसमर्था धर्मार्थकामशास्त्रसूत्रार्थसारग्रहणवती लोकद्वयफलसम्पन्ना बुद्धि वैनयिकी, यदाह—

नहीं देखे हुए कानसे कभी नहीं सुने, और मनसे भी कभी नहीं विचारे हुए पदार्थको उसी क्षणमें विशुद्ध रूपसे ग्रहण कर लेतीहै, यह अव्याहत (सफल) फलवाली होती है, नटपुत्र रोहक आदिकोंके यह बुद्धि हुई है ऐसा शास्त्रोंका लेख है। गुरुकी शुश्रूषा करना यह विनय है, इस विनयसे जो बुद्धि उत्पन्न होती है वह वैनयिकी बुद्धि है अतः यह विनयरूप कारणसे जन्य होती है अथवा–विनयही वैनयिक है विनयसे ठक् प्रत्यय करने पर यह "वैनयिक" शब्द बन जाता है यह विनयही जिसमें प्रधान होता है वही वैनयिकी है–वैनयिक प्रधान बुद्धि वैनयिकी है—

यद्वा—कार्य मात्रके साधन करनेमें समर्थ और धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र एवं कामशास्त्र इनके सूत्रोंके अर्थरूप सारको ग्रहण करनेवाली जो लोकद्वयके फलसे सम्पन्न बुद्धि होती है, वह वैनयिकी बुद्धि है।

સાંભળેલા અને મનથી કદી નહીં વિચારેલા પદાર્થને પણ આ બુદ્ધિ વિશુદ્ધ રૂપે ગ્રહણ કરી લે છે અને અવ્યાહત (સફલ) ફલવાળી હોય છે. નટપુત્ર રોહકમાં આ પ્રકારની બુદ્ધિનો સદ્ભાવ હતો. તે રોહકની ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિના કેટલાક દૃષ્ટાન્તો નન્દીસુત્રમાં આપવામાં આવ્યાં છે.

ગુરુની શુશ્રૂષા કરવી તેનું નામ વિનય છે. તે વિનયને લીધે જે બુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય છે તે બુદ્ધિને વૈનયિકી બુદ્ધિ કહે છે. તે બુદ્ધિ વિનયરૂપ કારણથી ઉત્પન્ન થતી હોય છે અથવા વિનય જ વૈનયિક છે વિનયને "इक" પ્રત્યય લગાડવાથી "વૈનયિક" શબ્દ બને છે. તે વિનય જ જેમા મુખ્ય રૂપે હોય છે તેને વૈનયિકી બુદ્ધિ કહે છે. એટલે કે વૈનયિક પ્રધાન બુદ્ધિ જ વૈનયિકી છે. અથવા કાર્યમાત્રને સાધવામાં સમર્થ એવી અને ધર્મશાસ્ત્ર, અર્થશાસ્ત્ર અને કામ શાસ્ત્રનાં સૂત્રોના અર્થ રૂપ સારને ગ્રહણ કરનારી અને બન્ને લોકમાં ફલદાયી એવી જે બુદ્ધિ હોય છે તેને વૈનયિકી બુદ્ધિ કહે છે. કહ્યુ પણ છે કે—

" भरनित्थरणसमत्था त्रिवग्गसुत्तत्थगहियपेयाला ।
उभओलोगफलवई विणयसमुत्था हवइ बुद्धी ॥ १ ॥ "

छाया—" भरनिस्तरणसमर्था त्रिवर्गसूत्रार्थगृहीतसारा ।
उभयलोकफलवती विनयसमुत्था भवति बुद्धिः ॥ १ ॥ " इति ।

यथा—नैमित्तिकसिद्धपुत्रशिष्यादीनामिति । २

तथा—कार्मिका—कर्मणो जाता कार्मिका=कर्मजा, तत्र – कर्म अनाचार्यकं कादाचित्कं वा, शिल्पं–साचार्यकं नित्यव्यापारो वा भवति, कर्मणो जाता बुद्धिः। यद्वा–सा कर्माऽऽग्रहप्राप्तकर्मतत्त्वा कर्माभ्यासपर्यालोचनाभ्यां विस्तारमाप्ता प्रशंसाफलशालिनी च, यदाह—

" उवओगदिट्ठसारा, कम्मपसंगपरिघोलणविसाला ।
साहुक्कारफलवई, कम्मसमुत्था हवइ बुद्धी ॥ १ ॥ "

सोही कहा है–" भरनित्थरणसमत्था " इत्यादि । इस गाथा का अर्थ स्पष्ट है यह बुद्धि नैमित्तिकके सिद्धपुत्र और उसके शिष्य आदिकोंके हुई कही गई है

जो बुद्धि कर्मसे उत्पन्न होती है वह कार्मिका बुद्धि है, यहां अनाचार्यक (विना आचार्य) अथवा कादाचित्क या साचार्यक (आचार्य सहित) अथवा नित्यव्यापार ये कर्मशब्दसे लिये गयेहैं, जैसेशिल्प यह साचार्यक है, क्योंकि यह विना गुरुके नहीं आताहै, यद्वा यह बुद्धि कर्मको सीखनेके आग्रहसे प्राप्त कार्यके सारवाली हो जातीहै, और अभ्यास करते २ या उसका विचार करते २ भी यह प्राप्त हो जातीहै,हर जगह इस बुद्धिवालेको प्रशंसा प्राप्त होती है। सो ही कहा है–" उवओगदिट्ठसारा " इत्यादि ।

" भरनित्थरणसमत्था " ઈત્યાદિ—આ પ્રકારની બુદ્ધિ નૈમિત્તિકના સિદ્ધિપુત્ર અને તેના શિષ્ય વગેરેમાં હતી, એવું શાસ્ત્રોમાં કહેવામાં આવ્યું છે. જે બુદ્ધિ કર્મ દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે, તે બુદ્ધિને કાર્મિકા બુદ્ધિ કહે છે. અહીં અનાચાર્યક (વિના આચાર્યના) અથવા ક્યારેક સાચાર્યક (આચાર્ય યુક્તતા) અથવા નિત્યવ્યાપાર આ પદોને કર્મ શબ્દથી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. જેમકે શિલ્પકળા એ સાચાર્યક કર્મ ગણાય છે, કારણ કે ગુરુની સહાયતા વિના તે કળા શીખી શકાતી નથી. અથવા આ કાર્મિકા બુદ્ધિ એવી હોય છે કે કોઈ કર્મને શીખવાને માટે આગ્રહવાળી હોય છે તેથી સ્વપ્રયત્નથી પણ તે પ્રાપ્ત થઈ જાય છે એટલે કે ગુરુની સહાયતા વિના જાતે જ અભ્યાસ કર્યા કરવાથી અને તે વિષે વિચાર કરવાથી પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. આ પ્રકારની બુદ્ધિથી સંપન્ન વ્યક્તિની બધે પ્રશંસા થાય છે. કહ્યું પણ છે કે—

छाया—उपयोगदृष्टसारा कर्मप्रसङ्गपरिघोलन (विचार) विशाला।
साधुकारफलवती कर्मसमुत्था भवति बुद्धिः ॥ १ ॥" इति।

यथा—सुवर्णकार-कृषीवलादीनामिति ३।

तथा-पारिणामिकी-परिणामः—सुचिरकालपूर्वापरार्थदर्शनादि भवआत्मधर्मविशेषः, स प्रयोजनमस्या, यद्वा-परिणामप्रधाना बुद्धिः पारिणामिकी, यद्वा—अनुमानहेतुदृष्टान्तैः साध्यसाधिका वयोविपाके च प्राप्तपरिपुष्टिरभ्युदयनिःश्रेयसफलशालिनीबुद्धिः पारिणामिकी, यदाह—

तात्पर्य इसका केवल यही है कि कार्मिका बुद्धिवाला मनुष्य हरएक कार्यमें विशेष पटु होता है, चाहे वह उस कार्यको गुरु आदिकी सहायतासे सीखे, या बिना गुरुकी सहायतासे भी सीखे उस कार्यमें उपयोग लगानेसे निरन्तर उसका अभ्यास करते रहनेसे वह कार्य उसके हाथमें आ जाता है। यह बुद्धि सुवर्णकारोंमें या किसान आदिमें होती है।

जो बुद्धि बहुत दिनों तक पूर्वापर पदार्थोंके देखने आदिसे प्राप्त अनुभवरूप आत्मधर्मविशेषसे होती है अथवा—वय आदिके बढनेके कारण विशेष अनुभवरूप परिणाम प्रधानतावाली होती है, वह परिणामिकी बुद्धि है, अथवा—अनुमान हेतु दृष्टान्त इनसे साध्यको साधनेवाली एवं वयके परिपक्वमें प्राप्त पुष्टिवाली जो बुद्धि होती है, वह

"उवओगदिट्ठसारा" ઇત્યાદિ--આ શ્લોકનો ભાવાર્થ એ છે કે કાર્મિકા બુદ્ધિવાળો મનુષ્ય દરેક કાર્યમાં વિશેષ પટુ (પ્રવિણુ) હોય છે તે તે ગુરુની સહાયતાથી પુણ્ શીખી શકે છે અને કયારેક ગુરુની સહાયતા વિના પણુ શીખી લે છે. તે કાર્યમાં સદા ઉપયુક્ત રહેવાથી તેનો જ સદા વિચાર કર્યા કરવાથી, અને તેનો અભ્યાસ કરતા રહેવાથી તે કાર્ય કરવાની તેને ફાવટ આવી જાય છે. આ પ્રકારની બુદ્ધિનો સદ્ભાવ સુવર્ણકારો, ખેડૂતો આદિ કારીગરોમાં હોય છે.

જે બુદ્ધિ ઘણા દિનો સુધી પૂર્વાપર પદાર્થોને દેખવા આદિથી પ્રાપ્ત અનુભવ રૂપ આત્મધર્મ વિશેષથી ઉત્પન્ન થાય છે, અથવા ઉમર આદિની વૃદ્ધિ થવાને કારણે વિશેષ અનુભવ રૂપ પરિણામ-પ્રધાનતાવાળી હોય છે, તે બુદ્ધિને પારિણામિકી બુદ્ધિ કહે છે. અથવા—અનુમાન, હેતુ અને દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સાધ્યને સાધનારી અને પરિપકવ ઉમરને કારણે પુષ્ટિયુક્ત બનેલી જે બુદ્ધિ હોય છે

अणुमाणहेउदिट्ठंत साहिया वयविवागपरिणामा ।
हियनिस्सेयसफलवई बुद्धी पारिणामिया नाम । १ ॥
छाया—" अनुमानहेतुदृष्टान्तसाधिका वयोविपाकपरिणामा ।
हितनिःश्रेयसफलवती बुद्धिः पारिणामिकी नाम ॥१॥ इति ।
यथा—अभयकुमारादीनामिति १।

॥ इति बुद्धिसूत्रम् ॥

पूर्वं बुद्धिरुक्ता, सा च मतिविशेष इति मतिं निरूपयितुमाह—

" चउव्विहा मई " इत्यादि—मतिः-मननं, सा चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-अवग्रहमतिः-अवग्रहः = सामान्यार्थस्याशेषविशेषनिरपेक्षस्यानिर्देश्यस्य रूपप्रभृतेः

पारिणामिकी बुद्धि है। यह बुद्धि अभ्युदयरूप या निःश्रेयस(मोक्ष)रूप फलसे सुशोभित होतीहै, सोही कहा है-"अणुमाणहेउदिट्ठंत" इत्यादि। अनुमानसे हेतुसे एवं दृष्टान्तसे अपने अभीष्ट अर्थको सिद्ध करलेनेवाली और धीरे २ जैसे २ वय बढती जाती है, उसके अनुसार प्राप्त विशेष अनुभववाली एवं आत्महितकी साधनामें जोड़नेवाली जो बुद्धि होती है वह पारिणामिकी बुद्धि है। यह अभयकुमार आदिकोंके थी उक्त यह बुद्धि मतिविशेषरूप होती है इसलिये अब सूत्रकार उस मतिका निरूपण करते हैं-" चउव्विहा मई " इत्यादि-मनन करनेका नाम मति है, यह मति चार प्रकारकी होती है जैसे-अवग्रहमति १ ईहामति २ अवायमति ३ और धारणामति ४ जिस ज्ञानसे समस्त

તેને પારિણામિકી બુદ્ધિ કહે છે. તે બુદ્ધિ અભ્યુદય રૂપ અથવા નિઃશ્રેયસ (મોક્ષ) રૂપ ફલથી વિભૂષિત હોય છે. કહ્યું પણ છે કે—

" अणुमाण हेउ दिट्ठंत " ઈત્યાદિ--અનુમાન દ્વારા, હેતુ દ્વારા, અને દૃષ્ટાન્ત દ્વારા અભીષ્ટ અર્થને સિદ્ધ કરનારી અને ધીરે ધીરે ઉમરની વૃદ્ધિ સાથે પરિપકવ અનુભવથી પુષ્ટ થયેલી એવી, આત્મહિતના સાધનોમાં પ્રવૃત્ત કરનારી જે બુદ્ધિ હોય છે, તેને પારિણામિકી બુદ્ધિ કહે છે. આ પ્રકારની બુદ્ધિનો સદ્‌ભાવ અભયકુમાર વગેરેમાં હતો.

ઉપર્યુક્ત બુદ્ધિ મતવિશેષ રૂપ હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર મતિનું નિરૂપણ કરે છે. " चउव्विहा मई " ઈત્યાદિ—

મનન કરવું તેનું નામ મતિ છે. તે મતિના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) અવગ્રહ મતિ, (૨) ઇહા મતિ, (૩) અવાય મતિ અને (૪) ધારણા મતિ. જે જ્ઞાન વડે સમસ્ત પ્રકારના વિશેષોની અપેક્ષાથી રહિત એટલે

अवेति-प्रथमतो ग्रहणं=परिच्छेदनम् अवग्रहः, स एव मतिरवग्रहमतिः, एवमग्रेऽपि १। तथा ईहा मतिः तत्र-ईहाक्षयोपशमतस्तदर्थविशेषपर्यालोचनम् सैवमतिरीहामतिः२, तथा अवायमतिः-अवायः-क्षयोपशमतः-प्रक्रान्तार्थविशेषनिश्चयः स एव मतिरवायमतिः ३, तथा-धारणामतिः-धारणा-क्षयोपशमतो ज्ञातार्थविशेषधरणं सैवमतिर्धारणामतिः ४।

उक्तंच—"सामन्नत्थावग्गहणमोग्गहो भेयमग्गणमिहेहा।
तस्सावगमोऽवायो अविच्चुई धारणा तस्स ॥ १ ॥"

छाया—सामान्यार्थावग्रहणमवग्रहो भेदमार्गणमिहेहा।
तस्यावगमोऽवायोऽविच्युति र्धारणा तस्य ॥ १ ॥ इति

एतद्बुद्धिमतिसूत्रद्वयस्य विशेषतो विवरणं मत्कृतायां नन्दीसूत्रस्य ज्ञानचन्द्रिकायां टीकायां विलोकनीयम्। (२)।

प्रकारके विशेषोंसे निरपेक्ष अतएव शब्दादि द्वारा अनिर्देश्य ऐसे सामान्य रूपसे रूपादिकोंका सर्व प्रथम ग्रहण ज्ञान होता है वह अवग्रहरूप मति है। अवग्रह मतिसे जाने हुए पदार्थको क्षयोपशमकी विशेषताके अनुसार जो विशेष रूपसे जानती है वह ईहारूपमति है, ईहामतिसे जाने हुए पदार्थको क्षयोपशमकी विशेषताके अनुसार जो विशेष रूपसे निश्चय रूपसे जाननेवाली मति है, वह अवाय रूप मति है ३। एवं अवायमतिसे जाने हुए पदार्थको क्षयोपशमके अनुसार अविस्मरणरूपसे धारण करनेवाली जो मति है वह धारणामति है ४। कहा भी है "सामत्थावगहण 'इत्यादि इस गाथाका अर्थ स्पष्टहै इन बुद्धि और मति विषयक सूत्रोंका विशेष रूपसे कथन नन्दीसूत्रकी टीका ज्ञान-

કે શબ્દાદિ દ્વારા અનિર્દેશ્ય એવા સામાન્ય રૂપે રૂપાદિકોનું સર્વ પ્રથમ ગ્રહણ (જ્ઞાન) થાય છે, તે મતિનું નામ અવગ્રહ મતિ છે. અવગ્રહ મતિ દ્વારા જે પદાર્થને જાણવામાં આવ્યો હોય તેને ક્ષયોપશમની વિશેષતા અનુસાર વિશેષ રૂપે જાણનારી જે મતિ છે, તેને ઈહામતિ કહે છે. ઈહામતિ દ્વારા જાણેલા પદાર્થને ક્ષયોપશમની વિશેષતા અનુસાર વિશેષ રૂપે નિશ્ચય રૂપે જાણનારી જે મતિ છે તેને અવાયરૂપ મતિ કહે છે અવાય માત વડે જાણેલા પદાર્થને ક્ષયોપશમની વિશેષતા અનુસાર અવિસ્મરણ રૂપે ધારણ કરનારી જે મતિ છે તેને ધારણા મતિ કહે છે. કહ્યું પણ છે—

"सामन्नत्थावग्गहण" ઇત્યાદિ. આ ગાથાનો અર્થ સ્પષ્ટ છે. આ બુદ્ધિ અને મતિવિષયક સૂત્રોનું વિશેષ કથન નન્દીસૂત્રની ટીકા જ્ઞાનચન્દ્રિકામાં કરવામાં આવ્યું છે, તો ત્યાંથી વાંચી લેવું

'अहवा चउव्विहा मई" इत्यादि—अथवा—मतिश्चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—अरञ्जरोदकसमाना—अरञ्जरम्-जलघटः, तदलिञ्जरमित्यपि प्रसिद्धम्, तस्मिन् यदुदकं तत्समाना तत्तुल्या मतिः, तत्सादृश्यं च बह्वर्थग्रहणोत्प्रेक्षणधरणाशक्तत्वादल्पत्वेनाऽस्थिरत्वेन च बोध्यम्, अयं भावः—यथा—अरञ्जरोदकं—स्वल्पपरिमाणं सच्छीघ्रं व्ययमेति तथा—मतिरपि स्वल्पमेवार्थं गृह्णाति उत्प्रेक्षते धरति च शीघ्रमेव चापैतीति तत्सदृशी व्यपदिश्यते इति प्रथमा मतिः१। तथा—विदरोदकसमाना-

---

चन्द्रिकामें किया गया है अतः वहांसे देख लेना चाहिये "अहवा चउव्विहा मई" इत्यादि—अथवा—मति चार प्रकारकी कही गई है। जैसे—अरञ्जरोदक समान १ विदरोदक समान २ सर उदक समान ३ और सागरोदक समान ४ अरञ्जर नाम घटका है इसे अलिञ्जर भी कहा जाता है, इसके पानीके जैसी जो बुद्धि होती है वह अरञ्जरोदक समान बुद्धिहै, बुद्धिमें जो यह अरञ्जरोदकसमानता प्रकटकी गईहै, वह अल्पता और अस्थिरताकी अपेक्षासे प्रकट की गई है, क्योंकि ऐसी बुद्धि बहु अर्थका ग्रहण नहीं करती है उसका उत्प्रेक्षण एवं उसकी धारणा भी नहीं करता है, भाव यह है कि जिस प्रकारसे अरञ्जोदक स्वल्पपरिमाणवाला होता है, और शीघ्रही खर्च हो जाता है उसी प्रकारसे ऐसी मति भी स्वल्पही अर्थको ग्रहण करती है उतनेही अर्थका वह विचार करती है और उतनेही अर्थकी वह धारणा करती है एवं शीघ्रतासे नष्ट हो जाती है। इस प्रकारसे यह अरञ्जोदक जैसी बुद्धिके विषयका

"अहवा चउव्विहा मई" ઇત્યાદિ--અથવા મતિના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) અરંજોદક સમાન, (૨) વિદરોદક સમાન (૩) સરઉદક સમાન અને (૪) સાગરોદક સમાન.

'અરંજર' એટલે ઘડો—તેને અલિંજર પણ કહે છે તેના પાણીના જેવી જે બુદ્ધિ હોય છે, તેને અરંજરોદક સમાન બુદ્ધિ કહે છે. ઘડાના પાણીમાં જેવી અલ્પતા અને અસ્થિરતા હોય છે એવી અલ્પતા અને અસ્થિરતાવાળી બુદ્ધિને અરંજરોદક-સમાન કહે છે. આ પ્રકારની બુદ્ધિ બહુ અર્થને ગ્રહણ કરતી નથી, તેનું ઉત્પ્રેક્ષણ અને તેની ધારણા પણ કરતી નથી. જેમ ઘડાનું પાણી સ્વલ્પ પ્રમાણવાળું હોય છે અને જલ્દી વપરાઈ જાય એવું હોય છે, એ જ પ્રમાણે એવી મતિ પણ સ્વલ્પ અર્થને જ ગ્રહણ કરે છે, એટલા જ અર્થનો તે વિચાર કરે છે અને એટલા જ અર્થની તે ધારણા કરે છે, અને શીઘ્રતાથી નષ્ટ થઈ જાય છે. આ પ્રકારનું અરંજોદક સમાન બુદ્ધિનું અહીં સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવ્યું છે.

विदरो-नदी तटादौ जलार्थो गर्तः कूपिकादिः जलस्थानविशेषः, तस्मिन् यदुदकं तत्समाना यथा-विदरोदकं नद्यादि स्रोतः सम्बन्धे पुनः पुनर्जलमिलितंसदल्पमपि शीघ्रं न क्षयमेति तथा या मतिः स्वल्पाप्यन्यान्यार्थतर्कमात्रकुशला झटिति नापैतीति स्वल्पत्वादन्यान्यार्थोहनमात्रदक्षत्वाज्झटित्यक्षयत्वाच्च तत्समाना व्यवह्रियत इति द्वितीया मतिः २। तथा-सर उदकंसमाना-यथा-सरोगतजलं पुष्कलत्वाद्बहु

स्पष्टीकरण है १ तथा-विदरोदक समान जो बुद्धि होती है वह ऐसी होती है-विदर नाम उसका है जो नदीके तट आदि पर जलके खड्डा होता है, या कूप आदि जलका स्थान विशेष होता है उसके उदकके जैसी जो बुद्धि होती है वह विदरोदक समान बुद्धि है। विदरोदक जिस तरह नदी आदिके स्रोतके सम्बन्धसे बार २ मिल जाने पर स्वल्प होता हुआ भी शीघ्र क्षयको नाशप्राप्त नहीं होता है, उसी प्रकार जो मति स्वल्प होती हुई भी अन्य अन्य अर्थके तर्क मात्रसे कुशल हो जाती है और जल्दी नष्ट नहीं होती है वह विदरोदक समान बुद्धि है। यह विदरोदक समान बुद्धि भी यद्यपि मात्रामें अल्प होती है परन्तु अन्य अन्य अर्थ सम्बन्धी ऊहापोहसे-तर्कसे यह दक्ष हो जाती है, उन २ विषयमें तर्कणा गवेषणा आदि करते रहनेसे यह थोड़ी होती हुई भी विस्तृत विशाल जैसी ज्ञात होती है, और यह शीघ्र नष्ट भी नहीं होती है इसलिये इसे विदरके उदक जैसा कहा गया है। तालाबका

હવે વિદરોદક સમાન બુદ્ધિનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—'વિદર' એટલે નદીના પટમાં ગાળેલો વિરડો (ખાડો) અથવા કૂવો. જેમ નદીમાં અથવા નદીના કિનારે ગાળેલો ખાડો નદીની સાથે ઘસડાઈ આવતી રેતીને લીધે પૂરાઈ પૂરાઈને નાનો બનતો જાય છે પણ તેમાં પાણીની આવ તો ચાલુ જ રહે છે, અને તે શીઘ્ર નષ્ટ થઈ જતો નથી, એ જ પ્રમાણે જે મતિ સ્વલ્પ હોવા છતાં પણ અન્ય અન્ય અર્થના (વિષયના) તર્ક માત્રથી-પુષ્ટ બની જાય છે, પણ જલ્દી નાશ પામતી નથી. એવી મતિને વિદરોદક સમાન કહી છે આ વિદરોદક સમાન બુદ્ધિ પણ જો કે અલ્પ માત્રાવાળી હોય છે, પરન્તુ અન્ય અન્ય અર્થ વિષયક ઉહાપોહ (તર્ક) થી દક્ષ થઈ જાય છે. તે વિષયમાં તર્ક, ગવેષણા આદિ કરતા રહેવાથી અલ્પ હોવા છતાં પણ વિસ્તૃત હોય એવી લાગે છે અને શીઘ્ર નાશ પામતી નથી. તેથી તેને વિદરના પાણી જેવી કહી છે.

जनानुपकरोति न च शीघ्रं व्ययमेति तथा या मति र्विपुला बहुजनोपकारिणी न शीघ्रमपैति सा प्रचुरत्वाद्बहुजनोपकारित्वाच्छीघ्रव्ययरहितत्वाच्च तत्समानोच्यत इति तृतीया ३।

तथा-सागरोदक समाना—समुद्रगतजलतुल्या-तज्जलं यथा-समस्तरत्नमिलितं पुष्कलतमं क्षयरहितमगाधं च भवति तथा या मतिः सर्वपदार्थावगाहिनी

जल जिस प्रकारसे पुष्कल होताहै, और अनेक जनोंका उपकारक होता है एवं शीघ्रतासे उसका नाश नहीं होता है, उसी प्रकार जो मति विपुल होती है ज्ञानावरणीय कर्मके अधिकतर क्षयोपशमसे युक्त होती है अनेक जनोंका उपकार करती है और शीघ्र नष्ट नहीं होती है ऐसी वह प्रचुर प्रमाणवाली बहुजनोपकारिणी एवं शीघ्रतासे नष्ट नहीं होनेवाली बुद्धि सर उदक समान कही गई है, अरञ्जोदक समान बुद्धिमें ज्ञानावरणीय कर्मका क्षयोपशम अल्प मात्रामें रहता है विदरोदक समान बुद्धिमें इसका क्षयोपशम अधिक मात्रामें रहता है, सर उदक समान बुद्धिमें इसका क्षयोपशम अधिकतर रहता है, और जो बुद्धि सागरोदक समान होती है, उसमें ज्ञानावरणीयकर्मका सर्वथा एकान्तिक अत्यन्त विनाश रहता है अतः वह समुद्रोदक समान कही गई है जैसे समुद्रका जल समस्त रत्नोंसे मिलित होता है पुष्कलतम होता है क्षयरहित होता है और अगाध होता है। उसी प्रकारसे जो

સરઉદક સમાન બુદ્ધિ--સરોવર અથવા તળાવ જેમ ખૂબ પાણીથી યુક્ત હોય છે, અને તેનું પાણી અનેક જીવોને ઉપકારક થઇ પડે છે અને તેનો જલ્દી નાશ પણ થતો નથી, એ જ પ્રમાણે જે મતિ વિપુલ હોય છે-જ્ઞાનાવરણીય કર્મના અધિકતર ક્ષયોપશમથી યુક્ત હોય છે, અનેક જનોને માટે ઉપકારક હોય છે અને શીઘ્ર નષ્ટ પણ થતી નથી, એવી વિપુલ પ્રમાણવાળી, બહુજનોપકારિણી અને શીઘ્રતાથી નષ્ટ નહીં થનારી બુદ્ધિને સરઉદક સમાન કહી છે. અરંજોદક સમાન બુદ્ધિમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ અલ્પ પ્રમાણમાં થયેલો હોય છે. વિદરોદક સમાન મતિમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ અધિક પ્રમાણમાં થયો હોય છે. સરઉદક સમાન મતિમાં તેનો ક્ષયોપશમ અધિકતર માત્રામાં થયો હોય છે, અને જે સાગરોદક સમાન મતિ હોય છે તેમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો અધિકતમ અથવા સંપૂર્ણતઃ વિનાશ થયેલો હોય છે. જેમ સમુદ્રનું જળ વિપુલ, અગાધ, ક્ષયરહિત અને સમસ્ત રત્નોથી યુક્ત હોય છે, એ જ પ્રમાણે જે મતિ સમસ્ત પદાર્થોમાં અવગાહિની હોય

विपुलतमाऽक्षीणाऽगाधा च भवति साऽखिलपदार्थविषयतयाऽतिशयितबहुत्वा-दक्षयत्वादगाधत्वाच्च सागरोदकसमाना कथ्यत इति चतुर्थी ।४। ॥ सू० २८ ॥

पूर्वं मतिरुक्ता, तद्वन्तो जीवा एव भवन्तीति जीवान्निरूपयितुमाह—

मूलम्—चउव्विहा संसारसमावन्नगा जीवा पण्णत्ता, तं जहा-णेरइया १, तिरिक्खजोणिया २, मणुस्सा ३, देवा ४।

चउव्विहा सव्वजीवा पण्णत्ता, तं जहा--मणजोगी १, वइ-जोगी २, कायजोगी ३, अजोगी ४।

अहवा--चउव्विहा सव्वजीवा पण्णत्ता, तं जहा--इत्थिवेयगा १, पुरिसवेयगा २, णपुंसगवेयगा ३, अवेयगा ४।

अहवा--चउव्विहा सव्वजीवा पण्णत्ता, तं जहा--चक्खुदंसणी १, अचक्खुदंसणी २, ओहिदंसणी ३, केवलदंसणी ४।

अहवा--चउव्विहा सव्वजीवा पण्णत्ता, तं जहा--संजया १, असंजया २, संजयासंजया ३, णो संजया णो असंजया ४। ॥ सू० २९ ॥

छाया—चतुर्विधाः संसारसमापन्नका जीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—नैरयिकाः १, तिर्यग्योनिकाः २, मनुष्याः ३, देवाः ४।

चतुर्विधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—मनोयोगिनः १, वाग्योगिनः २, काययोगिनः ३, अयोगिनः ४।

ऐसी मति होती है वह समस्त पदार्थोंमें अवगाहिनी होती है, उन्हे जाननेवाली होती है। अक्षीण और अगाध होती है इस तरह अखिल पदार्थोंको विषय करनेवाली होनेसे अनेक अतिशयोंवाली होनेसे अक्षय एवं अगाध होनेसे ऐसी बुद्धिको सागरोदक समान कहा गया है॥सूत्र२८॥

છે, તેમને જાણનારી હોય છે, વિપુલતમ હોય છે, અક્ષીણ અને અગાધ હોય છે, આ રીતે અનેક પદાર્થોનો બોધ કરાવનારી તે બુદ્ધિ અનેક અતિશયોવાળી, અક્ષય અને અગાધ હોવાથી એવી બુદ્ધિને સાગરોદક સમાન કહી છે. ॥ સૂ. ૨૮ ॥

अथवा—चतुर्विधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–स्त्रीवेदकाः १, पुरुषवेदकाः २, नपुंसकवेदकाः ३, अवेदकाः ४।

अथवा—चतुर्विधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–चक्षुर्दर्शनिनः १, अचक्षुर्दर्शनिनः २, अवधिदर्शनिनः ३, केवलदर्शनिनः ४।

अथवा—चतुर्विधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–संयताः १, असंयताः २, संयतासंयताः ३, नो संयता नो असंयताः ४। ॥ सू० २९ ॥

टीका—" चउव्विहा संसारसमावन्नगा जीवा " इत्यादि—

संसारसमापन्नकाः-संसरणं संसारः–भवाद्भवान्तरगमनं चतुर्विधगतिभ्रमणमित्यर्थः, तं समापन्नाः=प्राप्ताः संसारसमापन्नास्ता एव तथा, जीवाः चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–नैरयिकाः-नारकाः १, तिर्यग्योनिकाः–तिर्यग्योनिभवाः २, मनुष्याः ३, तथा देवाः ४। इमे चत्वारः स्व स्वकर्मचक्रपरिवर्तिता निरयादि भ्रमणसमापन्ना भवन्ति ।

" चउव्विहा सव्वजीवा " इत्यादि–सर्वजीवाः सर्वे च ते जीवाः सर्वजीवाः= सकलप्राणिनः चतुर्विधा प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–मनोयोगिनः–मनो योगसम्पन्नाः सम-

---

उक्त चतुर्विध मतिवाले जीवही होते हैं अतः अब सूत्रकार जीवोंकी निरूपणा करते हैं—' चउव्विहा संसारमावन्नगा ' इत्यादि सूत्र २९ ॥

टीकार्थ–एक भवसे द्वितीय भवमें गमन करना–नरक तिर्यञ्च आदि चार प्रकारकी गतियोंमें भ्रमण करना इसका नाम संसारहै। इस संसाररूप स्थानको प्राप्त हुए जो जीव हैं वे संसारसमापन्नक जीव हैं, ये संसार समापन्नक जीव संसारी जीव चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे–नैरयिक १ तिर्यग्योनिक २ मनुष्य ३ और देव ४ ये सब संसारी जीव अपने २ कर्मरूपी चक्रसे घुमाये गये नरकादि भवोंको प्राप्त करतेहैं

" चउव्विहा सव्वजीवा " इत्यादि—समस्त जीव चार प्रकारके

ઉપર્યુક્ત ચાર મતિનો સદ્‌ભાવ જીવોમાં જ હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર જીવોની પ્રરૂપણા કરે છે " ચઉવ્વિહા સંસારસમાવન્નગા " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ–એક ભવમાંથી બીજા ભવમાં ગમન કરવું–નરક, તિર્યંચ આદિ ચાર પ્રકારની ગતિઓમાં ભ્રમણ કરવું તેનું નામ સંસાર છે. તે સંસાર રૂપ સ્થાનને જે જીવોએ પ્રાપ્ત કર્યું છે તે જીવોને સંસાર સમાપન્નક જીવો અથવા સંસારી જીવો કહે છે. તે સંસારી જીવોનાં ચાર પ્રકાર કહ્યાં છે—(૧) નૈરયિક, (૨) તિર્યંચયોનિક, (૩) મનુષ્ય, અને (૪) દેવ આ સમસ્ત સંસારી જીવો પોતપોતાના કર્મ રૂપી ચક્ર વડે ભમાવતાં ભમાવતાં નિરયાદિ ભવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે

" ચઉવ્વિહા સવ્વજીવા " ઈત્યાદિ—સમસ્ત જીવોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) મનોયોગી-મનોયોગવાળા સમનસ્ક જીવો, (૨) વાગ્યોગી–

नस्काः १, एवं वाग्योगिनो-द्वीन्द्रियादयः २, काययोगिन एकेन्द्रियाः ३, अयो-गिनः-निरुद्धयोगाः सिद्धाश्च ४ इति।

'अहवा चउव्विहा सव्वजीवा' इत्यादि-अथवा-सर्वजीवाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-स्त्रीवेदकाः१,-पुरुषवेदकाः २,-नपुंसकवेदकाः-ये न स्त्रीवेदका न पुरुषवेदकास्ते नपुंसकवेदकाः३, तथा-अवेदकाः-स्त्री पुं नपुंसकवेदरहिताः सिद्धादयः।४।

कहे गये हैं जैसे-मनोयोगी मनोयोगवाले समनस्क १ वाग्योगवाले-द्वीन्द्रियादिक जीव २ काययोगी-काययोगवाले एकेन्द्रिय जीव ३, और अयोगी-निरुद्ध योगवाले सिद्ध जीव ४, तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि जो जीव मनोयोगवाले होते हैं, वे काय और वचन इन दो योगोंवाले भी होते हैं, अर्थात् जो समनस्क पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीव हैं, वे तीनों योगवाले होते हैं तथा जो अमनस्क असंज्ञी जीव हैं उनमें एकेन्द्रियके तो केवल एकही काययोग होता है और जो द्वीन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय और असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव हैं, वे वचनयोगी और काययोगी होते हैं मनोयोगी नहीं होते हैं। तथा योगोंसे रहित जो जीव होते हैं, वे सिद्ध जीवही होते हैं। इस प्रकारसे ये जीवके चार भेद कहे गये हैं ४

"अहवा चउव्विहा सव्वजीवा" अथवा-सर्व जीव इस तरहसे भी चार प्रकारके होते हैं जैसे-स्त्रीवेदवाले १ पुरुष वेदवाले २ नपुंसक वेदवाले ३ और अवेदक जीव-तीनों वेदसे रहित सिद्ध आदि जीव ४

વાગ્યોગવાળા દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવો, (૩) કાયયોગી-કાયયોગવાળા એકેન્દ્રિય જીવો અને (૪) અયોગી જીવો-નિરુદ્ધ યોગવાળા સિદ્ધ જીવો.

જે જીવો મનોયોગવાળા હોય છે, તેઓ વાગ્યોગ અને કાયયોગવાળા પણ હોય છે. એટલે કે જે સમનસ્ક પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવો છે, તેઓ ત્રણે યોગવાળા હોય છે, અને જે અમનસ્ક-અસંજ્ઞી જીવો છે તેમાંના એકેન્દ્રિયોને તો માત્ર કાયાનો જ સદ્ભાવ હોવાથી તેઓ કાયયોગી જ હોય છે, અને દ્વીન્દ્રિયો, ત્રીન્દ્રિયો, ચતુરિન્દ્રિયો અને અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવો કાયયોગી અને વચનયોગી હોય છે, પણ મનયોગી હોતા નથી. સિદ્ધ જીવોમાં યોગોનો સદ્ભાવ હોતો નથી. આ રીતે યોગને આધારે જીવોના ચાર પ્રકાર પડે છે.

"અહવા-ચઉવ્વિહા સવ્વજીવા" અથવા સમસ્ત જીવોના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) સ્ત્રી વેદવાળા, (૨) પુરુષ વેદવાળા, (૩) નપુંસક વેદવાળા અને અવેદક સિદ્ધ જીવો ત્રણે વેદોથી રહિત હોય છે.

"अहवा चउव्विहा सव्वजीवा" इत्यादि--अथवा सर्वजीवाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-चक्षुर्दर्शनिनः-चतुरिन्द्रियादयः १, तथा-अचक्षुर्दर्शनिनः-स्पर्शनादिदर्शनवन्तः एकेन्द्रियादयः २, तथा-अवधिदर्शनिनः-शक्रेन्द्रादयः ३, तथा-केवलदर्शनिनः-ऋषभादयः ४।

'अहवा चउव्विहा सव्वजीवा' इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-संयताः-पञ्चमहाव्रतधारिणः-सर्वविरताः १, तथा-असंयताः-अविरताः २, तथा-संयतासंयताः-संयताश्चतेऽसंयतास्तथा=देशविरताः ३, तथा-नो संयता नो असंयताः-सर्वविरताविरत-देशविरतभिन्नाः=सिद्धाः ४॥ सू० २९॥

पूर्वं जीवाः उक्ताः तदधिकाराज्जीवान्तर्गतपुरुषविशेषान्निरूपयितुंचतुःसूत्री आह-

मूलम्---चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--मित्ते णाममेगे मित्ते १, मित्ते णाममेगे अमित्ते २, अमित्ते णाममेगे मित्ते ३, अमित्ते णाममेगे अमित्ते ४। (१)

"अहवा चउव्विहा सव्वजीवा" अथवा इस तरहसे भी सर्व जीव चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-चक्षुर्दर्शनवाले-चौइन्द्रियादिक जीव १ तथा अचक्षुर्दर्शनवाले जीव-स्पर्शन आदि दर्शनवाले एकेन्द्रियादिक जीव २ अवधि दर्शनवाले शक्रेन्द्रादि जीव ३ और केवल दर्शनवाले ऋषभ भगवान आदि ४

"अहवा चउव्विहा सव्वजीवा" इत्यादि अथवा सर्व जीव चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-संयत-पञ्च महाव्रतधारी-सर्व विरतिवाले जीव १ तथा-असंयतजीव-अविरतजीव २ संयतासंयत जीव-देशविरतिवाले जीव ३ और नो संयत नो असंयत जीव सर्वविरत अविरत देशविरत इनसे भिन्न सिद्ध जीव॥ सू० २९॥

"अहवा चउव्विहा सव्वजीवा" અથવા સમસ્ત જીવોના આ પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) ચક્ષુદર્શનવાળા-ચતુરિન્દ્રિય આદિ જીવો. (૨) અચક્ષુદર્શનવાળા જીવો-સ્પર્શેન્દ્રિય આદિથી યુક્ત પણ ચક્ષુદર્શનથી રહિત એવા એકેન્દ્રિયાદિક જીવો. (૩) અવધિદર્શનવાળા શક્રેન્દ્ર આદિ જીવો અને કેવલદર્શનવાળા ઋષભ ભગવાન્ આદિ

"અહવા ચઉવ્વિહા સવ્વજીવા" અથવા સમસ્ત જીવોના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—સંયત-પંચ મહાવ્રતધારી સર્વ વિરતિવાળા જીવો, (૨) અસંયત જીવો એટલે કે અવિરત જીવો, (૩) સંયતાસંયત જીવો એટલે કે ઉપરના ત્રણે પ્રકારોથી ભિન્ન એવા સિદ્ધ જીવો. ॥ સૂ. ૨૯ ॥

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--मित्ते णाममेगे मित्तरूवे १, चउभंगो ४। (२)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--मुत्ते णाममेगे मुत्ते १, मुत्ते णाममेगे अमुत्ते ४, (३)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--मुत्ते णाममेगे मुत्तरूवे ४॥ ४ ॥ सू० ३० ॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–मित्रं नामैको मित्रं १, मित्रं नामैकोऽमित्रम् २, अमित्रं नामैको मित्रम् ३, अमित्रं नामैकोऽमित्रम् ४।(१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–मित्रं नामैको मित्ररूपः चतुर्भङ्गी४(२)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–मुक्तो नामैको मुक्तः मुक्तो नामैकोऽमुक्तः ४। (३)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–मुक्तो नामैको मुक्तरूपः ४ (४) ॥ सू० ३० ॥

टीका—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि--स्पष्टेयं चतुःसूत्री, नवरम्–एकः पुरुषः पूर्वमिहलोकोपकारित्वान्मित्रं भवति, स एव पुनः परलोकोपकारित्वात् मित्रं भवति, यथा सद्गुरुः । इति प्रथमः १ ।

इन कथित जीवोंके अन्तर्गत जो पुरुष विशेष हैं, उनका अब चार सूत्रों द्वारा सूत्रकार कथन करते हैं—

'चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र ३० ॥

टीकार्थ–पुरुषजात चार कहे गये हैं–जैसे–मित्र मित्र१ मित्र अमित्र२ अमित्र मित्र ३ और अमित्र अमित्र ४ इनमें प्रथम भंगके मनुष्य वे हैं जो जीवोंका इस लोक सम्बन्धी कल्याण करते हैं, और परलोक सम्बन्धी भी कल्याण करते हैं। अर्थात् इस लोकमें तुम्हारी भलाई

ઉપર્યુક્ત જીવોમાં જેમનો સમાવેશ થાય છે એવા પુરુષ વિશેષોનુ હવે સૂત્રકાર ચાર સૂત્રો દ્વારા નિરૂપણ કરે છે. "चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता" ઇત્યાદિ–

ટીકાર્થ–પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) મિત્ર–મિત્ર, (૨) મિત્ર–અમિત્ર, (૩) અમિત્ર–મિત્ર અને (૪) અમિત્ર–અમિત્ર.

પહેલા પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ—જે જીવો આ લોકમાં પણ આપણું કલ્યાણ કરે છે અને પરલોકમાં પણ આપણું કલ્યાણ કરે છે, એટલે કે પોતાના સદુપદેશ દ્વારા આલોકમાં આપણું કલ્યાણ કેવી રીતે થઈ શકે છે એ પણ બતાવે

तथा-एकः पुरुषः पूर्वं स्नेहवत्त्वान्मित्रं भवति, किन्तु पश्चात् स परलोक-साधनविघातकत्वादमित्रं भवति, यथा पुत्रकलत्रादिः । इति द्वितीयः ।२।

तथा-एकः पुरुषः प्राक् प्रतिकूलत्वादमित्रं भवति, स एव पश्चाद्वैराग्यभाग्यभाजनीकरणेन परलोकसाधनसहायकत्वान्मित्रं भवति यथाऽविनीतकलत्रादिरिति तृतीयः ३।

तथा-एकः पुरुषः प्रतिकूलत्वात् पूर्वमप्यमित्रं संक्लेशहेतुत्वेन दुर्गतिनिमित्तत्वात् पश्चादप्यमित्रमेव भवति, यथा-अविनीतपुत्रकलत्रप्रभृतिरिति चतुर्थः ४। (१)

कैसे हो सकती है। यह बात अपनी देशनासे प्रकट कर उपकारी होते हैं और परलोकमें भी तुम्हारी भलाई कैसे हो सकती है। यह करकर परलोकके निमित्त भी उपकारी होते हैं, ऐसे वे जीव सद्गुरु होते हैं। द्वितीय भंगके मनुष्य वे हैं, जो पहिले तो इस लोकमें स्नेही होकर मित्र होते हैं, पर वेही परलोक सम्बन्धी हितकारी साधनोंके विघातक होनेके कारण अमित्र शत्रु हो जातेहैं, जैसे पुत्र स्त्री आदि जन। तृतीय भंगके मनुष्य वे हैं जो पहिले प्रतिकूल होनेसे अमित्र होते हैं और वेही फिर बादमें वैराग्यके योग्य बना देनेके कारण परलोक सुधारनेमें सहायक बन जानेसे मित्र बन जातेहैं, जैसे-अविनीत कलत्र आदि जन। और चतुर्थ भंगके मनुष्य वे हैं जो प्रतिकूल होनेसे पहिले भी अमित्र रहता

છે, અને પરલોકમાં પણ આપણું કલ્યાણ કેવી રીતે થાય તે બતાવે છે, તેવા જીવોને આ પહેલા પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે. સદ્‌ગુરુ જ આ પ્રકારના હોય છે.

બીજા પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ—જે જીવો આલોકમાં તો આપણે સ્નેહી બનીને આપણું હિત કરનારા હોય છે, પણ પરલોકના હિતના વિઘાતક હોય એવાં જીવોને મિત્ર અમિત્ર રૂપ બીજા પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે. જેમકે પુત્ર, સ્ત્રી આદિને આ ભાંગામાં મૂકી શકાય.

ત્રીજા પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ—જે જીવો પહેલાં પ્રતિકૂળ હોવાને કારણે અમિત્ર રૂપ હોય છે, પણ તેમને કારણે જ આપણને સંસાર પ્રત્યે વૈરાગ્યભાવ ઉત્પન્ન થતો હોવાને કારણે, આપણો પરભવ સુધારવામાં જેઓ કારણભૂત બને છે, એવા જીવોને ત્રીજા પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે. જેમકે અવિનીત પત્ની, પુત્ર આદિને આ પ્રકારના જીવો ગણી શકાય છે.

ચોથા ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ—જે જીવો પહેલાં પણ પ્રતિકૂળ હોવાથી અમિત્ર રૂપ હોય છે, અને પાછળથી પણ સંક્લેશ પરિણામોના ઉત્પાદક

तथा-' चत्तारि पुरिसजाया ' इत्यादि-एको मित्रम्-अन्तःस्नेहवृत्त्या सुहृद्भवति स पुनर्बाह्योपचारकरणात् मित्ररूपः=सुहृदाकारो भवति १, तथा-एको मित्रमन्तर्वृत्त्या, किन्तूपरिष्टान्मित्रोपचाराकरणादमित्ररूपः-शत्रुरूपो भवतीति द्वितीयः २। तथा-एकोऽमित्रम्-शत्रुःस्नेहरहितत्वात्सपुनर्मित्ररूपः-सुहृदाकारो भवतीति तृती? ३, तथा-एकोऽमित्रममित्ररूपश्च भवतीति चतुर्थः।४।(२)

है और संक्लेश परिणामोंका हेतु होकर बादमें भी दुर्गतिका निमित्त हो जानेसे अमित्र होता है। जैसे अविनीत पुत्र कलत्र आदिजन ४

पुनश्च—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुरुषजात चार कहे गये हैं-जैसे-मित्र मित्ररूप १ मित्र अमित्र रूप २ अमित्र मित्र रूप ३ और अमित्र अमित्र रूप ४। इनमें कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो भीतरमें भी स्नेह वृत्तिवाला होता है, एवं बाह्यमें भी प्रेम रूप प्रवृत्ति या व्यवहार आदि करनेकी प्रवृत्ति उत्तम रखता है। वह मित्र मित्ररूप मनुष्य है १। कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो अन्तरङ्गकी वृत्तिसे तो मित्र होता है, पर बाह्यमें ऊपरसे वह मित्रके योग्य उपचार करनेकी वृत्तिसे रहित होताहै, अतः वह शत्रुरूप प्रतीत होताहै २। कोई एक मनुष्य ऐसा होताहै जो वास्तवमें अन्तरङ्गमें स्नेहसे तो शून्य होता है पर ऊपरी व्यवहारसे सुहृत् होनेका ढोंग करताहै ३।

હોવાને કારણે દુર્ગતિના નિમિત્ત રૂપ હોવાને કારણે અમિત્ર રૂપ જ રહે છે, એવાં અવિનીત પુત્ર, પત્ની આદિને આ ચોથા પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે.

" चत्तारि पुरिसजाया " ઈત્યાદિ—આ પ્રમાણે પણ ચાર પુરુષ પ્રકારો કહ્યા છે—મિત્ર-મિત્રરૂપ, (૨) મિત્ર-અમિત્રરૂપ, (૩) અમિત્ર-મિત્રરૂપ અને (૪) અમિત્ર-અમિત્રરૂપ.

હવે આ ચારે ભાંગાઓનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઇ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જેના હૃદયમાં આપણા પ્રત્યે સાચો પ્રેમ હોય છે અને તેનો બાહ્ય વ્યવહાર, હાવભાવ આદિ પ્રવૃત્તિ પણ સ્નેહપૂર્ણ જ હોય છે એવા મનુષ્યને મિત્ર-મિત્રરૂપ કહી શકાય છે. (૨) કોઇ માણસ એવો હોય છે કે જેના હૃદયમાં તો આપણા પ્રત્યે સ્નેહ હોય છે, પણ તેનું બાહ્ય વર્તન મિત્રને યોગ્ય નહીં હોવાથી તે અમિત્રરૂપ લાગે છે. (૩) કોઇ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જેનું હૃદય વાસ્તવિક સ્નેહ વિનાનું હોય છે, પણ તેના બાહ્ય વર્તનને કારણે-સ્નેહના દંભને કારણે તે આપણને મિત્રરૂપ લાગે છે. (૪) કોઇ એક મનુષ્ય આન્તરિક અને બાહ્ય બન્ને રૂપે સ્નેહ

तथा-' चत्तारि पुरिसजाया ' इत्यादि-स्पष्टम् नवरम्-एकः पुरुषः मुक्तः= द्रव्यतः परिवर्जितसङ्गो भवति, स पुनर्मुक्तः-भावतः सङ्गरहितत्वात् त्यक्ताऽऽसक्ति भवति, यथा-सुसाधुरिति प्रथमः ।१।

तथा-एकः पुरुषो मुक्तो-द्रव्यतस्त्यक्तसङ्गो भवन्नपि साऽऽसक्तिकत्वादमुक्तो भवति यथा रङ्कः । इति द्वितीयः २। तथा-एको द्रव्यतोऽमुक्तो भवन्नपि भावतस्तु मुक्तः त्यक्ताऽऽसक्तिर्भवति, यथा-राज्यावस्थोत्पन्नकेवलज्ञानसम्पन्नो भरतचक्रवर्तीति तृतीयः ३। तथा-एकोऽमुक्तोभवन् पुनरमुक्त एव तिष्ठतीति यथा

और कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो दोनों ही रूपसे-अन्तरङ्ग रूपसे और बहिरंग रूपसे अमित्रही बना रहताहै४। यह सब कथन आपेक्षिकहै।

पुनश्च—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुरुषजात चार कहे गयेहैं जैसे-कोई एक पुरुष ऐसा होताहै, जो द्रव्य और भाव दोनों रूपसे परिग्रहका त्यागी होताहै जैसे-सुसाधु-चारित्रसंपन्न मुनि१ ऐसा वह पुरुष मुक्त मुक्त कहा गया है, क्योंकि ऐसा पुरुष द्रव्यकी अपेक्षा भी सङ्गका त्यागी होता है, और भावकी अपेक्षा भी आसक्ति रूप-ममेदं रूपं (यह रूप मेराहै) मूर्च्छाभावका त्यागी होताहै१, कोई एक पुरुष ऐसा होताहै जो केवल द्रव्यकी अपेक्षासेही त्यागी होता है, भावकी अपेक्षासे त्यागी नहीं होता है जैसे-रङ्कजन २। कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो द्रव्यकी अपेक्षासे त्यक्त सङ्गवाला नहीं होता है, पर

વિહીન જ હોવાને કારણે અમિત્ર-અમિત્ર રૂપ લાગે છે. આ સમસ્ત કથન આપેક્ષિક છે.

" चत्तारि पुरिसजाया " ઇત્યાદિ—આ પ્રમાણે પણ ચાર પુરુષ પ્રકારો કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે બન્ને રૂપે દ્રવ્યની અને ભાવની અપેક્ષાએ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોય છે. જેમકે સુસાધુ ચારિત્રસંપન્ન મુનિ આ પ્રકારના હોય છે. એવા પુરુષને અહીં મુક્ત-મુક્ત કહ્યો છે, કારણ કે એવો પુરુષ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ સંગનો (પરિગ્રહનો) ત્યાગી હોય છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ આસક્તિ રૂપ મૂર્ચ્છાભાવથી રહિત હોય છે " આ મારૂ છે " એવો ભાવ તે જીવમાં હોતો નથી.

(૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોય છે, પણ ભાવની અપેક્ષાએ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોતો નથી. જેમકે ગરીબ માણસ.

(૩) કોઈ એક પુરુષ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોતો નથી,

रङ्कः । इति चतुर्थः ४। यद्वा-पूर्वापरकालमपेक्ष्येदं सूत्रं विवरणीयम् । यथा-एकः पूर्वं द्रव्यतो मुक्तः पश्चाद्भावतोऽपि मुक्तो भवतीत्यादिरीत्या ।(३)।

तथा-' चत्तारि पुरिसजाया ' इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि यथा-एकः पुरुष आसक्तिरहिततया मुक्तो भवन्नपि वैराग्यपिशुनाकारतया मुक्तरूपः-मुक्तस्येव रूपं यस्य स तथा भवति नतु वास्तविकमुक्तः, यथा-यतिः-स हि पुत्रादिसङ्गरहितोऽपि वैराग्यसूचकसाधुरूपमात्रधारको नतु मुक्तो मुक्तवद्रूपधारकः इति प्रथमः १।

भावकी अपेक्षासे त्यक्त सङ्गवाला होता है, जैसे राज्यावस्थामें उत्पन्न हुए केवल ज्ञानवाले भरत चक्रवर्ती ३।

कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो द्रव्य और भाव इन दोनों की अपेक्षाओंसे त्यक्त सङ्गवाला नहीं होता है, जैसे रङ्कजन । अथवा-इस सूत्रका व्याख्यान पूर्व अपर कालकी अपेक्षासे भी व्याख्या युक्त कर लेना चाहिये, जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होताहै, जो पहिले समयमें भी द्रव्यकी अपेक्षा मुक्त रहता है, और बादमें भी वह द्रव्यकी अपेक्षा मुक्त रहता है इत्यादि —

फिर भी "चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुरुष जात इस प्रकारसे भी चार कहे गये हैं जैसे-कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो आसक्तिसे रहित होनेसे मुक्त होता हुआ भी वैराग्यसूचक आकारसे मुक्तके जैसे रूपवाला होताहै, वास्तविक वह मुक्त नहीं होता है। जैसे यतिजन

પણ ભાવની અપેક્ષાએ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોય છે. જેમકે જેમને રાજ્યકાળ દરમિયાન કેવળજ્ઞાન થયું હતું એવો ભરત ચક્રવર્તી

(૪) કોઈ એક પુરુષ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોતો નથી અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોતો નથી. જેમકે રંકજન

આ સૂત્રને પૂર્વાપર કાળની અપેક્ષાએ પણ આ પ્રમાણે સમજાવી શકાય. (૧) કોઇ એક પુરુષ પહેલાં પણ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ મુક્ત (અપરિગ્રહી-મૂર્ચ્છાભાવ રહિત) રહે છે, અને પછી પણ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ મુક્ત જ રહે છે બાકીના ત્રણ પ્રકારો પણ એ જ પ્રમાણે સમજી લેવા.

"ચત્તારિ પુરિસજાયા" ઇત્યાદિ—આ પ્રમાણે ચાર પુરુષ પ્રકાર કહ્યા છે--(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આસક્તિથી રહિત હોવાને કારણે મુક્ત હોય છે, અને વૈરાગ્ય સૂચક આકાર, વેષ આદિને કારણે મુક્તના જેવા રૂપવાળો (લક્ષણવાળા) હોય છે, પણ વાસ્તવિક રીતે તે મુક્ત હોતો

तथा-एको मुक्तः-त्यक्तसङ्गो भवन्नपि अमुक्तरूपः अमुक्ताऽऽकारः वस्तु तस्तु मुक्त एव भवति यथा-गृहस्थावस्थायां श्री महावीरः । इति द्वितीयः२।

तथा-एकोऽमुक्तःसाऽऽसक्तित्वान्नमुक्तो भवति किन्तु स मुक्तरूपः-मुक्ता ऽऽकारो भाति, यथा कपटीसाधुरिति तृतीयः ३ । तथा-एकोऽमुक्तोऽमुक्तरूपश्च भवति, यथा गृहस्थ इति चतुर्थः ४। (४) ॥सू० ३०॥

जीवाधिकारात् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्यान्निरूपयि सूत्रद्वयमाह—

मूलम् —पंचिंदिय -- तिरिक्खजोणिया चउगईया चउआगईया पण्णत्ता, तं जहा—पंचिंदियतिरिक्खजोणिया पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जमाणा णेरइएहिंतो वा तिरिक्खजोणिएहिंतो वा मणुस्सेहिंतो वा देवेहिंतो वा उववज्जेज्जा, से चेव णं से पंचिंदियतिरिक्खजोणिए पंचिंदियतिरिक्खजोणियत्तं

ये यतिजन पुत्रादिरूपसे रहित होते हुए भी केवल ऊपरसेही साधुरूपमात्रके धारक होते हैं, मुक्त हुएकी तरह रूपके धारक नहीं होते हैं १।

कोई एक पुरुष ऐसा होता है, त्यक्त सङ्गवाला होता हुआ भी अमुक्त रूपवाला होताहै । अमुक्तके जैसे आकारवाला होता है, जैसे—गृहस्थावस्थामें श्री महावीरस्वामी थे २।

कोई एक मनुष्य ऐसा होताहै,जो आसक्तिवाला हो वह मुक्त तो होता नहीं है, किन्तु मुक्तके आकारवाला होताहै जैसे कोई कपटयुक्त यति ३।

और कोई एक मनुष्य ऐसा होताहै, जो अमुक्त हुआ ही अमुक्तके जैसे रूपवाला होता है, जैसे गृहस्थजन ४ ॥ सू० ३० ॥

નથી. જેમકે યતિજન તેઓ પુત્રાદિ રૂપ સંગથી રહિત હોવાને કારણે માત્ર બાહ્ય દૃષ્ટિએ જ સાધુરૂપના ધારક હોય છે પણ વાસ્તવિક રીતે મુક્તરૂપ હોતા નથી.

(૨) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ત્યક્ત સંગવાળો હોવા છતાં પણ અમુક્ત રૂપવાળો—અમુક્તના જેવા આકારવાળો હોય છે. જેમકે ગૃહસ્થાવસ્થામાં મહાવીર સ્વામી આ પ્રકારના પુરુષ હતા.

(૩) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે આસક્તિવાળો હોવાથી મુક્ત તો હોતો નથી, પણ મુક્ત જેવો દેખાતો હોય છે જેમકે કોઈ કપટી યતિ

(૪) કોઇ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે અમુક્ત હોય છે અને અમુક્ત જેવો જ દેખાય છે જેમકે ગૃહસ્થજન. ॥ સૂ. ૩૦ ॥

विप्पजहमाणे णेरइयत्ताए वा जाव देवत्ताए वा उवागच्छेज्जा, मणुस्सा चउगईया चउआगईया, एवं चेव मणुस्सावि ॥सू०३१॥

छाया—पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाश्चतुर्गतिकाश्चतुरागतिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकेषु उपपद्यमाना नैरयिकेभ्यो वा तिर्यग्योनिकेभ्यो वा मनुष्येभ्यो वा देवेभ्यो वा उपपद्येरन्, तेषामेव खलु स पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकत्वं विप्रजहत् नैरयिकतया वा यावत् देवतया वोपागच्छेत्, मनुष्याश्चतुर्गतिकाश्चतुरागतिकाः एवमेव मनुष्या अपि॥सू०३२॥

टीका—पंचिदियतिरिक्खजोणिया' इत्यादि—सूत्रद्वय स्पष्टम्, नवरं-पञ्चेन्द्रियाश्च ते तिर्यग्योनिकाः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः, नैरयिकतया वा यावत्' इत्यत्र यावत्पदेन ' तिर्यग्योनिकतया, मनुष्यतये '-ति सङ्ग्राह्यम् ॥ सू० ३१ ॥

जीवाधिकाराद् द्वीन्द्रियान् असमारभमाणस्य समारभमाणस्य च संयमा-संयमान् निरूपयितुं सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—बेइंदियाणं जीवा असमारभमाणस्स चउव्विहे संजमे कज्जइ, तं जहा-जिब्भामयाओ सोक्खाओ अववरोवित्ता भवइ१, जिब्भामएणं दुक्खेणं असंजोगेत्ता भवइ २, फासमयाओ सोक्खाओ अववरोवेत्ता भवइ ३, फासमएणं दुक्खेणं असंजो-

---

जीवके अधिकारको लेकरही अब सूत्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्योंका निरूपण करनेके लिये दो सूत्र कहते हैं—

टीकार्थ- पंचिदिय तिरिक्खजोणिया इत्यादि' सूत्र ३१ ॥

पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च-चारों गतिमें आनेवाले और चारों गतियोंसे आकर पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चरूपसे उत्पन्न होनेवाले होते हैं-इत्यादि रूपसे इस सूत्रकी व्याख्या सुगम है ॥ सू० ३१ ॥

જીવનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે, તેથી હવે સૂત્રકાર પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો અને મનુષ્યોનું નિરૂપણ કરવા નિમિત્તે બે સૂત્રો કહે છે.

" પંચિંદિયતિરિક્ખજોણિયા " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો ચારે ગતિઓમાં ગમન કરનારા હોય છે અને ચારે ગતિઓમાંથી આવીને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં ઉત્પન્ન થનારા હોય છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સુગમ હોવાથી અહીં વધુ વિવેચન કરવાની જરૂર નથી. ॥ સૂ. ૩૧ ॥

गेत्ता भवइ ४, वेइंदियाणं जीवा समारभमाणस्स चउव्विहे असंजमे कज्जइ, तं जहा--जिब्भामयाओ सोक्खाओ ववरोवित्ता भवइ, १, जिब्भामएणं दुक्खेणं संजोगित्ता भवइ २, फासमयाओ सोक्खाओ ववरोवेत्ता भवइ ३, फासमएणं दुक्खेणं संजोगित्ता भवइ ४ ॥ सू० ३२ ॥

छाया–द्वीन्द्रियान् खलु जीवान् असमारभमाणस्य चतुर्विधः संयमः क्रियते, तद्यथा–जिह्वामयात् सौख्यात् अव्यपरोपयिता भवति ? जिह्वामयेन दुःखेन असंयोजयिता भवति २, स्पर्शमयात् सौख्यात् अव्यपरोपयिता भवति ३, स्पर्शमयेऽन दुःखेन असंयोजयिता भवति ४। द्वीन्द्रियान् खलु जीवान् समारभमाणस्य चतुर्विधोऽसंयमः क्रियते, तद्यथा–जिह्वामयात् सौख्यात् व्यपरोपयिता भवति १, जिह्वामयेन दुःखेन संयोजयिता भवति २, स्पर्शमयात् सौख्यात् व्यपरोपयिता भवति ३, स्पर्शमयेन दुःखेन संयोजयिता भवति ४ ॥ सू० ३२ ॥

टीका—'वेइंदियाणं इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं–द्वीन्द्रियान् जीवान् असमारभमाणस्य–अविराधयतश्चतुर्विधः–चतुष्प्रकारः सयमः क्रियते–विधीयते, तद्यथा–जिह्वामयात्–सौख्यात्–रसास्वादनजन्यसुखात् अव्यपरोपयिता–द्वीन्द्रि-

---

जीवके अधिकारको लेकरही अब सूत्रकार द्वीन्द्रिय जीवोंकी विराधना नहीं करनेवाले जीवके और उनकी विराधना करनेवाले जीवके संयम असंयमकी निरूपणा दो सूत्रसे करते हैं—

'वेइंदियाणं जीवा असमारभमाणस्स' इत्यादि सूत्र ३२ ॥

टीकार्थ–दो इन्द्रिय जीवोंकी विराधना नहीं करनेवाला जीव चार प्रकारका संयम करताहै । जैसे-वह उनका जिह्वा सम्बन्धी सुखका अवियोग करनेवाला होता है, अर्थात्–जो जीव द्वीन्द्रिय जीवकी विराधना नहीं करता है वह उन्हें रसना इन्द्रिय जन्य सुखसे रसास्वादनसे जायमान सुखसे

જીવનો અધિકાર ચાલુ છે તેથી હવે સૂત્રકાર દ્વીન્દ્રિય જીવોની વિરાધના નહીં કરનારા સંયમી જીવના સંયમનું અને તેમની વિરાધના કરનારા અસંયમી જીવોના અસંયમનું બે સૂત્રો દ્વારા નિરૂપણ કરે છે—

"वे इंदियाणं जीवा असमारभमाणस्स" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–દ્વીન્દ્રિય જીવોની વિરાધના નહીં કરનારો જીવ ચાર પ્રકારનો સંયમ કરે છે—(૧) તે તેમના જિહ્વા સંબંધી સુખનો વિયોગ કરનારો હોતો નથી એટલે કે જીવ દ્વીન્દ્રિય જીવોની વિરાધના કરતો નથી, તે તેમને રસનેન્દ્રિય જન્ય સુખથી (રસાસ્વાદથી પ્રાપ્ત થતાં સુખથી) વંચિત કરતો નથી,

यान् जीवान् अविनाशयिता-अवियोजयिता भवति १, जिह्वामयेन दुःखेन असंयोजयिता भवतीत्यर्थः ।२। स्पर्शमयात् सौख्याद्व्यपरोपयिता भवति ३, स्पर्शमयेन दुःखेनासंयोजयिता भवति ४ इति चतुर्विधः संयमः । द्वीन्द्रियान् जीवान् समारभमाणस्य चतुर्विधोऽसंयमो यथा-जिह्वामयात् सौख्याद् व्यपरोपयिता भवति १ जिह्वामयेन दुःखेन संयोजयिता भवति २, स्पर्शमयात् सौख्याद् व्यपरोपयिता भवति ३, स्पर्शमयेन दुःखेन संयोजयिता भवति ४ । ।सू० ३२।।

वंचित नहीं करताहै। यदि वह ऐसा करता है, तो वह-उनकी विराधना करता है १। तथा-जिह्वामय दुःखसे वह उनका असंयोजयिता होताहै २। इसी तरहसे वह उनके स्पर्शन इन्द्रियके सुखका अवियोग करनेवाला होता है ३ और स्पर्शन इन्द्रियके दुःखसे वह उनके संयुक्त करानेवाला नहीं होता है ४। इस प्रकार वह उनके स्पर्शन और रसना इन्द्रियके सुखका अविध्वंसक होनेसे इनके दुःखका संयोजक नहीं होनेसे संयमका पात्र बनताहै, और जब वह द्वीन्द्रिय जीवोंकी विराधना करता है, तब वह चतुर्विध असंयमका पात्र होता है-वह जब उनकी जिह्वाके सुखका व्यपरोपण करनेवाला होताहै, १ जिह्वाके दुःखसे उन्हें संयोजित करता है, २ स्पर्शके सुखसे उन्हे व्यपरोपित करता है एवं स्पर्शनेन्द्रियको दुःख पहुंचे ऐसा कार्य जब वह करता है, तो इस प्रकारकी उनके प्रति की गई प्रवृत्तिसे वह उनका विराधक होनेसे चार

એથી ઊલટું તેમને આ પ્રકારના સુખથી વંચિત કરનાર જીવ તેમનો વિરાધક ગણાય છે. (૨) તે જિહ્વાના દુઃખથી તેમને સંયોજીત કરતો નથી એટલે કે તેમને જિહ્વાથી રહિત કરીને દુઃખી કરતો નથી. (૩) તે તેમના સ્પર્શેન્દ્રિયના સુખનો અવિયોગ કરનારો હોય છે એટલે કે તેમને સ્પર્શેન્દ્રિયજન્ય સુખથી વંચિત કરનારો હોતો નથી (૪) તે તેમને સ્પર્શેન્દ્રિયના દુઃખથી યુક્ત કરનારો પણ હોતો નથી આ પ્રકારે તે તેમના સ્પર્શેન્દ્રિય અને રસનેન્દ્રિયજન્ય સુખનો અવિધ્વંસક હોવાથી તેમના દુઃખનો સંયોજક નહીં હોવાથી સંયમી ગણુવાને યોગ્ય બને છે.

દ્વીન્દ્રિય જીવોની વિરાધના કરનારો જીવ ચાર પ્રકારનો અસંયમ સેવે છે—(૧) તે તેમની જિહ્વા સંબંધી સુખથી તેમને વંચિત કરનારો હોય છે. (૨) તે તેમને જિહ્વાના દુઃખથી સંયોજીત (યુક્ત) કરે છે. (૩) તે તેમને સ્પર્શ સંબંધી સુખથી વંચિત કરનારો હોય છે. (૪) અને તેમને સ્પર્શેન્દ્રિય સંબંધી દુઃખથી સંયોજીત કરનારો હોય છે આ ચાર પ્રકારે તેમની વિરાધના કરનારો જીવ ચાર પ્રકારના અસંયમથી યુક્ત થવાને કારણે

जीवाधिकारादेव सम्यग्दृष्टीनां नैरयिकादीनां जीवानां क्रिया निरूपयितुमाह—

मूलम्—सम्मद्दिट्ठियाणं णेरइयाणं चत्तारि किरियाओ, पण्णत्ताओ, तं जहा—आरंभिया १, परिग्गहिया २, मायावत्तिया ३, अपच्चक्खाणकिरिया ४।

सम्मद्दिट्ठियाणमसुरकुमाराणं चत्तारि किरियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा एवंचेव, एवं विगलिंदियवज्जं जाव वेमाणियाणं ॥सू०३३॥

छाया—सम्यग्दृष्टीनां नैरयिकाणां चतस्रः क्रियाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आरम्भिकी १, पारिग्रहिकी २, मायाप्रत्ययिकी ३, अप्रत्याख्यानक्रियाः ४।

सम्यग्दृष्टीनामसुरकुमाराणां चतस्रः क्रियाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एवमेव, एवं विकलेन्द्रियवर्जं यावत् वैमानिकानाम् ॥सू०३३॥

टीका—"सम्मद्दिट्ठिया णं"—सम्यग्दृष्टीनां नैरयिकाणां=नारकाणां जीवानां चतस्रोऽनुपदं वक्ष्यमाणाः क्रियाः प्रज्ञप्ताः, मिथ्यात्वक्रियाया विरहात्, तद्यथा—आरम्भिकी, पारिग्रहिकी, मायाप्रत्ययिकी, अप्रत्याख्यानक्रिया ४:।

प्रकारके असंयमका पात्र होताहै। इस कथनका सारांश ऐसा है कि दो इन्द्रिय जीवके स्पर्शन और रसना ये दोही इन्द्रियां होती हैं—उनकी इन दो इन्द्रियोंको किसी भी तरहसे कष्ट न पहूँचे ऐसी प्रवृत्ति करनेवाला और उन दो इन्द्रियोंको आरामही पहूंचे ऐसी प्रवृत्ति करनेवाला जीव चार प्रकारके संयमका और उनके प्रतिकूल प्रवृत्ति करनेवाला जीव चार प्रकारके असंयमका पात्र होता है ॥ सू० ३२ ॥

जीवके अधिकारको लेकरही अब सूत्रकार सम्यग्दृष्टि नैरयिक जीवोंकी क्रियाका निरूपण करते हैं—

અસંયમી ગણાય છે. આ કથનનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે–દ્વીન્દ્રિય જીવોને જીભ અને સ્પર્શેન્દ્રિય, આ બે ઇન્દ્રિયો જ હોય છે. તેમની આ બે ઇન્દ્રિયોને કોઈ પણ પ્રકારે કષ્ટ ન પહોંચે અને તેમને આરામ જ મળે એવી પ્રવૃત્તિ કરનાર જીવને ચાર પ્રકારના સંયમને પાત્ર ગણ્યો છે અને એમને પ્રતિકૂળ થઈ પડે એવી પ્રવૃત્તિ કરનાર જીવને ચાર પ્રકારના અસંયને પાત્ર કહ્યો છે. સૂ. ૩૨

જીવનો અધિકાર ચાલુ હોવાથી હવે સૂત્રકાર સમ્યગ્દૃષ્ટિ નૈરયિક જીવોની ક્રિયાનું નિરૂપણ કરે છે. "सम्मद्दिट्ठियाणं नेरइयाणं" ઇત્યાદિ—

"सम्मद्दिट्ठियाणमसुरकुमाराणं" इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्-एवम्= नैरयिकाणामिव, विकलेन्द्रियवर्जं=विकलेन्द्रियाः-एकद्वित्रिचतुरिन्द्रियजीवाः, तान् वर्जित्वा-विहाय असुरकुमारेभ्य आरभ्य वैमानिकपर्यन्तानामारम्भिक्या दयश्चतस्रः क्रियाः किन्तु मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकीक्रियामाश्रित्य पञ्चापि क्रिया भवन्ति ॥ सू० ३३ ॥

पूर्वं क्रिया उक्ताः तद्वान् जीवः विद्यमानान् गुणान्नाशयति असतःगुणान् प्रकटयति चेति प्रदर्शयितुं सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—चउहिं ठाणेहिं संते गुणे नासेज्जा, तं जहा-कोहेणं१, पडिनिवेसेणं२, अकयण्णुयाए३, मिच्छत्ताभिनिवेसेणं४,(१) चउहिं ठाणेहिं असंतेगुणे दीवेज्जा, तं जहा-अब्भासवत्तियं परच्छन्दाणुवत्तियं२, कज्जहेउं३, कयपडिकइयेइ ४वा (२)सू०३४॥

टीकार्थ–सम्मद्दिट्ठियाणं नेरइयाणं' इत्यादि सूत्र ३३ ॥

जो सम्यग्दृष्टि नैरयिक हैं, उनके चार क्रियाएँ होती हैं-वे इस प्रकारसे हैं-जैसे-आरम्भिकी १ पारिग्रहिकी २ माया प्रत्ययिकी ३ और अप्रत्यख्यान क्रिया यहां मिथ्यात्व क्रिया नहीं होती है।

सम्यग्दृष्टि असुरकुमारोंके भी येही पूर्वोक्त चार क्रियाएँ होती हैं। यहां पर भी मिथ्यात्व क्रिया नहीं होतीहै। तथा येही चार क्रियाएँ एकेन्द्रिय दोइन्द्रिय. तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीवोंको छोडकर बाकीके वैमानिक पर्यन्त जीवोंको होती हैं ऐसा जानना चाहिये विकलेन्द्रिय जीवोंको मिथ्यादृष्टि होनेसे चार क्रियाएँ नहीं होती हैं किन्तु मिथ्यादर्शन प्रत्ययिकी क्रियाको आश्रित करके पांचों भी क्रियाएँ होतीहैं।सू.३३।

ટીકાર્થ–સમ્યગ્દૃષ્ટિ નારકોમાં ચાર પ્રકારની ક્રિયાઓનો સદ્‌ભાવ હોય છે, તે ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) આરમ્ભિકી, (૨) પારિગ્રહિકી, (૩) માયા પ્રત્યયિકી અને અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા. તેમનામાં મિથ્યાત્વ ક્રિયાનો સદ્‌ભાવ હોતો નથી. સમ્યગ્દૃષ્ટિ અસુરકુમારોમાં પણ ઉપર્યુક્ત ચાર ક્રિયાઓનો જ સદ્‌ભાવ હોય છે. તેમનામાં પણ મિથ્યાત્વ ક્રિયાનો અભાવ હોય છે તથા આ ક્રિયાઓનો સદ્‌ભાવ એકેન્દ્રિય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય સિવાયના વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં પણ હોય છે. વિકલેન્દ્રિય જીવો મિથ્યાદૃષ્ટિ જ હોય છે, તે કારણે તેમનામાં પૂર્વોક્ત ચાર ક્રિયાઓનો તો સદ્‌ભાવ હોય છે જ, પણ તે ઉપરાંત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયિકી ક્રિયાનો પણ સદ્‌ભાવ હોય છે. ॥ સૂ. ૩૩ ॥

छाया—चतुर्भिः स्थानैः सतो गुणान् नाशयति, तद्यथा-क्रोधेन १, प्रतिनिवेशेन २, अकृतज्ञतया ३, मिथ्यात्वाभिनिवेशेन च। (१)

चतुर्भिः स्थानैरसतो गुणान् दीपयति, तद्यथा-अभ्यासप्रत्ययं १, परच्छन्दानुवृत्तिकं २, कार्यहेतोः ३, कृतप्रतिकृतितेति ४ (२) ॥३४॥

टीका—' चउहिं ठाणेहिं ' इत्यादि—

चतुर्भिः—वक्ष्यमाणैः स्थानैः-कारणैः जीवः सतो-विद्यमानान् गुणान् नाशयति, तद्यथा-क्रोधेन १, तथा-प्रतिनिवेशेन=अहङ्कारेण ' अयं पूज्यतेऽहेतुने ' त्येवं परसत्काराऽसहनरूपेण २, तथा-अकृतज्ञतया=परकृतोपकारविस्म-

---

उक्त क्रियाशाली जीव विद्यमान गुणोंको नष्ट कर देता है और दूसरोंमें अविद्यमान गुणोंको प्रगट करता है यही बात अब सूत्रकार प्रकट करते हैं—'चउहिं ठाणेहिं संते गुणे नासेज्जा' इत्यादि सूत्र३४ ॥

टीकार्थ-चार कारणोंसे जीव विद्यमान गुणोंका नाश करताहै जैसे-क्रोधसे १ प्रतिनिवेशसे २ अकृतज्ञतासे ३ और मिथ्यात्वाभिनिवेशसे ४ इनमें क्रोध यह कषायहै, क्षमाके विपरीत जितनी भी आत्माकी विकृतिरूप परिणति है वह क्रोधहै१ प्रतिनिवेश नाम अहङ्कारका है " यह विनाही कारणके माननीय हो रहा है " इस प्रकारकी जो परके सत्कारको असहन करनेरूप जो वृत्ति है वह अहङ्कारहै ।२ दूसरेके किये हुए उपकारको भूल जाना इसका नाम अकृतज्ञता है ३ और मिथ्यादर्शनके

પૂર્વોક્ત ક્રિયાશાલી જીવે। વિદ્યમાન ગુણોના નાશ કરી નાખે છે અને અન્ય જીવોમાં જે ગુણો વિદ્યમાન ન હોય તેનું તેમનામાં આરોપણ કરે છે. એ જ વાત સૂત્રકાર હવે પ્રકટ કરે છે

" चउहिं ठाणेहिं संते गुणे नासेज्जा " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-નીચેના ચાર ગુણોને લીધે જીવ વિદ્યમાન ગુણોના નાશ કરે છે—(૧) ક્રોધને કારણે, પ્રતિનિવેશને કારણે, (૩) અકૃતજ્ઞતાને કારણે, (૪) મિથ્યાત્વ અભિનિવેશને કારણે.

ક્રોધ કષાયરૂપ છે, ક્ષમાથી વિપરીત એવી આત્માની જે વિકૃતિરૂપ પરિણતિ છે તેને ક્રોધ કહે છે. પ્રતિનિવેશ એટલે અહંકાર. કોઈને માન મળતું જોઈને મનમાં આ પ્રકારની વૃત્તિ ઉત્પન્ન થવી કે " આ માણસ વિના કારણ માનનીય બની રહ્યો છે, " તેનું નામ અહંકાર છે. આ અહંકારને લીધે અન્યના સત્કાર આદિ સહન થતું નથી. અન્ય દ્વારા કરવામાં આવેલા ઉપકારોને ભૂલી જવાં, તેનું નામ અકૃતજ્ઞતા છે. મિથ્યાદર્શનના ઉદયથી જે

रुषेण ३, तथा–मिथ्यात्वाभिनिवेशेन–मिथ्यात्वात्=मिथ्यादर्शनोदयाद् योऽभिनिवेश आग्रहस्तेन बोधविपर्यासेन,

उक्तञ्च–" रोसेण पडिनिवेसेण तहय अकयण्णुमिच्छभावेणं ।
संतगुणे नासित्ता भासइ अगुणे असंते वा ॥१॥

छाया–रोषेण प्रतिनिवेशेन तथैवाऽकृतज्ञमिथ्याभावेन ।
सद्गुणान् नाशयित्वा भाषतेऽगुणानसतः ॥१॥ इति । (१)

" चउहिं ठाणेहिं असंते " इत्यादि—चतुर्भिः स्थानैः परस्यासतो गुणान् दीपयति, तद्यथा–अभ्यासप्रत्ययम्–अभ्यासः–गुणवर्णनकरणस्वभावः स प्रत्ययो–निमित्तं यत्र गुणदीपने तदभ्यासप्रत्ययं, यतोऽभ्यासान्निर्विषयाऽपि निष्प्रयोजनाऽपिच प्रवृत्तिर्भवतीति लोके दृश्यते १, तथा–परच्छन्दानुवृत्तिकं–परच्छन्दस्य अन्यजनाभिप्रायस्यानुवृत्तिः–अनुगमनं यत्र दीपने तत् परच्छन्दानुवृत्तिकं दीपनम् २

उदयसे जो अभिनिवेश आग्रह होता है उसका नाम मिथ्यात्वाभिनिवेश है ४ यह मिथ्यात्वाभिनिवेश बोधसे उलटा होना है कहा भी है–" रोसेणं पडिनिवेसेण " इत्यादि । जीव रोष–क्रोधसे प्रतिनिवेशसे अकृतज्ञतासे और मिथ्यात्वभावसे विद्यमान गुणोंको नष्ट करके दूसरोंके अविद्यमान दुर्गुणोंको प्रकट करता है ॥ १ ॥

जीव चार कारणोंसे परके असत् गुणोंको प्रकाशित करताहै, और उन्हे चढा बढाकर कहता है–वे चार कारण ये हैं–अभ्यासप्रत्यय १ परच्छन्दानुवृत्तिक २ कार्य हेतु ३ और कृतप्रतिकृतिता ४ (२)

जिस गुणवर्णनमें गुणवर्णन करनेका स्वभाव कारण होताहै, वह गुणदीपन अभ्यास प्रत्ययहै क्योंकि अभ्याससे विना विषयके भी और विना प्रयोजनके भी लोकमें प्रवृत्ति होती देखी जाती है । तात्पर्य यह है कि

અભિનિવેશ–દુરાગ્રહ ઉત્પન્ન થાય છે તેને મિથ્યાત્વાભિનિવેશ કહે છે. આ મિથ્યાત્વાભિનિવેશ બોધથી ઉલ્ટો હોય છે કહ્યું પણ છે કે—

" रोसेणं पडिनिवेसेण " ઇત્યાદિ " જીવ ક્રોધથી, અહંકારથી, અકૃતજ્ઞતાથી અને મિથ્યાત્વભાવથી વિદ્યમાન ગુણોને નષ્ટ કરીને અન્યના અવિદ્યમાન દુર્ગુણોને પ્રકટ કરે છે. જીવ ચાર કારણોથી અન્યના અવિદ્યમાન ગુણોને પ્રકટ કરે છે અથવા તેમને વધારી વધારીને કહ્યા કરે છે.

તે ચાર કારણો નીચે પ્રમાણે કહ્યાં છે—(૧) અભ્યાસ પ્રત્યય, (૨) પરચ્છન્દાનુવૃત્તિક, (૩) કાર્યહેતુ અને (૪) કૃતપ્રતિકૃતિતા

જે ગુણવર્ણનમાં ગુણવર્ણન કરવાનો સ્વભાવ કારણભૂત હોય છે, તે ગુણપ્રકાશનને અભ્યાસપ્રત્યય (અભ્યાસ રૂપ કારણથી યુક્ત) ગુણપ્રકાશન કહે છે, કારણ કે ટેવને કારણે પ્રયોજન વિના પણ લોકમાં આવી પ્રવૃત્તિ થતી

तथा—कार्यहेतोः-कार्यमेव हेतुः कार्यहेतुस्तस्मात्-स्वाभिलपित-कार्य-साधनाय परमनुकूलयितुं परस्यासतो गुणान् दीपयतीत्यर्थः ३, तथा-कृतप्रति-कृतेति-केनचिज्जनेन कस्यचिदुपकृतं स तस्योपकर्तुरसतोऽपि गुणान् प्रत्युपकारार्थमुत्कीर्तयतीति कृतप्रतिकृतिः तस्याभाव कृतप्रतिकृतितेति हेतोः ।.४।। सू० ३४।।

जिनमें जो गुण नहीं हैं, उनका वहां पर कथन करना यह बात अभ्याससे भी होती है। जैसे चारण आदिकोंमें यह बात पाई जातीहैं उनका स्वभावही कुछ ऐसा होता है कि जिससे वे असत् गुणोंका अतिशय रूपसे वर्णन किया करते हैं। तथा जिस असत्-गुणकथनमें दूसरे जनके अभिप्रायका अनुगमन (पीछे चलना) कारण होता है, वह पर-च्छन्दानुवृत्तिक दीपन है २। इस परच्छन्दानुवर्तनमें गुणदीपन कर्ताका ऐसा भाव रहता है कि दूसरोंने इनके गुणों का वर्णन कियाहै, अतः हमें भी इसके गुणोंका वर्णन करना चाहिये। तथा एक गुणदीपन ऐसा होता है जो अपने अभिलषित कार्यको सिद्ध करनेके लिये किया जाता है, इससे वह अपने अनुकूल हो जाता है। और फिर अभिलषित कार्य सिद्ध करा लिया जाता है, और असत् एक गुणदीपन ऐसा होता है, जो अपने उपकारीजनके प्रत्युपकारके निमित्त किया जाता है, इसीका नाम प्रतिकृतिता है ॥ सू० ३४ ॥

જોવામાં આવે છે. એટલે કે જે લોકોમાં જે ગુણોનો સદ્‌ભાવ ન હોય તે ગુણોનું આરોપણ કરવાનું કાર્ય અભ્યાસથી પણ થઈ શકે છે. ચારણ વગેરેમાં આ પ્રકારનો અભ્યાસ જોવામાં આવે છે. તેમનો સ્વભાવ જ એવો હોય છે કે અવિદ્યમાન ગુણોનું વ્યક્તિમાં આરોપણ કરીને તેની અતિશયોક્તિ ભરી પ્રશંસા કરવાની તેમને ફાવટ આવી ગઇ હોય છે જે ગુણકથનમાં અન્યના અભિપ્રાયને જ અનુસરવામાં આવે છે એવા ગુણકથનને પરચ્છન્દાનુવૃત્તિક કહે છે. આ પ્રકારે અન્યના ગુણોને પ્રકટ કરનારની વૃત્તિ એવી હોય છે કે બીજા લોકો તેના ગુણોની પ્રશંસા કરે છે, તો મારે પણ એમ જ કરવું જોઈએ. (૩) કોઇ વખત પોતાના ઇચ્છિત કાર્યને પાર પાડવા માટે પણ અન્યના અવિદ્યમાન ગુણોને પ્રકટ કરવામાં આવે છે. આ પ્રકારે તે વ્યક્તિને પોતાને અનુકૂળ બનાવી દઇને ધાર્યું કાર્ય તેની પાસે કરાવી લેવાય છે. (૪) પોતાનો ઉપકાર કરનાર પ્રત્યે કૃતજ્ઞતાનો ભાવ પ્રકટ કરવા માટે પણ તેના અવિદ્યમાન ગુણોને પ્રકટ કરવામાં આવે છે. તેનું નામ જ પ્રતિકુતિતા છે. ॥ સૂ. ૩૪ ॥

पूर्वं सद्गुणनाशता सद्गुणदीपने उक्ते, ते च जीवस्य शरीरोत्पत्तिनिर्वृत्ती विना न सम्भव इति शरीरोत्पत्तिनिर्वृत्तिकारणानि निरूपयितुमाह—

मूलम्—णेरइयाणं चउहिं ठाणेहिं सरीरुप्पत्तीसिया, तं जहा—कोहेणं १, माणेणं २, मयाए ३, लोभेणं ४, एवं जाव वेमाणियाणं ।

णेरइयाणं चउहिं ठाणेहिं निव्वत्तिए सरीरे पण्णत्ते, तं जहा-कोहनिव्वत्तिए जाव लोभनिव्वत्तिए, एवं जाव वेमाणियाणं॥सू. ३५॥

छाया-नैरयिकाणां चतुर्भिः स्थानैः शरीरोत्पत्तिः स्यात्, तद्यथा-क्रोधेन१, मानेन २, मायया ३, लोभेन ४। एवं यावत् वैमानिकानाम् ।

नैरयिकाणां चतुर्भिः स्थानैः निर्वर्तितं शरीरं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—क्रोधानिर्वर्तितं यावत् लोभनिर्वर्तितम्, एवं यावद् वैमानिकानाम् ॥ ३५ ॥

टीका—'चउहिं ठाणेहिं सरीरुप्पत्ती' इत्यादि—चतुर्भिः—अनुपदं वक्ष्यमाणैः क्रोधादिभिः चतुर्भिः स्थानैः—कारणैः शरीरोत्पत्तिः स्यात्, तद्यथा—क्रोधेन १, मानेन २, मायया ३, लोभेन ४ चेति, इह क्रोधादयः कर्म-

---

सद्गुणोंका नाश और असद्गुणोंका दीपन ये दो बातें जीवको जब तक शरीरकी उत्पत्ति या उसकी निर्वृत्ति नहीं हो जाय, तब तक नहीं होती हैं, अतः अब सूत्रकार शरीरकी उत्पत्ति और निर्वृत्तिके जो कारणहैं उनका निरूपण करतेहैं-'णेरइयाणं चउहिं ठाणेहिं' इत्यादि

नैरयिकोंके चार कारणोंसे शरीरकी उत्पत्ति होती है, जैसे-क्रोधसे १ मानसे २ मायासे ३ और लोभसे ४ इसी तरहका कथन यावत् वैमानिक जीवोंके भी जानना चाहिये । यहां जो क्रोधादिकोंको शरीरोत्पत्तिका हेतु कहा गया है, उसका कारण ऐसा है कि क्रोधादिक कर्म

સદ્‌ગુણોનો નાશ અને અસદ્‌ગુણોનું (અવિદ્યમાન ગુણોનું) પ્રકાશન, આ બે વાત જ્યાં સુધી જીવના શરીરની ઉત્પત્તિ અથવા તેની નિવૃત્તિ થઈ ન જાય ત્યાં સુધી સંભવતી નથી. તેથી હવે સૂત્રકાર શરીરની ઉત્પત્તિ અને નિવૃત્તિના જે કારણો છે તેનું નિરૂપણ કરે છે.

"णेरइयाणं चउहिं ठाणेहिं" ઈત્યાદિ—

નારકોને ચાર કારણોને લીધે શરીરની ઉત્પત્તિ થાય છે. (૧) ક્રોધથી, (૨) માનથી, (૩) માયાથી અને (૪) લોભથી.

આ પ્રકારનું કથન વૈમાનિક પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવું. અહીં જે ક્રોધ આદિને શરીરોત્પત્તિમાં કારણરૂપ ગણ્યા છે, તેનું કારણ એ છે કે

बन्धनहेतवः, कर्म च शरीरोत्पत्तिनिमित्तमिति शरीरोत्पत्तिकारणी-भूतकर्मणः कार्यस्य कारणीभूतेषु क्रोधादिषु चतुर्षु शरीरोत्पत्तिकरणत्वमुपचर्य शरीरोत्पत्ति कारणतया क्रोधाद्युपादानमिति ।

"चउहिं ठाणेहिं निव्वत्तिए" इत्यादि—स्पष्टम्—नवरम्—निर्वर्तितं—निष्पादितं, कैस्तदित्यपेक्षायामाह—चतुर्भिः क्रोधादिभिरिति यद्यपि क्रोधादिनिर्वर्तितं कर्मतन्निर्वर्तितं शरीरं तथाऽपि शरीरनिर्वर्तनकारणकारणे शरीरनिर्वर्तनकारणत्वमुपचर्य शरीरनिर्वर्तनकारणतया क्रोधाद्युपादानम् इत्याशयेनाह—' क्रोध

बन्धनके हेतु होते हैं और कर्म शरीरोत्पत्तिमें निमित्त होताहै, इसलिये शरीरकी उत्पत्तिका कारणभूत जो कर्म है, उस कार्यभूत कर्मके कारण क्रोधादिक चारोंमें शरीरोत्पत्तिके कारणत्वका उपचार करके उन्हें शरीरोत्पत्तिका कारण कहा गया है ।

"चउहिं ठाणेहिं निव्वत्तिए" इत्यादि—चार कारणोंसे निर्वर्तित शरीर कहा गया है वे चार कारण ये हैं—जैसे क्रोधसे निर्वर्तित१ यावत् लोभसे निर्वर्तित। इसी तरहका कथन यावत् वैमानिकोंके जानना चाहिये। यद्यपि क्रोधादिकोंसे निर्वर्तित कर्म होता है, और कर्मसे निर्वर्तित शरीर होता है, फिर भी जो यहां क्रोधादिकसे निर्वर्तित निष्पादित शरीरको कहा गया है, वह शरीर निर्वर्तनके कारण जो कर्म हैं उन कर्मोके कारण जो क्रोधादिक हैं, उनमें शरीर निर्वर्तनके प्रति कारणताका उपचार करके उन क्रोधादिकोंका कारणरूपसे उपादान

ક્રોધાદિક કર્મબન્ધનના હેતુરૂપ હોય છે અને કર્મ શરીરોત્પત્તિમાં નિમિત્ત રૂપ હોય છે. તેથી શરીરની ઉત્પત્તિના કારણભૂત જે કર્મ છે તે કાર્યભૂત કર્મના કારણરૂપ ક્રોધાદિક ચારેમાં શરીરોત્પત્તિના કારણત્વનો ઉપચાર કરીને તેમને જ (ક્રોધ, માન, માયા અને લોભને) જ શરીરોત્પત્તિનાં કારણરૂપ કહેવામાં આવેલ છે. "चउहिं ठाणेहिं निव्वत्तिए" ઇત્યાદિ—

શરીરને ચાર કારણોથી નિર્વર્તિત (નિષ્પાદિત) કહ્યું છે તે ચાર કારણો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) ક્રોધથી નિર્વર્તિત, (૨) માનથી નિર્વર્તિત, (૩) માયાથી નિર્વર્તિત અને (૪) લોભથી નિર્વર્તિત. આ પ્રકારનું કથન વૈમાનિકો પર્યન્તના સમસ્ત જીવો વિષે પણ સમજવું જો કે ક્રોધાદિકો વડે નિર્વર્તિત કર્મ હોય છે અને કર્મ વડે નિર્વર્તિત શરીર હોય છે, છતાં પણ અહીં શરીરને ક્રોધાદિકોથી નિર્વર્તિત (નિષ્પાદિત) કહેવાનું કારણ એ છે કે શરીર નિર્વર્તનના કારણભૂત જે કર્મો છે તે કર્મોના કારણભૂત જે ક્રોધાદિકો છે, તેમાં શરીર

निर्वर्तितम्' इत्यादि यावत्पदेन माननिर्वर्तितं, मायानिर्वर्तितं, इति पदद्वयं ग्राह्यं तथा-लोभनिर्वर्तितम् (ननु पूर्वमुत्पत्तिरुक्तैव तत्रैवास्या अपि गतार्थतास्यादेव पृथङ्निर्वृत्ति कथनं किमर्थमिति चेच्छ्रूयताम् तत्रोत्पत्तिशब्देनाऽऽरम्भो-गृह्यतेऽत्र निर्वृत्तिशब्देन तु निष्पत्तिर्गृह्यत इति तयोर्भेदो बोध्यः ॥३५॥

पूर्वं क्रोधादयः शरीरहेतव उक्ताः, क्रोधादिनिग्रहास्तु धर्मस्य हेतवः इति धर्मद्वाराणि निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि धम्मदारा पण्णत्ता, तं जहा—खंती १, मुत्ती २, अज्जवे ३, मद्दवे ४ ॥ सू० ३६ ॥

छाया—चत्वारि धर्मद्वाराणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—क्षान्तिः १, मुक्तिः २, आर्जवं ३, मार्दवम् ४ ॥ सू० ३६ ॥

किया गया है, यहां यावत्पदसे मान निर्वर्तित और माया निर्वर्तित इन पदोंका ग्रहण हुआ है।

शंका—पहिले जो उत्पत्ति कही गई है, सो उसकेही कहनेसे क्रोध निर्वर्तित आदि शरीरका कथन हो ही जाताहै, फिर इसे स्वतन्त्र रूपसे कहनेकी क्या आवश्यक्ता हुई ?

उ०—पहिले जो उत्पत्तिका कथन किया गया है-सो वहां उत्पत्ति शब्दसे आरम्भ मात्र गृहीत हुआ है, और यहां निर्वर्तित शब्दसे निष्पत्ति गृहीत हुई है इसलिये दोनोंका पृथक् रूपसे कथन किया गया है ॥ सू० ३५ ॥

क्रोधादिकोंमें शरीर हेतुताका कथन करके अब सूत्रकार क्रोधादिकोंका निग्रह धर्मका हेतुहै, इस अभिप्रायसे धर्मद्वारोंका निरूपणकरते हैं

નિર્વતન પ્રત્યે કારણુતાનો ઉપચાર કરીને તે ક્રોધાદિકોને કારણુ રૂપે ગ્રહણુ કરવામાં આવેલ છે.

શંકા—પહેલાં જે શરીરોત્પત્તિનું કથન કર્યું છે, તે કથન દ્વારા જ ક્રોધ નિવર્તિત આદિ શરીરનું કથન તો થઈજ ગયું છે, છતાં અહીં તેનું સ્વતંત્ર રૂપે કથન કરવાની શી આવશ્યકતા છે ?

ઉત્તર—પહેલાં જે ઉત્પત્તિનું કથન કર્યું છે, તથા ઉત્પત્તિ શરીર વડે માત્ર આરંભ જ ગૃહીત થયો છે, અને અહીં નિર્વર્તિન શબ્દ વડે નિષ્પત્તિ ગૃહીત થઈ છે તેથી બન્નેનું અલગ અલગ રૂપે કથન કરવામાં આવ્યું છે. સૂ. ૩૫

ક્રોધાદિકોને જ શરીરોત્પત્તિના કારણભૂત બતાવીને હવે સૂત્રકાર એ પ્રકટ કરવા માગે છે કે ક્રોધાદિકોનો નિગ્રહ જ ધર્મના હેતુ રૂપ છે. તેથી

टीका—"चत्तारि धम्मदारा" इत्यादि—धर्मस्य-श्रुतचारित्रलक्षणस्य द्वाराणि-द्वाराणीव द्वाराणि-द्वारसदृशानि- उपायभूतानि चत्वारि-वस्तूनि प्रज्ञप्तानि, तानि कानि ? इत्यपेक्षायामाह-तद्यथेत्यादि-क्षान्तिः-क्षमा आक्रोशादिश्रवणेऽपि क्रोधत्यागः-क्रोधोदयनिरोधः १, तथा-मुक्तिः-मोचनं मुक्तिः-बाह्याभ्यन्तरवस्तुषु तृष्णाविच्छेदः २, तथा-आर्जवम्-ऋजुता=सरलता-माया राहित्यम् ३, तथा-मार्दवं-मृदुता-मानपरिहारः ४। ॥ सू० ३६ ॥

पूर्वं क्षान्त्यादीनि धर्मद्वाराणीत्युक्तानि, साम्प्रतमारम्भादीनि नारकत्वादिसाधनकर्मद्वाराणि निरूपयितुमाह—

मूलम्-चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं पकरेंति, तं जहा-महारंभयाए १, महापरिग्गहयाए २, पंचिंदियवहेणं ३, कुणिमाहारेणं ४ (१)

'चत्तारि धम्मदारा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र ३६ ॥

टीकार्थ-धर्मके द्वार चार कहे गये हैं-जैसे-क्षान्ति १ मुक्ति२ आर्जव ३ और मार्दव ४। श्रुतचारित्र रूप धर्म है, यह प्रकट किया जा चुका है, ऐसे धर्मके द्वारके जैसे-द्वार ये क्षान्ति आदि हैं। आक्रोश आदिके सुनने पर भी क्रोधका त्याग होना क्रोधकी उत्पत्ति नहीं होना-इसका नाम क्षान्ति है, बाह्य और आभ्यन्तर वस्तुओंमें तृष्णाका विच्छेद होना इसका नाम मुक्ति है। मायापूर्ण व्यवहार करनेका त्याग होना अर्थात् आत्मामें ऋजुता या सरलता आना, इसका नाम आर्जवहै, और मानका परिहार करना मृदुताका आना इसका नाम मार्दव है ॥ सू० ३६ ॥

હવે સૂત્રકાર ધર્મદ્વારોનું નિરૂપણ કરે છે. 'चत्तारि धम्मदारा पण्णत्ता' ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-ધર્મના ચાર દ્વાર કહ્યાં છે-(૧) ક્ષાન્તિ, (૨) મુક્તિ, (૩) આર્જવ અને માર્દવ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ છે, એ વાત તો આગળ પ્રકટ થઈ ચુકી છે. તે ધર્મનાં દ્વાર સમાન ક્ષાન્તિ આદિને બતાવ્યાં છે

આક્રોશ આદિ સાંભળવા પડે ત્યારે ક્રોધ ન કરવો પણ શાન્ત રહેવું તેનું નામ ક્ષાન્તિ છે. બાહ્ય અને આભ્યન્તર વસ્તુઓની તૃષ્ણાનો ત્યાગ કરવો, તૃષ્ણાનો વિચ્છેદ કરવો તેનું નામ મુક્તિ છે. માયાપૂર્ણ વ્યવહારનો કપટયુક્ત વ્યવહારનો ત્યાગ કરવો એટલે કે આત્મા ઋજુતા (સરળતા) ના ગુણથી યુક્ત થવો તેનું નામ આર્જવ છે, માનનો પરિત્યાગ કરીને મૃદુતા ધારણ કરવી તેનું નામ માર્દવ છે. ॥ સૂ. ૩૬ ॥

चउहिं ठाणेहिं जीवा तिरिक्खजोणियत्ताए कम्मं पकरेंति तं जहा–माइल्लयाए १ णियडिल्लयाए २, अलियवयणेणं ३, कुडतुलकुडमाणेणं ४ (२)।

चउहिं ठाणेहिं जीवा मणुस्सत्ताए कम्मं पगरेंति, तं जहा– पगइभद्दयाए १, पगइविणीययाए २, साणुक्कोसयाए ३, अमच्छरिययाए ४, (३)

चउहिं ठाणेहिं जीवा देवाउयत्ताए पगरेंति, तं जहा– सरागसंजमेणं १, संजमासंजमेणं २, बालतवोकम्मेणं ३, अकामणिज्जराए ४ ॥ सू० ३७ ॥

छाया—चतुर्भिः स्थानैर्जीवा नैरयिकतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा–महाऽऽरम्भतया १, महापरिग्रहतया २, पञ्चेन्द्रियवधेन ३, कुणिमा (मांसा)–ऽऽहारेण तथा ४। (१)

चतुर्भिः स्थानैर्जीवा तिर्यग्योनिकतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा–मायितया १, निकृतिमत्तया २, अलीकवचनेन ३, कूटतुलाकूटमानेन ४ (२)

चतुर्भिः स्थानैर्जीवा मनुष्यतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा–प्रकृतिभद्रतया १, प्रकृतिविनीततया २, सानुक्रोशतया ३, अमत्सरिकतया ४ (३)।

चतुर्भिः स्थानैर्जीवा देवायुष्यतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा–सरागसंयमेन १, संयमासंयमेन २, बालतपःकर्मणा ३, अकाम निर्जरया ४ (४) ॥३७॥

टीका—' चउहिं ठाणेहिं जीवा ' इत्यादि—चतुर्भिः स्थानैः जीवाः नैरयिकतया–नारकत्वेन कर्म आयुष्कादि, प्रकुर्वन्ति, तद्यथा–महाऽऽरम्भतया–महान्

जिस प्रकारसे ये क्षान्ति आदि धर्मके द्वार हैं, उसी प्रकारसे आरम्भ आदि नारकत्वके साधनभूत कर्मोंके द्वार हैं–यही बात अब सूत्रकार निरूपित करते हैं-'चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए' इत्यादि सूत्र ३७। टीकार्थ–जीव चार कारणोंसे नारकायुका बन्ध करते हैं जैसे-महारम्भतासे

જેમ ક્ષાન્તિ આદિ ધર્મના દ્વાર છે, એજ પ્રમાણે આરંભ આદિ નારકત્વના સાધનભૂત કર્મોનાં દ્વાર છે એજ વાતનું હવે સૂત્રકાર નીચેના સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરે છે–" चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ–જીવો ચાર કારણોને લીધે નારકાયુનો બંધ કરે છે. તે કારણો નીચે

इच्छापरिमाणेनाविहितमर्यादत्वेन बृहत् आरम्भः-पृथिव्याद्युपमर्दनलक्षणो यस्य स महाऽऽरम्भः=चक्रवर्त्यादिः, तस्य भावो महाऽऽरम्भता, तया महाऽऽरम्भतया १, एवं परिग्रहतया=परिगृह्यत इति परिग्रहः-हिरण्यसुवर्णद्विपदचतुष्पदप्रभृतिः पदार्थः, स महान् यस्य स महापरिग्रहस्तत्तया, तथा-पञ्चेन्द्रियवधेन ३, तथा-कुणिमाऽऽहारेण-मांसभक्षणेन ४ (१)

"चउहिं ठाणेहिं जीवा तिरिक्खजोणियत्ताए" इत्यादि—

चतुर्भिः स्थानैर्जीवास्तिर्यग्योनिकतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-मायितया-माया=मनः कौटिल्यं, साऽस्त्यस्येति मायी, तस्य भावो मायिता तया मायि-

---

१ महापरिग्रहतासे २ पंचेन्द्रिय वधसे ३ और कुणिमाहारसे-मांसाहारसे ४।

जिसने परिग्रहका प्रमाण-इच्छापरिमाण नहीं कियाहै और इसी कारण जिसका आरम्भ पृथिव्यादि जीवोंका वध-बृहत् है बडा हुआ है, ऐसा चक्रवर्ती आदिजन यहां महारम्भसे लिया गयाहै। इस महारम्भका जो भाव है, वह महारम्भता है। इसी प्रकारसे हिरण्य, सुवर्ण द्विपद चतुष्पद आदि पदार्थ जिसको अधिक मात्रामें है, ऐसा मनुष्य महापरिग्रहसे लिया गया है, इसका जो भाव है वह महापरिग्रहता है, तथा पञ्चेन्द्रिय जीवोंकी जो हिंसा है वह पञ्चेन्द्रिय वध है, और मांसका आहार करना वह कुणिमाहार है। इनसे जीव नरकायुका बन्ध करता है—

"चउहिं ठाणेहिं जीवा तिरिक्खजोणियत्ताए" इत्यादि

जीवचार कारणोंसे तिर्यगायुका बन्ध करताहै, जैसे-मायावी होनेसे १

પ્રમાણે છે—(૧) મહા આરંભતા, (૨) મહા પરિગ્રહતા, (૩) પંચેન્દ્રિય વધથી, અને (૪) કુણિમાહારથી (માંસાહાર)

જેણે પરિગ્રહનું પ્રમાણ ઇચ્છા પરિમાણ કર્યું નથી અને એજ કારણે જેનો આરંભ (પૃથ્વીકાય આદિ જીવોના વધરૂપ આરંભ) વિશેષ પ્રમાણવાળો છે એવા ચક્રવર્તી આદિને મહા આરંભ કરનારા સમજવા તે મહારંભનો જે ભાવ છે તેને મહારંભતા કહે છે એજ પ્રમાણે જેની પાસે સોનું, ચાંદી, દ્વીપદ, ચતુષ્પદ આદિ પદાર્થ અધિક પ્રમાણમાં હોય છે એવા મનુષ્યને મહાપરિગ્રહવાળો કહ્યો છે. મહાપરિગ્રહનો જે ભવ છે તેને મહાપરિગ્રહતા કહે છે પંચેન્દ્રિય જીવોની હત્યા કરવી તેનું નામ પંચેદ્રિય વધ છે અને માંસાહારને કુણિમાહાર કહે છે આ ચારે કારણોને લીધે જીવ નરકાયુનો બન્ધ કરે છે.

"चउहिं ठाणेहिं तिरिक्खजोणियत्ताए" ઇત્યાદિ—

જીવ નીચેના ચાર કારણોને લીધે તિર્યંચાયુનો બન્ધ કરે છે. (૧) માયાવી હોવાથી, (૨) નિકુતિવાળો હોવાથી, (૩) અસત્ય વચનથી અને (૪)

तया १, तथा-निकृतिमत्तया-निकृतिः-वञ्चनार्थं शरीरचेष्टादि अन्यथाकरण-रूपा साऽस्त्यस्येति निकृतिमान् तस्य भावो निकृतिमत्ता, तया निकृतिमत्तया-गूढमायितया २, तथा-अलीकवचनेन-असत्यभाषणेन ३, तथा-कूटतुला-कूटमानेन-छलयुक्ततुलया कपटमानेन ४। (२)

" चउहिं ठाणेहिं जीवा मणुस्सत्ताए " इत्यादि—

चतुर्भिः स्थानैर्जीवा मनुष्यतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-प्रकृतिभद्रतया-प्रकृत्या=स्वभावेन भद्रता-परपीडाऽनुत्पादकता प्रकृतिभद्रता तया १, एवं प्रकृति-विनीततया-स्वभावेन सुशीलतया=विनयसम्पन्नतया २, तथा-सानुक्रोशतया-दयालुतया ३, अमत्सरिकतया-मत्सरिकता=परगुणासहिष्णुता न मत्सरिकता अमत्सरिकता तया परगुणसहिष्णुतया ४। (३)

निकृतिवाला होनेसे २ अलीकवचनसे ३ और कूटतुला कूटमानसे ४। मनकी कुटिलताका नाम मायाहै, यह माया जिसको होतीहै वह मायी है, इस मायीका जो भाव है वह मायिताहै। दूसरोंको ठगनेके लिये शरीर चेष्टा आदिका अन्यथा करना इसका नाम निकृति है, यह निकृति जिसको होती है वह निकृतिमान् है, इस निकृतिमान्का जो भाव है वह निकृतिमत्ता है २ मिथ्याभाषण करना इसका नाम अलीकवचन है, नांपने तौलनेके बांटों आदिकोंको कमती बढती रखना इसका नाम कूटतुला कूटमान है, इनसे जीव तिर्यगायुका बन्ध करता है (२) " चउहिं ठाणेहिं जीवा मणुस्सत्ताए " इत्यादि--चार कारणोंसे जीव मनुष्यायुका बन्ध करता है-जैसे-प्रकृतिभद्रतासे १ प्रकृतिविनीततासे२ सानुक्रोशतासे३ और अमत्सरिकतासे४। स्वभावसेही दूसरे

ખોટાં તોલમાપ કરવાથી. મનની કુટિલતાને માયા કહે છે. તે માયાથી યુકત જીવને માયી કહે છે. તે માયીને જે ભાવ છે તેને માયિતા કહે છે. અન્યને ઠગવાને માટે જે વિકૃત શરીર ચેષ્ટા આદિ કરવામાં આવે છે તેને નિકૃતિ કહે છે. તે નિકૃતિ જેમાં હોય છે તેને નિકૃતિમાન કહે છે. આ નિકૃતિમાનનો જે ભાવ છે તેને નિકૃતિમત્તા કહે છે. મિથ્યા ભાષણ કરવું અથવા અસત્ય વચન બોલવા તેનું નામ અલીકવચન છે. તોલવા અને માપવા માટે ખોટાં ત્રાજવા, કાટલાં કે ગજ આદિ વાપરવા તેનું નામ " કૂટ તુલા કૂટ માન " છે. આ પ્રકારના ચાર કારણોને લીધે જીવ તિર્યંગાયુનો બન્ધ કરે છે.

" ચઉહિં ઠાણેહિં જીવા મણુસ્સત્તાએ " ઇત્યાદિ--ચાર કારણોને લીધે જીવ મનુષ્યાયુનો બન્ધ કરે છે—(૧) પ્રકૃતિ ભદ્રતાથી, (૨) પ્રકૃતિ વિનીતતાથી, (૩) સાનુક્રોશતાથી અને (૪) અમત્સરિકતાથી.

" चउहिं ठाणेहिं जीवा देवाउयत्ताए " इत्यादि—

चतुर्भिः स्थानैर्जीवाः देवाऽऽयुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा—सरागसंयमेन=सकषायचारित्रेण—रागरहितसंयमवतामायुषो बन्धाभावात् १, तथा—संयमासंयमेन—द्विस्वभावत्वाद्देशसंयमेन २ तथा—बालतपःकर्मणा बाला इव बालाः—मिथ्यादृष्टयस्तेषां तपःकर्म—तपश्चर्या बालतपःकर्म तेन बालतपःकर्मणा ३। तथा—अकामनिर्जरया—अकामेन—निर्जरां प्रत्यनिच्छया निर्जरा—कर्म निर्जरण हेतुका बुभुक्षादि सहनरूपा अकामनिर्जरा तया ४। ॥सू० ३७॥

जीवोंको पीडा उत्पन्न करनेकी परिणतिका नहीं होना इसका नाम प्रकृतिभद्रता है, स्वभावतः सुशीलताका होना अर्थात् विनय संपन्नताका सद्भाव इसका नाम प्रकृति विनीतता है, दयासे युक्त परिणतिका होना इसका नाम सानुक्रोशता है, एव दूसरोंके गुणोंको सहन करनेकी क्षमताका नहीं होना इसका नाम मत्सरिकताहै, और इससे विपरीत वृत्तिका होना दूसरोंके गुणोंको सहन करनेकी क्षमताका होना इसका नाम अमत्सरिकताहै इन चार बातोसे जीव मनुष्यायुका बन्ध करताहै(३) " चउहिं ठाणेहिं जीवा देवाउयत्ताए " इत्यादि-चार कारणोंसे जीव देवायुका बन्ध करते हैं-जैसे—सरागसंयमके पालनसे १ संयमासंयमके पालनसे २ बालतपके करनेसे३ और अकामनिर्जरासे४ रागरहित संयमकी आराधनासे आयुका बन्ध नहीं होता है, परन्तु रागसहित कषायसहित संयमके पालनसे देवायुका बन्ध होता है, देशसंयमके पालनसे भी देवायुका बन्ध होताहै, सरागसंयम१० वे दस गुण·

અન્ય જીવોને પીડા ઉત્પન્ન કરવાની પરિણુતિનો સ્વભાવતઃ જ અભાવ હોવો તેનું નામ પ્રકૃતિ ભદ્રતા છે સ્વભાવતઃ વિનય, શીલતા અથવા સુશીલતાનો સદ્ભાવ હોવો તેનું નામ પ્રકુતિવિનીતતા છે દયાથી યુક્ત પરિણુતિ હોવી તેનું નામ સાનુકોશતા છે. અન્યના ગુણોને સહન કરવાની ક્ષમતા નહીં હોવી તેનું નામ મત્સરિકતા છે અને તેના કરતાં વિપરીત વૃત્તિનો સદ્ભાવ હોવો, અન્યના ગુણોને સહન કરવાની ક્ષમતા હોવી તેનું નામ અમત્સરિકતા છે. ઉપર્યુક્ત ચાર કારણોને લીધે જીવ મનુષ્યાયુનો બન્ધ કરે છે.

"चउहिं ठाणेहिं जीवा देवाउत्ताए" ઇત્યાદિ—આ ચાર કારણોને લીધે જીવ દેવાયુનો બન્ધ કરે છે.સરાગસંયમના પાલનથી (૧) સંયમાસયમના પાલનથી, (૨) બાલતાપની આરાધનાથી, (૩) અકામ નિર્જરાથી અને (૪) રાગ સહિત સંયમની આરાધના કરવાથી, (રાગ રહિત સંયમની આરાધનાથી દેવાયુનો બન્ધ થતો નથી, પણ રાગસહિત, કષાય સહિત સંયમના પાલનથી દેવાયુનો બન્ધ થાય

स्थान तक और संयमासंयम ५ पांच वें गुणस्थानमें (देशविरति श्रावक) होता है। बाल शब्द से यहां मिथ्यादृष्टियोंका ग्रहण हुआ है, इनका जो तप है वह बालतप है, निर्जरा करनेकी इच्छा नहीं होनेसे जो निर्जरा होती है, वह अकामनिर्जरा है, जैसे बुभुक्षा (भूख) आदि जन्य कष्टोंका सहन करना, बालतपसे और अकामनिर्जरासे भी देवायुका बन्ध होता हैं, इस सूत्रका आशय ऐसा है कि सरागसंयम और संयमासंयम ये सम्यग्दर्शनके होने परही हो सकतेहैं। इसलिये ये तो वैमानिक देवोंकीही आयुके कारण हैं अन्य आयुके कारण नहीं हैं। बालतप आयु अकाम निर्जरा ये भवनवासी व्यन्तर और ज्योतिषी इनकी आयुबन्धके कारण हैं। यहां ऐसी शंका हो सकती है, कि देव और नारकी सम्यग्दर्शनके सद्भावमें मनुष्यायुकाही बन्ध करते हैं, और मनुष्य एवं तिर्यञ्च देवायुकाही बन्ध करते हैं, तो इसका अभिप्राय क्या है? इसका अभिप्राय ऐसा है कि सम्यग्दर्शन आत्माका एक निर्मल परिणाम है, इसलिये वह तो कर्मबन्धका कारण होता नहीं है, परन्तु उसके सद्भावमें यदि आयुका बन्ध होता है तो वह नियमसे वैमानिक देवायुकाही बन्ध होता है।

છે.) દેશસંયમના પાલનથી પણ જીવ દેવાયુનો બન્ધ કરે છે સરાગસંયમનો સદ્ભાવ ૧૦ દસમાં ગુણસ્થાન સુધી અને સંયમાસંયમનો સદ્ભાવ પાંચમાં ગુણસ્થાન સુધી હોય છે ‘ બાલ ’ શબ્દ અહીં મિથ્યાદૃષ્ટિઓ માટે વપરાયો છે તેમના તપને બાલતપ કહે છે. નિર્જરા કરવાની ઇચ્છા કર્યા વિના જે નિર્જરા થાય છે તેને અકામ નિર્જરા કહે છે. જેમકે ભૂખ આદિ જન્ય કષ્ટોને સહન કરવાથી અકામનિર્જરા થાય છે. બાલતપ અને અકામનિર્જરા વડે પણ દેવાયુનો બન્ધ થાય છે. આ સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—સરાગસંયમ અને સંયમાસંયમ આ બન્ને સમ્યગ્દર્શનના સદ્ભાવમાં જ સંભવી શકે છે, તેથી તે બન્ને તો વૈમાનિક દેવોમાં જ ઉત્પત્તિ કરાવે છે, અન્ય દેવાયુઓના કારણભૂત બનતાં નથી. પરન્તુ બાલતપ અને અકામનિર્જરા આદિને લીધે જીવ ભવનવાસી, વ્યન્તર, અને જ્યોતિષી દેવોના આયુનો બન્ધ કરે છે. અહીં કદાચ એવી શંકા કરવામાં આવે કે દેવ અને નારકી સમ્યગ્દર્શનના સદ્ભાવમાં મનુષ્યાયુનો જ બન્ધ કરે છે અને મનુષ્ય અને તિર્યંચ દેવાયુનો જ બન્ધ કરે છે, તો આ કથનનું કારણ શું છે? તે શંકાનું સમાધાન કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—સમ્યગ્દર્શન આત્માનું એક નિર્મળ પરિણામ છે. તેથી તે તો કર્મબન્ધનું કારણ બનતું નથી, પરન્તુ તેના સદ્ભાવમાં પણ જો આયુનો બન્ધ થતો હોય તો નિયમથી જ વૈમાનિક દેવાયુનો જ બન્ધ થાય છે.

पूर्वं देवोत्पत्तिकारणान्यभिहितानि, देवाश्च वाद्यनाट्यादि रतिमन्तो भवन्तीति वाद्यादि भेदान्निरूपयितुं षट् सूत्रीमाह—

मूलम्—चउव्विहे वज्जे पण्णत्ते, तं जहा—तते १, वितते २, घणे ३, झुसिरे ४। (१)

चउव्विहे णट्टे पण्णत्ते, तं जहा—अंचिए १, रिभिए २, आरभडे ३, भसोले ४। (२)

चउव्विहे गेए पण्णत्ते, तं जहा—उक्खित्तए १, पत्तए २, मंदए ३, रोविंदए ४। (३)

चउव्विहे मल्ले पण्णत्ते, तं जहा—गंथिमे १, वेढिमे २, पूरिमे ३, संघाइमे ४ (४) चउव्विहे अलंकारे पण्णत्ते, तं जहा--केसालंकारे १, वत्थालंकारे २, मल्लालंकारे ३, आभरणालंकारे ४।(५)

चउव्विहे अभिणए पण्णत्ते, तं जहा—दिट्ठंतिए १, पंडुसुए २, सामंतोवणिवाइए ३, लोगमज्झावसिए ४। (६) ॥सू० ३८॥

यदि इस पर फिरसे ऐसा पूछा जावे कि यदि सम्यग्दर्शनके सद्भावमें वैमानिक देवायुकाही बन्ध होता है। तो फिर देवनारकियोंके जो अभी मनुष्यायुकाही उसके सद्भावमें बन्ध कहा गया है, सो उसका निर्वाह कैसे होगा ? तो इसका समाधान ऐसा है कि यहां जो ऐसा कहा गया है, कि जो प्राणी मरकर चारों गतियोंमें जन्म ले सकते हैं उनकी अपेक्षासे कहा गया है, ऐसे जन्मवाले मनुष्य और तिर्यञ्चही हैं देवनारकी नहीं ॥ सू० ३७ ॥

શંકા—જો સમ્યગ્દર્શનના સદ્‌ભાવમાં વૈમાનિક દેવાયુનો જ બન્ધ થતો હોય, તો તેના સદ્‌ભાવમાં (સમ્યગ્દર્શનના સદ્‌ભાવમાં) દેવ અને નારકીયોને મનુષ્યાયુનો બન્ધ થવાની જે વાત આપે હમણાં જ કહી છે તે કેવી રીતે ટકી શકે છે ?

ઉત્તર—અહીં જે એવું કહેવામાં આવ્યું છે, તે તો મરીને ચારે ગતિઓમાં જન્મ લઈ શકનારા જીવોની અપેક્ષાએ કહ્યું છે. એવા જન્મવાળા તો મનુષ્ય અને તિર્યંચ હોય છે. દેવનારકી એવાં જન્મવાળાં હોતા નથી. ॥સૂ. ૩૭॥

छया—चतुर्विधं वाद्यं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-ततं १, विततं २, घनं ३, शुषिरम् ४। (१)

चतुर्विधं नाटयं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-अञ्चितं १, रिभितम् २, आरभटं ३, भसोलम् ४। (२)

चतुर्विधं गेयं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-उत्क्षिप्तकं १, पत्रकं २, मन्दकं ३, रोविन्दकम् ४। (३)

चतुर्विधं माल्यं प्रज्ञप्तम्-तद्यथा-ग्रन्थिमं १, वेष्टिमं २, पूरिमं ३, सङ्घातिमम् ४। (४)

चतुर्विधोऽलङ्कारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-केशालङ्कारः १, वस्त्रालङ्कारः २, माल्यालङ्कारः ३ आभरणालङ्कारः ४। (५)

चतुर्विधोऽभिनयः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-दार्ष्टान्तिकः १, पाण्डुश्रुतः २, सामन्तोपनिपातिकः ३, लोकमध्यावसितः ४ ॥३८॥

टीका—" चउव्विहे वज्जे " इत्यादि—वाद्यं-वाद्यते-ध्वन्यत इति वाद्यं तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-ततं-तन्यते-विस्तीर्यत इति ततं वीणादिकम् १, विततं-पटहादिकम् २, घनं-हन्यत इति घनं-कांस्यतालघण्टादिकम् ३, शुषिरं-शुषिरश्छिद्रमस्यास्ति शुषिरं-वंशादि ४। ३८(१)

इस प्रकार देवोंमें उत्पत्तिके कारणोंका कथन करके अब सूत्रकार देववाद्य नाटय आदिमें रति आनन्द वाले होतेहैं, इस अभिप्रायसे वाद्य आदिके भेदोंका ६ छह सूत्रों द्वारा निरूपण करते हैं--

'चउव्विहे वज्जे पण्णत्ते' इत्यादि सूत्र ३८ ॥

टीकार्थ-वाद्य चार प्रकारके कहे गयेहैं जैसे-तत१ वितत२ घन३ और शुषिर ४। चमडे मढे हुए ढोल वीणा आदि तत वाद्य हैं। पटह आदि विततहैं, झालर घंटा आदि घनहैं, और छिद्रवाले शंख बाँसुरी आदि

આ પ્રકારે દેવગતિમાં ઉત્પત્તિના કારણોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર વાદ્યોના ભેદોનું નિરૂપણ કરે છે. દેવો વાદ્ય અને નાટક આદિમાં રતિવાળા હોય છે, તે સંબંધને લીધે હવે છ સૂત્રો દ્વારા નિરૂપણ કરવામાં આવે છે.

" ચઉવ્વિહે વજ્જે પણ્ણત્તે " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-વાદ્યના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) તત, (૨) વિતત, (૩) ઘન અને (૪) શુષિર. ચામડાથી મઢેલાં ઢોલ, વીણા આદિ તત વાદ્યો છે. પટહ આદિ વિતત છે. ઝાલર ઘંટ આદિ ઘનવાદ્યો છે. અને છિદ્રોવાળાં શંખ વાંસળી આદિ શુષિર વાદ્યો છે.

"चउव्विहे नट्टे" इत्यादि—नाट्यं-नटस्येदं नाट्यं नृत्यगीत-वाद्यं, करचरणादिविशिष्टपरिस्पन्दविशेषः, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-अञ्चितं १, रिभितम् २, आरभटं ३, भसोलम् ४ एते भरतादि नाट्यग्रन्थेभ्योऽवसेयाः।

"चउव्विहे गेए" इत्यादि—गेयं-गातुं योग्यं गेयं=स्वरसञ्चारेण गीतिप्रायं निबद्धम् स्वरकरणंस्वरसंचारो वा गेयं, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा—उत्क्षिप्तकं १, पत्रकं २, मन्दकं ३, रोविन्दयम् ४ तत्र रोविन्दयेति देशीयशब्दः।

गेयस्याष्टौ गुणानाह—

"पुण्णं रत्तं च अलंकिअं च वत्तंच तहेव मविघुट्ठं।
महुरं समं सुललिअं अट्ठगुणाहौंति गेयस्स ॥१॥
उरकंठसिरविसुद्धं च, गीयए मउअरिभिअपयबद्धं।
सयतालपच्चुखेवं सत्तरसरसीभरं गेयं ॥ २ ॥

शुषिर हैं। (१) "चउव्विहे नट्टे" नाटय चार प्रकारका कहा गया है-नटसे सम्बन्धित नृत्य, गीत, वाद्य, एवं कर चरण आदिकी विशिष्ट चेष्टाएँ ये सब यहां नाटय शब्दसे गृहित हुएहैं। अञ्चित १ रिभित २ आरभट ३ और भसोल ४ इन भेदोंसे नाटय चार प्रकारका होनाहै। इन सबका वर्णन भरतादि नाटयग्रन्थोंसे जान लेना चाहिये।

"चउव्विहे गेए" इत्यादि—गेय-गानेके योग्य जो होता है वह गेय है गेयमें-गानेमें स्वरका सञ्चार आदि होताहै, वह गेय उत्क्षिप्तक १ पत्रक २ मन्दक ३ और रोविन्दयके भेदसे चार प्रकारका है इनमें रोविन्दय यह देशीय शब्द है गेयके आठ गुण ये हैं—

"चउव्विहे नट्टे" नाटय चार प्रकारना कह्यां छे नटनी साथे संबंध धरावनारां नृत्य, गीत, वाद्य अने कर चरण आदिनी विशिष्ट चेष्टाओने अहीं नाटयपदथी ग्रहण करवामां आवेल छे ते नाटयना चार प्रकारो नीचे प्रमाणे छे—(१) अंचित, (२) रिभित, (३) आरभट अने भसोल. आ चारे भेदोनुं वर्णन भरतादि नाटयग्रन्थोमांथी वांची लेवुं.

"चउव्विहे गेए" इत्यादि—गेय (गीत) चार प्रकारना होय छे. गावाने योग्य जे होय छे तेने गेय कहे छे. गेयमां-गीत गावामां स्वरनो संचार आदि थाय छे. तेना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कह्या छे—(१) उत्क्षिप्तक (२) पत्रक, (३) मन्दक अने (४) रोविन्दय. तेमां 'रोविन्दय' आ गामठी शब्द छे. गेयना आठ गुण नीचे प्रमाणे कह्यां छे. "पुण्णं रत्तं च अलंकिअं च" इत्यादि. आ श्लोकोनो भावार्थ नीचे प्रमाणे छे.

अक्खरसमं पदसमं तालसमलयसमगहसमं वावि ।
नीसासि ओससिअसमं संचारसमं सरा सत्त ॥ ३ ॥

छाया—पूर्णं रक्तं चालङ्कृतं च व्यक्तं च तथैवमविघुष्टम् ।
मधुरं समं सुललितम् अष्ट गुणा भवन्ति गेयस्य ॥ १ ॥
उरः कण्ठशिरोविशुद्धं च, गीयते मृदुकरिभितपदबद्धम् ।
समतालपत्युत्क्षेपं सप्तस्वरसीभरं गेयम् ॥ २ ॥
अक्षरसमं पदसमं तालसमलयसमग्रहसमम् ।
निःश्वसितोच्छ्वसितसमं सञ्चारसमं स्वराः सप्त ॥ ३ ॥" इति ।

अयमर्थः-पूर्णं गेयस्याङ्गं सकलस्वरकलाभियुक्तम् १, रक्तं-गेयरागेण भावितस्य गेयस्याङ्गं रक्तमित्युच्यते २, अलङ्कृतम्-अन्यान्यस्फुटस्वरविशेषशोभितम् ३, व्यक्तम्-अक्षरस्वरप्रकटनसंयुतम् ४, तथा-एवम्-अविघुष्टं-विक्रोशनमिव यद् विस्वरं न भवति तत् ५, मधुरं-मधुमत्तकोकिलारुतवन्मधुरस्वरम् ६, समं-तालवंशस्वरादिसाम्योपेतम् ७, सुललितं-स्वरघोलनाप्रकारेण शुद्धातिशयेन लल-

"पुण्णं रत्तं च अलंकिअं च" इत्यादि। इन श्लोकोंका ऐसा भाव है, जो गेय समस्त स्वर एवं कलाओंसे युक्त होता है वह गेय पूर्ण कहलाता है १। गेय रागसे युक्त जो गेय होताहै, वह रक्त कहलाता है २। अन्य अन्य स्फुट स्वर विशेषोंसे जो शोभित होताहै, वह व्यक्त कहलाता है ३। जो अक्षर स्वर इनकी स्पष्टतासे युक्त होताहै, वह व्यक्त कहलाता है ४। चिल्लानेकी तरहसे जो गेय विस्वर नहीं होताहै, वह गेय अविघुष्ट कहलाताहै ५। मधुकालमें वसन्त मत्त कोकिलाके स्वरकी तरह जो मधुर स्वरवाला होताहै, वह गेय मधुर कहलाताहै ६। जिसमें स्वरोंका संचार खेलता सा प्रतीत होता हो, वह गेय सुकुमार कहलाताहै ७। और जिसमें तालकी एवं बांसुरी आदि के स्वरोंकी समानता हो वह

(१) જે ગેય સમસ્ત સ્વરો અને કલાઓથી યુક્ત હોય છે; તે ગેયને પૂર્ણ કહેવાય છે. (૨) ગેય રાગથી યુક્ત જે ગેય હોય છે તેને રક્ત કહે છે (૩) અન્ય અન્ય સ્ફુટ સ્વર વિશેષોથી શોભાયમાન જે ગેય હોય છે તેને વ્યક્ત કહે છે (૪) જે ગેય અક્ષર અને સ્વરની સ્પષ્ટતાથી યુક્ત હોય છે તેને વ્યક્ત કહે છે. (૫) જે ગેયમાં સ્વર તૂટતો નથી-સૂર ફાટી જતો નથી તે ગેયને અવિઘુષ્ટ કહે છે. (૬) વર્ષાકાળે મત્ત એવી કોયલના સ્વરના જેવો જે મધુર સ્વર હોય છે તે ગેયને મધુર કહે છે. (૭) જેમાં સ્વરોનો (સૂરોનો) સંચાર રમત રમાતી હોય-સૂરોની રમત જામી હોય એવી પ્રતીતિ થાય છે તે ગેયને સુકુમાર કહે છે. (૮) જે ગેયમાં તાલની અને વાંસળી

तीव्र यत्, सुकुमालं तत् ८। एतेऽष्टौ गुणा गेयस्य-गीतस्य भवन्ति। एतद्विरहितं तु विडम्बनमात्रं तदिति। किञ्चोपलक्षणत्वादन्येऽपि गीतगुणा भवन्ति, तानाह- 'चकारोऽनुक्तसमुच्चयार्थः'

"उरकंठसिरविसुद्धं" इत्यादि—उरःकण्ठशिरोविशुद्धं - विशुद्धशब्दस्य द्वन्द्वान्ते श्रूयमाणतया प्रत्येकं योगः, तथाहि उरोविशुद्धं-कण्ठविशुद्धं शिरोविशुद्धं च तत्रोरोविशुद्धं-स्वरो यधुरसि विशालो भवति-तदोरोविशुद्धम्, कण्ठविशुद्धं च-कण्ठे वर्तितोऽतिस्फुटः स्वरः, शिरोविशुद्ध तु-शिरसि प्राप्तो यदिनाऽनुनासिकः स्वरस्तदाशिरोविशुद्धम्।

यद्वा—उद्गेयमुरःकण्ठशिरोविशुद्धं गीयते यच्च श्लेष्मणाऽऽव्याकुलेषूरः-कण्ठशिरस्सु विशुद्धेषु गीयते, किं विशिष्टमित्याह—मृदुकरिभितपदबद्ध—तत्र-मृदुकं—

गेय साम्य कहलाता है। इस प्रकारके ये आठ गुण गीतके होते हैं। इनसे विरहित गीत केवल विडम्बना मात्र होता है। उपलक्षणसे अन्य भी गीतके गुण होते हैं जो इस प्रकारसे "उरकंठसिरोविसुद्धं" इत्यादि द्वारा प्रकट किये गये हैं—

द्वन्द्व के अन्तमें प्रयुक्त विशुद्ध शब्दका सम्बन्ध प्रत्येक शब्दके साथ यहां लगा लेना चाहिये-तथाच-जो स्वर छाती में विशाल होता है वह उरोविशुद्ध स्वर है। जो स्वर कंठमें वर्त्तित हुआ अति स्फुट होता है वह कंठ विशुद्ध स्वर है और जो स्वर शिर में प्राप्त हो, और वह अनुनासिक न हो वह स्वर शिरो विशुद्ध स्वर है।

यद्वा—उरोविशुद्ध कंठ विशुद्ध एवं शिरो विशुद्ध गेय वह होता है जो श्लेष्मा कफसे रहित हुए उरोभागके कण्ठके एवं शिरके विशुद्ध

આદિ વાદ્યોના સૂરોની સમાનતા હોય છે તે ગેયને સામ્ય કહે છે. ગીતમાં આ પ્રકારના આઠ ગુણ હોય છે, તે આઠ ગુણોથી રહિત જે ગીત હોય તે વિડમ્બના રૂપ જ હોય છે. ઉપલક્ષણથી ગીતના અન્ય ગુણો પણ કહ્યા છે, જે નીચે પ્રમાણે છે. "उरकंठसिरो विसुद्धं" ઇત્યાદિ—

આ શ્લોકમાંના પ્રત્યેક પદની સાથે વિશુદ્ધ શબ્દને લગાડીને આ પ્રમાણે કથન થવું જોઇએ—જે સ્વર છાતીના ઊંડાણમાંથી નીકળતો હોય છે તેને ઉરવિશુદ્ધ સ્વર કહે છે. જે સ્વર કંઠમાંથી સ્ફુટ રૂપ ઉચ્ચારિત થતો હોય છે તેને કંઠવિશુદ્ધ સ્વર કહે છે. જે સ્વર શિરમાંથી પ્રાપ્ત થતો હોય છે એવા અનુનાસિક સ્વરને શિરવિશુદ્ધ સ્વર કહે છે. અથવા ઉરોવિશુદ્ધ, કંઠવિશુદ્ધ અને શિરોવિશુદ્ધ ગેય તેને કહે છે કે જે શ્લેષ્માથી રહિત એવા ઉરોભાગ, કંઠ અને શિરોભાગ વિશુદ્ધ થઈ જતાં ગવાય છે. જે ગીત ગાવામાં આવે

कठोरता हीनस्वरेण गीयमानं कोमलम्, रिभितम्-यत्राक्षरेषु घोलनया संचरन् स्वरो भवति घोलनाबहुलम्, पदबद्धं-गेयपदैर्बद्धं विशिष्टरचनया योजितं ततश्च मृदुकं रिभितं च तत् पदबद्धं चेति मृदुकरिभितपदबद्धमिति कर्मधारयः।

समतालप्रत्युत्क्षेपं-तालो हस्तसमुत्पन्नः शब्दः, उपलक्षणत्वाद् प्रत्युत्क्षेपः-मितोपकारकाणां मुरजकांस्यादीनां शब्दः, यद्वा-नर्तकीपदप्रक्षेपः तौ समौ=गीतस्वरेण समानौ यत्र तत् समतालप्रत्युत्क्षेपम्, सप्तस्वरसीभरं-अक्षरादिभिः समं यत्र गीते तद्गीतम्, अक्षरसमम्-अक्षरैर्वर्णैः समं, यत्र दीर्घेऽक्षरे दीर्घःस्वरो गीयते, ह्रस्वे, ह्रस्वः प्लुते प्लुतः स्वरः सानुनासिके सानुनासिकस्तदक्षरसमं गीतं, पद-

हो जाने पर गाया जाताहै। जो गीत गाया जावे वह मृदुक रिभित और पदबद्ध होना चाहिये। जो गाना कठोरतासे रहित स्वरसे गाया जाता है, वह मृदुक है। जहां अक्षरों पर घोलना से स्वरका संचार होता है वह घोलना बहुल रिभित है, और गेय पदोंकी विशिष्ट रचनासे योजित जो गानाहै वह पदबद्ध गानाहै। हाथसे उत्पन्न हुआ जो शब्दहै, उसका नाम ताल है मृदंग कांस्य आदि गीतोपकारक वाद्योंका जो शब्द है वह प्रत्युक्षेप है यद्वा-नर्तकी के पदका जो प्रक्षेपहै वह प्रत्युत्क्षेपहै। ताल और प्रत्युक्षेप ये दोनों जहां गीत स्वरके साथ२ चल रहे हों, ऐसा वह गाना समताल प्रत्युत्क्षेपवाला है। अक्षरादिकोंके साथ जो गीत सात स्वरोंसे युक्त हो वह गाना सप्तस्वरसीभरहै। दीर्घ अक्षर के साथ जिस गानेमें दीर्घ स्वर गाया जाता हो ह्रस्व अक्षर पर ह्रस्व स्वर गाया जाता हो प्लुत अक्षर पर जहां प्लुत स्वर गाया जाता हो और सानुनासिक

તે મૃદુક, રિભિત અને પદબદ્ધ હોવું જોઈએ. જે ગીત કઠોરતાથી રહિત એટલે કે મૃદુ સ્વરથી ગવાય છે તેને મૃદુક કહે છે. જ્યાં અક્ષરોને ઘુંટવાથી સ્વરનો સંચાર થાય એવી તે અક્ષરોને ઘુંટવાની ક્રિયાને ‘ રિભિત કહે છે.

ગેય પદોની વિશિષ્ટ રચનાથી યોજિત જે ગાવાની ક્રિયા છે તેને પદબદ્ધ ગીત કહે છે. હાથ વડે ઉત્પન્ન થયેલા અવાજને તાલ કહે છે. મૃદંગ, મંજીરા આદિ ગીતોપકારક વાદ્યોનો જે અવાજ છે તેને પ્રત્યુત્ક્ષેપ કહે છે. અથવા નર્તકીના પગનો જે પ્રક્ષેપ થાય છે તેને પ્રત્યુત્ક્ષેપ કહે છે. તાલ અને પ્રત્યુત્ક્ષેપ જ્યારે ગીતના સૂરની સાથે સુમેળપૂર્વક ચાલી રહ્યાં હોય, ત્યારે તે ગીતને સમતાલ 'પ્રત્યુત્ક્ષેપવાળું' કહેવાય છે. અક્ષરાદિકોની સાથે જે ગીત સાત સ્વરોથી યુક્ત હોય છે તેને સપ્તસ્વરસીભર કહે છે. જે ગીતમાં દીર્ઘ અક્ષરની સાથે દીર્ઘ સ્વર ગવાતો હોય, હ્રસ્વ અક્ષર આવે ત્યારે હ્રસ્વ સ્વર ગવાતો હોય, પ્લુત અક્ષર આવે ત્યારે પ્લુત સ્વર ગવાતો હોય અને સાનુ-

समम्-यद्गीतपदं यत्र स्वरेऽनुपाति भवति तत्रैव गीते तत्पदसमम्, तालसमलयसमग्रह-समं-तत्र-तालसमं-परस्पराभिहतहस्ततालस्वरानुसारेण गीयमानम्, लयसमं-तत्रलयः-शृङ्ग दार्वाद्यन्यतरवस्तुमयेनाङ्गुलिकोशेन समाहततन्त्रीस्वरप्रकारः तदनु-सारिणा स्वरेण यद्गीयते तल्लयसमम्, ग्रहसमम्-प्रथमतो वंशतन्त्र्यादिभि र्यः स्वरो-गृहीतस्तत्समानेन स्वरेण गीयमानं, निःश्वसितोच्छ्वसितसमं-निःश्वसितोच्छ्व-सितमानमनुल्लङ्घ्य गेयम्, सञ्चारसमम्-वंशतन्त्र्यादिष्वङ्गुलिसञ्चारसमं गीय-मानम्, ३९ (२)

"चउव्विहे मल्ले" इत्यादि—माल्य-पुष्पं, तद्रचनाऽपि माल्यं, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-ग्रन्थिमं-ग्रन्थः-सूत्रेण ग्रन्थनं, तेन निर्वृत्तं माल्यं ग्रन्थिमं १,

---

अक्षर पर सानुनासिक स्वर गाया जाता हो वह अक्षरसमगीत है। जिस स्वरमें जो गीतपद चलता है उसी स्वरसे उस गीतपदका गाना पदसम गीत है परस्परमें अभिहत हस्तके तालके स्वरके अनुसार जो गीत गाया जाताहै, वह तालसम गीतहै। शृङ्गके तथा दारु लकड़ीके बने हुए अंगुलिकोशसे समाहत तन्त्रीके स्वरके अनुसार चलते हुए स्वरसे जो गाना गाया जाता है, वह लयसम गान है, जिस गानेमें पहिले स्वर वंशतन्त्री आदिके स्वरकेसाथ मिलाया जावे फिर बादमें उसके स्वरसे साथ ही जो गाना गाया जाता है वह गाना निःश्वसितोच्छ्वसितसम गान है। जो गाना सारंगी आदिपर अंगुलियों के संचारके साथ साथ गाया जाता है वह संचार समगान है (२)

નાસિક અક્ષર આવે ત્યારે સાનુનાસિક સ્વર ગવાતો હોય તે ગીતને અક્ષર સમગીત કહે છે. જે સ્વરમાં જે ગીતપદ ચાલતું હોય એજ સ્વરથી તે ગીતપદને ગાવું તેનું નામ પદસમ ગીત છે પરસ્પરમાં અભિહત હાથના તાલના સ્વરને અનુ-સરીને જે ગીત ગવાય છે તેને તાલસમ ગીત કહે છે. શૃંગ અથવા લાકડી-માંથી બનાવેલી અને અંગુલિકોશથી સમાહત તંત્રીના સ્વરના અનુસાર નીકળતા સ્વરથી જે ગીત ગાવામાં આવે છે તેને લયસમગાન કહે છે. જે ગીતમાં પહેલાં બંસરી આદિના સ્વરની સાથે સૂરનો મેળ મેળવવામાં આવે અને ત્યારબાદ તેના સ્વરની સાથે જ જે ગીત ગાવામાં આવે છે તેને નિશ્વઃ-સિતોચ્છ્વસિતસમ ગીત કહે છે. જે ગીત સારંગી આદિ પર આંગળીઓનો સંચાર કરીને સારંગી આદિના અવાજની સાથે સાથે ગાવામાં આવે છે તે ગીતને સંચાર સમગાન કહે છે.

तथा-वेष्टिमं-वेष्टननिर्वृत्तं मुकुटादि २, तथा-पूरिम-पूरणनिर्वृत्तं-मृन्मयादिक-मनेकच्छिद्रं पुष्पैः पूर्यमाणम् ३, तथा-सङ्घातिमं-परस्परं पुष्पमालादिसङ्घाते-नोपजन्यमानम् ४ इति (३)।

"चउव्विहे अलंकारे" इत्यादि—अलङ्कारः-अलङ्क्रियते भूष्यतेऽनेनेत्य-लङ्कारः, स चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-केशालङ्कारः-केशा एव अलङ्कारः १, एवं वस्त्रालङ्कारः २, माल्यालङ्कारः ३, आभरणालङ्कारः ४।

"चउव्विहे मल्ले" इत्यादि। फूलों से रची गई मालाका नाम माल्य है। यह माला चार प्रकारकी कही गई है जैसे-ग्रन्थिम १, वेष्टिम २ पूरिम ३ और संघातिम ४ जो माला सूत्र से-डोरा से गूंथकर बनाई जाती है वह ग्रन्थिम मालाहै १। जो माला वेष्टनसे निर्वृत्त होतीहै जैसे मुकुट वह वेष्टिम माला है २। जो माला मिट्टी आदिसे बनाई जातीहै, जिसमें अनेक छिद्र होते हैं, और उन छिद्रोंमें जो फूलोंसे भरी हुई होती है वह पूरिम मालाहै ३। और जो पुष्पोंके नाल आदिके पारस्परिक संघात से बनाई जाती है वह संघातिम माला है (४)

"चउव्विहे अलङ्कारे" इत्यादि।—जिससे शरीर शोभित किया जाता है वह अलङ्कार है, यह अलङ्कार चार प्रकारका कहा गया है, जैसे-केशालङ्कार, १, वस्त्रालङ्कार २, माल्यालङ्कार ३, और आभरणा-लङ्कार ४। केश ही जहां अलङ्कार रूप हो वह केशालङ्कार है, वस्त्र ही

"चउव्विहे मल्ले" ઇત્યાદિ—ફૂલોમાંથી બનાવેલી માળાને માલ્ય કહે છે તે માલ્યના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે--(૧) ગ્રન્થિમ, (૨) વેષ્ટિમ, (૩) પૂરિમ અને (૪) સંઘાતિમ

જે માળા સૂત્રથી (દોરાથી) ગૂંથીને બનાવવામાં આવે છે, તે માળાને ગ્રન્થિમ માલ્ય કહે છે. જે માળા વેષ્ટનથી નિવૃત હોય છે તેને વેષ્ટિમ માલ્ય કહે છે, જેમકે મુકુટ.

જે માળા માટી આદિ વડે બનાવવામાં આવે છે-તે માટીમાં અનેક છિદ્રો હોય છે અને તે છિદ્રોને ફૂલોથી ભરી દેવામાં આવ્યાં હોય છે, એવી માળાને પૂરિમ માલ્ય કહે છે.

જે માળાને નાલ આદિના પારસ્પરિક સંયોજનથી બનાવવામાં આવે છે તે માળાને સંઘાતિમ માલ્ય કહે છે.

"चउव्विहे अलंकारे" ઇત્યાદિ—જેના વડે શરીરને વિભૂષિત કરવામાં આવે છે તેનુ નામ અલંકાર છે. તે અલંકાર ચાર પ્રકારના કહ્યાં છે—(૧) કેશાલંકાર, (૨) વસ્ત્રાલંકાર, (૩) માલ્યાલંકાર અને (૪) આભરણાલંકાર. કેશ જ જ્યાં અલંકાર રૂપ હોય તે અલંકારને કેશાલંકાર કહે છે. વસ્ત્રો જ

" चउव्विहे अभिणए " इत्यादि—अभिनयः-अभिनयति-व्यञ्जयत्यर्थमित्यभिनयः=मनोगतभावाभिव्यञ्जकः हस्तादिव्यापारः, स चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-दार्ष्टान्तिकः-इह दृष्टान्तः सधर्मवस्तुप्रतिबिम्बनं, तत्र कुशलो नियुक्तो वा दार्ष्टान्तिकः, तथा-पाण्डुसुतः-पाण्डुसुता अभिनेयत्वेन यत्र स पाण्डुसुतः, यद्वा-'पडिसुइए' इति पाठः, तत्पक्षे प्रातिश्रुतिक इति च्छाया, तदर्थश्च-प्रतिश्रुतं-प्रतिज्ञातं तत्र नियुक्तः प्रातिश्रुतिक इति २। तथा सामन्तोपनिपातिकः-समन्तानां-राजप्रधानपुरुषाणामुपनिपातः उपस्थितिः-सामन्तोपनिपातस्तत्र कुशलो नियुक्तो वा तथा, यद्वा-' समंतोवणिवाइए ' इत्यस्य समन्तादुपनिपातिक इति च्छाया, तत्पक्षे-समन्तात्-सर्वत उपनिपातोऽस्त्यत्रेति तथा, यद्वा-' समंतोवणिवाइए ' इत्यस्य सामान्यत उपनिपातिकः-सामान्यतः निर्विशेषत्वादुपनिपातोऽस्त्यत्रेति तथा ३। तथा-लोकमध्यावसितः-लोकमध्ये-लोकान्तराले अवसितः-समाप्तस्तथा, एते अभिनयभेदा भरतादिनाटयशास्त्रज्ञेभ्यो विज्ञेयाः ॥सू० ३८॥

देवाधिकाराद्देवविशेष सनत्कुमारादीनां-विमानवर्णादी न्निरूपयितु द्वि सूत्रीमाह

मूलम्—सणंकुमारमाहिंदेसु णं कप्पेसु विमाणा चउवण्णा पण्णत्ता, तं जहा--णीला १, लोहिया २, हालिद्दा ३, सुक्किला४।(१)

जहां अलङ्कार रूप हो वह वस्त्रालङ्कार है, इसी प्रकार से माल्यालङ्कार और आभरणालङ्कार भी जानना चाहिये।

"चउव्विहे अभिणए" इत्यादि अभिनय चार प्रकारका कहागयाहै, मनोगतभावका अभिव्यञ्जक जो हस्तादि व्यापारहै वह अभिनयहै, यह अभिनय दार्ष्टान्तिक १, पाण्डुसुत २, सामन्तोपनिपातिक ३ और लोकमध्यावसित ४ के भेदसे चार प्रकारका है, ये अभिनयके भेद भरतादि नाटय शास्त्रज्ञों से समझ लेना चाहिये ॥ सू० ३८ ॥

જ્યાં અલંકાર રૂપ હોય તે અલંકારને વસ્ત્રાલંકાર કહે છે. એ જ પ્રમાણે માલ્યાલંકાર અને આભરણાલંકાર વિષે પણ સમજી લેવું.

" चउव्विहे अभिणए " અભિનય ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે. મનોગત ભાવોને વ્યક્ત કરવા માટે હસ્તાદિની જે ચેષ્ટાઓ કરવામાં આવે છે તેને અભિનય કહે છે. તેના ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) દાર્ષ્ટાન્તિક, (૨) પાંડુસુત, (૩) સામન્તોપનિપાતિક, અને (૪) લોકમધ્યાવસિત. આ ભેદો વિષે ભરતાદિ નાટ્ય શાસ્ત્રજ્ઞો પાસેથી વિશેષ માહિતી મેળવી લેવી. ॥ સૂ. ૩૮ ॥

महासुक्कसहस्सारेसु णं कप्पेसु देवाणं भवधारणिज्जा सरीरगा उक्कोसेणं चत्तारि रयणीओ उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता (२) सू.॥३९॥

छाया—सनत्कुमारमाहेन्द्रेषु खलु कल्पेषु विमानानि चतुर्वर्णानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-नीलानि १, लोहितानि २, हारिद्राणि ३, शुक्लानि ४ (१)।

महाशुक्रसहस्रारेषु खलु कल्पेषु देवानां भवधारणीयानि शरीरकाणि उत्कर्षेण चतस्रो रत्नय ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्तानि ॥३९॥

टीका—'सणंकुमारमाहिंदेसु" इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं—सनत्कुमारमाहेन्द्रयोश्चतुर्वर्णानि, नीलादीनि कल्पान्तरेषु तु अन्यप्रकारेण विमानानि भवन्ति।

उक्तश्च—" सोहम्मे पंचवण्णा एक्कगहाणी उ जा सहस्सारे।
दो दो तुल्ला कप्पा तेणपरं पुंडरीयाओ ॥१॥
छाया-सौधर्मे पञ्चवर्णानि एकैकहानिस्तु यावत्सहस्रारम्।
द्वयोर्द्वयोस्तुल्यानि कल्पयो: तेन परं पुण्डरीकाणि ॥१॥"

अयमर्थ-सौधर्मे=प्रथमे देवलोके पञ्चवर्णानि विमानानि भवन्ति, यावत् सहस्रारम्=सहस्रारविमानपर्यन्ते तु वर्णानां मध्ये क्रमशः एकैकवर्णहानि र्भवति

देवों के अधिकारसे अब सूत्रकार सनत्कुमार आदि देवविशेषोंके विमानों का निरूपण दो सूत्रों द्वारा करते हैं--

टीकार्थ-" सणंकुमारमाहिंदेसु " इत्यादि।

सनत्कुमार एवं माहेन्द्र इन दो कल्पो में विमान चार वर्णवाले कहे गये हैं, वे चार वर्ण इस प्रकार से हैं। नील १, लोहित २, हारिद्र ३, और शुक्ल ४। अवशिष्ट कल्पो में अन्य प्रकार से विमान हैं। कहा भीहै-"सोहम्मे पंचवण्णा" इत्यादि-इस गाथा का अर्थ ऐसा है

सौधर्म देवलोकमें पांचो ही वर्णोंवाले विमान है, ईशानकल्पमें भी

દેવોનો અધિકાર ચાલુ છે. તેથી સૂત્રકાર હવે સનત્કુમાર આદિ દેવવિશેષોનાં વિમાનોનાં વર્ણ આદિનું નિરૂપણ કરે છે.

ટીકાર્થ-" सणंकुमार माहिंदेसु " ઈત્યાદિ—

સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર, આ બે કલ્પોમાં ચાર વર્ણવાળાં વિમાન હોય છે-તે ચાર વર્ણ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) નીલ, (૨) લોહિત (લાલ), (૩) હારિદ્ર (પીળો) અને (૪) શુકલ. બાકીના કલ્પોમાં અન્ય પ્રકારનાં વિમાનો છે. કહ્યું પણ છે કે " सोहम्मे पंच वण्णा " ઈત્યાદિ—

तेषु सौधर्मादि सहस्रारपर्यन्तेषु द्वयोर्द्वयोः कल्पयोः विमानानि उल्यवर्णानि भवन्ति, ततःपरं=सहस्रारदेवलोकात्परतः स्थितेषु देवलोकेषु विमानानि पुण्ड-रीकाणि=श्वेतवर्णानि भवन्तीति ।

अयं भावः—सौधर्मेशानयोः कल्पयोः विमानानि पञ्चवर्णानि काल-नील-लोहित-हारिद्र-(पीत) शुक्लवर्ण युक्तानि भवन्ति, सनत्कुमारमाहेन्द्रयो कल्प-योर्विमानानि चतुर्वर्णानि नीलादि चतुर्वर्णयुक्तानि भवन्ति, ब्रह्मलान्तकयोः विमा-नानि त्रिवर्णानि लौहित्यादित्रिवर्णयुक्तानि भवन्ति, शुक्रसहस्रारयोः विमानानि द्विवर्णानि हारिद्र-शुक्लवर्णयुक्तानि भवन्ति, आनत-प्राणतारणाच्युतेषु विमा-नानि श्वेतवर्णानि भवन्तीति ।

"महासुक्कसहस्सारेसु णं" इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं-भवधारणीयानि-भवे धार्यन्त इति भवधारणीयानि, यद्वा-भवं धारयन्तीति भवधारणीयानि जन्मत आरभ्य मरणपर्यन्तं शरीराणि तिष्ठन्ति, तानि कियत्परिमाणानि ? इति प्रदर्श-यति-'उक्कोसेणं' इत्यादि-उत्कर्षेण चतस्रः रत्नयः-चतुर्हस्त-प्रमाणानि । यद्यपि रत्निर्बद्धमुष्टिको हस्तोऽन्यत्र, अत्र रत्निस्तु प्रसारिताङ्गुलिको हस्त उच्यते,

---

पांचो ही वर्णोंवाले विमान हैं । सनत्कुमार और माहेन्द्र इन दो देव-लोको में चार वर्णोंवाले विमान हैं । ब्रह्म और लान्तक में तीन वर्णों-वाले विमान हैं । शुक्र और सहस्रार में दो वर्णोंवाले विमान हैं । आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन कल्पों में केवल श्वेत वर्णवाले विमान हैं ।

"महासुक्कसहस्सारेसु णं" इत्यादि--महाशुक्र और सहस्रार इन दो कल्पों में देवोंके भवधारणीय शरीर उत्कृष्ट से चार रत्निप्रमाण ऊंचाईवाले कहे गये हैं । जो शरीर जन्म से लेकर मरण पर्यन्त रहता है, वह भवधारणीय शरीरहै । इनके शरीरकी ऊंचाई का प्रमाण चार रत्नि-चार हाथ हैं । यद्यपि बद्ध मुष्टिवाले हाथ को अन्यत्र एक रत्नि

આ ગાથાને અર્થ નીચે પ્રમાણે છે—સૌધર્મ અને ઇશાન દેવલોકમાં પાંચે વર્ણનાં વિમાને છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પોમાં ચાર વર્ણવાળાં વિમાને છે બ્રહ્મલેક અને લાન્તકમાં ત્રણ વર્ણોવાળાં વિમાને છે શુક્ર અને સહસ્રારમાં બે વર્ણોવાળાં વિમાને છે. આનત, પ્રાણત, આરણ અને અચ્યુત આ કલ્પોમાં કેવળ શુક્લ વર્ણવાળાં વિમાને છે.

"મહાસુક્ક સહસ્સારેસુ ણં" ઇત્યાદિ—મહાશુક્ર અને સહસ્રાર કલ્પોના દેવોનું ભવધારણીય શરીર અધિકમાં અધિક ચાર રત્નિપ્રમાણ ઉંચાઇવાળું હોય છે જે શરીર જન્મથી લઇને મરણ પર્યન્ત રહે છે, તે શરીરને ભવ-ધારણીય શરીર કહે છે ચાર રત્નિપ્રમાણ ઉંચાઇ એટલે ચાર હાથની ઉંચાઇ સમજવી. જો કે કેટલાક શાસ્ત્રોમાં મુઠ્ઠી વાળેલા હાથ જેટલા પ્રમાણને એક

तथाप्यत्र रत्निशब्देन हस्तमात्रं गृह्यते, ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्तानि, शुक्रसहस्रारयोः कल्पयोर्देवाश्चतुर्हस्ता भवन्ति, अन्येषु तु अन्यथा,

यत उक्तम्—भवण १० वणज्जो ५ सोहम्मीसाणे सत्त होंति रयणीओ ।
एक्केक्कहाणि सेसे दुदुगे य दुगे चउक्के य ॥१॥"
गेविज्जेसुं दोन्नी एक्का रयणी अणुत्तरेसु ।

छाया—भवनवानज्योतिष्कसौधर्मैशानेषु सप्त भवन्ति रत्नयः ।
एकैकहानिः शेषेषु द्विके द्विके च द्विः चतुष्के च ॥१॥
ग्रैवेयकेषु द्वे रत्नी एका रत्निरनुत्तरेषु ।

अयमर्थः—भवनपति-व्यन्तर-ज्योतिष्क-सौधर्म-शान देवानां शरीराणि सप्तरत्नयो भवन्ति । ततःपरं शेषेषु सनत्कुमारादिषु दशकल्पेषु द्विके=सनत्कुमारमाहेन्द्र द्वये, द्विके=ब्रह्मलान्तकद्वये, द्विके=शुक्रसहस्रारद्वये च चतुष्के-आनतप्राणतारणाच्युतचतुष्टये च क्रमशः एकैकरत्नि हानिर्भवति । अयं भावः-सनत्कुमारमाहेन्द्रयोर्देवानां शरीराणि षड्रत्नि प्रमाणानि भवन्ति, ब्रह्मलान्तकयो र्देवानां शरीराणि पञ्चरत्नि प्रमाणानि भवन्ति, शुक्रसहस्रारयोर्देवानां शरीराणि

कहा गया है । परन्तु यहां पर पसारी हुई अंगुलियोंवाला हाथ रत्नि शब्द से कहा गया है । इसलिये यहां रत्नि शब्द से हस्तमात्र लिया गया है । इसी तरह ऐसा जानना चाहिये कि शुक्र और सहस्त्रारकल्प के देव चार हाथवाले ऊंचे होते हैं, अन्य देवों में ऐसा नियम नहीहै ।

कहाभी है–" भवणवणजोइस " इत्यादि--इनका अर्थ ऐसा है भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिष्क, सौधर्म और ईशान देवों के शरीर सात रत्निप्रमाणवाले होते हैं अर्थात् सात हाथकी ऊंचाईवाले होते हैं । सनत्कुमार और माहेन्द्र के देवों के शरीर ६ रत्नि ऊचे होते हैं । ब्रह्मलान्तक देवों के शरीर ५ रत्निप्रमाण ऊचे होते हैं । शुक्र सहस्त्रार

રત્નિપ્રમાણુ કહ્યું છે, પણુ અહીં ખુલ્લી મુઠ્ઠીવાળા હાથ પ્રમાણુ માપને એક રત્નિપ્રમાણુ કહ્યું છે આ પ્રકારે અહીં એવું સમજવાનું છે કે શુક્ર અને સહસ્રાર કલ્પના દેવોના ભવધારણીય શરીરની ઉંચાઈ ચાર હાથપ્રમાણુ હોય છે, અન્ય કલ્પોના દેવોની ઉંચાઇ એટલી હોતી નથી. કહ્યુ પણુ છે કે—

" ભવણવણજોઇસ "-ઇત્યાદિ—ભવનપતિ, વ્યન્તર, જ્યોતિષ્ક, સૌધર્મ કલ્પવાસી અને ઇશાન કલ્પવાસી દેવોના શરીરની ઉંચાઇ સાત રત્નિપ્રમાણુ (સાત હાથ) હોય છે. સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પના દેવોની ઉંચાઈ છ રત્નીપ્રમાણુ હોય છે. બ્રહ્મલોક અને લાન્તક કલ્પના દેવોની ઉંચાઈ પાંચ

चतूरत्निप्रमाणानि भवन्ति, आनतप्राणतारणाच्युतेषु चतुर्षु देवलोकेषु देवानां शरीराणित्रिरत्निप्रमाणानि भवन्तीति। तथा–ग्रैवेयकेषु देवानां शरीराणि द्विरत्निप्रमाणानि भवन्ति तथा–चतुर्ष्वनुत्तरविमानेषु देवानां शरीराणि एकरत्निप्रमाणानि भवन्ति। सर्वार्थसिद्धविमाने तु देवानां शरीराणि बद्धमुष्टिरत्निप्रमाणानि भवन्तीति।

एवं भवधारणीयानि शरीराणि भवन्ति, उत्तरवैक्रियाणि तु–उत्कृष्टत्वेन लक्षयोजनपरिमितान्यपि सम्भवन्ति, जघन्यतस्तु उपपादकालेऽङ्गुलासंख्येयभागप्रमाणानि भवधारणीयानि भवन्ति, उत्तरवैक्रियाणितु अङ्गुलासंख्येयभागप्रमाणानि भवन्तीति ॥ सू० ३९ ॥

के देवों के शरीर ४ रत्निप्रमाण ऊंचे होते हैं। आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन चार देवलोकों में देवों के शरीर तीन रत्निप्रमाण ऊंचे होते हैं। तथा ग्रैवेयकवासी देवों के शरीर द्वीरत्निप्रमाण ऊंचे होते हैं। चार अनुत्तर विमानों में रहे हुए देवों के शरीर एक रत्निप्रमाण ऊंचे होते हैं। परन्तु सर्वार्थसिद्ध विमानमें देवों के शरीर बद्धमुष्टिवाले एक हाथ प्रमाण ऊंचे होते हैं। यह भवधारणीय शरीरों की ऊंचाई कही गई है। उत्तरवैक्रिय शरीरों की ऊंचाई तो एक लाख योजनतक की भी हो सकती है। तथा जघन्य की अपेक्षा उपपाद कालमें अगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण ऊंचाई होती है। और उत्तर वैक्रिय शरीरों की ऊंचाई भी जघन्य की अपेक्षा अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है ॥ सू० ३९ ॥

રત્નિપ્રમાણ હોય છે, શુક્ર અને સહસ્રાર કલ્પના દેવોના શરીરની ઉંચાઈ ચાર રત્નિપ્રમાણ હોય છે. આનત, પ્રાણત, આરણ અને અચ્યુત, આ ચાર દેવલોકના દેવોનાં શરીરની ઉંચાઈ ત્રણ રત્નિપ્રમાણ હોય છે. ગ્રૈવેયકનિવાસી દેવોની ઉંચાઇ બે રત્નિપ્રમાણ હોય છે. સર્વાર્થસિદ્ધ સિવાયના ચાર અનુત્તર વિમાનોના દેવોની ઉંચાઇ એક રત્નિપ્રમાણ હોય છે, પરન્તુ સર્વાર્થસિદ્ધ વિમાનના દેવોની ઉંચાઈ મુઠ્ઠી વાળેલા એક હાથપ્રમાણ હોય છે. અહીં જે ઉંચાઇ કહી છે તે ભવધારણીય શરીરની જ ઉંચાઇ સમજવી. ઉત્તર વૈક્રિય શરીરોની ઉંચાઈ તો વધારેમાં વધારે એક લાખ યોજન સુધીની હોઇ શકે છે, અને ઓછામાં ઓછી ઉંચાઈ ઉપપાદ કાળે અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ હોઈ શકે છે, અને ઉત્તર વૈક્રિય શરીરની જઘન્ય ઉંચાઇ પણ અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ હોય છે. ॥ સૂ. ૩૯ ॥

पूर्वं देववक्तव्यताऽभिहिता, देवाश्चाप्कायतयाऽप्युत्पद्यन्त इति जलगर्भान् निरूपयितुं द्विसूत्रीमाह—

मूलम्—चत्तारि उदगगब्भा पण्णत्ता, तं जहा--उस्सा १, महिया २, सीया ३, उसिणा ४। चत्तारि उदगगब्भा पण्णत्ता, तं जहा—हेमगा १, अब्भसंथडा २, सीयोसिणा ३, पंचरूविया४।

माहे उ हेमगा गब्भा, फग्गुणे अब्भसंथडा।

सीयोसिणा उ चित्ते, वइसाहे पंचरूविया ॥१॥ ॥ सू० ४० ॥

छाया—चत्वार उदकगर्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अवश्यायः १, मिहिकाः २, शीताः ३ उष्णाः ४। चत्वार उदकगर्भाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—हैमकाः १ अभ्रसंस्तृताः २, शीतोष्णाः ३ पञ्चरूपिकाः ४।

" माघे तु हैमका गर्भाः, फाल्गुने अभ्रसंस्थिताः।

शीतोष्णास्तु चैत्रे, वैशाखे पञ्चरूपिकाः ॥१॥ सू० ४०॥

टीका—' चत्तारि उदगगब्भा ' इत्यादि—उदकस्य-जलस्य गर्भाः गर्भा इव गर्भाः—गर्भा यथा जन्तूत्पत्तिहेतवो भवन्ति, तथा—कालान्तरे जलवर्पणनिमित्तरूपाः चत्वारोऽनुपदं वक्ष्यमाणाः प्रज्ञप्ताः, ते के ? इत्याह—' तंजहे ' त्यादि—तद्यथा—अवश्यायाः—रात्रिपतितजलकणरूपाः, तथा—मिहिका—धूमिका २ तथा

देव अप्कायरूप से भी उत्पन्न हो जातेहैं। अतः सूत्रकार जलगर्भों की निरूपणा दो सूत्रों द्वारा करते हैं–" चत्तारि उदगगब्भा पण्णत्ता " इत्यादि।

टीकार्थ–उदक गर्भ चार प्रकारके कहे गयेहैं जैसे अवश्याय१, मिहिका २, शीता ३, और उष्णा ४। जिस प्रकार गर्भ जन्तु की उत्पत्ति का कारण होता है, उसी प्रकार जो कालान्तर में जलवर्षण का निमित्त होता है वह जलगर्भ है। जो रात्रि में गिरे हुए जलकण के रूप होता है, वह अवश्यायरूप जलगर्भ है। धूमिकारूप जो जलकण होते हैं, वे

દેવ અપ્કાય રૂપે પણ ઉત્પન્ન થઇ જાય છે, તેથી સૂત્રકારે બે સૂત્રો દ્વારા જલગર્ભોનું નિરૂપણ કરે છે. " चत्तारि उदगगब्भा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–ઉદક ગર્ભ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે, તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) અવશ્યાય, (૨) મિહિકાર, (૩) શીતા, (૪) ઉષ્ણ જે પ્રકારે ગર્ભ જન્તુની ઉત્પત્તિનું કારણ હોય છે, એ જ પ્રમાણે જે ગર્ભ કાલાન્તરે જલવર્ષણનું નિમિત્ત બને છે તેનું નામ જલગર્ભ છે. જે રાત્રે પડેલાં જલકણરૂપ હોય છે

शीताः–आत्यन्तिकहिमकणरूपाः ३ तथा–उष्णाः–आत्यन्तिकोष्णरूपाः ४। यद्येतेऽवश्यायादयश्चत्वारो यस्मिन् दिवसे भवन्ति, न च विच्छिन्ना भवन्ति तदा तस्माद्दिनादारभ्य सार्धषड्भिर्मासैरुदकवृष्टिं जनयन्ति।

पुनः "चत्तारि उदगगब्भा" इत्यादि, स्पष्टम्, नवरम् हैमकाः हिम–तुषारः, हिममेव हिमकं, हिमकस्येमे हैमकाः हिमनिपातरूपाः १, तथा–अभ्रसंस्तृताः–मेघाडम्बररूपाः २, तथा–शीतोष्णाः–शीतोष्णरूपाः ३, तथा–पञ्चरूपिकाः–गर्जितविद्युज्जलवातमेघरूपाणां पञ्चानां रूपाणां समाहारः पञ्चरूपं तदस्त्येषामिति पञ्चरूपिका उदकगर्भाः ४।

मिहिका रूप जलगर्भ है। अत्यन्त हिमकण रूप जो जलकण होतेहैं, वे शीतरूप जलगर्भ हैं। एवं अत्यन्त उष्णरूप जो होते हैं, वे उष्णगर्भ हैं। यदि ये अवश्यायादिक जिस दिन होतेहैं और विच्छिन्न नहीं होते हैं, तब उस दिन से लेकर साढे छ मास बीतने पर उदकवृष्टि करते हैं।

फिरभी--"चत्तारि उदगगब्भा" उदक गर्भ चार प्रकार के कहे गये हैं-जैसे हैमक १, अभ्रसंस्तृत २, शीतोष्ण ३, और पञ्चरूपिक ४। जो हैमक जलगर्भ हैं वे तुषार पड़ने के रूप में होते हैं १। अभ्रसंस्तृत जलगर्भ मेघों के आडम्बर के रूप में होते हैं २। शीतोष्ण जलगर्भ शीत उष्ण दोनों रूपमें होतेहैं ३। जो पञ्चरूपिक जलगर्भ हैं वे गर्जना, विद्युत्, जल, वात, और मेघ इन पांचों रूपवाले होते हैं।

તેને અવશ્યાય રૂપ જલગર્ભ કહે છે ધૂમિકા રૂપ જે જલકણ હોય છે તેને મિહિકા રૂપ (ધુમસ રૂપ) જલગર્ભ કહે છે અત્યન્ત હિમકણ રૂપ જે જલકણો હોય છે તેમને શીત રૂપ જલગર્ભ કહે છે અત્યત ઉષ્ણ રૂપ જે જલકણો હોય છે તેમને ઉષ્ણગર્ભ કહે છે. આ અવશ્યાદિક ચાર જે દિવસે હોય છે તે દિવસે જો તેઓ વિચ્છિન્ન ન થાય તો તે દિવસથી શરૂ કરીને ૬॥ માસ સુધી જલવૃષ્ટિ કરે છે. "ચત્તારિ ઉદગગબ્ભા" ઉદક ગર્ભના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) હૈમક, (૨) અભ્રસંસ્તૃત, (૩) શીતોષ્ણ અને (૪) પંચરૂપિક

હૈમક જલગર્ભ તુષાર (ઝાકળ) પડવા રૂપ હોય છે. અભ્રસંસ્તૃત જલગર્ભ મેઘોના આડંબર રૂપ હોય છે. શીતોષ્ણ જલગર્ભ શીત અને ઉષ્ણ બન્ને રૂપે હોય છે જે પંચરૂપિક જલગર્ભ છે તે ગર્જના વિદ્યુત, જલ, વાત અને મેઘ આ પાંચ રૂપવાળો હોય છે.

तानेवोदकगर्भान् मासभेदेन प्रदर्शयति–' माहे उ हेमगा ' इत्यादि

माघमासे हिमपातरूपा गर्भा भवन्ति १, एवं फाल्गुनमासे अभ्रसंस्तृता मेघाडम्बररूपा गर्भाः २, चैत्रमासे शीतरूपा उष्णरूपा वा गर्भा भवन्ति ३, वैशाखमासे च पञ्चरूपिकाः–गर्जित–विद्यु–ज्जलवात–मेघरूपाः पञ्चविधा अपि गर्भा भवन्तीति ॥ २ ॥ इह मतान्तरमेवम् —

" पौषे समार्गशीर्षे सन्ध्यारागोऽम्बुदाः सपरिवेषाः ।
नात्यर्थं मार्गशिरे शीतं पौषेऽति हिमपातः ॥१॥
माघे प्रबलो वायुस्तुषारकलुष द्युती रवि–शशाङ्कौ ।
अति शीतं सघनस्य च भानोरस्तोदयौ धन्यौ ॥२॥
फाल्गुनमासे रूक्षश्चण्डः पवनोऽभ्रसम्प्लवाः स्निग्धाः ।
परिवेषाश्चाऽसकलाः कपिलस्ताम्रो रविश्च शुभः ॥३॥
पवनघनवृष्टियुक्ताश्चैत्रे गर्भाः शुभाः सपरिवेषाः ।
घनपवनसलिल विद्युत्स्तनितैश्च हिताय वैशाखे ॥४॥ इति ॥ ४० ॥

पूर्वमुदकगर्भा उक्ताः, सम्प्रति गर्भाधिकारान्मानुषीगर्भान्निरूपयितुमाह–

मूलम्–चत्तारि माणुस्सी गब्भा पण्णत्ता, तं जहा--इत्थित्ताए १, पुरिसत्ताए २, णपुंसगत्ताए ३, बिंबत्ताए ४।

अप्पं सुक्कं बहुं ओयं इत्थी तत्थ पजायई ।
अप्पं ओयं बहुं सुक्कं पुरिसो तत्थ पजायई ॥ १ ॥

" माहे उ हेमगा ', इस श्लोक द्वारा सूत्रकारने हैमक आदि जलगर्भों को मासभेद से प्रकट किये हैं। हैमक जलगर्भ माघ मासमें होते हैं। फाल्गुनमें अभ्रसंस्थित–अभ्रसंस्तृत जलगर्भ होते हैं। चैत्र के महीनामें शीतोष्ण जलगर्भ होते हैं, और वैशाख में पञ्चरूपिक जल गर्भ होते हैं इस विषयमें मतान्तर ऐसा है–" पौषे समार्गशीर्षे " इत्यादि– ॥ सू० ४० ॥

" माहे उ हेमगा " આ શ્લોક દ્વારા સૂત્રકારે હૈમક આદિ જલગર્ભોને માસભેદની અપેક્ષાએ પ્રકટ કર્યાં છે–હૈમક જલગર્ભનું અસ્તિત્વ માઘ (મહા) માસમાં હોય છે, ફાગણ માસમાં અભ્રસંસ્તૃત જલગર્ભનું, ચૈત્રમાં શીતોષ્ણ જલગર્ભનું અને વૈશાખમાં પંચરૂપિક જલગર્ભનું અસ્તિત્વ હોય છે આ વિષયમાં અન્ય માન્યતા આ પ્રમાણે છે. " पौषे समार्गशीर्षे " ઇત્યાદિ—સૂ.૪૦

दोण्हंपि रत्तसुक्काणं तुल्लभावे णपुंसओ।
इत्थी ओयसमाओगे बिंबं तत्थ पजायई ॥२॥ सू० ४१ ॥

छाया—चत्वारो मानुषीगर्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–स्त्रीतया १, पुरुषतया २, नपुंसकतया ३, बिम्बतया ४।

अल्पं शुक्रं बहु ओजः स्त्री तत्र प्रजायते।
अल्पमोजो बहुशुक्रं पुरुषस्तत्र प्रजायते ।१।
द्वयोरपि रक्त–शुक्रयोस्तुल्यभावे नपुंसकः।
स्त्र्योजः समायोगे बिम्बं तत्र प्रजायते ॥२॥ सू० ४१ ॥

टीका—"चत्तारि माणुस्सीगब्भा" इत्यादि—

मनुष्याः–नार्याः, गर्भाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–स्त्रीतया–स्त्रीत्वेनैको गर्भः १, पुरुषतया २, नपुंसकतया ३, एवं बिम्बतया–बिम्बं–गर्भप्रतिबिम्बं–गर्भाकृतिरार्तवपरिणामः, न तु गर्भ एव तस्य भावो बिम्बता तया

गर्भ के अधिकारको लेकर अब सूत्रकार मानुषीगर्भोंकी निरूपणा करते हैं। "चत्तारि माणुस्सी गब्भा" इत्यादि—

टीकार्थ–मानुषी गर्भ चार प्रकारके कहे गये हैं। जैसे–स्त्रीवाला गर्भ १, पुरुषवाला गर्भ २, नपुंसकवाला गर्भ ३ और बिम्बवाला गर्भ ४। जिस गर्भ से कन्याकी उत्पत्ति होती है, वह स्त्रीवाला गर्भ है, जिस गर्भसे पुत्र की उत्पत्ति होती है वह पुरुषवाला गर्भ है। जिस गर्भ से नपुंसक की उत्पत्ति होती है वह नपुंसकवाला गर्भहै। और जो गर्भ की आकृति जैसा आर्तव परिणाम होता है, वह बिम्बवाला गर्भ है, यह वास्तव में गर्भ नहीं होता है, खून ही इस प्रकार के पिण्डरूप में

ગર્ભની પ્રરૂપણા ચાલી રહી છે, તેથી હવે સૂત્રકાર માનુષી ગર્ભોની પ્રરૂપણા કરે છે "चत्तारि माणुस्सी गब्भा" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–માનુષી ગર્ભના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) સ્ત્રીવાળો ગર્ભ, (૨) પુરુષવાળો ગર્ભ, (૩) નપુંસકવાળો ગર્ભ અને (૪) બિમ્બવાળો ગર્ભ.

જે ગર્ભમાંથી કન્યાની ઉત્પત્તિ થાય છે, તે ગર્ભને સ્ત્રીવાળો ગર્ભ કહે છે. જે ગર્ભમાંથી પુત્રની ઉત્પત્તિ થાય છે, તે ગર્ભને પુરુષવાળો ગર્ભ કહે છે જે ગર્ભમાંથી નપુંસકની ઉત્પત્તિ થાય છે તે ગર્ભને નપુંસકવાળો ગર્ભ કહે છે. જ્યારે આર્તવ પરિણામ ગર્ભના જેવો આકાર માત્ર જ ધારણ કરે છે, ત્યારે તે ગર્ભને બિમ્બવાળો ગર્ભ કહે છે ખરી રીતે તો તે ગર્ભ જ હોતો નથી, પણ રુધિર જ આ પ્રકારના પિંડ રૂપે એકઠું થઇ જાય છે,

उक्तञ्च—" अवस्थितं लोहितमङ्गनाया,
वातेन गर्भं ब्रुवतेऽनभिज्ञाः ।
गर्भाऽऽकृतित्वात् कटुकोष्णतीक्ष्णैः,
स्रुते पुनः केवल एव रक्ते ॥१॥
गर्भं जडा भूतहृतं वदन्ती "-त्यादि ।

अयमर्थः—अनभिज्ञाः जना अङ्गनाया उदरे वातेन=वातवशात् पिण्डरूपेण अवस्थितं शोणितं गर्भाकृतित्वात्=गर्भसमानाकारत्वाद् गर्भं ब्रुवते=कथयन्ति । पुनः-कटुकोष्णतीक्ष्णैः=कटूष्णतीक्ष्णपदार्थसेवनेन रक्ते एव केवले स्रुते-निर्गते जडाः=अज्ञ पुरुषा गर्भं भूतहृतं वदन्तीति ।

गर्भस्य कारणभेदेन वैलक्षण्यं भवति, तत्पद्यद्वयेन प्रकटयति—
" अप्पं सुक्कं बहुं ओयं, इत्थी तत्थ पजायई ।
अप्पं ओयं बहुं सुक्कं, पुरिसो तत्थ पजायई ॥ १ ॥
दोण्हं पि रत्तसुक्काणं तुल्लभावे णपुंसओ ।
इत्थीओयसमाओगे बिंबं तत्थ पजायई ॥२॥

इकट्ठा हो जाता है । कहा भी है—

" अवस्थितं लोहितमङ्गनाया " इत्यादि—

तात्पर्य ऐसा है कि गर्भशास्त्र को नहीं जाननेवाले मूढजन स्त्रीके पेटमें जो वायुके वश से शोणित गर्भ के आकारमें अवस्थित हो जाता है, ऐसे गर्भ के जैसा आकारवाला होने के कारण गर्भ कहते हैं । जब वह रक्त कटु उष्ण तीक्ष्ण पदार्थके सेवनसे बाहर निकलताहै, तो अज्ञानी लोग ऐसा कहने लगते हैं कि गर्भ का हरण भूतने कर लिया है ।

गर्भ में कारण के भेद से विलक्षणता होतीहै, इस बातको सूत्रकार " अप्पं सुक्कं " इत्यादि श्लोक द्वारा प्रकट करते हैं—

કહ્યું પણ છે કે " अवस्थितं लोहितमङ्गनाया " ઈત્યાદિ—

આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—સ્ત્રીના પેટમાં વાયુના કારણે શોણિત જ્યારે ગર્ભના આકારમાં-પિંડના આકારમાં આવી જાય છે, ત્યારે તેનો ગર્ભના જેવો આકાર હોવાથી અબુધ લોકો તેને ગર્ભ માની લે છે. જ્યારે તે રક્ત ગરમ, કડવા આદિ પદાર્થોના સેવનને લીધે બહાર નીકળે છે ત્યારે મૂઢ જનો એવું કહે છે કે કોઈ ભૂત પ્રેતાદિએ ગર્ભનું હરણ કર્યું છે.

शुक्रं-पुरुषसम्बन्धिरेतः, तदल्पं, तथा ओजः=स्त्रीसम्बन्धि रजो यदि बहु-शुक्रापेक्षयाऽधिकं भवति, तदा तत्र-गर्भाशये स्त्री-कन्या प्रजायते=उत्पद्यते। तथा-ओजोऽल्पं शुक्रं च बहु यदि भवति तत्र पुरुषः प्रजायते। तथा-द्वयोरपि रक्त-शुक्रयोस्तुल्यभावे=समानपरिमाणत्वे नपुंसकः प्रजायते, तथा-स्त्र्योजः समायोगे-स्त्रिया ओज स्त्र्योजस्तेन सह समायोगः-वायुप्रकोपवशेन ओजसः स्थिरीभवनलक्षणः स्त्र्योजः समायोगस्तस्मिन् सति तत्र-गर्भाशये बिम्बं-मांसपिण्डरूपं प्रजायते।२। इहाऽपरैरुक्तम्—

"अत एवच शुक्रस्य बाहुल्याज्जायते पुमान्।
रक्तस्य स्त्री, तयोः साम्ये क्लीबः शुक्रार्तवे पुनः॥१॥
वायुना बहुशो भिन्ने यथास्वं बह्वपत्यता।
वियोनि विकृताकारा जायन्ते विकृतैर्मलैः॥२॥" इति।

"अप्पं सुक्कं बहुं ओयं" इनका भावार्थ ऐसा है—जब पुरुष का वीर्य अल्प होता है, और स्त्री का रज शुक्र की अपेक्षा अधिक होताहै, तब गर्भाशय में कन्या उत्पन्न होती है। जब इससे विपरीत बात होती है अर्थात् पुरुषका शुक्र-वीर्य अधिक होता है और स्त्री का रज शुक्र की अपेक्षा अल्प होता है, तब गर्भाशयमें पुत्र उत्पन्न होता है। जब शुक्र और रज ये दोनों परिमाण में समान होते हैं, तब गर्भाशयमें नपुंसक उत्पन्न होता है। और जब स्त्री का ओज वायु के प्रकोप के वश से स्थिर हो जाता है तब गर्भाशय में मांसपिण्डरूप बिम्ब उत्पन्न होता है। इस विषय में अन्यजनों का ऐसा कथन हैं—

"अतएव च शुक्रस्य" इत्यादि—इनका भावपूर्वोक्त जैसा ही है, जब शुक्र और आर्तव वायु के वश से अनेक रूपमें भिन्न २ हो

ગર્ભમા કારણુના ભેદને લીધે જે વિલક્ષણુતા હોય છે તે હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે–"અપ્પં સુક્કં બહું ઓયં"

જ્યારે પુરુષનું વીર્ય અલ્પ હોય છે અને સ્ત્રીનું રજ વીર્ય કરતાં અધિક પ્રમાણુમાં હોય છે, ત્યારે ગર્ભાશયમાં કન્યા ઉત્પન્ન થાય છે. જ્યારે આના કરતાં વિપરીત વાત બને છે–એટલે કે જ્યારે પુરુષનું વીર્ય સ્ત્રીના રજ કરતાં અધિક પ્રમાણુમાં હોય છે, ત્યારે ગર્ભાશયમાં પુત્ર ઉત્પન્ન થાય છે. જ્યારે શુક્ર અને રજ બન્ને સપ્રમાણુ હોય છે, ત્યારે ગર્ભાશયમાં નપુંસક પેદા થાય છે. જ્યારે સ્ત્રીનું ઓજ વાયુના પ્રકોપને કારણે સ્થિર થઇ જાય છે, ત્યારે ગર્ભાશયમા માંસપિંડ રૂપ બિમ્બ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. આ વિષયને અનુલક્ષીને અન્યજનો એવું કહે છે કે—

तत्र रक्तस्य बाहुल्यात् स्त्रीजायत इत्यर्थः, शुक्ररजसि समे सति क्लीब इत्यर्थः ।२। ॥सू० ४१॥

पूर्वं गर्भ उक्तः, सच प्राणिनामुत्पाद उच्यते, सचोत्पादाख्यपूर्वे विस्तरेण प्रतिपादित इति तत्स्वरूपविशेषं निरूपयितुमाह--

मूलम्--उप्पायपुव्वस्स णं चत्तारि चूलिया वत्थू पण्णत्ता ।सू.४२।

छाया--उत्पादपूर्वस्य खलु चत्वारि चूलिकावस्तूनि प्रज्ञप्तानि ॥सू० ४२॥

टीका--' उप्पायपुव्वस्स ' इत्यादि--उत्पादपूर्वस्य - उत्पादप्रतिपादकं पूर्वमुत्पादपूर्वं तच्च पूर्वाणां मध्ये प्रथमं पूर्वम्, तस्य खलु चूलिकावस्तूनि-चूलिकाः अग्राणि तद्वत्=आचारस्य प्रधानानि, तद्रूपाणि वस्तूनि-परिच्छेद-विशेषाः अध्ययनवत्-चूलिकाः वस्तूनि चत्वारि प्रज्ञप्तानि॥ सू० ४२ ॥

जाते हैं, तब विकृत हुए मलों द्वारा गडबड योनि और आकारवाली अनेक सन्तान उत्पन्न होती है। यहां पर भी रक्त की अधिकता में कन्या उत्पन्न होती है और शुक्र रज की समानतामें नपुंसक सन्तान होता है, ऐसा ही प्रकट किया गया है ॥ सू० ४१ ॥

कथित यह गर्भ प्राणियों का उत्पाद रूप होता है-इसका कथन उत्पाद पूर्व में विस्तारसे किया गया है, इसलिये अब सूत्रकार उस उत्पादपूर्वका स्वरूप कहते हैं। " उप्पायपुव्वस्स णं " इत्यादि--

टीकार्थ-उत्पाद पूर्वकी चार चूलिका रूप वस्तुएँ कही गईहैं, उत्पाद का प्रतिपादक जो पूर्व है वह उत्पाद पूर्व है, यह पूर्वों के बीच में प्रथम पूर्व

" अतएव च शुक्रस्य " આ કથનનો ભાવાર્થ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ છે. જ્યારે શુક્ર (વીર્ય) અને આર્તવ (રજ) વાયુને કારણે અનેક રૂપે ભિન્ન ભિન્ન થઈ જાય છે, ત્યારે વિકૃત થયેલા મળો દ્વારા વિચિત્ર યોની અને આકારવાળા અનેક સંતાનો ઉત્પન્ન થાય છે, અહીં પણ વીર્યની અધિકતા હોય તો પુત્ર ઉત્પન્ન થાય છે, રજની અધિકતા હોય તો કન્યા ઉત્પન્ન થાય થાય છે અને શુક્ર અને રજની સમાનતા હોય ત્યારે નપુંસક સંતાન પેદા થાય છે, એવું જ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ. ૪૧ ॥

પૂર્વોક્ત ગર્ભ જ જીવોની ઉત્પત્તિમાં કારણભૂત બને છે. આ વિષયનું કથન ' ઉત્પાદપૂર્વમાં ' વિસ્તારપૂર્વક કરવામાં આવ્યું છે તેથી હવે સૂત્રકાર તે ઉત્પાદપૂર્વના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે

" उप्पायपुव्वस्स णं चत्तारि " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-ઉત્પાદ પૂર્વની ચાર ચૂલિકા કહી છે. ઉત્પાદનું પ્રતિપાદન કરનારૂં જે પૂર્વ છે તેનું નામ ઉત્પાદપૂર્વ છે. બધા પૂર્વોમાં તે પ્રથમ પૂર્વ છે. જેમ

उत्पादपूर्वे काव्यस्य समावेश इति तद्विभागानाह--

मूलम्-चउव्विहे कव्वे पण्णत्ते, तं जहा-गज्जे १, पज्जे २, कत्थे ३, गेए ४ ॥ सू० ४३ ॥

छाया--चतुर्विधं काव्यं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-गद्यं १, पद्यं २, कथ्यं ३ गेयम् ४ ॥ ४३ ॥

टीका--' चउव्विहे कव्वे '' इत्यादि--काव्यं-कवयति-वर्णयतीति कविः, तस्य भावः, कर्म वा काव्यं-ग्रन्थः, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तं तद्यथा-गद्यम्-छन्दोबन्धरहितं वाक्यम्, शस्त्रपरिज्ञाध्ययनं यथा १, तथा-पद्यं-छन्दोबद्धं वाक्यं, यथा-विमुक्त्यध्ययनम् २, तथा-कथ्यं-कथायां साधु कथ्यं, यथा-ज्ञाताध्ययनम् ३,

---

है, अध्ययन की तरह इसकी चूलिकारूप वस्तुएँ-परिच्छेद विशेष चार हैं ॥ सू० ४२ ।

उत्पादपूर्वमें काव्य का समावेश होताहै, इसलिये सूत्रकार काव्यके विभागों को कहते हैं । " चउव्विहे कव्वे पण्णत्ते " इत्यादि--

टीकार्थ-काव्य चार प्रकारका कहा गयाहै, जैसे-गद्य१, पद्य२, कथ्य३ और गेय ४ । जो वर्णन करता है वह कवि है, कविका जो भाव या कर्महै वह काव्य ग्रन्थहै, इनमें जो काव्य छन्दोबद्धसे रहित होता है वह गद्यकाव्य है । जैसे-शस्त्रपरिज्ञाध्ययन १, जो वाक्य-काव्य छन्दोबद्ध होता है वह पद्यकाव्य है । जैसे-आचारांग सूत्र का आठमां विमुक्ति नामका अध्ययन २, जो कथा में साधु होता है अर्थात् जिसमें कथाए २

કોઈ પણ ગ્રન્થના પ્રકરણો (અધ્યયન) હોય છે તેમ ઉત્પાદપૂર્વના પણ જે અધ્યયન જેવાં પરિચ્છેદો (પ્રકરણો, વિભાગો) છે તેમને ચૂલિકા કહે છે ઉત્પાદપૂર્વની એવી ચૂલિકા ચાર છે. ॥ સૂ: ૪૨ ॥

ઉત્પાદ પૂર્વમાં કાવ્યનો પણ સમાવેશ થાય છે તેથી હવે સૂત્રકાર કાવ્યના વિભાગોનું કથન કરે છે " चउव्विहे कव्वे पण्णत्ते " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—કાવ્ય ચાર પ્રકારનાં કહ્યાં છે—(૧) ગદ્ય, (૨) પદ્ય, (૩) કથ્ય અને (૪) ગેય. જે વર્ણન કરે છે તેને કવિ કહે છે. કવિનો જે ભાવ અથવા તેનું જે કર્મ તે કાવ્યગ્રન્થ છે. જે કાવ્યો છન્દોબદ્ધથી રહિત હોય છે તે ગદ્યકાવ્ય કહે છે, જેમકે શસ્ત્રપરિજ્ઞાધ્યયન. જે વાક્ય અથવા કાવ્ય છન્દોબદ્ધ હોય છે, તેને પદ્યકાવ્ય કહે છે, જેમકે આચારાંગ સૂત્રનું આઠમું વિમુક્ત્યધ્યયન જે કાવ્યમાં (સાહિત્યમાં) કથાઓનો સદ્ભાવ હોય છે, તેને કથ્ય કાવ્ય કહે છે, જેમકે જ્ઞાતાધ્યયન. જે કાવ્ય ગાઈ શકાય એવું હોય છે તેને

तथा-गेयं-गातुं योग्यं गेयम्-' अधुवे आसमयम्मि ' इति पदरागप्रतिबद्धं कापिलीयाध्ययनम् ४।

यद्यपि गद्यपद्ययोर्द्वयोरेव कथ्य-गेययोरप्यन्तर्भावस्तथापि पृथक् तदुभयोपादानं कथागानधर्मविशिष्टतया विशेष सूचनाय ॥सू० ४३ ॥

पूर्वं गेयमुक्तं, तच्च भाषास्वभावत्वाद्दण्डमन्थादिक्रमेण लोकैकदेशादि पूरयति, तेन समुद्घातो भवतीति समुद्घातं निरूपयितुमाह--

मूलम्—णेरइयाणं चत्तारि समुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा-- वेयणासमुग्घाए १, कसायसमुग्घाए २, मारणंतियसमुग्घाए ३, वेउव्वियसमुग्घाए ४। एवं वाउक्काइयाणवि ॥ सू० ४४ ॥

छाया—नैरयिकाणां चत्वारः समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-वेदनासमुद्घातः १, कषायसमुद्घातः २, मारणान्तिकसमुद्घातः ३, वैक्रियसमुद्घातः ४। एवं वायुकायिकानामपि ।४४॥

रहती हैं वह कथ्यकाव्य है, जैसे-ज्ञाताध्ययन ३, जो गानेके योग्य होता है वह गेय काव्य है, जैसे-" अधुवे असासयम्मि " ऐसे ध्रुव पदरागसे प्रतिबद्ध कापिलीय उत्तराध्ययन का आठमां अध्ययन है ४ ।

यद्यपि गद्य और पद्य काव्यो में ही कथ्य और गेय काव्यों का भी अन्तर्भाव हो जाता है । फिर भी पृथक्रूपसे जो इनका कथन किया गया है, वह कथा और गानधर्म विशिष्ट ये दोनों से रहित हैं, ऐसी विशेष सूचना के लिये कहा गया है ॥ सू० ४३ ॥

गेय कहा यह गेय भाषाका स्वभाव होने से दण्ड, मन्थान आदि क्रम से लोक के एकदेश आदिको पूरित करता है, इससे समुद्घात होता है, अतः अब सूत्रकार समुद्घात का निरूपण करते हैं--

---

ગેયકાવ્ય કહે છે, જેમકે " અધુવે અસાસયમ્મિ " એવા ધ્રુવપદ રાગથી પ્રતિબદ્ધ કાપિલીય ઉત્તરાધ્યયનનું આઠમું અધ્યયન.

જો કે ગદ્ય અને પદ્ય કાવ્યોમાં જ કથ્ય અને ગેય કાવ્યોનો પણ સમાવેશ થઈ જાય છે, છતાં પણ અહીં તેમનું અલગ અલગ રૂપે પ્રતિપાદન કરવાનું કારણ એ છે કે કથા અને ગાનધર્મથી રહિત હોય તો તે બન્ને હીન બની જાય છે, એવું સૂચન કરવા નિમિત્તે સૂત્રકારે તેમને અલગ અલગ વિભાગ રૂપે પ્રકટ કર્યા છે. ॥ સૂ. ૪૩ ॥

ગેયનું નિરૂપણ કર્યું. તે ગેય ભાષાસ્વભાવ હોવાથી દંડ, મન્થાન આદિ ક્રમે લોકના એકદેશ આદિને પૂરિત કરે છે, તેના દ્વારા સમુદ્ઘાત થાય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર સમુદ્ઘાતનું નિરૂપણ કરે છે.

टीका—णेरइयाणं चत्तारि ' इत्यादि—नैरयिकाणां—नारकाणां समुद्घाताः यथास्वभावस्थितानामात्मप्रदेशानां वेदनादिभिः सप्तभिः कारणैः सम्—सम्यग् उद्घातनानि—स्वभावादन्यभावेन परिणमनानि समुद्घाताः=शरीराद्बहिर्जीवप्रदेश प्रक्षेपरूपाः,चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—वेदनासमुद्घातः—वेदनया समुद्घातः१, तथा—कषायसमुद्घातः कषायैः समुद्घातः२, तथा—मारणान्तिक समुद्घातः—मरणमेवान्तो मरणान्तः, तत्र भवो मारणान्तिकः स एव समुद्घातस्तथा ३, तथा—वैक्रियसमुद्घातः—वैक्रियाय समुद्घातो वैक्रियसमुद्घातः ४ ॥४४॥

वैक्रियसमुद्घातो हि लब्धिरूप इति लब्धिप्रस्तावाद्विशिष्टश्रुतलब्धिसम्प-

---

" णेरइयाणं चत्तारि समुग्घाया " इत्यादि ।

टीकार्थ—नैरयिकोंमें चार समुद्घात कहे गयेहैं, जैसे—वेदना समुदघात१ कषाय समुद्घात २, मारणान्तिकसमुद्घात ३ और वैक्रियसमुद्घात ४ । यथा स्वभाव से स्थित आत्मप्रदेशों का वेदना आदि सात कारणों से जो अन्य स्वभावसे परिणमन होताहै वह समुद्घातहै । इसका तात्पर्य ऐसाहै कि शरीरसे बाहर जीव प्रदेशों का जो प्रक्षेप (निकालना) होताहै वह समुद्घात है, इसमें वेदना से जो समुद्घात होता है वह वेदना समुद्घात है १, कषायों से जो समुद्घात होता है वह कषाय समुद्घात है २, मरणरूप अन्त समय में जो समुद्घात होता है वह मारणान्तिक समुद्घात है ३, एवं विक्रिया (अनेक आकार बनाना) के लिये जो समुद्घात होता है वह वैक्रियसमुद्घातहै ॥ सू० ४४ ॥

यह वैक्रियसमुद्घात लब्धिरूप होता है, अतः लब्धि के सम्बन्ध

" णेरइयाण चत्तारि समुग्घाया " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—નારકોમાં ચાર સમુદ્‌ઘાતનો સદ્‌ભાવ હોય છે—(૧) વેદના સમુદ્‌ઘાત, (૨) કષાય સમુદ્‌ઘાત, (૩) મારણાન્તિક સમુદ્‌ઘાત અને (૪) વૈક્રિય સમુદ્‌ઘાત યથા સ્વભાવે રહેલા આત્મપ્રદેશોનું વેદના આદિ સાત કારણોથી જે અન્ય સ્વભાવ રૂપે પરિણમન થાય છે તેનુ નામ સમુદ્‌ઘાત છે. એટલે કે શરીરની બહાર જીવપ્રદેશોનો જે પ્રક્ષેપ થાય છે તેનુ નામ સમુદ્‌ઘાત છે તેમાં વેદનાથી જે સમુદ્‌ઘાત થાય છે તેને વેદના સમુદ્‌ઘાત કહે છે કષાયોથી જે સમુદ્‌ઘાત થાય છે તેને કષાય સમુદ્‌ઘાત કહે છે મરણ રૂપ અન્ત સમયમાં જે સમુદ્‌ઘાત થાય છે તેને મારણાન્તિકસમુદ્‌ઘાત કહે છે વિક્રિયાને માટે જે સમુદ્‌ઘાત થાય છે તેને વૈક્રિય સમુદ્‌ઘાત કહે છે ॥ સૂ. ૪૪ ॥

આ વૈક્રિય સમુદ્‌ઘાત લબ્ધિરૂપ હોય છે, આ લબ્ધિના સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર વિશિષ્ટ શ્રુતલબ્ધિથી યુક્ત જીવોનું નિરૂપણ કરે છે.

मान् निरूपयितुं द्विसूत्रीमाह—

मूलम्—अरिहओ णं अरिट्ठनेमिस्स चत्तारि सया चोद्दसपुव्वीणमजिणाणं जिणसंकासाणं सव्वक्खरसन्निवाईणं जिणो इव अवितहवागरमाणाणं उक्कोसिया चउद्दसपुव्विसंपया होत्था ॥सू० ४५ ॥

छाया—अर्हतः खलु अरिष्टनेमेः चत्वारिशतानि चतुर्दशपूर्विणामजिनानां जिनसकाशानां सर्वाक्षरसन्निपातिनां जिनानामिव अवितथं व्याकुर्वतां मुत्कृष्टा चतुर्दशपूर्विसंपद् बभूवुः ॥ ४५ ॥

टीका—" अरिहओ णं " इत्यादि—अर्हतोऽरिष्टनेमेः चतुर्दशपूर्विणां-चतुर्दशपूर्वधराणाम् अजिनानाम् असर्वज्ञत्वाज्जिनभिन्नानां पुनर्जिनसंकाशानां-जिनतुल्यानाम् अविसंवादिवचनत्वाद् यथा पृष्टनिर्वक्तृत्वाच्च सर्वाक्षरसन्निपातिनां-सर्वाक्षरसंयोगवेदिनां जिनानां-सर्वज्ञानामिव-अवितथं-यथार्थं व्याकुर्वतां-प्ररूपयतां चत्वारि शतानि, बभूवुः तानि उत्कृष्टा चतुर्दशपूर्वि संपत्-चतुर्दशपूर्विरूप-सम्पद्रूपेण बभूवुः ॥सू० ४५॥

को लेकर अब सूत्रकार विशिष्ट श्रुतलब्धि से युक्त जीवों का निरूपण करते हैं - " अरिहओ णं अरिट्ठनेमिस्स " इत्यादि—

टीकार्थ-अर्हन्त अरिष्टनेमिके ४०० चारसो चतुर्दश पूर्वधर थे, ये चतुर्दश पूर्वधर अजिन थे—असर्वज्ञ होनेसे जिन से भिन्न थे, जिनरूप नहीं थे, किन्तु अविसंवादी वचनवाले होने से और प्रश्न के अनुसार उत्तर देनेवाले होने से जिनके जैसे थे। तथा सर्वाक्षर संयोगोंके वेत्ता थे, अर्थात् किस अर्थके मिलाने से कौन अर्थ होता है इसका वेत्ताथे, जिन सर्वज्ञ की तरह यथार्थ प्ररूपणा करनेवाले थे। ये उनके चतुर्दशपूर्विरूप सम्पत् रूप से थे ॥ सू० ४५ ॥

" અરિહઓ ણં અરિટ્ઠનેમિસ્સ " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—અહૅંત અરિષ્ટ નેમિના ૪૦૦ ચારસો ચૌદ પૂર્વધર હતા તે ચૌદ પૂર્વધર શિષ્યો અજિન હતા, એટલે કે તેઓ સર્વજ્ઞ નહિં હોવાને લીધે જિનથી ભિન્ન હતા એટલે કે તેઓ જિનરૂપ ન હતા પરન્તુ તેઓ અસંવાદી વચનવાળા હોવાને લીધે તથા પ્રશ્નને અનુરૂપ ઉત્તર દેનારા હોવાને લીધે જિનના જેવા હતા તેઓ સર્વાક્ષર સંયોગોના વેત્તા હતા અને સર્વજ્ઞ જિનના જેવી યથાર્થ પ્રરૂપણા કરનારા હતા. તેમના તે શિષ્યો ચૌદ પૂર્વરૂપ સંપત્થી યુક્ત હતા ॥ સૂ. ૪૫ ॥

पूर्वमरिष्टनेमेश्चतुर्दशपूर्वधराः परिगणिता उक्ताः, सम्प्रति भगवतो महावीरस्य तान् प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—समणस्स णं भगवओ महावीरस्स चत्तारि सया-वाईणं सदेवमणुयासुराए परिसाए अपराजियाणं उक्कोसियावाइ-संपया होत्था ॥ सू० ४६ ॥

छाया—श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य चत्वारि शतानि वादिनां सदेवमनुजासुराणां परिषदि अपराजितानामुत्कृष्टा वादिसम्पद् बभूवुः॥४६॥

टीका—'समणस्स णं भगवओ' इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं सदेवमनुजा-सुराणं-देवाश्च मनुजाश्चासुराश्चैषामितरेतरयोगे देवमनुजासुरास्तैः सह देव-मनुजासुराः, तस्यां तथाभूतायां परिषदि अपराजितानां वादिनां चत्वारि शतानि बभूवुः तान्येव उत्कृष्टा वादिसम्पद् बभूवुः ॥सू० ४६॥

पूर्वं चतुर्दशपूर्विण उक्ताः, ते च कल्पेषु सम्भवन्तीति कल्पान्निरूपयितुमाह—

मूलम्—हेट्ठिल्ला चत्तारि कप्पा अद्धचंदसंठाणसंठिया पण्णत्ता, तं जहा—सोहम्मे १, ईसाणे २, सणंकुमारे ३, माहिंदे ४।

मज्झिल्ला चत्तारि कप्पा पडिपुण्णचंदसंठाणसंठिया पण्णत्ता, तं जहा--बंभलोगे १, लंतए २, महासुक्के ३, सहस्सारे ४।

इस तरह अरिष्टनेमिके-चतुर्दश पूर्वधारियों की संख्या प्रकट कर अब सूत्रकार भगवान महावीर के चतुर्दशपूर्वधारियों की संख्या प्रकट करते हैं – "समणस्स णं भगवओ महावीरस्स" इत्यादि--

टीकार्थ श्रमण भगवान महावीर की देव मनुष्य एवं असुरोंसे युक्त सभा-में ४०० चारसौ अपराजित वादियों की उत्कृष्टवादि सम्पत्ति थीं। सू० ४६।

આ રીતે અરિષ્ટનેમિના ચૌદ પૂર્વધારીઓની સંખ્યા પ્રકટ કરીને હવે સૂત્રકાર મહાવીર પ્રભુના ચૌદ પૂર્વધારીઓની સંખ્યા પ્રકટ કરે છે

"समणस्स णं भगवओ महावीरस्स" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની દેવ, અસુર અને મનુષ્યોથી યુક્ત સભામાં અપરાજિત વાદીઓની ઉત્કૃષ્ટ સંપત્તિ ૪૦૦ ચારસોની હતી એટલે કે તેમના ૪૦૦ ચારસો શિષ્યો એવી શ્રુતલબ્ધિ સંપન્ન હતા કે તેમને વાદવિવાદમાં પરાજિત કરવાને કોઈ સમર્થ ન હતું. ॥ સૂ. ૪૬ ॥

उवरिल्ला चत्तारि कप्पा अद्धचंदसंठाणंठिया पण्णत्ता, तं जहा–आणए १, पाणए २, आरणे ३, अच्चुए ४ ॥ सू०४७॥

छाया—अधस्तनाश्चत्वारः कल्पा अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थिताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–सौधर्मः १, ईशानः २, सनत्कुमारः ३, माहेन्द्रः ४।

मध्यमाश्चत्वारः कल्पाः परिपूर्णचन्द्रसंस्थानसंस्थिताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–ब्रह्मलोकः १, लान्तकः २, महाशुक्रः ३, सहस्रारः ४।

उपरितनाश्चत्वारः कल्पा अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थिताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–आनतः १, प्राणतः २, आरणः ३, अच्युतः ४ ॥सू० ४७॥

टीका—"हेट्ठिल्ला" इत्यादि—कल्पसूत्रचतुष्टयं सुगमम्, नवरम्–अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थिताः–अर्द्धचन्द्राकारस्थिताः सौधर्मादयश्चत्वारः कल्पाः सन्ति पूर्वपश्चिमतो मध्यभागे सीमा सत्त्वादिति । सू० ४७॥

चतुर्दश पूर्वधारी कहे ये कल्पोंमें उत्पन्न होते हैं। अतः अब सूत्रकार कल्पों की प्ररूपणा करते हैं–"हेट्ठिल्ला चत्तारि कप्पा" इत्यादि–

टीकार्थ–नीचेके ये चार कल्प सौधर्म १, ईशान २, सनत्कुमार ३ और माहेन्द्र ४। अर्द्धचन्द्र के आकार जैसे–आकारवाले हैं, क्योंकि इनकी सीमाका सद्भाव पूर्वसे पश्चिम तक मध्यभाग में है, इस तरह से इनका आकार अर्द्धचन्द्रमा के आकार जैसा हो जाता है।

"मज्झिल्ला चत्तारि" इत्यादि–मध्यके चार कल्प परिपूर्ण चन्द्रमा के आकार जैसे–आकारवाले हैं, उनके नाम इस प्रकारसे हैं। ब्रह्मलोक १, लान्तक २, महाशुक्र ३, और सहस्रार ४।

"उपरिल्ला चत्तारि" इत्यादि–उपरितन चार कल्प अर्ध चन्द्र-

ચૌદ પૂર્વધારિઓ કલ્પોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર કલ્પોની પ્રરૂપણા કરે છે. "हेट्ठिल्ला चत्तारि कप्पा" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ–સૌધર્મ, ઈશાન, સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર, આ નીચેના ચાર કલ્પો અર્ધ ચન્દ્રાકારના છે, કારણ કે તેમની સીમાનો સદ્ભાવ પૂર્વથી પશ્ચિમ સુધી મધ્યભાગમાં છે. આ રીતે તેમનો આકાર અર્ધચન્દ્રમાના આકાર જેવો છે.

"मज्झिल्ला चत्तारि" ઈત્યાદિ—મધ્યના ચાર કલ્પો પૂર્ણ ચન્દ્રમાના જેવા આકારવાળાં છે તે ચાર કલ્પોનાં નામ આ પ્રમાણે છે. બ્રહ્મલોક, લાન્તક, મહાશુક્ર, અને સહસ્રાર.

"उपरिल्ला चत्तारि" ઈત્યાદિ—સૌથી ઉપરના ચાર કલ્પો અર્ધ ચન્દ્ર-

पूर्वं कल्पा उक्ताः, तेच देवलोकाः क्षेत्रभूता इति क्षेत्रप्रस्तावात्समुद्ररूपक्षेत्रं निरूपयितुमाह--

मूलम्--चत्तारि समुद्दा पत्तेयरसा पण्णत्ता, तं जहा--लवणोदे १, वरुणोदे २, खीरोदे ३, घयोदे ४ ॥ सू० ४८ ॥

छाया---चत्वारः समुद्राः प्रत्येकरसाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-लवणोदः १, वारुणोदः २, क्षीरोदः ३, घृतोदः ४ ॥४८॥

टीका--" चत्तारि समुद्दा " इत्यादि--चत्वारः समुद्राः प्रत्येकरसाः-भिन्नरससम्पन्नाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-लवणोदः-लवणं-क्षारमुदकं-जलं यस्मिन् यस्य वा स लवणोदः, लवणरसोदकत्वात् १, तथा-वारुणोदः-वारुणी मदिराविशेष-, तद्वदुदकं यत्र स तथा २, क्षीरोदः-क्षीरमिवोदकं यत्र स तथा ३,

---

माके आकार जैसे आकारवाले हैं, उनके नाम ये हैं-आनत १, प्राणत, २ आरण ३ और अच्युत ४ ॥ सू० ४७ ॥

उक्त ये कल्प देवलोक रूप होते हैं और देवलोक क्षेत्रभूत हैं। अतः क्षेत्रके सम्बन्धसे अब सूत्रकार समुद्ररूप क्षेत्रका निरूपण करते हैं

टीकार्थ-" चत्तारि समुद्दा पत्तेयरसा " इत्यादि--

चार समुद्र भिन्न भिन्न रसवाले कहे गये हैं, उनके नाम ये हैं--लवणोद १, वारुणोद २, क्षीरोद ३, और घृतोद ४। लवण समुद्रका जल जैसे लवण का रस होता है वैसा है। वारुणोदका जल मदिराका जैसा रस होता है वैसा है। अर्थात् मदिरा तुल्य जलवाला है। क्षीरोद का जल क्षीरके जैसा रसवाला है-अर्थात् क्षीरके जैसा पानीवाला है

માના જેવા આકારવાળા છે તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—આનત, પ્રાણત, આરણ અને અચ્યુત. ॥ સૂ. ૪૭ ॥

પૂર્વોક્ત કલ્પ દેવલોક રૂપ હોય છે અને દેવલોક ક્ષેત્રભૂત હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર ક્ષેત્રના સંબંધને લીધે સમુદ્રરૂપ ક્ષેત્રનુ નિરૂપણ કરે છે

ટીકાર્થ–" ચત્તારિ સમુદ્દા પણ્ણત્તા " ઇત્યાદિ—

ચાર સમુદ્ર જુદા જુદા રસવાળા કહ્યા છે, તે ચાર સમુદ્રોનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) લવણોદ, (૨) વારુણોદ, (૩) ક્ષીરોદ અને (૪) ઘૃતોદ. લવણ સમુદ્રના જળનો સ્વાદ લવણ–મીઠાના સ્વાદ જેવો હોય છે વારુણોદના જળનો સ્વાદ મદિરાના સ્વાદ જેવો હોય છે. એટલે કે તે મદિરા સમાન જળવાળો સમુદ્ર છે. ક્ષીરોદનું જળ ક્ષીરના (દૂધના) જેવું હોય છે, અને

तथा-घृतोदः-घृतमिवोदकं यत्र स तथा ४। कालोद-पुष्करोद-स्वयम्भू रमणाख्यास्त्रयः समुद्रा उदकरसाः, शेषास्तु इक्षुरसा इति, उक्तञ्च--

" वारुणिवरखीरवरो घयवरलवणोय होंति पत्तेया ।
कालो पुक्खरउदही सयंभुरमणो य उदगरसा ॥१॥"

छाया-" वारुणीवर-क्षीरवरौ घृतवर-लवणौ च भवन्ति प्रत्येकम् ।
कालः पुष्करउदधिः स्वयम्भूरमणश्च उदकरसाः ॥१॥ ४८॥

पूर्वं समुद्रा उक्ताः, ते च साऽऽवर्त्ता भवन्तीत्यावर्तान् दृष्टान्तान् प्रदर्शयंस्त द्दार्ष्टान्तिककषायान्निरूपयितुं द्विसूत्रीमाह--

मूलम्--चत्तारि आवत्ता पण्णत्ता, तं जहा--खरावत्ते १, उन्नयावत्ते २, गूढावत्ते ३, आमिसावत्ते ४। एवामेव चत्तारि कसाया पण्णत्ता, तं जहा--खरावत्तसमाणे कोहे १, उन्नयावत्तसमाणे माणे २, गूढावत्तसमाणा माया ३, आमिसावत्तसमाणे लोहे ४, खरावत्तसमाणं कोहं अणुप्पविट्ठे जीवे कालं करेइ णेरइएसु उववज्जइ, उन्नयावत्तसमाणं माणं एवं चेव गूढावत्तसमाणं मायं, एवं चेव आमिसावत्तसमाणं लोहमणुप्पविट्ठे जीवे कालं करेइ नेरइएसु उववज्जेइ ॥ सू० ४९ ॥

छाया--चत्वार आवर्ताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-खरावर्तः १, उन्नताऽऽवर्तः २, गूढावर्तः ३, आमिषाऽऽवर्तः ४। एवमेव चत्वारः कषायाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-

---

और घृतोद समुद्रका जल घृत के जैसे रसवाला है अर्थात् घृत जैसे पानीवाला है ' कालोद, पुष्करोद और स्वयंभूरमण ये तीन समुद्र पानीका जैसा रस होता है वैसे रसयुक्त पानीवाले हैं और बाकीके सब समुद्र इक्षु के जैसे रससे युक्त पानीवाले हैं। कहा भी है " वारुणिवरखीरवरो " इत्यादि ॥ सू० ४८ ॥

घृतोद समुद्रनुं जळ घीना जेवा रसवाळुं होय छे-एटले के घीना जेवा पाणीथी ते समुद्र भरपूर छे कालोद, पुष्करोद अने स्वयंभूरमण, आ त्रणु समुद्रो जेवो पाणीनो रस होय छे एवा रसयुक्त पाणीवाळा छे बाकीना बधा समुद्रो इक्षु (शेरडी) ना जेवा रसथी युक्त पाणीवाळा छे कह्युं पणु छे के " वारुणिवरखीरवरो " इत्यादि. ॥ सू. ४८ ॥

खराऽऽवर्तसमानः क्रोधः १, उन्नताऽऽवर्तसमानो मानः २, गूढावर्तसमाना माया ३, आमिषाऽऽवर्तसमानो लोभः ४।

खराऽऽवर्तसमान क्रोधमनुप्रविष्टो जीवःकालं करोति नैरयिकेषु उपपद्यते १, उन्नताऽऽवर्तसमान मानम् २, एवमेव गूढाऽऽवर्तसमानां मायाम् ३, एवमेवा-मिषाऽऽवर्तसमानं लोभमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति नैरयिकेषूपपद्यते ४॥४९॥

टीका--'चत्तारि आवत्ता' इत्यादि--आवर्ता-जलभ्रमाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-खरावर्तः-खरः-प्रबलवेगयुक्ततया निष्ठुरः, स चासावावर्तः-आवर्तनं

कहे गये ये समुद्र आवर्त्त सहित होते हैं, अतः सूत्रकार दृष्टान्त-भूत आवर्तों को दिखलाते हुए दार्ष्टान्तिक रूप कषायों की निरूपणा करते हैं। "चत्तारि आवत्ता पण्णत्ता" इत्यादि—

सूत्रार्थ-आवर्त चार प्रकारके कहे गयेहैं। जैसे-खरावर्त१, उन्नतावर्त२, गूढावर्त ३ और आमिषावर्त ४। इसी प्रकार से चार कषायें कही गई हैं, जैसे-खरावर्तसमान क्रोध १, उन्नतावर्तसमान मान २, गूढावर्त-समान माया ३ और आमिषावर्तसमान लोभ ४।

खरावर्तसमान क्रोध में अनुप्रविष्ट हुआ जीव यदि कालगत होता है, तो वह नैरयिकों में उत्पन्न होता है। इसी तरहसे उन्नतावर्तसमान मानमें गूढावर्तसमान मायामें और आमिषावर्तसमान लोभमें अनुप्रविष्ट हुआ जीव यदि कालगत होताहै, तो वह भी नैरयिकोंमें उत्पन्न होताहै।

ઉપર્યુક્ત સમુદ્રો આવર્ત સહિત હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્તભૂત આવર્તોને પ્રકટ કરીને દર્ષ્ટાન્તિક રૂપ કષાયોનું નિરૂપણ કરે છે.

સૂત્રાર્થ-" ચત્તારિ આવત્તા પણ્ણત્તા " ઇત્યાદિ—

આવર્ત ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) ખરાવર્ત, (૨) ઉન્નતાવર્ત, (૩) ગૂઢાવર્ત, અને (૪) આમિષાવર્ત. એ જ પ્રમાણે કષાયોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) ખરાવર્તસમાન ક્રોધ, (૨) ઉન્નતાવર્તસમાન માન, (૩) ગૂઢા-વર્તસમાન માયા અને (૪) આમિષાવર્તસમાન લોભ.

ખરાવર્તસમાન ક્રોધથી યુક્ત બનેલો જીવ જો મરણ પામે છે, તો નૈર યિકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે એ જ પ્રમાણે ઉન્નાતાવર્તસમાન માનમાં, ગૂઢાવર્ત-સમાન માયામાં અને આમિષાવર્તસમાન લોભમાં અનુપ્રવિષ્ટ થયેલો જીવ જો કાળધર્મ પામી જાય છે, તો તે પણ નૈરયિકોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે.

खराऽऽवर्तः, आवर्तोऽत्र समुद्रनद्यादेश्चक्रविशेषाणां वा बोध्यः १, तथा-उन्नताऽऽवर्तः-उन्नतः-उच्चः स चासावावर्त उन्नताऽऽवर्तः, स च गिरिशिखराऽऽरोहणमार्गस्य, यद्वा-वात्यया भवतीति ज्ञेयम् २, तथा-गूढाऽऽवर्तः-गूढः-प्रच्छन्नः, स चासावावर्तश्च गूढावर्तः, सच कन्दुकडोरकस्य वा दारुग्रन्थ्यादेर्बोध्यः ३, तथा-आमिषाऽऽवर्तः-आमिषं-मांसं तदर्थमावर्त आमिषावर्त्तः, सच श्येनादिपक्षिणां भवति ४।

टीकार्थ-जलमें जो भंवरें पड़तीहै उनका नाम आवर्तहै, ये आवर्त जो खरावर्त आदि के भेदसे चार प्रकारकी कही गई है, उनका भाव ऐसा है कि जल जब प्रबलवेग से युक्त होता है, तब उसमें जो बहुत बड़ा आवर्त पड़ता है कि जीसमें कैसा ही चतुर तैरनेवाला भी क्यों न हो, यदि फस जाता है तो उसकी भी कुशलता बाहर आने के लिये समर्थ नहीं होती है, ऐसा वह आवर्त निष्ठुर होता है। यह आवर्त समुद्र नदी आदिके चक्रविशेषोंका होता है तथा-जो उन्नतावर्त होता है, वह गिरिके शिखरके आरोहणवाले मार्गका होता है, अथवा-जब वायु चलता है तब धूल वगैरह की गोलाकार रूपमें जो ऊचे को उडान होती है, जिसे चक्रवात या भभूला कहा जाता है वह उन्नतावर्त है। जो आवर्त प्रच्छन्न होता है, वह गूढावर्त है, यह गूढावर्त या तो गेंद के डोरा का होता है या दारु लक्कड़ी की गांठ आदि के होता है। मांस प्राप्त करनेके लिये जो आवर्त होता है वह आमिषावर्त है, यह मांसावर्त श्येन बाज आदि पक्षियों के होता है ४।

ટીકાર્થ-પાણીમાં જે ભમરીઓ (વમળો) પેદા થાય છે તેને આવર્ત કહે છે હવે ખરાવર્ત આદિ ચાર ભેદોનો ભાવાર્થ સમજાવવામાં આવે છે જ્યારે પાણીનો વેગ અતિ પ્રબળ હોય છે ત્યારે પાણીમાં વમળો ઉઠે છે જ્યાં આ પ્રકારની વમળો ઉઠે ત્યાં પાણી પ્રબળ વેગથી ચક્કર ચક્કર ફરે છે. તે જગ્યાએ ચતુરમાં ચતુર તરવૈયો પણ તરી શકતો નથી. આ પ્રકારના વમળમાં ફસાયેલો માણુસ કે હોડી બહાર નીકળી શકતા નથી, એવો તે આવર્ત નિષ્ઠુર હોય છે. આ ખરાવર્ત સમુદ્ર નદીઆદિના જળમાં થાય છે ગિરિના શિખરના આરોહણુવાળા માર્ગ પર ઉન્નતાવર્તનો સદ્ભાવ હોય છે અથવા જ્યારે ખૂબ પવન થાય છે ત્યારે ધૂળ, પર્ણ-પાન આદિ ચક્કર ચક્કર ફરતાં ફરતાં આગળ વધે છે તેને ચક્રવાત, વંટોળીઓ અથવા ડમરી કહે છે, આ પ્રકારના આવર્તને ઉન્નતાવર્ત કહે છે. જે આવર્ત પ્રચ્છન્ન હોય છે તેને ગૂઢાવર્ત કહે છે તે આવર્ત દડાના દોરનો અથવા લાકડાની ગાંઠ આદિનો હોય છે માંસ પ્રાપ્ત કરવાને માટે જે આવર્ત હોય છે તેને આમિષાવર્ત કહે છે. આ પ્રકારનો આવર્ત બાજ, સમડી આદિ શિકારી પક્ષીઓની ચાંચનો હોય છે

'एवामेव चत्तारि कसाया' इत्यादि—एवमेव–उक्ताऽऽवर्तवदेव क्रोधादयः कषायाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः–तत्तुल्यत्वेनोक्ताः, तद्यथा–क्रोधः कषायः खराऽऽवर्तसमानः–क्रोधे खराऽऽवर्तसाम्यं च परापकारकरणकठोरत्वेन बोध्यम् १, तथा–मान उन्नताऽऽवर्त समानः–माने तत्साम्यं। पत्रतृणादि वस्तुन इव मनस उन्नतत्वस्थापकत्वेन २, तथा–माया गूढावर्तसमाना–मायायां तत्साम्यं च परम दुर्लक्ष्यत्वेन ३, तथा–लोभ आमिषाऽऽवर्तसमानः, तत्साम्यं च अनर्थ परम्परापातसमाक्रान्तेऽपि जने पुनः पुनः पतनकारणत्वेन। खराऽऽवर्तादिसाम्यं क्रोधादीनां प्रोक्त नतु सामान्यानामिति,

"एवमेव चत्तारि कसाया" इसी प्रकारसे क्रोधादिक चार कषायें कही गई हैं। क्रोधकषाय खरावर्तसमान होती है, क्रोधकषायमें खरावर्त की समानता परके अपकार करने से और कठोर होनेसे कही गई जाननी चाहिये। मान उन्नतावर्त के समान होता है, सो मानमें उन्नतावर्त की समानता पत्र तृणादि वस्तु की तरह मनको उन्नतरूपसे स्थापक होनेके कारण कही गई है। मायामें जो गूढावर्त समानता कही है वह उसे परमदुर्लक्ष्य होने के कारण कही गई है, और जो लोभमें आमिषावर्त समानता कहीहै वह अनर्थकी परम्पराके आने पर भी पुनः पुनः उसीमें गिरानेके कारण से कही गई है, यह सामान्य क्रोधादिकों में नहीं कही है, किन्तु जो उत्कृष्ट क्रोधादिक हैं उनमें ही कही गई है ऐसा समझना चाहिये।

"एवामेव चत्तारि कसाया" એ જ પ્રકારના ક્રોધાદિક ચાર કષાયોને બતાવ્યા છે ક્રોધકષાય ખરાવર્ત સમાન હોય છે ક્રોધકષાયને ખરાવર્ત સમાન કહેવાનું કારણ એ છે કે તે ખરાવર્ત સમાન કઠોર અને અપકાર કરનારો હોય છે માનકષાયને ઉન્નતાવર્ત સમાન કહેવાનુ કારણ એ છે કે જેમ ઉન્નતાવર્ત પત્ર, તૃણાદિને ઉન્નત સ્થાને ચડાવે છે, તેમ આ કષાય પણ મનનું ઉન્નત રૂપે સ્થાપક હોવાથી તેને ઉન્નતાવર્ત સમાન કહ્યુ છે માનથી યુક્ત બનેલો જીવ અભિમાનથી યુક્ત મનવાળો બને છે માયા કષાયને ગૂઢાવર્ત સમાન કહેવાનું કારણ એ છે કે માયા એ પરમ દુર્લક્ષ્ય હોય છે માયાયુક્ત માણસના મનોભાવને પારખવાનું કાર્ય દુષ્કર હોય છે. લોભને આમિષાવર્ત સમાન કહેવાનુ કારણ એ છે કે અનર્થની પરમ્પરા આવવા છતા પણ જીવ ફરી ફરીને લોભકષાયમાં પડયા જ કરે છે, તેને છોડવાને સમર્થ બની શકતો નથી ક્રોધાદિકોમાં જે ખરાવર્ત આદિ સાથે સમાનતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે, તે સામાન્ય ક્રોધાદિકોમા ગ્રહણ કરવાની નથી, પરન્તુ ઉત્કૃષ્ટ ક્રોધાદિકોમાં જ આ સમાનતા સમજવી જોઇએ.

क्रमेण खराद्यावर्तसमानक्रोधादिकषायानुप्रविष्टजीवस्य परिणाममाह-'खरावत्तसमाणं' इत्यादि-खराद्यावर्तसमान-क्रोधादिचतुष्टयमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति चेत्तदा नैरयिकेषूपपद्यते अशुभपरिणामस्याशुभकर्मबन्ध-निमित्ततया दुर्गतिहेतुत्वादिति ।४। सू० ४९॥

पूर्वं नारका उक्ताः तैश्च वैक्रियादिना सधर्माणो देवा भवन्तीति देवविशेष-भूतनक्षत्रदेवानां परिचयार्थं चतुःस्थानकमाह--

मूलम्—अणुराहानक्खत्ते चउत्तारे पण्णत्ते पुव्वासाढे एवं चेव, उत्तरासाढे एवं चेव ॥ सू० ५० ॥

छाया--अनुराधा नक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम्, पूर्वाषाढा एवमेव. उत्तराषाढा एवमेव ॥सू० ॥५०॥

टीका--'अणुराहा नक्खत्ते' इत्यादि--अनुराधा पूर्वाषाढोत्तराषाढाख्य-नक्षत्रत्रयं चतुस्तारकमित्यर्थः ॥ ५० ॥

क्रमसे खरादिआवर्त समान क्रोधादिक कषायों से युक्त हुए जीवकी यदि उस अवस्थामें मृत्यु हो जाती है, तो वह नैरयिकों में उत्पन्न होता है। क्योंकि जो अशुभ परिणाम होताहै, वह अशुभ कर्मबन्धनका कारण होता है और इससे वह दुर्गतिका हेतु होता है ॥ सू० ४९ ॥

नारक कहे अब सूत्रकार वैक्रिय आदि द्वारा इनके समान धर्मवाले होनेके कारण देवविशेष नक्षत्र देवोंके परिचयके लिये चार स्थान कहते हैं

"अणुराहा नक्खत्ते चउत्तारे" इत्यादि—

टीकार्थ-अनुराधा नक्षत्र पूर्वाषाढा नक्षत्र और उत्तराषाढा नक्षत्र ये तीन नक्षत्र चार २ ताराओंवाले होते हैं ॥ सू० ५० ॥

ખરાવર્ત આદિ સમાન ક્રોધાદિક કષાયોથી યુક્ત થયેલો જીવ જો એજ અવસ્થામાં કાળધર્મ પામી જાય છે, તો નૈરયિકોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે, કારણ કે તેનું જે અશુભ પરિણામ હોય છે. તે અશુભબન્ધનું કારણ બને છે અને અશુભબન્ધ દુર્ગતિનું કારણ બને છે ॥ સૂ. ૪૯ ॥

નારકોનું કથન કર્યું. તેમના જેવા જ વૈક્રિય આદિ ધર્મોવાળા દેવવિશે-ષોનું-નક્ષત્ર દેવોનું હવે સૂત્રકાર ચાર સ્થાનોની અપેક્ષાએ નિરૂપણ કરે છે.

"अणुराहा नक्खत्ते चउत्तारे" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–અનુરાધા નક્ષત્ર, પૂર્વાષાઢા નક્ષત્ર અને ઉત્તર ષાઢા નક્ષત્ર, આ ત્રણ નક્ષત્રો ચાર ચાર તારાવાળાં હોય છે ॥ સૂ ૫૦ ॥

पूर्वं देवविशेषा उक्ताः, देवविशेषत्वं च जीवानां कर्मपुद्गलचयनादिवशाद्भवतीति कर्मपुद्गलचयनादि निमित्तानि प्रदर्शयितुमाह—

मूलम्—जीवा णं चउठाणणिव्वत्तिए पोग्गले पावकम्मयाए चिणिंसु वा चिणंति वा चिणिस्संति वा णेरइयणिव्वत्तिए तिरिक्खजोणियणिव्वत्तिए, मणुस्सणिव्वत्तिए, देवणिव्वत्तिए, एवं उवचिणिंसु वा उवचिणंति वा उवचिणिस्संति वा०, एवं चिण उवचिण बंध उदीरवेय तह णिज्जरे चेव ॥ सू० ५१ ॥

छाया—जीवाः खलु चतुःस्थाननिर्वर्तितान् पुद्गलान् पापकर्मतयाऽचिन्वन् वा चिन्वन्ति वा चेष्यन्ति वा, नैरयिकनिर्वर्तितान्, तिर्यग्योनिकनिर्वर्तितान् मनुष्यनिर्वर्तितान् देवनिर्वर्तितान् एवमुपाचिन्वन् वा उपचिन्वन्ति वा उपचेष्यन्ति वा, एवं चय, उपचय, बन्ध, उदीर, वेद तथा निर्जरा चैव ॥ सू० ५१ ॥

टीका—" जीवा णं चउठाण " इत्यादि—सूत्रषट्कं सुगमम् , नवरं—जीवाः खलु चतुःस्थाननिर्वर्तितान्—चतुर्भिर्नारकत्वादिभिः स्थानैः पर्यायैः कारणैः निर्वर्तिताः—कर्मपरिणामं प्रापिताः—तथाविधाशुभपरिणामवशाद् बद्धाः चतुःस्थाननिर्वर्त्तिताः, तान् चतुःस्थाननिर्वर्त्तितान् पुद्गलान् पापकर्मतया=अशुभरूपज्ञा-

---

देवविशेष कहे देवविशेषता जीवों के पुद्गलों के चयन आदिके वश से होती है, इसलिये अब सूत्रकार कर्मपुद्गलों के चयनादि के निमित्तों को दिखानेके लीये सूत्र कहतेहैं। "जीवाणं चउट्ठाणं णिवत्तिए" इत्यादि—

टीकार्थ—जीवोंने चतुःस्थान निवर्तित-चार नारक आदि पर्यायरूप कारणोंसे कर्मरूप परिणाम को प्राप्त कराये गये तथाविध अशुभ परिणाम के वशसे बांधे गये पुद्गलोंका पापकर्मरूप से अशुभ ज्ञानावरणीयादि रूपसे चयन किया है, अर्थात् भूतकाल में तथाविध अपर पुद्गलोंसे अल्प प्रदे-

---

દેવવિશેષોનું કથન કર્યું. દેવવિશેષતા જીવોના કર્મપુદ્ગલોના ચયન આદિને કારણે પેદા થાય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર કર્મપુદ્ગલોના ચયનાદિ નિમિત્તોને બતાવવાને માટે નીચેનું સૂત્ર કહે છે

" જીવાણં ચઉટ્ઠાણં ણિવત્તિએ " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—જીવોને ચાર સ્થાન નિવર્તિત-નારકાદિ ચાર પર્યાય રૂપ કારણોથી કર્મરૂપ પરિણામને પ્રાપ્ત કરાવવામા આવેલ તથાવિધ (તે પ્રકારના) અશુભ પરિણામને કારણે બાંધેલા પુદ્ગલોનું પાપકર્મ રૂપે અશુભ જ્ઞાનાવરણીય આદિ

नावरणीयादिरूपतया, अचिन्वन् भूतकाले तथाविधापरकर्मपुद्गलैश्चितवन्तः पापप्रकृतीरल्पप्रदेशा बहुप्रदेशीकृतवन्तः, वर्तमानकाले चिन्वन्ति, एवं भविष्यत्काले चेष्यन्ति वा। इति चयनसूत्रम् १।

एवं चयनसूत्रवत् उपचिन्वन् उपचिन्वन्ति उपचेष्यन्ति वा तत्रोपचयनम् पौनः पुन्येन पुद्गलसङ्ग्रहणम् २, एवं 'चिय उवचिय' इत्यादि-एवंचयोपचयवत् अबध्नन् बध्नन्ति भन्त्स्यन्ति-बन्धविषयीकरिष्यन्ति वा ३, एवमुदीरयन्-उदीरयन्ति उदीरयिष्यन्ति वा ४, एवमवेदयन् वेदयन्ति वेदयिष्यन्ति वा ५, तथा-निरजरयन् निर्जरयन्ति निर्जरयिष्यन्ति वा इति चयप्रभृतिघटितसूत्रपञ्चकं बोध्यम् ।६। ॥सू०५१॥

शवाली पापप्रकृतियों को बहुप्रदेशवाली बनाया है। वर्तमानकाल में वे इसी प्रकार से उन्हें बनाते हैं, और भविष्यकाल में भी वे उन्हें इसी प्रकार से बनावेगें। यह चयन सूत्र है, इसी चयन सूत्रकी तरह उपचयन सूत्र का भी व्याख्यान कर लेना। अर्थात् जिस प्रकार से जीवोंने पूर्वोक्तरूप से अशुभ कर्म प्रकृतियों का त्रिकालमें चयन किया है, उसी प्रकारसे उन्होंने अशुभकर्म प्रकृतियों का त्रिकाल में उपचय किया है। बारम्बार पुद्गलों का ग्रहण करना इसका नाम उपचय है, इसी प्रकारसे जीवोंने भूतकाल में कर्मपुद्गलोंका बन्ध किया है, वर्तमानमें वे उन कर्मपुद्गलों का बन्ध करतेहैं, और आगे भी वे उन कर्मपुद्गलों का बन्ध करेंगे। इसी प्रकार का त्रिकालसम्बन्धी कथन उदीरणा वेदन और निर्जरा करने के सम्बन्ध में भी कर लेना चाहिये ॥ सू० ५१ ॥

રૂપે ચયન કર્યું છે એટલે કે ભૂતકાળમાં તથાવિધ અપાર પુદ્ગલોથી અલ્પ પ્રદેશવાળી પાપકૃતિયોને બહુપ્રદેશવાળી બનાવી છે, વર્તમાનકાળમાં પણ તેઓ તેમને આ પ્રકારની જ બનાવી રહ્યા છે, અને ભવિષ્યમા પણ તેઓ તેમને એજ પ્રકારની બનાવશે આ ચયનસૂત્રનું જે પ્રકારે કથન કરવામાં આવ્યું છે, એ જ પ્રમાણે ઉપચયન સૂત્રનું પણ કથન સમજી લેવું જોઇએ એટલે કે જે પ્રમાણે જીવોએ પૂર્વોક્ત રૂપે અશુભ કર્મપ્રકૃતિયોનું ત્રિકાળમાં ચયન કર્યું છે, એ જ પ્રમાણે તેમણે અશુભ કર્મપ્રકૃતિયોનો ત્રિકાળમાં ઉપચય કર્યો છે. વારંવાર પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરવા તેનું નામ ઉપચય છે. એ જ પ્રમાણે જીવોએ ભૂતકાળમાં કર્મપુદ્ગલોનો બન્ધ કર્યો છે, વર્તમાનકાળમાં પણ તેઓ તે કર્મપુદ્ગલોનો બન્ધ કરે છે, અને ભવિષ્યમાં પણ તેઓ તે કર્મપુદ્ગલોનો બન્ધ કરશે એ જ પ્રકારનું ત્રણે કાળ સંબંધી કથન ઉદીરણા, વેદન અને નિર્જરા કરવા વિષે પણ સમજી લેવું જોઇએ. ॥ સૂ. ૫૧ ॥

पुद्गलाधिकारात् पुद्गलानेव द्रव्यादिभिर्निरूपयितुमाह—

मूलम्—चउपएसिया खंधा अणंता, चउपएसोगाढा पोग्गला अणंता, चउसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता, चउगुणकालगा पोग्गला अणंता, जाव चउगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता ॥ सू० ५२ ॥

छाया—चतुष्प्रदेशिकाः स्कन्धाः अनन्ताः चतुष्प्रदेशावगाढाः पुद्गला अनन्ताः चतुःसमयस्थितिकाः पुद्गला अनन्ताः, चतुर्गुणकालकाः पुद्गला अनन्ताः, यावत् चतुर्गुणरूक्षाः पुद्गलाः अनन्ताः प्रज्ञप्ताः ॥ ५२ ॥

टीका—' चउपएसिया ' इत्यादि—सुगमम् ॥ सू० ५२ ॥

चउत्थो उद्देसो सम्मत्तो ॥ चउत्थं ठाणं समत्तं ॥ ४ ॥

चतुर्थ उद्देशः समाप्तः, ॥ चतुर्थं स्थानं समाप्तम् ॥

इति श्री विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचक–पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक – श्रीशाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित–कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्मचारि- जैनाचार्य – जैनधर्मदिवाकर–पूज्यश्री – घासीलालव्रतिविरचितायां ' स्थानाङ्गसूत्रस्य ' सुधाख्यायां व्याख्यया चतुर्थं स्थानं सम्पूर्णम् ॥ ४–४ ॥

पुद्गल के अधिकारको लेकर अब सूत्रकार द्रव्य क्षेत्र आदिसे पुद्गलों की ही प्ररूपणा करते हैं। " चउपएसिया खंधा अणंता " इत्यादि—

टीकार्थ—चार प्रदेशोंवाले स्कन्ध अनन्त कहे गयेहैं। चार प्रदेशों में अवगाढ हुए पुद्गलस्कन्ध अनन्त कहे गये हैं। चार समयकी स्थितिवाले

પુદ્ગલોનું કથન ચાલી રહ્યુ છે, તેથી હવે સૂત્રકાર દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર આદિની અપેક્ષાએ પુદ્ગલોની જ પ્રરૂપણા કરે છે.

" चउपएसिया खंधा अणंता " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—ચાર પ્રદેશવાળા સ્કન્ધ અનંત કહ્યા છે. ચાર પ્રદેશોમાં અવગાહિત થયેલા (રહેલા) સ્કન્ધ અનંત કહ્યા છે. ચાર સમયની સ્થિતિવાળા સ્કન્ધ અનંત કહ્યા છે. ચતુર્ગુણ (ચાર ગણા) કૃષ્ણ ગુણવાળાં પુદ્ગલ અનંત કહ્યાં છે, યાવત્

पुद्गल स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं, चतुर्गुण कृष्णवाले पुद्गल अनन्त कहे गये हैं, यावत् चतुर्गुण रूक्ष गुणवाले पुद्गल अनन्त कहे गये हैं ॥ सू० ५२ ॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचित "स्थानाङ्गसूत्र" की सुधा नामकी व्याख्याके चौथे स्थानका चौथा उद्देशा समाप्त ॥ ४-४ ॥

॥ चौथा स्थान सपूर्ण ॥

ચતુર્ગુણુ રુક્ષગુણુવાળા પુદ્ગલો અનંત કહ્યા છે અહીં (યાવત્) પદથી બધાં વર્ણ, સ્પર્શ આદિ ગ્રહણુ કરવા જોઈએ ॥ સૂ. ૫૨ ॥

શ્રી જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે રચેલા "સ્થાનાંગસૂત્ર"ની સુધા નામની વ્યાખ્યાના ચોથા સ્થાનનો ચોથો ઉદ્દેશો સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચોથું સ્થાન સંપૂર્ણ

अथ पंचमं स्थानकं प्रारभ्यते—

उक्तं चतुर्थं स्थानकम् । सम्प्रति संख्याक्रममनुसृत्य पञ्चमस्थानकमुच्यते । अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः—पूर्वस्मिन् स्थानके हि जीवा अजीवास्तद्धर्माश्च पदार्थाश्चतु स्थानकत्वेनोक्ताः, अत्रापि त एव पञ्चस्थानकत्वेनोच्यन्ते, इत्यनेन संबन्धेनायातस्य अस्य स्थानकस्येदमादिमं सूत्रम्—

मूलम्—पंच महव्वया पण्णत्ता, तं जहा--सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं १ जाव सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं ५। पंचाणुव्वया पण्णत्ता, तं जहा—थूलाओ पाणाइवायाओ वेरमणं १, थूलाओ मुसावायाओ वेरमणं २, थूलाओ अदिन्नादाणाओ वेरमणं ३, सदारसंतोसे ४, इच्छापरिमाणे ५ ॥ सू० १ ॥

छाया—पञ्च महाव्रतानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-सर्वस्मात् प्राणातिपाताद् विरमणं १ यावत् सर्वस्मात् परिग्रहाद् विरमणम् ५। पञ्चाणुव्रतानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—स्थूलात् प्राणातिपाताद् विरमणम् १, स्थूलात् मृषावादाद् विरमणं २, स्थूलात् अदत्तादानाद् विरमणम् ३, स्वदारसन्तोषः ४, इच्छापरिमाणम् ५ ॥सू० १ ॥

॥ पांचवे स्थानके पहला उद्देशेका प्रारंभ ॥

चतुर्थ स्थान कहा अब संख्याक्रमको लेकर पंचम स्थान कहा जाता है । इसका पूर्व स्थानके साथ ऐसा सम्बन्ध है कि पूर्वस्थानमें जीव अजीव इनके धर्म और पदार्थ ये सब चतुःस्थान रूपसे कहे गये हैं—सो वेही यहां पञ्चस्थान रूपसे कहे जावेंगे, इसी सम्बन्धसे आया हुआ इस पंचम स्थानका यह प्रथम सूत्र है—पंच महव्वया पणत्ता

પાંચમાં સ્થાનનો પહેલો ઉદ્દેશો

ચાર સ્થાનનું કથન પૂરૂં થયું. હવે પાંચ સ્થાનનું કથન શરૂ થાય છે તેનો પૂર્વસ્થાન સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે—ચતુર્થ સ્થાનમાં જીવ અને અજીવના ધર્મ ઈત્યાદિની પ્રરૂપણા ચાર સ્થાન રૂપે કરી છે. હવે અહિં પાંચ સ્થાન રૂપે તેમની પ્રરૂપણા કરાશે આ પંચમ સ્થાનના પહેલા ઉદ્દેશાનું પ્રથમ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે—" पंच महव्वया पणत्ता " ઇત્યાદિ—

टीका--'पंच महव्वया' इत्यादि--

महाव्रतानि-महान्ति च तानि व्रतानि चेति महाव्रतानि, अणुव्रतापेक्षया सर्वजीवरक्षणादिविषयत्वेन चैषां महत्त्वं बोध्यम्। यद्वा-महद्व्रतानीतिच्छाया। महतः-देशविरतापेक्षया बृहतो गुणिनो व्रतानि महद्व्रतानि। एतानि पञ्चसंख्यकानि प्रज्ञप्तानि=प्ररूपितानि भगवता ऋषभेण महावीरेण च तथाविधशिष्यानपेक्ष्य, न तु तदितरैर्द्वाविंशतिजिनैः तच्छिष्याणाम् ऋजुप्रज्ञत्वेन चतुर्महाव्रतसंभवादिति, तद्यथा-सर्वस्मात् त्रसस्थावरसूक्ष्मबादरभेदभिन्नात् कृतकारितानुमतिभेदभिन्नाच्च समस्तात्, यद्वा-द्रव्यतः षड्जीवनिकायविषयात्, क्षेत्रतः त्रिलोकसंभवात्,

व्रतोंमें महा और अणुका कथन विषयक विचार इस प्रकारसे है- "महान्ति व्रतानि महाव्रतानि" इस व्युत्पत्तिकी अपेक्षा जो व्रत महान् हैं-अणुव्रतोंकी अपेक्षासे सर्व जीव रक्षण आदिके विषयवाले होनेसे बडे हैं वे महाव्रत हैं, अथवा-"महतः व्रतानि महाव्रतानि" इस व्युत्पत्तिके अनुसार देशविरतकी अपेक्षा बडे गुणिजनोंके जो व्रतहैं वे महाव्रतहैं. प्राणातिपात त्रस स्थावर जीवोंका होताहै, और सूक्ष्म बादर जीवोंका होता हैं, यह प्राणातिपात जीव स्वयं करता है, दूसरोंसे भी करवाता है, और करनेवालेकी अनुमोदना करता है, इस तरह कृत कारित और अनुमोदनावाले त्रस स्थावर जीवोंके बादर सूक्ष्म जीवोंके प्राणातिपातसे जो विरक्त होना होताहै वह-"सर्वस्मात् प्राणातिपातात् विरमणं" कहलाता है, अथवा-द्रव्यकी अपेक्षा-षट् जीवनिकायरूप द्रव्य प्राणातिपातसे क्षेत्रकी अपेक्षा-त्रिलोकमें संभवित

વ્રતોમાં મહા અને અણુના કથન વિષયક વિચાર આ પ્રમાણે છે—"મહાન્તિ વ્રતાનિ મહાવ્રતાનિ" આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જે વ્રતો મહાન છે, સર્વજીવ રક્ષણ આદિના વિષયવાળાં હોવાથી અણુવ્રતો કરતાં મહાન છે, તે વ્રતોને મહાવ્રત કહે છે અથવા—"મહતઃ વ્રતાનિ મહાવ્રતાનિ" આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર દેશવિરતની અપેક્ષાએ મહાગુણીજનોના સાધુઓનાં જે વ્રત છે તેમને મહાવ્રત કહે છે. ત્રસ સ્થાવર જીવોનો પ્રાણાતિપાત થાય છે, અને સૂક્ષ્મબાદર જીવોનો પ્રાણાતિપાત પણ થાય છે તે પ્રાણાતિપાત જીવ પોતે કરે છે, બીજા પાસે કરાવે છે અને કરનારની અનુમોદના કરે છે આ ત્રણ પ્રકારે-કૃત, કારિત અને અનુમોદના રૂપ ત્રણ પ્રકારે ત્રસ, સ્થાવર, સૂક્ષ્મ અને બાદર જીવોના પ્રાણાતિપાતથી (ઘાતથી) જે વિરક્ત થવાનું બને છે તેનું નામ જ "સર્વસ્માત્ પ્રાણાતિપાતાત્ વિરમણં" 'સમસ્ત પ્રાણાતિપાતથી વિરમણ' છે અથવા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ છકાયના જીવોની હિંસાનો સર્વથા ત્યાગ કરવો, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ

कालत अतीतादेरात्र्यादि प्रभवाद्वा भावतो रागद्वेषसमुत्थाच्च समग्रात् प्राणातिपातात्-प्राणानाम्-इन्द्रियोच्छ्वासायुरादीनाम् अतिपातः=प्राणिनः सकाशाद् वियोजनं प्राणातिपातः-प्राणिप्राणवियोजनव्यापार इत्यर्थः, तस्माद् विरमणं= सम्यग्ज्ञानश्रद्धानपूर्विका विरतिः निवृत्तिरिति यावत्, न तु परिस्थूलादेव विरतिः। इदं प्रथमं महाव्रतम् १। 'जाव' शब्दाद् द्वितीयतृतीयचतुर्थानां महाव्रतानां सग्रहो

प्राणातिपातसे, कालकी अपेक्षा अतीतादिकालमें हुए प्राणातिपातसे अथवा रात्रि आदि जायमान प्राणातिपातसे और भावकी अपेक्षा रागद्वेषादि उत्पन्न होनेरूप प्राणातिपातसे जो विरमण है, वह "सर्वस्मात् प्राणातिपातात् विरमणम्" है, प्राण व्यवहार नयकी अपेक्षा पांच इन्द्रिय ३, बल आयु और श्वासोच्छ्वासके भेदसे १० होते हैं, एकेन्द्रिय दोइन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय और संज्ञी पञ्चेन्द्रिय इन जीवोंमें अपनी २ योग्यताके अनुसार ४ आदिसे लेकर १० प्राणतक कहे गये हैं, अर्थात्-एकेन्द्रियमें चार प्राण स्पर्शेन्द्रियबल प्राण, कायबल प्राण, श्वासोच्छ्वासबल प्राण, आयुष्यबल प्राण घ्राणेन्द्रियमें छ प्राण पहिलेके चार रसनेन्द्रियबल प्राण-वचनबल प्राण तेइन्द्रियमें सात प्राण-घ्राणेन्द्रियबल प्राण बढा, चौइन्द्रियमें आठ चक्षुरिन्द्रिबल प्राण बढा, असंज्ञी पञ्चेन्द्रियमें नौ श्रोत्रेन्द्रियबल प्राण बढा, संज्ञी

ત્રિલોકમાં સંભવિત પ્રાણાતિપાતનો ત્યાગ કરવો, કાળની અપેક્ષાએ અતીતાદિ કાળમાં થઇ ગયેલા પ્રાણાતિપાતથી અથવા રાત્રિ આદિ કાળે થઈ જતા પ્રાણાતિપાતથી વિરમણ થવું, અને ભાવની અપેક્ષાએ રાગ દ્વેષ આદિ ઉત્પન્ન થવા રૂપ પ્રાણાતિપાતનો ત્યાગ કરવો, તેનું નામ "सर्वस्मात् प्राणातिपातात् विरमणम्" છે વ્યવહાર નયની દૃષ્ટિએ નીચે પ્રમાણે ૧૦ દસ પ્રાણ કહ્યાં છે-પાંચ ઇન્દ્રિય રૂપ પાંચ પ્રાણ, ત્રણ બલ રૂપ ત્રણ પ્રાણ, આયુ રૂપ એક પ્રાણ અને શ્વોછ્વાસ-રૂપ એક પ્રાણ, એકેન્દ્રિય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય ચતુરિન્દ્રિય, અસંજ્ઞિ પંચેન્દ્રિય અને સંજ્ઞિ પંચેન્દ્રિય જીવોમાં પોતપોતાની યોગ્યતા અનુસાર ચારથી લઇને ૧૦ પ્રાણ સુધીનો સદ્ભાવ હોય છે જેમકે એકેન્દ્રિયોમાં સ્પર્શેન્દ્રિયબલ પ્રાણ, કાયબલ પ્રાણ, શ્વાસોચ્છ્વાસબલ પ્રાણ અને આયુષ્યબલ પ્રાણનો, આ રીતે ચાર પ્રાણનો સદ્ભાવ હોય છે દ્વીન્દ્રિયોમાં નીચેનાં છ પ્રાણોનો સદ્ભાવ હોય છે—ચાર પ્રાણ એકેન્દ્રિયો પ્રમાણે, રસનેન્દ્રિયબલ પ્રાણ અને વચનબલ પ્રાણ, ત્રીન્દ્રિયોમાં ઘ્રાણેન્દ્રિય પ્રાણ અને ઉપર્યુક્ત છ પ્રાણ, ચતુરિન્દ્રિયોમાં આઠ પ્રાણનો સદ્ભાવ હોય છે ઉપર્યુક્ત સાત પ્રાણ અને ચક્ષુરિન્દ્રિયબલ પ્રાણ,

बोध्यः। यथा-सर्वस्मात् मृषावादात्-सद्भाव प्रतिषेधासद्भावो द्भावनार्थान्तरोक्तिगर्हा भेदात् कृतादिभेदाच्च समग्रात् असत्यभाषणात्, अथवा-द्रव्यतः सर्वधर्मास्तिकायादि द्रव्यविषयात्, क्षेत्रतः सर्वलोकालोकविषयात्, कालतः अतीतादे रात्र्यादिवर्तिनो वा, भावतः कषाय नोकषायादि समुद्भवाच्च समग्रात् असत्यभाषणात् विरमणं=विनिवृत्तिरिति द्वितीयं महाव्रतम् ।२। तथा-सर्वस्मात्=कृतादि

पञ्चेन्द्रियमें दश-मनवल प्राण बढा सो इन प्राणोंका वियोग करना जिस क्रियाके द्वारा होता है, वह प्राणातिपात है, सम्यग्ज्ञान् और श्रद्धान पूर्वक जो इस प्राणातिपातसे सर्वथा निवृत्त होनाहै,वह समस्त प्राणातिपात विरमण है। यह प्रथम महाव्रत है १।यहां यावत् शब्दसे द्वितीय महाव्रतका तृतीय महाव्रतका और चतुर्थ महाव्रतका ग्रहण हुआ है। जैसे-समस्त मृषावादसे सद्भावके प्रतिषेधसे असद्भावके उद्भावनसे अर्थान्तरके कथनसे और गर्हाके करनेसे और कृतादिके भेदसे इस तरहके समग्र असत्य भाषणसे अथवा द्रव्यकी अपेक्षा समस्त धर्मास्तिकायादि द्रव्य विषयक असत्य भाषणसे क्षेत्रकी अपेक्षा-समस्त लोकालोक विषयक असत्य भाषणसे कालकी अपेक्षा अतीतादि कालविषयक असत्य भाषणसे या रात्री आदि संबन्धी असत्य भाषणसे तथा भावकी अपेक्षा-कषाय नो कषाय आदिसे उद्भूत असत्य भाषणसे

અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિયમાં નવ પ્રાણનો સદ્ભાવ હોય છે. ઉપર્યુક્ત આઠ પ્રાણ અને શ્રોત્રેન્દ્રિયબલ પ્રાણ. સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિયમાં દસ પ્રાણનો સદ્ભાવ હોય છે, અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જેવા નવ પ્રાણ અને મનબલ પ્રાણ-આ પ્રાણોનો અતિપાત (નાશ) કરવો તેનું નામ પ્રાણાતિપાત છે સમ્યગ્જ્ઞાન અને શ્રદ્ધાપૂર્વક આ પ્રાણાતિપાતથી સર્વથા નિવૃત્ત થવું તેનું નામ જ સમસ્ત પ્રાણાતિપાત વિરમણ છે. આ પ્રથમ મહાવ્રત છે. સમસ્ત મૃષાવાદથી સર્વથા નિવૃત્ત થવું તેનું નામ સમસ્ત મૃષાવાદ વિરમણ છે. આ બીજું મહાવ્રત છે, તેનુ સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—સદ્ભાવના પ્રતિષેધથી (જેનો સદ્ભાવ હોય તેનો સદ્ભાવ નથી એમ કહેવાથી) અસદ્ભાવ હોય તેનો સદ્ભાવ પ્રકટ કરવાથી, વિપરીત અર્થનું કથન કરવાથી, અસત્ય ભાષણથી, અથવા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સમસ્ત ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યવિષયક અસત્ય ભાષણથી, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સમસ્ત લોકાલોક વિષયક અસત્ય ભાષણથી, કાળની અપેક્ષાએ અતીત આદિ કાળવિષયક અસત્ય ભાષણથી, અથવા રાત્રી આદિ સંબંધી અસત્ય ભાષણથી, ભાવની અપેક્ષાએ કષાય, નો કષાય આદિ વડે જાયમાન અસત્ય ભાષણથી-આ પ્રકારે સમસ્ત

भेदाद्, अथवा द्रव्यतः सचेतनाचेतनद्रव्यविषयात्, क्षेत्रतो ग्रामनगरारण्यादि-समुद्भवात्, कालतः-अतीतादेः रात्र्यादिप्रभवाद् वा, भावतो रागद्वेषमोहोद्भवाच्च समग्रात् अदत्तादानात्-अदत्तस्य=स्वामिना अवितीर्णस्य वस्तुन आदानं ग्रहणम्-अदत्तादानं तस्माद् विरमणमिति तृतीयं महाव्रतम् ।३। तथा-सर्वस्मात्=कृतादिभेदेन त्रिविधात्, यद्वा-द्रव्यतो दिव्यमानुषतैरश्चभेदात् रूप रूपसहगत-भेदाद् वा, तत्र-रूपाणि=पट्टिकादौ चित्रादिरूपेण परिकल्पितानि निर्जी-

इस प्रकारके असत्य भाषणसे-जो विनिवृत्ति है वह द्वितीय महाव्रत है २। तथा समस्त अदत्तादानसे कृतादिके भेदसे अदत्तादानसे अथवा-द्रव्यकी अपेक्षा सचेतन अचेतन द्रव्यसम्बन्धी अदत्तादानसे क्षेत्रकी अपेक्षा-ग्राम नगर अरण्य आदिसे उद्भूत अदत्तादानसे कालकी अपेक्षा अतीतादि काल सम्बन्धी अदत्तादानसे अथवा-रात्रि आदिसे उद्भूत अदत्तादानसे या भावकी अपेक्षा रागद्वेष और मोह इनसे उद्भूत अदत्तादानसे इस प्रकारके समस्त अदत्तादानसे जो विरमण है, वह तृतीय महाव्रत है ३ । तथा कृतकारित आदिके भेदसे त्रिविध रूप मैथुनसे अथवा द्रव्यकी अपेक्षा-देव सम्बन्धी मैथुनसे, मानुष सम्बन्धी मैथुनसे और तिर्यञ्च सम्बन्धी मैथुनसे अथवा रूप रूपसहगत सम्बन्धी मैथुनसे-पट्टिकादिके ऊपर चित्रकादि रूपसे परिकल्पित किये गये

અસત્ય ભાષણથી જે સર્વથા નિવૃત થવાય છે તેનું નામ જ સમસ્ત મૃષાવાદ વિરમણુ મહાવ્રત છે. આ બીજું મહાવ્રત છે સમસ્ત અદત્તાદાનથી નિવૃત થવું તેનું નામ સમસ્ત અદત્તાદાન વિરમણુ છે આ ત્રીજું મહાવ્રત છે, તેનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે. દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સચેતન અચેતન દ્રવ્ય સંબંધી અદત્તાદાનથી નિવૃત થવું, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ગ્રામ, નગર, અરણ્ય આદિ વડે ઉદ્ભૂત અદત્તાદાનથી વિરમણુ થવું, કાળની અપેક્ષાએ અતીતાદિ કાળ સંબંધી અથવા રાત્રિદિવસ સંબંધી અદત્તાદાનથી વિરમણુ થવું, ભાવની અપેક્ષાએ રાગ, દ્વેષ અને મોહ વડે ઉદ્ભૂત અદત્તાદાનથી વિરમણુ થવું, ત્રણે કારણુ દ્વારા (કૃત, કારિત અને અનુમોદના) અદત્તાદાનથી વિરમણુ થવુ તેનું નામ જ સમસ્ત અદત્તાદાન વિરમણુ રૂપ ત્રીજું મહાવ્રત છે.

કૃત, કારિત આદિ ભેદોની અપેક્ષાએ ત્રિવિધ રૂપે મૈથુનનો પરિત્યાગ કરવો તેનું નામ સમસ્ત મૈથુન વિરમણુ વ્રત છે. એટલે કે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ મનુષ્ય, તિર્યંચ અને દેવસંબંધી મૈથુનનો પરિત્યાગ કરવો, અથવા રૂપ રૂપ-સહગત સંબંધી મૈથુનનો-વસ્ત્ર, પાટિયા આદિ પર ચિત્રાદિ રૂપે પરિકલ્પિત કરાયેલ નિર્જીવ ચિત્રાદિકો સાથે અબ્રહ્મના સેવનનો પરિત્યાગ કરવો, અથવા રૂપ સહગત સજીવોની સાથે મૈથુનનો પરિત્યાગ કરવો, ભૂષણુ વિહીન રૂપોની

वानि, रूपसहगतानि तु सजीवानि, अथवा-निर्भूषणानि रूपाणि, सभूषणानि रूपसहगतानीति, क्षेत्रतो लोकत्रयसंभवाद्, कालतोऽतीतादे रात्र्यादि संभवाद् वा, भावतो रागद्वेपसमुत्थाच्च समग्राद् मैथुनात् विरमणमिति चतुर्थं महाव्रतम् ।४। तथा-सर्वस्मात्=कृतादिभेदेन त्रिविधात्-अथवा-द्रव्यतः सर्वद्रव्यविषयात्, क्षेत्रतो लोकसंभवात्, कालतोऽतीतादे रात्र्यादिभवाद् वा, भावतो रागद्वेपविषयाच्च समग्रात् परिग्रहात्-परिगृह्यते आदीयते इति परिग्रहः परिग्रहणं वा परिग्रहः-धनधान्यादिर्नवविधः तस्मात् विरमणमिति पञ्चमं महाव्रतमिति ।५। इत्थं पञ्च महाव्रतानि निरूप्य सम्प्रति व्रतप्रस्तावात् पञ्चाणु-

---

निर्जीव चित्रादिकोंके साथ कृत मैथुनसे और रूप सहगत सजीवोंके साथ कृत मैथुनसे-अथवा भूषण विहीन रूपोंके साथ और भूषण सहित रूपसहगतोंके साथ कृत मैथुनसे क्षेत्रकी अपेक्षा लोकत्रय सम्बन्धी मैथुनसे कालकी अपेक्षा अतीत मैथुनसे अथवा-रात्र्यादि संभव मैथुनसे भावकी अपेक्षा-रागद्वेष समुत्थ मैथुनसे इस प्रकारके मैथुनसे जो विरमण है, वह चतुर्थ महाव्रत है ४। तथा समस्त परिग्रहसे कृतकारित आदिके भेदसे त्रिविध परिग्रहसे अथवा-द्रव्यकी अपेक्षा सर्वद्रव्य सम्बन्धी परिग्रहसे क्षेत्रकी अपेक्षा लोक सम्बन्धी परिग्रहसे कालकी अपेक्षा अतीतादि काल सम्बन्धी परिग्रहसे रात्र्यादिमें होनेवाले परिग्रहसे भावकी अपेक्षा-रागद्वेप सम्बन्धी परिग्रहसे इस प्रकारके समस्त परिग्रहसे जो विरमण है वह पांचवां महाव्रत है,

---

સાથે અને ભૂષણ સહિત રૂપોની સાથે મૈથુનને ત્યાગ કરવો ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ત્રણે લોક સંબંધી મૈથુનના પરિત્યાગ કરવો, કાળની અપેક્ષાએ અતીત મૈથુનને અથવા રાત્રી આદિ સંબંધી મૈથુનનો પરિત્યાગ કરવો, ભાવની અપેક્ષાએ રાગદ્વેષથી ઉદ્‌ભૂત મૈથુનનો પરિત્યાગ કરવો-આ પ્રકારે સમસ્ત પ્રકારના મૈથુનથી નિવૃત્ત થવું તેનું નામ સમસ્ત મૈથુન વિરમણમહાવ્રત છે. હવે પાંચમાં મહાવ્રતનું સ્વરૂપ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—કૃત, કારિત અને અનુમોદિત રૂપ ત્રણે પ્રકારના પરિગ્રહનો, દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સર્વ ધન, ધાન્ય આદિના પરિગ્રહનો, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સંબંધી પરિગ્રહનો, કાળની અપેક્ષાએ અતીતાદિ કાળ સંબંધી પરિગ્રહનો અથવા રાત્રી આદિમાં સંભવિત પરિગ્રહનો, ભાવની અપેક્ષાએ રાગદ્વેષ સંબંધી પરિગ્રહનો, આ રીતે સમસ્ત પ્રકારના પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરવો તેનું નામ સમસ્ત પરિગ્રહ વિરમણ મહાવ્રત છે.

व्रतान्याह-'पंचाणुव्वया' इत्यादिना। अणुव्रतानि-अणूनि=लघूनि च तानि व्रतानि, अणुत्वं च महाव्रतापेक्षया अल्पविषयत्वादिना बोध्यम्। यद्वा-अणोः=लघोर्गुणिनो व्रतानि-अणुव्रतानि। अथवा-अनुव्रतानीतिच्छाया। अनु=महाव्रत-कथनानन्तरं तद्ग्रहणाशक्तानुद्दिश्य पुनर्यानि व्रतानि कथ्यन्ते तानि अनुव्रतानि। तानि च पञ्चविधानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-स्थूलात्-द्वीन्द्रियादयो जीवाः स्थूला उच्यन्ते। स्थूलत्वं चैषां सकललौकिकानां जीवत्वप्रसिध्या बोध्यम्। स्थूल-

---

जो ग्रहण किया जाता है वह परिग्रह है, अथवा ग्रहण करना इसका नाम परिग्रह है, ऐसा यह परिग्रह धनधान्यादिके भेदसे नौ प्रकारका है। इस परिग्रहसे विरमण होना यह परिग्रह विरमण महाव्रत है। इस प्रकारसे पांच महाव्रतोंका निरूपण करके अब सूत्रकार व्रतके प्रकरणको लेकर पांच अणुव्रतोंका कथन करते हैं—

"पंचाणुव्वया" इत्यादि—लघु जो व्रत हैं-महाव्रतोंकी अपेक्षा अल्पविषयवाले होनेसे जो अणु हैं, वे ऐसे व्रत अणुव्रत हैं महाव्रतोंका विषय इनकी अपेक्षा महान् है, और इनकी अपेक्षा अणुव्रतोंका विषय अल्प थोड़ासा है-इसलिये इन्हें अणुव्रत कहा गया है, अथवा लघु जीवके थोड़ेसे गुणवाले जीवके जो व्रत हैं वे अणुव्रत हैं। अथवा-"अनुव्रत" ऐसी छाया पक्षमें ऐसा अर्थ होता है कि महाव्रत कथनके अनन्तरही महाव्रतोंके ग्रहण करनेमें अशक्त हुए मनुष्यादिको लक्ष्य

જે ગ્રહણ કરાય છે-અથવા જેનો સંગ્રહ કરાય છે તેનું નામ પરિગ્રહ છે તે પરિગ્રહના ધન, ધાન્ય આદિના ભેદથી નવ પ્રકાર કહ્યા છે. તે પરિગ્રહથી વિરમણ થવું-નિવૃત થવું, તેનું નામ પરિગ્રહ વિરમણ મહાવ્રત છે આ રીતે પાંચ મહાવ્રતોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર પાંચ અણુવ્રતોનું નિરૂપણ કરે છે-

"पंचाणुव्वया" ઇત્યાદિ—જે વ્રતો લઘુ છે-પાંચ મહાવ્રતોની અપેક્ષાએ જે વ્રતો અલ્પ વિષયવાળા હોવાને કારણે અણુરૂપ છે, તે વ્રતોને અણુવ્રતો કહે છે. તેમના કરતાં મહાવ્રતોનો વિષય મહાન છે, મહાવ્રતો કરતાં અણુ વ્રતોનો વિષય અલ્પ છે. તેથી તે વ્રતોને અણુવ્રત કહ્યાં છે.

અથવા—લઘુ જીવના થોડા સરખા ગુણસંપન્ન જીવનના જે વ્રતો છે તેમને અણુવ્રતો કહે છે. અથવા "अणुव्रत" આ પદની સંસ્કૃત છાયા "અનુવ્રત" લેવામાં આવે, તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે. મહાવ્રતોના પાલનનો

जीवविषयः प्राणातिपातोऽपि स्थूलः, तस्मात्-प्राणातिपाताद् विरमणमिति प्रथममणुव्रतम् ।१। तथा-स्थूलात् मृषावादात्-विरमणम्-परिस्थूलविषयो महानर्थहेतुभूतो यो मृषावादः स स्थूलो मृषावादः, तस्मान्निवृत्तिरित्यर्थः । इति

करके फिर जो व्रत कहे जाते हैं वे अनुव्रत हैं। तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि सर्व प्रथम जीवको मुनि धर्मकाही उपदेश देना चाहिये ऐसी जिनप्रवचनकी आज्ञा है, इससे विपरीत उपदेष्टा निग्रहके योग्य कहा गया है। यदि वह मुनिव्रत ग्रहण करनेमें असमर्थ है, तो फिर उसके लिये अणुव्रतोंका उपदेश है। इसी अपेक्षा अणुव्रतोंको अनुव्रत ऐसा कहा गया है। ये अणुव्रत पांच प्रकार के कहे गये हैं द्वीन्द्रियादिक जीव स्थूल कहे गये हैं, इन्हें स्थूल कहनेका कारण यह है कि-सकल लौकिक जन इन्हें जीव मानते हैं, स्थूल जीव विषयक जो प्राणातिपात होता है, वह भी स्थूल होता है, उस स्थूल प्राणातिपातसे जो विरमण है वह प्रथम अणुव्रत है। स्थूल मृषावादसे जो विरमण है, वह स्थूल मृषावादविरमण है, यह स्थूल मृषावाद महान् अनर्थका हेतु होता है, जिस वचनसे यह झूठा है,

---

ઉપદેશ કરવામાં આવે, પણ તેમનું પાલન કરવાને અસમર્થ એવા મનુષ્યોને જોઈને તેમને લક્ષ્ય કરીને જે વ્રતો પાળવાનો ઉપદેશ આપવામાં આવે છે, તે વ્રતોને અનુવ્રતો (અણુવ્રતો) કહે છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—સૌથી પહેલા જીવોને મુનિધર્મનો જ ઉપદેશ આપવો જોઈએ, એવી જિન પ્રવચનની આજ્ઞા છે આ ઉપદેશથી વિપરીત ઉપદેશ કરવો જોઈએ નહીં પણ જો ઉપદેષ્ટાને એમ લાગે કે શ્રોતા મહાવ્રતો ગ્રહણ કરવાને સમર્થ નથી, તો તેણે તેમને અણુવ્રતોનો ઉપદેશ આપવો જોઈએ આ રીતે મહાવ્રતોનો ઉપદેશ આપ્યા બાદ જેનો ઉપદેશ અપાય છે, એવાં વ્રતોને અણુવ્રતો કહે છે તેમનાં નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર છે—(૧) સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વિરમણ દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોને સ્થૂલ કહ્યાં છે, તેમને સ્થૂલ કહેવાનું કારણ એ છે કે સકળ લૌકિકજન તેમને જીવરૂપ માને છે સ્થૂલ જીવ વિષયક જે પ્રાણાતિપાત થાય છે તે પણ સ્થૂલ હોય છે. આ સ્થૂલ પ્રાણાતિપાતથી જે વિરમણ થાય છે જીવ હિંસાનો જે ત્યાગ થાય છે તેને સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વિરમણ વ્રત કહે છે. આ પહેલું અણુવ્રત સમજવું (૨) સ્થૂલ મૃષાવાદ વિરમણ વ્રત-સ્થૂલ મૃષાવાદ (વધુ પડતું જૂઠું બોલવું તે) મહા અનર્થનું કારણ બને છે જે વચનથી બોલનાર જૂઠા માણસ તરીકે ખ્યાતિ પામે, જે વચનને કારણે

द्वितीयमणुव्रतम् ।२। तथा–स्थूलात् अदत्तादानाद् विरमणम्–स्थूल अदत्तादानं हि परिस्थूलवस्तुविषयं चौर्यारोपणहेतुत्वेन प्रसिद्धम्, अतिदुष्टाध्यवसायात्मकं भवति, ततो यन्निवर्त्तनं तत्तृतीयमणुव्रतमिति भावः ३। तथा–स्वदारसन्तोषः–स्वदारेभ्यो-ऽन्यत्र मैथुननिवृत्तिः । अनेन सर्वथा परदारनिवृत्तिः सूचिता । इदं चतुर्थमणुव्रतम् ४। तथा–इच्छापरिमाणम्–इच्छाया=धनादिविषयाभिलाषस्य परिमाणं= नियमनम्–देशतः परिग्रहविरतिरित्यर्थः ॥ सू० १ ॥

ऐसी अपनी ख्याति हो जावे, लोक अपने वचनका विश्वास नहीं करें दूसरों पर आपत्ति आ जावे, ऐसे जितने भी वचन हैं वे सब स्थूल मृषावाद रूप हैं । इस स्थूल मृषावादसे जो विरमण है वह द्वितीय अणुव्रत है २ । स्थूल अदत्तादानसे विरमण होना वह स्थूल अदत्तादान विरमण है, यह स्थूल अदत्तादान स्थूल वस्तुकी चोरी करनेके कारण स्थूल माना गया है । यह अतिदुष्ट अध्यवसाय रूप होता है, लोकमें जो " चोरी " इस नामसे प्रसिद्ध है, जिसके करनेसे राज-दण्ड आदि मिलता है ऐसी चोरी करनेका त्याग करना वह स्थूल अदत्तादान विरमण है, और यह तृतीय अणुव्रत है । अपनी स्त्रीके सिवाय अन्यत्र मैथुनका त्याग करना यह चतुर्थ स्वदारसंतोष नामका अणुव्रत है, इस अणुव्रतमें परस्त्री सेवनका सर्वथा परित्याग हो जाता

બીજાનો વિશ્વાસ તે ગુમાવી બેસે, જે વચનને કારણે અન્ય જીવો મુશ્કેલીમાં મૂકાઇ જાય, એવાં વચનોને સ્થૂલ મૃષાવાદ રૂપ ગણવામાં આવે છે આ પ્રકારના સ્થૂલ મૃષાવાદનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ સ્થૂલ મૃષાવાદ વિરમણ છે આ પ્રકારનું બીજુ અણુવ્રત કહ્યુ છે (૩) સ્થૂલ અદત્તાદાનને ગ્રહણ ન કરવું તેનું નામ સ્થૂલ અદત્તાદાન વિરમણ છે સ્થૂલ (મોટી) વસ્તુની ચોરી કરવાને કારણે તે સ્થૂલ અદત્તાદાન રૂપ માનવામાં આવેલ છે તે અતિ દુષ્ટ અધ્ય વસાય રૂપ હોય છે તેને લોકો " ચોરી " ને નામે ઓળખે છે તે ચોરી કરવાને કારણે અપરાધી કરીને રાજદંડને પાત્ર થવું પડે છે એવી ચોરી કરવાનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ સ્થૂલઅદત્તાદાન વિરમણ છે. તેને ત્રીજું અણુવ્રત કહ્યુ છે. (૪) પોતાની પત્ની સિવાય અન્ય કોઇ પણ સ્ત્રી સાથે મૈથુનનું સેવન કરવાનો ત્યાગ કરવો તેને બ્રહ્મચર્ય વ્રત કહે છે. આ વ્રત લેનારે સ્વદારામાં જ સંતોષ માનીને પરસ્ત્રી સેવનનો સર્વથા ત્યાગ કરવો પડે છે, આ પ્રકારનું ચોથું અણુવ્રત કહ્યું છે (૫) ધન, ધાન્ય આદિના સંગ્રહ

इच्छापरिमाणम् इन्द्रियार्थगोचरं श्रेयो भवतीति इन्द्रियार्थवक्तव्यतार्थं 'पंचवन्ना' इत्यादीनि त्रयोदश अनन्तरसूत्राणि माह—

मूलम्—पंच वन्ना पण्णत्ता, तं जहा--किण्हा १ नीला २, लोहिया ३ हालिद्दा ४ सुक्किल्ला ५ ॥ १ ॥ पंच रसा पण्णत्ता, तं जहा--तित्ता जाव महुरा ॥ २ ॥ पंच कामगुणा पण्णत्ता, तं जहा--सद्दा १, रूवा २, गंधा ३, रसा ४ फासा ५ ॥ ३ ॥ पंचहिं ठाणेहिं जीवा सज्जंति, तं जहा--सद्देहिं जाव फासेहिं ॥ ४ ॥ एवं रज्जंति ५, मुच्छंति ६, गिज्झंति ७, अज्झोववज्जंति ॥ ८ ॥ पंचहिं ठाणेहिं जीवा विणिघायमावज्जंति, तं जहा--सद्देहिं जाव फासेहिं ॥ ९ ॥ पंच ठाणा अपरिण्णाया जीवाणं अहियाए १०, असुहाए २, अखमाए ३, अणिस्सेयसाए ४ अणाणुगामियत्ताए ५

है, इच्छापरिमाण-धन धान्यादि विषयक अभिलाषाका परिमाण-नियमन करना अर्थात् एकदेश परिग्रह का त्याग करना—यह पांचवां अणुव्रत है, इस समस्त कथनका सारांश यही है कि मनवचन कायसे कृतकारित अनुमोदनासे द्रव्यक्षेत्र काल और भाव संबंधी हिंसादिक पांचों पापोंका जो त्याग है, वह महाव्रत है यह महाव्रत सर्वविरति रूप होता है और हिंसादिक पांच पापोंका एकदेशसे त्याग करना यह अणुव्रत है। महाव्रत ५ और अणुव्रत ५ होते हैं, इच्छापरिमाण इन्द्रियोंके अर्थ विषयमें होता है, और यह कल्याणके लिये होता है ॥सू० १॥

કરવા વિષે મર્યાદા નક્કી કરવી, અમુક પ્રમાણુ કરતાં વધારે પરિગ્રહ ન રાખવો એટલે કે પરિગ્રહનો અંશતઃ ત્યાગ કરવો તેનું નામ પરિગ્રહ વિરમણુ અથવા ઇચ્છા પરિમાણુ વ્રત છે આ પાંચમું અણુવ્રત સમજવું. આ સમસ્ત કથનનો સારાંશ નીચે પ્રમાણે છે—મન, વચન અને કાયથી, કૃત, કારિત અને અનુમોદના રૂપ ત્રણુ કરણુથી, દ્રવ્યક્ષેત્રકાળ અને ભાવસંબંધી હિંસાદિક પાંચ પાપોના જે પરિત્યાગ છે તેને મહાવ્રત કહે છે તે મહાવ્રત સર્વવિરતિ રૂપ હોય છે. હિંસાદિક પાંચ પાપોના એક દેશની અપેક્ષાએ (અંશતઃ) ત્યાગ કરવો તે અણુવ્રત છે તે દેશવિરતિ રૂપ હોય છે મહાવ્રતો પાંચ છે અને અણુવ્રતો પણુ પાંચ છે.

भवंति, तं जहा--सद्दाजाव फासा ॥ १० ॥ पंच ठाणा सुपरिन्नाया जीवाणं हियाए सुहाए जाव आणुगामियत्ताए भवंति, तं जहा--सद्दा जाव फासा ॥ ११ ॥ पंच ठाणा अपरिण्णाया जीवाणं दुग्गइगमणाए भवंति, तं जहा--सद्दा जाव फासा ॥ १२ ॥ पंच ठाणा परिण्णाया जीवाणं सुग्गइगमणाए भवंति, तं जहा--सद्दा जाव फासा ॥ १३ ॥ सू० २ ॥

छाया-पञ्च वर्णाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कृष्णाः१, नीलाः२, लोहिताः३, हारिद्राः ४, शुक्लाः ५ ॥ १ ॥ पञ्च रसाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-तिक्ता यावद् मधुराः ॥ २ ॥ पञ्च कामगुणाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-शब्दाः १, रूपाणि २, गन्धाः ३, रसाः ४, स्पर्शाः ५ ॥ ३ ॥ पञ्चसु स्थानेषु जीवाः सजन्ति, तद्यथा-शब्देषु यावत् स्पर्शेषु ॥ ४ ॥ एवं रज्यन्ति ५, मूर्च्छन्ति ६, गृध्यन्ति ७, अध्युपपद्यन्ते ८। पञ्चसु स्थानेषु जीवा विनिघातमापद्यन्ते, तद्यथा-शब्देषु यावत् स्पर्शेषु ॥ ९ ॥ पञ्च स्थानानि अपरिज्ञातानि जीवानाम् अहिताय १, असुखाय २, अक्षमाय ३, अनिःश्रेयसाय ४ अनानुगामिकतायै भवन्ति, तद्यथा-शब्दा यावत् स्पर्शाः ॥१०॥ पञ्च स्थानानि सुपरिज्ञातानि जीवानां हिताय सुखाय यावत् आनुगामिकतायै भवन्ति, तद्यथा-शब्दा यावत् स्पर्शाः ॥ ११ ॥ पञ्च स्थानानि अपरिज्ञातानि जीवानां दुर्गतिगमनाय भवन्ति, तद्यथा-शब्दा यावत् स्पर्शाः ॥ १२ ॥ पञ्च स्थानानि परिज्ञातानि जीवानां सुगतिगमनाय भवन्ति, तद्यथा-शब्दा यावत् स्पर्शाः १३ ॥ सू० २ ॥

टीका--' पंचवन्ना ' इत्यादि--

कृष्णादि शुक्लान्ताः पञ्चवर्णा भवन्ति, ॥ १ ॥ तिक्तकटुकषायाम्लमधुराः पञ्चरसा भवन्ति । रसानां पञ्चसंख्यकत्वमिहान्येषां संयोगिकत्वेनाविवक्षणाद्

अब सूत्रकार इन्द्रियार्थोंकी वक्तव्यताके निमित्त १३ अवान्तर सूत्रोंको कहते हैं-'पंच वण्णा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र २ ॥

टीकार्थ-वर्ण ५ होतेहैं जैसे-कृष्ण१ नील२ लोहित ३ हारिद्र४ और शुक्ल ५। रस ५ होते हैं, जैसे-तिक्त १ यावत् मधुर ५, कामगुण पांच

હવે સૂત્રકાર ઇન્દ્રિયાર્થોની વક્તવ્યતાને નિમિત્તે "પંચવન્ના" ઇત્યાદિ ૧૩ અવાન્તર સૂત્રેનું કથન કરે છે ' પંચવણ્ણા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-વર્ણ પાંચ હોય છે—(૧) કૃષ્ણ, (૨) નીલ, (૩) લોહિત (લાલ), (૪) હારિદ્ર (પીળો) અને (૫) શુકલ રસ પણ પાંચ કહ્યાં છે—તિક્ત

बोध्यम् ॥ २॥ तथा-कामगुणाः-काम्यन्ते इति कामाः, ते च ते गुणाश्चेति। यद्वा-कामस्य=मदनाभिलापस्य अभिलापमात्रस्य वा उत्पादका गुणाः=पुद्गलधर्माः कामगुणाः, ते च शब्दाद्यात्मकाः पञ्चसंख्यका बोध्याः ॥ ३ ॥ तथा-जीवाः

होते हैं-जैसे-शब्द १ रूप २ गन्ध ३ रस ४ और स्पर्श ५ जीव पांच स्थानोंमें आसक्त होते हैं, जसे-शब्दमें यावत् स्पर्शमें इसी तरहसे जीव शब्दादिक पांच स्थानोंमें राग करते हैं, उनमें मोहित होते हैं, उनमें गृद्ध होते हैं, उनमें एकचित्त होतेहैं, और इन्हीं पांच स्थानोंमें वे विनिघातको प्राप्त होते हैं, यहां तकके कथनका तात्पर्य ऐसा है-यद्यपि वर्णोंमें एवं रसोंमें संयोगजन वर्णोंकी अपेक्षा और संयोगी रसोंकी अपेक्षा पांच संख्यासे भी अधिकता आती है परन्तु यहां उनकी विवक्षा नहीं हुई है, इसलिये उन्हें ५-५ कहा गया है "काम्यन्ते इति कामाः ते च ते गुणाश्च इति कामगुणाः" इति कर्मधारय समासके अनुसार जो गुण कामनाके विषयभूत बनते हैं वे कामगुण हैं, अथवा-मदनाभिलाषके या अभिलाप मात्रके जो उत्पादक होते हैं, ऐसे पुद्गल धर्म कामगुण हैं, वे कामगुण शब्दादि स्वरूप होते हैं, और संख्यामें

(તીખા) થી લઇને મધુર પર્યન્તના પાંચ રસ અહીં ગ્રહણ કરવા કામગુણ પાંચ હોય છે—(૧) શબ્દ, (૨) રૂપ, (૩) ગન્ધ, (૪) રસ અને (૫) સ્પર્શ. જીવો પાંચ સ્થાનોમાં આસક્ત થાય છે—શબ્દથી લઇને સ્પર્શ પર્યન્તના પાંચ સ્થાનો અહીં સમજી લેવા. જીવ શબ્દાદિક પંચ સ્થાનો પ્રત્યે રાગ કરે છે, તેમના પ્રત્યે મોહિત થાય છે, તેમના પ્રત્યે ગૃદ્ધ (લોલુપ) થાય છે, અને તે પાંચમાં જ જીવ એકચિત્ત થાય છે. આ પાંચ સ્થાનોની તરફ આકર્ષિત રહેલા જીવ અન્તે વિનિઘાત (મૃત્યુ) પ્રાપ્ત કરે છે. આ સમસ્ત કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જો કે વર્ણોમાં અને રસોમાં સંયોગજન્ય વર્ણોની અપેક્ષાએ અને સંયોગી રસોની અપેક્ષાએ પાંચ કરતાં પણ અધિક પ્રકારો સંભવી શકે છે, પરન્તુ અહીં પાંચ સ્થાનનું કથન ચાલતું હોવાથી પાંચ મુખ્ય વર્ણો અને પાંચ મુખ્ય રસોનું જ કથન કર્યું છે.

"काम्यते इति कामाः ते च ते गुणाश्च इति कामगुणाः" આ કર્મધારય સમાસ અનુસાર જે ગુણ કામનાના વિષયભૂત બને છે, તેમને કામગુણ કહે છે. અથવા મદનાભિલાષાના અગર અભિલાષા માત્રના જે ઉત્પાદક હોય છે, એવાં પુદ્ગલધર્મ કામગુણ છે. તે શબ્દાદિ સ્વરૂપ હોય છે, અને તેમની સંખ્યા

शब्दादि स्पर्शान्तेषु पञ्चसु स्थानेषु=रागाद्याश्रयेषु सजन्ति=आसक्ता भवन्ति-सङ्गं कुर्वन्तीति । 'पंचहिं ठाणेहिं' इत्यादिषु सर्वत्र सप्तम्यर्थे तृतीया बोध्या । यद्वा-'पंचहिं' इत्यत्र तृतीया स्वार्थे एव बोध्या । 'ठाणेहिं' इत्यादिषु तु सप्तम्यर्थे बोध्या । अत्र पक्षे-पञ्चभिरिन्द्रियैर्जीवाः रागाद्याश्रयभूतेषु शब्दादिषु सङ्गं कुर्वन्तीत्यर्थो बोध्यः ॥ ४ ॥ एवम्=अमुना प्रकारेणैव जीवाः शब्दादिषु पञ्चसु स्थानेषु रज्यन्ते=सङ्गकारणं रागं कुर्वन्ति । ५। मूर्च्छन्ति=शब्दादिदोषदर्शनेऽशक्त्या तेषु मोहम् अचेतनत्वमिव यान्ति, संरक्षणानुबन्धवन्तो वा भवन्तीत्यर्थः ॥६॥ गृध्यन्ति=प्राप्तवस्तुष्वसन्तोषादप्राप्तेषु प्रभूताकाङ्क्षावन्तो भवन्ति ॥७॥ तथा-अध्युपपद्यन्ते=तदेकचित्ता भवन्ति, तदुपार्जनाय वाऽधिकं चेष्टमाना भवन्तीति

पांच होते हैं । जीव शब्दादि स्पर्शान्तोंमें पांच स्थानोंमें आसक्त होते हैं, इस पक्षमें ऐसा अर्थ होना है कि पांच इन्द्रियोंसे जीव रागादिकोंके आश्रयभूत शब्दादिकोंमें आसक्त होते हैं ४। इसी तरहसे जीव शब्दादिक पांच स्थानोंमें आसक्तिके कारणभूत रागको करते हैं ५ । उन शब्दादिक रूप विषयोंमें अनेकविध दोषोंको देखते हुए भी जीव अपनी अशक्तिके वश उनमें मूर्च्छित होते हैं, अचेतनकी जैसी अवस्थाको प्राप्त करतेहैं ।अथवा-उनके संरक्षण करनेके लिये आग्रहवाले होतेहैं ६ । "गृध्यन्ति" प्राप्त वस्तुओंमें असन्तोषसे और अप्राप्त वस्तुओंमें अधिकसे अधिक आकाङ्क्षासे बंधे रहते हैं ७। "अध्युपपद्यन्ते" उनमें एकचित्तवाले होते हैं अथवा उनके उपार्जनके लिये अधिकसे अधिक चेष्टामें लगे रहते हैं ८ जिस प्रकार मृगादिक शब्दादिक विषयोंमें आकृष्ट

પાંચની છે જીવો શબ્દથી લઈને સ્પર્શ પર્યન્તના પાંચ સ્થાનોમાં આસક્ત થાય છે. આ પક્ષે અહીં એવો અર્થ થાય છે કે પાંચ ઇન્દ્રિયો વડે જીવ રાગાદિકોના કારણરૂપ શબ્દાદિકોમાં આસક્ત થાય છે. (૪) આ રીતે જીવ શબ્દાદિક પાંચ સ્થાનોમાં આસક્તિના કારણભૂત રાગથી યુક્ત બને છે તે શબ્દાદિક રૂપ વિષયોમાં અનેક દોષો જોવા છતાં પણ જીવ પોતાની અશક્તિને કારણે તેમાંથી છૂટવાને બદલે તેમાં વધારેને વધારે મૂર્છિત (આસક્ત) થતો રહે છે. અચેતન જેવી અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરે છે અથવા તેમનું રક્ષણ કરવાને માટે આગ્રહવાળા બને છે (૬) "ગૃધ્યન્તિ" તેઓ પ્રાપ્ત વસ્તુઓથી સંતોષ પામતાં નથી અને અપ્રાપ્ત વસ્તુઓની અધિકમાં અધિક લાલસાથી બંધાયેલા રહે છે. (૭) "અધ્યુપપદ્યન્તે" તેઓ તેમાં એકચિત્ત બની ગયા હોય છે, અથવા તેની પ્રાપ્તિને માટે અધિકમાં અધિક પ્રયત્નશીલ રહે છે. (૮) જેવી રીતે મૃગાદિ જીવો શબ્દાદિક વિષયોમાં લુબ્ધ થઈને પોતાના પ્રિય

।८। तथा-जीवाः पञ्चभिरिन्द्रियैः शब्दादिस्पर्शान्तेषु पञ्चसु रागाद्याश्रयेषु विनिःघातं=मृगादीनामिव मरणं संसारं वा आपद्यन्ते=प्राप्नुवन्ति। उक्तं च—

रक्तः शब्दे हरिणः, स्पर्शे नागो रसे च वारिचरः।
कृपणपतङ्गो रूपे, भुजगो गन्धे ननु विनष्टः ॥ १ ॥
पञ्च रक्ताः पञ्च विनिष्टा यत्रागृहीत परमार्थाः।
एकः पञ्चसु रक्तः, प्रयाति भस्मान्ततां मूढः ॥ २ ॥"

किंच-" कुरङ्गमातङ्गपतङ्गभृङ्ग मीना हताः पञ्चभिरेव पञ्च।
एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यः सेवते पञ्चभिरेव पञ्च ॥१॥" इति ॥९॥

होकर अपने प्रिय जीवनसे रहित बन जाते हैं. उसी प्रकार रागादिकके आश्रयभूत शब्दादि स्पर्शान्त तकके पांच विषयोंमें पांच अपनी इन्द्रियों द्वारा खींचे जाकर अन्तमें उन्हींमें मृत्युको प्राप्त हो जाते हैं, या उनके वशवर्ती बनकर पुनः पुनः इसी संसारमें जन्म मरण आदि करते रहते हैं। कहा भी है-" रक्तः शब्दे हरिणः " इत्यादि।

हरिण शब्दमें जो कर्ण इन्द्रियका विषय है, अनुरागी बनकर अपने प्राणोंको नष्ट कर देता है, हाथी स्पर्शन इन्द्रियके विषयभूत स्पर्शमें अधिक अनुरागी बनकर अपने जीवनको नष्ट कर देता है, वारिचर-मछली रसमें जो कि जिह्वा इन्द्रियका विषय है, अनुरागी हुआ अपने जीवनको समाप्त कर देती है, तथा रूपमें जो कि चक्षुइन्द्रियका विषय है, अनुरागी हुआ बिचारा पतंग अपने जीवनको नष्ट कर देता है, भुजग-सर्प गन्धमें-जो कि घ्राण इन्द्रियका विषय है, अधिक अनुरागी

પ્રાણોથી પણ રહિત થઈ જાય છે, એ જ પ્રમાણે રાગાદિકના આશ્રયભૂત શબ્દથી લઈને સ્પર્શ પર્યન્તના પાંચ વિષયોમાં પોતાની પાંચ ઇન્દ્રિયો દ્વારા આકર્ષિત થયેલા જીવો પણ અન્તે મૃત્યુ પામે છે એટલું જ નહીં પણ તેમને અધીન બનેલાં જીવો આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ-મરણ રૂપ આવાગમન કર્યા કરે છે. કહ્યું પણ છે કે—' रक्त शब्दे हरिणः " ઇત્યાદિ.

શબ્દ કે જે કર્ણેન્દ્રિયનો વિષય છે તેમાં અનુરાગી બનીને હરણ પોતાના પ્રાણોને ગુમાવી દે છે. સ્પર્શેન્દ્રિયના વિષયભૂત સ્પર્શમાં અધિક અનુરાગયુક્ત બનીને હાથી પોતાનાં પ્રાણોને ગુમાવી બેસે છે, પ્રાણી, કે જે સ્વાદેન્દ્રિયનો વિષય છે, તેમાં આસક્ત બનીને માછલી પોતાનાં પ્રાણોને ગુમાવે છે તથા ચક્ષુઇન્દ્રિયના વિષયરૂપ રૂપમાં આસક્ત થવાથી પતંગિયું પોતાનો જાન ગુમાવી બેસે છે ઘ્રાણેન્દ્રિયના વિષયભૂત ગન્ધમાં અધિક અનુ-

तथा-शब्दादिस्पर्शान्तानि पञ्च स्थानानि अपरिज्ञातानि=अपरिज्ञया स्वरूपतोऽज्ञातानि अप्रत्याख्यानपरिज्ञया वाऽप्रत्याख्यातानि अहिताय=अनुपकाराय असुखाय=दुःखाय अक्षमाय=असामर्थ्याय अनिःश्रेयसाय=अकल्याणाय अमोक्षाय वा, अनानुगामिकतायै-आ=समन्ताद् अनुगच्छति=कालान्तरमुपकारित्वेन अनुयाति यत्तदानुगामिकम्, न आनुगामिकम्-अनानुगामिकं, तस्य भावस्तत्ता तस्यै, जन्मान्तरेऽसहगामित्वाय च भवति ॥ १० ॥ एतानि पञ्च स्थानानि सुपरिज्ञातानि जीवानां हितसुखादिभ्यो भवन्ति ॥ ११ ॥ तथा-एतान्येव पञ्च

हुआ अपने जीवनको नष्ट कर देता है, इस प्रकारसे एक इन्द्रियके विषयमें फंसे जीव जब अपना जीवन खो बैठते हैं, तो फिर जो प्राणी पांचों इन्द्रियोंके विषयोंमें आसक्त बना हुआ है, उसकी दुर्दशाके विषयमें क्या कहा जावे? तथा शब्दसे लेकर स्पर्श तकके ये पांच स्थान स्वरूपसे अज्ञात हुए अथवा-अप्रत्याख्यान प्रतिज्ञासे अप्रत्याख्यात हुए जीवोंके अहितके लिये अनुपकारके लिये असुख-दुःखके लिये अक्षम-असामर्थ्यके लिये अनिःश्रेयस-अकल्याणके लिये अथवा अमोक्षके लिये होते हैं, एवं अनानुगामिकताके लिये परभवमें साथ जानेके लिये नहीं होते हैं १०। ये शब्दादि स्पर्शान्त तकके पांच स्थान जब सुपरिज्ञात होते हैं, तब वे जीवोंके हित आदि बातोंके लिये होतेहैं ११। तथा

રાગયુક્ત બનીને સર્પ પોતાનાં પ્રાણ ગુમાવે છે. આ રીતે એક જ ઇન્દ્રિયના વિષયમાં આસક્ત થયેલા જીવ જો પોતાનું જીવન ગુમાવી બેસે છે, તો પાંચે ઇન્દ્રિયોના વિષયના ગુલામ બનેલા જે જીવો છે, તેમની દુર્દશાની તો વાત જ શી કરવી !

શબ્દથી લઇને સ્પર્શ પર્યન્તના આ પાચ સ્થાનના સ્વરૂપથી અજ્ઞાત હોય એવાં અથવા અપ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી અપ્રત્યાખ્યાત હોય એવાં જીવોને માટે તે પાચ સ્થાન અહિત, અનુપકાર, અસુખ (દુઃખ), અક્ષમ (અસામર્થ્ય) અનિશ્રેયસ (અકલ્યાણ) અથવા અમોક્ષને માટે કારણરૂપ બને છે, અને અનુગામિતા-પરભવમાં સાથે જવાને માટે કારણભૂત બનતાં નથી (૧૦). આ શબ્દથી લઇને સ્પર્શ પર્યન્તના પાંચ સ્થાન જ્યારે સુપરિજ્ઞાત થઇ જાય છે, ત્યારે તે જીવોના હિત, ઉપકાર આદિ કરવામાં કારણભૂત બને છે (૧૧).

स्थानानि अपरिज्ञातानि जीवानां दुर्गतिगमनाय=नारकादिभवप्राप्तये भवन्ति, परिज्ञातानि तु एतानि सुगतिगमनाय=सिद्धयादिप्राप्तये भवन्तीति ॥ १२।१३ सू० २॥

दुर्गतिसुगती च कारणान्तरेणापि भवत इति प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—पंचहिं ठाणेहिं जीवा दोग्गइं गच्छंति, तं जहा-- पाणाइवाएणं जाव परिग्गहेणं । पंचहिं ठाणेहिं जीवा सोग्गइं गच्छंति, तं जहा -पाणाइवायवेरमणेणं जाव परिग्गहवेरमणेणं।सू.३।

छाया—पञ्चभिः स्थानैर्जीवा दुर्गतिं गच्छन्ति, तद्यथा—प्राणातिपातेन यावत् परिग्रहेण । पञ्चभिः स्थानैर्जीवाः सुगतिं गच्छन्ति, तद्यथा—प्राणातिपातविरमणेन यावत् परिग्रहविरमणेन ॥ सू० ३ ॥

टीका —' पंचहिं ठाणेहिं ' इत्यादि—व्याख्या सुगमा ॥ सू० ३ ॥

येही पांच स्थान अपरिज्ञात होने पर जीवोंको दुर्गतिगमनके लिये होते हैं, अर्थात् नारकादि भवोंकी प्राप्तिके लिये होते हैं, तथा जब ये परिज्ञात होते हैं, अर्थात् ज्ञपरिज्ञासे अनर्थका सूत्र जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञानसे शब्दादिक कामभोगों का त्याग कर देते हैं। तब ये सुगतिकी प्राप्तिके लिये-सिद्धि आदिकी प्राप्तिके लिये होतेहैं १२-१३॥सू०२॥

दुर्गति और सुगति ये दूसरे कारणसे भी होती हैं, इस बातको प्रतिपादन करनेके लिये अब सूत्रकार कहते हैं—

'पंचहिं ठाणेहिं जीवा' इत्यादि सूत्र ३ ॥

टीकार्थ-पांच कारणोंसे जीव दुर्गतिमें जातेहैं, जैसे-प्राणातिपातसे यावत् परिग्रहसे तथा पांच कारणोंसे जीव सुगतिको प्राप्त करतेहैं, जैसे-प्राणातिपात विरमणसे यावत् परिग्रह विरमणसे ॥ सू० ३ ॥

એ જ પાંચ સ્થાનો અપરિજ્ઞાત જ રહે તો જીવોને દુર્ગતિમાં જવાના કારણભૂત બને છે એટલે કે નારકાદિ ભવોની પ્રાપ્તિ કરાવે છે, તથા જ્યારે તે પાંચે સ્થાન સુપરિજ્ઞાત થઈ જાય છે, અર્થાત્ જ્ઞપરિજ્ઞાથી તેને અનર્થના કારણરૂપ જાણી પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી શબ્દાદિક કામભોગોનો ત્યાગ કરી દે છે. ત્યારે જીવને સુગતિનીસિદ્ધિ આદિની પ્રાપ્તિ કરાવે છે. (૧૨-૧૩) ॥સૂ ૨॥

બીજા કારણોને લીધે પણ જીવ દુર્ગતિ અને સુગતિની પ્રાપ્તિ કરે છે. એ જ વાતનું હવે સૂત્રકાર નીચેના સૂત્ર દ્વારા પ્રતિપાદન કરે છે.

"પંચહિં ઠાણેહિં જીવા" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ–પ્રાણાતિપાતથી લઈને પરિગ્રહ પર્યન્તના પાંચ કારણોને લીધે જીવ દુર્ગતિમાં જાય છે પ્રાણાતિપાત વિરમણથી લઈને પરિગ્રહ વિરમણ પર્યન્તના પાચ કારણોને લીધે જીવ સુગતિ પ્રાપ્ત કરે છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

संवरतपसोर्मोक्षसाधनत्वं प्रसिद्धम् । तत्रानन्तरमास्रवनिरोधलक्षणः संवर उक्तः । अधुना प्रतिमारूपान् तपोभेदानाह—

मूलम्--पंच पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा--भद्दा १ सुभद्दा २ महाभद्दा ३ सव्वओ भद्दा ४ भद्दुत्तरपडिमा ५ ॥ सू० ४॥

छाया—पञ्चप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–भद्रा १ सुभद्रा २ महाभद्रा ३ सर्वतोभद्रा ४ भद्रोत्तरप्रतिमा ५ ॥ सू० ४ ॥

टीका—' पंच पडिमाओ ' इत्यादि—

भद्रादयः पञ्चप्रतिमा विज्ञेयाः । आसां व्याख्या ग्रन्थान्तरादवसेया ॥सू०४॥

इत्थं कर्मनिर्जरणहेतु तपोविशेषमभिधाय सम्प्रति कर्मानुपादानहेतुभूतस्य संयमस्य विषयभूतान् एकेन्द्रियजीवानाह—

मूलम्--पंच थावरकाया पण्णत्ता, तं जहा--इंदे थावरकाए १ बंभे थावरकाए २ सिप्पे थावरकाए ३, संमती थावरकाए ४ पाजावच्चे थावरकाए ५। पंच थावरकायाहिवई पण्णत्ता, तं जहा–इंदे थावरकायाहिवई १ जाव पाजावच्चे थावरकायाहिवई ५॥ सू० ५ ॥

संवर और तप ये मोक्षके साधन हैं, यह बात प्रसिद्ध है, इनमें आस्रवका निरोध होना यह संवर है, यह बात तो कही जा चुकी है, अतः अब सूत्रकार प्रतिमारूप तपोंके भेदोंका कथन करतेहैं—

'पंच पडिमाओ पण्णत्ताओ' इत्यादि सूत्र ४ ॥

टीकार्थ–प्रतिमाएँ पांच कही गईहैं–जैसे–भद्रा१ सुभद्रा२ महाभद्रा ३ और सर्वतोभद्रा ४ और भद्रोत्तर प्रतिमा ५ इन प्रतिमाओंकी व्याख्या अन्य ग्रन्थोंसे जान लेनी चाहिये ॥ सू० ४ ॥

સંવર અને તપને મોક્ષના સાધનરૂપ કહ્યાં છે આસ્રવનો નિરોધ કરવો તેનું નામ સંવર છે, એ વાતનું તો આગળ પ્રતિપાદન થઈ ગયું છે. તેથી હવે સૂત્રકાર તપના ભેદ રૂપ પ્રતિમાનું કથન કરે છે.

" પંચ પડિમાઓ પણ્ણત્તાઓ " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–પ્રતિમાઓ નીચે પ્રમાણે પાંચ કહી છે—(૧) ભદ્રા, (૨) સુભદ્રા, (૩) મહા ભદ્રા, (૪) સર્વતો ભદ્રા અને (૫) ભદ્રોતર પ્રતિમા. આ પ્રતિમાઓનું સ્વરૂપ અન્ય શાસ્ત્રગ્રંથોમાંથી જાણી લેવું. ॥ સૂ. ૪ ॥

छाया—पञ्च स्थावरकायाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—इन्द्रः स्थावरकायः १, ब्रह्मा स्थावरकायः २, शिल्पः स्थावरकायः ३, सम्मतिः स्थावरकायः ४ प्राजापत्यः स्थावरकायः ५। पञ्च स्थावरकायाधिपतयः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—इन्द्रः स्थावरकायाधिपतिः १ यावत् प्राजापत्यः स्थावरकायाधिपतिः ५॥ सू० ५ ॥

टीका—'पंच थावरकाया' इत्यादि—

स्थावरकायाः—स्थावरनामकर्मोदयात् स्थावराः—पृथिव्यादयः, तेषां काया=राशयः यद्वा—स्थावरः=स्थावरनामकर्मोदयजनितः कायः=शरीरं येषां ते तथा।

इस प्रकारसे कर्म निर्जरणका हेतु तपो विशेषको कहकर अब सूत्रकार कर्मोके क्षयका हेतुभूत जो संयम है, उस संयमके विषय भूत जो एकेन्द्रिय जीव हैं उन्हें कहते हैं—

'पंच थावर काया पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र ५ ॥

सूत्रार्थ-पांच स्थावरकाय कहे गयेहैं, जैसे-इन्द्र स्थावरकाय१ ब्रह्मा स्थावर काय २ शिल्प स्थावरकाय ३ सम्मति स्थावरकाय ४ और प्राजापत्य स्थावरकाय ५। पांच स्थावरकायाधिपति कहे गये हैं—जैसे—इन्द्र स्थावर कायाधिपति १ यावत् प्राजापत्य स्थावरकायाधिपति ५।

टीकार्थ-स्थावर नामकर्मके उदयसे स्थावर जीव होतेहैं, ये जीव पृथिवी आदिरूप होते हैं, इनकी जो राशि है, वह स्थावरकाय है, अथवा स्थावर नामकर्मके उदयसे जनित है, काय—शरीर जिन्होंका वे स्थावर-

---

આ પ્રકારે કર્મનિર્જરણના હેતુરૂપ તપોવિશેષનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર કર્મોના અનુત્પાદના હેતુભૂત જે સંયમ છે, તે સંયમને વિષયભૂત જે એકેન્દ્રિય જીવો છે તેમનું કથન કરે છે.

સૂત્રાર્થ—" પંચ થાવરકાયા પણ્ણત્તા " ઈત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-સ્થાવરકાયનાનીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) ઈન્દ્ર સ્થાવરકાય (૨) બ્રહ્મા સ્થાવરકાય, (૩) શિલ્પ સ્થાવરકાય, (૪) સમ્મતિ સ્થાવરકાય, અને (૫) પ્રાજાપત્ય સ્થાવરકાય પાંચ સ્થાવર કાયાધિપતિ કહ્યા છે—(૧) ઈન્દ્ર સ્થાવર કાયાધિપતિ થી લઈને પ્રાજાપત્ય સ્થાવરકાયાધિપતિ પર્યન્તના પાંચ સ્થાવર કાયાધિપતિ સમજવા.

ટીકાર્થ-સ્થાવર નામકર્મના ઉદયથી સ્થાવર જીવોની ઉત્પત્તિ થાય છે. તે જીવો પૃથ્વી આદિ રૂપ હોય છે. તેમની જે રાશિ છે તેને સ્થાવરકાય કહે છે. અથવા સ્થાવર નામકર્મના ઉદયથી જનિત જેમની કાયા (શરીર) છે, તે

ते च पञ्चसंख्यकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—इन्द्रः स्थावरकाय इत्यादि। तत्र—इन्द्र स्थावरकायः=पृथिवीकायः। अयम् इन्द्रसंम्बन्धित्वादिन्द्र इत्युच्यते ॥ १ ॥ तथा—ब्रह्मा स्थावरकायः=अप्कायः। ब्रह्मदेवसंबन्धित्वादयं ब्रह्मेत्युच्यते ॥२॥ शिल्पः स्थावरकायः=तैजसकायः। शिल्पदेवसम्बन्धित्वादयं शिल्प इत्युच्यते ॥ ३ ॥ सम्मतिः स्थावरकायः=वायुकायः। अयं सम्मतिदेवसम्बन्धित्वात् सम्मतिरित्युच्यते ॥ ४ ॥ तथा—प्राजापत्यः स्थावरकायः=वनस्पतिकायः। प्रजापतिदेवसंबन्धित्वादयं प्राजापत्य इत्युच्यते ॥ ५ ॥ इति। एषां पञ्चानां स्थावरकायानामिन्द्रादयः पञ्च अधिपतयः=स्वामिनः क्रमेण विज्ञेयाः। अमुमेवार्थं सूचयितुमाह—'पंच थावरकायाहिवई पण्णत्ता' इत्यादि। अत्रेदं बोध्यम्—यथा दिशामिन्द्राग्न्या-

काय हैं, ये स्थावरकाय पांच कहे गये हैं, इनमें इन्द्र स्थावरकाय पृथिवीकाय है इसका इन्द्र अधिपति होनेसे इन्द्र ऐसा कहा गया है १। ब्रह्मा स्थावरकाय अप्काय है २। इसका ब्रह्माअधिपति होनेसे ब्रह्मा ऐसा कहा गया है। शिल्प स्थावरकाय तैजस्काय है ३। इसका शिल्पदेव अधिपति होनेसे शिल्प सा कहा गया है, सम्मति स्थावरकाय वायुकाय है, इसका सम्मतिदेव अधिपति होनेसे सम्मति ऐसा कहा गया है। और प्राजापत्य स्थावरकाय वनस्पतिकाय है, इसका प्रजापतिदेव अधिपति होनेसे प्राजापत्य ऐसा कहा गया है ५। इन पांच स्थावरकायोंके इन्द्रादिक पांच अधिपति स्वामी क्रमसे हैं। यही बात—"पंच थावरकायाहिवई पण्णत्ता" इस सूत्रसे प्रकट की गई है यहां ऐसा समझना चाहिये—जिस प्रकारसे स्वामी इन्द्र आदि नक्षत्रोंके अधिपति अश्वि यम आदि हैं, दक्षिणोत्तर लोकार्धोके अधिपति शक्र और

જીવોને સ્થાવરકાય કહે છે. તેના ઉપર્યુક્ત પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) ઈન્દ્ર સ્થાવરકાય પૃથ્વિકાયને કહ્યાં છે, કારણ કે તેનો અધિપતિ ઈન્દ્ર છે. (૨) અપ્કાયને બ્રહ્મા સ્થાવરકાય કહે છે, કારણ કે તેનો અધિપતિ બ્રહ્મા છે. (૩) તેજસ્કાયને શિલ્પ સ્થાવરકાય કહેલ છે, કારણ કે તેનો અધિપતિ શિલ્પદેવ છે. (૪) વાયુકાયને સમ્મતિ સ્થાવરકાય કહેલ છે, કારણ કે તેનો અધિપતિ સમ્મતિદેવ છે. (૫) વનસ્પતિકાયને પ્રાજાપત્ય સ્થાવરકાય કહેવામાં આવે છે, કારણ કે તેનો અધિપતિ પ્રજાપતિ દેવ છે

ઉપર્યુક્ત પાંચ સ્થાવરકાયોના અધિપતિ ઈન્દ્ર આદિ દેવો છે એ જ વાત સૂત્રકારે "પંચ થાવરકાયાહિવઈ પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. અહીં એમ સમજવું જોઈએ કે જેમ નક્ષત્રોના અધિપતિ અશ્વિ

द्यो, नक्षत्राणामश्वियमादयो, दक्षिणोत्तरलोकार्धयोः शक्रेशानौ, तथैव इन्द्रब्रह्मादयः पृथिव्यादीनां स्थावरकायानामधिपतयो भवन्ति, अत एव इन्द्रादयः पञ्च स्थावरकायाधिपतित्वेनोक्ता इति ॥ सू० ५ ॥

एते च अवधिमन्तो भवन्ति, परमेषां कदाचिदवधिदर्शनक्षोभोऽपि भवतीत्याह—

मूलम्—पंचहिं ठाणेहिं ओहिदंसणे समुप्पज्जिउकामेवि तप्पढमयाए खंभाएज्जा, तं जहा--अप्पभूयंवा पुढविं पासित्ता तप्पढमयाए खंभाएज्जा १, कुंथुरासिं वा पुढविं पासित्ता तप्पढमयाए खंभाएज्जा २, महइमहालयं वा महोरगसरीरं पासित्ता तप्पढमयाए खंभाएज्जा ३, देवं वा महिड्डियं जाव महासोक्खं तप्पढमयाए खंभाएज्जा ४, पुरेसु वा पोराणाइं महइमहालयाइं महानिहाणाइं पहीणसामियाइं पहीणसेउयाइं पहीणगुत्तागाराइं उच्छिन्नसामियाइं उच्छिन्नसेउयाइं उच्छिन्नगुत्तागाराइं जाइं इमाइं गामागरनगरखेडकव्वडदोणमुहपट्टणासमसंवाहसन्निवेसेसु सिंघाडगातिगचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु णगरणिद्धमणेसु सुसाणसुन्नागारगिरिकंदरसंतिसेलोवट्ठावणभवणगिहेसु संनिक्खित्ताइं चिट्ठंति ताइं वा पासित्ता तप्पढमयाए खंभाएज्जा ५। इच्चेएहिं पंचहिं ठाणेहिं ओहिदंसणे समुप्पज्जिउकामेवि तप्पढमयाए खंभाएज्जा ॥ सू० ६ ॥

ईशान हैं, उसी प्रकारसे इन्द्र ब्रह्मा आदि पृथिवी आदि स्थावरकायोंके हैं। इसीलिये इन्द्रादिक पांच स्थावरकायोंके अधिपतिरूपसे कहे गये हैं सू०५॥

યમ આદિ હોય છે, લોકના દક્ષિણાર્ધ અને ઉત્તરાર્ધના અધિપતિ શુક્ર અને ઈશાન નામના ઇન્દ્રો હોય છે, એ જ પ્રમાણે પૃથ્વી આદિ સ્થાવરકાયોના અધિપતિ બ્રહ્મા આદિ પાંચ છે તેથી ઇન્દ્રાદિક પાંચ દેવોને સ્થાવરકાયોના અધિપતિ રૂપે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. સૂ. ૫ ॥

छाया—पञ्चभिः स्थानैः अवधिदर्शनं समुत्पत्तुकाममपि तत्प्रथमतायां स्कभ्नीयात् तद्यथा—अल्पभूतां वा पृथिवीं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्कभ्नीयात् १, कुन्थुराशिं वा पृथिवीं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्कभ्नीयात् २, महातिमहत् वा महोरगशरीरं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्कभ्नीयात् ३, देवं वा महर्द्धिकं यावत् महासौख्यं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्कभ्नीयात् ४, पुरेषु वा पुराणानि महातिमहान्ति महानिधानानि प्रहीणस्वामिकानि प्रहीणसेक्तृकानि प्रहीणगोत्रागाराणि उच्छिन्नस्वामिकानि उच्छिन्नसेक्तृकानि उच्छिन्नगोत्रागाराणि यानि इमानि ग्रामाकरनगरखेटकर्बटद्रोणमुखपट्टनाश्रमसंवाहसन्निवेशेषु शृङ्गाटकत्रिकचतुष्कचत्वरचतुर्मुखमहापथपथेषु नगरनिर्द्धमनेषु श्मशानशून्यागारगिरिकन्दरशान्तिशैलोपस्थापनभवनगृहेषु सन्निक्षिप्तानि तिष्ठन्ति तानि वा दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्कभ्नीयात् ५। इत्येतैः पञ्चभिः-स्थानैः अवधिदर्शनं समुत्पत्तुकामं तत्प्रथमतायां स्कभ्नीयात् ॥ सू० ६ ॥

टीका—'पंचहिं ठाणेहिं इत्यादि—

पञ्चभिः स्थानैः अवधिदर्शनम्=अवधिरेव दर्शनं=रूपिसामान्यग्रहणम् अवधिदर्शनम् तत् समुत्पत्तुकाममपि=भवितुकाममपि तत्प्रथमतायाम्=अवधिदर्शनोत्पादप्रथमसमये स्कभ्नीयात्—क्षुभ्येत्—चलेदित्यर्थः। यद्वा—अवधिदर्शने समुत्पत्तुकामे सति तत्प्रथमतायाम्=अवधिदर्शनोत्पादप्रथमसमये अवधिमान् स्कभ्नी-

---

ये अवधिवाले होतेहैं, परन्तु इनके कदाचित् अवधिदर्शनका क्षोभ भी होता है-यही बात सूत्रकार कहते हैं—

टीकार्थ-'पंचहिं ठाणेहिं ओहिदंसणे' इत्यादि सूत्र ६ ॥

उत्पन्न होनेकी इच्छावाला हुआ भी अवधिदर्शन अपने उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें चलायमान हो सकता है, इसमें ये पांच कारण हैं-अवधिज्ञानसे पहिले रूपी पदार्थको सामान्य रूपसे ग्रहण करनेवाला जो उसका दर्शन है वह अवधिदर्शन है, यह अवधिदर्शन उत्पन्न होनेके

તેઓ અવધિવાળા હોય છે, પણ ક્યારેક તેમના અવધિદર્શનનો ક્ષોભ પણ થતો હોય છે. એ જ વાત હવે સૂત્રકાર હવે પ્રકટ કરે છે.

ટીકાર્થ—" પંચહિં ઠાણેહિ ઓહિદંસણે " ઇત્યાદિ—

ઉત્પન્ન થવાની ઇચ્છાવાળું હોવા છતાં પણ પોતાની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયમાં નીચેના પાંચ કારણોને લીધે અવધિદર્શન ચલાયમાન થઇ શકે છે. અવધિજ્ઞાન થયા પહેલાં રૂપી પદાર્થોને સામાન્ય રૂપે ગ્રહણ કરનારું જે તેનું દર્શન છે તેને અવધિદર્શન કહે છે. તે અવધિદર્શન ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય હોવાથી

यात्=क्षुभ्येत् । अवधिमानिति गम्यत्वेनाक्षिप्तम् । क्षोभप्रकारमेवाह-' तं जहा ' इत्यादिना । तद्यथा-अल्पभूताम्-अल्पानि=स्तोकानि भूतानि=प्राणिनो यस्यां सा ताम्-अल्पसंख्यकप्राणिसहितां भूमिं दृष्ट्वा अवधिज्ञानवतोऽवधिदर्शनं तत्प्रथमतायाम्=अवधिदर्शनप्रथमोत्पादसमये स्कम्भनीयात्=क्षुभ्येत् । अयं भावः-बहुसंख्यकसत्त्वसमाकुला भूरियमिति संभावना समन्वितोऽकस्मादल्पसत्त्व सहितां भूमिम् अवधिदर्शनोत्पादप्रथमसमये दृष्ट्वा " आः किमेतदेवम् " इत्येवं संक्षुब्धावधिदर्शनो भवति, अक्षीणमोहनीयत्वादिति १। वा=अथवा कुन्थु-

योग्य होनेसे उत्पन्न हुआ भी जो वह अपनी आपत्तिके प्रथम समयमें क्षुभित हो जाता है, अथवा अवधिदर्शन उत्पत्तिके योग्य होनेसे उत्पन्न होता भी जो उसकी उत्पत्तिके प्रथम समयमें अवधिज्ञानवाला जीव क्षुभित हो जाताहै, तो उसके क्षुभित होनेके कारण येहैं-जब अवधिज्ञानी अल्पसंख्यक प्राणियोंसे सहित भूमिको देखताहै, तब उसका अवधिदर्शन उसके देखनेसे अपनी उत्पत्तिके प्रथम समयमें क्षुभित हो जाता है-चलायमान हो जाताहै। इसका भाव ऐसा है, यह भूमि अनेक संख्यावाले प्राणियोंसे समाकुल-व्याप्त है, ऐसी संभावनासे समन्वित अवधिज्ञानी अकस्मात अल्पसत्त्व सहित भूमिको अवधिदर्शनके उत्पादके प्रथम समयमें जब देखता है, तो देखकर " ओह क्या यह ऐसा है " इस प्रकारसे वह अवधिदर्शनवाला संक्षुब्ध हो जाता है,

ઉત્પન્ન થાય છે પણ ખરૂ, પરન્તુ જો તે પોતાની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયમાં ક્ષુભિત થઈ જાય છે અથવા જે જીવ અવધિદર્શનની પ્રાપ્તિને પાત્ર હોય છે તેને અવધિદર્શન ઉત્પન્ન થઇ પણ જાય છે, પરન્તુ કયારેક તેની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયમાં અવધિજ્ઞાનવાળો જીવ ક્ષુભિત થઈ જાય છે, તે ક્ષુભિત થવાના કારણો નીચે પ્રમાણે હોય છે—(અહીં અવધિજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાનીમાં ધર્મ અને ધર્મીની અપેક્ષાએ અભેદ માનવામાં આવ્યો છે)

(૧) જ્યારે અવધિજ્ઞાની અલ્પસંખ્યક પ્રાણીઓવાળી ભૂમિને દેખે છે, ત્યારે તેમને જોવાથી તેનું અવધિજ્ઞાન ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયે ક્ષુભિત થઇ જાય છે-ચલાયમાન થઇ જાય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—

આ ભૂમિ અનેક સંખ્યાવાળા પ્રાણીઓથી વ્યાપ્ત છે એવી સંભાવનામાં માનનારો તે અવધિજ્ઞાની અકસ્માત્ અલ્પ સંખ્યક પ્રાણીઓવાળી ભૂમિને અવધિદર્શનની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયે જ્યારે દેખે છે, ત્યારે તેને એવું આશ્ચર્ય થાય છે કે " શું આ ભૂમિ આટલા જ પ્રાણીઓવાળી છે ! " આ પ્રકારે તે અવધિજ્ઞાની સંક્ષુબ્ધ થઈ જાય છે, કારણ કે તે અક્ષીણ મોહવાળો

राशिभूताम्=कुन्थुराशिमयीं कुन्थुभिर्व्याप्तां पृथिवीं दृष्ट्वाऽत्यन्तविस्मयदयाभ्यां स्कभ्नीयात् ॥ २ ॥ वा=अथवा-महातिमहालयम्=महतोऽप्यतिमहत् महोरग-शरीरं=महासर्पकायं बाह्यद्वीपवर्त्ति योजनसहस्रप्रमाणं दृष्ट्वा विस्मयभयाभ्यां स्कभ्नीयात् ॥ ३ ॥ वा=अथवा महर्द्धिकं यावच्छन्दग्राह्य-महाद्युतिकं महानुभागं महाबलं तथा महासौख्यं देवं दृष्ट्वा विस्मयात् स्कभ्नीयात् ॥ ४ ॥ वा=अथवा पुरेषु=नगरेषु पुराणानि=प्राचीनानि महातिमहालयानि=विशालातिविशालानि महानिधानानि=महामूल्यरत्नादीनां निधानस्थानानि भवन्ति, कीदृशानि तानि भवन्ति ?

क्योंकि वह अक्षीण मोहवाला होता है १। अथवा कुन्थुराशिभूत कुन्थुराशिसे व्याप्त पृथिवीको देखकर वह अत्यन्त विस्मय एवं दया इनसे संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाला हो जाता है २। अथवा-जब वह अपने अवधिदर्शनसे महासर्पकायको बाह्यद्वीपवर्ति योजन सहस्र प्रमाणवाले बहुत ही अधिक विशालकायवाले सर्पकायको देखता है, तो देखकर विस्मय और भय इन दोनोंसे संक्षुब्ध अवधिदर्शकवाला हो जाताहै ३। अथवा-जब वह अपने अवधिदर्शनसे महर्द्धिक यावत्-महाद्युतिक महाप्रभावयुक्त महाबल संपन्न तथा महासौख्ययुक्त किसी देवको देखता है, तो देखकरके वह अवधिज्ञानी जीव विस्मयसे संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाला अवधिदर्शनकी उत्पत्तिके प्रथम समयमें बन जाता है, अथवा नगरोंमें इस प्रकारके महातिमहान् प्राचीनतम गढे हुए या रखे हुए निधानोंको देखता है, तो देखकर वह अवधिदर्शन अपने प्रथम समयमें संक्षुब्ध हो जाता है ५। निधानके इन विशेषणोंका अर्थ इस प्रकारसे है जैसे-

---

હોય છે (૨) અથવા કુન્થુ રાશિ રૂપ અથવા કુન્થુ રાશિ વડે વ્યાપ્ત પૃથ્વીને જોઈને અત્યંત વિસ્મય અને દયાથી તે સંક્ષુબ્ધ અવધિદર્શનવાળો થઈ જાય છે (૩) અથવા જ્યારે તે બાહ્ય દ્વીપમાં યોજન સહસ્ર પ્રમાણુવાળા મહા-સર્પકાયને જોવે છે, ત્યારે તેને જોઈને વિસ્મય અને ભય, આ બન્ને કારણે સંક્ષુબ્ધ અવધિદર્શનવાળો થઈ જાય છે. (૪) અથવા જ્યારે તે અવધિદર્શનથી મહર્દ્ધિક, મહાદ્યુતિક, મહા પ્રભાવયુક્ત, મહા બલયુક્ત, મહા સુખસંપન્ન એવાં દેવને દેખે છે, ત્યારે તે અવધિદર્શનવાળો જીવ અવધિદર્શનની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયમાં વિસ્મયને લીધે સંક્ષુબ્ધ અવધિદર્શનવાળો બની જાય છે. (૫) અથવા નગરાદિમાં મહાતિમહાન્ પ્રાચીનતમ જમીનમાં દાટી રાખેલા કે ભૂગર્ભમાં ખનીજ રૂપે રહેલા ભંડારોને જ્યારે તે અવધિદર્શનના પ્રથમ સમયે જોવે છે, ત્યારે વિસ્મયને કારણે તેનું અવધિદર્શન સંક્ષુબ્ધ થઈ જાય છે.

इत्याह—प्रहीणस्वामिकानि=प्रहीणाः=परिक्षीणाः नष्टप्रायाः स्वामिनो येषां तानि तथोक्तानि, तथा=प्रहीणसेक्तृकानि=प्रहीणाः सेक्तारः=सेचकास्तेऽप्यत्र उपर्युपरिधनप्रक्षेपकाः पुत्रादयो येषां तानि तथोक्तानि। अथवा—'प्रहीणसेतुकानि' इतिच्छाया। प्रहीणाः सेतवः=तदभिज्ञानभूताः पालयस्तन्मार्गा वा अतिपुराणत्वेन प्रतिजागरकाभावेन च येषां तानि तथोक्तानि, तथा—प्रहीणगोत्रागाराणि—प्रहीणानि गोत्रागाराणि=निधायकानां कुलानि गृहाणि च येषां तानि तथोक्तानि। उक्तमेवार्थं विशदयति—'उच्छिन्नसामियाइं' इत्यादि, उच्छिन्नस्वामिकानि—उच्छिन्नाः=उन्मूलिताः स्वामिनो येषां तानि तथोक्तानि। अन्यत् पूर्ववद् बोध्यम्। एवं विधानि पुरवर्तीनि पुराणानि निधानानि दृष्ट्वा, वा=अथवा—ग्रामाकरनगरखेटकर्बटद्रोणमुखपट्टनाश्रमसंवाहसन्निवेशेषु—तत्र—ग्रामः—यत्र करादिर्गृह्यते,

जो निधान पुराने हों, बहुत पहिलेके हों, प्राचीन हों, महाति—महालय हों—बहुतही अधिक विशाल हों जिनकी द्रव्य राशिका कोई प्रमाण न हो, और जिनके स्वामी नष्ट प्राय हो चुके हों, तथा जो प्रहीणसेक्तृक हों, जिनकी वृद्धि करनेवाले उनके स्वामियोंके भी कोई पुत्र पौत्रादि न रहे हों—सबके सब (मर) हो चुके हों अथवा जो प्रहीणसेतुक हों—उन निधानोंके जाननेवाले तक भी कोई न बचे हों तथा जो प्रहीण गोत्रागारवाले हों—जिनके अधिकारियोंके गोत्रके घर तक भी नष्ट हो गये हों ऐसे उच्छिन्न (नष्ट) स्वामी आदि विशेषणोंवाले महामूल्यवाले रत्नादिकोंके निधानोंको—खजानोंको देखकर अथवा—ग्राममें—करादि टेक्स आदि

અહીં જે નિધાન (ધન ભંડાર) પદ વપરાયુ છે, તેના વિશેષણોનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—તે નિધાનો પ્રાચીનકાળથી જમીનમાં રહેલા હોવાથી તેમને પુરાણા કહ્યા છે તે નિધાનો ઘણું જ વિશાળ હોવાથી તેમને મહાતિ મહાન્ કહ્યા છે તે ભંડારોમાં અપાર દ્રવ્યરાશિ રહેલી છે તે ભંડારોના માલિકો નષ્ટ થઈ ચુકયા છે, એટલુ જ નહીં પણ તે ધનભંડારોની વૃદ્ધિ કરનારા પુરુષોના પુત્ર, પૌત્ર આદિ કોઈ બચ્યું નથી તેના એકે એક વારસ કાલધર્મ પામી ચુકયા છે. આ કારણે તેમને 'પ્રહીણ સેકતૃક' કહ્યા છે. અથવા તે નિધાનો 'પ્રહીણ સેતુક' છે—એટલે કે તે નિધાનોના અસ્તિત્વને જાણનાર પણ કોઇ વિદ્યમાન નથી, તથા જે પ્રહીણ ગોત્રાગારવાળા છે, એટલે તે ભંડારોના સ્વામીના ગોત્ર (કુળ) ની કોઇ પણ વ્યક્તિના ઘર પણ મોજૂદ નથી, એવાં ઉચ્છિન્ન સ્વામી આદિ વિશેષણોથી યુક્ત મહામૂલ્યવાન રત્નાદિકોથી યુક્ત ખજાનાઓને ગ્રામ, નગર આદિના ભૂગર્ભમાં રહેલા જોઇને તેનું અવધિદર્શન ક્ષુબ્ધ થઈ જાય છે.

आकारः=रत्नादीनामुत्पत्तिस्थानम्, नकरम्=नास्तिकरो यस्मिंस्तत्, यद्वा नगरं-प्रसिद्धम्, खेटम्=धूलिप्राकारपरिवेष्टितम् कर्बटम्=कुत्सितं नगरम्, मडम्बम्-सर्वतोऽर्धतृतीययोजनं यावद् वसतिरहितम्, द्रोणमुखम्=जलस्थलोभयपथयुक्तम्, पट्टनम्=जलस्थलपथयोरन्यतरेण निर्गमप्रवेशौ यत्र तत् आश्रमः=तापसजननिवासस्थानम्, संवाहः=परचक्रभयेन रक्षार्थं यत्र पर्वतनितम्बादिदुर्गे धान्यादीनि जनाः संवहन्ति सः, संनिवेशः-यत्र प्रभूतानां भाण्डानां सन्निवेशः सः, एषामितरेतरयोग द्वन्द्वः, तेषु तथोक्तेषु, तथा-शृङ्गाटकत्रिकचतुष्कचत्वरचतुर्मुखमहापथपथेषु-तत्र-शृङ्गाटकम्=त्रिकोणमार्गः, त्रिकम्=त्रिपथम्-यत्र त्रयो मार्गा मिलन्ति तत्स्थानम्, चतुष्कम्=चतुष्पथम्-यत्र चत्वारोमार्गा मिलन्ति तत्स्थानम्, चत्व-

---

जिनमेंसे वसूल किया जाता है, ऐसे स्थानमें आकरमें-रत्नादिककी उत्पत्तिके स्थानभूत खानोंमें नगरमें खेटमें-धूलिप्राकारसे परिवेष्टित स्थानमें, कर्बटमें-कुत्सित नगरमें मडम्बमें-चारों ओर अढाई २ योजन-तक वसती रहित स्थानमें द्रोणमुखमें-जलपथ एवं स्थलपथ इन दोनों मार्गोंवाले स्थानमें पट्टनमें-जलपथ एवं स्थलपथ इनमेंसे कोई एकपथसे होकर जिनमें आनाजाना होता हो, ऐसे स्थानमें आश्रममें तपस्विजनोंके स्थानमें संवाहमें-परचक्रके भयसे मनुष्य रक्षाके लिये जिन पर्वतादिके मध्यभागोंमें धान्यादि छिपाकर रखते हैं ऐसे स्थानमें, संनिवेशमें जो अनेक भाण्डादि वस्तुओंके रखनेके आश्रयस्थान होते हैं, ऐसे स्थानमें-तथा शृङ्गाटकमें-त्रिकोणवाले मार्गमें. त्रिकमें-तीन रास्ते जहां पर आकर मिलते हों ऐसे रास्तेमें, चत्वरमें-अनेक मार्गोंके संगम स्थानमें महा

અહીં જે ગ્રામાદિ સ્થાન બતાવ્યાં છે, તેમનો અર્થ હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—

જ્યાં આવતા જતા માલ પર કર વસૂલ કરાય છે એવા સ્થળને ગામ કહે છે, રત્નાદિકોની ઉત્પત્તિ જ્યાં થાય છે એવી ખાણોને 'આકર' કહે છે માટીના કિલ્લાથી રક્ષિત ગામને ખેટ કહે છે, કુત્સિત નગરને કર્બટ કહે છે, જેની ચારે તરફ અર્ધા યોજનના વિસ્તારમા વસ્તી ન હોય એવા સ્થાનને 'મડમ્બ' કહે છે જ્યાં જળમાર્ગે અને જમીન માર્ગે જઇ શકાય છે, એવા સ્થળને 'દ્રોણમુખ' કહે છે જ્યાં માત્ર જળમાર્ગે જ અથવા માત્ર જમીન માર્ગે જ જઈ શકાતું હોય એવા સ્થળને 'પટ્ટન' કહે છે તપસ્વી જનોના સ્થાનને આશ્રમ કહે છે. પરચક્રના ભયથી મનુષ્ય પોતાના ધનધાન્યને પર્વતાદિની વચ્ચે આવેલા જે સુરક્ષિત સ્થાનોમાં રાખે છે તે સ્થાનને સંનિવેશ કહે છે. ત્રણ ખૂણાવાળા માર્ગને શૃંગાટક (શિંગોડાના આકારનો માર્ગ) કહે છે, ત્રણ રસ્તા જ્યાં મળતા હોય તે જગ્યાને ત્રિક કહે છે. જ્યાં ચાર માર્ગો

रम्=अनेकमार्गसंगमस्थानम्, महापथः=राजमार्गः, पन्थाः=मार्गः, एषां द्वन्द्वः, तेषु तथोक्तेषु, तथा-नगरनिर्द्धमनेषु=नगरजलनिर्गमनस्थानेषु, नगरनालिकास्वित्यर्थः।, तथा - श्मशानशून्यागारगिरिकन्दरशान्तिशैलोपस्थापनभवनगृहेषु-तत्र-श्मशानम्=शवपरिष्ठापनस्थानम्, शून्यागारम्=शून्यगृहम्, गिरिकन्दरा=पर्वतगुहा, शान्तिगृहम्=यत्रराज्ञामनिष्टशान्तये शान्तिकर्महोमादि क्रियते तत्, शैलगृहम्-पर्वतमुत्कीर्य गृहरूपेण यन्निर्मीयते तत्, उपस्थापनगृहम्=आस्थानमण्डपः, अथवा-शैलोपस्थापनगृहम्=शैलनिर्मितास्थानमण्डपः, भवनगृहम्-यत्र कुटुम्बिनो निवसन्ति तत्, एतेपामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तेषु। एतेषु ग्रामादिषु यानि इमानि प्रहीणस्वामिकादिविशेषणविशिष्टानि पुराणानि महातिमहालयानि महानिधानानि सन्निक्षिप्तानि=संस्थापितानि तिष्ठन्ति तानि दृष्ट्वा अदृष्टपूर्वतया

पथमें राजमार्गमें पथमें-सामान्य मार्गमें तथा नगर निर्द्धमनोंमें-नगरके जलको निकलनेके लिये बनाये गये मार्गोंमें-नगरके तालाओंमें-तथा श्मशानोंमें शून्यागारोंमें, गिरिकी कन्दराओंमें, शान्तिगृहोंमें, जहां पर राजाओंके अनिष्टको शान्त करनेके लिये शान्तिकर्मरूप होमादिक किये जाते हैं ऐसे स्थानमें, शैलगृहोंमें-पर्वतको तोडकर जो गृहरूपसे बनाये जाते हैं ऐसे स्थानोंमें उपस्थानगृहमें-आस्थान मंडपमें-अथवा-शैलोपस्थान गृहमें, शैलनिर्मित आस्थान मंडपमें, बाहर बैठने के मण्डपोंमें, भवनगृहमें जहां कुटुम्बीजन निवास करते हों ऐसे स्थानमें ऐसे इन ग्रामादिकोंमें, रखे हुए गढे हुए प्रहीणस्वामिक (स्वामी रहित) आदि विशेषणोंवाले पुराने महातिमहालय ऐसे निधानोंको देखकर अदृष्ट पूर्व होनेके कारण उनके जायमान विस्म-

भेगां थतां होय ते स्थानने चतुष्क (चोक) कहे छे, अनेक मार्गोना संगम स्थानोने चत्वर कहे छे. राजमार्गने महापथ कहे छे सामान्य मार्गने पथ कहे छे. नगरमांथी पाणी बहार काढवानी गटरने निर्द्धमन कहे छे. आ प्रकारनां स्थानोमां तथा स्मशानोमां, शून्यागारोमां (निर्जन स्थळोमां), गिरिकन्दराओमां आवेलां शान्तिगृहोमां (ज्यां राजाओना अनिष्टने शान्त करवाने माटे शान्तिकर्म रूप होम हवन आदि ज्यां करवामां आवे छे एवा स्थानोमां), पर्वतोने कोतरीने बनावेलां शैलगृहोमां, उपस्थानगृहमां, आस्थानमंडपमां अथवा शैलोपस्थान गृहमां-शैलनिर्मित आस्थान मंडपमां अने भवनगृहोमां (कुटुंबीओ ज्यां निवास करे छे एवा भवनोमां) दाटेला प्रहीणस्वामिक आदि पूर्वोक्त विशेषणोवाळा, पुराणा, महातिमहालय निधानोने जोईने अवधिदर्शननी उत्पत्तिना प्रथम समयमां अवधिदर्शनवाळो जीव

विस्मयाद् लोभाद् वा अवधि दर्शनोत्पादप्रथमसमयेऽवधिमान् संक्षुब्धाऽवधिदर्शनो भवतीति ॥ ५ ॥ इत्येतैः पूर्वोक्तैः पञ्चभिः स्थानैः अवधिदर्शनं समुत्पत्तुकामम् तत्प्रथमतायाम्=अवधिदर्शनोत्पादप्रथमसमये स्कम्भनीयात्=क्षुभ्येदिति ॥ सू० ६ ॥

सम्प्रति केवलज्ञानदर्शनविषयामक्षोभतामाह—

मूलम्--पंचहिं ठाणेहिं केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जिउकामे तप्पढमयाए नो खंभाएज्जा, तं जहा-अप्पभू तं वा पुढविं पासित्ता तप्पढमयाए णो खंभेज्जा, सेसं तहेव जाव भवणागिहेसु संनिक्खित्ताइं चिट्ठंति ताइं वा पासित्ता तप्पढमयाए णो खंभाएज्जा, इच्चेएहिं पंचहिं ठाणेहिं जाव नो खंभाएज्जा॥सू०७॥

छाया—पञ्चभिः स्थानैः केवलवरज्ञानदर्शनं समुत्पत्तुकामम् तत्प्रथमतायां नो स्कम्भीयात्, तद्यथा–अल्पभूतां वा पृथिवीं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां नो स्कम्भीयात्, शेषं तथैव यावद् भवनगृहेषु सन्निक्षिप्तानि तिष्ठन्ति तानि वा दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां नो स्कम्भीयात्, इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः यावत् नो स्कम्भीयात्॥सू.७॥

यसे अथवा उनके लोभसे अवधिदर्शनकी उत्पत्तिके प्रथम समयमें अवधिज्ञानवाला जीव संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाला हो जाता है, इस प्रकारके इन पूर्वोक्त पांच कारणोंसे उत्पत्तिके योग्य हुआ अवधिदर्शन अपनी उत्पत्तिके प्रथम समयमें क्षुभित हो जाता है, या क्षुभित हो सकता है, ६। तात्पर्य इस कथनका ऐसाहै, कि अवधिज्ञानीको अवधिदर्शन होता है, पर वह इन निर्दिष्ट पांच कारणोंसे अपने उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें क्षुभित भी हो सकता है, इसी तरहसे अवधिज्ञान भी क्षुभित हो सकता है ॥ सू० ६ ॥

સંક્ષુબ્ધ અવધિજ્ઞાનવાળો થઈ જાય છે–તે પ્રકારના ભંડારો તેણે પહેલાં કદી પણ જોયાં નથી, તેથી વિસ્મયને લીધે અથવા તે પ્રાપ્ત કરવાના લોભને લીધે તે સંક્ષુબ્ધ અવધિદર્શનવાળો થઈ જાય છે.

આ પ્રકારના ઉપર્યુક્ત પાંચ કારણોને લીધે ઉત્પત્તિને યોગ્ય એવું અવધિદર્શન પણ ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયમાં ક્ષુભિત (ચલાયમાન) થઈ જાય છે અથવા ચલાયમાન થઇ શકે છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે અવધિજ્ઞાનીને અવધિદર્શન થાય છે ખરૂ, પણ ઉપર્યુક્ત પાંચ કારણોને લીધે ઉત્પન્ન થયા બાદ પ્રથમ સમયમાં જ તેનું અવધિદર્શન ક્ષુભિત પણ થઈ શકે છે, અને એજ રીતે અવધિજ્ઞાન પણ ક્ષુભિત થઈ શકે છે. ॥ સૂ० ૬ ॥

टीका—'पंचहिं ठाणेहिं' इत्यादि। समुत्पत्तुकामं केवलवरज्ञानदर्शनं केवली वा पञ्चभिः स्थानैर्नो स्कम्भीयात्, याथात्म्येन वस्तुदर्शनात्, क्षीणमोहनीयत्वेन भयविस्मयलोभाद्यभावेन अतिगम्भीरत्वाच्चेति। शेषं व्याख्यातप्रायमिदं सूत्रम् ॥सू० ७॥

तथा—केवलज्ञानदर्शनं नारकादीनां बीभत्सादिशरीराणि दृष्ट्वाऽपि न क्षुभ्यतीति शरीरप्ररूपणा माह—

मूलम्—णेरइयाणं सरीरगा पंचवन्ना पंचरसा पण्णत्ता, तं जहा—किण्हा जाव सुक्किल्ला, तित्ता जाव महुरा। एवं निरंतरं जाव वेमाणियाणं। पंच सरीरगा पण्णत्ता, तं जहा—ओरालिए १ वेउव्विए २ आहारए ३ तेयए ४ कम्मए ५। ओरालियसरीरे

अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं, कि केवलज्ञान और केवलदर्शनमें क्षोभ नहीं होता है—'पंचहिं ठाणेहिं केवलवरनाणदंसणे' इत्यादि

टीकार्थ—केवलज्ञान और केवलदर्शन उत्पन्न होनेके योग्य होने पर इन पूर्वोक्त पांच कारणोंसे अपने प्रथम समयमें क्षुभित नहीं होते हैं, और न केवली क्षुभित होता है। क्योंकि उनके द्वारा वस्तुको यथार्थरूप जान लिया जाता है, तथा मोहनीय सर्वथा क्षय हो जानेसे उनमें भय, विस्मय, लोभ आदिका सर्वथा अभाव हो जाता है, इससे वे अत्यन्त गंभीर होते हैं। इस सूत्रमें जो पद आये हैं, उन सबका स्पष्टीकरण छट्ठे सूत्रमें किया जा चुका है ॥ सू० ७ ॥

હવે સૂત્રકાર એ વાત પ્રકટ કરે છે કે કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શન ક્ષુભિત (ચલાયમાન) થતાં નથી.

ટીકાર્થ—" પંચહિં ઠાણેહિં કેવલવરનાણદંસણે " ઇત્યાદિ—

કેવલજ્ઞાન અને કેવલદર્શન ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય હોય ત્યારે ઉત્પન્ન થાય છે. પણ અવધિદર્શનની જેમ પૂર્વોક્ત પાંચ કારણોને લીધે ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયમાં તે ક્ષુભિત થતાં નથી અને કેવલી પણ ક્ષુભિત થતા નથી, કારણ કે તેમના દ્વારા વસ્તુનું યથાર્થ સ્વરૂપ જાણી લેવામાં આવે છે અને મોહનીય કર્મનો સર્વથા ક્ષય થઈ જવાથી તેમનામાં ભય, વિસ્મય, લોભ આદિનો સર્વથા અભાવ રહે છે, તેથી તેઓ અત્યંત ગંભીર હોય છે. આ સૂત્રમાં જે પાંચ કારણોનો ઉલ્લેખ કર્યો છે, તેનું છઠ્ઠા સૂત્રમાં સ્પષ્ટીકરણ થઇ ગયું છે.સૂ. ।૭।

पंचवन्ने पंचरसे पण्णत्ते, तं तहा—किण्हे जाव सुक्किल्ले, तित्ते जाव महुरे, एवं जाव कम्मयसरीरे । सव्वेवि णं बादरबोंदिधरो कलेवरा पंचवन्ना पंचरसा दुग्गंधा अट्ठ फासा ॥ सू० ८ ॥

छाया—नैरयिकाणां शरीरकाणि पञ्चवर्णानि पञ्चरसानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—कृष्णानि यावत् शुक्लानि, तिक्तानि यावत् मधुराणि, एवं निरन्तर यावद् वैमानिकानाम्। पञ्च शरीरकाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—औदारिकम् १, वैक्रियम् २, आहारकम् ३, तैजसम् ४, कर्मजम् ५ । औदारिकशरीरं पञ्चवर्णं पञ्चरसं प्रज्ञप्तं, तद्यथा—कृष्णं यावत् शुक्लम्, तिक्तं यावद् मधुरम्, एवं यावत् कर्मजशरीरम् । सर्वाण्यपि खलु बादररूपधराणि कलेवराणि पञ्चवर्णानि पञ्चरसानि द्वि गन्धानि अष्टस्पर्शानि ॥ सू० ८ ॥

टीका—'णेरइयाणं' इत्यादि—

नैरयिकाणाम्=नारकाणां शरीरकाणि कृष्णादिशुक्लान्तपञ्चवर्णमयानि, तिक्तादि मधुरान्तपञ्चरसमयानि च विज्ञेयानि। एवं चतुर्विंशतिदण्डकोक्तानां वैमानिकान्तानां सर्वेषामपि शरीराणि पञ्चवर्णमयानि पञ्चरसमयानि च विज्ञे-

---

अब सूत्रकार शरीरकी प्ररूपणा करते हैं, क्योंकि केवलज्ञान और केवलदर्शन नारकादिकोंके वीभत्स आदिरूप शरीरोंको देखकर भी क्षुभित नहीं होते हैं, अतः इस प्रकरणको लेकर यह प्ररूपणा की गई है—

'णेरइयाणं सरीरगा पंचवन्ना' इत्यादि सूत्र ८ ॥

टीकार्थ—नैरयिक जीवोंके शरीर पांच वर्णवाले एवं पांच रसवाले कहे गये हैं, कृष्णवर्णसे लेकर शुक्लवर्ण तक ५ वर्ण होते हैं, और तिक्त रससे लेकर मधुर रस तक ५ रस होते हैं। इन पांचों वर्णोवाले और पांचों रसोंवाले नैरयिकोंके शरीर होते हैं, ऐसा भगवान्ने कहा है। इसी प्रकारसे २४ दण्डकोंमें उक्त वैमानिक तकके समस्त जीवोंके

કેવલજ્ઞાન અને કેવલદર્શન નારકાદિના બીભત્સ આદિ રૂપ શરીરને જોઈને પણ ક્ષુભિત થતાં નથી. આ પ્રકારના પૂર્વસૂત્ર સાથેના સંબંધને લઈને હવે સૂત્રકાર શરીરોની પ્રરૂપણા કરે છે.

ટીકાર્થ—" ણેરઇયાણં સરીરગા પંચવન્ના " ઇત્યાદિ—

નારકોનાં શરીર કૃષ્ણથી લઈને શુકલ પર્યન્તના પાંચ વર્ણવાળાં અને તિક્ત (તીખા) થી લઈને મધુર પર્યન્તના પાંચ રસવાળાં કહ્યાં છે. એ જ પ્રમાણે વૈમાનિક પર્યન્તના ૨૪ દંડકોના જીવોના શરીરો વિષે પણ સમજવું.

यानि। नारकादिवैमानिकान्तानां पञ्चवर्णत्वं यदभिहितं तत् निश्चयनयमाश्रित्य, व्यवहारनये तु एतेषां प्रत्येकमेकवर्णप्राचुर्यात् कृष्णादिप्रतिनियत वर्णता बोद्धव्येति। शरीराणि चैषां कतिविधानि ? इत्याह—' पंच सरीरगा ' इत्यादि। शरीरकाणि पञ्चविधानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-औदारिकम्-उदारं=प्रधानम्, तदेवौदारिकम्। प्राधान्यं चास्य तीर्थकरादिशरीरापेक्षया। यद्वा-"औरालिकम्" इत्येवच्छाया। उरालम्=विशालम्, तदेव औरालिकम्। उरालत्वं चास्य सातिरेकयोजनसहस्रप्रमाणत्वात्। अन्यस्य चैवंविधस्य शरीरस्यावस्थितेरसम्भवात्।

शरीर भी पांच वर्णोंवाले एवं पांच रसोंवाले होते हैं, ऐसा जानना चाहिये। यहां जो नारकसे लेकर वैमानिक तकके समस्त जीवोंके शरीरका पांच वर्णोंवाला और पांच रसोंवाला कहा गया है, वह निश्चयनयको आश्रित करके कहा गया है, क्योंकि व्यवहार नयकी अपेक्षासे तो इन जीवोंके प्रत्येकके शरीरमें एक वर्णकी प्रचुरता होनेसे कृष्णादि प्रतिनियत वर्णवाला है, ऐसा जानना चाहिये। जीवोंके शरीर पांच होते हैं, जैसे-औदारिक १-प्रधान शरीरका नाम औदारिक शरीर है, औदारिक शरीरमें जो प्रधानता कही गई है, वह तीर्थकर आदिके शरीरकी अपेक्षासे कही गई है, यद्वा-"ओरालिए"की छाया औरालिक ऐसी भी होती है, उराल नाम विशालका है, ऐसा जो विशाल शरीर है, वह औरालिक शरीर है, कुछ अधिक एक हजार योजनकी

એટલે કે ૨૪ દંડકોના સમસ્ત જીવોના શરીર પણ પાંચ વર્ણુવાળાં અને પાંચ રસવાળાં કહ્યાં છે, એમ સમજવું અહીં નૈરયિકોથી લઇને વૈમાનિક પર્યન્તના સમસ્ત જીવોનાં શરીરને જે પાંચ વર્ણોવાળાં અને પાંચ રસવાળાં કહ્યાં છે, તે નિશ્ચયનયને આધારે કહેવામાં આવેલ છે, તેમ સમજવુ. વ્યવહારનયની માન્યતા અનુસાર તો આ ૨૪ દંડકના જીવોમાંના પ્રત્યેક દંડકના જીવોના શરીરમાં એક વર્ણુની પ્રચુરતા હોય છે, તે કારણે તેમને કૃષ્ણાદિ પ્રતિનિયત વર્ણુવાળા કહેવામાં આવે છે.

જીવોનાં શરીર પાંચ પ્રકારનાં હોય છે—(૧) ઔદારિક (૨) વૈક્રિય, (૩) આહારક, (૪) કાર્મણુ અને (૫) તૈજસ.

પ્રધાન (મુખ્ય) શરીરને ઔદારિક શરીર કહે છે. ઔદારિક શરીરમાં જે પ્રધાનતા કહી છે તે તિર્થંકર આદિના શરીરની અપેક્ષાએ કહી છે.

અથવા—" ઓરાલિએ " ની સંસ્કૃત છાયા " ઔરાલિક " પણ થાય છે. " ઉરાલ " એટલે વિશાળ, જે શરીર વિશાળ હોય છે તેને ઔદારિક

उक्तंच— जोयणसहस्समहियं, ओहे एगिंदिए तरुगणे सु ।
मच्छजुयले सहस्सं, उरगेसु य गब्भजाएसु " ॥१॥

छाया—योजनसहस्रमधिकम् ओघे एकेन्द्रिये तरुगणेषु ।
मत्स्ययुगले सहस्रमुरगेषु च गर्भजातेषु ॥१॥ इति ॥

वैक्रियशरीरस्य लक्षयोजनप्रमाणत्वेऽपि सर्वदाऽवस्थानाभावादिति ॥२॥

अथवा-उरलम्=अल्पप्रदेशोपचितत्वाद् बृहत्त्वाच्च भिण्डवदिति, तदेव औरालिकम् । प्रयोगसिद्धिस्तु निपातनाद् बोध्या । यद्वा-ओरालं=मांसास्थि-स्नाय्वादिभिरवबद्धं, तदेव औरालिकमिति ॥३॥

अवगाहना इसकी उत्कृष्टसे कही गई है, अतः इस अपेक्षासे यह औरालिक कहा गया है, और किसी शरीरकी स्थिति ऐसी नहीं है। कहा भी है–" जोयणसहस्समहियं " इत्यादि । यद्यपि वैक्रिय शरीर एक लाख योजन प्रमाणवाला हो सकता है, परन्तु इस स्थितिमें वह सदा अवस्थित नहीं रहताहै, इसलिये उसका यहां ग्रहण नहीं हुआ है अथवा-' उरालमेव औरालिकम् " इस व्युत्पत्तिके अनुसार अल्प प्रदेशोंसे उपचित होनेसे और बृहत् होनेसे भिण्डकी तरह इसे औरालिक कहा गया है " औरालिक " इस पदकी सिद्धि निपातनसे हुई है । अथवा-" औरालमेव औरालिकम् " इस व्युत्पत्तिके अनुसार जो शरीर ओराल होता है, मांस, अस्थि, स्नायु आदिसे बद्ध होता है, वह औरालिक कहा जाता है, पांच शरीरोंमें केवल औदारिक शरीरही मांस, अस्थि आदिसे युक्त कहा गयाहै शेष शरीर नहीं । कहा भीहै–

કહે છે. તેની ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના એક હજાર યોજન કરતાં પણ અધિક કહી છે. આ રીતે આ શરીર બીજા શરીરો કરતાં અધિક અવગાહનાવાળું હોવાથી તેને ઔરાલિક કહ્યું છે કહ્યું પણ છે કે–" जोयणसहस्समहियं " ઇત્યાદિ—

જો કે વૈક્રિય શરીર એક લાખ યોજનની ઉત્કૃષ્ટ અવગાહનાવાળું હોઇ શકે છે, પરન્તુ એવી સ્થિતિમાં તે સદા અવસ્થિત રહેતું નથી, તેથી તેને અહીં ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું નથી–અથવા " उरालमेव औरालिकम् " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર અલ્પ પ્રદેશોથી ઉપચિત હોવાથી અને વિશાળ હોવાથી ભિંડની જેમ તેને ઔરાલિક કહેવામાં આવ્યું છે " औरालिक " આ પદની સિદ્ધિ નિપાતનથી થઇ છે. અથવા–औरालमेवऔरालिकम् " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જે શરીર ઓરાલ હોય છે, માંસ, અસ્થિ, સ્નાયુ આદિ વડે બંધાયેલું હોય છે તેને ઔરાલિક કહેવામાં આવે છે પાંચ શરીરોમાંનું માત્ર ઔદારિક શરીર જ માંસ, અસ્થિ આદિથી યુક્ત હોય છે–અન્ય શરીરો

उक्तंच—' तत्थोदारमुरालं, उरलं ओराल महव विन्नेयं।
ओरालियं तु पढमं, पडुच्च तित्थेसरसरीरं ॥१॥
भन्नइ य तहोरालं, वित्थरवंतं वणस्सइं पप्प ।
पगईए नत्थि अन्नं, एद्दहमेत्तं विसालंति ॥२॥
उरलं थेवपए सोवचियंपि महल्लगं जहा भिंडं ।
मंसट्ठिण्हारुबद्धं, ओरालं समयपरिभासा ॥३॥

छाया—तत्रोदारमुरालमुरलमोरालमथवा विज्ञेयम् ।
औदारिकमिति प्रथमं प्रतीत्य तीर्थेश्वरशरीरम् ॥१॥
भण्यते च तथोरालं विस्तरवन्तं वनस्पतिं प्राप्य ।
प्रकृते नास्ति अन्यत् एतावन्मात्रं विशालमिति ॥२॥
उरलं स्तोकप्रदेशोपचितमपि महद् यथा भिण्डम् ।
मांसास्थिस्नायुबद्धमोरालं समयपरिभाषा ॥ इति ॥

शरीरस्य द्वितीयभेदमाह—वैक्रियम्—विविधा विशिष्टा वा क्रिया विक्रिया, तस्यां भवं वैक्रियम् ।

उक्तंच —" विविहा व विसिट्ठा वा, किरिया विक्किरिया, तीए जं भवंतमिह वेउव्वियं, तयं पुण नारगदेवाण पगईए ॥ "

छाया—विविधा वा विशिष्टा वा क्रिया विक्रिया, तस्यां यद् भवं तदिह वैक्रियं, तत्पुनः नारकदेवानां प्रकृत्या ॥ इति ॥

विविधशरीराणां विविधक्रियाणां च करणे समर्थं शरीरमित्यर्थः ॥२॥

अथ तृतीयभेदमाह—आहारकम्—आह्रियते=विशिष्टलब्ध्या उपादीयते

" तत्थोदारमुरालं " इत्यादि । इन गाथाओंका अर्थ पूर्वोक्त रूपसे ही है। विविध अथवा विशिष्ट क्रियाको नाम विक्रिया है, इस क्रियामें जो होताहै, वह विक्रियाहै । कहा भीहै—"विविहा व विसिट्ठा वा" विक्रियासे जो शरीर नारक और देवोंको होता है, वह वैक्रिय शरीर है २। जो शरीर चतुर्दश पूर्वधारियों द्वारा विशिष्ट लब्धिके प्रभावसे तथाविध

માંસાદિથી યુક્ત હોતાં નથી. કહ્યું પણ છે કે–" तत्थोदारमुरालं " ઇત્યાદિ. આ ગાથાઓનો અર્થ ઉપર કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવો.

વિવિધ અથવા વિશિષ્ટ ક્રિયાનું નામ વિક્રિયા છે. આ ક્રિયા વડે જે શરીરનું નિર્માણ થાય છે તેને વૈક્રિય શરીર કહે છે. કહ્યું પણ છે કે— "विविहा व विसिट्ठा वा" આ વૈક્રિય શરીરનો સદ્ભાવ નારકો અને દેવોમાં હોય છે.

ચૌદ પૂર્વધારીઓ દ્વારા વિશિષ્ટ લબ્ધિના પ્રભાવથી, કોઇ ખાસ પ્રયોજન ઉદ્ભવવાથી તીર્થંકર આદિની સમીપે જવાને માટે જે શરીરનું નિર્માણ

तथाविधकार्योत्पत्तौ तीर्थकरप्रभृतिसमीपगमनाय चतुर्दशपूर्वधारिभिर्यत् तत् शरीरमाहारकम् । उक्तं च—

" कज्जम्मि समुप्पण्णे, सुयकेवलिणा विसिट्ठलद्धीए ।
जं एत्थ आहरिज्जइ, भणंति आहारगं तंतु ॥१॥

छाया—कार्ये समुत्पन्ने श्रुतकेवलिना विशिष्टलब्ध्या ।
यदत्र आह्रियते भणन्ति आहारकं तत्तु ॥१॥ इति ।
आहारकशरीरकरणे चामूनि कारणानि भवन्ति ।

तदुक्तम्—

" पाणिदय रद्धिदरिसण छउमत्थोवग्गहण हेउं वा ।
संसयवोच्छेयत्थं, गमणं जिणपायमूलम्मि ॥१॥ "

छाया—प्राणिदयर्द्धि दर्शनार्थम् छद्मस्थोपग्रहणहेतो र्वा ।
संशयव्युच्छेदार्थं वा गमनं जिनपादमूले ॥१॥ इति ।

इदं च कार्यसमाप्तौ पुनर्मुच्यते याचितोपकरणवत् । एतच्चाहारकं लोके कदाचित् सर्वथाऽपि न भवति । तस्य विरहस्तु जघन्यत एकं समयम् उत्कर्षतः

कार्यकी उत्पत्तिके समय तीर्थङ्कर आदिके समीप जानेके लिये निर्मित किया जाता है, वह आहारक शरीर है । कहा भी है—" कज्जम्मि समुप्पण्णे " इस गाथाका अर्थ पूर्वोक्त जैसाही है । आहारक शरीरके करनेमें ये चार कारण हैं—" पाणिदयरिद्धिदरिसण " इत्यादि । प्राणियोंके ऊपर दयाके निमित्त१ ऋद्धि दर्शनके लिये२ छद्मस्थोंके ऊपर अनुग्रह करनेके लिये ३ संशय निराकरण करनेके लिये ४ भगवान्के समीप जातेहैं । इससे आहारक शरीरका निर्माण होताहै, जब ये पूर्वोक्त कार्य समाप्त हो जाते हैं, तब यह आहारक शरीर जिसके शरीरमेंसे प्रकट होता है, उसीमें समा जाता है, यह आहारक शरीर लोकमें

કરવામાં આવે છે તે શરીરને આહારક શરીર કહે છે. કહ્યું પણ છે કે—" कज्जम्मिं समुप्पण्णे " ઇત્યાદિ આ ગાથાનો અર્થ પહેલા પ્રમાણે જ છે. આહારક શરીર થવામાં આ ચાર કારણો છે. " पाणिदय-रिद्धिदरिसणं " ઈત્યાદિ—પ્રાણીઓ પર દયા કરવાને નિમિત્તે, ઋદ્ધિ દર્શનને માટે, છદ્મસ્થો પર અનુગ્રહ કરવાને માટે, અને શંકા નિવારણ કરવા ભગવાનની પાસે જવાને માટે તેઓ આહારક શરીરનું નિર્માણ કરે છે જ્યારે તેમનું તે કાર્ય સિદ્ધ થઈ જાય છે ત્યારે તે આહારક શરીર જેના શરીરમાંથી પ્રકટ થયું હોય છે તેના જ શરીરમાં સમાઇ જાય છે. ક્યારેક તો લોકમાં

प्रमासान् यावत्। आहारकशरीरं चतुर्वारं कृत्वाऽवश्यमेवमुक्तो भवतीति भावः तथा न सर्वे चतुर्दशपूर्वविद आहारकशरीर कर्तुमर्हन्ति, अपितु केचिदेवेति ३। अथ चतुर्दभेदमाह-तैजसम्-तेजसोभावस्तैजसम्-उष्मादिलिङ्गसिद्धम्।

उक्तंच—" सव्वस्स उम्हसिद्धं, रसाइ आहारपागजणगं च।
तेयगलद्धिनिमित्तं, च तेयगं होइ नायव्वं ॥१॥"

छाया--सर्वस्य उष्मसिद्धं रसाद्याहारपाकजनकं च।
तैजसलब्धिनिमित्तं च तैजसशरीरं भवति ज्ञातव्यम् ॥१॥ इति।

शरीरसहचारिसूक्ष्मशरीरविशेष इत्यर्थः ४।

अथ पञ्चमं शरीरभेदमाह-

कर्मजं=कार्मणं शरीरम्। उक्तंच--

" कम्मविगारो कम्मण,-मट्ठविहविचित्तकम्मनिष्फन्नं।
सव्वेसिं पि सरीराण कारणभूयं मुणेयव्वं ॥१॥"

कदाचित् सर्वथा भी नहीं होता है, इसका विरहकाल जघन्यसे एक समय और उत्कृष्टसे ६ मास तकका है, आहारक शरीरकी लब्धि चार वख्त स्फोरण करके जीव मोक्षमें जाता है, समस्त चतुर्दश पूर्वधारी इस आहारक शरीरको नहीं करते हैं, किन्तु कोई २ ही करते हैं। तेजका जो भाव है, वह तैजस शरीर है, इसकी सिद्धि उष्मादिरूप चिह्नसे होती है। कहा भी है-" सव्वस्स उम्हसिद्धं " इत्यादि-यह तैजस शरीर तैजस लब्धिके निमित्तसे होता है, तथा आहारादिके परिपाकका हेतु होता है, यह अन्य शरीरोंके साथ रहनेवाला सूक्ष्म शरीर विशेष है। ज्ञानावरणीयादि कर्मोंका समूह रूप कार्मण शरीर होता है। कहा भी है-" कम्मविगारो कम्मण " इत्यादि। कर्मका जो

આહારક શરીરનો બિલકુલ સદ્ભાવ હોતો નથી. તેનો વિરહકાળ ઓછામાં ઓછો એક સમયનો અને વધારેમાં વધારે ૬ માસનો કહ્યો છે આહારક શરીરની લબ્ધિ ચાર વાર પ્રકટ કરીને જીવ મોક્ષમાં જાય છે. સમસ્ત ચૌદ પૂર્વધારી, આહારક શરીરનું નિર્માણ કરતા નથી, પણ કોઈ કોઈ ચૌદ પૂર્વધારી જ તેનું નિર્માણ કરે છે

તેજનો જે ભાવ છે તે તૈજસ શરીર છે. ઉષ્માદિ રૂપ ચિહ્ન વડે તેનું અસ્તિત્વ સિદ્ધ થાય છે. કહ્યું પણ છે કે-" સવ્વસ્સ ઉમ્હસિદ્ધ " ઇત્યાદિ— તૈજસ લબ્ધિના નિમિત્તથી આ તૈજસ શરીરનું નિર્માણ થાય છે, તથા આહારાદિના પરિપાકમાં તે શરીર કારણભૂત બને છે. અન્ય શરીરોની સાથે રહેનારૂં તે એક સૂક્ષ્મ શરીર વિશેષ જ છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સમૂહ રૂપ કાર્મણ શરીર હોય છે. કહ્યુ પણ છે કે " કમ્મવિગારો કમ્મણ " ઇત્યાદિ—

छाया---कर्मविकारः कार्मणम् अष्टविधविचित्रकर्मनिष्पन्नम् ।
सर्वेषामपि शरीराणां कारणभूतं ज्ञातव्यम् ॥१॥ इति ।

कर्म पुद्गलैर्निर्मित सकलशरीरकारणभूतं शरीरमित्यर्थः । औदारिकादि क्रमेण निर्देशस्तु यथोत्तरं सूक्ष्मत्वात् प्रदेशबाहुल्याच्च बोध्य इति । सम्प्रति औदारिकादि शरीराणां पञ्चवर्णत्वं पञ्चरसत्वं चास्तीति प्रतिपादयितुमाह–'ओरालियसरीरे पंचवन्ने' इत्यादि । अर्थः स्पष्टः । अथ बादरशरीराणां वर्ण-

विकार है, वह कार्मण है, यह कार्मण शरीर समस्त शरीरोंका कारणभूत होता है, तात्पर्य यह कि जो शरीर कर्म पुद्गलोंसे निर्वर्तित होता हुआ समस्त शरीरोंका कारणभूत होता है, वह कार्मण शरीर है। औदारिक आदि शरीरोंका जो इस प्रकारके क्रमसे निर्देश हुआ है, वह औदारिक शरीरकी अपेक्षा वैक्रिय शरीर सूक्ष्म है, वैक्रियकी अपेक्षा आहारक सूक्ष्म है, आहारकी अपेक्षा तैजस शरीर सूक्ष्म है, और औदारिक अपेक्षा वैक्रिय शरीरके प्रदेश असंख्यातगुणे होते हैं, वैक्रियकी अपेक्षा आहारक शरीरके प्रदेश असंख्यात गुणे होते हैं, आहारक शरीरकी अपेक्षा तैजस शरीरके प्रदेश अनन्तगुणे होते हैं, और तैजस शरीरकी अपेक्षा कार्मण शरीरके प्रदेश अनन्तगुणे होते हैं।

इन औदारिक आदि शरीरोंमें पंचवर्णवत्ता और पंचरसवत्ता है, इस बातका कथन करनेके लिये अब सूत्रकार–"ओरालियसरीरे पंचवन्ने पन्नत्ते" ऐसा सूत्र कहते हैं–तात्पर्य इसका यही है, कि औदा-

કર્મના જે વિકાર છે તે કાર્મણ છે. તે કાર્મણનું આઠ પ્રકારના વિચિત્ર કર્મો વડે નિર્માણ થાય છે. તે કાર્મણ શરીર સમસ્ત શરીરોના કારણભૂત હોય છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે જે શરીર કર્મપુદ્ગલો વડે નિવર્તિત થઈને સમસ્ત શરીરોની ઉત્પત્તિમાં કારણભૂત બને છે, તે શરીરને કાર્મણ શરીર કહે છે. ઔદારિક આદિ શરીરોનું આ પ્રકારના ક્રમથી જે નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ આ પ્રમાણે છે—

ઔદારિક શરીર કરતાં વૈક્રિય શરીર સૂક્ષ્મ છે. વૈક્રિય શરીર કરતાં આહારક શરીર સૂક્ષ્મ છે અને આહારક કરતાં તજસ શરીર સૂક્ષ્મ છે પ્રદેશની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો ઔદારિક કરતાં વૈક્રિય શરીરના પ્રદેશ અસંખ્યાગણાં હોય છે, વક્રિય શરીર કરતાં આહારક શરીરના પ્રદેશ અસંખ્યાતગણાં હોય છે, આહારક શરીર કરતાં તૈજસ શરીરના પ્રદેશ અનંતગણાં હોય છે અને તૈજસ શરીર કરતાં કાર્મણ શરીરના પ્રદેજ અનંતગણાં હોય છે.

આ ઔદારિક આદિ શરીરો પાંચ વર્ણવાળાં અને પાંચ રસવાળાં છે, આ વાતનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે હવે સૂત્રકાર આ સૂત્ર કહે છે–"ઓરા-

स्पर्शादिसंख्यामाह—'सव्वेवि णं' इत्यादि-सर्वाण्यपि बादररूपधराणि=पर्याप्तकत्वेन स्थूलाकारधारीणि कलेवराणि=शरीराणि पञ्चवर्णानि=मनुष्यादीनामवयवभेदभिन्नानि कृष्णादि शुक्लान्तानि पञ्चवर्णानि, अक्षिगोलकादिषु तथैवोपलब्धेः, तथा-द्विगन्धानि=सुरभिदुरभिभेदगन्धद्वयविशिष्टानि, अष्टस्पर्शानि=कठिनमृदुशीतोष्णगुरुलघुस्निग्धरूक्षात्मकानि च भवन्ति। अबादररूपधराणि शरीराणि तु न नियत-वर्ण रसगन्धस्पर्शसंपन्नानि भवन्ति, अपर्याप्तत्वेन अवयवविभागाभावादिति ॥सू० ८॥

शरीराणि प्ररूपितानि, सम्प्रति शरीरगतान् धर्मविशेषान् 'पंचहिं ठाणेहिं' इत्यारभ्य 'पव अज्जवट्ठाणा' इत्यन्तेन सन्दर्भेणाह—

मूलम्—पंचहिं ठाणेहिं पुरिमपच्छिमगाणं जिणाणं दुग्गमं भवइ, तं जहा-दुआइक्खं दुविभज्जं दुपस्सं दुतितिक्खं दुर-

रिक शरीरमें पांच वर्ण और पांच रस होते हैं। बादररूपको धारण करनेवाले पर्याप्तक होनेसे स्थूलाकारको धारण करनेवाले समस्त शरीर पांच वर्णोंवाले मनुष्यादिकोंके शरीरोंके वर्णों के भेदसे भिन्न २ कृष्णादि शुक्लान्तवर्णोंवाले होते हैं, जैसे-अक्षिगोलक आदिकोंमें देखा जाता है, तथा दो गंधोंवाले सुरभि दुरभि गंधोंवाले होते हैं, एवं कठिन, मृदु, शीत, उष्ण, गुरु, लघु, स्निग्ध और रूक्ष इन आठ स्पर्शोंवाले होते हैं। परन्तु जो अबादर रूपको धारण करनेवाले शरीर हैं, वे नियत वर्ण, रस, गंध, और स्पर्श इन वाले नहीं होते हैं, क्योंकि ये अपर्याप्तक होतेहैं, अतः इनमें अवयव विभागका अभाव रहता है ।सू.८॥

लियसरीरे पंचवन्ने पण्णत्ते" આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે ઔદારિક શરીરમાં પાંચ વર્ણ અને પાંચ રસનો સદ્‌ભાવ હોય છે બાદર રૂપને ધારણ કરનારા પર્યાપ્તક હોવાથી સ્થૂલાકારને ધારણ કરનારા સમસ્ત શરીરો પાંચ વર્ણવાળા મનુષ્યાદિકોના શરીરના વર્ણોના ભેદથી ભિન્ન ભિન્ન એવાં કૃષ્ણથી લઈને શુકલ પર્યન્તના વર્ણવાળાં હોય છે. અક્ષિગોલક વગેરેમાં એવું જોવામાં આવે છે, તથા તેમના શરીરો બે ગન્ધોવાળાં-સુરભિ અને દુરભિ ગન્ધોવાળાં હોય છે, અને કઠિન, મૃદુ, શીત, ઉષ્ણ, ગુરુ, લઘુ, સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ, આ આઠ સ્પર્શોવાળાં હોય છે પરન્તુ જે અબાદર રૂપને ધારણ કરનારાં શરીરો છે, તેઓ નિયત વર્ણ, રસ, ગન્ધ અને સ્પર્શવાળાં હોતા નથી, કારણ કે તેઓ અપર્યાપ્તક હોય છે. તેથી તેઓમાં અવયવ વિભાગનો અભાવ રહે છે સૂ૦ ૮

णुचरं। पंचहिं ठाणेहिं मज्झिमगाणं जिणाणं सुगमं भवइ, तं जहा-सुआइक्खं सुविभज्जं सुपस्सं सुतितिक्खं सुरणुचरं। पंच ठाणाइं समणेणं भगवया महावीरेणं समणाणं णिग्गंथाणं णिच्चं वण्णियाइं णिच्चं कित्तियाइं णिच्चं बुइयाइं णिच्चं पसत्थाइं णिच्चमब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा-खंती १, मुत्ती २, अज्जवे ३, मद्दवे ४, लाघवे ५। पंच ठाणाइं समणेणं भगवया महावीरेणं जाव अब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा-सच्चे १, संजमे २, तवे ३, चियाए ४ बंभचेरवासे ५। पंच ठाणाइं समणेणं जाव अब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा-उक्खित्तचरए १, निक्खित्तचरए २, अंतचरए ३, पंतचरए ४, लूहचरए ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणुण्णायाइं भवंति, तं जहा--अण्णायचरए १, अन्नइलायचरए २, मोणचरए ३, संसट्ठकप्पिए ४, तज्जायसंसट्ठकप्पिए ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा--ओवणिहिए १, सुद्धेसणिए २, संखादत्तिए ३, दिट्ठलाभिए ४, पुट्ठलाभिए ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणुण्णायाइं भवंति, तं जहा--आयंबिलिए १, निव्विगइए २, पुरिमड्ढिए ३, परिमियपिंडवाइए ४, भिन्नपिंडवाइए ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा-अरसाहारे १, विरसाहारे २, अंताहारे ३, पंताहारे ४, लूहाहारे ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणुण्णायाइं भवंति, तं जहा-अरसजीवी १, विरसजीवी २, अंतजीवी ३,

पंतजीवी ४, लुहजीवी ५। पंचठाणाइं जाव अब्भणुण्णायाइं भवंति, तं जहा-ठाणाइए १, उक्कुडुआसणिए २, पडिमट्ठाई ३, वीरासणिए ४ णेसज्जिए ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणुण्णायाइं भवंति, तं जहा-दंडायइए १, लगंडसाई २, आयावए ३, अवाउडए ४, अकंडूयए ५। ॥ सू० ९ ॥

छाया--पञ्चभिः स्थानैः पूर्वपश्चिमकानां जिनानां दुर्गमं भवति, तद्यथा-दुराख्येयं १, दुर्विभाज्यं २, दुर्दर्शं ३, दुस्तितिक्षं ४, दुरनुचरम् ५। पञ्चसु स्थानेषु मध्यमकानां जिनानां सुगमं भवति, तद्यथा-स्वाख्येयं १, सुविभाज्यं २, सुदर्शं ३, सुतितिक्षं ४, स्वनुचरम् ५। पञ्च स्थानानि श्रमणेन भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां नित्यं वर्णितानि नित्यं कीर्तित्तानि नित्यम् उक्तानि नित्यं प्रशंसितानि नित्यमभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-क्षान्तिः १, मुक्तिः २, आर्जवं ३, मार्दवं ४, लाघवम् ५। पञ्च स्थानानि श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-सत्यं १, संयमः २ तपः ३ त्यागो ४ ब्रह्मचर्यवासः ५। पञ्च स्थानानि श्रमणेन यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-उत्क्षिप्तचरकः १, निक्षिप्तचरकः २, अन्तचरकः ३, प्रान्तचरकः ४, रूक्षचरकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्युनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-अज्ञातचरकः १, अन्नग्लायकचरकः २, मौनचरकः ३, संसृष्टकल्पिकः ४, तज्जातसंसृष्टकल्पिकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-औपनिधिकः १ शुद्धैषणिकः २ संख्यादत्तिकः ३ दृष्टलाभिकः ४ पुष्टलाभिकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-आचामाम्लिकः १, निर्विकृतिकः २ पौर्वार्द्धिकः ३, परिमितपिण्डपातिकः ४ भिन्नपिण्डपातिकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-अरसाहारः १ विरसाहारः २ अन्ताहारः ३ प्रान्ताहारः ४, रूक्षाहारः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-अरसजीवी १ विरसजीवी २ अन्तजीवी ३ प्रान्तजीवी ४ रूक्षजीवी ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-स्थानातिगः १ उत्कुटुकासनिकः २ प्रतिमास्थायी ३ वीरासनिकः ४, नैषधिकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-दण्डायतिकः १, लगाण्डशायी २ आतापकः ३ अप्रावृतकः ४ अकण्डूयकः ५ ॥सू० ९॥

टीका--' पचहिं ठाणेहिं ' इत्यादि—

पञ्चभिः स्थानैः पूर्वपश्चिमकानां जिनानां=भरतैरवतेषु प्रत्येकं ये चतुर्विंशतिर्जिनास्तेषु प्रथमान्तिमजिनानां दुर्गमं भवति। दुःखेन गम्यते=ज्ञायत इति दुर्गमं=काठिन्यं कृच्छ्रवृत्तिः, तान्येव स्थानान्याह-तद्यथा-दुराख्येयम्-दुःखेन आख्यायते=कथ्यते यद् वस्तुतत्त्वं तत्-आसेवनशिक्षाग्रहणशिक्षारूपमित्यर्थः। शिष्याणाम् ऋजुजडत्वेन वक्रजडत्वेन च वस्तुतत्त्वाख्याने प्रथमान्तिमतीर्थकृतां काठिन्यं भवतीति बोध्यम् १। तथा-दुर्विभाज्यम्-शिष्याणां बुद्धौ वस्तु

इस प्रकारसे शरीरोंका प्रतिपादन करके अब सूत्रकार शरीरगत धर्म विशेषोंका " पंचहिं ठाणेहिं " यहांसे लगाकर "पंच अज्जवट्ठाणा" यहां तकके सन्दर्भ द्वारा प्रतिपादन करते हैं—

'पंचहिं ठाणेहिं पुरिमपच्छिमगाणं' इत्यादि सू० ९ ॥

टीकार्थ-भरतक्षेत्र एवं ऐरवत क्षेत्र संबंधी जो चौबीस तीर्थङ्कर हैं, उनमें से प्रथम और अन्तिम जो जिन हैं, उनको पांच कारणोंसे कठिनता होती है-वे पांच कारण इस प्रकारसे हैं-दुराख्येय १ दुर्विभाज्य २ दुर्दर्श ३ दुस्तितिक्ष ४ और दुरनुचर ५। जो वस्तुतत्त्व दुःखसे-कठिनतासे कहा जाता है, वह दुराख्येय है, यह आसेवन शिक्षा एवं ग्रहणशिक्षारूप होता है, तात्पर्य इसका ऐसा है, कि शिष्योंको ऋजुजड होनेसे और वक्रजड होनेसे वस्तुतत्त्वके कथनमें प्रथम और अन्तिम इन दो तीर्थं-

આ પ્રકારે શરીરોનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર શરીરગત ધર્મવિશેષોનું " પંચહિં ઠાણેહિં " આ સૂત્રથી લઈને " પંચ અજ્જવટ્ઠાણા " આ સૂત્ર પર્યન્તના સૂત્રો દ્વારા પ્રતિપાદન કરે છે—

" પંચહિં ઠાણેહિં પુરિમપચ્છિમગાણં " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રના જે ૨૪ તીર્થંકરો થયા છે, તેમાંના પહેલા અને છેલ્લા તીર્થંકરોને નીચેના પાંચ કારણોને લીધે ઉપદેશ આપવામાં કઠિનતા-મુશ્કેલી પડી હતી—(૧) દુરાખ્યેય, (૨) દુર્વિભાજ્ય, (૩) દુર્દર્શ (૪) દુસ્તિતિક્ષ અને (૫) દુરનુચર.

(૧) જે વસ્તુતત્વને દુઃખપૂર્વક-ઘણી મુશ્કેલીથી પ્રતિપાદિત કરી શકાય છે, તેને દુરાખ્યેય કહેવાય છે. તે આસેવનશિક્ષા અને ગ્રહણશિક્ષા રૂપ હોય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે પહેલા અને છેલ્લા તીર્થંકરના શિષ્યો ઋજુજડ અને વક્રજડ હોવાથી વસ્તુતત્વનું કથન કરવામાં પહેલા અને છેલ્લા તીર્થંકરને

तत्त्वं विभागशः संस्थापयितुं दुःशकमिति २। तथा-दुर्दर्शम्-दुःखेन दर्श्यते= अवबोध्यते यत् तत्, शिष्यान् वस्तुतत्त्वं दर्शयितुं ते काठिन्यमनुभवन्तीति ३। तथा-दुस्तितिक्षम्-दुःखेन तितिक्ष्यते=सह्यते यत् तत्, उत्पन्नं परीषहादिकं शिष्यैस्तितिक्षयितुं महान्तमायासमनुभवन्तीति ४। तथा-दुरनुचरम्-दुःखेन अनुचर्यते=अनुष्ठाप्यते यत्तत्। शिष्यैराचारमनुष्ठापयितुं ते महापरिश्रमवन्तो भवन्तीति। अत्र चरतिरन्तर्भावितण्यर्थो बोध्यः। यद्यपीह स्थानानि दुराख्यानादीनि वक्तव्यानि, तथापि येषु स्थानेषु कृच्छ्रवृत्ति र्भवति स्थानान्यपि कृच्छ्रवृत्तियोगात् आश्रयाश्रयिणोरभेदोपचारेण कृच्छ्रवृत्तीत्युच्यन्ते।

करोंको कठिनता हुई है १। दुर्विभाज्य शिष्योंकी बुद्धिमें जो वस्तुतत्त्वका विभागशः संस्थापन करना दुःशक्य होता है, वह दुर्विभाज्य है २। जो वस्तुतत्त्व शिष्योंको बड़ी कठिनतासे दिखलाया जाता है, अर्थात् जिस वस्तुतत्त्वको समझानेमें उन्होंने कठिनताका अनुभव किया है, वह दुर्दर्श है, जिन उत्पन्न हुए परीषह आदिकोंका सहन शिष्योंसे उन्होंने कठिनतासे कराया है, अर्थात् उत्पन्न हुए परीषहोंको शिष्योंसे सहन करानेमें जिस कठिनाईका उन्हें अनुभव हुआ है वह दुस्तितिक्ष है ४। तथा-शिष्यजनोंसे उन्होंने जिस आचारका परिपालन बड़ी कठिनतासे पाया है वह दुरनुचर है ५।

यद्यपि यहां इन पांच स्थानोंको दुराख्यान आदि रूपसे कहना चाहिये था, दुराख्येय आदि रूपसे नहीं कहना चाहिये था, परन्तु फिरभी

ઘણી જ કઠિનતાનો અનુભવ કરવો પડયો હતો. (૨) "દુર્વિભાજ્ય"— શિષ્યોની બુદ્ધિમાં જે વસ્તુતત્વનું વિભાગશઃ સંસ્થાપન કરવાનું કાર્ય દુઃશકય હોય છે, તેનું નામ દુર્વિભાજ્ય છે. (૩) જે વસ્તુતત્વ શિષ્યોને ઘણી મુશ્કેલીથી દેખાડી શકાય છે-એટલે કે જે વસ્તુતત્વ શિષ્યોને સમજાવવામાં તેમને કઠિનતાનો અનુભવ કર્યો હતો, તેને દુર્દશ કહેવામાં આવેલ છે. (૪) ઉત્પન્ન થયેલા જે પરીષહોને શિષ્યો દ્વારા સહન કરાવવામાં તેમને કઠિનાઈનો અનુભવ કરવો પડયો હતો, તે પરીષહોને અહીં દુસ્તિતિક્ષ કહ્યાં છે. (૫) તેમણે શિષ્યો પાસે જે આચારોનું પાલન ઘણી મુશ્કેલીથી કરાવ્યું હતું તે આચારોને અહીં દુરનુચર કહ્યાં છે.

જો કે આ પાંચ સ્થાનોને અહીં દુરાખ્યાન આદિ રૂપે કહેવા જોઈતાં હતાં, દુરાખ્યેય આદિ રૂપે કહેવા જોઈતા ન હતાં, પરન્તુ અહીં આશ્રય અને

अतएवात्र-दुराख्येयमित्यादीनि स्थानत्वेनोक्तानीति । अथवा-प्रथमान्तिमतीर्थकृतां तीर्थे आचार्यादीनां शिष्यान् प्रति दुराख्येयं दुर्विभाज्यं च भवति, आत्मनाऽपि च दुर्दर्शं दुस्तितिक्षं दुरनुचरं च भवति । अत्र पक्षे अन्तर्भावितण्यर्थता नाश्रीयते इति । तथा-मध्यमकानां द्वाविंशतितीर्थकराणाम् आख्यानादिषु पञ्चसु स्थानेषु सुगमम्=अकृच्छ्रवृत्ति भवति । तान्येवाह-' स्वाख्येयं सुविभाज्यम् ' अकृच्छ्रवृत्तियोगात् एतानि स्थानानि अकृच्छ्रवृत्तीत्युच्यन्ते, अत एवात्र

ऐसा जो इन्हें कहा गया है, उसका कारण आश्रय (आधार) और आश्रयीमें अभेदके उपचारसे कहा गया है। अर्थात् जिन स्थानोंमें कृच्छ्र (दुःख) वृत्ति होती है, वे स्थान भी कृच्छ्रवृत्तिके योगसे कृच्छ्रवृत्तिरूप (दुःखरूप) मान लिये गये हैं । इसी कारण दुराख्येय आदि रूपसे इन स्थानोंको कहा है, अथवा-प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरोंके तीर्थमें आचार्य आदिके शिष्योंके प्रति तत्त्वका दुराख्येय और दुर्विभाज्य होना है, और स्वयंके द्वारा भी वह दुर्दर्श दुस्तितिक्ष और दुरनुचर होता है तथा मध्यके जो २२ तीर्थंकर हैं उनकी आख्यान आदि पांच स्थानोंमें अकृच्छ्रवृत्ति होती है, इनमें उन्हें कठिनता नहीं होती है, वे इन पांच स्थानोंमें अकृच्छ्रवृत्तिवाले होते हैं, वे पांच स्थान ये हैं-स्वाख्येय १ सुविभाज्य २ सुदर्श ३ सुतितिक्ष ४ और सु अनुचर ५ अकृच्छ्रवृत्तिके योगसे

આશ્રયીમાં અભેદના ઉપચારથી તેમને દુરાખ્યેય આદિ રૂપે કહેવામાં આવેલ છે. એટલે કે જે સ્થાનોમાં કૃચ્છ્ર (દુ ખ) વૃત્તિ હોય છે તે સ્થાનોને પણ કૃચ્છ્રવૃત્તિના યોગથી કૃચ્છ્રવૃત્તિ રૂપ (દુ.ખરૂપ) માનવામાં આવ્યાં છે. એ જ કારણે અહીં તે સ્થાનોને દુરાખ્યેય આદિ રૂપ અહીં કહ્યાં છે. અથવા-પહેલા અને છેલ્લા તીર્થંકરોના તીર્થમાં આચાર્ય આદિકોને માટે શિષ્યોને વસ્તુતત્વ કહેવાનું દુરાખ્યેય હતું અને તેમની બુદ્ધિમાં વસ્તુતત્વની વિભાગશઃ સ્થાપના કરવાનું કાર્ય પણ મુશ્કેલ હતું. અને પોતાને માટે પણ તે દુર્દર્શ, દુસ્તિતિક્ષ અને દુરનુચર હતું. આ પ્રમાણે અર્થ પણ અહીં ગ્રહણ કરી શકાય છે. જે વચ્ચેના ૨૨ તીર્થંકરો થઇ ગયા તેમની આખ્યાન આદિ પાંચ સ્થાનોમાં અકૃચ્છ્રવૃત્તિ (સુખરૂપ વૃત્તિ) હતી. તેમને આખ્યાન આદિમાં કઠિનતાનો અનુભવ કરવો પડયો ન હતો. તેઓ આ પાંચ સ્થાનોમાં અકૃચ્છ્રવૃત્તિવાળા (સુખરૂપ વૃત્તિવાળા) હતા.

(૧) સુ આખ્યેય, (૨) સુ વિભાજ્ય, (૩) સુદર્શ, (૪) સુતિતિક્ષ અને (૫) સુ અનુચર. અકૃચ્છ્રવૃત્તિના યોગથી આ સ્થાનોને અકૃચ્છ્રવૃત્તિરૂપ કહ્યાં છે.

स्वाख्येयमित्यादीनि स्थानत्वेन निर्दिष्टानि। मध्यमकानां तीर्थकराणां शिष्या ऋजुप्रज्ञा भवन्ति, अत एव तेषां भगवतामाख्यानादौ अकृच्छ्रवृत्ति र्भवति। अन्तर्भावितण्यर्थता पूर्ववदेव बोध्या। यद्वा–मध्यमकानां तीर्थकृतां तीर्थे आचार्याणामाख्यानादिषु पञ्चसु स्थानेषु अकृच्छ्रवृत्ति र्भवति। अत्र पक्षेऽन्तर्भावितण्यर्थतानाश्रीयते। पूर्वानुसारेणैवात्राऽपि व्याख्या भावनीयेति। 'सुरणुचरं' इत्यत्र रेफागमः प्राकृतत्वाद् बोध्यः॥

सम्प्रति भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां कर्त्तव्यत्वेन यदुक्तं तदाह–'पंच ठाणाइं' इत्यादिना।

श्रमणेन भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां पञ्च स्थानानि नित्यं सर्वदा वर्णितानि, फलतः, नित्यं कीर्त्तितानि=संशब्दितानि नामतः, नित्यम् उक्तानि=

(सुखसे समझाने के योग्य) होनेसे इन स्थानोंको अकृच्छ्रवृत्तिरूप कहा है, इसीलिये स्वाख्येय आदि स्थानरूपसे निर्दिष्ट हुए हैं, मध्यके २२ तीर्थंकरोंके शिष्य ऋजुप्राज्ञ होते हैं, इसीलिये उनके प्रति वस्तुतत्त्वके कथनमें भगवान्को अकृच्छ्रवृत्ति होतीहै, कठिनता नहीं होतीहै, यद्वा–मध्यके तीर्थकरोंके तीर्थमें आचार्योंकी आख्यान आदि पांच स्थानोंमें अकृच्छ्रवृत्ति रहती है, इस पक्षमें अन्तर्भावित ण्यर्थता आश्रित–गृहीत नहीं हुईहै। पूर्वके अनुसारही यहां व्याख्या कर लेनी चाहिये

अब सूत्रकार भगवान महावीरके द्वारा श्रमणजनोंको कर्तव्य रूपसे जो कहा गया है, सूत्रकार उसे प्रकट करते हैं–श्रमण भगवान् महावीरने श्रमण निर्ग्रन्थोंके पांच स्थान सर्वदा फलकी अपेक्षा वर्णित किये हैं, नामकी अपेक्षा कीर्तित किये हैं, स्वरूपकी अपेक्षा स्पष्टवाणीसे

તેથી તે સ્થાનોને સુઆખ્યેય આદિ રૂપે અહીં બતાવવામાં આવ્યાં છે વચ્ચેના ૨૨ તીર્થંકરોના શિષ્યો ઋજુપ્રાજ્ઞ હતા તેથી તેમને વસ્તુતત્વ કહેવામાં–સમજાવવામાં ભગવાનોને કઠિનતાનો અનુભવ થતો નહીં. અહીં પણ ઉપર મુજબના પાંચે સ્થાનોનું કથન થવું જોઇએ. અથવા વચ્ચેના ૨૨ તીર્થંકરોના તીર્થમાં આચાર્યોને આખ્યાન આદિ પાંચ સ્થાનોમાં કઠિનતા અનુભવવી પડતી નથી આ પક્ષે આગળ પ્રમાણે જ અહીં વ્યાખ્યા સમજી લેવી.

હવે મહાવીર પ્રભુએ શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના જે કર્તવ્યો બતાવ્યાં છે, તેને સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે નીચેનાં પાંચ સ્થાન શ્રમણોને માટે સર્વદા ફલદાયી વર્ણિત કર્યાં છે, નામની અપેક્ષાએ કીર્તિત કહ્યાં છે, સ્વરૂપની અપેક્ષાએ સ્પષ્ટવાણીથી કહ્યાં છે, નિત્ય પ્રશંસાને યોગ્ય કહ્યાં

व्यक्तवाचा कथितानि स्वरूपतः, नित्यं प्रशंसितानि=श्लाघितानि, नित्यम् अभ्यनुज्ञातानि=कर्त्तव्यतया अनुमतानि च भवन्ति। तानि पञ्च स्थानानि कानि? इत्याह—तद्यथा-क्षान्ति. १ मुक्तिः २ आर्जवम् ३, मार्दवम् ४ लाघवम् ५ इति। तत्र-क्षान्तिः=क्षमा, इयं हि क्रोधत्यागतो भवति। मुक्तिः=निर्लोभता, इयं लोभत्यागतः, आर्जवम्=ऋजुता, इदं मायात्यागतः, मार्दवं=मृदुता, इदं मानत्यागतः, तथा-लाघवं=लघुता, इदमल्पोपकरणतऋद्धिरससातगौरवत्रयत्यागतश्च भवति। इतोऽग्रेऽपि प्रतिसूत्रं 'पंचहिं ठाणेहिं समणेणं भगवया महावीरेणं' इत्यादि सूत्रोत्क्षेपस्यार्थः पूर्ववद् विभावनीयो वैयावृत्यसूत्रपर्यन्तम्।

कहे हैं, नित्य वे प्रशंसित किये हैं और कर्तव्यरूपसे वे माने हैं, वे पांच स्थान ये हैं-क्षान्ति १ मुक्ति २ आर्जव ३ मार्दव ४ और लाघव ५ इनमें क्षमाका नाम क्षान्ति है, यह क्षान्ति क्रोधके त्यागसे होती है, ऋजुताका (सरलता) नाम आर्जव है, यह मायाके त्यागसे होता है, मृदुताका नाम मार्दव है, यह मानके त्यागसे होता है, लघुताका नाम लाघव है, यह अल्प उपकरणसे और ऋद्धि रस सात तीन प्रकारके गौरवके त्यागसे होताहै, यहांसे आगेके जो सूत्र वैयावृत्य सूत्र तकहैं, उनमें प्रत्येक सूत्रमें "पंचहिं ठाणेहिं समणेणं भगवया महावीरेण" इत्यादि सूत्रोत्क्षेपका अर्थ पहिलेकी तरहसे विभावित कर लेना चाहिये-लगा लेना चाहिये। अर्थात् जिस प्रकारसे पूर्वोक्त स्थानोंमें ऐसा कहा गया है, कि ये स्थान श्रमण भगवान् महावीर द्वारा यावत् अभ्यनुज्ञात आज्ञापित हुएहैं, उसी

છે અને કર્તવ્ય રૂપ (કરવા યોગ્ય) બતાવ્યાં છે. તે પાંચ સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે—(૧) ક્ષાન્તિ, (૨) મુક્તિ, (૩) આર્જવ, (૪) માર્દવ અને (૫) લાઘવ. ક્ષમાને ક્ષાન્તિ કહે છે, તે ક્રોધના ત્યાગથી ઉદ્ભવે છે, લોભના ત્યાગનું નામ મુક્તિ છે, ઋજુતાનું નામ આર્જવ છે, માયાના ત્યાગથી ઋજુતા આવે છે. મૃદુતાનું નામ માર્દવ છે, તે માનના ત્યાગથી ઉત્પન્ન થાય છે. લઘુતાનું નામ લાઘવ છે, અથવા અલ્પ ઉપકરણ અને ઋદ્ધિ રસ અને ગૌરવના ત્યાગથી આ ગુણ ઉત્પન્ન થાય છે.

હવે પછીના વૈયાવૃત્ય સુધીના પ્રત્યેક સૂત્રમાં પણ "પંચ હિં ઠાણેહિં સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણ" ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ આગળ જે પ્રમાણે કહ્યાં છે તે પ્રમાણે કહેવો જોઇએ. એટલે કે જે પ્રકારે પૂર્વોક્ત સ્થાનોમાં એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે શ્રમણોને માટે આ સ્થાનો શ્રમણ ભગવાન મહાવીર દ્વારા વર્ણિત, કીર્તિત, ઉક્ત, પ્રશંસિત અને કર્તવ્ય (કરવા યોગ્ય) મનાયા છે, એ જ

तत्र-सत्यं १ संयमः २ तपः ३ त्यागो ४ ब्रह्मचर्यवासः ५, इति पञ्च स्थानानि। तत्र-सत्यं-यथार्थभाषणम्, तच्चतुर्विधमुक्तम्। तथाहि—

" अविसंवादनयोगः १, काय २ मनोवाग ३ जिह्मता ४ चैव।

सत्यं चतुर्विधं तच्च जिनवरमतेऽस्ति नान्यत्र ॥१॥" इति।

अविसंवादनयोगः=अङ्गीकृतपरिपालनम्, कायमनोवागजिह्मता=काय-मनोवचसामकुटिलता चेति चतुर्विधं सत्यं विज्ञेयमिति भावः। तथा-संयमः-संयमनं संयमः-पृथिव्यादिरक्षणलक्षणः, स च सप्तदशविधः। तदुक्तम्—

" पुढवि दग अगणि मारुय वणप्फइ बि ति चउ पंचिंदि अजीवे।

पेहोपेह पमज्जण परिट्ठवण मणोवईकाए ॥१॥

छाया-पृथ्वीदकाग्निमारुतवनस्पति द्वित्रिचतुःपञ्चेन्द्रिया जीवेषु।

प्रेक्षोत्प्रेक्षप्रमार्जन परिष्ठापनमनोवाकायेषु ॥१॥

प्रकारसे सत्य १ संयम २ तप ३ त्याग ४ और ब्रह्मचर्यवास ये पांच स्थान श्री श्रमण भगवान् महावीर द्वारा यावत् अभ्यनुज्ञात हुए हैं। यहां समस्त सूत्रोंमें यावत्पदसे "वर्णितानि, कीर्तितानि, उक्तानि, प्रशंसितानि" इन चार पदोंका संग्रह हुआ है, यथार्थ भाषणका नाम सत्य है? यह सत्य चार प्रकारका कहा गया है-जैसे-" अविसंवादन-योगः" इत्यादि अङ्गीकृतका (स्वीकार किये हुवेका) परिपालन करना इस का नाम अविसंवादनयोग हैं, एवं काय, मन वचनकी अकुटिलता सरलता का काय मनोवागजिह्मता है, इस प्रकारसे सत्यके ये चार भेद हैं। पृथिव्यादिकोंका रक्षणकरने रूप संयम होता है, अर्थात् छह कायके जीवोंकी रक्षा करना यह संयम १७ प्रकारका कहा गया है, जैसे-" पुढविदग अगणि " इत्यादि।

પ્રમાણે સત્ય, સંયમ, તપ, ત્યાગ અને બ્રહ્મચર્યવાસ રૂપ આ પાંચ સ્થાનોને પણ વર્ણિત, કીર્તિત આદિ રૂપ માનવામાં આવેલ છે યથાર્થ ભાષણ અથવા વચનનું નામ સત્ય છે. આ સત્ય ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે-" अविसंवादनयोगः " ઈત્યાદિ. અંગીકૃતનું પાલન કરવું તેનું નામ અવિસંવાદન યોગ છે. અને મન, વચન અને કાયાની અકુટિલતા રૂપ બીજા ત્રણ ભેદો મળીને સત્યના કુલ ચાર ભેદ પડે છે. પૃથ્વીકાય આદિનું રક્ષણ કરવા રૂપ સંયમ હોય છે. એટલે કે છકાયના જીવોની રક્ષા કરવી તેનું નામ સંયમ છે. તે સંયમના ૧૭ સત્તર પ્રકાર કહ્યા છે. જેમકે " पुढविदगअगणि " ઈત્યાદિ. આસવોથી વિરક્ત થવા રૂપ

अथवा-संयमः-आस्रवविरमणादिरूपः सोऽपि सप्तदशविधः ।

"पञ्चास्रवाद् विरमणं ५, पञ्चेन्द्रियनिग्रहः १० कषायजय १४ ।

दण्डत्रयविरतिश्चेति संयमः सप्तदशभेदः ॥इति।

तथा-तपः-तप्यन्ते रसरुधिरादीनि अशुभकर्माणि वाऽनेनेति तपः ।

उक्तंच-" रसरुधिरमांसमेदोस्थिमज्जशुक्राण्यनेन तप्यन्ते ।

कर्माणि वाऽशुभानीत्यतस्तपो नाम नैरुक्तम् " ॥इति।

आस्रवसे विरमण-विरक्त होने रूप जो आत्मपरिणति है, वह संयम है। इस प्रकारका भी संयम १७ प्रकारका कहा गया है-जैसे " पञ्चास्रवाद् विरमणं " संयमके सत्रह प्रकार इस तरहसे है-पूर्वोक्त पांच स्थावर जीवोंके और चार त्रस जीवोंके विषयमें यतना रखना नौ तो ये संयमके भेद हुए तथा अजीवके विषयमें संयम प्रेक्षा संयम, उत्पेक्षा संयम प्रमार्जन संयम परिष्ठापन संयम एवं मनका संयम वचनका संयम और कायसंयम एवं आठ भेद ये हुए, इस प्रकारसे १७ भेद ये संयमके " पुढविदग " आदि गाथा द्वारा प्रकट किये गये हैं, तथा पांच आस्रवोंसे विरक्त होना पांच इन्द्रियोंका निग्रह करना उन्हें वशमें रखना-चार कषायोंका जीतना एवं मन वचन कायकी अशुभ क्रियाओंसे विरक्त होना, इस प्रकारसेभी ये १७ प्रकारके संयमके भेद प्रकट किये गये हैं, जिसके द्वारा शरीरगत रस रुधिर आदि अथवा अशुभ कर्म तपाये जाते हैं, वह तप है। कहा भी है-" रस-

---

જે આત્મપરિણતિ છે, તેને સંયમ કહે છે. આ પ્રકારના સંયમના પણ ૧૭ સત્તર પ્રકાર કહ્યા છે. જેમકે " पञ्चास्रवाद्विरमण " ઈત્યાદિ—સંયમના ૧૭ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ સ્થાવર જીવોના વિષયમાં યતના રાખવી, ચાર પ્રકારના ત્રસ જીવોની યતના કરવી, આ પ્રકારે નવ ભેદ સમજવા બાકીના આઠ ભેદ નીચે પ્રમાણે છે-પ્રેક્ષા સંયમ, ઉત્પ્રેક્ષા સંયમ, પ્રમાર્જન સંયમ, પરિષ્ઠાપન સંયમ, મન સંયમ, વચન સંયમ, કાય સંયમ અજીવના વિષયમાં સંયમ " पुढविदग " ઈત્યાદિ ગાથા દ્વારા સંયમના સત્તર ભેદ અહીં પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે તથા પાંચ આસ્રવોથી વિરક્ત થવું, પાંચ ઇન્દ્રિયોનો નિગ્રહ કરવો-તેમને વશ રાખવી, ચાર કષાયોને જીતવા અને મન, વચન અને કાયાની અશુભ ક્રિયાઓથી વિરક્ત થવું, એ પ્રકારનો આસ્રવોથી વિરક્ત થવા રૂપ જે સંયમ છે તેના પણ ૧૭ સત્તર ભેદ પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે. જેના દ્વારા શરીરમાં રહેલા રસ, રુધિર આદિને અથવા અશુભ કર્મને તપાવવામાં આવે છે, તેને તપ કહે છે. કહ્યું પણ છે કે " रसरुधिर-

एतच्च बाह्याभ्यन्तरभेदेन द्वादशविधं भवति
तदुक्तम्-" अणसणमूणोयरिया, वित्तीसंखेवणं रसच्चाओ।
कायकिलेसो संलीणया य बज्झो तवो होइ ॥१॥
पायच्छित्तं विणओ, वेयावच्चं तहेव सज्झाओ ।
झाणं उस्सग्गो वि य, अब्भितरओ तवो होइ ॥२॥"
छाया-अनशनमूनोदरिका वृत्ति संक्षेपणं रसत्यागः ।
कायक्लेशः संलीनता च बाह्यं तपो भवति ॥१॥
प्रायश्चित्तं विनयो वैयावृत्त्यं तथैव स्वाध्यायः ।
ध्यानं व्युत्सर्गोऽपि च आभ्यन्तरिकं तपो भवति ॥२॥ इति।

तथा-त्यागः-त्यजनं-प्रदान-त्यागः-सांभोगिकेभ्यो भक्तादिदानं तदितरेभ्यः श्राद्धादिकुलप्रदर्शनं च।
तदुक्तम्—" तो कय पच्चक्खाणो, आयरियगिलाणबालवुड्ढाणं ।
देज्जाऽसणाइ संते, लाभे कयवीरियायारो ॥१॥

रुधिरमांसमेदो " इत्यादि । इसका अर्थ स्पष्ट है। यह तप बाह्यतप और आभ्यन्तर तपके भेदसे दो प्रकारका होता है-बाह्यतप और आभ्यन्तर तपके भेद इस प्रकारसे हैं-" अणसणमूणोयरिया " इत्यादि। अनशन १ ऊनोदर २ वृत्तिसंक्षेप ३ रसत्याग ४ कायक्लेश ५ और संलीनता ये बाह्यतपके ६ भेद हैं।

- प्रायश्चित्त १ विनय २ वैयावृत्त्य ३ स्वाध्याय ४ ध्यान ५ और व्युत्सर्ग ६ ये आभ्यन्तर तपके ६ भेद हैं।

सांभोगिक साधुजनोंके लिये भक्तादि लाकर देना और इनसे भिन्न साधुओंको श्रावक आदिकोंका घर दिखाना यह त्याग है, तदु-

---

मांसमेदो " ઈત્યાદિ-તેનો અર્થ સ્પષ્ટ છે. આ તપના મુખ્ય બે ભેદ છે—બાહ્ય તપ અને આભ્યન્તર તપ બાહ્ય તપના નીચે પ્રમાણે છ ભેદ કહ્યા છે " अणसणमूणोयरिया " ઈત્યાદિ—

(૧) અનશન, (૨) ઊણોદરી, (૩) વૃત્તિસંક્ષેપ, (૪) રસત્યાગ (૫) કાયકલેશ અને (૬) સંલીનતા.

આભ્યન્તર તપના નીચે પ્રમાણે છ ભેદ કહ્યા છે—(૧) પ્રાયશ્ચિત્ત, (૨) વિનય, (૩) વૈયાવૃત્ય, (૪) સ્વાધ્યાય, (૫) ધ્યાન અને (૬) ઉત્સર્ગ.

સાંભોગિક સાધુઓને માટે આહાર પાણી લાવી દેવાં અને સાંભોગિક ન હોય એવા સાધુઓને શ્રાદ્ધ (શ્રાવક) આદિકોનાં ઘર બતાવવા તેનું નામ

संविग्ग अन्नभोइयाण देसिज्ज सड्ढगकुलाणि ।
अतरंतो वा संभोइयाण देसे जहसमाही ॥२॥"

छाया—ततः कृतप्रत्याख्यानआचार्यग्लानबालवृद्धेभ्य. ।
दद्यात् अशनादि सति लाभे कृतवीर्याचारः ॥१॥
संविग्नान्यभोगिकेभ्यो देशयेत् श्राद्धककुलानि ।
अशक्तोवा (स्वयं) सांभोगिकेभ्यो देशयेत् यथासमाधि ॥२॥इति।

ब्रह्मचर्यवासः-ब्रह्मचर्ये-मैथुनविरमणरूपे वासः=अवस्थानम्, ब्रह्मचर्येण वा वासः । इत्थं क्षान्त्यादि ब्रह्मचर्यवासान्तो दशविधः श्रमणधर्म प्रोक्तः ॥

सम्प्रति वृत्तिसंक्षेपनामकस्य धर्मरूपबाह्यतपोविशेपस्य भेदानाह-"उक्खित्तचरए" इत्यादिना । उत्क्षिप्तचरकः-उत्क्षिप्तम्-गृहस्थेन स्वार्थं पाकभाज-

---

क्तम्-" ता कयपच्चक्खाणो " इत्यादि । इन श्लोकोंका भाव ऐसा है कि जिसने प्रत्याख्यान कर लिया है, ऐसा साधु आचार्य ग्लान एवं वृद्ध साधुजनोंके लिये भिक्षा लाकर देवे तथा अपने सांभोगिक साधुओंसे अन्य सांभोगिक साधुओंके लिये वह श्रावकके घरोंको बतावे और यदि वह स्वयं अशक्त हो, तो सांभोगिकके लिये अपनी समाधिके अनुसार श्रावकोंके घरोंको बतावे ब्रह्मचर्यमें-मैथुनविरमणरूप व्रतमें-जो वास अवस्थान है, वह या ब्रह्मचर्यसे जो रहता है, वह ब्रह्मचर्यवास है, इस प्रकार यह क्षान्तिसे लेकर ब्रह्मचर्य तक दश प्रकारका श्रमण धर्म कहा गया है.

अब सूत्रकार साधुका धर्मरूप जो वृत्ति संक्षेप नामका बाह्यतप है, उसके भेदोंका कथन-"उक्खित्तचरए" इत्यादि सूत्रद्वारा करतेहैं-

---

ત્યાગ છે. કહ્યું પણ છે કે " तोकयपच्चक्खाणो " ઈત્યાદિ આ શ્લોકનો ભાવાર્થ એવો છે કે જેણે પ્રત્યાખ્યાન કરી લીધાં છે એવો સાધુ આચાર્ય, ગ્લાન અને વૃદ્ધ સાધુઓને માટે ભિક્ષા વહોરી લાવીને તેમને આપી દે. તથા પોતાના સાંભોગિક સાધુઓને, અન્ય સાંભોગિક સાધુઓ માટે આહાર પાણી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય શ્રાવકના ઘરો બતાવે અને જો પોતે અશક્ત હોય, તો સાંભોગિકને પોતાની સમાધિ અનુસાર શ્રાવકોનાં ઘરો બતાવે તેને તથા બ્રહ્મચર્યમાં-મૈથુન વિરમણ રૂપ વ્રતમાં જે વાસ (અવસ્થાન) છે તેને બ્રહ્મચર્યવાસ કહે છે. એટલે કે બ્રહ્મચર્યના પાલનપૂર્વક રહેવું તેનું નામ બ્રહ્મચર્યવાસ છે. આ પ્રકારના ક્ષાન્તિથી લઈને બ્રહ્મચર્ય પર્યન્તના દસ પ્રકારના શ્રમણ ધર્મ કહ્યા છે.

હવે સૂત્રકાર સાધુના ધર્મરૂપ જે વૃત્તિસંક્ષેપ નામનું બાહ્યતપ છે, તેના

नाद् यद् भोजनम् उद्घृतम् अभिग्रहवशात् तद् गवेषयितुं यश्चरति सः । तथा-निक्षिप्तचरकः-निक्षिप्तं=पाकपात्रादुद्धृत्यान्यभाजने स्थापितं तद्ग्रहणाय अभिग्रहवशाद् यश्चरति सः । तथा-अन्तचरकः-यो भिक्षुरभिग्रहविशेषाद् अन्तं-कोद्रवादिनिस्सारधान्यरूपमाहारं गवेषयितुं चरति सः । तथा-प्रान्तचरकः प्रान्तं=पर्युषिततक्रमिश्रितवल्लचणकादिरूपभोजनं गवेषयितुमभिग्रहवशाद् यश्चरति सः । तथा-रूक्षचरकः-योऽभिग्रहविशेषवशाद् रूक्षं=निः

श्रमण भगवान् द्वारा ये पांच स्थान यावत् अभ्यनुज्ञात हुए हैं-आज्ञा दी है जैसे-उत्क्षिप्तचरक १ निक्षिप्तचरक २ अन्तचरक ३ प्रान्तचरक ४ एवं रूक्षचरक ५ इनमें गृहस्थके द्वारा अपने लिये पाक भाजनसे जो भोजन दूसरे भाजनमें रख लिया हो, साधु अभिग्रहवशासे उसकी गवेषणाके लिये जो विचरण करताहै, वह उत्क्षिप्तचरकहै१। पाक भाजनसे उठाकर अन्य पात्रमें स्थापित किया भोजन निक्षिप्त हैं, उसे ग्रहण करनेके लिये जो साधु अभिग्रहवशासे विचरण करता है, वह निक्षिप्तचरक है२। जो भिक्षु अभिग्रह विशेषके वश कोद्रवादि निस्सार धान्यरूप आहारकी गवेषणा करनेके लिये विचरण करता है, वह अन्नचरक है ३। जो भिक्षु अभिग्रहवशासे पर्युषित ठंडा (वासी) छाछ मिश्रित वालचना आदि अन्नरूप भोजनकी गवेषणा करनेके लिये विचरण करता

ભેદોનું કથન કરે છે-" उक्खित्तचरए " ઈત્યાદિ—શ્રમણ ભગવાન મહાવીર દ્વારા નીચેના પાંચ સ્થાન વર્ણિત, કીર્તિત આદિ રૂપ ગણાવ્યા છે—(૧) ઉત્ક્ષિપ્ત ચરક, (૨) નિક્ષિપ્ત ચરક, (૩) અન્ત ચરક, (૪) પ્રાન્ત ચરક અને (૫) રૂક્ષ ચરક

ગૃહસ્થે પાક ભોજનમાંથી (જેમાં કોઈ ભોજન બનાવ્યું હોય તે પાત્રમાંથી) બીજા ભાજનમાં જે ભોજન મૂકી રાખ્યું હોય એવાં ભોજનની ગવેષણાને માટે વિચરણ કરતા સાધુને ઉત્ક્ષિપ્ત ચરક કહે છે. આ પ્રકારનું ભોજન ગ્રહણ કરવાનો તેણે અભિગ્રહ કર્યો હોયછે.

પાક ભાજનમાંથી લઈને અન્ય પાત્રમાં સ્થાપિત કરી નાખવામાં આવેલા ભોજનને નિક્ષિપ્ત કહે છે. એવા ભોજનને ગ્રહણ કરવાના અભિગ્રહપૂર્વક જે સાધુ વિચરણ કરે છે, આહારની ગવેષણા કરે છે, તેને નિક્ષિપ્ત ચરક કહે છે જે સાધુ અભિગ્રહ વિશેષને લીધે કોદરા આદિ નિઃસાર ધાન્યરૂપ આહારની ગવેષણા કરવાને માટે વિચરણ કરે છે, તે સાધુને અન્તચરક કહે છે. જે ભિક્ષુ અભિગ્રહપૂર્વક પર્યુષિત ઠંડા (વાસી) છાશમિશ્રિત, વાલ, ચણા આદિ અન્નરૂપ ભોજનની ગવેષણા કરવાને માટે વિચરણ કરે છે, તેને પ્રાન્ત-

स्नेहमाहारं गवेषयितुं चरति सः। रुक्षाहारमात्रग्रहणशीलो भिक्षुरित्यर्थः। तथा-अज्ञातचरकादीनि पञ्च स्थानान्येवं विज्ञेयानि, तत्र-अज्ञातचरक -अज्ञातः=अनुपदर्शितसौजन्यादि भावःसन् योऽभिग्रहवशाद् भिक्षार्थं चरति,अज्ञातेषु वा गृहेषु तथाविधाभि ग्रहवशाद् भिक्षार्थं यश्चरति सः। तथा-अन्नग्लायकचरः-अन्नं विना ग्लायति-म्लायति यः सोऽन्नग्लायकः अभिग्रहवशात्तथाविधः सन् आहारार्थं यश्चरति सः-रात्रिपर्युषितान्नभोजीत्यर्थः तथा-मौनचरः-अभिग्रहवशाद् यो मौनेन भिक्षार्थं

है, वह प्रान्तचरक है४। जो भिक्षु अभिग्रह वशासे निःस्नेह (विगय रहित) आहारकी गवेषणाके लिये विचरण करता है, वह रुक्षचरक है५। रुक्षचरक भिक्षु रुक्ष आहार मात्रको ग्रहण करनेवाला होना है-तथा अज्ञात चरक आदि जो पांच स्थान हैं, वे इस प्रकारसे हैं, जो भिक्षु अपने सौजन्यादि भावको दिखाये विनाही अभिग्रहवशासे भिक्षाके लिये भ्रमण करताहै, वह१ अथवा अज्ञात घरोंमें तथाविध अभिग्रहके वशासे भिक्षाके लिये भ्रमण करता है, वह अज्ञातचरक है २। अन्नके विना जो म्लानमुख हो जाता है, कुम्हलासा जाता है, ऐसा वह भिक्षु अन्नग्लायक है, ऐसा वह अन्नग्लायक भिक्षु अभिग्रहके वशासे जो तथाविध होता हुआ आहारके लिये भ्रमण करता है, वह अन्नग्लायकचर है २, यह अन्नग्लायकचर रात्रि पर्युषित (वासी) अन्नका भोगी होता है, अर्थात् खट्टी छाछमें मिलाया हुआ वाल चणा आदिके बने हुए वासी

ચરક કહે છે. જે સાધુ અભિગ્રહપૂર્વક નિઃસ્નેહ-ઘી, તેલ આદિ સ્નિગ્ધતાથી રહિત-આહારની ગવેષણાને માટે વિચરણ કરે છે તેને રૂક્ષચરક કહે છે. તે માત્ર રૂક્ષ (લૂખા) આહારને જ ગ્રહણ કરે છે.

તથા અજ્ઞાત ચરક આદિ જે પાંચ સ્થાન છે તેનું સૂત્રકાર હવે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—જે સાધુ પોતાના સૌજન્ય આદિ ભાવોને દેખાડયા વિના જ અભિગ્રહ ધારણ કરીને ભિક્ષાને માટે ભ્રમણ કરે છે તેને અજ્ઞાતચરક કહે છે, અથવા અજ્ઞાત ઘરોમાંથી જે ભિક્ષા પ્રાપ્ત કરવાનો અભિગ્રહ ધારણ કરીને ભિક્ષાને માટે ભ્રમણ કરે છે તેને અજ્ઞાતચરક કહે છે.

અન્ન વિના જે સાધુ મ્લાનમુખ થઈ જાય છે, જેનું મુખ જાણે કે કરમાઈ જાય છે, એવા ભિક્ષુને અન્નગ્લાયક કહે છે. એવો તે અન્નગ્લાયક ભિક્ષુ અભિગ્રહ વિશેષને અધીન રહીને તે પ્રકારની સ્થિતિ થવા છતાં પણ ભ્રમણ કર્યા કરે છે, એવા ભિક્ષુને અન્નગ્લાયકચર કહે છે. તે અન્નગ્લાયક ચાર રાત્રિપર્યુષિત (વાસી) અન્નનો ભોગી હોય છે. એટલે કે ખાટી છાશ આદિ વડે

चरति सः । तथा-संसृष्टकल्पिकः-संसृष्टेन=खरण्टितेन हस्तभाजनादिना दीयमानस्यैव भक्तादेर्ग्रहणे कल्पो नियमोऽभिग्रहवशाद् यस्य सः, तथाविधाभिग्रहविशेषधारकः साधुरित्यर्थः तथा-तज्जातसंसृष्टकल्पिकः-तज्जातेन=देयद्रव्याविरोधिना दातव्यद्रव्येणैवेत्यर्थः यत् संसृष्टं=खरण्टितं हस्तभाजनादि, तेन दीयमानस्यैव भक्तादेर्ग्रहणे कल्पो=नियमोऽभिग्रहवशाद् यस्य सः । तथा-औपनिधिकादीनि पञ्च स्थानान्येवं विज्ञेयानि, तथाहि-औपनिधिकः-उपनिधीयते इत्युपनिधिः-प्रत्यासन्नं यथाकथंचिदानीतं, न तु साधर्थं, तेन यश्चरति अभिग्रहवशात् स औपनिधिकः । यद्वा-औपनिहित इति च्छाया । उपनिहितं=

अन्नकी गवेषणा करता है, जो भिक्षु अभिग्रह विशेषसे मौनपूर्वक भिक्षाके लिये भ्रमण करता है, वह मौनचर है, तथा जिसका संसृष्ट अन्नादि भरे हुए हस्त भाजन आदिसे दिये गयेही आहार आदिको लेनेका कल्प नियम है, ऐसा वह तथाविध अभिग्रहका धारी साधु संसृष्ट कल्पिक है, तथा जिस साधुका देने योग्य द्रव्यसेही संसृष्ट हुए हस्त भाजनादिसे दिये जाते ही भक्तादिके ग्रहणमें अभिग्रहवश नियम है, वह साधु तज्जात संसृष्ट कल्पिक है, तथा-औपनिधिकादि पांच स्थान इस प्रकारसे है-औपनिधिक १ शुद्धैपणिक २ संख्यादत्तिक ३ दृष्ट लाभिक ४ और पुष्ट लाभिक ५ इनमें जो भिक्षु दाता अपने पासमें भोजनके समय अन्नादि रखा हो उस अन्नादिको लेनेके लिये नियमवाला होता है, वह या जो चाहे जिस किसी तरहसे लाये गये आहार

મિશ્રિત વાલ, ચણા આદિ વાસી અન્નની ગવેષણા કરે છે જે સાધુ અભિગ્રહ વિશેષ ધારણ કરીને મૌનપૂર્વક ભિક્ષાને માટે ભ્રમણ કરે છે, તેને મૌનચર કહે છે. જેણે સંસૃષ્ટ અન્નાદિ ભરેલા હસ્તભાજન આદિ વડે દેવામાં આવેલ આહાર આદિને ગ્રહણ કરવાનો કલ્પ (નિયમ) કરેલો છે, એવા પ્રકારના અભિગ્રહધારી સાધુને સંસૃષ્ટ કલ્પિક કહે છે. અર્પણ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યથી જ સંસૃષ્ટ એવા હસ્ત ભાજનાદિ વડે આપવામાં આવતા આહારાદિને જ ગ્રહણ કરવાનો જેણે અભિગ્રહ ધારણ કરેલો છે એવા સાધુને 'તજ્જાત સંસૃષ્ટ કલ્પિક કહે છે. તથા ઔપનિધિક આદિ પાંચ સ્થાન આ પ્રમાણે છે—

(૧) ઔપનિધિક, (૨) શુદ્ધૈષનિક, (૩) સંખ્યાદત્તિક, (૪) દષ્ટલાભિક અને (૫) પુષ્ટલાભિક. દાતાએ ભોજન કરતી વખતે જે અન્નાદિને પોતાની પાસે રાખેલ હોય તે અન્નાદિને જ ગ્રહણ કરવાના નિયમવાળો જે સાધુ હોય છે તેને અથવા તેણે જે પ્રકારનો અભિગ્રહ કર્યો હોય તે પ્રકારે આહાર

यथाकथंचिदानीतं, तेन यश्चरति अभिग्रहवशात् सः। मल्लादित्वादण्प्रत्ययेन प्रयोगसिद्धिः। तथा–शुद्धैषणिकः–शुद्धैषणा=शुद्धस्य=निर्व्यञ्जनस्य भक्तादेरेषणा, तया यश्चरति अभिग्रहवशात् सः। तथा–संख्यादत्तिकः–संख्याप्रधानाः–एकद्वित्र्यादि संख्यापरिमिता दत्तयः=दीयमानाहारादेरविच्छिन्नरूपेण–निक्षेपरूपाः ता ग्राह्या यस्य सः, तथाविधाभिग्रहधारकः साधुः। दत्तिलक्षणं तु—

" दत्ती उ जत्तिए वारे, खिवई होंति तत्तिया।
अव्वोच्छिन्न णिवायाओ, दत्ती होइ दवेयरा ॥१॥"

छाया–दत्तयस्तु यावतो वारान् क्षिपति भवन्ति तावत्यः।
अव्युच्छिन्ननिपाताद् दत्ति र्भवति द्रवेतरा ॥१॥ इति।

द्रवेतरा=पानीयान्नरूपा। तथा–दृष्टलाभिकः–दृष्टस्यैव भक्तादेर्लाभः–यद्वा–दृष्टात्–प्रथमदृष्टादेव दातुर्गृहाद्वा लाभो दृष्टलाभः यदर्थं योऽभिग्रह-

---

आदि वस्तुको लेनेका अभिग्रहवाला होता है, वह औपनिधिक या औपनिहित भिक्षु है, जिस भिक्षुका ऐसा नियम है, कि मैं निर्व्यञ्जनही आहार लूंगा, वह इस प्रकारके आहारकी गवेषणा करनेवाला साधु शुद्धैषणिक है, जिस साधुका ऐसा अभिग्रह है, कि मैं दिये जाते हुए आहारकी अविच्छिन्न रूपसे पात्रमें डाली गई दो तीन आदि दत्तियांही लूंगा ऐसा वह तथाविध आहारका अभिग्रहधारी साधु संख्यादत्तिकहै, दत्तिका लक्षण इस प्रकारसेहै–"दत्ती उ जत्तिए वारे" विना किसी व्यवधानके अन्नपानी जितनी वार दाता पात्रमें डालताहै, वह दत्तिहै, जिस भिक्षुका ऐसा नियम है, कि मैं देखे गयेही भक्तादिको लूंगा, या प्रथम दृष्ट दाताके गृहसेही आहार लूंगा, इस प्रकारका अभिग्रहधारी वह

આદિને ગ્રહણ કરવાના નિયમવાળો હોય છે, તેને ઔપનિધિક અથવા ઔપનિહિત ભિક્ષુ કહે છે જે સાધુનો એવો અભિગ્રહ હોય છે કે હુ નિર્વ્યંજન આહારને જ ગ્રહણ કરીશ, અને તે પ્રકારની આહારની તે ગવેષણા કરતો હોય, તો તેને શુદ્ધૈષણિક કહે છે. જે સાધુએ એવો અભિગ્રહ કર્યો હોય કે હુ અવિચ્છિન્ન રૂપે પાત્રમાં નંખાયેલી આહારની એક, બે, ત્રણ એમ અમુક દત્તિયો જ ગ્રહણ કરીશ, એવા અભિગ્રહધારી સાધુને સંખ્યાદત્તિક કહે છે દત્તિનું સ્વરૂપ નીચે પ્રમાણે કહ્યું છે—

" દત્તી ઉ જત્તિએ વારે " ઈત્યાદિ કોઈ પણ જાતના વ્યવધાન વિના (આંતરા વિના) દાતા અન્નપાણી આદિને સાધુના પાત્રમાં નાખે તો એક દત્તી ગણાય. આંતરો પડે ત્યારે બીજી દત્તી ગણાય જે ભિક્ષુનો એવો નિયમ હોય કે હુ મારી નજરે દેખાય એવી જગ્યાએથી લાવવામાં આવેલા આહા-

वशाच्चरति सः । तथा-पृष्टलाभिकः-पृष्टस्यैव-' हे साधो ! किं भवते दीयते ?' इत्यादिरूपेण प्रश्नितस्यैव सार्थको लाभः, तदर्थं यश्चरति सः । सम्प्रति आचामाम्लिकादि विषयाणि पञ्च स्थानान्याह आचामाम्लिकः-विकृतिरहितस्य अचित्ते जले क्षिप्तस्य भर्जितचणकाद्यन्नस्य मध्याह्ने एकवारमाहरणम्-आचामाम्लं, तेन यश्चरति-अभिग्रहवशात् सः । तथा-नैर्विकृतिकः-निर्गता विकृतयो घृतादिरूपा यस्मात् स आहारो निर्विकृतिकः, तेन चरति यः सः । तथा-पौर्वार्द्धिकः-पूर्वार्द्ध=पूर्वाह्णे एवाभिग्रहवशात् भिक्षार्थं यश्चरति सः । तथा-परिमितपिण्डपातिकः

साधु दृष्टलाभिक है । तथा जिस साधुका नियम है, कि मैं जब कोई मुझसे ऐसा पूछेगा कि हे भिक्षो ! आपके लिये मैं क्या दूं तो ही आहार आदि ग्रहण करूंगा, वह इस प्रकारके अभिग्रहसे युक्त होकर उसकी गवेषणा करनेवाला साधु पृष्ठ लाभिक साधु है,

अब आचामाम्लिक आदि विषयक जो पांच स्थान कहे गयेहैं, उनका स्पष्टीकरण किया जाताहै-विकृति रहित अर्थात् लूखे अन्न आदि अथवा भुने हुए चणेको अचित्त जलमें डाल कर दो पहरमें एकवार भोजन करना यह आचामाम्लहै, ऐसा आचामाम्ल जो करताहै, वह आचामाम्लिकहै, जिस आहारमें घृतादिरूप विकृति (विगय) नहींहै, ऐसा वह आहार निर्विकृतिक है, इस प्रकारके आहारकी जो अपने नियमके अनुसार गवेषणा करनेके लिये विचरण करता है, वह नैर्विकृतिक है, तथा जिसका

રને જ ગ્રહણ કરીશ અથવા જે દાતા પ્રથમ નજરે પડશે તેને ત્યાંથી જ આહાર ગ્રહણ કરીશ એવા અભિગ્રહધારી ભિક્ષુને દષ્ટલાભિક કહે છે જ્યારે કોઈ ભિક્ષુ એવો નિયમ કરે છે કે કોઈ દાતા જ્યારે મને એવું પૂછશે કે "હે ભિક્ષો ! હુ આપને માટે શું અર્પણ કરું ?" ત્યારે જ હું તેને ત્યાંથી આહાર ગ્રહણ કરીશ, આ પ્રકારના અભિગ્રહપૂર્વક તેની ગવેષણા કરતા સાધુને પૃષ્ટલાભિક કહે છે. હવે આચામામ્લિક આદિ વિષયક જે પાંચ સ્થાન કહ્યાં છે, તેમનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—

વિકૃતિ રહિત એટલે કે લુખાં અન્ન આદિનું અથવા શેકેલા ચણાને અચિત્ત પાણીમાં પલાળી રાખીને બે પ્રહરમાં એક વાર ભોજન કરવું તેનું નામ આચામામ્લ છે. એવું આચામામ્લ જે કરે છે તેને આચામામ્લિક કહે છે જે આહારમાં ઘી આદિ રૂપ વિકૃતિનો અભાવ છે તે આહારને નિર્વિકૃતિક કહે છે આ પ્રકારના અભિગ્રહપૂર્વક જે ભિક્ષુ આહારની ગવેષણા કરવાને માટે વિચરણ કરે છે, તેને નિર્વિકૃતિક ભિક્ષુ કહે છે પૂર્વાહ્ણકાળ

परिमितो यः पिण्डपातः=भक्तादिलाभः स परिमितपिण्डपातः, तेन चरति यः सः। तथा–भिन्नपिण्डपातिकः–भिन्नस्य=खण्डीभूतस्य पिण्डस्य=मोदकादेः पातो लाभः–भिन्नपिण्डपातः, तदर्थमभिग्रहवशाद् यश्चरति सः। तथाविधाभिग्रहधारकः साधुरित्यर्थः। सम्प्रति–अरसाहारादिविषयाणि पञ्च स्थानान्याह–अरसाहारः–अरसः=हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतः, स आहारो यस्य सः। हिङ्ग्वाद्यसंस्कृताहारग्रहणाभिग्रहवान भिक्षुरित्यर्थः। तथा–विरसाहारः–विरसः–विगतरसः

ऐसा नियम है, कि मैं पूर्वाह्नकालमें ही भिक्षाके लिये जाऊंगा, इस प्रकारके नियमसे बद्ध होकर जो साधु पूर्वाह्न कालमेंही भिक्षाके लिये उपाश्रयसे निकलता है, वह पौर्वाह्निक साधु है। तथा जिस साधुका ऐसा नियम है कि मैं परिमित पिण्डकाही आहार लूंगा, इस नियमसे बद्ध होकर जो भिक्षाके लिये विचरण करता है, वह साधु परिमितपिण्डपातिकहै, तथा जिसका ऐसा नियमहै, कि मोदकादिक (लड्डु) खण्ड २ किये जाने परही मैं आहारके निमित्त ग्रहण करूंगा, इस प्रकारके नियमसे युक्त होकर जो उस प्रकारके आहारकी गवेषणा करनेके लिये विचरण करता है, वह भिन्नपिण्डपातिक साधु है, अरसाहारादि विषयक जो पांच स्थान कहे गये हैं, वे इस प्रकारसे हैं–अरसाहार हिंगु आदिसे असंस्कृत हुए आहारकोही मैं लूंगा, इस प्रकारके नियमसे बद्ध होकर जो साधु इसी प्रकारके आहारकी गवेषणा करनेके लिये दाताओंके गृह पर भ्रमण करता है, वह अरसाहार भिक्षु है, अर्थात् अरसाहारी साधु अरसाहार है। जो साधु विरस विगत रसवाले पुराने

માં જ ભિક્ષા પ્રાપ્તિ માટે હું નીકળીશ, આ પ્રકારના નિયમપૂર્વક જે ભિક્ષુ પૂર્વાહ્નકાળે જ ભિક્ષા પ્રાપ્તિ માટે ઉપાશ્રયમાંથી નીકળે છે, તેને પૌર્વાહ્નિક સાધુ કહે છે. જે સાધુનો એવો નિયમ છે કે હું પરિમિત પિંડ જ (અમુક પ્રમાણમાં જ) આહાર ગ્રહણ કરીશ, આ પ્રકારના નિયમપૂર્વક ગોચરીને માટે વિચરણ કરતા સાધુને પરિમિતપિંડપાતિક કહે છે. જે સાધુનો એવો નિયમ છે કે હું લાડુ આદિ આહારના કકડા કર્યા બાદ જ તેને ગ્રહણ કરીશ, તો તે પ્રકારના નિયમપૂર્વક તે પ્રકારના આહારની ગવેષણા કરતા સાધુને ભિન્નપિંડપાતિક કહે છે.

અરસ આહારાદિ વિષયક જે પાંચ સ્થાન કહ્યાં છે તે નીચે મુજબ છે— હિંગ આદિથી રહિત આહારને જ હું ગ્રહણ કરીશ, આ પ્રકારના નિયમપૂર્વક જે સાધુ આ પ્રકારના આહારની ગવેષણા કરવા નિમિત્તે દાતાઓને ઘેર જાય છે, તે સાધુને અરસાહારી ભિક્ષુ કહે છે. જે સાધુ વિરસ (રસ રહિત)

पुराणधान्यकुलत्थादिनिष्पन्न आहारो यस्य सः। अन्ताहारः-अन्तः-कोद्रवादि निस्सारधान्यनिष्पन्नः आहारो यस्य सः। प्रान्ताहारः-प्रान्तः-पर्युषिततक्रमिश्रितवल्लचणकादिरूपः आहारो यस्य सः। रूक्षाहारः-रूक्षःनिःस्नेहः-घृतादिरहित आहारो यस्य सः। तथा-अरसजीव्यादि विषयानि पञ्च स्थानानि प्राह-अरसे जीवी-अरसेन आहारेण जीवितुं शीलमस्येति, मरणपर्यन्तम् अरसाहाराभिग्रहधारको मुनिः। एवमेव विरसजीव्यादिस्थानचतुष्टयमपि भावनीयम्। सम्प्रति-स्थानातिगादि विषयाणि पञ्च स्थानान्याह-स्थानातिगः-स्थानं=कायोत्सर्गम् अतिगच्छति=प्रकरोति यः सः, कायोत्सर्गकारीत्यर्थः। 'स्थानातिदः'

धान्य कुलत्थादिसे बने हुए आहारको लेता है, वह विरसाहार है, कोद्रवादिरूप निस्सार धान्यसे निष्पन्न हुए आहारको ग्रहण करता है, वह अन्ताहार है। प्रान्ताहारवाला वह साधु है, जो पर्युषित तक्रमिश्रितवल्ल चना आदिकाही आहार लेता है। तथा रूक्षाहारवाला वह साधु है, जो घृतादि स्नेहसे रहित आहारको लेता है। अरस जीवी आदि पांच स्थान इस प्रकारसे हैं-जिसका जीवन पर्यन्त तकका ऐसा नियम है, कि मैं रसविहीनही आहार लूंगा वह भिक्षु अरस जीवी है। इसी प्रकारसे विरसजीवी आदि चार स्थान समझ लेना चाहिये स्थानातिग आदि पांच स्थान इस प्रकारसे हैं-जो साधु कायोत्सर्ग करता है, वह स्थानातिग साधु है "स्थानातिद" ऐसी छायाके पक्षमें

-કળથી આદિ જુના ધાન્યમાંથી નિર્મિત (બનાવેલ) આહારને જ ગ્રહણ કરવાના નિયમપૂર્વક તે પ્રકારના આહારની ગવેષણા કરતો વિચરે છે, તેને વિરસાહારી સાધુ કહે છે જે સાધુ કોદરા આદિ નિસ્સાર ધાન્યમાંથી તૈયાર કરેલા આહારને જ ગ્રહણ કરે છે, તેને અન્તાહારી કહે છે જે સાધુ વાસી છાશમિશ્રિત વાલ, ચણા આદિનો જ આહાર કરે છે તેને પ્રાન્તાહારી કહે છે. જે સાધુ ઘી આદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થોથી રહિત વસ્તુઓનો જ આહાર ગ્રહણ કરે છે તેને રૂક્ષાહારી કહે છે.

અરસજીવી આદિ પાંચ સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે—જેણે એવો નિયમ કર્યો છે કે હુ જીવનપર્યન્ત રસવિહીન આહાર જ લઈશ, એવા સાધુને અરસજીવી કહે છે. એ જ પ્રમાણે વિરસજીવી આદિ ચાર સ્થાનો વિષે પણ સમજી લેવું જોઈએ.

સ્થાનાતિગ આદિ પાંચ સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે—જે સાધુ કાયોત્સર્ગ કરે છે, તે સ્થાનાતિગ સાધુ છે. સ્થાનાતિગની સસ્કૃત છાયા "સ્થાનાતિદ"

इतिच्छायापक्षे तु-स्थानम् अतिददाति-इति विग्रहः, अर्थस्तु स एव । तथा-उत्कुटुकासनिकः-उत्कुटुकासनम्-पुतस्य अलगनेन उपवेशनम्, तद् यस्यास्ति सः । तथा-प्रतिमास्थायी-प्रतिमया=एकरात्रिक्यादिकया कायोत्सर्गविशेषरूपयैव तिष्ठतीत्येवं शीलो यः कायोत्सर्गे स्थितो भिक्षुरित्यर्थः। तथा-वीरासनिकः=वीरासनं=वीरस्येदमासन वीरासनं, यथा सिंहासनोपरि समुपविष्टस्य सिंहासनापनयने कृते सिंहासनोपविष्टवत् कायस्य य आकारो भवति तदाकारकमासनं वीरासनम्

"स्थानं अति ददाति" इति स्थानातिद, ऐसा विग्रह होता है, इसका अर्थ स्थानातिगके जैसाही है, उत्कुटुकासनिक-जो इस प्रकारसे है, कि वेठक जमीन पर जिस बैठनेमें नहीं लगती हैं, ऐसा आसन जिसका होता है, वह उत्कुटुकासनिक है, प्रतिमास्थायी-एक रात्रिक आदि कायोत्सर्ग विशेषरूप प्रतिमासे रहनेका जिसका स्वभाव है, ऐसा वह कायोत्सर्ग विशेषमें स्थित हुआ साधु प्रतिमास्थायी है, वीरासनिक-वीरके आसन जैसा आसन जिसका होता है, वह वीरासनिक है, सिंहासनके ऊपर बैठे हुए व्यक्तिके नीचेसे सिंहासनको हटा लेने पर बैठे हुएकी तरहसे हो जता है, ऐसा ही आकार जिस आसनमें होता है, वह वीरासन है। यह आसन अति कठिन होता है, वीर पुरुषही इस आसनको कर सकते हैं, ऐसा आसन जिसका होता है, वह वीरासनिक है। इस आसनमें कुरसी के जैसे आ-

લેવામાં આવે તો, "स्थानं अति ददाति इति स्थागातिदः" એવો વિગ્રહ થાય છે તેને અર્થ પણ સ્થાનાતિગ જેવો જ થાય છે "ઉત્કુટુકાસનિક" જે આસને બેસવાથી જાણે જમીન પર બેઠક જ ન જમાવી હોય એવું લાગે છે, એવા આસને જે સાધુ બેઠા હોય છે તેને ઉત્કુટુકાસનિક કહે છે આ આસનમાં ઉભડક બેસવું પડે છે.

"પ્રતિમાસ્થાયી"—એક રાત્રિક આદિ કાયોત્સર્ગ વિશેષરૂપ પ્રતિમા ધારણ કરીને રહેવાનો જેનો નિયમ છે એવા કાયોત્સર્ગ વિશેષમાં સ્થિત સાધુને પ્રતિમાસ્થાયી કહે છે.

"વીરાસનિક"—વીરના આસન જેવું જેનું આસન હોય છે, તેને વીરાસનિક કહે છે. સિંહાસન પર બેઠેલી વ્યક્તિના નીચેથી સિંહાસનને ખસેડી લેવાથી શરીરનો જેવો આકાર-સિંહાસન પર જ બેઠા હોય એવો આકાર જે આસનમાં થઈ જાય છે, તે આસનને વીરાસન કહે છે. તે આસન ઘણું જ કઠણ છે, વીર પુરુષ જ તે આસન કરી શકે છે એવું આસન જેનું હોય છે તેને વીરાસનિક કહે છે. આ આસને બેઠેલ માણુસનો આકાર ખુરસી જેવો

च्यते, अतिकठिनतया वीरपुरुषेणैवाचरणीयत्वात्, तदस्यास्ति सः । तथा—नैषधिकः—निषद्या=आसनविशेषरूपा, सा पञ्चधा भवति, तत्र—यस्यां पादयोः पुतयोश्च स्पर्शः समो भवति सा समपादपुता ॥ १ ॥ यस्यां तु गोरिवोपवेशनं भवति सा गोनिषधिका ॥ २ ॥ यस्यां तु पुताभ्यामुपविष्टः सन् एकं पादमुत्थाप्य आस्ते सा हस्तिशुण्डिका ॥ ३ ॥ पर्यङ्काऽर्धपर्यङ्के तु प्रसिद्धे एव ॥ ४ ॥ एतादृशी निषद्या=आसनं यस्य सः नैषधिकः । अथ दण्डायतिकादिविषयाणि पञ्चस्थानान्याह—

कारमें लुण्धका आकार बन जाता है, कुरसीके पीछेके दो पाद हटा देने पर और आगेके दो पैर रखने पर उसका जैसा आकार इस आसनमें होता है, यह आसन बहुत कठिनतासे युक्त होता है, नैषेधिक निषद्या आसनविशेष रूप होती है, यह पांच प्रकारकी है, जिस निषद्यामें दोनों चरणोंका और हाथोंका स्पर्श छूना समानरूपसे होताहै, वह समपादपूता निषद्याहै, जिस निषद्यामें गायके दूहनेके जैसा बैठा जाता है, वह गोनिषधिका है २ जिस निषद्यामें दोनों चरणोंको जमीन पर रखकर बैठना होता है, और एक पैरको उठाया जाता है, घुटनेको ऊंचा किया जाता है, वह हस्तिशुण्डिका निषद्या है ३ पर्यङ्कासन और अर्धपर्यङ्कासन ये दो आसन तो प्रसिद्धही हैं । ऐसी निषद्या आसन जिसके होते हैं, वह नैषधिक है, दण्डायतिक आदि पांच आसन इस

થઈ જાય છે. ખુરસીના પાછલા બે પાયા ખસેડી લેવાથી અને આગલા બે પાયા રહેવા દેવાથી તેનો જેવો આકાર થઈ જાય છે, તેવો જ આકાર આ આસને બેઠેલી વ્યક્તિનો થઈ જાય છે. તેથી જ આ આસને બેસવું ઘણું જ મુશ્કેલ ગણાય છે.

નૈષેધિક–નિષદ્યા આસન વિશેષરૂપ હોય છે, તે પાંચ પ્રકારની છે—(૧) જે આસનમાં બન્ને ચરણોનો અને હસ્તોનો સ્પર્શ સમાનરૂપે થાય છે, તેનું નામ 'સમપાદપૂતા નિષદ્યા' છે (૨) જે આસનમાં ગાયને દોતી વખતે બેસે તેમ બેસવામાં આવે છે, તે આસનને "ગોનિષધિકા" કહે છે. (૩) જે આસનમાં બન્ને ચરણોને જમીન પર રાખીને બેસવું પડે છે અને ત્યારબાદ એક પગને ઊંચો કરવામાં આવે છે–ઘુંટણને ઊંચો કરવામાં આવે છે, તે આસનને હસ્તિશુંડિકાનિષદ્યા કહે છે (૪) પર્યંકાસન અને અર્ધ પર્યંકાસન, આ બે આસન તો જાણીતાં છે. આ પ્રકારની નિષદ્યા (આસન) જેમની હોય છે, તેમને નૈષધિક કહે છે. દંડાયતિક આદિ પાંચ આસન નીચે પ્રમાણે છે—(૧) દંડાયતિક, (૨) લગંડશાયી, (૩) આતાપક, (૪) અપાવૃતક અને (૫) અકંડૂયક

दण्डायतिकः-दण्डस्येव आयतिः=दीर्घत्वं चरणप्रसारणेन यत्र भवति तद् दण्डायति, तदस्यास्ति सः। तथा-लगण्डशायी-लगण्डं=वक्रकाष्ठम्, तद्वत्-अर्थान्मस्तक पार्श्वादिभागानां भूमिसंबन्धेन पृष्ठस्य च तदसंबन्धेन यदासनं भवति तद् लगण्डम्, तेन यः शेते सः। तथा-आतापकः-आतापयति=शीतातपादिसहनरूपाम् आतापनां करोति यः सः। तथा-अप्रावृतकः=न विद्यते प्रावृतं=प्रावरणं यस्य सः। तथा-अकण्डूयकः-न कण्डूयतीत्यकण्डूयकः-कण्डूतौ संजातायामपि गात्रसंघर्षणवर्जितः। 'स्थानातिगः' इत्यारभ्य 'अकण्डूयकः' इत्यन्ताः सर्वेऽपि

प्रकारसे हैं-दण्डायतिक १ लगण्डशायी २ आतापक ३ अपावृतक ४ और अकण्डूयक ५ जिसके आसनमें पैर पसारनेसे दण्डकी तरह दीर्घता होती है, वह दण्डायतिकहै। वक्र काष्ठका नाम लगण्ड है, इस वक्र काष्ठकी तरह जो आसन होता है, वह लगण्ड आसन है। इस लगण्ड आसनसे जो सोता है, वह लगण्डशायी है। अर्थात् जो मस्तक और एडी आदि भागोंको तो जमीन पर लगाता है, एवं पृष्ठ भागको जमीन पर नहीं लगाता है, उसको ऊंचा रखता है, ऐसे आसनसे जो सोता है, वह लगण्डशायी है, अर्थात् वक्र काष्ठके दोनों कोने तो जमीन पर टिके रहते हैं, और बीचका भाग जमीनसे ऊपर उठा रहता है, इसी प्रकारसे जो सोता है, वह लगण्डशायीहै। जो शीत आतप आदि सहने रूप अतापनाको करता है, वह आतापकहै। जिसके प्रावरण नहीं हैं, वह अप्रावृतक है, जो खुजली चलने पर भी शरीरको नहीं खुजलाता है, वह अकण्डूयक है,

---

જે પ્રકારના આસનમાં પગ પહોળા કરવાથી દંડના જેવી દીર્ઘતા થાય છે, તે આસનવાળાને દંડાયતિક કહે છે. વક્ર કાષ્ઠને લગંડ આસન કહે છે. આ વક્ર કાષ્ઠના જેવું જે આસન હોય છે તેને લગંડ આસન કહે છે. આ લગંડાસને શયન કરનારને લગંડશાયી કહે છે. આ આસનમાં મસ્તક અને એડી આદિ ભાગો તો જમીનનો સ્પર્શ કરે છે, પરન્તુ પૃષ્ઠભાગ જમીનને અડકતો નથી, તે તો જમીનથી અદ્ધર જ રહે છે. આ પ્રકારના આસને શયન કરનારને લગંડશાયી કહે છે. એટલે કે જેમ વક્ર કાષ્ઠના બન્ને છેડા તો જમીનને ટેકવીને રહેલા હોય છે, પણ વચ્ચેનો ભાગ જમીનથી અદ્ધર રહેલો હોય છે, આ પ્રકારે શયન કરનાર વ્યક્તિને લગંડશાયી કહે છે.

જે સાધુ શીત, ઉષ્ણતા આદિ સહન કરવા રૂપ આતાપના કરે છે તેને આતાપક કહે છે. જે સાધુને આવરણ હોતું નથી તેને અપ્રાવૃતક કહે છે. ખંજવાળ આવવા છતાં પણ જે શરીરને ખંજવાળતો નથી, તે સાધુને અકંડૂયક

अभिग्रहधारकाः साधवो बोध्याः। यद्यपि स्थानातिगत्वादीनामातापनायामन्तर्भावो भवति, तथापि प्रधानाप्रधानानां भेदविवक्षयाऽत्र भेदेन निर्देशः, अत एव नात्र पौनरुक्त्य शङ्कयमिति ॥ सू० ९ ॥

संप्रति यैः स्थानैः श्रमणा निर्ग्रन्था महानिर्जरा महापर्यवसानाश्च भवन्ति, तानि स्थानान्याह—

मूलम्—पंचहिं ठाणेहिं समणे निग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवइ, तं जहा—अगिलाए आयरियवेयावच्चं करेमाणे १, एवं उवज्झायवेयावच्चं करेमाणे २, थेरवेयावच्चं करेमाणे ३, तवस्सिवेयावच्चं करेमाणे ४, गिलाणवेयावच्चं करेमाणे ५। पंचहिं ठाणेहिं समणे निग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवइ, तं जहा—अगिलाए सेहवेयावच्चं करेमाणे १, अगिलाए कुलवेयावच्चं करेमाणे २, अगिलाए गणवेयावच्चं करेमाणे ३, अगिलाए संघवेयावच्चं करेमाणे ४, अगिलाए साहम्मियवेयावच्चं करेमाणे ५ ॥ सू० १० ॥

स्थानातिगसे लेकर अकण्डूयक तकके समस्त साधुजन अभिग्रहधारी हैं, ऐसा जानना चाहिये यद्यपि स्थानातिग आदि साधुजनोंका अन्तर्भाव आतापकमें हो जाता है, तो भी प्रधान अप्रधानके भेदकी विवक्षासे यहां उनका भेद रूपसे निर्देश किया गया है, इसलिये इस कथनमें पुनरुक्ति दोषकी संभावना नहीं करनी चाहिये ॥ सू० ९ ॥

अब सूत्रकार उक्त स्थानोंको प्रकट करते हैं, कि जिन स्थानों द्वारा श्रमण निर्ग्रन्थ महानिर्जरावाले और महापर्यवसानवाले होते हैं—

કહે છે. સ્થાનાતિગથી લઇને અકંડૂયક પર્યન્તના સમસ્ત સાધુઓ અભિગ્રહધારી હોય છે, એમ સમજવું. જો કે સ્થાનાતિગ આદિ સાધુજનોનો આતાપકમાં સમાવેશ કરી શકાય છે, છતાં પણ પ્રધાન અપ્રધાનના ભેદની વિવક્ષાની અપેક્ષાએ અહીં તેમનું અલગ ભેદ રૂપે કથન કર્યું છે. તેથી આમાં પુનરુક્તિ દોષની સંભાવના રહેતી નથી. ॥ સૂ ૯ ॥

હવે સૂત્રકાર એ સ્થાનો (કારણો) ને પ્રકટ કરે છે કે જે સ્થાનો દ્વારા શ્રમણ નિર્ગ્રંથો મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસનવાળા (તે ભવમાં જ

छाया— पञ्चभिः स्थानैः श्रमणो निर्ग्रन्थो महानिर्जरो महापर्यवसानो भवति, तद्यथा-अग्लानः आचार्यवैयावृत्त्यं कुर्वाणः १, एवम् उपाध्यायवैयावृत्त्यं कुर्वाण २, स्थविरवैयावृत्त्यं कुर्वाणः ३. तपस्विवैयावृत्यं कुर्वाणः ४, ग्लानवैयावृत्यं कुर्वाणः ॥ ५ ॥ पञ्चभिः स्थानैः श्रमणो निर्ग्रन्थो महानिर्जरो महापर्यवसानो भवति, तद्यथा—अग्लानः शैक्षवैयावृत्त्यं कुर्वाणः १, अग्लानः कुलवैयावृत्त्यं कुर्वाणः २ अग्लानो गणवैयावृत्त्य कुर्वाणः ३, अग्लानः सङ्घवैयावृत्त्यं कुर्वाणः ४, अग्लानः साधर्मिकवैयावृत्त्यं कुर्वाणः ५ ॥ सू० १० ॥

टीका—' पंचहिं ठाणेहिं ', इत्यादि—

पञ्चभिः स्थानैः=कारणैः श्रमणो निर्ग्रन्थो महानिर्जरः महती निर्जरा=कर्मं क्षयो यस्य सः-बृहत्कर्मक्षयकारी, अतएव-महापर्यवसानः-महत्=आत्यन्तिकम्, पुनरुत्पत्त्यभावात्, तम् पर्यवसानम्=अन्तो यस्य सः-अपुनर्जन्मा-तद्भवमोक्षगामी भवति। तान्येव स्थानान्याह-तयथा-अग्लानः-अखिन्नः-बहुमान युक्तः सन् आचार्य-वैयावृत्त्यं=धर्मोपग्रहकारिवस्तुभिर्भक्तादिभिरुपग्रहकरणं, तत्कुर्वाण इति प्रथमं

'पंचहिं ठाणेहिं समणे निग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे ' इत्यादि

टीकार्थ-श्रमण निर्ग्रन्थ पांच कारणोंसे महा निर्जरावाला और महापर्यवसानवाला होताहै, समस्त कर्मों का सर्वथा क्षयही मोक्षहै, और उसका अंशतः क्षय निर्जरा है, इस तरह निर्जरा मोक्षका पूर्वगामी अङ्ग है। महानिर्जरावाला होताहै, इसका तात्पर्यही यहहै, कि वह बृहत्कर्मक्षय कर-नेवाला होकर महापर्यवसानवाला होता है, तद्भवमोक्षगामी होता है-अपुनर्जन्मा होता है, वे पांच कारण इस प्रकारसे हैं अग्लान होकर आचार्यकी वैयावृत्ति करना १ आचार्यकी वैयावृत्ति कर-नेमें अग्लान – खेदखिन्न नहीं होना अर्थात् उस कार्यमें बहुमान

મોક્ષગામી થનારા) થાય છે.

ટીકાર્થ–"પંચહિં ઠાણેહિં સમણે નિગંથે મહાનિજ્જરે મહાપજ્જવસાણે" ઇત્યાદિ—

નીચેના પાચ કારણોને લીધે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસનવાળો થાય છે સમસ્ત કર્મોનો સર્વથા ક્ષય થવો તેનું નામ જ મોક્ષ છે, તેમનો અંશતઃ ક્ષય થવો તેનું નામ નિર્જરા છે આ રીતે નિર્જરા મોક્ષનું પૂર્વગામી અંગ છે મોટા પ્રમાણમાં કર્મોનો ક્ષય કરનારને મહાનિર્જરાવાળો કહે છે આ પ્રકારનો મહાનિર્જરાવાળો જીવ જ મહાપર્યવસનવાળો–એ જ ભવમાં મોક્ષ પ્રાપ્ત કરનારો અપુનર્જન્મા હોઇ શકે છે હવે તે પાંચ કારણો પ્રકટ કરવામાં આવે છે—
(૧) અગ્લાન ભાવે (ખિન્નતા અથવા ખેદના પરિત્યાગપૂર્વક) આચાર્યનું વૈયાવૃત્ય કરવાથી તે મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો બની શકે છે.

स्थानम् १। एवमुत्तरत्रापि भावनीयम्। विशेषस्त्वयम्–उपाध्यायः=सूत्रप्रदाता। स्थविरः=संयममार्गात् प्रचलतः साधून् पुनः संयमे स्थिरीकर्त्ता, अथवा–जन्मना षष्टिवार्षिकः, पर्यायेण विंशतिवर्षपर्यायः, श्रुतेन स्थानाङ्गसमवायाङ्गधारी। तपस्वी=मासक्षपणादि कर्त्ता, यावज्जीवमेकान्तरतपःकर्त्ता वा। ग्लानः=व्याध्यादिभिरशक्तः। द्वितीयस्यावान्तरसूत्रस्याप्यर्थः पूर्ववदेव बोध्यः। विशेषस्त्व-

युक्त होना यह प्रथम स्थान – कारण है आचार्यका वैयावृत्य करनेवाला धर्मोपग्रह करनेवाली वस्तुओं द्वारा भक्तादिकों द्वारा उपग्रह करनेवाला इसी प्रकारसे सूत्र प्रदाता उपाध्यायकी अग्लान भावसे वैयावृत्ति करनेवाला २ संयम मार्गसे शिथिल बने हुए या इस मार्गसे चलायमान हुए साधुजनोंको पुनः संयम मार्गमें स्थिर करनेवाले स्थविरकी अथवा जन्मसे ६० वर्षकी दीक्षापर्यायवाले एवं श्रुतकी अपेक्षा स्थानाङ्ग और समवायाङ्गके धारी स्थविर जनकी वैयावृत्ति करनेवाला३ मासक्षपण आदि की तपस्या करनेवाले अथवा–यावज्जीव एकान्तर तप करनेवालेकी वैयावृत्ति करनेवाला४ और ग्लानकी व्याधि आदिसे अशक्त मुनिकी वैयावृत्ति करनेवाला५ श्रमण निर्ग्रन्थ महा निर्जरावाला और महापर्यवसानवाला होता है। ऐसा इस कथनका सारांश है।

આચાર્યની વૈયાવૃત્ય કરનાર એટલે કે ધર્મોપગ્રહ કરનારી વસ્તુઓ દ્વારા આહાર પાણી આદિ દ્વારા ઉપગ્રહ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો બને છે એ જ પ્રમાણે સૂત્ર પ્રદાન કરનાર ઉપાધ્યાયની અગ્લાન ભાવે સેવા કરનાર, સંયમ માર્ગેથી ચલાયમાન થયેલા સાધુઓને ઉપદેશ દ્વારા ફરી સંયમ માર્ગે સ્થિર કરનાર સ્થવિરોનું અગ્લાનભાવે વૈયાવૃત્ય કરનાર, અથવા ૬૦ વર્ષની ઉમર જેણે વ્યતીત કરી નાખી છે એવા સ્થવિરોનું વૈયાવૃત્ય કરનાર અથવા સ્થાનાંગ, સમવાયાંગ આદિ શ્રુતધારી સ્થવિરોનું વૈયાવૃત્ય કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો બને છે. માસખમણ આદિ તપસ્યા કરનારનું અથવા આજીવન એકાન્તર તપ કરનારનું તથા ગ્લાન–બીમાર સાધુનું વૈયાવૃત્ય કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પણ મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો હોય છે આ કથનનો સારાંશ એ છે કે—(૧) આચાર્યનું, (૨) ઉપાધ્યાયનું, (૩) સ્થવિરનું, (૪) તપસ્વીનું, અને (૫) વ્યાધિગ્રસ્ત સાધુનું અગ્લાનભાવે વૈયાવૃત્ય કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો (અપુનર્જન્મા) બને છે.

यम्-शैक्षः=अभिनवः साधुः । कुलम्=एकगुरुकशिष्यसमुदायरूपम् । गणः= कुलसमुदायः । सङ्घो=गणसमुदायः । साधर्मिकः-मुखनिबद्धसदोरकमुखवस्त्रिकत्वादिलिङ्गतः समानश्रद्धाप्ररूपणादिरूपप्रवचनतश्च समानधर्मा । इति। अनेन अवान्तरसूत्रद्वयेन आभ्यन्तरतपोभेदात्मकं दशविधं वैयावृत्त्यं प्रतिपादितम् । तदुक्तमन्यत्रापि—

"आयरिय उवज्झाय थेर तवस्सि गिलाण सेहाणं।
साहम्मि य कुलगणसंघसंगयं तमिह कायव्वं ॥१॥

छाया—आचार्योपाध्यायस्थविरतपस्विग्लानशैक्षाणाम् ।
साधर्मिककुलगणसंघस्य संगतं तदिह कर्तव्यम् ॥ इति ॥

स्थानस्थानिनोरभेदात् स्थानी एवात्र स्थानत्वेनोक्तः इति ॥ सू० १० ॥

पुनश्च—इन पांच स्थानरूप कारणोंसे भी श्रमण निर्ग्रन्थ महानिर्जरावाला एवं महापर्यवसानवाला होता है, जैसे—अग्लान भावसे शैक्षकी-नवीन शिष्यकी वैयावृत्ति करनेवाला १ अग्लान भावसे कुलकी-एवं गुरुके शिष्य समूहकी वैयावृत्ति करनेवाला २ अग्लानभावसे गणकी ३ कुल समुदायकी वैयावृत्ति करनेवाला अग्लान भावसे संघकी ४-गणसमुदायकी वैयावृत्ति करनेवाला और अग्लान भावसे मुखनिबद्धसदोरक मुखवस्त्रिकादि लिङ्गसे एवं समान श्रद्धा तथा प्ररूपणा आदि रूप समान धर्मोंवाले मुनिजनोंकी५ वैयावृत्ति करनेवाला श्रमण निर्ग्रन्थ महा निर्जरावाला और - महापर्यवसानवाला होता है, अर्थात् अपुनर्जन्मा होता है । इस अवान्तर सूत्रद्वयसे आभ्यन्तर तपका भेद जो वैयावृत्य तप है, उसके ये १० भेद प्रतिपादित हुए हैं । अन्यत्र भी ऐसाही कहा गया है—

નીચેનાં પાંચ સ્થાનરૂપ કારણોને લીધે પણ શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો થાય છે—(૧) અગ્લાન ભાવે શૈક્ષનું (નવ દીક્ષિતનું) વૈયાવૃત્ય કરવાથી, (૨) અગ્લાન ભાવે કુલનું (એક જ ગુરુના શિષ્ય સમૂહનું) વૈયાવૃત્ય કરવાથી, (૩) અગ્લાન ભાવે ગણનુ (કુલસમુદાયનું) વૈયાવૃત્ય કરવાથી, (૪) અગ્લાન ભાવે સંઘનુ (ગણસમુદાયનું) વૈયાવૃત્ય કરવાથી, (૫) અગ્લાન ભાવે મુખનિબદ્ધ સદોરક મુખવસ્ત્રિકાદિ લિંગથી અને સમાન શ્રદ્ધા તથા પ્રરૂપણા આદિ રૂપ પ્રવચનથી સમાન ધર્મોવાળા મુનિજનોનું વૈયાવૃત્ય કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો (અપુનર્જન્મા) બને છે

આ બે અવાન્તર સૂત્રો દ્વારા આભ્યન્તર તપના બે ભેદ રૂપ જે વૈયાવૃત્ય તપ છે, તેના ૧૦ ભેદોનુ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યુ છે. કહ્યુ પણ છે કે—

श्रमणो निर्ग्रन्थो यैः स्थानैः साम्भोगिकान् साधर्मिकान् विसंभोगिकान् पाराञ्चितकांश्च कुर्वाण आज्ञाया विराधको न भवतीति तानि स्थानान्याह—

मूलम्—पंचहिं ठाणेहिं समणे णिग्गंथे साहम्मियं संभोइयं विसंभोइयं करेमाणे णाइक्कमइ, तं जहा-सकिरियट्ठाणं पडिसेवित्ता भवइ १, पडिसेवित्ता णो आलोएइ २, आलोइत्ता णो पट्ठवेइ ३, पट्ठवित्ता णो णिव्विसइ ४, जाइं इमाइं थेराणं ठिइकप्पाइं भवंति ताइं अइयंचिय २ पडिसेवेइ, से हंदऽहं पडिसेवामि किं मं थेरा करिस्संति ? ५। पंचहिं ठाणेहिं समणे णिग्गंथे साहम्मियं पारंचियं करेमाणे णाइक्कमइ, तं जहा—सकुले वसइ सकुलस्स भेयाए अब्भुट्ठित्ता भवइ १, गणे वसइ गणस्स भेयाए अब्भुट्ठित्ता भवइ २, हिंसप्पेही ३, छिद्दप्पेही ४, अभिक्खणं २, पसिणायणाइं पउंजित्ता भवइ ५ ॥ सू० ११ ॥

छाया—पञ्चभिः स्थानैः श्रमणो निर्ग्रन्थः साधर्मिकं सांभोगिकं विसांभोगिकं कुर्वाणो नातिक्रामति, तद्यथा—सक्रियस्थानं प्रतिसेविता भवति १, प्रतिसेव्य नो आलोचयति २, आलोच्य नो प्रस्थापयति ३, प्रस्थाप्य नो निर्विशति ४, यानि इमानि स्थविराणां स्थितिकल्प्यानि भवन्ति तानि अतिक्रम्य २ प्रति-

" आयरिय उवज्झाय " इत्यादि । आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी, ग्लान, शैक्ष, साधर्मिक, कुल, गण और संघ इनकी वैयावृत्ति करनेसे वैयावृत्त्य तप १० प्रकारका होताहै । यहां स्थान और स्थानीमें अभेद होनेकी विवक्षासे स्थानीकोही स्थानरूपसे कहा गयाहै॥सू१०॥

" आयरिय उवज्झाय " ઇત્યાદિ—વૈયાવૃત્ય તપના ૧૦ ભેદ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) આચાર્યનું, (૨) ઉપાધ્યાયનુ, (૩) સ્થવિરનુ, (૪) તપસ્વીનું, (૫) ગ્લાનનું (વ્યાધિગ્રસ્તનું), (૬) શૈક્ષનું (નવદીક્ષિતનું), (૭) સાધર્મિકનું, (૮) કુલનું, (૯) ગણનું અને (૧૦) સંઘનું, આ દસ પ્રકારનું વૈયાવૃત્ય કહ્યું છે અહીં સ્થાન અને સ્થાયી વચ્ચે અભેદ માની લઇને સ્થાનીને જ સ્થાનરૂપે કહેવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

सेवते, तत् हन्त ! अहं प्रतिसेवे किं मां स्थविराः करिष्यन्ति ? ॥५॥ पञ्चभिः स्थानैः श्रमणो निर्ग्रन्थः साधर्मिकं पाराञ्चितं कुर्वाणो नातिक्रामति, तद्यथा-स्वकुले वसति स्वकुलस्य भेदाय अभ्युत्थाता भवति १, गणे वसति गणस्य भेदाय अभ्युत्थाता भवति २, हिंसाप्रेक्षी ३, छिद्रप्रेक्षी ४, अभीक्ष्णं २ प्रश्नायतनानि प्रयोक्ता भवति ५ ॥सू० ११॥

टीका—'पंचहिं ठाणेहिं' इत्यादि । पञ्चभिः स्थानैः=कारणैः श्रमणो निर्ग्रन्थः साधर्मिकं=समानधर्माणं सांभोगिकम्=एकमण्डलस्थितं समानसामाचारीमुक्तं साधु विसांभोगिकं=मण्डलीबाह्यं कुर्वाणः नातिक्रामति=जिनाज्ञां नो लङ्घयति । तद्यथा-तान्येव स्थानान्याह-सक्रियस्थानम्-क्रियया सहितं स

जिन कारणोंसे श्रमण निर्ग्रन्थ सांभोगिक साधर्मिक साधुओंको विसांभोगिक (संभोगसे अलग करना) करतेहैं, उन कारणोंको सूत्रकार कहतेहैं-'पंचहिं ठाणेहिं समणे णिग्गंथे साहम्मियं संभोइयं' इत्यादि

टीकार्थ-इन पांच कारणोंको लेकर साधर्मिक किसी सांभोगिक साधुको यदि विसांभोगिक कर दिया जाता है, तो करनेवाला जिनाज्ञाका उल्लङ्घनकर्त्ता नहीं होता है, अर्थात् एक मंडलमें स्थित समान समाचारी युक्त जो साधु है, वह साधर्मिक सांभोगिक कहा गया है, इसे यदि विसांभोगिक-मंडलीसे बाहर कर दिया जाता है, तो ऐसा करनेमें ये पांच कारण हैं, इन कारणोंसे उसे मंडलीसे बाहर करनेवाला जिनाज्ञाका विराधक नहीं होता है, उन पांच कारणोंमें एक कारण ऐसा है,

---

જે કારણોને લીધે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ સાંભોગિક સાધર્મિક સાધુઓને વિસાંભોગિક (સંભોગથી અલગ કરવો તે) જાહેર કરવામાં આવે છે, તે કારણોનું હવે સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—

"પંચ હિં ઠાણેહિં સમણે ણિગ્ગંથે સાહમ્મિયં સંભોઇયં" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—નીચેના પાંચ કારણોને લીધે કોઇ પણ સાધર્મિક સાંભોગિક સાધુને વિસાંભોગિક જાહેર કરવામાં આવે, તો એવું કરનાર જિનાજ્ઞાનો વિરાધક ગણાતો નથી એટલે કે એક જ મંડળમાં-ગણમાં રહેલા સમાન સમાચારી યુક્ત જે સાધુઓ છે તેમને સાધર્મિક સાંભોગિક કહે છે. નીચેના પાંચ કારણોને લીધે કોઇ પણ સાંભોગિક સાધુને વિસાંભોગિક જાહેર કરી શકાય છે, એટલે કે મંડળ અથવા ગણમાંથી કાઢી મૂકી શકાય છે. આ પ્રકારે તેને વિસાંભોગિક જાહેર કરનાર જિનાજ્ઞાનો વિરાધક ગણાતો નથી. તે પાંચ કારણો

क्रियं-प्रस्तावादशुभकर्मबन्धयुक्तं स्थानम्-प्रायश्चित्तस्थानं प्रतिसेविता भवतीति प्रथमं स्थानम् १। प्रतिसेव्य-सक्रियस्थानस्य सेवनं कृत्वा, न आलोचयति= गुरवे न निवेदयतीति द्वितीयं स्थानम् २। आलोच्य=गुरवे निवेद्यापि तदुपदिष्टं प्रायश्चित्तं नो प्रस्थापयति=कर्तुं नैवारभते, इति तृतीयं स्थानम् ३। प्रस्थाप्य= गुरूपदिष्टं प्रायश्चित्तमारभ्यापि नो निर्विशति=समग्रं नो परिपालयति, इति चतुर्थं स्थानम् ४। तथा-यानि इमानि=गच्छप्रसिद्धानि स्थविराणां=स्थविर

कि यदि उस साधुने "सक्रियस्थानं प्रतिसेविता भवति" १ अशुभ कर्मका बन्ध जिस स्थानसे-कारणसे होता है, ऐसे कारणका सेवन कर लिया है, प्रायश्चित्त स्थानका वह प्रतिसेवन करनेवाला बन गया है, तो वह इस स्थितिमें विसांभोगिक कर दिया जाता है, ऐसा यह प्रथम स्थान है, दूसरा स्थान-"प्रतिसेव्य नो आलोचयति" सक्रिय स्थानका सेवन करके भी जो उसकी वह आलोचना नहीं करता है, तो ऐसी स्थितिमें भी वह विसांभोगिक कर दिया जाता है, २। गुरुसे निवेदन करना इसका नाम आलोचना है। तृतीय कारण ऐसा है "आलोच्य नो प्रस्था०" गुरुसे निवेदन करने पर भी उनके द्वारा प्रदत्त प्रायश्चित्तको जो प्रारम्भ नहीं करता है, ऐसी स्थितिमें वह विसांभोगिक कर दिया जाता है। चतुर्थ कारण ऐसा है "प्रस्थाप्य नो निर्वि०" गुरु प्रदत्त प्रायश्चित्तको प्रारम्भ करकेभी जो उसे पूर्ण रूपसे नहीं पालता है, ऐसी स्थितिमें भी वह विसांभोगिक कर दिया जाता है।

નીચે પ્રમાણે છે—(૧) જો તે સાધુએ "सक्रियस्थान प्रतिसेविता भवति" જે કારણે અશુભ કર્મનો બન્ધ થતો હોય એવા કારણનું એટલે કે દુષ્કૃત્યનું પ્રતિસેવન કર્યું હોય, તો તેને વિસાંભોગિક જાહેર કરી શકાય છે. (૨) "प्रतिसेव्य नो आलोचयति" સક્રિય સ્થાનનુ-દુષ્કૃત્યનું સેવન કરીને પણ જો તે તેની આલોચના ન કરે, તો તેને વિસંભોગિક જાહેર કરી શકાય છે કૃત પાપકર્મને ગુરુ સમક્ષ જાહેર કરવું તેનુ નામ આલોચના છે. (૩) "आलोच्य नो प्रस्था०" ગુરુની પાસે આલોચના તો કરી હોય પણ ગુરુ દ્વારા જે પ્રાયશ્ચિત્ત આપવામા આવ્યું હોય તે પ્રાયશ્ચિત્ત લેવાનો પ્રારંભ ન કરનાર સાધર્મિક સાંભોગિક સાધુને પણ વિસાંભોગિક જાહેર કરી શકાય છે. (૪) "प्रस्थाप्य नो निर्वि०" ગુરુ દ્વારા જે જે પ્રાયશ્ચિત કરવાનું સૂચન કરાયું હોય, તે પ્રાયશ્ચિત્તનો પ્રારંભ તો કરવામા આવે, પણ જો તેનું પૂર્ણ રૂપે પાલન કરવામા ન આવે, તો પ્રાયશ્ચિત્તનું પૂર્ણ રૂપે પાલન નહીં કરનાર સાધુને વિસાંભોગિક જાહેર કરી શકાય છે.

कल्पिकसाधूनां स्थितिप्रकल्प्यानि-स्थितौ=सामाचार्या प्रकल्प्यानि=आसेवनीयानि विशुद्धपिण्डशय्यासनादीनि, यद्वा-स्थितिः=मासकल्पादिरूपा, प्रकल्प्यानिच विशुद्धपिण्डशय्यासनादीनि-भवन्ति, तानि अतिक्रम्य अतिक्रम्य प्रति

पांचवां कारण ऐसाहै-"यानि इमानि स्थविराणां स्थिति कल्प्यानि०" गच्छ प्रसिद्ध स्थविर कल्पिक साधुओंके स्थिति प्रकल्प्योंको यदि वह बार २ अतिक्रमण करके अन्य अकल्प्यका सेवन करताहै, तो ऐसी स्थितिमें भी वह विसांभोगिक कर दिया जाता है, तात्पर्य कहनेका यही है, कि जिस कारणसे उसे प्रायश्चित्त लेना पडे ऐसे प्रायश्चित्तार्ह कारणका जब कोई सांभोगिक साधु प्रतिसेवन करनेवाला होता है, सक्रिय स्थानकी प्रतिसेवना करके भी यदि वह गुरुसे निवेदन नहीं करता है, निवेदन करके भी यदि वह गुरु द्वारा कथित प्रायश्चित्तका सेवन करना प्रारम्भ नहीं करता है, प्रायश्चित्तका सेवन करना प्रारम्भ करके भी यदि वह उसे पूर्णरूपसे नहीं पालताहै, और गच्छप्रसिद्ध स्थविरकल्पिक साधुओंकी स्थितिमें सामाचारीमें आसेवनीय विशुद्ध पिण्डशय्या आसन आदिकोंको यद्वा-मासकल्पादि रूप स्थितिको और विशुद्ध पिण्डशय्या आसन आदिकोंको बार २ उल्लङ्घन करके साधुजनके लिये अकल्प्य आचारका सेवन करता है, तो वह इस स्थितिमें विसांभो-

હવે પાંચમું કારણ પ્રકટ કરવામાં આવે છે—" यानि इमानि स्थविराणां स्थितिकल्यानि " ગચ્છપ્રસિદ્ધ સ્થવિર કલ્પિક સાધુઓના સ્થિતિપ્રકલ્પ્યોનું જો તે વારંવાર ઉલ્લંઘન કરે છે-એટલે કે સાધુઓને માટે જે અકલ્પ્ય ગણાય એવા આચારનું વારંવાર સેવન કરે છે, તો તેને વિસાંભોગિક જાહેર કરી શકાય છે.

આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે જે કારણે તેને પ્રાયશ્ચિત્ત લેવું પડે એવા પ્રાયશ્ચિત્તના કારણભૂત સ્થાનનું (દુષ્કૃત્યનું) જો કોઈ સાધુ પ્રતિસેવન કરનારો હોય છે, સક્રિય સ્થાનનું પ્રતિસેવન કરવા છતાં પણ જે ગુરુ પાસે તેની આલોચના કરતો નથી, આલોચના કરવા છતાં પણ જે ગુરુ દ્વારા પ્રદત્ત પ્રાયશ્ચિત્તનું સેવન કરવાનો પ્રારંભ કરીને જે તેનું પૂર્ણરૂપે પાલન કરતો નથી, અને ગચ્છપ્રસિદ્ધ સ્થવિરકલ્પિક સાધુઓની સ્થિતિમાં-સમાચારીમાં આસેવનીય વિશુદ્ધ પિંડશય્યા આસન વગેરેનું અથવા માસકલ્પાદિ રૂપ સ્થિતિનું અને વિશુદ્ધ પિંડ, શય્યા, આસન આદિકોનું જે વારંવાર ઉલ્લંઘન કરીને સાધુઓને માટે અકલ્પ્ય ગણાય એવા આચારોનું સેવન કરે છે, તેને વિસાંભોગિક જાહેર કરી શકાય છે, એટલે કે તેને ગણમાંથી કાઢી

सेवते=साधु सकल्प्यानि परित्यज्य तदन्यानि सेवते इत्यर्थः, कथं प्रतिपद्यते? इत्याह—' सेहन्दऽहं ' इत्यादि–हन्त ! इति कोमलामन्त्रणे, अहं तत्=साधुजनाकल्प्यं प्रतिसेवे, किं मां स्थविराः=गुरवः करिष्यन्ति ? इति बुद्धया । इति पञ्चमं स्थानम् ५। तथा–श्रमणो निर्ग्रन्थः पञ्चभिः स्थानैः साधर्मिकं पाराञ्चितम्=अपहृतलिङ्गादिरूपदशमप्रायश्चित्तभेदवन्तं कुर्वाणो नातिक्रामति । तद्यथा–तान्येव स्थानान्याह–स्वकुले–एकगुरुकशिष्यसमुदायरूपे स्वकीये कुले वसति, वसन्नपि तस्यैव स्वकुलस्य भेदाय=अन्योन्यमधिकरणोत्पादनेन स्फोटनाय अभ्युत्थाता=प्रयत्नवान् भवतीति प्रथमं स्थानम् १। तथा–गणे=कुलसमुदायरूपे स्वकीये वसति, वसन्नपि तस्यैव गणस्य भेदाय अभ्युत्थाता भवतीति द्वितीयं

जिक कर दिया जाता है "से हंदऽहं पडिसेवामि ३०" तब जो साधु सामाचारीके अयोग्य आचारका सेवन करता है, उस समय वह ऐसा विचार करता है, कि मैं जो साधुजनोंके लिये अकल्प्य आचारका सेवन करता हू, तो इस पर मेरे गुरुजन मेरा क्या कर सकते हैं ।

पुनश्च—श्रमण निर्ग्रन्थ इन पांच कारणोंको लेकर यदि किसी साधर्मिक साधुको पाराञ्चित–कर देता है अर्थात् प्रायश्चित्तके भेदवाला कि जिसमें साधुका लिङ्ग लिया जाता है, कर देता है तो ऐसी हालतमें वह जिनाज्ञाका विराधक नहीं होता है, वे पाराञ्चित करनेके पांच कारण इस प्रकारसे हैं–" स्वकुले वसति स्वकुलस्य भेदाय अभ्युत्थाता भवति १ " एक गुरुवाले शिष्योंके समुदाय रूप अपने कुलमें रहता हुआ भी जो उस कुलको भिन्न २ करनेके लिये परस्परमें विमति आदिरूप कलहके उत्पादनमें प्रयत्नशाली होता है, अर्थात् संघमें छेद-

---

મૂકવામા આવે છે તે સાધુ જ્યારે સમાચારીને માટે અયોગ્ય ગણી શકાય એવા આચારોનું સેવન કરે છે ત્યારે તેના મનમાં એવો વિચાર થાય છે કે " से हद ऽ हं पडिसेवामि " ઇત્યાદિ–હું સાધુઓને માટે અયોગ્ય ગણાય એવા આચારોનું સેવન કરૂ છું, પણ મારા ગુરુ મને શું કરી શકવાના છે ?

નીચેના પાંચ કારણોને લીધે કોઈ સાધર્મિક સાધુને પારાંચિત કરી દેવામાં આવે–તેનો સાધુ વેષ છોડાવી દેવામાં આવે તો એમ કરનાર જિનાજ્ઞાનો વિરાધક ગણાતો નથી. સાધુને પારાંચિત કરવા યોગ્ય કારણો નીચે પ્રમાણે કહ્યાં છે–(૧) " स्वकुलेवसति स्वकुलस्य भेदाय अभ्युत्थाता भवति " એક જ ગુરુના સમુદાય રૂપ પોતાના કુળમા રહેવા છતા પણ જે સાધુ તે કુળને છિન્નભિન્ન કરાવવાની પ્રવૃત્તિ કરતો હોય–પરસ્પરમા કલહના બીજ

स्थानम् २। तथा–हिंसाप्रेक्षी–हिंसां=आचार्यादेर्वधं प्रेक्षते=अन्वेषयति यः सः, आचार्यादेर्वधार्थमवसरगवेषीत्यर्थः। इति तृतीयं स्थानम् ३। तथा–छिद्रप्रेक्षी–छिद्राणि–प्रमत्ततादीनि प्रेक्षते यः सः, वधार्थमपमानार्थं वा आचार्यादेश्छिद्रगवेषक इत्यर्थः। इति चतुर्थं स्थानम् ४। तथा-अभीक्ष्णम् अभीक्ष्णम्=पुनः पुनः प्रश्नायतनानि–प्रश्नः=अङ्गुष्ठकुडयप्रश्नादयः सावद्यानुष्ठानपृच्छया वा, त एव आयतनानि=असंयमानां स्थानानि तानि प्रयोक्ता=अनुष्ठाता भवतीति पञ्चमं स्थानम् ५ इति ॥सू० ११॥

भेद करनेवाला १। द्वितीय कारण–" गणे वसति गणस्य भेदाय अभ्युत्थाता भवति २ " ऐसा है, कि जो कुल समुदाय रूप गणमें रहता हुआ भी उसी गणको छिन्नभिन्न करनेके लिये प्रयत्नवाला होताहै, २। तीसरा कारण–" हिंसाप्रेक्षी " ऐसा है–कि जो अपने आचार्य आदिके वध करनेके अवसरकी प्रतीक्षामें रहता है, ३। चतुर्थ कारण–" छिद्रपेक्षी " ऐसा है. कि जो आचार्य आदिके वधके लिये या उन्हे अपमानित करनेके लिये उनके प्रमत्तता आदि छिद्रोंकी गवेषणा करनेमें लगा रहता है, ४।पांचवां कारण–" अभीक्ष्णं २ प्रश्नायतनानि प्रयोक्ता भवति " ऐसा है, कि जो बार २ अङ्गुष्ठकुडयप्रश्नादि रूप या सावद्य अनुष्ठान पृच्छारूप असंयम स्थानोंका अनुष्ठाता होता है५। इन पांच कारणोंसे साधर्मिक साधुको पाराञ्चित करनेवाला जिनाज्ञाका विराधक नहीं होता है ॥ सू० ११ ॥

रोपतो होय, तेने पारांचित करी शकाय छे (२) " गणे वसति गणस्य भेदाय अभ्युत्थाता भवति " (कुलना समूहने गण कहे छे) जे साधु गणमां रहीने, गणने ज छिन्नभिन्न करवामां प्रयत्नशील रहे छे, तेने पण पारांचित करी शकाय छे. (३) " हिंसाप्रेक्षी " जे साधु पोताना आचार्य आदिनो वध करवाना अवसरनी प्रतीक्षामा रहे छे, तेने पण पारांचित (साधुना लिंगथी रहित) करी शकाय छे. (४) " छिद्रप्रेक्षी " जे साधु आचार्य आदिने अपमानित करवाने माटे तेमना छिद्रो ज–प्रमत्तता आदि दोषो ज शोध्या करे छे, तेने पण पारांचित करी शकाय छे (५) " अभीक्ष्णं २ प्रश्नायतनानि प्रयोक्ता भवति " जे साधु वारंवार अंगुष्ठकुडय प्रश्नादि रूप अथवा सावद्य अनुष्ठान पृच्छारूप असंयम स्थानोनो अनुष्ठाता होय छे, तेने पण पारांचित करी शकाय छे आ पांच कारणोने लीधे साधर्मिक साधुने पारांचित करनारो श्रमण निर्ग्रंथ जिनाज्ञानो विराधक बनतो नथी. ॥ सू. ११ ॥

आचार्योपाध्यायगणे यथा पञ्च व्युद्ग्रहस्थानानि पञ्च अव्युद्ग्रहस्थानानि च भवन्ति, तानि आह—

मूलम्—आयरियउवज्झायस्स णं गणंसि पंचवुग्गहट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—आयरियउवज्झाए णं गणंसि आणं वा धारणं वा नो सम्मं पउंजित्ता भवइ १, आयरियउवज्झाए णं गणंसि आहाराइणियाए किइकम्मं नो सम्मं पउंजित्ता भवइ २, आयरियउवज्झाए गणंसि जे सुत्तपज्जवजाए धारेइ ते काले काले णो सम्ममणुप्पवाइत्ता भवइ ३, आयरियउवज्झाए गणंसि गिलाणसेहवेयावच्चं नो सम्ममब्भुट्ठित्ता भवइ, ४ आयरियउवज्झाए गणंसि अणापुच्छियचारी यावि हवइ, नो आपुच्छियचारी ५। आयरियउवज्झायस्स णं गणंसि पंच अवुग्गहट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—आयरियउवज्झाए गणंसि आणं वा धारणं वा सम्मं पउंजित्ता भवइ, एवं आहाराइणियाए सम्मं किइकम्मं पउंजित्ता भवइ २, आयरियउवज्झाए णं गणंसि जे सुयपज्जवजाए धारेइ ते काले काले सम्मं अणुप्पवाइत्ता भवइ ३, आयरियउवज्झाए गणंसि गिलाणसेहवेयावच्चं सम्मं अब्भुट्ठित्ता भवइ ४, आयरियउवज्झाए गणंसि आपुच्छियचारी यावि भवइ णो अणापुच्छियचारी ५ ॥ सू० १२ ॥

छाया—आचार्योपाध्यायस्य खलु गणे पञ्च व्युद्ग्रहस्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-आचार्योपाध्यायं खलु गणे आज्ञां वा धारणां वा नो सम्यक् प्रयोक्तृ भवति १, आचार्योपाध्यायं खलु गणे यथारात्निकतया कृतिकर्म नो सम्यक् प्रयोक्तृ भवति २, आचार्योपाध्यायं गणे यानि श्रुतपर्यवजातानि धारयति तानि काले काले नो सम्यक् अनुप्रवाचयितृ भवति ३, आचार्योपाध्यायं गणे

ग्लानशैक्षवैयावृत्यं नो सम्यक् अभ्युत्थाता भवति ४, आचार्योपाध्यायं गणे अनापृच्छ्यचारि चापि भवति नो आपृच्छ्यचारि ५। आचार्योपाध्यायस्य खलु गणे पञ्च अव्युद्ग्रहस्थानानि, तद्यथा-आचार्योपाध्यायं गणे आज्ञां वा धारणां वा सम्यक् प्रयोक्ता भवति १, एवं यथारात्निकतया सम्यक कृतिकर्म प्रयोक्ता भवति २, आचार्योपाध्यायं खलु गणे यानि श्रुतपर्यवजातानि धारयति तानि काले काले सम्यक् अनुप्रवाचयिता भवति ३, आचार्योपाध्यायं गणे ग्लान-शैक्षवैयावृत्यं सम्यक् अभ्युत्थाता भवति ४, आचार्योपाध्यायं गणे आपृच्छ्य-चारिचापि भवति नो अनापृच्छ्यचारि ५ ॥सू० १२॥

टीका—' आयरिय उवज्झायस्स ' इत्यादि—

आचार्योपाध्यायस्य-आचार्यश्च उपाध्यायश्च-आचार्योपाध्यायं, समाहार-द्वन्द्वः, तस्य=आचार्यस्य उपाध्यायस्य च खलु निश्चयेन पञ्च व्युद्ग्रहस्थानानि=विग्रह-स्थानानि कलहोत्पादकानि प्रज्ञप्तानि। तद्यथा-तान्याह-आचार्योपाध्यायम्-आचार्य उपाध्यायश्च पृथक् पृथक् समुदितो वा गणे=गणविषये आज्ञाम्-'हे मुने! भवतेदं विधेयम्' इत्येवं रूपाम्, यद्वा-देशान्तरस्थ गीतार्थनिवेदनाय अगीतार्थस्याग्रे गीतार्थो गूढार्थपदैर्यदतिचारनिवेदनं करोति सा आज्ञा, तां तथाभूतामाज्ञाम्, वा=अथवा धारणाम्-' नेदं विधेयम् ' इति रूपाम्, असकृदालोचनादानेन

आचार्य और उपाध्यायके गणमें जैसे पांच व्युद्ग्रह (क्लेश)के स्थान होते हैं वैसेही पांच अव्युद्ग्रहके भी स्थान होते हैं, इसी बातको अब सूत्रकार कहतेहैं-'आयरिय उवज्झायस्स णं गणंसि'इत्यादि सूत्र १२॥

टीकार्थ-यहां आचार्य और उपाध्यायमें समाहारद्वन्द्व समासहै, इन आचार्य और उपाध्यायके गणमें पांच व्युद्ग्रह स्थान विग्रहके स्थान कलहको उत्पन्नकरनेवाले कारण कहे गयेहैं, उनमें प्रथम कारण-" आ-चार्योपाध्यायं खलु गणे आज्ञां वा धारणां वा नो सम्यक् प्रयोक्ता भवति

આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયના ગણમાં વ્યુદ્ગ્રહના (કલેશના) જેમ પાંચ સ્થાન હોય છે, એ જ પ્રમાણે અવ્યુદ્ગ્રહના (અકલેશના) પણ પાંચ સ્થાન હોય છે, એ જ વાતને હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે.

ટીકાર્થ—" आयरियउवज्झायस्स ण गणंसि " ઇત્યાદિ—

આચાર્ય ઉપાધ્યાય અહીં સમાહાર દ્વન્દ્વસમાસ રૂપે વપરાયેલ છે. આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયના ગણમાં પાંચ વ્યુદ્ગ્રહસ્થાન એટલે કે કલહ ઉત્પન્ન કરનારા કારણો કહ્યા છે. તેમાંનું પહેલુ કારણ નીચે પ્રમાણે છે—
" आचार्योपाध्यायं खलु गणे आज्ञां वा धारणां वा नो सम्यक् प्रयोक्ता भवति "

यत् प्रायश्चित्तविशेषावधारणं सा धारणा तां वा नो-नैव सम्यक्=याथातथ्येन प्रयोक्तृ भवति। इति प्रथमं स्थानम् १। तथा-आचार्योपाध्यायम् गणे, यथा-रात्निकतया-रत्नानि द्रव्यतो भावतश्च द्विधा। तत्र-रत्नानि द्रव्यतः कर्केतना-

१ "पृथक् पृथक् जो आचार्य और उपाध्याय अथवा समुदित जो आचार्य उपाध्याय गणमें गणके विषयमें आज्ञाको-" हे मुने! आपको यह करना चाहिये " इस प्रकारकी आज्ञाको यद्वा-देशान्तरस्थ किसी गीतार्थसे निवेदन करनेके लिये-" अगीतार्थके आगे जो गीतार्थ गूढार्थ पदों द्वारा जिस अतिचारका निवेदन करता है " ऐसी आज्ञाको अथवा धारणाको-" यह तुम्हें नही करना चाहिये " इस रूप धारणाको वार-वार आलोचना देनेसे जो प्रायश्चित्त विशेषका अवधारण है, वह धारणा है, इस धारणाको अच्छी तरहसे प्रयोक्ता करानेवाला नहीं होता है, मुनि जनोंसे पालन करानेवाला नहीं होता है, उस आचार्य और उपाध्यायके गणमें कलहको उत्पन्न करानेका यह प्रथम कारण है। द्वितीय कारण-" आचार्योपाध्यायं खलु गणे यथा रात्निकतया कृति-कर्म नो सम्यक् प्रयोक्तृ भवति २ " ऐसा है, कि जो आचार्य या उपा-

પૃથક્ પૃથક્ જે આચાર્ય અને ઉપાધ્યાય અથવા સમુદિત જે આચાર્ય ઉપાધ્યાય ગણુમાં ગણુના વિષયમાં આજ્ઞાનું અથવા ધારણાનું પાલન કરાવનારા હોતા નથી, તે આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયના ગણુમાં કલહ થવાની સંભાવના રહે છે. આ રીતે આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયની તેમની આજ્ઞા અથવા ધારણાનુ પાલન કરાવવાની અશક્તિ તેમના ગણુમા કલહ ઉત્પન્ન કરવામાં કારણભૂત બને છે. "હે મુનિ! તમારે આ પ્રમાણે કરવું જોઇએ," તેનું નામ આજ્ઞા છે અથવા દેશાન્તરસ્થ કોઈ ગીતાર્થ સાધુ સમક્ષ નિવેદન કરવાને માટે "અગીતાર્થની સમક્ષ ગીતાર્થ ગૂઢાર્થ પદો દ્વારા જે અતિચારનું નિવેદન કરે છે," તેનું નામ આજ્ઞા છે.

"આ તમારે ન કરવું જોઈએ," તેનું નામ ધારણા છે. અથવા વારંવાર આલોચના દેવાથી જે પ્રાયશ્ચિત્ત વિશેષનું અવધારણ થાય છે તેનું નામ ધારણા છે. આ પ્રકારની આજ્ઞા અને ધારણાનું પોતાના ગણુના સાધુઓ પાસે પાલન ન કરાવી શકનાર આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયના ગણુમાં કલહ ઉત્પન્ન થાય છે.

બીજુ કારણ નીચે પ્રમાણે છે—" आचार्योपाध्यायं खलु गणे यथारात्निकतया कृतिकर्म नो सम्यक् प्रयोक्तृ भवति " જે આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાય

दीनि, भावतो ज्ञानादीनि अत्र भावरत्नाधिकाराद् रत्नैः=ज्ञानादिभिः व्यवहरतीति रात्निकः, तम् अनतिक्रम्य यथारात्निकं, तस्य भावस्तत्ता तया, पर्यायज्येष्ठानुसारेणेत्यर्थः, कृतिकर्म=वन्दनकं न सम्यक् प्रयोक्तृ=अन्तर्भावितण्यर्थत्वात् प्रयोजयितृ भवतीति द्वितीयं स्थानम् २। तथा-आचार्योपाध्यायं यानि श्रुतपर्यवजातानि=सूत्रार्थप्रकारान् सूत्रभेदान् धारयति=अवगच्छति तानि काले काले=यथावसरं नो सम्यक् प्रवाचयितृ=पाठयितृ भवतीति तृतीयं स्थानम् ३, सम्प्रति 'आचार्येण उपाध्यायेन च कस्मै कस्य सूत्रस्य अनुप्रवाचना दातव्या' इति प्रोच्यते। तथाहि-त्रिवर्षपर्यायेभ्यः साधुभ्य आचारकल्पनामा-

---

ध्याय अपने गणमें पर्याय ज्येष्ठके अनुसार वन्दना आदि कृतिकर्मका सम्यक् रीतिसे प्रयोक्ता-करानेवाला नहीं होता है, उस आचार्य उपाध्यायके गणमें कलहको उत्पन्न करानेवाला यह द्वितीय कारण है २। तृतीय कारण ऐसा है-"आचार्योपाध्यायं गणे यानि श्रुतपर्यवजातानि धारयति तानि काले काले नो सम्यक् अनुप्रवाचयिता भवति ३" कि जो आचार्य और उपाध्याय जिन श्रुतपर्यवजनोंको-सूत्रार्थ प्रकारोंको-सूत्र भेदोंको जानता है, उनको वह यदि समय २ पर अच्छी तरहसे अपने शिष्योंको नहीं पढाता है, तो इससे भी आचार्य या उपाध्यायके गणमें कलहको उत्पन्न करानेवाला यह तृतीय कारण है,

अब आचार्य और उपाध्यायको किस शिष्यके लिये किस सूत्रकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये, यह प्रकट किया जाता है-तीन वर्षकी जिसकी दीक्षा पर्याय हो गई है, ऐसे साधुके लिये आचारकल्प नामक अध्य-

---

પોતાના ગણમા દીક્ષાપર્યાયની અપેક્ષાએ જ્યેષ્ઠતા અનુસાર વંદણા આદિ કૃતિકર્મનું સારી રીતે પાલન કરાવનારા હોતા નથી, તેમના ગણમાં કલહ ઉત્પન્ન થવાનો સંભવ રહે છે.

ત્રીજું કારણ—"आचार्योपाध्यायं गणे यानि श्रुतपर्यवजातानि धारयति तानि काले काले नो सम्यक् अनुप्रवाचयिता भवति" જે આચાર્ય અને ઉપાધ્યાય જે શ્રુત પર્યવજાતોને-જે સૂત્રાર્થ પ્રકારોને-જે સૂત્ર ભેદોને જાણે છે, પણ પોતાના શિષ્યોને યોગ્ય સમયે તેનો સારી રીતે અભ્યાસ કરાવતા નથી, તે આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયના ગણમાં પણ કલહ ઉત્પન્ન થવાનો સંભવ રહે છે.

હવે સૂત્રકાર એ વાત પ્રકટ કરે છે કે આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાયે કયા શિષ્યને ક્યારે કયા સૂત્રની અનુપ્રવાચના દેવી જોઈએ, એટલે કે કયા શાસ્ત્રનો અભ્યાસ કરાવવો જોઈએ—

ध्ययनस्य, अनुप्रवाचना दातव्या । तथा-चतुर्वर्षपर्यायेभ्यः सूत्रकृताङ्गस्य, पञ्चवर्षपर्यायेभ्यो दशाकल्पव्यवहाराणाम्, अष्टवर्षपर्यायेभ्यः स्थानाङ्गसमवायाङ्गयोः, दश वर्ष पर्यायेभ्यो भगवतीसूत्रस्य, एकादश वर्षपर्यायेभ्यः क्षुल्लकविमानादीनामध्ययनानाम्, द्वादशवर्षपर्यायेभ्यः अरुणोपपातादीनां पञ्चाध्ययनानाम्, त्रयोदश-वर्षपर्यायेभ्यः उत्थानश्रुतादीनां चतुर्णामध्ययनानां चतुर्दशवर्षपर्यायेभ्यः स्वप्नभावनायाः, पञ्चदश वर्षपर्यायेभ्यः चरणभावनायाः, षोडश-

यनकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । चार वर्षकी जिसकी दीक्षापर्याय हो गईहै, ऐसे साधुके लिये सूत्र कृताङ्गकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । पांच वर्षकी जिसकी दीक्षापर्याय हो गई है, ऐसे साधुके लिये दशाकल्प व्यवहारकी अनुप्रवचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय आठ वर्षकी हो गई है, ऐसे साधुके स्थानाङ्ग और समवायाङ्गकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये दश वर्षकी जिसकी दीक्षापर्याय हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये भगवती सूत्रकी अनुप्रवचना देना चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय ११ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये क्षुल्लकविमान आदि अध्ययनोंकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय १२ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये अरुणोपपात आदि पांच अध्ययनोंकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय १३ वर्षकी हो चुकीहै, ऐसे साधुके लिये उत्थान श्रुत समुत्थान सूत्र, देविंदोपपातानागपरिचार यह चार अध्ययनोंकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षा पर्याय १४ वर्ष की हो चुकी है, ऐसे साधु के

જે શિષ્યની દીક્ષાપર્યાય ત્રણ વર્ષની હોય, એવા શિષ્યને આચાર કલ્પ નામના અધ્યયનનો અભ્યાસ કરાવવો જોઈએ ચાર વર્ષની દીક્ષાપર્યાયવાળા શિષ્યને સૂત્રકૃતાંગની અનુપ્રવાચના દેવી જોઈએ. પાંચ વર્ષની દીક્ષાપર્યાયવાળા સાધુને દશાકલ્પ વ્યવહારની અનુપ્રાવચના દેવી જોઈએ. આઠ વર્ષની દીક્ષા-પર્યાયવાળા સાધુને સ્થાનાંગ સૂત્રની અને સમવાયાંગ સૂત્રની અનુપ્રાવચના દેવી જોઈએ. દસ વર્ષની દીક્ષાપર્યાયવાળા સાધુને ક્ષુલ્લક વિમાન આદિ અધ્યયનોની અનુપ્રાવચના દેવી જોઈએ. બાર વર્ષની દીક્ષા પર્યાયવાળા સાધુને અરુણોપપાત આદિ પાંચ અધ્યયનોની અનુપ્રાવચના દેવી જોઈએ અને તેર વર્ષની દીક્ષા પર્યાયવાળા સાધુને ઉત્થાન શ્રુત સમુત્થાન સૂત્ર. દેવિંદોપપાત નાગપરિચાર આ ચારે અધ્યયનોની અનુપ્રવાચના દેવી જોઈએ. જે સાધુને પ્રવજ્યા અંગીકાર કર્યાને ૧૪ વર્ષનો

वर्षपर्यायेभ्यस्तेजोनिसर्गस्य सप्तदश वर्षपर्यायेभ्यः आशीविषभावनाया, अष्टादशवर्षपर्यायेभ्यो दृष्टिविषभावनायाः, एकोनविंशतिवर्षपर्यायेभ्यश्च द्वादशाङ्गस्य दृष्टिवादस्यानुप्रवाचना दातव्या। तथा—विंशतिवर्षपर्यायेभ्यश्च सकलसूत्राणामनुप्रवाचना दातव्या। अयमेवार्थो व्यवहार—सूत्रस्य दशमोद्देशे प्रोक्तः। इति।

तथा—आचार्योपाध्यायं गणे ग्लानशैक्षवैयावृत्यं प्रति नो स्वयम् सम्यक् अभ्युत्थातृ=प्रयत्नशीलो भवतीति चतुर्थं स्थानम् ४। तथा—आचार्योपाध्यायं

लिये स्वप्नभावनाकी अनुप्रवचना देनी चाहिये। जिसकी दीक्षापर्याय १५ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये चरणभावनाकी अनुप्रावाचना देनी चाहिये। जिसकी दीक्षापर्याय १६ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये तेजो निसर्गकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये। जिसकी दीक्षापर्याय १७ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये आशीविष भावनाकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये। जिसकी दीक्षापर्याय १८ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये दृष्टिविष भावनाकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये। जिसकी दीक्षापर्याय १९ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये द्वादशाङ्ग दृष्टिवादकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये। तथा जिसकी दीक्षापर्याय २० वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये समस्त सूत्रोंकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये। यही अर्थ व्यवहारसूत्रके १० वें उद्देशेमें कहा गयाहै—

तथा—चतुर्थ कारण—"आचार्योपाध्यायं गणे ग्लानशैक्षवैयावृत्यं नो सम्यक् अभ्युत्थाता भवति ४" ऐसा है, कि जो आचार्य या

સમય વ્યતીત થઇ ગયો હોય, તે સાધુને સ્વપ્ન ભાવનાની અનુપ્રવાચના દેવી જોઇએ. ૧૫ વર્ષની દીક્ષા પર્યાયવાળા સાધુને ભગવતી સૂત્રની અને અગિયાર વર્ષની દીક્ષા પર્યાયવાળા સાધુને ચરણુ ભાવનાની અનુપ્રવાચના દેવી જોઇએ. ૧૬ વર્ષની દીક્ષા પર્યાયવાળા સાધુને તેમણે નિસર્ગની અનુપ્રવાચના દેવી જોઇએ. ૧૭ વર્ષની દીક્ષા પર્યાયવાળા સાધુને તેમણે આશીવિષ ભાવનાની અનુપ્રાવચના દેવી જોઇએ ૧૮ વર્ષની દીક્ષા પર્યાયવાળા સાધુને તેમણે દષ્ટિવિષ ભાવનાની અનુપ્રવાચના દેવી જોઇએ. ૧૯ વર્ષની દીક્ષા પર્યાયવાળા સાધુને દ્વાદશાંગ દષ્ટિવાદની અનુપ્રવાચના દેવી જોઇએ. જે સાધુને દીક્ષા અંગીકાર કર્યાને ૨૦ વર્ષનો સમય થઈ ગયો હોય તેમને સમસ્ત સૂત્રોની અનુપ્રાવચના દેવી જોઈએ. આ વિષયનું વ્યવહાર સૂત્રના ૧૦ માં ઉદ્દેશામાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે

હવે ગણુમાં કલેશ થવાનું ચોથું કારણુ પ્રકટ કરવામાં આવે છે—"આચાર્યોપાધ્યાયં ગણે ગ્લાનશૈક્ષવૈયાવૃત્યં ના સમ્યક્ અભ્યુત્થાતા ભવતિ"

गणे=अनापृच्छ्यचारि–अनापृच्छ्य=अपृष्ट्वा चरतीत्येवं शीलं भवति, नो आपृच्छ्य-चारि=पृष्ट्वाचरणशीलं न भवति। आचार्य उपाध्यायश्च गणम् अपृष्ट्वैव क्षेत्रान्तर-संक्रमणशीलो भवति, न तु पृष्ट्वेत्यर्थः। इति पञ्चमं स्थानम् ५। "तद्वैपरीत्येन आचार्योपाध्यायोर्गणविषये पञ्च अभ्युदग्रहस्थानानि=अक्लेशकरस्थानानि प्राह–'आयरियउवज्झायस्स णं गणंसि पंच अवुग्गहट्ठाणा पण्णत्ता' इत्यादि। व्याख्या सुगमा ॥सू० १२॥

उपाध्याय गणमें ग्लान एवं शैक्षके वैयावृत्यके प्रति स्वयं अच्छी तरहसे प्रयत्नशील नहीं होता है, उस आचार्य और उपाध्यायके गणमें यह चौथा कलहका कारण है। पांचवां कलहका कारण–"आचार्योपाध्यायं गणे अनापृच्छ्यचारि चापि भवति, नो आपृच्छ्यचारि" ऐसा है, कि यदि आचार्य और उपाध्याय गणमें बिना पूछेही क्षेत्रान्तरमें गमनशील होता है, पूछ करके गमनशील नहीं होता है, तो यह भी गणमें कलह उत्पन्न करनेका पांचवां कारण है, इन पूर्वोक्त कारणोंसे विपरीत जो पांच कारण है, वे गणमें अभ्युदग्रहके स्थान है–अक्लेशके कारण हैं, शांति और संपके कारण हैं। "आयरिय उवज्झायस्स णं गणंसि पंच अवुग्गहट्ठाणा पण्णत्ता" इत्यादिकीव्याख्या सुगम है ॥ सू० १२ ॥

જે આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાય ગણુના ગ્લાન (વ્યાધિગ્રસ્ત) અને શૈક્ષ (બાલદીક્ષિત) ના વૈયાવૃત્ય માટે જાતે જ સારી રીતે પ્રયત્નશીલ હોતા નથી, તે આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાયના ગણુમા કલહ ઉત્પન્ન થવાની સંભાવના રહે છે.

કલહનું પાંચમું કારણુ—' आचार्योपाध्याय' गणे अनापृच्छ्यचारि चापि भवति नो अपृच्छ्यचारि " આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાય જો ગણુને પૂછ્યા વિના ક્ષેત્રાન્તરમાં ગમનશીલ રહે છે ગણુના અન્ય સાધુઓને પૂછીને ગમનશીલ થતા નથી, તો એવી પરિસ્થિતિમાં પણ તેમના ગણુમાં કલહ ઉત્પન્ન થવાનો સંભવ રહે છે

આ પાંચ કારણોથી વિપરીત કારણોને લીધે ગણુમાં અકલેશનું વાતાવરણ રહે છે. એટલે કે ગણુમાં શાન્તિ ટકી રહે છે. " आयरिय उवज्झायस्सण गणंसि पच अवुग्गहट्ठाणा पण्णत्ता " ઈત્યાદિ સૂત્રોની વ્યાખ્યા સુગમ છે ઉપર્યુક્ત પચ કારણોથી ઉલટાં પાંચ કારણોને લીધે ગણુમાં શાન્તિ જળવાઈ રહે છે, એમ સમજવું. ॥ સૂ. ૧૨ ॥

सम्प्रति निषद्यादि स्थानानि निरूपयति—

मूलम्—पंच निसिज्जाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—उक्कुडुई १, गोदोहिया २, समपायपुता ३, पलियंका ४, अद्धपलियंका ५। पंच अज्जवट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—साहु अज्जवं, १ साहु मद्दवं २, साहु लाघवं ३, साहु खंती ४, साहु मुत्ती ५॥ सू०१३॥

छाया—पञ्च निषद्याः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—उत्कुटुका १, गोदोहिका २, समपादपुता ३, पर्यङ्का ४, अर्द्धपर्यङ्का ५। पञ्च आर्जवस्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—साध्वार्जवम् १, साधु मार्दवम् २, साधु लाघवम् ३, साधु क्षान्तिः ४, साधु मुक्तिः ५। ॥सू० १३॥

टीका—' पंच निसिज्जाओ ' इत्यादि—

निषदनानि=उपवेशनानि निषद्याः=आसनविशेषरूपाः, ताः पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः। ता एवाह—उत्कुटुका—पुतस्य अलगनेन उपवेशनम् १। गोदोहिका—गोदोहनकाले यथा उपवेशनं भवति, तद्वद् य आसनविशेषः सा गोदोहिकेत्युच्यते

अब सूत्रकार निषद्या आदि स्थानोंका निरूपण करते हैं—

'पंच निसिज्जाओ पण्णत्ताओ' इत्यादि सूत्र १३॥

सूत्रार्थ—आसन विशेष रूप जो निषद्याहैं, वे पांच प्रकारकीहैं—जैसे—उत्कुटुका १ गोदोहिका २ समपादपुता ३ पर्यङ्का ४ और अर्द्ध पर्यङ्का५।

पांच आर्जव स्थान कहे गये हैं, जैसे—साध्वार्जव १ साधुमार्दव २ साधु लाघव ३ साधुक्षान्ति ४ और साधु मुक्ति ५।

टीकार्थ—जमीन पर जिस आसनमें पुत(बैठक)नहीं लगतेहैं, ऐसा वह बैठने रूप आसन उत्कुटुकासन है, गायका दोहन जिस आसनसे बैठ-

---

હવે સૂત્રકાર નિષદ્યા આદિ સ્થાનોનું નિરૂપણ કરે છે.

સૂત્રાર્થ—" પંચ निसिज्जाओ पण्णत्ताओ " ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—આસનવિશેષ રૂપ જે નિષદ્યા છે, તેના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યાં છે—(૧) ઉત્કુટુક, (૨) ગોદોહિકા, (૩) સમપાદપૂતા, (૪) પર્યંકા અને (૫) અર્ધપર્યંકા.

નીચે પ્રમાણે પાંચ આર્જવસ્થાન કહ્યાં છે—(૧) સાધ્વાર્જવ, (૨) સાધુ માર્દવ, (૩) સાધુ લાઘવ, (૪) સાધુ ક્ષાન્તિ અને (૫) સાધુ મુક્તિ.

ટીકાર્થ—જે આસનમાં જમીન પર પુતને (કુલાને) રાખવામાં આવતા નથી તે આસનને " ઉત્કુટુકાસન " કહે છે. આ આસનમાં ઉભડક બેસવું પડે છે.

२। समपादपुता-समौ-समतया भूमिस्पर्शयुक्तौ पादौ पुतौ च यस्यां सा। ३। पर्यङ्का-पद्मासनमिति प्रसिद्धा ॥ ४ ॥ तथा-अर्धपर्यङ्का-ऊरावेकं पादं निवेश्य य उपवेशनप्रकारः सः 'अर्धपर्यङ्का' इत्युच्यते। तथा-आर्जवस्थानानि-ऋजोः-रागद्वेषवक्रत्व-वर्जितस्य सामायिकवतः कर्म भावो वा आर्जवं संवर इत्यर्थः, तस्य स्थानानि=भेदाः पञ्च प्रज्ञप्तानि। तद्यथा-साध्वार्जवम्-साधु-सम्यग् दर्शनपूर्वकतया शोभनम्, तच्च आर्जवम्=मायानिग्रहरूपं च। यद्वा-साधोरार्जवं साध्वार्जवम्। एवं साधुमार्दवादि स्थानचतुष्टयमपि विज्ञेयम्। तत्र-मार्दवं माननिग्रहतो

कर किया जाताहै, ऐसा वह आसन गोदोहिका आसनहै, जिस आसन में दोनों पैर एवं दोनों पुत (अधोभाग) भूमिको समानरूपसे स्पर्श करतेहैं, ऐसे आसनका नाम समपादपुता आसन है, पद्मासनका नाम पर्यङ्कासन है, जंघा पर एक चरण रखकर जो बैठा जाताहै, वह अर्द्धपद्मासनहै, इसी का नाम-अर्द्धपर्यङ्कासनहै। रागद्वेषरूप वक्रतासे वर्जित सामायिकवालेका जो कर्म या भावहै, उसका नाम आर्जवहै, (सरलता) यह आर्जव संवर रूप होता है, इस आर्जवरूप संवरके पांच स्थानहैं, जो आर्जव सम्यग्दर्शनपूर्वक होता है, वह शोभन आर्जव साध्वार्जव है, यह आर्जव माया कषायके निग्रहरूप होता है, अर्थात्-माया कषायके अभावमें होता है, यद्वा-साधुका जो आर्जव है, वह साध्वार्जव है, इसी तरहका कथन साधुमार्दव (सम्यग् विनय) आदि पदोंके विषयमें भी समझ लेना चाहिये। मान कषायके निग्रहसे मार्दव होताहै, उपकरणसे और गौर-

જે આસને બેસીને ગાયને દોહવાની ક્રિયા થાય છે, તે પ્રકારના આસનનું નામ 'ગોદોહિકા આસન' છે. જે આસનમાં બન્ને પગ અને બન્ને પુત જમીનને સમાન રૂપે સ્પર્શ કરે છે, એવા આસનનું નામ 'સમપાદપુતા આસન' છે. પદ્માસનને પર્યંકાસન પણ કહે છે. જંઘા પર એક પગ ગોઠવીને જે બેઠક જમાવવામાં આવે છે, તે આસનને 'અર્ધપર્યંકાસન' કહે છે.

રાગદ્વેષ રૂપ વક્રતાથી રહિત સામાયિકવાળાનો જે ભાવ છે, તેનું નામ આર્જવ છે. તે આર્જવ સંવર રૂપ હોય છે. આ આર્જવ રૂપ સંવરના પાંચ સ્થાન છે. જે આર્જવ સમ્યગ્દર્શનપૂર્વક ઉદ્ભવે છે, તે શોભન આર્જવને સાધ્વાર્જવ કહે છે. તે આર્જવ માયા કષાયના નિગ્રહ રૂપ હોય છે-એટલે કે માયા કષાયના અભાવમાં જ સંભવી શકે છે. અથવા સાધુનું જે આર્જવ છે તેનું નામ સાધ્વાર્જવ છે. એ પ્રકારનું કથન સાધુમાર્દવ આદિ વિષે પણ સમજવું. માનકષાયના નિગ્રહથી માર્દવ આવે છે, ઉપકરણ અને ગૌરવત્રયના

भवति, लाघवम्–उपकरणतो गौरवत्रयत्यागतश्च; क्षान्तिः क्रोधनिग्रहतः तथा–मुक्तिः–लोभनिग्रहतो भवति इति ॥ सू० १३ ॥

आर्जवयुक्ता मरणानन्तरं प्रायो देवा भवन्तीति देवानां पञ्चविधत्वं 'पंचविहा जोइसिया' इत्यारभ्य 'ईसाणस्स णं' इत्यन्तेन सूत्रपञ्चकेन प्राह—

मूलम्—पंचविहा जोइसिया पण्णत्ता, तं जहा–चंदा १ सूरा २ गहा ३ नक्खत्ता ४ताराओ ५। पंचविहा देवा पण्णत्ता, तं जहा–भवियदव्व देवा १ णरदेवा २ धम्मदेवा ३ देवाहिदेवा ४ भावदेवा ॥ सू० १४ ॥

छाया—पञ्चविधा ज्योतिष्काः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–चन्द्राः १ सूर्याः २, ग्रहाः ३ नक्षत्राणि ४, ताराः ५। पञ्चविधा देवाः, प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–भव्यद्रव्यदेवाः १, नरदेवाः २, धर्मदेवाः ३ देवाधिदेवाः ४, भावदेवाः ५ ॥ सू० १४ ॥

टीका—'पंचविहा' इत्यादि—

ज्योतिष्काः–ज्योतीषि=विमानभेदाः, तत्र भवाः, देवविशेषा इत्यर्थः। ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–पञ्चविधत्वमेवाह–चन्द्राः सूर्या इत्यादि। तथा–

वत्रयके त्यागसे लाघव होता है, क्रोध कषायके निग्रहसे क्षान्ति होती है, तथा लोभके निग्रहसे मुक्ति (निर्लोभता) होती है ॥ सू० १३ ॥

आर्जवयुक्त जीव प्रायः मरणके बाद देव होते हैं, इसलिये सूत्रकार अब "पंचविहा जोइसिया" यहांसे लेकर "ईसाणस्स णं" यहां तकके सूत्रपञ्चकसे उनकी पंच विधताका कथन करते हैं—

टीकार्थ–'पंचविहा जोइसिया पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र १४ ॥

विमानविशेषका नाम ज्योति है, इस ज्योतिमें जो देव होते हैं वे ज्योतिष्कदेव है, ये ज्योतिष्कदेव पांच प्रकारके कहे गये हैं—

લાઘવ ઉદ્‌ભવે છે, ક્રોધકષાયના નિગ્રહથી ક્ષાન્તિ ઉદ્‌ભવે છે અને લોભના નિગ્રહથી મુક્તિ ઉદ્‌ભવે છે. ॥ સૂ. ૧૩ ॥

આર્જવ યુક્ત જીવ સામાન્ય રીતે દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર "પંચવિહા જોઇસિયા" આ સૂત્રથી લઇને "ઈસાણસ્સ ણં" આ સૂત્ર પર્યન્તના પાંચ સૂત્રો દ્વારા દેવોની પંચવિધતા પ્રકટ કરે છે—

ટીકાર્થ–"પંચવિહા જોઇસિયા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ—

વિમાન ભેદનું નામ જ્યોતિ છે. તે જ્યોતિમાં જે દેવો હોય છે તેમને જ્યોતિષ્ક દેવો કહે છે. તે જ્યોતિષ્ક દેવોના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે.

देवाः-दीव्यन्ति-क्रीडन्ति ये ते, दीव्यन्ते=स्तूयन्ते ये ते वा देवाः। ते च पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः। तेषां पञ्चविधत्वमाह-तद्यथा-भव्यद्रव्यदेवाः-द्रव्यभूता देवा द्रव्यदेवाः, भव्याश्च ते द्रव्यदेवाश्चेति समासः। देवतयोत्पत्स्यमानत्वाद् भाविदेवपर्याययोग्या इत्यर्थः १। नरदेवाः-नराणां देवाः चक्रवर्तिप्रभृतयः २। धर्मदेवाः-धर्मेण=श्रुतादिदेवाः, धर्मप्रधाना वा देवाः, चारित्रवन्तः ३। देवाधिदेवाः-देवेभ्योऽपि=इन्द्रादिभ्योऽपि अधि-अधिकाः=श्रेष्ठाः, तैः पूज्यमानत्वात् देवाः, देवाधिदेवाः अर्हन्त इत्यर्थः ४। तथा भावदेवाः-भावेन=देवगत्यादिकर्मोदयजातपर्यायेण देवाः-भावदेवाः देवायुष्कादिकमनुभवन्तो वैमानिकादय इत्यर्थः५॥सू० १४॥

चन्द्र १ सूर्य २ ग्रह ३ नक्षत्र ४ और तारा। देव पांच प्रकारके कहे हैं, जैसे-भव्यद्रव्यदेव १ नरदेव २ धर्मदेव ३ देवाधिदेव ४ और भावदेव ५। जो विविध प्रकारकी क्रीडाएँ करते हैं, अथवा जिसकी स्तुति की जाती है वे देव हैं, जो जीव आगे देवरूप पर्यायसे उत्पन्न होने वाला होता है, अभी वर्तमानमें उस पर्यायवाला नहीं है, ऐसा जीव भव्यद्रव्यदेव हैं, चक्रवर्ती आदि नरदेव हैं, क्योंकि ये मनुष्योंमें देवतुल्य माने जाते हैं, धर्मसे श्रुतादिसे-जो देव हैं, अथवा-धर्मप्रधान जो देव हैं, वे धर्मदेव हैं, ऐसे धर्मदेव चारित्रधारी मुनिजन होते हैं। जो देवोंसे भी इन्द्रादिकोंसे भी अधिक श्रेष्ठ हैं क्योंकि वे उनके द्वारा पूज्य होते हैं, ऐसे देव देवाधिदेव होते हैं-ऐसे देवाधिदेव अर्हन्त हैं। तथा देवगति नामकर्मके उदयसे जिनकी देवपर्यायमें स्थिति हैं, वे

---

(१) ચન્દ્ર, (૨) સૂર્ય, (૩) ગ્રહ, (૪) નક્ષત્ર અને (૫) તારા.

દેવોના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકારો પણ કહ્યાં છે-(૧) ભવ્ય દ્રવ્યદેવ, (૨) નરદેવ, (૩) ધર્મદેવ, (૪) દેવાધિદેવ અને (૫) ભાવદેવ. જે વિવિધ પ્રકારની ક્રીડાઓ કરે છે, અથવા જેની સ્તુતિ કરાય છે, તે દેવ છે. જે જીવ ભવિષ્યમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થવાનો હોય છે-વર્તમાન સમયે તો દેવપર્યાયવાળો નથી, એવા જીવને ભવ્ય દ્રવ્યદેવ કહે છે. ચક્રવર્તી આદિને નરદેવ કહે છે, કારણ કે તેમને મનુષ્યોમાં દેવતુલ્ય માનવામાં આવે છે. ધર્મની દૃષ્ટિએ શ્રુતાદિની અપેક્ષાએ જે દેવ છે અથવા ધર્મપ્રધાન જે દેવ છે તેમને ધર્મદેવ કહે છે. ચારિત્રધારી શ્રમણ નિર્ગ્રંથો જ એવાં ધર્મદેવ રૂપ છે. જેઓ દેવો કરતાં પણ શ્રેષ્ઠ છે અને દેવો પણ જેમને પૂજનીય અને વન્દનીય ગણે છે, એવા દેવોને દેવાધિદેવ કહે છે. એવા દેવાધિદેવ અર્હંતો છે. દેવગતિ નામકર્મના ઉદયથી જેમની દેવપર્યાયમાં સ્થિતિ છે, તેમને ભાવદેવ કહે છે. દેવ

देवप्रस्तावाद्देवपरिचारणामाह—

मूलम्—पंचविहा परियारणा पण्णत्ता, तं जहा—कायपरियारणा १, फासपरियारणा २, रूवपरियारणा ३, सद्दपरियारणा ४, मणपरियारणा ५ ॥ सू० १५ ॥

छाया—पञ्चविधा परिचारणा प्रज्ञप्ता तद्यथा—कायपरिचारणा १, स्पर्शपरिचारणाः २, रूपपरिचारणा ३, शब्दपरिचारणा ४ मनःपरिचारणा ५॥सू० १५॥

टीका—'पंचविहा' इत्यादि—

परिचारणा—परिचारणं परिचारणा—देवमैथुनप्रवृत्तिरित्यर्थः। सा पञ्चविधा प्रज्ञप्ता। तद्यथा—पञ्चविधत्वमाह—कायपरिचारणा—कायेन परिचारणा,—कायेन देवदेव्योः मैथुनप्रवृत्तिः। इयं परिचारणा—भवनपति—व्यन्तर ज्योतिष्कप्रथमद्वितीयसौधर्मेशानदेवलोकस्थितानां देवानामेव भवति। एते हि देवाः

भावदेव हैं, ऐसे वे भावदेव-देव सम्बन्धी आयुका अनुभव करनेवाला वैमानिक आदि देव हैं॥ सू० १४ ॥

देवके प्रस्तावको लेकर अब सूत्रकार देवपरिचारणाका कथक करतेहैं.

'पंचविहा परियारणा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र १५ ॥

टीकार्थ—परिचारणा पांच प्रकारकी कही गईहै, जैसे—कायपरिचारणा १ स्पर्शपरिचारणा २ रूपपरिचारणा ३ शब्दपरिचारणा ४ और मनःपरिचारणा ५।

देवोंकी जो मैथुन क्रियामें प्रवृत्ति है, उसका नाम परिचारणा है, शरीरसे जो देव देवियोंकी मैथुन क्रियामें प्रवृत्ति होती है, मनुष्य और मानवीकी तरह वह कायपरिचारणा है, यह परिचारणा भवनपति व्यन्तर ज्योतिष्क और सौधर्म एवं ईशानदेव लोकस्थित देवोंकोही है,

---

સંબંધી આયુનો અનુભવ કરી રહેલા વૈમાનિક આદિ દેવો આ પ્રકારના ભાવદેવો રૂપ છે. ॥ સૂ. ૧૪ ॥

દેવનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે, તેથી હવે સૂત્રકાર દેવપરિચારણાનું કથન કરે છે. " પંચવિહા પરિયારણા પણ્ણત્તા " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—દેવોની મૈથુન ક્રિયામાં જે પ્રવૃત્તિ છે, તેનું નામ પરિચારણા છે. તે પરિચારણાના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકારો છે—(૧) કાયપરિચારણા, (૨) સ્પર્શ પરિચારણા, (૩) રૂપપરિચારણા, (૪ શબ્દપરિચારણા, (૫) મનઃપરિચારણા.

માનવ સ્ત્રીપુરુષની જેમ શરીરથી દેવદેવીની મૈથુન ક્રિયામાં જે પ્રવૃત્તિ રહે છે, તે પ્રવૃત્તિને કાયપરિચારણા કહે છે. ભવનપતિ, વ્યન્તર, જ્યોતિષ્ક, સૌધર્મ અને ઈશાન લોકસ્થિત દેવોમાં કાયપરિચારણાનો સદ્ભાવ હોય છે,

संक्लिष्टोदयपुरुषवेदकर्मप्रभावात् मनुष्यवदेव कायेनैव मैथुनं सेवन्ते इति बोध्यम्। तथा-स्पर्शपरिचारणा-स्पर्शेन शरीरस्पर्शमात्रेणैव परिचारणा=। इयं परिचारणा तृतीयचतुर्थसनत्कुमार-माहेन्द्र कल्पस्थितानां देवानां भवति। तथा-रूपपरिचारणा-रूपेण=रूपमात्रदर्शनेन परिचारणा - इयं पञ्चमषष्ठब्रह्मलान्तक-स्थितानां देवानां भवति। तथा-शब्दपरिचारणा-शब्देन=देवाङ्गनाशब्दश्रवण मात्रेणैव या परिचारणा सा। इयं सप्तमाष्टममहाशुक्रसहस्रारकल्पस्थितानां देवानां भवति। तथा-मनःपरिचारणा-मनसा=मनःसंकल्पेनैव परिचारणा।

अन्य देवोंको नहीं होती है, क्योंकि संक्लिष्ट उदयवाले पुरुष वेदके प्रभावसे मनुष्यकी तरहही कायसे मैथुन क्रियामें प्रवृत्त होते हैं। जो परिचारणा स्पर्शसे शरीरके छूने मात्रसे ही होती है, यह स्पर्श-परिचारणा है, यह परिचारणा तृतीय और चतुर्थ देवलोकमें स्थित देवोंको होती है, सनत्कुमार और माहेन्द्र ये दो देवलोक तृतीय और चतुर्थ देवलोकहैं। रूपमात्रके देखनेसे जो परिचारणा होती है, वह रूपपरिचारणा है, यह परिचारणा पांचवें देवलोकमें ब्रह्म देवलोकमें और छट्टे देवलोकमें लान्तक देवलोकमें स्थित देवोंकोही होती है, तथा शब्दसे देवाङ्गनाओंके शब्द सुनने मात्रसे ही जो परिचारणा होती है, वह शब्द परिचारणा है, यह परिचारण सातवें और आठवें देवलोकमें स्थित देवोंके होती है, मनः परिचारणा केवल संकल्पसे हुई परिचा-रणा आनत प्राणत आरण और अच्युत इन नौवें दशवें ग्यारहवें

કારણ કે સંકિલષ્ટ ઉદયવાળા પુરુષવેદના પ્રભાવથી તેઓ મનુષ્યોની જેમ જ કાયા વડે મૈથુન ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત રહેતા હોય છે. જે પરિચારણા માત્ર સ્પર્શ-શરીરના સ્પર્શ દ્વારા જ થાય છે, તે પરિચારણાને કાયપરિચારણા કહે છે. સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર નામના ત્રીજા અને ચોથા દેવલોકમાં જે દેવ-દેવીઓ રહે છે, તેમનામાં કાયપરિચારણાનો સદ્ભાવ હોય છે. માત્ર રૂપ જોઇને જે પરિચારણા થાય છે, તેને રૂપપરિચારણા કહે છે. પાંચમાં બ્રહ્મલોક અને છઠ્ઠા લાન્તક દેવલોકના દેવોમાં આ પ્રકારની પરિચારણાનો સદ્ભાવ હોય છે. શબ્દ દ્વારા જ એટલે કે દેવાંગનાઓના શબ્દને શ્રવણ કરવા માત્રથી જ જે પરિ-ચારણા થાય છે તેને શબ્દ પરિચારણા કહે છે. સાતમાં અને આઠમાં દેવ-દેવલોકમાં રહેલા દેવોમાં શબ્દ પરિચારણાનો સદ્ભાવ હોય છે. જે પરિ-ચારણા કેવળ સંકલ્પ દ્વારા જ થાય છે તે પરિચારણાને મનઃ પરિચારણા કહે

इयं नवमदशमैकादशद्वादशाऽऽनत प्राणतारणाच्युतकल्पस्थितानां देवानां भवति। ग्रैवेयकादि स्थितानां देवानां तु परिचारणा न भवतीति बोध्यम् ॥ सू० १५ ॥

अथ देवाधिकाराद्देवानामग्रमहिषीप्ररूपणमाह—

मूलम्—चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो पंच अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा—काली १, राई २, रयणी ३, विज्जू ४, मेहा ५। बलिस्स णं वइरोयणिंदस्स वइरोयणरण्णो पंच अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा—सुंभा १, णिसुंभा २, रंभा ३ णिरंभा ४, मयणा ५ ॥ सू० १६ ॥

छाया—चमरस्य खलु असुरेन्द्रस्य असुरकुमारराजस्य पञ्च अग्रमहिष्यः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—काली १, रात्री २, रजनी ३, विद्युत् ४, मेघा ५। बलेः खलु वैरोचनेन्द्रस्य वैरोचनराजस्य पञ्च अग्रमहिष्यः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—शुम्भा १, निशुम्भा २, रम्भा ३, निरम्भा ४, मदना ५ ॥सू० १६॥

एवं बारहवें देवलोकोंमें स्थित देवलोकोंके होती है, ग्रैवेयक आदिमें स्थित देवोंको तो परिचारणा है ही नहीं ॥ सू० १५ ॥

अब देवोंकी अग्रमहिषियोंकी प्ररूपणा सूत्रकार करते हैं—

'चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो' इत्यादि सूत्र १६ ॥

टीकार्थ—असुरोंके इन्द्र असुरकुमार राज चमरकी पांच अग्रमहिषियां कही गईहैं, जैसे—काली १ रात्री २ रजनी ३ विद्युत् ४ और मेघा ५। दक्षिणनिकायका यह चमर इन्द्र है, तथा उत्तर निकायका इन्द्र जो

છે. નવથી લઈને ૧૨ માં દેવલોકના દેવોમાં મનઃ પરિચારણાનો સદ્ભાવ હોય છે. ગ્રૈવેયક આદિ વિમાનોમાં તો પરિચારણાનો સદ્ભાવ જ હોતો નથી. ॥ સૂ. ૧૫ ॥

હવે સૂત્રકાર દેવોની અગ્રમહીષીઓની પ્રરૂપણા કરે છે—

"ચમરસ્સ ણં અસુરિંદસ્સ અસુરકુમારરણ્ણો" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—અસુરોના ઇન્દ્ર, અસુરકુમાર રાય ચમરને પાંચ અગ્રમહિષીઓ છે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે—(૧) કાલી, (૨) રાત્રી, (૩) રજની, (૪) વિદ્યુત્ અને (૫) મેઘા. આ ચમર દક્ષિણનિકાયનો ઇન્દ્ર છે. ઉત્તરનિકાયનો જે બલિ

टीका—'चमरस्स णं' इत्यादि—

व्याख्या सुगमा, नवरम्—चमरो दक्षिणनिकायेन्द्रो, बलिस्तु उत्तरनिकायेन्द्रः ॥ सू० १६ ॥

सम्प्रति चमरेन्द्रादीनां सांग्रामिकान् अनीकान् अनीकाधिपतींश्च निरूपयति—

मूलम्—चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो पंच संगामिया अणिया, पंच संगामियाणियाहिवई पण्णत्ता, तं जहा—पायत्ताणिए १, पीढाणिए २, कुंजराणिए ३, महिसाणिए ४, रहाणिए ५। दुमे पायत्ताणियाहिवई सोदामी आसराया पीढाणियाहिवई, कुन्थू हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, लोहियक्खे महिसाणियाहिवई, किन्नरे रहाणियाहिवई । बलिस्स णं वइरोयणिंदस्स वइरोयणरण्णो पंच संगामिया अणिया पंच संगामियाणियाहिवई पण्णत्ता, तं जहा—पायत्ताणिए जाव रहाणिए । महद्दुमे पायत्ताणियाहिवई, महासोयामो आसराया पीढाणियाहिवई, मालंकारो हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, महालोहियक्खो महिसाणियाहिवई, किंपुरिसे रहाणियाहिवई । धरणस्स णं णागकुमारिंदस्स णागकुमाररण्णो पंच संगामिया अणिया पंच संगामियाणियाहिवई पण्णत्ता, तं जहा—पायत्ताणिए जाव रहाणिए । भद्दसेणे पायत्ताणियाहिवई, जसोधरे आसराया पीढाणियाहिवई, सुदंसणे हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, नीलकंठे महिसाणियाहिवई, आणंदे रहाणियाहिवई । भूयाणंदस्स नागकुमा-

बलि है, इसकी भी पांच अग्रमहिषियां कही गई हैं । जैसे—शुम्भा १ निशुम्भा २ रम्भा ३ निरम्भा ४ और मदना ५ ॥ सू० १६ ॥

નામનો ઈન્દ્ર છે તેની પાંચ અગ્રમહિષીઓનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) શુમ્ભા, (૨) નિશુમ્ભા, (૩) રંભા, (૪) નિરંભા અને (૫) મદના. સૂ. ૧૬

रिंदस्स नागकुमाररण्णो पंच संगामिया अणिया पंच संगामियाहिवई पण्णत्ता, तं जहा—पायत्ताणिए जाव रहाणिए । दक्खे पायत्ताणियाहिवई, सुग्गीवे आसराया पीढाणियाहिवई, सुविक्कमे हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, सेयकंठे महिसाणियाहिवई, नंदुत्तरे रहाणियाहिवई । वेणुदेवस्स णं सुवण्णिंदस्स सुवण्णकुमाररण्णो पंच संगामिया अणिया पंच संगामियाणियाहिवई पण्णत्ता, तं जहा—पायत्ताणिए जाव रहाणिए, एवं जहा धरणस्स तहा वेणुदेवस्स वि । वेणुदालिस्स जहा भूयाणंदस्स । जहा धरणस्स तहा सव्वेसिं दाहिणिल्लाणं जाव घोसस्स । जहा भूयाणंदस्स तहा सव्वेसिं उत्तरिल्लाणं जाव महाघोसस्स । सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो पंच संगामिया अणिया पंच संगामियाणियाहिवई पण्णत्ता, तं जहा—पायत्ताणिए जाव उसभाणिए रहाणिए । हरिणेगमेसी पायत्ताणियाहिवई, वाऊ आसराया पीढाणियाहिवई, एरावणे हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, दामड्ढी उसभाणियाहिवई, माढरो रहाणियाहिवई । ईसाणस्स णं देविंदस्स देवरण्णो पंच संगामिया अणिया जाव पायत्ताणिए १, पीढाणिए २, कुंजराणिए ३, उसभाणिए ४, रहाणिए ५। लहुपरक्कमे पायत्ताणियाहिवई, महावाऊ आसराया पीढाणियाहिवई पुप्फदंते हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, महादामड्ढी उसभाणियाहिवई, महामाढरे रहाणियाहिवई । जहा सक्कस्स तहा सव्वेसिं दाहिणिल्लाणं, जाव आरणस्स । जहा ईसाणस्स तहा सव्वेसिं उत्तरिल्लाणं जाव अच्चुयस्स ॥ सू० १७ ॥

छाया—चमरस्य खलु असुरेन्द्रस्य असुरराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च सांग्रामिकाऽनीकाधिपतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पादातानीकः, पीठानीकः, कुञ्जरानीकः, महिषानीकः रथानीकः । द्रुमः पादातानीकाधिपतिः सौदामी अश्वराजः पीठानीकाधिपतिः, कुन्थुर्हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः, लोहिताक्षो महिषानीकाधिपतिः, किन्नरो रथानीकाधिपतिः बलेः खलु वैरोचनेन्द्रस्य वैरोचनराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च सांग्रामिका नीकाधिपतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पादातानीको यावद्रथानीकः । महाद्रुमः पादातानीकाधिपतिः, महासौदामः अश्वराजः

अब सूत्रकार चमरेन्द्र आदिकोंके सांग्रामिके अनीकों एवं अनीकाधिपतियोंकी प्ररूपणा करते हैं--

'चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो' इत्यादि

सूत्रार्थ—असुरकुमार इन्द्र एवं असुरकुमार राज चमरकी पांच सांग्रामिक अनीक सेनाएँ और पांचही उनके अधिपति सेनापति कहे गयेहैं, जैसे—पादातानीक १ पीठानीक २ कुञ्जरानीक ३ महिषानीक ४ और रथानीक ५ ।

पादातानीकका अधिपति द्रुम है, अश्वराज सौदामी पीठानीकका अधिपति है, हस्तिराज कुन्थु कुञ्जरानीकका अधिपति है, महिषानीकका अधिपति लोहिताक्ष है, रथानीकका अधिपति किन्नर है, वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि इन्द्रके पांच सांग्रामिक अनीकहैं, और पांचही सांग्रामिक अनीकाधिपति हैं, जैसे—पादातानीक यावत् रथानीक पादा-

---

હવે સૂત્રકાર ચમરેન્દ્ર આદિકોના સાંગ્રામિક અનીકો (સેનાઓ) ની અને અનીકાધિપતિઓની પ્રરૂપણા કરે છે.

સૂત્રાર્થ–" चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो " ઈત્યાદિ—

અસુરકુમારોના ઈન્દ્ર અસુરકુમારરાય ચમરની પાંચ સાંગ્રામિક સેનાઓ છે અને તેમના અધિપતિ (સેનાપતિ) પણ પાંચ કહ્યા છે. પાંચ અનીકો (સેનાઓ) નીચે પ્રમાણે છે—(૧) પાદાતાનીક, (૨) પીઠાનીક, (૩) કુંજરાનીક, (૪) મહીષાનીક અને (૫) રથાનિક.

પાદાતાનીક (પાયદળ સેના) નો અધિપતિ દ્રુમ છે. પીઠાનીક (હયદળ) નો અધિપતિ હસ્તિરાજ કુન્થુ છે. મહીષાનીક (પાડાઓ પર સવાર થનારૂં સૈન્ય) નો અધિપતિ લોહિતાક્ષ છે, અને રથાનિકનો અધિપતિ કિન્નર છે.

વૈરોચનેન્દ્ર વૈરોચનરાય બલિની પણ ચમરની સેનાઓ જેવી જ પાંચ સેનાઓ છે, અને તે સાંગ્રામિક સેનાઓના પાંચ અધિપતિ છે. તેની પાયદળ

पीठानीकाधिपतिः, मालंकरो हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः महालोहिताक्षो महिषानीकाधिपतिः, किंपुरुषो रथानीकाधिपतिः। धरणस्य खलु नागकुमारेन्द्रस्य नागकुमारराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च सांग्रामिकानीकाधिपतयः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—पादातानीको यावद् रथानीकः। भद्रसेनः पादातानीकाधिपतिः, यशोधरः अश्वराजः पीठानीकाधिपतिः, सुदर्शनो हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः, नीलकण्ठो महिषानीकाधिपतिः आनन्दो रथानीकाधिपतिः। भूतानन्दस्य नागकुमारेन्द्रस्य नागकुमारराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च सांग्रामिकानीकाधिपतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पादातानीको यावद् रथानीकः। दक्षः पादातानी-

---

तानीकका अधिपति महाद्रुम है, इत्यादि सब नाम कथन चमरके अनीकाधिपतिके जैसाही जानना चाहिये अर्थात् पादातानीकका अधिपति महाद्रुम है, पीठानीकका अधिपति अश्वराज महासौदाम है, कुञ्जरानीकका अधिपति हस्तिराज मालङ्कार है, महिषानीकका अधिपति महालोहिताक्ष है, और रथानीकका अधिपति किंपुरुष है, नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज धरणके पांच सांग्रामिक अनीक हैं, और पांचही सांग्रामिक अनीकाधिपति हैं, पादातानीक यावत् रथानीक ये पांच अनीक हैं, और इनके अधिपति क्रमशः भद्रसेन यशोधर सुदर्शन नीलकण्ठ और आनन्द हैं, अर्थात् पादातानीकका अधिपति भद्रसेन हैं, पीठानीकका अधिपति अश्वराज यशोधर है, कुंजरानीकका अधिपति हस्तिराज सुदर्शन है, महिषानीकका अधिपति नीलकण्ठ है, और रथानीकका अधिपति आनन्द है, नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज भूतानन्दके पांच सांग्रामिक अनीक और पांचही इन के सांग्रा-

---

સેનાનો અધિપતિ મહાદ્રુમ છે હયદળનો અધિનતિ અશ્વરાજ મહાસૌદામ હસ્તિદળનો અધિપતિ હસ્તિરાજ માલંકાર છે મહિષાનીકનો અધિપતિ મહાલોહિતાક્ષ છે, અને રથાનીકનો અધિપતિ કિંપુરુષ છે.

નાગકુમારેન્દ્ર નાગકુમારરાય ધરણની પાંચ સાંગ્રામિક સેનાઓ છે, તેમનાં નામો પણ પાદાતાનીક (પાયદળ સૈન્ય) આદિ છે. તે સેનાઓના પણ પાંચ અધિપતિ છે તેમનાં નામ અનુક્રમે ભદ્રસેન, યશોધર, સુદર્શન, નીલકંઠ અને આનંદ છે એટલે કે તેની પાયદળ સેનાનો અધિપતિ ભદ્રસેન હયદળનો અધિપતિ અશ્વરાજ યશોધર, કુંજરાનીકનો અધિપતિ હસ્તિરાજ સુદર્શન, મહિષાનીકનો અધિપતિ નીલકંઠ અને રથાનીકનો અધિપતિ આનંદ છે. નાગકુમારેન્દ્ર નાગકુમારરાય ભૂતાનન્દની પાસે પણ અસુરેન્દ્ર ચમરના

काधिपतिः, सुग्रीवः अश्वराजः पीठानीकाधिपतिः, सुविक्रमो हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः, नीलकण्ठो महिषानीकाधिपतिः, नन्दोत्तरो रथानीकाधिपतिः। वेणुदेवस्य खलु सुपर्णेन्द्रस्य सुपर्णकुमारराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च सांग्रामिकानीकाधिपतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–पादातानीकः, यावद् रथानीकः, एवं यथा धरणस्य तथा वेणुदेवस्यापि। वेणुदालिकस्य, यथा भूतानन्दस्य। यथा धरणस्य तथा सर्वेषां दाक्षिणात्यानां यावद् घोषस्य। यथा भूतानन्दस्य तथा

मिक अनीकाधिपति हैं, अनीक के नाम पादातानीक यावत् रथानीक हैं, और इनके अधिपतियोंके नाम दक्ष सुग्रीव सुविक्रम नीलकण्ठ और नन्दोत्तर हैं, इनमें दक्ष पादातानीकका अधिपति है, अश्वराज सुग्रीव पीठानीकका अधिपति है, हस्तिराज सुविक्रम कुंजरानीकका अधिपति है, नीलकण्ठ महिषानीकका अधिपति है, और नन्दोत्तर रथानीकका अधिपति है, सुपर्णेन्द्र सुपर्णकुमारराज वेणुदेवके पांच सांग्रामिक अनीकाधिपति हैं, धरणके अनीकाधिपतियोंका जैसा नाम है, वैसाही नाम वेणुदेवके सांग्रामिक अनीकाधिपतियोंकाभीहै, वेणुदालिकके अनीक और अनीकाधिपतियोंके नामका कथन जैसा भूतानन्दके अनीक और अनीकाधिपतियोंका नाम कहा गया है, वैसा ही है। जैसा धरणके अनीक और अनीकाधिपतियोंके नामका कथन है, वैसाही समस्त दक्षिणके घोष तकके अनीक और अनीकाधिपति-

---

જેવી જ પાંચ સાંગ્રામિક સેનાઓ (અનીકો) છે. અને પાંચ સાંગ્રામિક અનીકાધિપતિયો છે. તેના નામ પાદાન્તાનીક યાવત્ રથાનીક તેના પાદાતાનીક (પાયદળ સૈન્ય) નો અધિપતિ દક્ષ છે, પીઠાનીકનો (હયદળનો) અધિપતિ અશ્વરાજ સુગ્રીવ છે, કુંજરાનીકનો અધિપતિ હસ્તિરાજ સુવિક્રમ છે, મહિષાનીકનો અધિપતિ નીલકંઠ છે અને રથાનીકનો અધિપતિ નન્દોત્તર છે.

સુપર્ણેન્દ્ર સુપર્ણ કુમારરાય વેણુદેવની પણ એવી જ પાંચ સાંગ્રામિક સેનાઓ છે. તેની સેનાના અધિપતિઓનાં નામ ધરણની સેનાના અધિપતિઓનાં નામ પ્રમાણે જ સમજવા.

વેણુદાલિકની સેનાઓ અને સેનાધિપતિઓના નામોનું કથન ભૂતાનંદની સેનાઓ અને સેનાધિપતિયોની અનુસાર જ સમજવું. જેવું ધરણની સાંગ્રામિક સેનાઓનું અને તે સેનાઓના અધિપતિઓના નામોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન ઘોષ પર્યન્તના સમસ્ત

सर्वेषाम् उत्तरीयाणां यावद् महाघोषस्य। शक्रस्य खलु देवेन्द्रस्य देवराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च सांग्रामिकानीकाधिपतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–पादातानीको यावद् वृषभानीको रथानीकः। हरिणैगमैषी पादातानीकाधिपतिः, वायुरश्वराजः पीठानीकाधिपतिः ऐरावणो हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः, दामर्द्धिः वृषभानीकाधिपतिः, माठरो रथानीकाधिपतिः। ईशानस्य खलु देवेन्द्रस्य देवराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः यावत् पादातानीकः १ पीठानीकः २, कुञ्जरानीकः, ३ वृषभानीकः ४, रथानीकः ५। लघुपराक्रमः पादातानीकाधिपतिः, महावायुरश्वराजः पीठानीकाधिपतिः पुष्पदन्तो हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः।

योंके नामका कथन है, और जैसा भूतानन्दके अनीक और अनीकाधिपतियोंका नाम है, वैसाही नाम समस्त उत्तरके महाघोष तकके निकायेन्द्रोंके अनीक और अनीकाधिपतियोंका है। देवेन्द्र देवराज शक्रके पांच सांग्रामिक अनीक और पांचही सांग्रामिक अनीकाधिपति कहे गये हैं। पांच अनीक इस प्रकारसे हैं–पादातानीक यावत् वृषभानीक रथानीक। इनका पादातानीकाधिपति हरिणैगमैषी है, अश्वराज वायु पीठानीकाधिपति है। हस्तिराज ऐरावण कुञ्जरानीकाधिपति है, दामर्द्धि वृषभानीकाधिपति है, और माठर रथानीकाधिपति है, देवेन्द्र देवराज ईशानके पांच सांग्रामिक अनीक हैं, यावत् पांचही सांग्रामिक अनीकाधिपति हैं, इनमें पादानीकका अधिपति लघुपराक्रम है, अश्वराज महावायु पीठानीकका अधिपति है, पुष्पदन्त हस्तिराज कुञ्जरा-

દક્ષિણના ઇન્દ્રોની સેનાઓ અને સેનાધિપતિઓ વિષે પણ સમજવું. જેવાં ભૂતાનન્દની સાંગ્રામિક સેનાઓના નામ કહેવામાં આવ્યાં છે, એવાં જ મહાઘોષ પર્યન્તના ઉત્તરનિકાયના ઇન્દ્રોની સેનાઓ અને સેનાધિપતિઓનાં નામ સમજી લેવાં

દેવેન્દ્ર દેવરાજ શક્રની પણ પાંચ જ સાંગ્રામિક સેનાઓ કહી છે. તે સેનાઓના અધિપતિ પણ પાંચ જ કહ્યાં છે.

તેમની પાંચ સેનાઓનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) પાદાતાનીક, (૨) પીઠાનીક, (૩) કુંજરાનીક, (૪) વૃષભાનીક અને (૫) રથાનીક.

તેમનો પાદાતાનીકાધિપતિ હરિણૈગમૈષી છે, પીઠાનિકાધિપતિ અશ્વરાજ વાયુ છે, કુંજરાનીકાધિપતિ હસ્તિરાજ ઐરાવણ છે, વૃષભાનીકાધિપતિ દામર્દ્ધિ છે અને રથાનીકાધિપતિ માઠર છે. દેવેન્દ્ર દેવરાજ ઈશાનની પણ શક્રના જેવી જ પાંચ સાંગ્રામિક સેનાઓ છે. તે સેનાઓના અધિપતિઓનાં નામ

महादामर्द्धिः वृषभानीकाधिपतिः महामाठरः रथानीकाधिपतिः यथा शक्रस्य तथा सर्वेषां दाक्षिणात्यानां यावत् आरणस्य। यथा ईशानस्य तथा सर्वेषाम् उत्तरीयाणां यावदच्युतस्य ॥सू० १७॥

टीका—' चमरस्स णं ' इत्यादि—

व्याख्या सुगमा। विशेषस्त्वयम्—अनीकाः=सैन्यानि। ' सांग्रामिके '-ति विशेषणोपादानं गान्धर्वनाट्यानीकयोर्व्यवच्छेदार्थम्। पादातानीकाधिपतिः-पदातीनां समूहः पादातं, तद्रूपस्यानीकस्याधिपतिः=स्वामी। अयं पदातिरेव बोध्यः। पीठानीकाधिपतिः—पीठानीकम्—अश्वसैन्यं, तस्याधिपतिः। अयमश्व एव बोध्यः।

नीकका अधिपति है, जिस प्रकारसे शक्रके अनीक और अनीकाधिपतियोंके ये नाम कहे गये हैं, उसी प्रकारसे समस्त दाक्षिणात्योंके यावत् आरण तकके इन्द्रोंके अनीकके और अनीकाधिपतियोंके नाम जानना चाहिये और ईशानके अनीकके और अनीकाधिपतियोंके जैसे-नाम कहे गये हैं वैसेही समस्त उत्तरके इन्द्रोंके यावत् अच्युत तकके इन्द्रके अनीक और अनीकाधिपतियोंके नाम जानना चाहिये

टीकार्थ—इस सूत्रमें जो सांग्रामिक विशेषण दिया गयाहै, वह गान्धर्वानीक और नाट्यानीकके व्यवच्छेदके लिये दिया गया है, पादातियोंका-पैदल चलनेवालोंका जो समूह है, वह पादाति है, इन पादातोंकी जो सेना है, वह पादातानीक है, इस पादातानीकका जो अधिपति-स्वामी होता है, वह पादातानीकाधिपति है, यह पादातानीकाधिपति भी पदाति ही होता है, पीठानीक अश्व सैन्यरूप होता है, इस अश्वसैन्यका जो

નીચે પ્રમાણે છે—પાદાનીકનો અધિપતિ લઘુપરાક્રમ છે, પીઠાનીકનો અધિપતિ અશ્વરાજ મહાવાયુ છે, કુંજરાનીકનો અધિપતિ હસ્તિરાજ પુષ્પદન્ત છે.

શક્રની સાંગ્રામિક સેનાઓ અને સેનાપતિઓનાં જેવા નામ આપવામાં આવ્યાં છે, એવાં જ આરણ પર્યન્તના દક્ષિણના ઇન્દ્રોની સેનાઓ અને સેનાધિપતિઓનાં નામ સમજી લેવા. ઇશાનેન્દ્રની સેનાઓ અને સેનાધિપતિઓના જેવા નામ આપવામાં આવ્યાં છે એવા જ અચ્યુત પર્યન્તના ઉત્તરના ઇન્દ્રોની સેનાઓ અને સેનાધિપતિઓના નામ સમજવા જોઇએ.

ટીકાર્થ-આ સૂત્રમાં અનીકોની આગળ જે સાંગ્રામિક વિશેષણનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે, તે ગાન્ધર્વાનીક અને નાટયાનીકનો વ્યવચ્છેદ કરવા નિમિત્તે કરવામાં આવેલ છે. પાદાતિ અથવા પાયદળ સેનાને પાદાતાનીક કહે છે. તે પાદાતાનીકનો જે અધિપતિ હોય છે તેને પાદાતાનીકાધિપતિ કહે છે. તે પાદાતાનીકાધિપતિ પણ પદાતિ જ હોય છે. અશ્વદળને પીઠાનીક કહે છે. તે

एवमेव कुञ्जरानीकाधिपतिः कुञ्जरः, महिषानीकाधिपतिर्महिषः, वृषभानीकाधिपतिर्वृषभः, रथानीकाधिपतिश्च रथो बोध्य इति । भवनपतिनिकायेषु दश दक्षिणनिकायेन्द्रा दशउत्तरनिकायेन्द्राश्च सन्ति । तत्र दक्षिणनिकायेन्द्राः—चमरो १, धरणो २, वेणुदेवो ३, हरिकान्तः ४, अग्निशिखः ५, पूर्णः ६, जलकान्तः ७, अमितगतिः ८, वेलम्बो ९, घोषश्च १० । उत्तरनिकायेन्द्राश्च-बलिः १, भूतानन्दः २, वेणुदालिः ३, हरिसहः ४, अग्निमाणवः ५, वसिष्ठः ६, जलप्रभः ७, अमितवाहनः ८, प्रभञ्जनः ९, महाघोषश्चेति १०। सौधर्मादिषु कल्पेषु दश

अधिपति होता है, वह पीठानीकाधिपति कहा गया है । यह पीठानीकाधिपति अश्वरूपही होता है, इसी प्रकारसे जो कुञ्जराधिपति होता है, वह भी कुंजर रूपही होता है । महिषानीकका जो अधिपति होता है वह महिष-भैसा रूप होताहै, और वृषभानीकका जो अधिपति होताहै है, वह वृषभ होताहै। तथा रथानीकका जो अधिपति होताहै, वह रथ होता है। भवनपति निकायमें दश दक्षिण निकायके इन्द्र होतेहैं और दश उत्तर निकायके इन्द्र होते हैं । इनमें दक्षिण निकायके इन्द्रोंके नाम इस प्रकारसे हैं-चमरेन्द्र १ धरण २ वेणुदेव ३ हरिकान्त ४ अग्निशिख ५ पूर्ण ६ जलकान्त७ अमितगति८ वेलम्ब९ और घोष १० उत्तरनिकायके इन्द्रोंके नाम इस प्रकारसे हैं-बलि १ भूतानन्द २ वेणुदालि ३ हरिसह ४ अग्निमाणव ५ वसिष्ठ ६ जलप्रभ ७ अमितवाहन ८ प्रभञ्जन ९ एवं

અશ્વદળના અધિપતિને પીઠાનીકાધિપતિ કહે છે. તે પીઠાનીકાધિપતિ અશ્વરૂપ જ હોય છે. હસ્તિદળને કુંજરાનીક કહે છે અને તેના અધિપતિને કુંજરાનીકાધિપતિ કુંજર રૂપ (હાથી રૂપ) જ હોય છે મહીષ એટલે પાડા. એવી પાડાઓની સેનાને મહીષાનીક કહે છે. તેના અધિપતિ પણ મહીષ રૂપ જ હોય છે. વૃષભ એટલે બળદ. વૃષભોની સેનાને વૃષભાનિક કહે છે અને તેના અધિપતિ પણ વૃષભ જ હોય છે. રથાનીકના અધિપતિ પણ રથ જ હોય છે.

ભવનપતિ નિકાયમાં ઉત્તરનિકાયના દસ ઇન્દ્રો હોય છે. દક્ષિણનિકાયના ઇન્દ્રોનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) ચમરેન્દ્ર, (૨) ધરણ, (૩) વેણુદેવ, (૪) હરિકાન્ત, (૫) અગ્નિશિખ, (૬) પૂર્ણ, (૭) જલકાન્ત, (૮) અમિતગતિ (૯) વેલમ્બ અને (૧૦) ઘોષ.

ઉત્તરનિકાયના ઇન્દ્રોનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) બલિ, (૨) ભૂતાનન્દ (૩) વેણુદાલિ, (૪) હરિસહ, (૫) અગ્નિમાણવ, (૬) વસિષ્ઠ, (૭) જલપ્રભ, (૮) અમિતવાહન, (૯) પ્રભંજન અને (૧૦) મહાઘોષ.

इन्द्रा भवन्ति। तत्र दाक्षिणात्यानां सौधर्मसनत्कुमारब्रह्मलोकशुक्रानतारणानां षण्णां चत्वार इन्द्रा भवन्ति। तथा उत्तरीयाणाम् ईशानमाहेन्द्रलान्तकसहस्रार-प्राणताच्युतानां षण्णां षडिन्द्रा भवन्ति। आनतारणौ यद्यपीन्द्रानधिष्ठितौ तथापि प्राणताच्युतेन्द्राधीनत्वादेतावप्यत्र सेन्द्रावुक्ताविति न कश्चिद् दोष इति ॥सू० १७॥

सम्प्रति शक्रस्याभ्यन्तरपरिषद्वर्तिनां देवानाम्, ईशानस्याभ्यन्तरपरिषद्-वर्तिनीनां देवीनां च स्थितिप्रमाणमाह—

मूलम्—सक्कस्स णं देविंदस्स देवरन्नो अब्भिंतरपरिसाए देवाणं पंच पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। ईसाणस्स णं देविं-दस्स देवरन्नो अब्भिंतरपरिसाए देवीणं पंच पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ सू० १८ ॥

महाबोध १० सौधर्मादि कल्पोंमें १० इन्द्र होते हैं, इनमें दाक्षिणात्य कल्पोंके सौधर्म सनत्कुमार ब्रह्मलोक शुक्र आनत और आरण इन छह देवलोकोंके चार इन्द्र होते हैं, तथा उत्तर दिशाके कल्पोंके-ईशान, माहेन्द्र, लान्तक, सहस्रार, प्राणत और आरण ये दो कल्प इन्द्रसे अनधिष्ठित हैं, तो भी प्राणतेन्द्र और अच्युतेन्द्र इनके अधीन होनेसे ये दोनों भी इन्द्र सहित कहे गये हैं इस तरहसे इस कथनमें कोई दोष नहीं है ॥ सू० १७॥

अब सूत्रकार शक्रकी आभ्यन्तर परिषदाके देवोंकी और ईशानकी आभ्यन्तर परिषदाकी देवियोंकी स्थितिका प्रमाण कहते हैं—

સૌધર્માદિ કલ્પોના ૧૦ ઇન્દ્ર હોય છે. તેમાંથી સૌધર્મ, સનત્કુમાર, બ્રહ્મલોક, શુક્ર, આનત અને પ્રાણત, આ ૭ દાક્ષિણાત્ય કલ્પો છે. તે ૭ કલ્પોના ૪ ઇન્દ્રો હોય છે, અને ઇશાન, માહેન્દ્ર, લાન્તક, સહસાર, પ્રાણત અને અચ્યુત, આ ૭ ઉત્તર દિશાના કલ્પો છે. તે ૭ કલ્પોના ૭ ઇન્દ્રો હોય છે. જો કે આનત અને આરણ આ બે કલ્પો ઇન્દ્ર દ્વારા અનધિષ્ઠિત છે, છતાં પણ પ્રાણતેન્દ્ર અને અચ્યુતેન્દ્ર તેમને અધીન હોવાથી, એ બન્ને કલ્પોને ઇન્દ્ર સહિતના કહેવામાં આવ્યાં છે આ રીતે આ કથનમાં કોઈ દોષ નથી. ॥ સૂ. ૧૭ ॥

હવે સૂત્રકાર શક્રની આભ્યન્તર પરિષદના દેવોની તથા ઇશાનની આભ્ય-ન્તર પરિષદના દેવોની સ્થિતિ કેટલી છે તે પ્રકટ કરે છે.

छाया—शक्रस्य खलु देवेन्द्रस्य देवराजस्य आभ्यन्तरपरिषदो देवानां पञ्च पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ईशानस्य खलु देवेन्द्रस्य आभ्यन्तरपरिषदो देवीनां पञ्च पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ताः ॥सू० १८॥

टीका—'सक्कस्स णं' इत्यादि। व्याख्या स्पष्टा ॥ सू०१८ ॥

इत्थं देववक्तव्यता प्रोक्ता। दुष्टाध्यवसायवतः प्राणिनस्तु तद्गतिस्थित्यादीनां प्रतिघातो भवतीति तन्निरूपणाय प्राह—

मूलम्—पंचविहा पडिहा पण्णत्ता, तं जहा-गइपडिहा १, ठिइपडिहा २, बंधणपडिहा ३, भोगपडिहा ४, बलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमपडिहा ॥ ५ ॥ सू० १९ ॥

छाया—पञ्चविधः प्रतिघः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-गतिप्रतिघः १, स्थितिप्रतिघः बन्धनप्रतिघः ३, भोगप्रतिघः ४, बलवीर्य पुरुषकारपराक्रमप्रतिघः५ सू०१९

टीका—'पंचविहा' इत्यादि—

प्रतिहननं प्रतिघः, 'अन्यत्रापि दृश्यते' इति सूत्रेण हन्धातो ड प्रत्यये न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्, प्रतिघात इत्यर्थः, स च पञ्चविधः प्रज्ञप्तः। तद्यथा—

'सक्कस्स णं देविंदस्स देवरन्नो' इत्यादि सूत्र १८ ॥

सूत्रार्थ—देवेन्द्र देवराज शक्रकी आभ्यन्तर परिषदाके देवोंकी स्थिति पांच पल्योपम प्रमाण कही गई है, इसी प्रकार देवेन्द्र देवराज ईशानकी आभ्यन्तर परिषदाकी देवियां हैं, उनकी भी स्थिति पांच पल्योपम प्रमाण कही गई है ॥ सू० १८ ॥

इस प्रकारसे देव वक्तव्यता कहकर अब सूत्रकार दुष्ट अध्यवसायवाले प्राणीके देवगतिका और उसकी स्थिति आदिका प्रतिघात होता है, इस बातकी अब प्ररूपणा करते हैं—

"सक्कस्स ण देविंदस्स देवरण्णो" ઈત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—દેવેન્દ્ર દેવરાય શક્રની આભ્યન્તર પરિષદના દેવોની સ્થિતિ પાંચ પલ્યોપમ પ્રમાણુ કહી છે. એ જ પ્રમાણે દેવેન્દ્ર દેવરાય ઈશાનની આભ્યન્તર પરિષદાની દેવીઓની સ્થિતિ પણુ પાંચ પલ્યોપમ પ્રમાણુ કહી છે. ॥ સૂ. ૧૮ ॥

આ પ્રકારે દેવવક્તવ્યતાનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર દુષ્ટ અધ્યવસાયવાળા જીવોની દેવગતિનો તથા તેમની સ્થિતિ આદિનો જે પ્રતિઘાત થાય છે, તેનું નિરૂપણુ કરે છે. "પંચવિહા પડિહા પણ્ણત્તા" ઈત્યાદિ—

पञ्चविधत्वं यथा-गति-प्रतिघः-गतेः=प्रकरणवशात् शुभरूपाया देवादिगतेः प्रतिघः, शुभदेवादिगतिप्राप्तियोग्यतायां सत्यामपि विपरीत-कर्मकरणात् तदप्राप्तिरूपो गतिप्रतिघातः कण्डरीकस्येव बोध्य इति १। तथा-स्थितिप्रतिघः स्थितेः=शुभ देवादि गतिप्रायोग्यकर्मबन्धनरूपायाः स्थितेः प्रतिघः बद्धानामेव शुभदेवगतिप्रायोग्यकर्मणाम् अध्यवसायविशेषात् प्रतिघातो भवति। तदुक्तम्-

" दीहकालठिईयाओ हस्सकालठिईयाओ पगरेइ ॥"

छाया—दीर्घकालस्थितिकाः (प्रकृतीः) ह्रस्वकालस्थितिकाः प्रकरोति।

'पंचविहा पडिहा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र १९॥

टीकार्थ-प्रतिघात पांच प्रकारका कहा गयाहै-जैसे-गति प्रतिघात१ स्थिति प्रतिघात २ बन्धनप्रतिघात ३ भोगप्रतिघात ४ और बलवीर्यपुरुषकारपराक्रम प्रतिघात ५ प्रतिहननका नाम प्रतिघ है, इसका अर्थ प्रतिघात होता है, यह पांच प्रकारका कहा गया है-गतिका प्रकरणके वशसे देवादिगतिरूप शुभगतिका जो प्रतिघात है, वह गतिप्रतिघ है, शुभदेवादि गतिकी प्राप्तिकी योग्यताके होने पर भी जो विपरीत कर्मके करनेसे उसकी प्राप्ति नहीं होती है, वह गतिप्रतिघात है, जैसे कण्डरीकको यह गतिप्रतिघात हुआ है, शुभदेवगतिके प्रायोग्य कर्मबन्धन रूप स्थितिका जो प्रतिघ-प्रतिघात है, वह स्थितिप्रतिघात है, क्योंकि बद्धही शुभदेवगतिके प्रायोग्य कर्मोंका अध्यवसाय विशेषसे प्रतिघात होता है, कहा भी है-" दीहकालठिईयाओ " इत्यादि।

ટીકાર્થ-પ્રતિઘાત (વિનાશ) પાંચ પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) ગતિ પ્રતિઘાતક, (૨) સ્થિતિ પ્રતિઘાત, (૩) બન્ધન પ્રતિઘાત, (૪) ભોગ પ્રતિઘાત અને (૫) બલવીર્ય પુરુષકાર પરાક્રમ પ્રતિઘાત.

પ્રતિહનનનું નામ પ્રતિઘ છે. તેનો અર્થ પ્રતિઘાત થાય છે. તેના પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે. ગતિની અપેક્ષાએ જો વિચાર કરવામાં આવે, તો દેવાદિગતિ રૂપ શુભ ગતિનો જે પ્રતિઘાત (વિનાશ) છે, તેને ગતિપ્રતિઘ કહે છે. શુભ દેવાદિ ગતિની પ્રાપ્તિ થવાની યોગ્યતા હોવા છતાં પણ વિપરીત કર્મ કરવાને કારણે તેની પ્રાપ્તિ ન થાય, તો તે પ્રતિઘાતને ગતિ પ્રતિઘાત કહે છે. જેમકે કંડરીકને આ પ્રકારનો ગતિ પ્રતિઘાત થયો હતો. શુભ દેવગતિને યોગ્ય કર્મબન્ધન રૂપ સ્થિતિનો જે પ્રતિઘાત છે, તેને સ્થિતિ પ્રતિઘાત કહે છે, કારણ કે બદ્ધ દેવગતિને એવાં કર્મોનો અધ્યવસાય વિશેષ દ્વારા પ્રતિઘાત થાય છે. કહ્યું પણ છે કે—" दीहकालठिईयाओ " ઈત્યાદિ.

इति २। तथा-बन्धनप्रतिघः बन्धनं नामकर्मणउत्तरप्रकृतिरूपम् औदारिकादि पञ्चभेदभिन्नम्, इह प्रशस्तस्य प्रक्रमात् प्रशस्तं बन्धनं गृह्यते, तस्य प्रतिघः= प्रतिघातो बन्धनप्रतिघः। बन्धनग्रहणमुपलक्षणम्, तेन तत्सहचरितानां प्रशस्त शरीरतदङ्गोपाङ्गसंहननसंस्थानानामपि प्रतिघातो बोध्य इति ३। तथा-भोग- प्रतिघः-भोगानां-प्रशस्तगत्यादिहेतुकानां प्रतिघः=प्रतिघातः। प्रशस्तगत्यादि रूपहेतुत्वभावे तत्कार्यभूतानां भोगानामप्यभावो बोध्यः। भवति हि कारणाभावे कार्याभाव इति ४। तथा-उत्थानकर्मबलवीर्यपुरुषकारपराक्रमप्रतिघः-तत्र

दीर्घकालकी स्थितिवाली प्रकृतियोंको जो अल्पकालकी स्थितिवाला बनाना होता है, वही स्थितिप्रतिघात है, बन्धन प्रतिघात-नामकर्मकी उत्तरा प्रकृतिरूप यह बन्धन होता है, औदारिक बन्धन आदिके भेदसे यह बन्धनकर्म पांच प्रकारका होता है, प्रशस्तके प्रक्रमसे यहां प्रशस्त- बन्धनही गृहीत हुआ है, इस प्रशस्त बन्धनका जो प्रतिघात है, वह बन्धन प्रतिघ है। यहां बन्धन ग्रहण उपलक्षण है, इससे इसके जो प्रशस्त शरीर प्रशस्त अङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त संहनन और प्रशस्त संस्थान हैं, उनका भी प्रतिघात ग्रहण हुआ समझ लेना चाहिये तथा- प्रशस्त गति आदि हैं, कारण जिन्होंके ऐसे भोगोंका जो प्रतिघात है, वह भोगप्रतिघ है, प्रशस्तगति आदिरूप हेतुके अभावमें इसके कार्य- भूत भोगोंका भी अभाव हो जाता है, क्योंकि कारणके अभावमें कार्यका अभाव होता ही है ४ तथा-उत्थानका क्रमका बलवीर्य पुरुष

દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી કર્મપ્રકૃતિઓને જે અલ્પકાળની સ્થિતિવાળી બનાવવામાં આવે છે, તેનું નામ જ સ્થિતિ પ્રતિઘાત છે. બન્ધન પ્રતિઘાત— નામકર્મની ઉત્તર પ્રકૃતિરૂપ તે બન્ધન હોય છે (ઔદારિક બન્ધન આદિના ભેદથી તે બન્ધન કર્મ પાંચ પ્રકારનું હોય છે) પ્રશસ્તના પ્રક્રમની અપેક્ષાએ અહીં પ્રશસ્ત બન્ધન જ ગૃહીત થયું છે. તે પ્રશસ્ત બન્ધનનો જે પ્રતિઘાત છે, તેને બન્ધન પ્રતિઘ (બન્ધન પ્રતિઘાત) કહે છે. અહીં બન્ધન ગ્રહણ ઉપલક્ષણ છે. તેથી અહીં પ્રશસ્ત શરીર, પ્રશસ્ત અંગોપાંગ, પ્રશસ્ત સંહનન, અને પ્રશસ્ત સંસ્થાન રૂપ તેનાં જે ચરિત છે, તેમનો પ્રતિઘાત પણ ગ્રહણ થવો જોઈએ. પ્રશસ્ત ગતિ આદિ જેમના કારણો છે, એવા ભોગોનો જે પ્રતિઘાત છે, તેનું નામ ભોગપ્રતિઘ છે. પ્રશસ્ત ગતિ આદિ રૂપ હેતુ (કારણ) ના અભાવમાં તેના કાર્યભૂત ભોગોનો પણ અભાવ થઈ જાય છે, કારણ કે કારણનો અભાવ હોય તો કાર્યનો પણ અભાવ જ રહે છે. તથા ઉત્થાનનો,

उत्थानम्-ऊर्ध्वीभवनरूपकायचेष्टाविशेषः क्रमः-परिभ्रमणादिक्रिया, बलं=शारीरम्, वीर्यं=जीवजनितं, पुरुषकारः=पौरुषं, पराक्रमः-बलवीर्ययोर्व्यापारणम्, तेषां प्रतिघः=प्रतिघातः, शुभदेवगत्यादेरभावे उत्थानक्रमबलवीर्यपुरुषकारपराक्रमाणामप्यभावो भवतीति ५ ॥सू० १९॥

चारित्रातिचारवतां च देवगत्यादिप्रतिघातो भवतीति उत्तरगुणानाश्रित्य तद्भेदानाह—

मूलम्—पंचविहे आजीवे पण्णत्ते, तं जहा—जाइ आजीवे १, कुलाजीवे, २, कम्माजीवे ३, सिप्पाजीवे ४, लिंगाजीवे ५ ॥ ॥ सू० २० ॥

छाया—पञ्चविध आजीवः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-जात्याजीवः, १ कुलाजीवः, २ कर्माजीवः ३, शिल्पाजीवः, ४ लिङ्गा जीवः ५ ॥ सू० २० ॥

टीका—'पंचविहे' इत्यादि—

आजीवः-आजीवति-आश्रयति लब्धिपूजताख्यात्याद्यर्थं तपश्चर्यादिकं यः सः आजीवः-पाखण्डिविशेषः, स च पञ्चविधः प्रज्ञप्तः । तद्यथा-पञ्चविधत्वं यथा-

---

पराक्रम प्रतिघ है, खडे होनेका नाम उत्थान है, परिभ्रमण आदि क्रियाका नाम क्रम है, शारीरिक शक्तिका नाम बल है, आत्मिक शक्तिका नाम वीर्य है, पुरुषार्थका नाम-पौरुषका नाम-पुरुषकार है, और बल एवं वीर्यको किसी कार्यमें लगाना इसका नाम पराक्रम है, इन सबका भी शुभदेवगति आदिके अभावमें अभाव होता है ॥ सू० १९॥

चारित्रमें जो अतिचार लगाते हैं, ऐसे चारित्राचारवाले जीवोंकी देवगति आदिका प्रतिघात होता है, इसबातको चित्तमें धारण कर अब सूत्रकार उत्तरगुणोंको लेकर उनके भेदोंको कहते हैं—

ક્રમનો, બલવીર્યનો અને પુરુષકાર પરાક્રમનો જે પ્રતિઘાત છે, તેને ઉત્થાન ક્રમ બલવીર્ય પુરુષ પરાક્રમ પ્રતિઘ કહે છે. ઊભા થવું તેનું નામ ઉત્થાન છે, પરિભ્રમણ આદિ ક્રિયાનું નામ ક્રમ છે, શારીરિક શક્તિનું નામ બળ છે, આત્મિક શક્તિનું નામ વીર્ય છે, પુરુષાર્થ (પૌરુષ) નું નામ પુરુષકાર છે, તથા બલ અને વીર્યને કોઈ કામમાં લગાડવુ તેનું નામ પરાક્રમ છે. આ બધાનો પણ શુભ દેવગતિ આદિના અભાવમાં અભાવ જ રહે છે. ॥ સૂ. ૧૯ ॥

જે જીવોના ચારિત્રમાં અતિચાર લાગી જાય છે એવા ચારિત્રાતિચારવાળા જીવોની દેવગતિ આદિનો પ્રતિઘાત થાય છે. આ વાતને ચિત્તમાં

जात्याजीवः-जातिं=क्षत्रियादि जातिष्वाजीवति-तज्जातीयमात्मानं निर्दिश्य तेभ्यो भक्तपानादिकं गृह्णातीति जात्याजीवः। आत्मीयां क्षत्रियादिजातिमुपदर्श्य जीविकोपार्जक इत्यर्थः १। एवं कुलाजीवादयोऽपि बोध्याः। विशेषस्त्वयम्-कुलम्-उग्रादिकं गुरुकुलं वा। कर्म=कृष्यादिकम्। शिल्पं=चित्रादि विज्ञानम्। अथवा-सार्वकालिकं कर्म। कादाचित्कं शिल्पम् ५। लिङ्गम्=ज्ञानादि शून्यानां रजोहरणमुखवस्त्रिकादिरूपं साधुलिङ्गमिति ॥सू० २०॥

'पंचविहे आजीवे पण्णत्ते' इत्यादि सूत्र २० ॥

टीकार्थ-जो लब्धि पूज्यता ख्याति आदिके निमित्त तपश्चर्याआदिको करताहै, वह आजीवहै, यह आजीव पाखण्डि विशेषरूप होताहै, इसके जात्याजीव १ कुलाजीव २ कर्माजीव ३ शिल्पाजीव ४ और लिङ्गाजीवके भेदसे ५ होते हैं, जो आजीव अपनी क्षत्रिय आदि जातिका निर्देश करके अर्थात् मैं क्षत्रियजातिका हूं, ऐसा प्रकट कर जो क्षत्रियादिकोंसे भोजनादि लेता है, वह जात्याजीव है, यह आजीव अपनी क्षत्रियादि जातिको कहकर आजीविकाका उपार्जक होता है, इसी तरहसे कुलाजीवादिकोंके विषयमें भी समझ लेना चाहिये यहां कुलसे उग्रादि कुल या गुरु सम्बन्धी कुलका ग्रहण करना चाहिये कर्मसे कृषी आदिको शिल्पसे चित्र आदिके विज्ञानको अथवा-सार्वकालिक कर्मको और

ધારણ કરીને હવે સૂત્રકાર ઉત્તરગુણોની અપેક્ષાએ એવા ચારિત્રાતિચારવાળા જીવોના ભેદોનું નિરૂપણ કરે છે—" પંચવિહે આજીવે પણ્ણત્તે " ઇત્યાદિ—

જેઓ લબ્ધિ, પૂજ્યતા, ખ્યાતિ આદિની પ્રાપ્તિ નિમિત્તે તપસ્યા આદિ કરે છે તેમને 'આજીવ' કહે છે. તે આજીવ પાખંડિ વિશેષરૂપ હોય છે તેમના પાંચ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—(૧) જાત્યાજીવ, (૨) કુલાજીવ, (૩) કર્માજીવ, (૪) શિલ્પાજીવ અને (૫) લિંગાજીવ.

જે આજીવ પોતાની જાતિનો નિર્દેશ કરીને એટલે કે " હું ક્ષત્રિય જાતિનો છું " એવું પ્રકટ કરીને ક્ષત્રિયાદિકોના ઘરોમાંથી ભોજનાદિની પ્રપ્તિ કરે છે, તેને જાત્યાજીવ કહે છે. તે પોતાની ક્ષત્રિય આદિ જાતિ પ્રકટ કરીને આજીવિકાનું ઉપાર્જન કરતો હોય છે. એ જ પ્રમાણે કુલાજીવ આદિ વિષે પણ સમજવું. અહીં કુલ પદ દ્વારા ઉગ્રાદિ કુલ અથવા ગુરુ સંબંધી કુલ ગ્રહણ કરવું જોઇએ. કર્મ પદ વડે ખેતી આદિ ધંધાઓને, શિલ્પ પદ વડે ચિત્ર આદિ કલાઓને અથવા સાર્વકાલિક કર્મને અને લિંગ પદ વડે જ્ઞાના-

लिङ्गप्रक्रमात् राज्ञः पञ्चलिङ्गानि प्राह—

मूलम्—पंच रायककुहा पण्णत्ता, तं जहा—खग्गं १, छत्तं २, उप्फेसं ३, उपाणहाओ ४ बालवीयणी ५ ॥ सू० २१ ॥

छाया—पञ्च राजककुदानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—ख ं १ छत्रम् २, उष्णीषम् ३, उपानहौ ४ वालव्यजनी ५ ॥ सू० २१ ॥

टीका—'पंच रायककुहा' इत्यादि । राजककुदानि—राज्ञः ककुदानि= चिह्नानि पञ्च प्रज्ञप्तानि । तद्यथा—तानि यथा—खड्गं छत्रमित्यादि । तत्र उष्णीषं—मुकुटम् । वालव्यजनी=चामरमिति ॥ सू० २१ ॥

अनन्तरं राज्ञां पञ्च चिह्नान्युक्तानि, तद्राजश्च ऐक्ष्वाकादयो राजानो भवन्ति, तेषु गृहीतदीक्षः कश्चित् सरागोऽपि सन् सत्वाधिक्याद् यानि वस्तून्यालम्ब्य परीषहादीन् सहते तान्याह—

मूलम्—पंचहिं ठाणेहिं छउमत्थे णं उदिण्णे परिसहोवसग्गे सम्मं सहेज्जा खमेज्जा तितिक्खेज्जा अहियासेज्जा, तं जहा—उदिण्णकम्मे खलु अयंपुरिसे उम्मत्तगभूए, तेण मे एस पुरिसे अक्कोसइवा अवहसइवा णिच्छोडेइ वा णिब्भंछेइ वा बंधइ वा

लिङ्गसे ज्ञानादिसे शून्योंका रजोहरण सदोरक मुखवस्त्रिका आदि रूप साधुलिङ्गको ग्रहण करना चाहिये ॥ सू० २० ॥

लिङ्गके सम्बन्धको लेकर अब सूत्रकार राजाके पांच लिङ्गोंका कथन करते हैं—'पंच रायककुहा पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र २१ ॥

टीकार्थ—राजाके ककुह—चिह्न पांच कहे गये हैं—जैसे—खड्ग—तलवार, छत्र, उष्णीष—मुकुट, उपानह और बालव्यजन चामर ॥सू०२१॥

દિથી રહિત મુખવસ્ત્રિકા, રજોહરણ આદિ રૂપ સાધુના લિંગને (ચિહ્નને) ગ્રહણ કરવું જોઈએ. ॥ સૂ. ૨૦ ॥

લિંગના સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર રાજાના પાંચ લિંગો (ચિહ્નો) નું કથન કરે છે—" પંચ રાયકુકુહા પણ્ણત્તા " ઈત્યાદિ.

રાજાના નીચે પ્રમાણે પાંચ ચિહ્ન કહ્યાં છે—(૧) ખડ્ગ (તલવાર) (૨) છત્ર, (૩) મુકુટ, (૪) ઉપાનહ (પગરખાં—મોજડીઓ) અને (૫) બાલવ્યજન (ચામર). ॥ સૂ. ૨૧ ॥

रुंभइ वा छविच्छेयं करेइ वा, पमारं वा नेइ उद्दवेइ वा वत्थं वा पडिग्गहं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा अच्छिंदइ वा विच्छिंदइ वा भिंदइ वा अवहरइ वा १। अक्खाइट्ठे खलु अयं पुरिसे, तेणं मे एस पुरिसे अक्कोसइ वा तहेव जाव अवहरइ वा २। ममं च णं तब्भववेयणिज्जे कम्मे उदिण्णे भवइ, तेण मे एस पुरिसे अक्कोसइ वा जाव अवहरइ वा ३। ममं च णं सम्मं असहमाणस्स अक्खममाणस्स अतितिक्खमाणस्स अणहियासमाणस्स किं मन्ने कज्जइ ?, एगंतसो मे पावे कम्मे कज्जइ ४। ममं च णं सम्मं सहमाणस्स जाव अहियासेमाणस्स किं मन्ने कज्जइ ?, एगंतसो मे निज्जरा कज्जइ ५। इच्चेएहिं पंचहिं ठाणेहिं छउमत्थे उदिण्णे परीसहोवसग्गे सम्मं सहेज्जा जाव अहियासेज्जा। पंचहिं ठाणेहिं केवली उदिण्णे परीसहोवसग्गे सम्मं सहेज्जा जाव अहियासेज्जा, तं जहा–खित्तचित्ते खलु अयं पुरिसे, तेण मे एस पुरिसे अक्कोसइ वा तहेव जाव अवहरइ वा १। दित्तचित्ते खलु अयं पुरिसे, तेण मे एस पुरिसे जाव अवहरइ वा २। जक्खाइट्ठे खलु अयं पुरिसे, तेण मे एस पुरिसे जाव अवहरइ वा ३। ममं च णं तब्भववेयणिज्जे कम्मे उइण्णे भवइ, तेण मे एस पुरिसे जाव अवहरइ वा ४। ममं च णं सम्मं सहमाणं खममाणं तितिक्खमाणं अहियासेमाणं पासित्ता बहवे अण्णे छउमत्था समणा णिग्गंथा उदिण्णे उदिण्णे परीसहोवसग्गे एवं सम्मं सहिस्संति

जाव अहियासिस्संति ५। इच्चेएहिं पंचहिं ठाणेहिं केवली उइण्णे परीसहोवसग्गे सम्मं सहेज्जा जाव अहियासेज्जा ॥ सू० २२ ॥

छाया—पञ्चभिः स्थानैः छद्मस्थः खलु उदीर्णान् परीषहोपसर्गान् सम्यक् सहते क्षमते तितिक्षते अध्यास्ते, तद्यथा—उदीर्णकर्मा खलु अयं उन्मत्तकभूतः, तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति वा अपहसति वा निश्छोटयति वा निर्भर्त्सयति वा बध्नाति वा रुणद्धि वा छविच्छेदं करोति वा प्रमारं वा नयति उपद्रवयति वा वस्त्रं वा पतद्ग्रहं वा कम्बलं वा पादप्रोञ्छनं वा आच्छिनत्ति वा विच्छिनत्ति वा भिनत्ति वा अपहरति वा १। यक्षाविष्टः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति वा तथैव यावदपहरति वा २। मम च खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदीर्णं भवति तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति वा यावत् अपहरति वा ३। मम च खलु सम्यक् असहमानस्य अक्षममाणस्य अतितिक्षमाणस्य अनध्यासीनस्य किं मन्ये क्रियते? एकान्तशो मया पापं कर्म क्रियते ४। मम च खलु सम्यक् सहमानस्य यावत् अध्यासीनस्य किं मन्ये क्रियते? एकान्तशो मया निर्जरा क्रियते ५। इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः छद्मस्थ उदीर्णान् परीषहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावत् अध्यास्ते। पञ्चभिः स्थानैः केवली उदीर्णान् परीषहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावदध्यास्ते, तद्यथा—क्षिप्तचित्तः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुष आक्रोशति वा तथैव यावत् अपहरति वा १। दृप्तचित्तः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुषो यावत् अपहरति वा २। यक्षाविष्टः खलु अयं पुरुषः, तेन मे एष पुरुषो यावत् अपहरति वा ३। मम च खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदीर्णं भवति, तेन मे एष पुरुषो यावत् अपहरति वा ४। मां च खलु सम्यक् सहमानं क्षममाणं तितिक्षमाणम् अध्यासीनं दृष्ट्वा बहवोऽन्ये छद्मस्थाः श्रमणा निर्ग्रन्था उदीर्णान् उदीर्णान् परीषहोपसर्गान् एवं सम्यक् सहिष्यन्ते यावदध्यासिष्यन्ते ५। इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः केवली उदीर्णान् परीषहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावत् अध्यास्ते ॥ सू० २२ ॥

इन चिह्नोंवाले राजा होते हैं, और ये इक्ष्वाकु आदि कुलोंमें जन्म-वाले होते हैं, इनमेंसे जिस किसीने दीक्षा गृहीतकी होती है, वह सराग होता हुआ भी सत्त्व शक्तिकी अधिकतासे जिन वस्तुओंका अवलम्बन करके परीषह आदिको सहता है, उनका अब सूत्रकार

ઉપર્યુક્ત ચિહ્નોવાળા રાજાઓ હોય છે. તેઓ ઈક્ષ્વાકુ આદિ કુળોમાં ઉત્પન્ન થયેલા હોય છે. તેમનામાંથી જે કોઇએ દીક્ષા ગ્રહણ કરી હોય છે તે સરાગ હોવા છતાં પણ સત્ત્વ શક્તિની અધિકતાને લીધે જે વસ્તુઓનું

टीका—' पंचहिं ठाणेहिं ' इत्यादि—

छद्मस्थः—छादयति ज्ञानादिगुणमात्मन इति छद्मः=ज्ञानावरणदर्शनावरणमोहनीयान्तरायात्मकं घातिकर्मचतुष्टयं, तत्र तिष्ठतीति छद्मस्थः—सकषाय इत्यर्थः। स पञ्चभिः स्थानैः उदीर्णान्=उदयं प्राप्तान् परीषहोपसर्गान् परि=समन्तात् स्वहेतुभिरुदीरिता मोक्षमार्गाप्रस्खलननिर्जरार्थं साध्वादिभिः सह्यन्ते ये ते परीषहाः=भूतादि जनिताः पीडाः, उपसृज्यन्ते=क्षिप्यन्ते—पात्यन्ते प्राणिनो धर्मादिभ्यो यैस्ते उपसर्गाः=देवादिकृतोपद्रवरूपाः, उभयोर्द्वन्द्वः तान् सम्यक्=कषायोदयनिरोधादिना सहते=योधो योधमिव निर्भीकतयाऽविचलः सन् सहते, क्षमते=क्षमावलेन सहते, तितिक्षते=अदैन्येन सहते, तथा—अध्यास्ते—परीषहोपसर्गेषु सम्प्राप्तेषु अधि=आधिक्येन आस्ते=तिष्ठति न तु ततः प्रचलतीति। तद्यथा—

कथन करते हैं—'पंचहिं ठाणेहिं छउमत्थे णं उदिण्णे' इत्यादि सूत्र २२॥

टीकार्थ—आत्माके ज्ञानादिक गुणोंका जो छादन—आवरण करे उसका नाम छद्म है, ऐसा यह छद्म ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय इन चार घातिया कर्मों रूप होता है, इस छद्ममें जो रहता है, इस छद्मवाला जो होता है, वह छद्मस्थ है, कषाय सहित जीव छद्मस्थ होता है। यह छद्मस्थ उदित हुए परीषहों को एवं उपसर्गों को अच्छी तरह से सहता है, क्षमा धारण करके सहता है, दीनता रहित हो करके सहता है। जैसे २ ये आते हैं वैसे २ वह दृढता के साथ उनका अविचलित भावसे सामना करता है। इसमें ये पांच कारण हैं, इनमें पहिला कारण इस प्रकारसे है—

અવલંબન કરીને પરીષહ આદિને સહન કરે છે, તે વસ્તુઓનું (તે અવલંબનના કારણોનું હવે સૂત્રકાર કથન કરે છે—

" પંચ હિં ઠાણેહિં છઉમત્થે ણં ઉદિણ્ણે " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—આત્માના જ્ઞાનાદિક ગુણોનું જે છાદન (આવરણ) કરે તેનું નામ છદ્મ છે. જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય અને અન્તરાય, આ ચાર ઘાતિયા કર્મરૂપ જ તે છદ્મ હોય છે. આ છદ્મમાં જે રહે છે—એટલે કે જે જીવો આ છદ્મ (આવરણ) વાળા હોય છે, તેમને છદ્મસ્થ કહે છે. કષાયયુક્ત જીવોને છદ્મસ્થ કહેવાય છે. જે પરીષહો અને ઉપસર્ગો આવી પડે છે તેમને છદ્મસ્થ જીવ સારી રીતે સહન કરે છે, સમતાભાવપૂર્વક તેમને સહન કરે છે, દીનભાવનો ત્યાગ કરીને તેમને સહન કરે છે, અને જે જે પરીષહો અને ઉપસર્ગો આવી પડે તેનો અવિચલભાવે (દૃઢતાપૂર્વક) સામનો કરે છે, એવું

नानि स्थानानि यथा-अयं संमुखस्थितउपद्रवकर्ता पुरुषः खलु=निश्चयेन उदीर्ण-कर्मा-उदीर्णम्=उदयावलिकायां प्रविष्टं कर्म यस्य सः-उदितमिथ्यात्वमोहनीयादिकर्मा, उन्मत्तकभूतः-उन्मत्तकः=मदिरादिना क्षिप्तचित्तः स इव सएव वा चास्ति; तेन हेतुना एष पुरुषो मे=माम्, सम्बन्धसामान्ये षष्ठी, आक्रोशति=गाल्यादिकं ददाति वा=अथवा अपहसति=उपहासं करोति, निश्छोटयति=मम हस्तादितो वस्त्रपात्रादिकं बलाद् वियोजयति वा, निर्भर्त्सयति=दुर्वचनैस्तर्जयति वा, बध्नाति=रज्ज्वादिना बन्धयुक्तं करोति वा, रुणद्धि=कारागारादौ मम निरोधं करोति वा, छविच्छेदं-छवेः=शरीरावयवस्य हस्तादेः छेदं=कर्त्तनं करोति वा, प्रमारं=मूर्च्छा-विशेषं मरणस्थानं वा नयति=पातयति वा, उपद्रवयति=उपद्रवं करोति वा, तथा-

"उदिण्णकम्मे खलु अयं पुरिसे उम्मत्तगभूए" इत्यादि—

यहां उदीर्ण शब्द से जो कर्म उदयावलिका में प्रविष्ट हो गया है, ऐसा वह कर्म उदीर्ण कहा गया है। जिसका मिथ्यात्व मोहनीयादि कर्म उदयावस्थावाला हो रहा है, और इसीसे जो मदिरादिकके सेवन से विक्षिप्त चित्तवाले के जैसा बना हुआ है। ऐसा कोई पुरुष यदि मेरे लिये गाली आदि देता है, अथवा मेरी हंसी करता है, अथवा मेरे हाथ में से वस्त्र पात्र आदिको बलात्कारसे छुडाताहै, या मुझे दुर्वचनोंसे तर्जित करता है या रस्सी आदिसे बांधता है या कारागार आदिमें मुझे बन्द कर देता है, अथवा मेरे शरीरके अवयव रूप हस्त आदिका छेदन करता है, या मुझे मूर्छित कर देता है, या मुझे मरण स्थानपर ले जाकर पटक देता है। अथवा—नहीं करने योग्य उपद्रव मेरे ऊपर करता है।

નીચેના પાંચ કારણોને લીધે બને છે તેમાં પહેલું કારણ આ પ્રમાણે છે—

"उदिण्णकम्मे खलु अयं पुरिसे उम्मत्तगभूए" ઈત્યાદિ—

અહીં 'ઉદીર્ણ' પદ દ્વારા ઉદયાવલિકામાં પ્રવિષ્ટ થઈ ગયેલા કર્મને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે. "જેનું મિથ્યાત્વ મોહનીય આદિ કર્મ ઉદયાવસ્થામાં પ્રવિષ્ટ થઈ ચુક્યું છે, અને તે કારણે મદિરાનું સેવન કરનાર વ્યક્તિના જેવું જેનું ચિત્ત વિક્ષિપ્ત થઈ ચુક્યું છે, એવો પુરુષ જો મને ગાળો દે, મારી મજાક ઉડાવે, મારી પાસેથી વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ વસ્તુને પરાણે પડાવી લે, અથવા મારી સામે દુર્વચનોના પ્રયોગ કરે, મને દોરડા આદિ વડે બાંધે, મને કારાગાર આદિમાં પૂરી દે, અથવા હાથ આદિ શરીરના અવયવને છેદી નાખે, અથવા મને મૂર્છિત કરી નાખે, અથવા મને મરણને શરણ પહોંચાડી દે, અથવા ન કરવા યોગ્ય ઉપદ્રવો કરીને મને હેરાન કરવાનો પ્રયત્ન કરે,

वस्त्रं=चोलपट्टादिकं वा. पतद्ग्रहं=पात्रं वा, कम्बलं वा, पादप्रोञ्छनं=पादपरिमार्जनार्थं साधूपकरणरूपं वस्त्रखण्डं वा आच्छिनत्ति=बलादादत्ते वा, विच्छिनत्ति=विच्छिन्नं वा करोति, भिनत्ति=पात्रादिकं स्फोटयति, वस्त्रादिकं स्फाटयति वा,

---

वस्त्र-चोलपट्टक आदिको पात्रों को कम्बल को एवं पादप्रोञ्छन पैरों को पोंछने के लिये साधनभूत साधुके उपकरणरूप वस्त्रखण्डको बलात्कार से छुडाता है, उन्हें फाड देता है, या नष्टभ्रष्ट कर देता है, पात्रादिकको फोड डालता है या चुरा लेता है, तो ऐसे उपसर्गों को और परीषहों को मुझे समताभाव पूर्वक सहन करना चाहिये। अपने कर्तव्य से इस स्थितिमें विचलित नहीं होना चाहिये। इस प्रकारकी दृढ धारणा से जो उपसर्ग और परीषहों को सहन करता है। ऐसा वह साधु गृहीत मोक्षमार्ग से विचलित नहीं होता है। अंगीकार किये हुए धर्म मार्गमें स्थिर रहने और कर्मबन्धनों के विनाशार्थ जो स्थिति समभाव पूर्वक सहन करने योग्यहै, उसे परीषह कहतेहैं, एवं देवादिकृत उपद्रवों को उपसर्ग कहतेहैं। तात्पर्य कहने का यहहै कि छद्मस्थ मोक्षाभिलाषी मुनिजनोंको उपसर्ग एवं परीषहों को इसलिये अच्छी तरहसे सहन करना चाहिये कि वे समझदार प्राणियों द्वारा उदीरित नहीं किये जाते हैं, किन्तु अज्ञानी प्राणियों द्वारा कि जो मिथ्यात्व मोहनीयादि कर्मके उदय

ચોલ પટ્ટક આદિને, પાત્રોને, પાદપ્રોંછન (પગ લૂછવા માટેના સાધુના ઉપકરણ રૂપ વસ્ત્રખંડ) આદિને બળજબરીથી પડાવી લે છે, તેને ફાડી નાખે છે, નષ્ટ-ભ્રષ્ટ કરી નાખે છે, અથવા પાત્રોને ફોડી નાખે છે, મારા ઉપકરણોને ચોરી જાય, તો મારે એવાં ઉપસર્ગો અને પરીષહોને સમભાવપૂર્વક સહન કરવા જોઈએ. તેને કારણે મારે મારા કર્તવ્ય માર્ગમાંથી વિચલિત થવું જોઈએ નહીં," આ પ્રકારના દૃઢ મનોબળપૂર્વક જે સાધુ ઉપસર્ગ અને પરીષહોને સહન કરે છે, તે સાધુ ગૃહીત મોક્ષમાર્ગેથી વિચલિત થતો નથી. તે તો પોતે અંગીકાર કરેલા ધર્મમાર્ગમાં સ્થિર રહે છે.

કર્મબન્ધનોના વિનાશને માટે જે સ્થિતિ સમભાવપૂર્વક સહન કરવા યોગ્ય છે, તેને પરીષહ કહે છે અને દેવાદિકૃત ઉપદ્રવોને ઉપસર્ગ કહે છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે-છદ્મસ્થ મુનિ ઉપસર્ગો અને પરીષહોને સમભાવપૂર્વક એ કારણે સહન કરે છે કે તે એવું સમજે કે આ ઉપસર્ગો અને પરીષહો સમજદાર જીવો દ્વારા ઉત્પન્ન કરાતાં નથી, પણ અજ્ઞાની જીવો

अपहरति=चोरयति वा। इति प्रथमं स्थानम् १। तथा–यक्षाविष्टः–यक्षेण=देवविशेषेण आविष्टोऽधिष्ठितोऽयं पुरुषः, तेन हेतुनाऽयं पुरुषो मे=माम् आक्रोशति वेत्यादि। अर्थः पूर्ववद्बोध्यः। इति द्वितीयं स्थानम् २। तथा–मम च खलु

के वशवर्ती हो रहे हैं, उत्पन्न किये जाते हैं, अतः वे रोष के कारण नहीं हैं यह प्रथम कारणहै १। द्वितीय कारण इस प्रकारसेहै—
"यक्षाविष्टः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति" इत्यादि
यह पुरुष यक्ष से देवविशेष से अधिष्ठित हो रहा है, इस कारण यह मेरे प्रति आक्रोश कर रहा है, मुझे गाली आदि दे रहा है, मेरी हंसी कर रहा है, इत्यादि सब कथन यहां पर भी कह लेना चाहिये। अतः मुझे इसके द्वारा किये उपद्रवों का या परीषहों को शान्तिपूर्वक अच्छी तरह से सहन करना चाहिये। ऐसे विचार से उन्हें सहन करता है, उसके प्रति वह कषाय नहीं करता है, क्षमाबल से उनका सामना करता है, उनके आने पर वह अपनी दीनता प्रकट नहीं करता है, प्रत्युत एक वीर के समान वह उनको सहन करता है, ऐसा यह द्वितीय कारण है। इस द्वितीय कारण में केवल यही प्रदर्शित किया गया है। परीषहादि प्रदाता अपने स्वभावमें नहीं है, क्योंकि वह किसी यक्षके आवेश से आक्रान्त हो रहा है।

દ્વારા જ ઉત્પન્ન થાય છે. અજ્ઞાની જીવો મિથ્યાત્વ, મોહનીય આદિ કર્મોના ઉદયના કારણે આ ઉપસર્ગો અને પરીષહો ઉત્પન્ન કરતા હોય છે. તેથી તેઓ રોષ કરવાને પાત્ર નથી પણ દયા ખાવાને પાત્ર છે.

બીજું કારણ આ પ્રમાણે છે—"यक्षाविष्टः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुष आक्रोशति" ઈત્યાદિ—તે સાધુના મનમાં એવી વિચારધારા ચાલે છે કે આ પુરુષ યક્ષ વડે અધિષ્ઠિત થઇ રહ્યો છે, એટલે કે કોઇ યક્ષ તેના શરીરમાં પ્રવેશ કરીને તેના દ્વારા ઉપસર્ગો કરાવી રહ્યા છે. 'તે કારણે જ તે મારા પ્રત્યે ક્રોધ કરી રહ્યો છે, મને ગાળો દઇ રહ્યો છે, મારી મજાક કરી રહ્યો છે, વગેરે કથન અહીં પણ આગળ મુજબ જ સમજવું. તેથી આ પ્રકારના પરીષહો અને ઉપસર્ગો મારે શાન્તિપૂર્વક સહન કરવા જોઇએ. આ પ્રકારની વિચારધારાથી પ્રેરાઇને તે તેમને સમભાવપૂર્વક સહન કરે છે અને ઉપસર્ગ કરનાર પ્રત્યે તે ક્રોધ કરતો નથી, દૈન્યભાવ પ્રકટ કરતો નથી; પરન્તુ ક્ષમાભાવપૂર્વક એક વીરની જેમ તે પરીષહો અને ઉપસર્ગોનો અડગતાપૂર્વક સામનો કરે છે. આ બીજા કારણમાં એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે પરીષહ આદિ ઉત્પન્ન કરનાર વ્યક્તિના શરીરમાં યક્ષનો પ્રવેશ થવાને કારણે તે પોતાના મૂળ સ્વભાવને ગુમાવી બેઠી હોય છે.

तद्भववेदनीयं-तेन भवेन=मानुष्यकेण जन्मना वेद्यते=अनुभूयते यत्तत् कर्म=पूर्वोपार्जितं कर्म उदीर्णम्=उदयावलिकां प्रविष्टं भवति, तेन हेतुना अयं पुरुषो मे आक्रोशतीत्यादि। इति तृतीयं स्थानम्। एतत्पुरुषकृताक्रोशनादिकम् सम्यक् असहमानस्य अक्षममाणस्य अतितिक्षमाणस्य अनध्यासीनस्य च मम खलु. 'मन्ये'

तृतीय कारण---मम च खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदीर्णं भवति तेन मे " इत्यादि--ऐसा है कि परीषहादि सहन करनेवाला साधक ऐसा विचारता है कि-मैंने पूर्वजन्ममें ऐसे ही कर्म किये हैं कि जिनका वेदन मुझे इस प्राप्त मनुष्य भवमें करना योग्य है। अतः वही कर्म मेरे इस समय उदयमें आ रहा है, इस कारण यह पुरुष मुझे गाली आदि दे रहा है, मेरी हंसी आदि कर रहा है। ऐसा विचार कर वह परीषह और उपसर्गों को सहन करता है।

चौथा कारण इस प्रकार है--" ममच खलु सम्यक् असहमानस्य अक्षममाणस्य अतितिक्षमाणस्य अनध्यासीनस्य" इत्यादि---वह मोक्षाभिलाषि साधु उपसर्गादिकके आने पर ऐसा विचार करताहै कि मैं यदि इन पुरुष कृत आक्रोश आदिकोंको जो अच्छे प्रकार से नहीं सहता हूं, क्षमा धारण नहीं करता हूं, दीनता प्रदर्शित करता हूं और अपने कर्तव्य पथसे विचलित होता हूं तो मुझे एकान्ततः पाप का उपार्जन

ત્રીજું કારણ---" मम च खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदीर्णं भवति तेन मे " ઈત્યાદિ---ઉપસર્ગ આદિ સહન કરનાર તે સાધક એવો વિચાર કરે છે કે " મેં પૂર્વભવમાં એવાં કર્મો કર્યાં છે કે જેમનું વેદન મારે આ પ્રાપ્ત મનુષ્ય ભવમાં કરવા યોગ્ય છે. મારા તે કર્મો આ ભવમાં આ સમયે ઉદયમાં આવી રહ્યાં છે. તેથી જ આ પુરુષ મને ગાળો આદિ દઈ રહ્યો છે અને મારી મજાક ઉડાવી રહ્યો છે. " આ પ્રમાણે વિચાર કરીને તે પરીષહો અને ઉપસર્ગોને સહન કરી લે છે.

ચોથું કારણ---" मम च खलु सम्यक् असहमानस्य अक्षममाणस्य अतितिक्षमाणस्य अनध्यासीनस्य " ઈત્યાદિ---ઉપસર્ગ આદિ સહન કરવાનો પ્રસંગ આવે ત્યારે તે સાધક સાધુ એવો વિચાર કરે છે કે " જો હું આ વ્યક્તિ દ્વારા પ્રકટ કરાતો ક્રોધ આદિ સમતાપૂર્વક સહન નહીં કરું, ક્ષમા ધારણ નહીં કરું, દીનતા પ્રકટ કરીશ અને મારા કર્તવ્યમાર્ગેથી ચલાયમાન થઈશ, તો મારે એકાન્તતઃ પાપનું ઉપાર્જન કરવું પડશે. " અહીં " मन्ये " આ

इति निपातो वितर्के, किं क्रियते=सम्पद्यते ?, इत्थं वितर्कणायां विनिश्चयार्थमाह-एकान्तशः=निश्चयेन मया पापं कर्मक्रियते=उपार्ज्यते। इति चतुर्थं स्थानम् ४। पूर्ववैपरीत्येनाह-एतत्पुरुषकृताक्रोशनादिकं सम्यक् सहमानस्य क्षममाणस्य तितिक्षमाणस्य अध्यासीनस्य च मम-मया खलु मन्ये किं क्रियते ?, एकान्तशो मया निर्जरा क्रियते-मम निर्जरा भवतीत्यर्थः। इति पञ्चमं स्थानम् ५। इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः छद्मस्थ उदीर्णान् परीषहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावत् अध्यास्ते इति निगमनम्। सम्प्रति केवली तीर्थङ्करगणधरादिः यैः स्थानैः उदीर्णान् परीषहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावदध्यास्ते तानि पञ्च स्थानानि प्राह-तद्यथा-क्षिप्तचित्तः=

होगा। यहां " मन्ये " यह वितर्क में निपात है. ऐसे विचार से भी वह आगत परीषहादिकों को अच्छी तरहसे सहता है।

पांचवां कारण ऐसा है-" मम च खलु सम्यक् सहमानस्य यावत् अध्यासीनस्य " इत्यादि---वह पुरुष ऐसा विचारता है कि यदि मैं इन पुरुषों आदि द्वारा कृत उपसर्ग आदिकों को अच्छी तरह से सहन कर लेता हूं, यावत् अपने कर्तव्य कर्म से विचलित नहीं होता हूं, अविचलित बना रहता हूं, तो यह बात निश्चित है कि मेरे कर्मों की एकान्ततः निर्जरा होगी। इस प्रकारके ये पांच स्थान हैं, इन पांच कारणों को लेकर छद्मस्थ संयत उदीर्ण परीषह और उपसर्गों को सम्यक् प्रकार सहन करता है, यावत् उनसे अपने गृहीत मार्गसे विचलित नहीं होता है।

अब सूत्रकार उन स्थानों को प्रकट करते हैं, कि जिन स्थानों को लेकर तीर्थंकर और गणधर आदि उदीर्ण परीषहों को और उपसर्गों

पद આ પ્રકારનો વિતર્ક પ્રકટ કરે છે આ પ્રકારના તેના વિતર્કને લીધે પણ તે પરીષહો અને ઉપસર્ગોને અડગતાથી સહન કરે છે.

પાંચમું કારણ—" मम च खलु सम्यक् सहमानस्स यावत् अध्यासीनस्य " ઈત્યાદિ—તે સાધક સાધુ એવો વિચાર કરે છે કે-" જો આ પુરુષો આદિ દ્વારા ઉત્પન્ન કરાયેલા ઉપસર્ગ આદિને હું સમભાવપૂર્વક સહન કરીશ, મારાં કર્તવ્ય માર્ગમાં (સંયમ માર્ગમાં) દૃઢતાપૂર્વક આગળ વધીશ, તો એ વાત તો નિશ્ચિત જ છે કે મારાં કર્મોની એકાન્તતઃ નિર્જરા થશે " આ પ્રકારના વિચારથી પ્રેરિત થઈને પણ તે પરીષહો તથા ઉપસર્ગોને સહન કરે છે, દીનભાવનો ત્યાગ કરીને સમભાવપૂર્વક તેમને સહન કરે છે અને સંયમ પંથે દૃઢતાપૂર્વક આગળ વધે છે.

જે સ્થાનો (કારણો) ને લીધે તીર્થંકરો અને ગણધરો ઉદીર્ણ પરીષહો તથા ઉપસર્ગોને સારી રીતે સહન કરે છે, તે સ્થાનોનું હવે સૂત્રકાર

पुत्रकलत्रादिशोकेन विनष्टचित्तत्वेन उन्मत्त एव एष पुरुषः, तेन एष पुरुषो मे-आक्रोशतीत्यादि । इति प्रथमं स्थानम् १। तथा-दृप्तचित्तः-दृप्तं-दर्पयुक्तम्-अहङ्कारयुक्तं चित्तं यस्य सः, पुत्रजन्मादिना उद्धतचित्ततया उन्मत्त एव एव पुरुषः, तेन हेतुना एष पुरुषो मे आक्रोशतीत्यादि । इति द्वितीयं स्थानम् २। तृतीयं चतुर्थं च स्थानद्वयं व्याख्यातप्रायम् । तथा-एतत्पुरुषकृताक्रोशनादिकं सम्यक्

को अच्छी तरहसे सहन करते हैं, यावत् अपने मार्ग से विचलित नहीं होते हैं, ऐसे ये स्थान भी पांच हैं, जो इस प्रकार से है—

"क्षिप्तचित्तः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति तथैव अपहरति वा" उपसर्गादिक के किये जाने पर वे ऐसा विचार करते हैं-पुत्र कलत्र आदि के शोक से विनष्ट चित्तवाला होने से यह पुरुष क्षिप्त चित्तवाला हो गया है । अतः यह पुरुष उन्मत्त ही है, इस कारण यह पुरुष मेरे प्रति आक्रोशादि रूपसे व्यवहार कर रहा है, यह प्रथम स्थान है ।

द्वितीय स्थान ऐसा है कि "दृप्तचित्तः" इत्यादि—
यह उपसर्गादि करनेवाला मनुष्य अहङ्कारयुक्त चित्तवाला है, अथवा पुत्र जन्मादिसे उद्धत चित्तवाला है, इसलिये यह उन्मत्तही है, इस कारण यह मेरे प्रति उपसर्गादि कर रहाहै, तृतीय स्थान इस प्रकारसे है, परीषहादि सहनेवाले तीर्थंकर आदि ऐसा विचारते हैं, कि मैंने पूर्वजन्ममें ऐसेही कर्म किये हैं, कि जिनका वेदन मुझे इस प्राप्त मनुष्य

કથન કરે છે. તે સ્થાનો પણ પાંચ છે. પહેલું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—

"क्षिप्तचित्तः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति तथैव अपहरति वा" ઉપસર્ગ આદિ કરવામાં આવે ત્યારે તેઓ એવો વિચાર કરે છે કે "પુત્ર, પત્ની આદિના શોકને કારણે આ માણસની બુદ્ધિ ભમી ગઈ છે-તે મગજ પરનો કાબૂ ગુમાવી બેઠો છે. તેથી તે પુરુષ ઉન્મત્ત જ છે. તે કારણે તે મારી સાથે આ પ્રકારનો-આક્રોશ કરવા રૂપ, ગાળો દેવા રૂપ વગેરે વ્યવહાર કરી રહ્યો છે."

બીજું કારણ—"दृप्तचित्तः" ઇત્યાદિ. તેઓ વિચાર કરે છે કે "આ ઉપસર્ગ આદિ કરનાર મનુષ્ય અહંકારયુક્ત ચિત્તવાળો છે. અથવા પુત્ર જન્માદિને કારણે ઉદ્ધત ચિત્તવાળો બની ગયો છે, તેથી તે ઉન્મત્ત જ છે. તે કારણે જ તે મને ઉપસર્ગાદિ દ્વારા હેરાન કરી રહ્યો છે."

ત્રીજું કારણ—પરીષહાદિ સહન કરનાર તીર્થંકર અથવા ગણધર એવો વિચાર કરે છે કે પૂર્વજન્મમાં મેં જે કર્મો કર્યાં છે, તે આ ભવમાં અત્યારે ઉદયમાં આવી રહ્યાં છે. તેથી જ આ પુરુષ મને ગાળો દઈ રહ્યો છે, મારી

सहमानं क्षममाणं तितिक्षमाणम् अध्यासीनं च खलु मां दृष्ट्वा अन्येऽपि बहवश्छद्मस्थाः श्रमणा निर्ग्रन्थाः ममानुकरणं कृत्वा भूयो भूय उदयावस्थां प्राप्तान् परीषहोपसर्गान् एवम्=अनेन प्रकारेण–यथा मया ते सह्यन्ते तथैव सहिष्यन्ते यावत् अध्यासिष्यन्ते । अयं भावः–साधारणा जना उत्तमानुयायिन एव प्रायो भवन्ति,

---

भवमें करना योग्य है, अतः वही कर्म मेरे इस समय उदयमें आ रहा है, मेरी हँसी आदि कर रहा है, ऐसा विचार कर वह परीषह और उपसर्गोंको सहन करता है ३।

चौथा कारण इस प्रकारसे है – वह साधु उपसर्गादिकके आने पर ऐसा विचार करता है, कि मैं यदि इन पुरुषकृत आक्रोश आदिकोंको जो अच्छी तरहसे नहीं सहता हूँ क्षमा धारण नहीं करता हूँ दीनता प्रदर्शित करता हूँ और अपने कर्त्तव्य पथसे विचलित होता हूँ तो मुझे एकान्ततः पापका उपार्जन होगा। पांचवां स्थान ऐसा है, कि वे विचारते हैं, यह पुरुष जो हमारे प्रति उपसर्गादि कर रहा है, इन्हें सम्यक् रीतिसे सहन करते हुए क्षमाभावपूर्वक सहन करते हुए दीन भावरहित होकर सहन करते हुए एवं अपने मार्गसे विचलित न होकर सहन करते हुए मुझे देखकर और भी अन्य अन्य अनेक छद्मस्थजन मेरा अनुकरण करके वार २ उदयावस्था प्राप्त परीषह और उपसर्गोंको मेरी तरहसेही सहन करेंगे यावत् अपने मार्गसे विचलित नहीं होंगे इसका भाव ऐसा है, साधा

હાંસી ઉડાડી રહ્યો છે.” તેથી તે ઉપસર્ગાદિકોને તે સહન કરે છે.

ચોથું કારણ આ પ્રમાણે છે—તે ઉપસર્ગાદિ સહન કરનાર સાધુ પોતાના મનમાં એવો વિચાર કરે છે કે “જો હું આ પુરુષકૃત આક્રોશ આદિને સારી રીતે સહન નહીં કરું, ક્ષમા ધારણ નહીં કરૂં. દીનતા પ્રકટ કરીશ, અને મારા કર્તવ્ય માર્ગમાંથી વિચલિત થઈશ, તો મારે એકાન્તતઃ પાપનું ઉપાર્જન થશે.”

પાંચમું કારણ આ પ્રમાણે છે—તે એવો વિચાર કરે છે કે “આ પુરુષ મને જે પરીષહો અને ઉપસર્ગો પહોંચાડી રહ્યો છે તે ઉપસર્ગો અને પરીષહોને સમભાવપૂર્વક સહન કરવાથી, ક્ષમાભાવપૂર્વક સહન કરવાથી, દૈન્યભાવના ત્યાગપૂર્વક સહન કરવાથી અને સંયમના માર્ગેથી ચલાયમાન થયા વિના સહન કરવાથી, અન્ય સાધુઓપર પણ સારો દાખલો બેસશે. અન્ય અનેક છદ્મસ્થ સાધુઓ પણ મારૂં અનુકરણ કરીને વારંવાર ઉદયાવસ્થામાં આવતા પરીષહો અને ઉપસર્ગોને મારી જેમ જ સહન કરશે, ઈત્યાદિ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અહીં ગ્રહણ થવું જોઈએ. “તેઓ પોતાના સંયમ માર્ગથી

अत एव–उत्तमपुरुषाः प्रतिकर्तुं समर्था अपि नीचकृतपरिषहोपसर्गान् प्रतिकर्तुं नोद्यतन्ते । यदि ते प्रतीकारपरायणा भवेयुस्तदा तदनुयायिनोऽप्येवं कुर्युः, ततस्तदनुयायिनोऽनन्तकालं यावत् संसारावर्त्ते निमज्जेयुः । तेषामुद्धारार्थमेव करुणापरायणाः केवलिनो अज्ञानिकृतापकारान् सहन्ते, ताँस्तथा सहमानान् दृष्ट्वा छद्मस्था अपि सहन्ते । उक्तं च—

"जो उत्तमेहिं मग्गो, पहओ सो दुक्करो न सेसाणं ।
आयरियम्मि जयंते, तयणुचरा केण सीएज्जा ? ॥ १ ॥"

छाया—य उत्तमै र्मार्गः प्रहतः स दुष्करो न शेषाणाम् ।
आचार्ये यतमाने तदनुचराः केन सीदेयुः ? ॥ इति ।

रण मनुष्य उत्तमजनोंका प्रायः अनुकरण करनेवाले होते हैं, उत्तम पुरुष यद्यपि प्रतिकार करनेकी शक्तिवाले होते हैं, फिर भी वे नीचजन कृत परीषह और उपसर्गोंका प्रतीकार करनेके लिये उद्यत नहीं होते हैं, यदि वे प्रतिकार करनेमें कटिबद्ध होने लगें तो फिर जो उनके अनुयायीजन हैं वे भी इसी प्रकारसे करने लगेंगे तो फिर उनके अनुयायियोंका अनन्त संसार सान्त कैसे हो सकेगा अनन्तकाल तकही वे इस संसाररूपी भंवरमें डूबे रहेंगे, अतः इनका उद्धार हो इस अभिप्रायसेही कृपापरायण केवली अज्ञानीजन कृत अपकारोंको सहन करते हैं, और उन्हें सहन करते हुए देखकर छद्मस्थजन भी उन्हें सहन करते हैं । कहा भी है—

"जो उत्तमेहिं मग्गो पहओ" इत्यादि । इस गाथाका पूर्वोक्त

ચલાયમાન નહીં થાય" આ કથન પર્યન્તનું સમસ્ત કથન અહીં ગ્રહણ કરવું જોઈએ. આ કથનનો ભાવાર્થ એવો છે કે સામાન્ય મનુષ્યો સામાન્ય રીતે ઉત્તમજનોનું અનુકરણ કરનારા હોય છે. ઉત્તમ પુરુષો જો કે પ્રતિકાર કરવાને સમર્થ હોય છે, છતાં પણ તેઓ નીચે પુરુષો દ્વારા કરાતા પરીષહો અને ઉપસર્ગોનો પ્રતિકાર કરવાનો પ્રયત્ન કરતા નથી. જો તેઓ તેમનો પ્રતિકાર કરવા માંડે, તો તેમના અનુયાયીઓ પણ એ જ પ્રમાણે કરવા લાગી જાય. જો તેઓ એ પ્રમાણે વર્તતા થઈ જાય, તો તેમનો સંસાર પણ કેવી રીતે સાન્ત (અન્તયુક્ત) બની શકે ! એવું કરનારને તો અનંતકાળ પર્યન્ત સંસાર રૂપી વમળમાં ડૂબકીઓ ખાધા જ કરવી પડે. તેથી તેમનો ઉદ્ધાર કરવામાં આવતા અપકારોને સહન કર્યા કરે છે, અને તેમને તે સહન કરતા જોઈને છદ્મસ્થજનો પણ તેમને સહન કરે છે. કહ્યુ પણ છે કે—

"જો ઉત્તમેહિં મગ્ગો પહઓ" ઈત્યાદિ—આ ગાથાનો ભાવ ઉપર કહ્યા

इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः केवली उदितान् परीषहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावत् अध्यास्ते । इति ॥ सू० २२ ॥

सम्प्रति मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टयोरेकैकमाश्रित्य हेतोः पञ्चविधत्वं, छद्मस्थकेवलिनोः प्रत्येकमाश्रित्य अहेतोश्च पञ्चविधत्वमाह—

मूलम्—पंच हेऊ पण्णत्ता, तं जहा—हेउं न जाणइ, १ हेउं ण पासइ, २ हेउं ण बुज्झइ ३, हेउं णाभिगच्छइ ४, हेउं अन्नाणमरणं मरइ ५। पंच हेऊ पण्णत्ता, तं जहा—हेउणा ण जाणइ जाव हेउणा अण्णाणमरणं मरइ । पंच हेऊ पण्णत्ता, तं जहा—हेउं जाणइ जाव हेउं छउमत्थमरणं मरइ । पंच हेऊ पण्णत्ता, तं जहा—हेउणा जाणइ जाव हेउणा छउमत्थमरणं मरइ । पंच अहेऊ पण्णत्ता, तं जहा—अहेउं ण जाणइ जाव अहेउं छउमत्थमरणं मरइ । पंच अहेऊ पण्णत्ता, तं जहा—अहेउणा न जाणइ जाव अहेउणा छउमत्थमरणं मरइ । पंच अहेऊ पण्णत्ता, तं जहा—अहेउं जाणइ जाव अहेउं केवलिमरणं मरइ । अहेउणा जाणइ जाव अहेउणा केवलिमरणं मरइ । केवलिस्स णं पंच अणुत्तरा पण्णत्ता, तं जहा—अणुत्तरे

जैसाही भावहै, इस तरहके विचारसे तीर्थंकर भगवान् उदित परीषहों और उपसर्गोंको अच्छी तरहसे सहते हैं, यावत् सहते हुए अपने मार्गसे विचलित नहीं होते हैं—प्रत्युत इनके आने पर और अधिक दृढताके साथ अपने गृहीत मार्ग पर अटलही बने रहते हैं ॥ सू० २२ ॥

પ્રમાણે જ છે. આ પ્રકારના વિચારથી પ્રેરિત થઈને કેવલી ભગવાન ઉદીત પરીષહો અને ઉપસર્ગોને સારી રીતે સહન કરે છે, (યાવત્) તેઓ પરીષહો આવી પડે ત્યારે પોતાના માર્ગેથી વિચલિત થતા નથી, પરન્તુ પરીષહો તથા ઉપસર્ગોનો દૃઢતાપૂર્વક સામનો કરીને પોતે ગ્રહણ કરેલા જ માર્ગે અડગતા પૂર્વક આગળ વધે છે. ॥ સૂ. ૨૨ ॥

णाणे १, अणुत्तरे दंसणे २, अणुत्तरे चरित्ते, ३ अणुत्तरे तवे ४, अणुत्तरे वीरिए ५ ॥ सू० २३ ॥

छाया—पञ्च हेतवः प्रज्ञप्ताः तद्यथा–हेतुं न जानाति १, हेतुं न पश्यति २, हेतुं न बुध्यते ३, हेतुं नाभिगच्छति ४, हेतुमज्ञानमरणं म्रियते ५। पञ्च हेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–हेतुना न जानाति, यावत् हेतुना अज्ञानमरणं म्रियते । पञ्च हेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–हेतुं जानाति यावत् हेतुं छद्मस्थमरणं म्रियते । पञ्च हेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–हेतुना जानाति यावत् हेतुना छद्मस्थमरणं म्रियते । पञ्च अहेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अहेतुं न जानाति यावत् अहेतुं छद्मस्थमरणं म्रियते । पञ्च अहेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अहेतुना न जानाति यावत् अहेतुना छद्मस्थमरणं म्रियते । पञ्च अहेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा अहेतुं जानाति यावत् अहेतुं केवलिमरणं म्रियते । पञ्च अहेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अहेतुना जानाति यावत् अहेतुना केवलिमरणं म्रियते । केवलिनः पञ्च अनुत्तराणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–अनुत्तरं ज्ञानम् १, अनुत्तरं दर्शनम् २, अनुत्तरं चारित्रम् ३, अनुत्तरं तपः ४, अनुत्तरं वीर्यम् ५॥सू०२३॥

टीका—'पंच हेऊ' इत्यादि—

हिनोति=गमयति प्रमेयरूपमर्थं, हीयते=गम्यते प्रमेयरूपोऽर्थोऽनेनेति वा हेतुः=प्रमेयस्य अग्न्यादेः कारणं साध्याविनाभूतं धूमादिरूप लिङ्गम् , तत्र वर्तमानाः

अब सूत्रकार मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टिमेंसे एक २ का आश्रय करके हेतुमें पांच प्रकारता और छद्मस्थ एवं केवलीमें से एक २ का आश्रय करके अहेतुमें पांच प्रकारता कहते हैं--

'पंच हेऊ पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र २३ ॥

टीकार्थ--हेतु पांच कहे गये हैं, प्रमेयरूप अर्थको जो कहता है, वह हेतु है, अथवा–प्रमेयरूप अर्थ जिसके द्वारा जाना जाता है, वह हेतु है, ऐसा हेतु अपने साध्यके साथ अविनाभाव सम्बन्धवाला होता है, जैसे धूमरूप हेतु अपने साध्य अग्निके साथ अविनाभाव सम्बन्ध-

હવે સૂત્રકાર મિથ્યાદૃષ્ટિ અને સમ્યગ્દૃષ્ટિ, એ પ્રત્યેકના હેતુમાં પંચવિધતાનું અને છદ્મસ્થ અને કેવલીના અહેતુમાં પણ પંચવિધતાનું કથન કરે છે. "પંચ હેઊ પણ્ણત્તા" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ–હેતુ પાંચ કહ્યા છે. પ્રમેય રૂપ અર્થને જે કહે છે તે હેતુ છે. અથવા પ્રમેય રૂપ અર્થ જેના દ્વારા જાણી શકાય છે, તે હેતુ છે. એવો હેતુ પોતાના સાધ્યની સાથે અવિનાભાવ સંબંધવાળો હોય છે. જેમકે ધૂમરૂપ હેતુ પોતાના

पुरुषा अपि तदुपयोगानन्यत्वाद् हेतवः ते च पञ्चविधाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा- हेतुं=धूमादिं न-नञः कुत्सार्थत्वात् असम्यक् जानाति=सम्यक्तया नावबुध्यते। तथा-हेतुं न पश्यति-धूमादिमसम्यक् पश्यति । अत्रापि नञ् कुत्सार्थः । एवमग्रेऽपिबोध्यम् । हेतुं न बुध्यते=असम्यक् श्रद्धत्ते, बोधेः श्रद्धानपर्यायत्वात् । हेतुं न समभिगच्छति=भवनिस्तरणकारणतया न प्राप्नोति । इत्थं मिथ्यादृष्टिमपेक्ष्य चतुर्विधो हेतुरुक्तः । अथ तदपेक्षयैव पञ्चमं हेतुमाह-हेतुम्=अध्यवसानादिहेतु युक्तत्वाद् हेतुम् अज्ञानमरणं म्रियते=करोति-मिथ्यादृष्टित्वेनासम्यग्ज्ञानत्वादिति

वाला होता है, इस लिङ्गमें वर्तमान जो पुरुष हैं, वे भी हेतुके उपयोगसे अभिन्न होनेके कारण हेतुरूप होते हैं, ये पांच प्रकारके होते हैं-जो हेतुको नहीं जानता है, अर्थात् धूमादिरूप हेतुको जो असम्यक् रूपसे जानता है, हेतुको सम्यक् रूपसे नहीं जानता है १। तथा जो हेतुको-धूमादिरूप लिङ्गको असम्यक्रूपसे देखता है,२ इसी तरहसे आगे भी समझना चाहिये " हेतुं न बुध्यते " यहां बुध् धातु श्रद्धानार्थक है, अतः जो हेतु पर सम्यक् श्रद्धा नहीं रखता है,३ " हेतुं नाभि गच्छति " और जो हेतुको " भवसे यह पार करानेवाला है " इस रूपसे प्राप्त नहीं करता है,४ इस प्रकारसे मिथ्यादृष्टिकी अपेक्षासे यह चार प्रकारका हेतु कहा है,

अब उसीकी अपेक्षा से पांचवां हेतु इस प्रकारसे है-" हेतुमज्ञानमरणं म्रियते ५ " अध्यवसान आदि हेतुसे युक्त होनेके कारण जो अज्ञानमरण करता है; मिथ्यादृष्टि होनेसे जो सम्य-

સાધ્ય અગ્નિની સાથે અવિનાભાવ સંબંધવાળો હોય છે. આ લિંગમાં વર્તમાન જે પુરુષો છે તેઓ પણ હેતુના ઉપયોગથી અભિન્ન હોવાને કારણે હેતુરૂપ હોય છે. તે પાંચ પ્રકારના હોય છે—(૧) જે હેતુને જાણતો નથી એટલે કે ધૂમાદિ રૂપ હેતુને જે અસમ્યક્ રૂપે જાણે છે-હેતુને સમ્યક્ રૂપે જાણતો નથી. (૨) જે હેતુને ધૂમાદિ રૂપ લિંગને અસમ્યક્ રૂપે દેખે છે, એ જ પ્રમાણે આગળ પણ સમજવું જોઈએ (૩) हेतुं न बुध्यते અહીં 'બુધ્' ધાતુ શ્રદ્ધાર્થક છે તેથી અહીં આ પ્રમાણે અર્થ થાય છે-" જે હેતુપર સમ્યક્ શ્રદ્ધા રાખતો નથી, (૪) हेतुं नाभिगच्छति અને જે હેતુને ભવથી પાર કરાવનાર રૂપે ગણતો નથી. આ પ્રમાણે મિથ્યાદૃષ્ટિની અપેક્ષાએ ચાર પ્રકારના હેતુઓનું કથન કરીને હવે તેની જ અપેક્ષાએ પાંચમો હેતુ પ્રકટ કરવામાં આવે છે— " हेतुमज्ञानमरणं म्रियते " અધ્યવસાન આદિ હેતુથી યુક્ત હોવાને કારણે એટલે કે સમ્યગ્દૃષ્ટિથી રહિત હોવાને કારણે જે અજ્ઞાનાવસ્થામાં જ મૃત્યુ

मिथ्यादृष्टिमपेक्ष्यैव प्रकारान्तरेण पुनः पञ्च हेतूनाह-हेतवः पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-हेतुना=धूमादिना अनुमेयमर्थं न जानाति=सम्यक्तया नावगच्छति। एवमन्येऽपि चत्वारो भावनीयाः। यो हि हेतुना असम्यग्ज्ञानादिमान् भवति सोऽपि हेतुरेव बोध्य इति ५। अथ सम्यग्दृष्ट्यपेक्षया हेतोः पञ्चविधत्वमाह-हेतवः पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः। तद्यथा-हेतुं=धूमादिं जानाति=सम्यग्दृष्टित्वात् विशेषतः सम्यगवगच्छति। हेतुं पश्यति=सामान्यतः सम्यगवगच्छति। हेतु बुध्यते=सम्यक्श्रद्धत्ते। हेतुम् अभिगच्छति=साध्यसिद्धौ व्यापारणात् सम्यक् प्राप्नोति। तथा-हेतुं छद्मस्थमरणं म्रियते-हेतुः-अध्यवसानादिमरणकारणं, तद्योगान्मरणमपि हेतुः, तम्=अध्यवसानादियुक्तं छद्मस्थमरणं म्रियते=करोति। छद्मस्थो हि सम्यग्दृष्टित्वादज्ञानमरणं न करोति, अनुमातृत्वाच्च केवलिमरणं न करोति। इति

ज्ञान रहित होकर अज्ञानमरण अज्ञानावस्थामें मरण करता है, यह पांचवां हेतु है,

अब पुनः मिथ्यादृष्टिकी अपेक्षा करकेही प्रकारान्तरसे पुनः सूत्रकार पांच हेतुओंका कथन करते हैं-जो धूमादिरूप हेतुद्वारा अनुमेयरूप अर्थको अच्छी तरहसे नहीं जानता है १। इसी प्रकारसे चार और भी हेतु जानना चाहिये तथा जो हेतुद्वारा असम्यक् ज्ञानादिवाला होता है, वह भी हेतु ही है, ऐसा यह पांचवां हेतु है। सम्यग्दृष्टिकी अपेक्षा हेतुकी पंच प्रकारता इस प्रकारसे है-जो सम्यग्दृष्टि होनेसे धूमादिरूप हेतुको विशेष रूपसे अच्छी तरह जानता है१, सामान्य रूपसे जो हेतुको अच्छी तरहसे देखताहै२, हेतुकी सम्यक् रूपसे श्रद्धा करता है३, साध्य सिद्धिमें हेतुको अच्छी तरहसे प्रयुक्त करता है४, ऐसे ये चार स्थानहैं, और अध्यवसान आदिसे युक्त छद्मस्थमरणको जो करता है, क्योंकि छद्मस्थ सम्यग्दृष्टि होनेसे अज्ञानमरण नहीं

પામે છે, આ પાંચમો હેતુ છે. હવે સૂત્રકાર મિથ્યાદૃષ્ટિની અપેક્ષાએ પાંચ હેતુઓનું અન્ય પ્રકારે કથન કરે છે—(૧) જે ધૂમાદિ રૂપ હેતુ દ્વારા અનુમેય રૂપ (અનુમાન કરવા રૂપ) અર્થને સારી રીતે જાણતો નથી એજ પ્રમાણે અન્ય ચાર હેતુઓ પણ સમજવા જોઇએ તથા જે હેતુ દ્વારા અસમ્યક્ જ્ઞાનાદિવાળો હોય છે તે પણ હેતુ જ છે, એવો પાંચમો હેતુ છે.

સમ્યગ્દૃષ્ટિની અપેક્ષાએ હેતુના પાંચ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—(૧) જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોવાથી ધૂમાદિ રૂપ હેતુને વિશેષ રૂપે-સારી રીતે જાણે છે. (૨) સામાન્ય રૂપે જે હેતુને સારી રીતે દેખે છે. (૩) જે હેતુની સમ્યક્ રૂપે શ્રદ્ધા કરે છે, (૪) સાધ્ય સિદ્ધિમાં જે હેતુને સારી રીતે પ્રયુક્ત કરે છે. (૫) અધ્યવસાન આદિથી યુક્ત છદ્મસ્થમરણ જે પ્રાપ્ત કરે છે, કારણ કે છદ્મસ્થ સમ્ય-

सम्यग्दृष्टीनाश्रित्य पञ्च हेतवो बोध्याः। तानेवाश्रित्य पुनः प्रकारान्तरेण पञ्च हेतूनाह–हेतुना=अनुमानोत्पादकेन धूमादिना लिङ्गेन अनुमेयमर्थं वह्न्यादिकं जानाति=विशेषतः सम्यगवगच्छति। एवं पश्यति, बुध्यते, अभिगच्छति, इति स्थानत्रयमपि बोध्यम्। तथा–अकेवलित्वाद् हेतुना=अध्यवसानादिना छद्मस्थमरणं म्रियते इति पञ्चमं स्थानम् ५। इत्थमसम्यग्दृष्टीन् सम्यग्दृष्टींश्चाश्रित्य हेतुरुक्तः, अथ सम्यग्दृष्टीनाश्रित्य अहेतूनाह–' पंच अहेऊ ' इत्यादि। अहेतवः–हेतुः=अनुमानोत्पादको धूमादिः, स यत्र नास्ति तादृशो बोधोऽहेतुः प्रत्यक्षबोध इत्यर्थः। तत्रोपयुक्ता अपि अहेतवः, ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः। तानेवाह–'अहेउ '

करता है, तथा अनुमाता होनेसे केवली मरण नहीं करता है, वह पांचवां स्थान है। सम्यग्दृष्टिकी अपेक्षा पुनः प्रकारान्तरसे हेतु इस प्रकारसे भी पांच हैं–जो अनुमानके उत्पादक धूमादिलिङ्गसे वह्नि आदिरूप अनुमेय अर्थको विशेषरूपसे अच्छी तरहसे जानता है१, एक वह हेतु है, इसी प्रकारसे जो सामान्यरूपसे जानताहै२, अच्छी तरहसे उस पर श्रद्धा करताहै३, और साध्यसिद्धिमें उसका अच्छी तरहसे व्यापार उपयोग करताहै४, तथा अकेवली होनेसे जो अध्यवसान आदि कारणसे छद्मस्थ मरण करताहै४, ऐसे ए चार स्थान हैं, इस तरहसे असम्यक्दृष्टि और सम्यग्दृष्टिको आश्रित करके ये पांच हेतु कहे गये हैं,

अब सम्यग्दृष्टिको आश्रित करके अहेतु इस प्रकारसे पांच होतेहैं–यह कहा जाता है–अनुमानोत्पादक धूमादि हेतु जहां नहीं होता है, ऐसा

ग्दृष्टि હોવાથી અજ્ઞાનમરણ પ્રાપ્ત કરતો નથી તથા અનુમાતા (અનુમાન કરનારો) હોવાથી કેવલિમરણ પણ પ્રાપ્ત કરતો નથી. સમ્યગ્દૃષ્ટિની અપેક્ષાએ સૂત્રકાર ફરી અન્ય પ્રકારે પાંચ પ્રકારના હેતુનું કથન કરે છે—(૧) જે અનુમાનના જનક ધૂમાદિ લિંગ દ્વારા અગ્નિ આદિ રૂપ અનુમેય અર્થને વિશેષરૂપે જાણે છે. (૨) એ જ પ્રમાણે સામાન્ય રૂપે જાણે છે. (૩) સારી રીતે તેના પ્રત્યે શ્રદ્ધા રાખે છે, (૪) સાધ્યસિદ્ધિમાં તેનો સારી રીતે ઉપયોગ કરે છે, તથા (૫) તે અકેવલી હોવાથી અધ્યવસાય આદિ કારણે છદ્મસ્થ મરણ પ્રાપ્ત કરે છે આ રીતે અસમ્યક્ દૃષ્ટિ અને સમ્યક્ દૃષ્ટિને અનુલક્ષીને હેતુના પાંચ સ્થાનોનું કથન અહીં પૂરૂ થાય છે હવે સમ્યગ્દૃષ્ટિને આશ્રિત કરીને પાંચ અહેતુઓનું સૂત્રકાર કથન કરે છે—

અનુમાનોત્પાદક ધૂમાદિ હેતુઓનો જ્યાં સદ્‌ભાવ હોતો નથી, એવા પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનને અહીં ' અહેતુ ' પદ દ્વારા ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. આ

इत्यादि । धूमादिकं हेतुम् अहेतुम् अहेतुभावेन–प्रत्यक्षतया न जानाति=न सर्वथा जानाति, कथंचिदेवजानातीति भावः । ज्ञाता चात्र अवध्यादिकेवलित्वेन अनुमानाव्यवहर्त्ता, अतोऽत्र नञ् देशनिषेधार्थको बोध्य इति । एवम् अहेतुं, न पश्यति, न बुध्यते, नाभिगच्छतीति स्थानत्रयमपि बोध्यम् । तथा–अहेतुम्=आयुषोनिरुपक्रमतया अध्यवसानादि हेतुनिरपेक्षं छद्मस्थमरणं म्रियते । अनुमानाव्यवहर्तृत्वेऽपि अकेवलित्वाच्छद्मस्थमरणं बोध्यम् । इति पञ्चमं स्थानम् । सम्यग्दृष्टीनेवाश्रित्य प्रकारान्तरेण पुनरहेतूनाह–अहेतुना=हेत्वभावेन न जानाति=सर्वथा न जानाति, कथंचिदेव जानातीत्यर्थः । यो हि अहेतुना कथंचिज्जानाति सोऽपि अहेतुरेव बोध्यः । एवं न पश्यति, न बुध्यते, नाभिगच्छतीति स्थानत्रयं बोध्यम् । तथा–अहेतुना=उपक्रमाभावेन छद्मस्थमरणं म्रियते । इति पञ्चमं स्थानम् ।

वह प्रत्यक्षज्ञान यहां अहेतुसे लिया गया है, इस अहेतुमें जो उपयुक्त हैं, वे अहेतु हैं, इनमें जो धूमादिरूप हेतुको प्रत्यक्षरूपसे नहीं जानता है, अर्थात् जो धूमादिरूप हेतुको सर्वथा प्रत्यक्षरूपसे नहीं जानता है, किन्तु कथञ्चित् रूपसेही प्रत्यक्षरूपसे जानता है, क्योंकि यहां अवधिज्ञानवाला आदि होनेसे या केवली होनेसे ज्ञाता अनुमानसे व्यवहार नहीं करता है, इसलिये यहां अहेतुमें जो नञ् है, वह देशनिषेधार्थक है, ऐसा जानना चाहिये इसी तरहसे "अहेतुं न पश्यति न बुध्यते नाभिगच्छति" ये तीन स्थान भी समझ लेना चाहिये "जाव अहेउं छउमस्थमरणं मरेइ" विना हेतुके आयुके निरूपक्रम होनेसे जो अध्यवसान आदिहेतुकी अपेक्षा विनाके–छद्मस्थमरणसे मरताहै, वह पञ्चम स्थान है, यह अनुमानसे अव्यवहर्ता होने पर भी अकेवली होनेसे

અહેતુમાં જેઓ ઉપયુક્ત છે, તેમને અહીં અહેતુ રૂપ કહ્યાં છે.

પહેલુ સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે—(૧) જે ધૂમાદિ રૂપ હેતુને પ્રત્યક્ષ રૂપે જાણતો નથી એટલે કે જે ધૂમાદિ રૂપ હેતુને સર્વથા પ્રત્યક્ષ રૂપે જાણતો નથી, પણ અમુક અંશે જ તેને પ્રત્યક્ષ રૂપે જાણે છે, કારણ કે અહીં અવધિજ્ઞાન આદિવાળો અથવા કેવલી હોવાથી જ્ઞાતા અનુમાનથી વ્યવહાર કરતો નથી. અહીં અહેતુમાં જે નકાર વાચક 'અ' છે, તે દેશનિષેધાર્થક છે એમ સમજવું. એ જ પ્રમાણે આ ત્રણ સ્થાન પણ સમજી લેવા જોઈએ. "अहेतुं न पश्यति, न बुध्यते, नाभिगच्छंति" પાંચમું સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે— "जाव अहेउं छउमत्थमरण मरेइ" આયુનો નિરુપક્રમ થવાથી જે અધ્યવસાન આદિ હેતુની અપેક્ષા વિનાના છદ્મસ્થ મરણથી મરે છે, તે અહેતુનું પાંચમું સ્થાન છે. તે અનુમાન વડે અવ્યવહર્તા હોવા છતાં પણ અકેવલી હોવાથી છદ્મસ્થ મરણથી મરે છે.

अथ केवल्यपेक्षया पञ्चाहेतूनाह-अहेतवः पञ्च प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-अहेतुं जानाति=केवलित्वेन अनुमानाव्यवहारित्वाद् धूमादिकम् अहेतुं=अहेतुभावेन=प्रत्यक्षतया जानाति। धूमादिकम् अहेतुभावेन यो जानाति सोऽप्यहेतुरेव। एवम् अहेतुं पश्यति, अहेतुं बुध्यते, अहेतुम् अभिगच्छति-इति स्थानत्रयमपि बोध्यम्। तथा-अहेतुम्-उपक्रमाभावात् हेतुरहितं यथास्यात्तथा केवलिमरणम्-अनुमानाव्यवहारित्वात् केवलिनो यन्मरणं म्रियते=करोति, इति पञ्चमं स्थानम्। केवल्यपेक्षयैव पुनः

छद्मस्थमरणसे मरता है, सम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षासे पुनः अहेतुके पांच प्रकार इस प्रकारसे हैं-" अहेउणा न जाणइ जाव अहेउणा छउमत्थमरणं मरइ " जो हेतुके अभावसे अहेतुसे-कथञ्चित् जानता है, वह भी अहेतुही है, इसी तरहसे " न पश्यति न बुध्यते नाभिगच्छति " इन तीन स्थानोंको भी समझना चाहिये, तथा उपक्रमके अभावसे जो छद्मस्थमरणसे मरता है, यह पांचवां स्थान है, अब केवलीकी अपेक्षासे पांच अहेतु प्रकट किये जाते हैं-" अहेतुं जानाति " जो केवली होने से अनुमानसे व्यवहार करता नहीं है, वह धूमादिकको अहेतुभावसे प्रत्यक्षरूपसे जानता है, सो वह भी अहेतुही है, इसी प्रकारसे " अहेतुं पश्यति अहेतुं बुध्यते अहेतुं अभिगच्छति " ये तीन स्थान भी समझ लेना चाहिये तथा-"अहेउणा छउमत्थमरणं मरेइ" जो उपक्रमके अभावसे हेतुरहित हुए केवली मरणसे मरता है, अनुमानसे अव्यवहारकर्त्ता होनेसे केवलीका जो मरण है, उस मरणसे जो मरता है, वह

સમ્યગ્દૃષ્ટિઓની અપેક્ષાએ અહેતુના પાંચ પ્રકારો આ પ્રમાણે પણ બતાવ્યા છે-" अहेउणा न जाणइ जाव अहेउणा छउमत्थमरणं मरेइ " જે હેતુના અભાવમાં અહેતુ વડે થોડું થોડું જાણે છે, તે પણ અહેતુ જ છે. એ જ પ્રમાણે " न पश्यति, न बुध्यते, नाभिगच्छति " આ ત્રણ સ્થાનોને પણ સમજી લેવા, તથા ઉપક્રમને અભાવે જે છદ્મસ્થ મરણથી મરે છે તે પાંચમું સ્થાન છે. હવે કેવલીની અપેક્ષાએ પાંચ અહેતુ પ્રકટ કરવામાં આવે છે-" अहेतुं जानामि " જેઓ કેવલી હોવાથી અનુમાનથી વ્યવહાર કરતા નથી. તેઓ ધૂમાદિકને અહેતુ ભાવે પ્રત્યક્ષ રૂપે જાણે છે, તો તે પણ અહેતુ જ છે. એ જ પ્રમાણે " अहेतुं पश्यति, अहेतुं बुध्यते, अहेतुं अभिगच्छंति " આ ત્રણ સ્થાન પણ સમજી લેવાં જોઈએ તથા " अहेउणा छउमत्थमरणं मरेइ " જે ઉપક્રમના અભાવે હેતુરહિત થઈને કેવલિમરણથી મરે છે, એટલે કે અનુમાન વડે અવ્યવહાર કર્તા હોવાથી કેવલીનું જે મરણ છે, તે મરણથી જે મરે છે, તે અહેતુનું પાંચમું સ્થાન સમજવું.

प्रकारान्तरेण पञ्चाहेतूनाह–अहेतुना=हेत्वभावेन–प्रत्यक्षतया धूमादिकं जानाति सर्वथाऽवगच्छति। एवम्–अहेतुना पश्यतीत्यादि स्थानचतुष्टयमपि बोध्यमिति। सम्प्रति केवलिनोऽधिकारात् तस्य पञ्चानुत्तराणि प्राह—'केवलिस्स णं' इत्यादि। केवलिनः खलु पञ्च अनुत्तराणि–नास्ति उत्तरः=प्रधानो येभ्यस्तानि–सर्वथाऽऽवरणक्षयात् सर्वोत्कृष्टानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–तान्येवाह–अनुत्तरं ज्ञानम्=ज्ञानावरणीयस्य सर्वथा क्षयात् सर्वोत्कृष्टं ज्ञानम् १। अनुत्तरं दर्शनम्–दर्शनावरणीयस्य सर्वथोपरमात् सर्वोत्कृष्टं दर्शनम् २। अनुत्तरं चारित्रम् ३, अनुत्तरं तपः ४। एतद्द्वयं मोहस्य सर्वथाऽपगमाद् भवति। तपस्तु चारित्रभेद एव। केवलिनामनुत्तरं तपः

पांचवां स्थान है, पुनः केवलीकी अपेक्षासेही प्रकारान्तरसे पांच अहेतु प्रकट किये जाते हैं, जो अहेतुसे–हेतुके अभावरूपसे धूमादिको प्रत्यक्ष रूपसे सर्वथा जानता है, वह प्रथम स्थान है, इसी प्रकारसे जो "अहेतुना पश्यति" आदि रूप चार स्थान हैं वे भी समझ लेना चाहिये।

अब सूत्रकार केवलीके जो पांच अनुत्तर होते हैं, उन्हें प्रकट करते हैं, जिनकी अपेक्षा और कोई प्रधान नहीं होता है, अर्थात् जो सर्वोत्कृष्ट होते हैं, वे अनुत्तर हैं–इनमें सर्वोत्कृष्टता इसलिये कही गई है, कि ये अपने प्रतिपक्षी कर्मके सर्वथा क्षयसे उत्पन्न होते हैं, वे पांच अनुत्तर इस प्रकारसे हैं–अनुत्तर ज्ञान केवलज्ञान–यह ज्ञानावरणीय कर्मके सर्वथा क्षयसे उत्पन्न होता है अनुत्तर चारित्र–और अनुत्तर तप–ये दोनों मोहनीय कर्मके सर्वथा क्षयसे होते हैं, तप यह

હવે સૂત્રકાર કેવલીની અપેક્ષાએ પાચ અહેતુનું અન્ય પ્રકારે કથન કરે છે—જે અહેતુ વડે હેતુના અભાવ રૂપે ધૂમાદિને પ્રત્યક્ષ રૂપે સર્વથા જાણે છે, તે પ્રથમ સ્થાન છે એ જ પ્રમાણે "अहेतुना पश्यति" આદિ ચાર સ્થાન પણ સમજી લેવાં

હવે સૂત્રકાર કેવલીના પાંચ અનુત્તરોને પ્રકટ કરે છે. જેના કરતાં કોઇ પ્રધાન હોય નહીં એટલે કે જે સર્વોત્કૃષ્ટ હોય છે તેને અનુત્તર કહે છે. તે અનુત્તરોમાં સર્વોત્કૃષ્ટતા એ કારણે કહેવામાં આવી છે કે તેઓ પોતાના પ્રતિપક્ષી કર્મોના સર્વથા ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે. તે પાંચ અનુત્તર નીચે પ્રમાણે છે—(૧) અનુત્તર જ્ઞાન (કેવળજ્ઞાન) તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મના સર્વથા ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે (૨) અનુત્તર દર્શન–તે દર્શનાવરણીય કર્મના સર્વથા ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે. (૩) અનુત્તર ચારિત્ર અને (૪) અનુત્તર તપ–તે બંને મોહનીય કર્મના ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે. તપ ચારિત્રરૂપ હોય છે અને તે

शैलेश्यवस्थायां शुक्लध्यानभेदस्वरूपं बोध्यम् । ध्यानमपि तप एव, आभ्यन्तरतपोभेदरूपत्वादिति ४। तथा—अनुत्तरं वीर्यम् । एतत्तु वीर्यान्तरायक्षयाद् भवतीति बोध्यमिति ॥ सू० २३ ॥

केवल्यधिकारात् तीर्थंकरसम्बन्धीनि चतुर्दशावान्तरसूत्राणि माह—

मूलम्—पउमप्पहे णं अरहा पंचचित्ते होत्था, तं जहा-चित्ताहिं चुए चइत्ता गब्भवक्कंते १, चित्ताहिं जाते २, चित्ताहिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ३ चित्ताहिं अणंते अणुत्तरे णिव्वाघाए णिरावरणे कसिणे पडिपुन्ने केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने ४, चित्ताहिं परिणिव्वुए ५। पुप्फदंते णं अरहा पंचमूले होत्था, तं जहा—मूलेणं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते, एवं चेव, एवमेएणं अभिलावेणं इमाओ गाहाओ अणुगंतव्वाओ ।

"पउमप्पहस्स चित्ता १, मूले पुण होइ पुप्फदंतस्स २।
पुव्वाइं आसाढा, सीयलस्सुत्तरविमलस्स भद्दवया ४॥१॥
रेवइया अणंतजिणो ५, पूसो धम्मस्स ६ संत्तिणो भरणी ७।
कुंथुस्स कत्तियाओ ८, अरस्स तह रेवईओ य ९ ॥ २॥

"मुणि सुव्वयस्स सवणो १०, अस्सिणि णमिणो ११ य नेमिणो चित्ता १२ ।

चारित्ररूप होता है, और यह शैलेशी अवस्थामें शुक्ल ध्यानका एक भेदरूप कहा गया है, ध्यान भी तपकाही एक प्रकार है, क्योंकि यह आभ्यन्तर तपका भेद है, अनुत्तर वीर्य—यह वीर्यान्तराय कर्मके क्षयसे होता है, इस तरह अनुत्तर ज्ञान १ अनुत्तर दर्शन २ अनुत्तर चारित्र ३ अनुत्तर तप४ और अनुत्तर वीर्य५ये केवलियोंके पांच अनुत्तरहैं॥सू.२३॥

શૈલેશી અવસ્થામાં શુકલધ્યાનના એક ભેદ રૂપ કહ્યું છે. ધ્યાન પણ તપનોજ એક પ્રકાર છે, કારણ કે તે આભ્યન્તર તપનો ભેદ છે. (૫) અનુત્તર વીર્ય—તે વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ રીતે કેવલીઓનાં પાંચ અનુત્તર આ પ્રમાણે છે. (૧) અનુત્તર જ્ઞાન, (૨) અનુત્તર દર્શન, (૩) અનુત્તર ચારિત્ર, (૪) અનુત્તર તપ અને (૫) અનુત્તર વીર્ય. ॥ સૂ. ૨૩ ॥

पासस्स विसाहाओ १३, पंचयहत्थुत्तरो वीरो १४ ॥ ३ ॥ समणे भगवं महावीरे पंच हत्थुत्तरे होत्था-हत्थुत्तराहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते १, हत्थुत्तराहिं गब्भाओ गब्भं साहरिए २, हत्थुत्तराहिं जाए हत्थुत्तराहिं मुंडे भवित्ता जाव पव्वइए हत्थुत्तराहिं अणंते अणुत्तरे जाव केवलवरनाणदंसणे समुप्पण्णे ॥ सू० २४ ॥

॥ इइ पंचमट्ठाणस्स पढमो उद्देसओ समत्तो ॥ १॥

छाया—पद्मप्रभः खलु अर्हन् पञ्च चित्रोऽभवत्, तद्यथा-चित्रासु च्युतः, च्युत्वा गर्भव्युत्क्रान्तः १, चित्रासु जातः २, चित्रासु मुण्डो भूत्वा अगारात् अनगारितां प्रव्रजितः ३, चित्रासु अनन्तम् अनुत्तरं निर्व्याघातं निरावरणं कृत्स्नं प्रतिपूर्णं केवलवरज्ञानदर्शनं समुत्पन्नम् ४, चित्रासु परिनिर्वृतः ५। पुष्पदन्तः खलु अर्हन् पञ्चमूलोऽभवत्, मूले च्युतः, च्युत्वा गर्भं व्युत्क्रान्तः १, एवमेव, एवमेतेन अभिलापेन इमा गाथा अनुगन्तव्याः—

पद्मप्रभस्य चित्राः, मूलं पुनर्भवति पुष्पदन्तस्य ।
पूर्वाषाढाः शीतलस्य, उत्तरा विमलस्य भाद्रपदाः ॥ १ ॥
रेवतिका अनन्तजिनस्य, पुष्यो धर्मस्य शान्ते र्भरणी ।
कुन्थोः कृत्तिकाः, अरस्य तथा रेवत्यश्च ॥ २ ॥
मुनि सुव्रतस्य श्रवणा, अश्विनी नमेश्च नेमेश्चित्राः ।
पार्श्वस्य विशाखाः पञ्चक हस्तोत्तरो वीरः ॥ ३ ॥

श्रमणो भगवान् महावीरः पञ्चहस्तोत्तरोऽभवत्-हस्तोत्तरासु च्युतः, च्युत्वा गर्भं व्युत्क्रान्तः १, हस्तोत्तरासु गर्भाद् गर्भं संहृतः २, हस्तोत्तरासु जातः ३, हस्तोत्तरासु मुण्डो भूत्वा यावत् प्रव्रजितः ४, हस्तोत्तरासु अनन्तम् अनुत्तरं यावत् केवलवरज्ञानदर्शनं समुत्पन्नम् ५॥ सू० २४ ॥

॥ इति पञ्चमस्थानकस्य प्रथमउद्देशकः समाप्तः ॥ १ ॥

अब सूत्रकार केवलीके अधिकारको लेकर तीर्थङ्कर सम्बन्धी १४ अवान्तर सूत्रोंका कथन करते है—

કેવલીઓનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી હવે સૂત્રકાર તીર્થંકરો સંબંધી ૧૪ સૂત્રોનું કથન કરે છે—" पउमप्पहेणं अरहा पंचचित्ते होत्था " ઇત્યાદિ—

टीका—' पउमप्पहे णं ' इत्यादि—

पद्मप्रभः खलु अर्हन्=पद्मप्रभनामा षष्ठो जिनः खलु=निश्चयेन पञ्चचित्रः—पञ्चसु च्यवनादिदिनेषु चित्रा यस्य स तथा अभवत्। तद्यथा—यथाऽभवत्तथाह—चित्रासु माघकृष्णषष्ठयां च्युतः=एकत्रिंशत्सागरोपमस्थितिकात् नवमाद् उपरिमोपरिमग्रैवेयकात् अवतीर्णः। च्युत्वा=अवतीर्य गर्भं व्युत्क्रान्तः कौशाम्बीनगर्यां राज्ञो धरस्य भार्यायाः सुसीमादेव्याः कुक्षौ व्युत्क्रान्तः=समागतः १। चित्रासु कार्त्तिककृष्णद्वादश्यां जातः=जन्म गृहीतवान् २। चित्रासु कार्त्तिकशुक्लत्रयोदश्यां मुण्डो भूत्वा=द्रव्यतः केशापेक्षया, भावतः कषायाद्यपेक्षया च मुण्डितो भूत्वा अगारात्=प्रासादादिरूपद्रव्यगृहात् मूर्च्छादिरूपभावगृहाच्च निष्क्रम्य अनगा-

'पउमप्पहे णं अरहा पंचचित्ते होत्था' इत्यादि सूत्र २४ ॥

टीकार्थ—पद्मप्रभु जिनेन्द्र जो कि ६छट्ठे तीर्थंकर है, वे च्यवनादि दिनोंमें पांच चित्रा नक्षत्रवाले हुए हैं, जैसे वे चित्रा नक्षत्रमें माघ कृष्णषष्ठी तिथिमें २१ सागरोपमकी स्थितिवाले नवम ग्रैवेयकमें अवतीर्ण हुए हैं, और अवतीर्ण होकर वे कौशाम्बी नगरीमें राजा धरकी धर्मपत्नी सुषमादेवीकी कुक्षिमें गर्भरूपसे उत्पन्न हुए हैं १ चित्रा-नक्षत्रमेंही कार्तिक शुक्ल १३ के दिन इनका जन्म हुआ है २ कार्तिक शुक्ल त्रयोदशीके दिनही इन्होंने मुंडित होकर अगारावस्थासे अनगारावस्था धारणकी है, केशोंका उपाडना ये द्रव्यकी अपेक्षा मुंडित होना है, और कषायादिसे रहित होना यह भावकी अपेक्षा मुंडित होना है, प्रासादादि रूप द्रव्य गृहसे छूटना यह गृहसे निष्क्रमण है, और मूर्च्छादिरूप भावगृहसे छूटना यह भावगृहसे निष्क्रमण है,

છઠ્ઠા તીર્થંકર પદ્મપ્રભ જિનેન્દ્ર થઇ ગયા. તેઓ ચ્યવનાદિ દિનોમાં પાંચ ચિત્રા નક્ષત્રવાળા થયા છે. આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે સમજવું. (૧) ચિત્રા નક્ષત્રમાં મહા વદી છઠ્ઠની તિથિએ તેઓ ૩૧ સાગરોપમની સ્થિતિવાળા નવમાં ગ્રૈવયકમાંથી એટલે કે ઉપરિમોપરિમ ગ્રૈવેયકમાંથી ચ્યવીને કૌશામ્બી નગરીમાં રાજા ધરની ધર્મપત્ની સુષમાદેવીની કુક્ષિમાં ગર્ભ રૂપે ઉત્પન્ન થયા હતા (૨) ચિત્રા નક્ષત્રમાં જ કાર્તક શુદ ૧૩ ને દિવસે તેમનો જન્મ થયો હતો (૩) ચિત્રા નક્ષત્રમાં જ કર્તિક શુદ ૧૩ ને દિવસે તેમણે મુંડિત થઇને અગારાવસ્થાના પરિત્યાગપૂર્વક અણગારાવસ્થા ધારણ કરી હતી. કેશોના લૂંચનને દ્રવ્યની અપેક્ષાએ મુંડન કહેવાય છે અને કષાયોથી રહિત થવું તેનું નામ ભાવની અપેક્ષાએ મુંડન છે. પ્રાસાદ આદિ રૂપ દ્રવ્યઘરનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ દ્રવ્યગૃહમાંથી નિષ્ક્રમણ છે અને મૂર્ચ્છાદિ રૂપ ભાવગૃહમાંથી છૂટવું તેનું નામ ભાવગૃહમાંથી નિષ્ક્રમણ છે.

रिताम्=अनगारभावं-श्रमणत्वं प्रव्रजितः=प्राप्तः ३। चित्रासु चैत्रपौर्णमास्यां तस्य अनन्तम्-अनन्तपर्यायत्वात्, अनुत्तरं-सकलज्ञानप्राधान्यात्, निर्व्याघातम्-अप्रतिपातित्वेन व्याघातरहितत्वात्, निरावरणम्-सर्वथा स्वावरणक्षयात् कटकुड्याद्यावरणाभावाद्वा, कृत्स्नम् सकलपदार्थविषयत्वात्, परिपूर्ण-स्वावयवापेक्षया पौर्णमासीचन्द्रवदखण्डत्त्वात्, अनन्तादिपरिपूर्णान्तविशेषणविशिष्टं किम् इत्याह-केवलवरज्ञानदर्शनम्-केवलं-ज्ञानान्तरसाहाय्यानपेक्षत्वात् संशुद्धत्वाद्वा, अतएव-

---

चित्रानक्षत्रमेंही चैत्र पौर्णमासीके दिन इन्होंने केवलज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त कियाहै, यह केवलज्ञान केवलदर्शन अनन्तपर्यायको विषय करनेवाला होनेसे अनन्त होता है, सकल ज्ञानोंमें प्रधान होनेसे अनुत्तर होताहै, अप्रतिपाती होनेसे निर्व्याघात होताहै, अपने प्रतिपक्षी कर्मके सर्वथा विनाश होनेसे निरावरण होता है, अथवा कट चटाई कुड्यादि (दिवाल) रूप आवरणसे इसका प्रतिघात नहीं होता है, रूपी अरूपी समस्त पदार्थोंको और समस्त उनकी पर्यायोंको यह विषय करनेवाला होताहै, इसलिये कृत्स्न होताहै, पौर्णमासीका चन्द्रमण्डल जिस प्रकार अपने अवयवोंसे परिपूर्ण होता है, उसी प्रकार से यह भी अपने अवयवोंसे परिपूर्ण होता है। केवल इसलिये कहा गया है, कि यह अपने विषयको जाननेके लिये अन्य ज्ञानोंकी सहायतावाला नहीं होता है, अथवा अत्यन्त शुद्ध होता है, अतएव अन्य ज्ञानोंकी अपेक्षा

---

(४) ચિત્રા નક્ષત્રમાં જ ચૈત્રી પૂનમને દિવસે જ તેમણે કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શનની પ્રાપ્તિ કરી હતી. તે કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શન અનન્ત પર્યાયને વિષય કરનાર-તેમનું પ્રતિપાદન કરનાર હોવાથી અનન્ત હોય છે તે સકળ જ્ઞાનોમાં શ્રેષ્ઠ હોવાથી અનુત્તર હોય છે તે અપ્રતિપાતી હોવાથી નિર્વ્યાઘાત હોય છે. પોતાના પ્રતિપક્ષી કર્મનો સર્વથા વિનાશ થઈ જવાથી તે નિરાવરણ હોય છે. એટલે કે ચટ્ટાઇ, દીવાલ આદિ આવરણથી તેનો પ્રતિઘાત થતો નથી. રૂપી અરૂપી સમસ્ત પદાર્થોને અને તેમની સમસ્ત પર્યાયોને તે વિષય કરનારૂં હોય છે, તેથી તે કૃત્સ્ન હોય છે. પૂનમનો ચન્દ્ર જેમ સોળે કલાઓથી પરિપૂર્ણ હોય છે-સમસ્ત અવયવોથી પરિપૂર્ણ હોય છે, તેમ આ જ્ઞાન પણ પોતાના સમસ્ત અવયવોથી પરિપૂર્ણ હોય છે તેને કેવળ વિશેષણ લગાડવાનું કારણ એ છે કે તે પોતાના વિષયને જાણવા માટે અન્ય જ્ઞાનોની સહાયતાની અપેક્ષા રાખતું નથી. અથવા અત્યંત શુદ્ધ હોવાને કારણે તેને

वरं=श्रेष्ठं-प्रधानम्, ज्ञानं च-विशेषावभासम्, दर्शनं च-सामान्यावभासम्, ज्ञानदर्शनयोर्द्वन्द्वे केवलवरशब्देन सह कर्मधारयो बोध्यः। एतादृशविशेषणविशिष्टं केवलवरज्ञानदर्शनं समुत्पन्नं=जातम्। तथा-चित्रासु मार्गशीर्षकृष्णैकादश्यां परिनिर्वृतः=निर्वाणं प्राप्तः ५ ॥ १ ॥ तथा-पुष्पदन्तः खलु नवमः अर्हन् पञ्चमूलः-पञ्चसु च्यवनादिदिनेषु मूल=मूलनक्षत्रं यस्य स तथा अभवत्। तद्यथा-यथाऽभवत्तथाह-मूलनक्षत्रे फाल्गुनकृष्णनवम्याम् एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकात् आनतकल्पात् च्युतः, च्युत्वा गर्भं व्युत्क्रान्तः=काकन्दी नगर्यां राज्ञः सुग्रीवस्य भार्याया रामादेव्याः कुक्षौ समागतः १, एवमेव=अनेन प्रकारेणैव जन्मादिकमपि योजनीयम्। अर्थात्-मूलनक्षत्रे मार्गशीर्षकृष्णपञ्चम्यां जातः २, मूलनक्षत्रे मार्ग-

---

यह श्रेष्ठ प्रधान कहा गया है, और विशेषको यह विषय करता है, इसलिये ज्ञानरूप कहा गया है, इसी प्रकारका केवलदर्शन भी होता है, केवलदर्शन पदार्थोंको सामान्य रूपसे विषय करता है। ज्ञानदर्शनमें द्वन्द्व समास करके फिर केवलवर शब्दके साथ उनका कर्मधारय समास कर देना चाहिये। तथा चित्रा नक्षत्रमेंही मार्गशीर्ष कृष्णपक्षकी एकादशीके दिन उन्होंने मुक्ति प्राप्तकी है, तथा पुष्पदन्त नववां सुविधिनाथ तीर्थंकर, जिन मूल नक्षत्रमें फाल्गुन कृष्ण के दिन १९ सागरकी स्थितिवाले आननकल्पसे (नववें देवलोकमें) चवे हैं-गर्भमें आये हैं, काकन्दी नगरीमें राजा सुग्रीवकी भार्या रामादेवीकी कुक्षिमें अवतीर्ण हुए हैं, मूलनक्षत्रमेंही वे मार्गशीर्ष कृष्णपक्षकी पंचमीके दिन उत्पन्न हुए हैं, मूलनक्षत्रमेंही वे मार्गशीर्ष कृष्णपक्षकी

અન્ય જ્ઞાનો કરતાં શ્રેષ્ઠ કહ્યું છે, અને વિશેષનું તે પ્રતિપાદન કરે છે, તેથી તેને જ્ઞાનરૂ કહ્યુ છે. એ જ પ્રકારનું કેવલદર્શન પણ હોય છે. કેવલદર્શન પદાર્થનું સામાન્ય રૂપે પ્રતિપાદન કરે છે. જ્ઞાનદર્શનમાં દ્વન્દ્વ સમાસ કરીને કેવલ વર શબ્દની સાથે તેમનો કર્મધારય સમાસ કરવો જોઇએ.

(૫) ચિત્રા નક્ષત્રમાં જ માગશર વદી ૧૧ ને દિને તેમણે મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી હતી.

હવે સૂત્રકાર એ પ્રકટ કરે છે કે પુષ્પદન્ત જિનેશ્વરના જીવનના પાંચ મુખ્ય પ્રસંગો મૂલ નક્ષત્રમાં જ બન્યા હતા.

(૧) તેઓ મૂલ નક્ષત્રમાં ફાગણ વદી ૯ ને દિને ૧૯ સાગરોપમની સ્થિતિવાળા આનત કલ્પમાંથી ચ્યવીને, કાકન્દી નગરીના રાજા સુગ્રીવની રામાદેવી નામની રાણીના ગર્ભમાં ગર્ભરૂપે ઉત્પન્ન થયા હતા. (૨) મૂલ નક્ષત્રમાં જ માગશર વદી પાંચમે તેમનો જન્મ થયો હતો. (૩) મૂલ નક્ષત્રમાં જ માગશર

शीर्ष-कृष्णषष्ठ्यां मुण्डो भूत्वा अगारात् अनगारितां प्रव्रजितः ३, तथा-मूलनक्षत्रे कार्तिकशुक्लतृतीयायां तस्य अनन्तादि विशेषणविशिष्ट केवलवरज्ञानदर्शनं समुत्पन्नम् ४, तथा च मूलनक्षत्रे भाद्रपद शुक्लनवम्याम्, परिनिर्वृतः ५। एवम्= अनया रीत्या एतेनैव अभिलापेन=सूत्रपाठेन इमाः=वक्ष्यमाणास्तिस्रो गाथा अनुगन्तव्याः=अनुसूत्र्याः । ता एव गाथाः प्राह-'पउमप्पभस्स' इत्यादि । पद्मप्रभस्य च्यवनादिपञ्चकल्याणकनक्षत्रं चित्रानक्षत्रं भवति । पुनः=तथा पुष्पदन्तस्य मूलं नक्षत्रं भवति । शीतलस्य दशमतीर्थंकरस्य पूर्वाषाढा भवन्ति । स हि भगवान् विंशतिसागरोपमस्थितिकात् प्राणतकल्पात् पूर्वाषाढासु वैशाखकृष्णषष्ठ्यां च्युतः, च्युत्वा भद्दिलपुरे राज्ञो दृढरथस्य भार्याया नन्दाया देव्या गर्भे व्युत्क्रान्तः

षष्ठीके दिन मुंडित होकर अगारावस्थासे अनगारावस्थावाले हुए हैं। मूलनक्षत्रमेंही उन्होंने कार्तिक शुक्ल तृतीयाके दिन अनन्तादि विशेषणोंवाले केवल वरज्ञानको केवल वर दर्शनको प्राप्त किया है, और मूलनक्षत्रमेंही उन्होंने भाद्रपदकी शुक्ल नवमीके दिन निर्वाणपद पाया है, इसी रीतिसे इसी अभिलापसे-सूत्रपाठसे-ये तीन गाथाएँ कही गई हैं, जिनका भाव ऐसा है-कि पद्मप्रभ स्वामीके गर्भ, जन्म, तप केवल और निर्वाण ये पांचों कल्याणक चित्रा नक्षत्रमेंही हुए हैं, पुष्पदन्तके पांचों कल्याणक मूलनक्षत्रमेंही हुए हैं। दशवें शीतलनाथ भगवानके गर्भ जन्म आदि पांचो कल्याणक पूर्वाषाढा नक्षत्रमें हुए हैं, शीतलनाथ भगवान् २० सागरोपमकी स्थितिवाले प्राणतकल्पसे पूर्वाषाढा नक्षत्रमें चव कर वे भद्दिलपुरमें राजा दृढरथकी भार्या नन्दा-

---

વદી ૬ ને દિને અગારાવસ્થાનો પરિત્યાગ કરીને તેમણે મુંડિત થઈને અણગારાવસ્થા ધારણ કરી હતી (૪) મૂલ નક્ષત્રમાં જ કાર્તિક શુદી ત્રીજને દિને તેમણે અનંત આદિ વિશેષણોવાળાં કેવળવરજ્ઞાન અને કેવળવરદર્શન પ્રાપ્ત કર્યાં હતાં. (૫) મૂલ નક્ષત્રમાં જ ભાદરવા શુદી ૯ ને દિને તેમણે નિર્વાણ પ્રાપ્ત કર્યું હતું. આ પ્રકારના ભાવાર્થવાળી ત્રણ ગાથાઓ કહેવામાં આવી છે. તે ગાથાઓનો ભાવાર્થ એવો છે કે પદ્મપ્રભ સ્વામીના ગર્ભાવતરણ, જન્મ, પ્રવ્રજ્યા, કેવળજ્ઞાન અને નિર્વાણ આ પાંચે કલ્યાણકો મૂલ નક્ષત્રમાં જ થયા હતાં. પુષ્પદન્ત જિનેશ્વરના એ પાંચે કલ્યાણકો મૂલ નક્ષત્રમાં જ થયાં હતાં.

દશમાં શીતલનાથ જિનેશ્વરના ગર્ભાવતરણ, જન્મ આદિ પાંચે કલ્યાણકો પૂર્વાષાઢા નક્ષત્રમાં થયાં હતાં. તેઓ ૨૦ સાગરોપમની સ્થિતિવાળા પ્રાણત કલ્પમાંથી ચ્યવીને ભદ્દિલપુરના રાજા દઢરથની રાણી નન્દાદેવીના

१, तथा पूर्वाषाढासु माघकृष्ण द्वादश्यामुत्पन्नः २, तस्मिन्नेव नक्षत्रे तत्रैव मासे तिथौ च माघकृष्णद्वादश्यामेव निष्क्रान्तः ३, तस्मिन्नेव नक्षत्रे पौषकृष्णचतुर्दश्यां केवलज्ञानं प्राप्तः ४, तस्मिन्नेव नक्षत्रे च वैशाखकृष्णद्वितीयायां निर्वृतः ५। तथा–विमलस्य त्रयोदशतीर्थंकरस्य च्यवनादि–पञ्चकल्याणकनक्षत्रम् उत्तरा भाद्रपदाः। अनन्तजिनस्य चतुर्दशतीर्थंकरस्य च्यवनादि पञ्चकल्याणकनक्षत्रं रेवती भवति। धर्मनाथस्य पञ्चकल्याणकनक्षत्रं पुष्यः। शान्तिनाथस्य भरणी। कुन्थुनाथस्य कृत्तिकाः। अरनाथस्य रेवत्यः। सुव्रतनाथस्य श्रवणः। नमिनाथस्य

देवीके गर्भमें आये पूर्वाषाढा नक्षत्रमेंही वे माघकृष्ण द्वादशीके दिन उत्पन्न हुए उसी नक्षत्रमें वे माघकृष्ण द्वादशीके दिनही दीक्षित हुए उसी नक्षत्रमें पौषकृष्ण चतुर्दशीके दिनही उन्होंने केवलवरज्ञान-दर्शन प्राप्त किये और उसी नक्षत्रमेंही उन्होंने निर्वाणपद वैशाख कृष्ण द्वितीयाके दिन प्राप्त किया है। तथा १३ वें तीर्थंकर विमलनाथ भगवान्के पांचों कल्याणकोंमें उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र था तथा १४ वें तीर्थंकर अनन्त जिनके भी पांचों कल्याणक रेवती नक्षत्रमें हुए हैं, धर्मनाथ के भी पांचो कल्याणक पुष्य नक्षत्र में हुए हैं शान्तिनाथके पांचों कल्याणक भरणी नक्षत्रमें हुए हैं। कुन्थुनाथके पांचों कल्याणक कृत्तिका नक्षत्रमें हुए हैं, अरनाथ भगवान्के पांचों कल्याणक रेवती नक्षत्रमें हुए हैं, सुव्रतनाथ भगवान्के पांचों कल्याणक श्रवण नक्षत्रमें हुए हैं, नमिनाथ भगवान्के पांचों कल्याणक अश्विनी नक्षत्रमें

ગર્ભમાં પૂર્વાષાઢા નક્ષત્રમાં જ ઉત્પન્ન થયા હતા. એ જ નક્ષત્રમાં મહા વદી બારશે તેમનો જન્મ થયો હતો. એ જ નક્ષત્રમાં મહા વદી બારશે તેમણે પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરી હતી. એ જ નક્ષત્રમાં પોષ વદી ચૌદશે તેમણે કેવલ-વર જ્ઞાનદર્શન પ્રાપ્ત કર્યાં હતાં. અને એ જ નક્ષત્રમાં વૈશાખ વદ બીજે તેઓ નિર્વાણ પામ્યાં હતાં.

૧૩ માં તીર્થંકર વિમલનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો ઉત્તરાભાદ્રપદાનક્ષત્રમાં જ થયાં હતાં. ૧૪ માં તીર્થંકર અનંત જિનેશ્વરના પાંચ કલ્યાણકો રેવતી નક્ષત્રમાં થયાં હતાં. ધર્મનાથ જિનેશ્વરના પાંચે કલ્યાણકો પુષ્ય નક્ષત્રમાં થયાં હતાં. શાન્તિનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો ભરણી નક્ષત્રમાં થયા હતાં. અરનાથ ભગવાનના પાચે કલ્યાણકો રેવતી નક્ષત્રમાં થયા હતાં. સુવ્રતનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો શ્રવણ નક્ષત્રમાં થયા હતાં. હતાં. નમિનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો આશ્વની નક્ષત્રમાં થયા હતાં. નેમિનાથના પાંચે કલ્યાણકો ચિત્રા નક્ષત્રમાં થયા હતાં.

अश्विनी । नेमिनाथस्य चित्रा । पार्श्वनाथस्य विशाखाः । तथा–वीरः=अन्तिमतीर्थंकरो वर्द्धमानस्वामी पञ्चक हस्तोत्तरः–हस्तोपलक्षिता उत्तराः–हस्तोत्तराः, उत्तराफाल्गुन्य इत्यर्थः, च्यवनादि पञ्चकल्याणकत्वेन पञ्चकाः=पञ्चसंख्यका हस्तोत्तरा यस्य स तथाऽभवत् । भगवतो महावीरस्य च्यवनादि पञ्चकल्याणकमभिलापपूर्वकमाह–'समणे भगवं' इत्यादिना । श्रमणो भगवान् महावीरः पञ्चहस्तोत्तरोऽभवत् । यथा पञ्चहस्तोत्तरोऽभवत्तथाह–' हत्थुत्तराहिं ' इत्यादिना । हस्तोत्तरासु-च्युतः, च्युत्वा गर्भेऽवतीर्णः १, तस्मिन्नेव नक्षत्रे गर्भात्=ब्राह्मणीगर्भात् गर्भान्तरं=क्षत्रियागर्भं संहृतः=नीतः शक्राज्ञया हरिणैगमेषिदेवेन २। एवं जन्म ३ प्रव्रज्या ४ केवलज्ञानप्राप्तिषु ५ हस्तोत्तरा बोध्याः । निर्वाणं तु भगवतः स्वाति नक्षत्रे कार्तिकामावस्यां बोध्यम् ॥ सू० २४ ॥

इति श्री विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचक–पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक – श्रीशाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित–कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्मचारी- जैनाचार्य – जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री -- घासीलालव्रतिविरचितायां 'स्थानाङ्गसूत्रस्य' सुधाख्यायां व्याख्यायां पञ्चमस्थानस्य प्रथमोद्देशः सम्पूर्णः ॥ ५–१ ॥

हुए हैं । नेमिनाथके चित्रा नक्षत्रमें पांचों कल्याणक हुए है । पार्श्वनाथके पांचों कल्याणक विशाखा नक्षत्रमें हुए हैं, तथा अन्तिम तीर्थंकर वीर प्रभुके पांचों कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें हुए हैं । "समणे भगवं महावीरे " इत्यादि सूत्रका अर्थ स्पष्ट है–यही सब विषय इन गाथाओं द्वारा प्रकट किया गया है—"पउमप्पहस्स चित्ता" इत्यादि ।

वीरनाथ भगवान् हस्तोत्तरा नक्षत्रमेंही–उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रमेंही चवकर गर्भमें आये,उसी नक्षत्रमें वे ब्राह्मणीके गर्भसे क्षात्रियाणीके गर्भमें रखे गये यह कार्य इन्द्रकी आज्ञासे हरिणैगमेषी देवने किया भगवान्के

પાર્શ્વનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો વિશાખા નક્ષત્રમાં થયા હતાં તથા અન્તિમ તીર્થંકર મહાવીર પ્રભુના પાંચે કલ્યાણકો ઉત્તરા ફાલ્ગુની નક્ષત્રમાં થયા હતાં. એ જ વાત નીચેની ગાથાઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે–" समणे भगवं महावीरे " ઇત્યાદિ. આ ગાથાઓનો અર્થ સુગમ છે.

" पउमप्पहस्स चित्ता " ઇત્યાદિ—

વીરનાથ ભગવાન હસ્તોત્તરા નક્ષત્રમાં જ–ઉત્તરા ફાલ્ગુની નક્ષત્રમાં જ ચ્યવીને માતાના ગર્ભમાં આવ્યા હતા. એ જ નક્ષત્રમાં તેમને બ્રાહ્મણીના ગર્ભમાંથી ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીના ગર્ભમાં મૂકવામાં આવ્યા હતા. તે કાર્ય ઇન્દ્રની આજ્ઞાથી હરિણૈગમેષી દેવે કર્યું હતું. ભગવાનના જન્મ સમયે, ભગ-

जन्मके समय प्रव्रज्याके समय केवलज्ञान प्राप्तिके समय हस्तोत्तरा नक्षत्र था, परन्तु निर्वाण प्राप्तिके समय स्वाति नक्षत्र था कार्तिक वदी अमावास्याके दिन इन्होंने मुक्ति प्राप्त की है ॥सू० २४॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचित "स्थानाङ्गसूत्र" की सुधा नामकी व्याख्याके पांचवें स्थानका पहला उद्देशा समाप्त ॥ ५-१ ॥

वाननी प्रवज्या समये अने भगवानने ज्यारे केवळज्ञान प्राप्त थयुं त्यारे पण हस्तोत्तरा नक्षत्र ज चालतुं हतुं. पण तेमना निर्वाणकाळे स्वाति नक्षत्र चालतुं हतुं कार्तक वदी अमावास्याने दिवसे तेमणे निर्वाण प्राप्त कर्युं हतुं. ॥ सू. २४ ॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचित "स्थानागसूत्र" नी सुधा नामनी व्याख्याना पांचमा स्थानने प्रथम उद्देशक समाप्त ॥ ५-१